विषयानुक्रमणिका

१. वैदिक प्रार्थना ५३३
२. सम्पादकीय ५३४
३. जीव और प्रकृति (श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति) ५४१
४. दीक्षा के विषय में जांच और कुछ सम्मतियां ५४४
५. कविता (श्री डा० सूर्यदेव जी शर्मा एम० ए०) ५४६
६. महर्षि जीवन के सम्बन्ध में कुछ विवाद-ग्रस्त विषय (श्री पं० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति) ५४७
७. स्वाध्याय का पृष्ठ ५५०
८. अनमोल मोती ५५२
९. दक्षिण भारत प्रचार ५५३
१०. चयनिका ५५५
११. स्वास्थ्य समाचार ५५७
१२. राजनैतिक रंगमंच ५५८
१३. ईसाई प्रचार निरोध आंदोलन ५२१
१४. गोरक्षा आन्दोलन ५६९
१५. विविध सूचनाएँ ५७३
१६. बाल जगत ५७५
१७. महिला जगत् ५७६

❀ ओ३म् ❀

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३० | जनवरी १९५६, पौष २०१२ वि०, दयानन्दाब्द १३१ | अङ्क १०

वैदिक प्रार्थना

तनूपा अग्नेऽसि तन्वं मे पाहि । आयुर्दा अग्नेऽस्यायुर्मे देहि ।
वर्चोदा अग्नेऽसि वर्चो मे देहि । अग्ने यन्मे तन्वा ऊनं तन्मेऽआपृण ॥

यजु० ३ । १७ ॥

व्याख्यान—हे सर्वरक्षकेश्वराग्ने ! तू हमारे शरीर का रक्षक है । सो शरीर को कृपा से पालन कर । हे महावैद्य ! आप आयु (उमर) बढ़ाने वाले हो मुझको सुखरूप उत्तमायु दीजिये । हे अनन्त विद्यातेजयुक्त ! आप "वर्च." विद्यादि तेज अर्थात् यथार्थ विज्ञान देने वाले हो, मुझको सर्वोत्कृष्ट विद्यादि तेज देओ । पूर्वोक्त शरीरादि की रक्षा से हमको सदा आनन्द में रखो और जो २ कुछ भी शरीरादि में "ऊनम्" न्यून हो, उस २ को कृपादृष्टि से सुख और ऐश्वर्य के साथ सर्व प्रकार से आप पूर्ण करो । किसी आनन्द वा श्रेष्ठ पदार्थ की न्यूनता हम को न रहे । आप के पुत्र हम लोग जब पूर्णानन्द में रहेंगे तभी आप पिता की शोभा है क्योंकि लड़के लोग छोटी वा बड़ी चीज अथवा सुख पिता माता को छोड़ किससे मांगें ? सो आप सर्वशक्तिमान हमारे पिता सब ऐश्वर्य तथा सुख देने वालों में पूर्ण हो ॥

में बाधक भी होगा। एक विधान सभा के चुनाव की बात को ही ले लीजिये। मान लीजिए, आर्य-समाज ने किसी हल्के से संसद के लिए अपना कोई प्रतिनिधि उम्मेदवार बनाकर खड़ा किया। उस हल्के में कम से कम २० हजार मतदाता तो ऐसे होंगे ही जो पोलिंग में भाग लें। उन मतदाताओं में अनेक मतों, सम्प्रदायों और वर्गों से सम्बन्ध रखने वाले व्यक्ति होंगे। यह स्पष्ट है कि यदि कोई आर्य समाजी केवल आर्य समाज का प्रतिनिधि बन कर खड़ा होता है तो वह हजार बारहसों से अधिक वोट नहीं पा सकेगा। क्योंकि स्वभावतः अन्य सब मतदाता उसके विरोध में एकत्र हो जायेंगे। परन्तु यदि वही आर्य विचार रखने वाला उम्मीदवार, देश सेवक की हैसियत से उदार भावना के साथ चुनाव लड़े तो इसमें सन्देह नहीं कि यदि वह अन्य सब प्रकार से योग्य हुआ तो उसे सफलता प्राप्त होगी। इस समय केन्द्रीय संसद में आर्य समाजी और आर्यसमाज के अनुकूल विचार रखने वाले सदस्यों की संख्या सात सौ में से आधे से कम नहीं होगी। यदि आर्य समाज अपनी ओर से चुनाव लड़े तो वह समूहों की सहानुभूति तो खो ही देगा, स्वयं शायद २०-२५ प्रतिनिधि भी न भेज सके।

अलग चुनाव लड़ने से आर्य समाज के संगठन को जो हानि पहुंच सकती है वह असीम है। आर्य समाज में कई प्रकार के राजनैतिक विचार रखने वाले सदस्य हैं। उसमें कांग्रेसी भी हैं, जनसंघ के सदस्य भी हैं और हिन्दु सभा की विचारधारा में विश्वास रखने वाले भी हैं। चुनाव में भाग लेने की चर्चा चलने पर आर्य समाजों, प्रतिनिधि सभाओं और सार्वदेशिक सभा के अन्दर ऐसी जबरदस्त खेंचातानी चल जायगी कि उससे आर्य समाज के बने बनाये विशाल संगठन का जीवन संकट में पड़ जायेगा। अभी अपने अन्दर के चुनावों का बोझ उठाना ही कठिन हो रहा है। एक नया बोझ सिर पर रखने से तो संस्था की कमर ही टूट जायगी।

इन सब विचारों के आधार पर ही अब तक आर्य समाज विधान सभाओं या स्थानीय नगरपालिकाओं आदि के चुनावों से समूह रूप में अलग रहता रहा है। भविष्य में भी उसे यही नीति रखनी चाहिए। आर्य समाज के पास काम की कमी नहीं। अभी देश विदेश में तो क्या भारतवर्ष में भी प्रचार की सन्तोषजनक व्यवस्था नहीं कर सके। इस समय अपनी सारी शक्ति को एकत्र करके निश्चित लक्ष्य की पूर्ति में लगाना उचित है, उसे इधर-उधर बखेरने से हानि ही हानि है, कोई लाभ नहीं।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियां ❀

रूस के सम्मानित अतिथियों की भारत यात्रा

रूस के वर्तमान कर्णधार श्रीयुत बुल्गानिन और ख्रुश्चेव अपनी लगभग १ मास की भारत यात्रा करके १४ दिसम्बर ५५ को काबुल होते हुए अपने देश को लौट गये हैं। उनकी इस यात्रा को ऐतिहासिक महत्व प्राप्त हुआ है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। इस यात्रा के दूरवर्ती परिणामों के विषय में अभी कोई निश्चित बात नहीं कही जा सकती। इतना तो निश्चित ही है कि इस यात्रा से भारत वर्ष के अन्तर्राष्ट्रीय महत्व में बड़ी वृद्धि हुई है। सब से अधिक सोवियत नेताओं को भारतीय आतिथ्य, भारतीय संस्कृति और भारतीय आत्मा की सही झांकियां प्राप्त करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है। निश्चय ही सम्मानित अतिथि इनके विशेषतः भारतीय कर्णधारों की सदाशयता के सम्बन्ध में अच्छे भाव लेकर गये होंगे।

२० नवम्बर को देहली की विराट सभा में जब कि देहली की जनता की ओर से रामलीला के मैदान में उनका भव्य स्वागत हो रहा था रूसी प्रधान मन्त्री श्री बुल्गानिन महोदय के रूसी भाषा के भाषण का हिन्दी अनुवाद सुनकर जो

एक रूसी अधिकारी के द्वारा हुआ था, कौन हिन्दी प्रेमी होगा जिसका मस्तक अभियान से ऊँचा न उठा होगा। अनुवाद विशुद्ध हिंदी में किया गया था और हमारे उन वरिष्ठ राज्याधिकारियों की आँखें खोल देने वाला था जो अपने व्यवहार से हिन्दी को उस सम्मानित पद पर पहुंचाने में पश्चात् पद हो रहे हैं जिसकी वह विधान उपादेयता और देश हित की दृष्टि से अधिकारिणी है। रूसी नेताओं की इस यात्रा से राजकीय व्यवहार मे हिन्दी भाषा को शीघ्र से शीघ्र उचित स्थान दिये जाने की सम्भावनाएँ बहुत अधिक बढ़ गई हैं।

यदि सोवियत नेताओं की यह भारत यात्रा संसार के विशेषत: रूस के लोगों की जीवन भावना में इस प्रकार का परिवर्तन करने में योग दे दे जिससे मानव के सांसारिक अभ्युदय के साथ २ आत्मिक अभ्युदय की भी अधिकाधिक अवस्थायें उत्पन्न होकर विश्व के प्राणी मात्र पारस्परिक अभ्युदय में योग देने में अग्रसर हो जायें, तो यह यात्रा युग प्रवर्त्तक सिद्ध हो सकती है। रूस की वर्तमान आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रणालियों के विरुद्ध सब से बड़ा आरोप यह लगाया जाता रहा है कि ये प्रणालियां जिस मानव का निर्माण कर रही हैं वह बड़ा भयंकर है जिसके हृदय में अधर्म का भय नहीं है, जो अपनी प्रणालियों की रक्षा और प्रसार के लिए भले ही वे सदुद्देश्य पूर्ण हों रक्तपात और हिंसा का आश्रय लेने में भी बुराई नहीं समझता। क्या ही अच्छा हो कि रूस की उपर्युक्त प्रणालियाँ इस लांछन से शीघ्र से शीघ्र मुक्त हो जायें।

कहा जाता है (देखें हीराल्ड कलकत्ता दिस० ११) भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के महामन्त्री श्री अजय घोष ने अपनी रूस यात्रा के समय सोवियत नेताओं को प्रेरणा की थी कि वे अपनी प्रस्तावित भारत यात्रा स्थगित कर दें क्योंकि उनकी भारत यात्रा से भारत में कांग्रेस पार्टी का वर्चस्व बढ़ जायगा और कम्युनिस्ट पार्टी का प्रभाव कम हो जायगा। परन्तु सोवियत नेताओं ने न केवल अपनी यात्रा स्थगित ही न की अपितु प्रस्तावक महोदय की भर्त्सना भी की। हो सकता है कि इस सफल यात्रा के परिणाम स्वरूप श्री अजय घोष महोदय की आशंका सही सिद्ध हो जाय।

इस यात्रा से पाश्चात्य देश यथा अमेरिका, ब्रिटेन और पुर्तगाल इत्यादि बड़े रुष्ट प्रतीत होते हैं। भारत के प्रधान मन्त्री ने अनेक बार यह स्पष्ट किया और सम्मानित अतिथियों को विदाई देते समय भी स्पष्ट कर दिया है कि भारतवर्ष किसी राजनैतिक गुट में शामिल न होगा। अमेरिका आदि देशों को भारत के प्रधान मन्त्री के इरादों की सचाई पर विश्वास करना चाहिये। हमारे राष्ट्रीय कर्णधारों में प्रशासकीय अनुभव की कमी हो सकती है, परन्तु उनके इरादों पर सन्देह नहीं किया जा सकता। यही विशेषता है जिसके कारण अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में भारत की बात आदर के साथ सुनी जाती है, और विश्व के तनाव को कम करने के भारत के प्रयत्नों की सत्यता में विश्व के लोगों की आस्था है। स्वयं जिओ, दूसरों को जीने दो, साधनों की पवित्रता के साथ २ इरादों की सत्यता के सम्मिश्रण से परिष्कृत होने से ही विश्व की राजनीति कल्याण कारिणी हो सकती है। भारत की राजनीति का मूल मन्त्र भी यही रहा है। अमेरिका आदि प्रजातन्त्र की प्रणाली के पृष्ठ पोषकों को रुष्ट होने के स्थान में यह सन्तोष होना चाहिये कि भारत ने प्रजातन्त्र की प्रणाली अपनाई हुई है। रूसी नेताओं पर उनकी इस यात्रा से इस प्रणाली की महत्ता ही अंकित हुई होगी।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से सभा के प्रतिनिधि श्री शिवचन्द्र जी ने सम्मानित अतिथियों को वैदिक कल्चर, फिलासफी आव दयानन्द, वेदान्तदर्शन, श्री स्व० हरिविलास शारदा कृत अंग्रेजी ऋषि जीवनी, नैतिक जीवन, राजधर्म और आर्य समाज एण्ड वर्ल्ड प्रौबलम पुस्तकें भेंट की

जिनके लिए उन्होंने आभार प्रदर्शित किया तथा पुस्तकों के विषयों की सराहना की। उन्होंने यह भी आश्वासन दिया कि जब कभी वे पुनः भारत आयेंगे तो आर्य समाज और उसके कार्य तथा संस्थाओं को देखने का यत्न करेंगे। अब विदेशीय भाषाओं में अपने उत्तम साहित्य के प्रकाशन और प्रचार में हमारा यत्न बढ़ना चाहिये और ईंटों एवं पत्थरों में धन के खुले अपव्यय से हाथ खींचना चाहिए।

हमारे स्वराज्य की रक्षा कैसे सम्भव हो सकती है ?

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के छठे समुल्लास में राज धर्म के विषय पर लिखते हुए एक बात बड़े मार्के की कही है और वह यह कि जब तक मनुष्य धार्मिक रहते हैं तभी तक राज्य बढ़ता रहता है और जब मनुष्य दुराचारी होते हैं तब नष्ट भ्रष्ट हो जाता है। अतः राज्य की वृद्धि और सुरक्षा के लिए आवश्यक है कि प्रजा धार्मिक हो।

धर्म से अभिप्राय एक मात्र पूजा पाठ, अनुष्ठान व्रत; मन्दिरों में जाना आना नहीं है अपितु सत्याचरण एवं पक्षपात रहित न्यायाचरण इत्यादि व्यवहार अथवा ईश्वर की प्रेरणानुकूल आचरण है, जिससे मनुष्य की आत्मा पवित्र और विकसित होकर मनुष्य का अपना तथा समाज का योग क्षेम सिद्ध हो सके।

आज के मानव समाज की प्रवृत्ति अर्थ और काम की ओर प्रवृत्त है जिसके लक्ष्य में शरीर का शृंगार, उसकी शोभा और उसकी शक्ति की वृद्धि है जिसके फल स्वरूप प्रकृति की उपासना और दासता के कारण संसार परेशान है और आत्मा खोया हुआ सा देख पड़ता है। शरीर की उन्नति के प्रयत्न में मनुष्य आत्मा की उन्नति को भूल बैठा है। मनुष्य बाहर से सुखी आकर्षक और साफ बनने के यत्न में भीतर से सुखी और सुन्दर बनने के यत्न को छोड़ता जा रहा है। इसी से अशान्ति और युद्ध का खतरा व्याप्त हो रहा है। इसी सत्य को श्रीयुत वेकर महोदय ने इन शब्दों में व्यक्त किया है :—

"यदि मनुष्य की आत्मा का सम्यक विकास हो जाय तो वह स्वतः ही संसार के दुखों एवं युद्धों का निवारण कर देगा और विज्ञान एवं संसार के प्रसादों का धर्म पूर्वक उपयोग करेगा। अधर्म युक्त अर्थ व्यवस्था का अर्थ है युद्ध। हम सब एक ही परमात्मा की सन्तान हैं यही भाव मनुष्य में प्राणीमात्र के प्रति प्रेम और आदर के भाव भर कर पृथ्वी के दुरुपयोग एवं विविध अभिशापों से युक्त ही युद्धों को रोक सकेगा।"

स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश के छठे समुल्लास के अन्त में शरीर और आत्मा दोनों की साथ साथ उन्नति की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा है :—

"जो केवल आत्मा का बल अर्थात् विद्या ज्ञान बढ़ाए जाये और शरीर का बल न बढ़ावे तो एक ही बलवान पुरुष ज्ञानी और सेकड़ों विद्वानों को जीत सकता है और जो केवल शरीर ही का बल बढ़ाया जाय और आत्मा का नहीं तो भी राज्य पालन की व्यवस्था बिना विद्या के कभी नहीं हो सकती बिना व्यवस्था के सब आपस में ही फूट टूट विरोध लड़ाई झगड़ा करके नष्ट भ्रष्ट हो जावें। इस लिए सर्वदा शरीर और आत्मा के बल को बढ़ाते रहना चाहिए।"

शरीर का विकास ब्रह्मचर्य से और आत्मा का विकास विद्या, तप आत्म-त्याग और ईश्वर की आज्ञा पालन से होता है।

हमारे देश की नई अर्थ व्यवस्था का साम्यवाद के आधार पर विकास किए जाने का प्रयत्न हो रहा है जिसका अभिप्राय यह बताया जाता है कि सब को समान रूप से उन्नति का अवसर मिले और कोई खान पान रहन सहन आदि की तंगी से परेशान न रहे। इस की पूर्त्यर्थ समाज व्यवस्था

को प्राकृतिक उन्नति के ढांचे मे विकसित करने का प्रयत्न हो रहा है और धार्मिक ढांचे की उपेक्षा की जा रही है। यह राज्य की सुरक्षा और सामाजिक योग क्षेम के लिए भयावह है। हमारी उन्नति का लक्ष्य शारीरिक और आत्मिक उन्नति साथ २ होने पर ही वास्तविक उन्नति संभव हो सकेगी। कोई समय था जब कि भारत का जन साधारण पटवारी या थानेदार बनने मे ही अपनी उन्नति की चरमसीमा मानता था। उसके बाद समय आया जब कि लोग तहसीलदार वा डिप्टी कलेक्टर बनना चाहने लगे। इसके बाद वह समय आया जब कि जन साधारण की इच्छा नेता बनने की हुई। वह समय गया और स्वराज्य आया। अब जन साधारण की इच्छा मिनिस्टर बनने की रहती है। मनुष्य ने सब कुछ बनना चाहा परन्तु खेद है मनुष्य बनना न चाहा। यदि हमारी स्वराज्य सरकार ने मनुष्य के दृष्टिकोण मे स्वस्थ परिवर्तन की अवस्थायें उत्पन्न न की तो निश्चय ही हमारी उन्नति का सौदा बडा मंहगा सिद्ध होगा। क्या हमारी स्वराज्य सरकार प्रजा को इस खतरे से बचाने के लिए अग्रसर होगी और मनुष्यों को धार्मिक बनाने का यत्न करेगी ?

भौतिक दृष्टि से उन्नत हो जाने पर भी क्या मनुष्य सुखी और सन्तुष्ट हो जायेंगे ? कदापि नही क्यों कि मनुष्य एक मात्र भौतिक सत्ता नही है। उसके भीतर प्रबल आध्यात्मिक प्रेरणा है जिसे अत्यधिक भोग विलास और आमोद प्रमोद भी नहीं दबा पाते। यह सत्य है कि इस प्रेरणा की सन्तुष्टि अनर्गल धार्मिक अनुष्ठानो वा क्रिया कलापों से नहीं हो सकती। मनुष्य ऐसा मार्ग दर्शन और आनन्द चाहते हैं जिनके विषय में उनका मन और आत्मा यह कह सके "हां यही ठीक है।" यही मांग है जिसकी पूर्ति वेदों की ओर जाने से संभव हो सकती है।

सृष्टि की आयु

११ दिसम्बर के 'हिन्दुस्तान टाइम्ज' के रविवारीय परिशिष्ट में 'for man to know' अर्थात् 'मनुष्य के ज्ञान के लिए' शीर्षक से एक खोज पूर्ण लेख प्रकाशित हुआ है जिसमे सृष्टि की आयु ५ अरब वर्ष के आस-पास बतलाई गई है। लेख का प्रासङ्गिक अंश इस प्रकार है :—

'There is in process of refinement a new scale for the universe, for some of the early measurements, have been found to be faulty which is hardly surprising considering their nature and the new scale brings the astronomers and the geophysicists nearer together on an estimate of about 5000000000 years for the age of visible universe.'

अर्थात् सृष्टि की आयु निश्चित करने के लिए अब एक नए और परिमार्जित माप की खोज की जा रही है क्योकि प्रारम्भिक अवधियां त्रुटि पूर्ण सिद्ध हुई हैं और यह बात उनके स्वरूप की दृष्टि से आश्चर्य जनक प्रतीत नहीं होती। नए माप के अनुसार खगोल विद्या के पंडित सृष्टि की आयु ५ अरब वर्ष क आस-पास नियत कर रहे है।

इससे पूर्व विज्ञान वेत्ताओं द्वारा प्रतिपादन सृष्टि की आयु की अवधि इस प्रकार बतलाई जाती रही है :—

१ करोड़ वर्ष	प्रोफेसर एस० न्यू कोम्ब (पापुलर ऐस्ट्रानामी पृ० ५०९)
२ ,, ,,	प्रो० हिलनार (सीक्रेट डाक्टरिन जिल्द २ पृ० ६९४)
६ ,, ,,	प्रो० काल (क्लाइमेट इन टाइम पृ० ३३५)
८ ,, ,,	(आइने अक्बरी पृ० ७२७)
१० ,, ,,	प्रो० सर विलियम टामसन सीक्रेट (डाक्टरिन पृ० ६९४)
३० ,, ,,	प्रो० ,,
३५ ,, ,, ,,	निश्चाफ ,, ,,

५० „ „ „ रेड (भूतत्व परिषद् में दिया गया व्याख्यान)
१ अरब प्रो० हक्सले (वर्ल्ड लाइफ पृ०१८७
१ „ ६० करोड़ एक नवीन विज्ञान वेत्ता

मतवादी लोग सृष्टि की आयु ७ से १० हजार वर्ष तक नियत करते रहे हैं जिनकी मान्यता का उपर्युक्त वैज्ञानिक अनुसन्धानों से सहज ही खंडन हो जाता है और स्वयं ये समस्त स्थापनाएँ आधुनिकतम ५ अरब वर्ष की परिगणना के सामने अविश्वसनीय प्रमाणित हो जाती हैं।

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने (देखे सत्यार्थ प्रकाश तथा ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका) वेद और सूर्य्य सिद्धान्त के अनुसार सृष्टि की आयु ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष दर्शायी है जिसकी प्रामाणिकता गणित और खगोल विज्ञान के अनुसार असंदिग्ध है और विज्ञान की लगभग ५ अरब वर्ष की आधुनिकतम स्थापना ने उसे और भी असंदिग्ध बना दिया है। क्या वेदानुयायिओं के लिए यह सन्तोष और गौरव का विषय नहीं है कि आज के विज्ञान वादी उन मान्यताओं की ओर आ रहे है जो ईश्वरीय आदि ज्ञान वेदों ने स्थापित की हुई है। वेद ने एक छोटे से सूत्र में सृष्टि की आयु किस सुन्दरता के साथ नियत करदी है:—

शतं ते ऽ युतं हायनान्द्वे युगेत्राणि चत्वारि कृण्म:
(अथर्व० का० ८ अनु० १ मंत्र २१)

अर्थात् १० लाख तक विन्दु रखने पर उनसे पूर्व २, ३, ४ क्रमशः रखने से सृष्टि की आयु ४३२०००००० वर्ष निकल आती है।

मद्यनिषेध का विरोध

पिछले दिनों केन्द्रीय शासन द्वारा नियुक्त 'मद्यनिषेध अनुसन्धान समिति' की सिफारिशे प्रचारित हुई थी जिनमें मुख्यतम सिफारिश यह थी कि १ अप्रैल १९५८ तक समस्त देश में कानून द्वारा मद्य निषेध व्यवहृत कर दिया जाय। इस समिति के एक सदस्य श्री कोदण्डराव ने रिपोर्ट के साथ अपना मतभेद सूचक नोट संयोजित किया है। उन्होंने अन्य सदस्यों के इस मत से असहमति प्रकट की है कि शराब से सदाचार पर दुष्प्रभाव पड़ता है। अपने पक्ष के समर्थन में उन्होंने उन्नत देशों के उदाहरण दिए हैं जो शराब के संयत प्रयोग को न केवल अहानिकरही अपितु सम्मानित सामाजिक प्रथा भी मानते हैं। इन उदाहरणों के आधार पर उन्होंने यह स्थापना की है कि अमर्य्यादित सुरा पान से नैतिकता को खतरा हो सकता है मर्य्यादित पान से नहीं। भारत में कुछ वर्ग ऐसे हैं जिनमे शराब का प्रयोग होता है। यहां तक ही नही कई धार्मिक कार्यो के लिए शराब का प्रयोग विहित है। उनकी सबसे बड़ी शिकायत यह है कि समिति के अधिकांश सदस्यों ने 'मद्यनिषेध' के नैतिक पहलू को सामने रखा है। प्रशासकीय हानि लाभ और नीति की उपेक्षा करदी है क्या यह विचारधारा उस दास वृत्ति की द्योतक नही है जो हमे अंग्रेजी शासन के फल स्वरूप प्राप्त हुई थी जिसके चश्मे में से देखने पर त्याज्य वस्तुएँ भी ग्राह्य, देख पड़ती हैं? अपनी सच्चरित्रता के बलिदान पर पैसे कमाने वाले को भले ही वह कार्य ठीक प्रतीत हो, समाज उसका समर्थन न करता है और न कर सकता है। शराब के कर से राष्ट्रीय आय बढ़ती है परन्तु वह आय सर्व साधारण जनता की नैतिकता के बलिदान पर ही बढ़ती है। राष्ट्रीय आय की दृष्टि से मद्य निषेध की नीति को न अपनाने की सलाह देना वा उसका विरोध करना देश की नैतिकता के साथ खिलवाड़ करना है जिसे कोई भी समझदार राष्ट्र प्रेमी एक क्षण के लिए भी सहन नहीं कर सकता। जो देश वा मत शराब खोरी जैसी बुराई का चाहे वह संयत रूप से ही क्यों न हो समर्थन करते हैं वे जनता के मार्ग प्रदर्शक नही होते। यदि भारतवर्ष भी उन देशों के समान बन जाय तो उसकी अपनी वह विशेषता नहीं रहती जो भोगवाद से संतप्त देशों और जातियों के मुकाबले में उसे अब भी प्राप्त है

और वह है नैतिक मार्ग प्रदर्शन की क्षमता।

जो जन संयत शराब खोरी को उचित और स्वास्थ्य प्रद बतलाते हैं उन्हें एक विचारक की निम्न लिखित उक्ति को सामने रखकर अपनी मान्यता में परिवर्तन कर लेना चाहिए :—

"The first draught taken for health, the second for pleasure, the third for shame and the fourth for madness. A man takes a drink, then the drink takes a drink and the next drink takes the man" अर्थात् पहला घूंट स्वास्थ्य के लिए ले लेने पर दूसरा घूंट आनन्द के लिए, तीसरा पशु बनने के लिए और चौथा पागल बनने के लिए लिया जाता है। पहले मनुष्य एक घूंट पीता है, इसके बाद वह घूंट अपने लिए घूंट भरता है और उससे अगला घूंट मनुष्य पर हावी हो जाता है।

कानून का प्रचलन

रोहतक जिलान्तर्गत ग्राम भावड़ के हरिजन अध्यापक अपने गांव में एक सार्वजनिक कुएं से पानी भरने के लिए गए तो दो जमींदारों ने उनके घड़े तोड़ दिये और पानी न भरने दिया। इस पर अध्यापक ने पुलिस में रिपोर्ट कर दी। जमींदारों पर मुकद्दमा चला। फलतः श्री धरमरतन रेजीडेन्ट मजिस्ट्रेट की अदालत से अभियुक्तों को २-२ महीने की सख्त सजा दी गई। देहात में इस मुकदमे तथा इस फैसले की बड़ी चर्चा है। इस दिशा में कानून को अपने मार्ग में चलने देना ही श्रेयस्कर है।

देवनागरी लिपि अपनाने का परामर्श

उत्तर प्रदेश के राज्यपाल कन्हैयालाल मुन्शी ने उर्दू प्रेमियों से यह उचित ही आग्रह किया है कि वे उर्दू के लिए देवनागरी लिपि ग्रहण कर लें। जो भाषा जनता से प्रकृत सम्पर्क नहीं रखती वह मृत हो जाती है और यदि उर्दू को लोकप्रिय बनना है तो उसे देवनागरी लिपि ग्रहण कर लेनी चाहिए। श्री मुन्शी महोदय ने यह भी अत्यन्त महत्व पूर्ण सुझाव दिया है कि अन्य प्रादेशिक भाषाओं के लिए भी देवनागरी लिपि स्वीकार कर लेनी चाहिए। ऐसा हो जाने से निश्चय ही उत्तर और दक्षिण एक दूसरे के अति निकट आ जायेंगे। इतना ही नहीं भारत की एकता सुरक्षित हो जायगी। एक लिपि हो जाने से देश की विभिन्न भाषाओं के पढ़ने पढ़ाने का मार्ग भी प्रशस्त हो जायगा और लोगों को अमित प्रोत्साहन मिलेगा। मानवीय वाङ्मय के नए २ स्वरूपों से परिचित हो जाने से मनुष्य विचारों और जीवन की नई दुनियाओं में विचरने लगता है जो उसका बड़ा हित करती है।

इस सुधार के क्रियान्वित हो जाने से भारत के जन साधारण संस्कृत के अधिक निकट आ जायेंगे जो सब भाषाओं की जननी है। हम हृदय से मुंशी महोदय के सुझावों का अभिनन्दन करते हुए आशा करेंगे कि राज्य तथा प्रजा इन सुझावों को अविलम्ब मूर्त्त रूप देकर अपने एक बड़े कर्त्तव्य का पालन करेंगे और अपने को आने वाली सन्तति के हार्दिक धन्यवाद का पात्र बनायेंगे!

धर्म में भी काले गोरे का भेद

जोहान्सवर्ग (दक्षिण अफ्रीका) का ५ दिसम्बर का समाचार है कि लन्दन मिशनरी सोसायटी के सभापति रेवरेन्ड सेसिल नार्थ कोट ने एक सार्वजनिक सभा में घोषणा की है कि दक्षिण अफ्रीका की सरकार के 'बन्टु एजुकेशन एक्ट' की भावना ईसाइयत के प्रतिकूल है। उन्होंने बताया कि बाइबिल पर आश्रित ईसाई मत में रंग भेद को समर्थन प्राप्त नहीं है। शिक्षा के क्षेत्र में काले और गोरे का भेद न होना चाहिए।

ईसाई मत रंग भेद से कितना विकृत है इसका परिचय गोरी और काली चमड़ी के ईसाइयों के सामाजिक व्यवहार से सहज ही मिलता

रहता है। रंग विद्वेष के वशीभूत हो गोरे ईसाई काले ईसाइयों की जीते जी तो क्या मरने पर भी समानता का अधिकार नहीं देते। यदि ऐसा न होता तो गोरे ईसाइयों के श्मसान में काले ईसाइयों का दफनाया जाना उन्हें सह्य होता।

रूटर के एक ताजा समाचार के अनुसार न्यू ओर लियन्स नगर में रोमन कथोलिक चर्च के गोरे पादरियों ने नीग्रो जाति के एक काले पादरी की नियुक्ति के विरोध में जमीन आसमान एक किया हुआ है। प्रधान पादरी की इस धमकी का भी कोई प्रभाव नहीं हुआ कि वे इस नियुक्ति का विरोध करते वालों को चर्च से पृथक् कर देंगे। उल्टे विरोधी दल ने उस पादरी को ही चर्च से पृथक् करके प्रधान पादरी के अधिकार को चुनौती दे डाली है।

अन्तर्जातीय विवाह का महत्त्व

"नवभारत टाइम्स लिखता है :—उत्तर प्रदेश के मालमंत्री चौधरी चरणसिंह ने प्रकट किया कि किसी को जन्म से ऊंचा या नीचा समझने की भावना का अंत अन्तर्जातीय विवाह से ही हो सकता है।' चौधरी साहब के इस कथन में जरा भी अत्युक्ति नहीं। संसार में रोटी और बेटी का व्यवहार एक ऐसी चीज है जो अपरिचित व्यक्तियों के बीच भी प्रेम और सद्भावना का सृजन कर सकता है. और जितने भी व्यवहार हैं, वे प्रायः सब औपचारिक हैं और उनका कोई स्थायी मूल्य नहीं, परन्तु साथ साथ रोटी खाना और अपने ही हृदय के टुकड़ों को दूसरों को दे देना दिलों को ऐसे दृढ़ सूत्र में बांधने वाली चीजे हैं जिसे जाति, धर्म और स्थिति के भेदसूचक प्रहार भी भंग नहीं कर सकते। इनमें से भी चौधरी साहब ने अन्तर्जातीय विवाह का जो नुस्खा बताया है, वह वस्तुतः भेदभाव की समाप्ति के लिए राम बाण है। यदि इस सम्बन्ध में सारे उपदेशों और अब तक किए गये सब उपायों को इसके मुकाबले में रखा जाय तो वे सब मिल कर भी उसके पासंग भर नहीं हो सकते।

श्रीयुत चौधरी जयदेवसिंह जी

श्रीयुत चौधरी जयदेव सिंह जी की मृत्यु का समाचार आर्य जगत् में बड़े दुःख के साथ सुना जायगा।

वे एक सामाजिक कार्य के लिए १५ दिसम्बर को प्रयाग गए थे और चौक के आर्य समाज में ठहरे थे। सार्वदेशिक सभा के मंत्री और स्व० चौधरी जी के अभिन्न हृदय मित्र श्रीयुत बा० कालीचरण जी उनके साथ थे। १७ ता० को समाज मन्दिर में उन्हें रक्त चाप का भयङ्कर दौरा पड़ा जब वे स्नान करके अपनी धोती निचौड़ रहे थे। दौरा पड़ते ही वे बेहोश होकर भूमि पर गिर पड़े। कई दिन तक बेहोश रहे। वे १७ को ही चिकित्सा के लिए सप्रू हस्पताल में दाखिल कराये गए। प्रयाग के आर्य पुरुषों के द्वारा उनकी चिकित्सा परिचर्या और देख भाल की गई और उनमें किसी प्रकार की त्रुटि न आने दी गई। श्रीयुत पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय, पूज्या माता कलादेवी जी, श्रीयुत उपाध्याय जी के सुपुत्रों – श्रीयुत डा० सत्य प्रकाश जी तथा बाबू विश्वप्रकाश जी ने जो इस समय आर्य समाज चौक के प्रधान भी हैं तथा परिवार के अन्य लोगों ने उनकी परिचर्या आदि में कोई प्रयत्न उठा न रखा। चौधरी महोदय के छोटे भाई श्री विजयसिंह भी तार द्वारा सूचना मिलने पर उनके पास पहुंच गए थे। उत्तम से उत्तम चिकित्सा और परिचर्या के होते हुए भी जब यह समाचार मिला कि चौधरी साहब को औक्सीजन दी जा रही है तो ऐसा लगा मानो वे पार्थिव हाथों के संरक्षण से बाहर जा चुके हैं। हुआ भी ऐसा ही। २७ ता० के मध्यान्ह में प्रयाग से भेजे हुए उनके छोटे भाई श्री विजयसिंह जी के तार से उनकी मृत्यु का समाचार जानकर हम सब सन्न रह गए।

स्व० चौधरी महोदय फलावदा (मेरठ) के एक सम्भ्रान्त जमींदार कुल के सदस्य थे। उनके पिता स्व० चौधरी ईश्वरी प्रसाद जी अपने क्षेत्र के दृढ़ एवं प्रसिद्ध आर्य थे। उन्होंने आर्य समाज की तन, मन और धन सभी से सेवा की थी। चौधरी जयदेवसिंह जी को आर्य समाज की सेवा का भाव और उसके प्रति प्रेम अपने पिता जी से विरासत में प्राप्त हुए थे और उन्होंने अपने को इस विरासत के सर्वथा योग्य ही सिद्ध किया था।

एल-एल-बी० पास करने के उपरान्त उन्होंने मेरठ नगर को अपने व्यवसाय का स्थान बनाया था। यहीं से उन्होंने आर्य समाज की सक्रिय सेवा प्रारम्भ की थी। उन्होंने अपनी सेवाओं से मेरठ नगर के सामाजिक एवं सार्वजनिक जीवन में स्थान प्राप्त कर लिया था और उनकी सामाजिक सेवाओं का दायरा विस्तृत होते-होते उत्तर प्रदेश की आर्य प्रतिनिधि सभा तथा सार्वदेशिक सभा तक पहुँच गया था। वे वर्षों तक सार्वदेशिक सभा में आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रतिनिधि के रूप में सदस्य रहे। मृत्यु के समय भी वे सार्वदेशिक के अन्तरंग सदस्य तथा उत्तर प्रदेशीय आर्यप्रतिनिधि सभाकेमंत्री थे। सार्वदेशिकसभा की बैठकोंमें उनकी उपस्थिति से जीवन आ जाता था। निश्चय ही सार्वदेशिक सभा की बैठकों में बहुत दिनों तक उनकी अनुपस्थिति अनुभव होगी। उत्तर प्रदेश के आर्य जगत् में विशिष्ट कर्णधारों में उनकी गणना की जाती थी। आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के मान सम्मान और गौरव का उन्हें विशेष ध्यान रहता था और वे आर्य समाज की सेवा के लिए बड़े से बड़ा त्याग करने के लिए उद्यत रहते थे वस्तुतः उनके निधन से आर्य जगत् विशेषतः उत्तर प्रदेशीय सभाकी बड़ी हानि हुई है।

गत अगस्त मास में जब उक्त सभा के मंत्री श्रीयुत बा० कालीचरण जी को सार्वदेशिक सभा का मंत्री निर्वाचित हो जाने के कारण सार्वदेशिक सभा का नियमित कार्य्य भार संभालने के लिए उत्तर प्रदेशीय सभा के मंत्री पद से मुक्त होना पड़ा तो उक्त सभा के मंत्रीत्व का गुरुतर भार स्व० जयदेवसिंह जी के कंधों पर डाला गया था।

इस नवीन व्यवस्था से जो उनकी प्रेरणा पर की गई थी श्री बा० कालीचरण जी एक प्रकार से निश्चित से हो गए थे। परन्तु किसे पता था कि चौ० जयदेवसिंह जी इतने शीघ्र ही उत्तर प्रदेशीय सभा तथा हम सब से सदैव के लिए छीन लिए जायेंगे और उनका जीवन सूत्र देखते ही देखते कट जायगा। गत अगस्त मास में जब वे सार्वदेशिक की अन्तरंग के लिए देहली आए हुए थे आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेशके मंत्री पदको संभाल लेने के विषय में चर्चा छिड़ जाने पर उन्होंने अपनी कठिनाई बताते हुए कहा था **आर्य समाज को मेरे तन, मन और धन पर हर समय पूर्ण अधिकार है वह जब चाहे जिस रूप में चाहे उसकी मांग कर सकता है मुझे इन्कार नहीं और न होगा परन्तु मेरे सामने सब से बड़ी कठिनाई यह है कि मैं मेरठ में रहते हुए सभा की यथेष्ट सेवा न कर सकूंगा। वकालत का कार्य्य छोड़ने की अभी स्थिति नहीं है ऐसी अवस्था में नाम के लिए मंत्री पद का भार संभाल लेना अपनी आत्मा को धोखा देना है जो मुझे गवारा न होगा परन्तु यदि विवशता हुई तो आर्य समाज के हित को आगे रखूँगा।"** उन्होंने मंत्री पद का भार संभाल कर वस्तुतः आर्य समाज के हित को ही आगे रखा।"

चौधरी जयदेवसिंह जी अनेक आत्मीय जनों के अतिरिक्त अपने पीछे २ छोटे-छोटे बच्चों (एक

(शेष पृष्ठ ५७६ पर)

मेरे सहयोगी और साथी चौधरी जयदेव सिंह जी

(श्री बाबू कालीचरण आर्य, मन्त्री सार्वदेशिक सभा)

मेरी लेखनी दहल उठती है जबकि मुझे आज अपने एक सहयोगी और साथी का परिचय उनके निधन पर लिखना पड़ रहा है। मेरा धैर्य मेरा साथ छोड़ना चाहता है जब कि मैं इन शब्दों को लेकर चौधरी जयदेवसिंह के विषय में कुछ लिख रहा हूं। चौधरी जी मुझ से आयु में कम थे परन्तु उनका सा उत्साह उन्हें मुझसे बड़ा बना देता था। उनमें आर्य समाज के कार्य की लगन, निर्भीकता, कार्यकुशलता और सूझ ऐसे गुण थे जिन पर कोई भी साथी गर्व कर सकता है। ऐसे अनेकों अवसर आते थे जिन पर गम्भीर मन्त्रणा की आवश्यकता होती थी किन्तु ऐसे अवसरों पर चौधरी जयदेवसिंह जी की सूझ हम सब के लिए मार्ग दर्शक के रूप में काम आती थी। आर्य समाज का कोई भी कार्य कहीं भी हो वे उसे पूरा करने के लिए सर्वथा उद्यत रहते थे।

चौधरी जयदेवसिंह जी का सारा का सारा परिवार ऋषिभक्त और आर्य समाज का प्रेमी रहा है। स्वयं चौधरी जयदेवसिंह जी तो अपने जीवन भर आर्य समाज की सेवा करते रहे। अन्तिम समय उनका जीवन एक सेना नायक के रूप में आर्य समाज की सेवा करते हुए समाप्त हुआ। विधि का विधान देखें कि आर्य समाज के कार्य से आर्य समाज मन्दिर प्रयाग में (घर में नहीं) वे रुग्ण हुए और आर्य समाज की सेवा में अपनी जीवनाहुति दे दी। मेरे साथी की यह कर्तव्य-निष्ठा मेरे लिए गर्व की वस्तु है और नवयुवकों के लिए अनुकरणीय। परन्तु उनका इतनी कम आयु में साथ छूट जायगा इसकी मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था।

जब पिछले दिनों सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली में मन्त्री सभा के रूप में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ तो मेरे सम्मुख एक जटिल समस्या आ खड़ी हुई कि उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा और सार्वदेशिक सभा दोनों के मन्त्री पदों को मैं कैसे निभाऊं--किसको छोड़ूं, मेरे लिए दोनों ही पद एक जैसे थे, उस समय चौधरी जयदेवसिंह जी ही मेरे संकट काल में काम आये और उन्होंने उत्तरप्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा का मन्त्री पद संभाल कर मुझे निश्चिन्त कर दिया।

आर्यमित्र के प्रकाशन में मुझे उनसे जो बल मिला वह भी दिनों दिन बढ़ रहा था और मुझे विश्वास हो चला था कि मेरे उत्तरप्रदेश से अनुपस्थित रहने पर आर्य मित्र को कोई क्षति न पहुँचेगी।

उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा का मन्त्री पद संभाल कर चौधरी जयदेवसिंह जी ने बड़े साहस का कार्य किया था। उनकी घरेलू परिस्थिति ऐसी न थी कि वे इस महान् कार्य भार को संभाल सकें, क्योंकि वे मेरठ में सफल एडवोकेट थे और उनकी पत्नी की मृत्यु के कारण उनके परिवार में बच्चों की देखभाल और घर की संभाल का कार्य भार भी उन पर ही आ पड़ा था। परन्तु अपनी चलती हुई वकालत और घर का मोह उन्हें आर्य समाज के कार्य से विमुख न कर सका। जो लोग उन्हें समीप से जानते हैं वे भली भांति कह सकते हैं कि जब से वे उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री बने उनका अधिकांश समय सभा के कार्य में ही व्यय होता था और मेरठ के साथ ही लखनऊ उनका स्थान बनता जा रहा था।

(शेष पृष्ठ ५७६ पर)

जीव और प्रकृति

[लेखक—श्री प० इन्द्र विद्यावाचस्पति]

क्या जगत् असत्य है ?

मायावाद का आधार उपनिषदों को माना जाता है। ईशोपनिषद की पहली ऋचा का पूर्वार्द्ध ही उन के मन्तव्य का खण्डन कर देता है। 'यह जगत ईशावास्य है।' इस कथन से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि ईश और जगत दोनों सत्य है, और भिन्न हैं, आच्छादित करने वाला आच्छादित होने वाले से भिन्न होना चाहिये। घर और घर मे रहने वाला—दो अलग अलग पदार्थ होने चाहिये। उपनिषद के प्रथम वाक्य से ही मायावाद का निषेध जाता है।

यदि इस कल्पना को मान लिया जाय कि केवल एक ब्रह्म ही सत्य है शेष सब मिथ्या है और इस जगत की अनुभूति केवल भ्रान्ति या माया का परिणाम है तो कुछ प्रश्न उत्पन्न होते हैं जिन के उत्तर सरल नहीं है।

पहला प्रश्न यह है कि यह जगत जिस भ्रान्ति या माया का परिणाम है, वह किसमे रहती है?क्या ब्रह्म में ? जब केवल ब्रह्म ही सत्य है, अन्य कोई नहीं, तो निश्चय ही ब्रह्म माया का आधार होना चाहिये। उपनिषद मे उसे शुद्ध और अपापविद्ध कहा है। शुद्ध और निर्लेप मे माया कैसी ? और सर्वज्ञ मे भ्रान्ति कैसी ?

दूसरा प्रश्न यह है कि माया या भ्रान्ति स्वय कोई सत्य पदार्थ है या नहीं ? यदि है तो दो सत्य पदार्थ मानने पड़ेंगे, परन्तु यदि असत है तो जिस की स्वय कोई सत्ता नहीं, वह जगत को कैसे बना सकती है ?

तीसरा प्रश्न यह है कि यदि केवल एक ब्रह्म ही सत है और आत्मा तथा प्रकृति की सत्ता ही नहीं तो वेदोक्त प्रार्थनायें उपासनाये और साधनाये व्यर्थ हो जाती हैं। क्या ब्रह्म अपनी प्रार्थना और उपासना स्वय करता है ? क्या साधना द्वारा ब्रह्म ही ब्रह्म को प्राप्त करता है ?

इन अत्यन्त स्वाभाविक और मौलिक प्रश्नों का सीधा उत्तर मायावाद के पास नहीं है। इन प्रश्नों के उत्तर देने के लिये उन्हे ऐसा विस्तृत शब्दों का जाल फैलाना पड़ता है कि मनुष्य का मन उस मे उलझ कर कर्म योग को सर्वथा भूल जाता है। वह एक निर्मूल सन्तोष मे पड जाता है जो उसे अकर्मण्य बना देता है। ईशोपनिषद मे जिस कर्म सिद्धान्त का प्रतिपादन है, उसका आधार यह है कि ईश्वर सत है और जगत भी। भेद इतना है कि जहा ईश्वर सर्वज्ञ और अविकारि है वहा जगत विकारी और परिवर्तनशील है।

बन जा और बन गया ?

यह कल्पना कि ईश्वर ने कहा कि बन जा और बिना किसी उपादान कारण के सब कुछ बन गया, तर्क सगत नहीं है। अत्यन्त अभाव से कोई स्थूल वस्तु उत्पन्न नही हो सकती। भगवद गीता में कहा है—

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सत।

अत्यन्त अभाव मे से भाव का उत्पन्न होना जैसा असम्भव है विद्यमान वस्तु का अत्यन्त अभाव होना भी वैसा ही असम्भव है। जो चीज विद्यमान है वह उत्पन्न होने से पहले किसी न

किसी सूक्ष्म रूप मे विद्यमान थी। जैसे घड़ा मिट्टी के रूप में और मिट्टी पार्थिव अणुओं के रूप मे, पहले से विद्यमान रहते है। वैसे ही प्रारम्भ मे अणु मूलप्रकृति के रूप मे विद्यमान रहता है।

केवल ईश्वरेच्छा से अभाव से अभाव उत्पन्न हो गया इस कल्पना पर सब से बड़ी आपत्ति यह है कि ईश्वर के मन मे यह प्राकृतिक जगत बनाने की इच्छा अकस्मात् क्यों उभर पड़ी? जो लोग ईश्वर को मानते है, वे उसे पूर्ण और आनन्द स्वरूप भी मानते हैं, जो पूर्ण और आनन्द स्वरूप है, उसने कारण जगत् बनाने का कष्ट क्यों उठाया? क्या अकेले में उस का जी उकता गया था, या खिलौने से खेलने की इच्छा हुई थी? सोचें तो हम इस परिणाम पर पहुँचे बिना नहीं रह सकते कि यदि जगत है, तो जगत् का एक चेतन कर्ता भी होना चाहिये, और यदि कर्ता है तो उपादान कारण—या मसाले की भी, कि जिस से यह सृष्टि बनती है विद्यमानता भी अनिवार्य है वह उपादान कारण या मसाला 'प्रकृति' है।

कर्ता और भोक्ता-जीव

ईशोपनिषद् की पहली ऋचा का तीसरा पद है 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः' इस का भावार्थ यह है कि ईश्वर जगत् के अन्दर और बाहर व्याप्त है, इस कारण तुम जगत् का त्यागपूर्वक उपभोग करो। यहां 'तुम' से जिस का निर्देश है, वह भोक्ता जीव है। इस उपनिषद् की १७ वी ऋचा में जीव का 'क्रतु' शब्द से सम्बोधन किया गया है। क्रतु का अर्थ है कर्ता। ईश्वर भी कर्ता है, परन्तु जीव कर्ता और भोक्ता दोनों है. यही दोनों मे भेद है। कुछ विचारक जीव को ब्रह्म का अंश मानते हैं, और उसकी अलग सत्ता स्वीकार नहीं करते। वे अपने मन्तव्य का आधार 'तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः इत्यादि उपनिषद् वाक्यों को बताते हैं। इस ऋचा मे जिस 'एकत्व' का निर्देश है, वह मोक्षावस्था की अनुभूति के सबन्ध में है। जो मनुष्य तत्वज्ञान को प्राप्त कर ले उसके लिये वह पर्दा नहीं रहता, जो साधारण मनुष्यों की आंखो से ईश्वर को तिरोहित करता है, वह सर्वत्र व्यापक ईश्वर को बिना किसी व्यवधान के देख सकता है। इस का यह अभिप्राय नहीं कि उस की अलग सत्ता ही नहीं है।

ईश्वर, आत्मा और प्रकृति मे परस्पर जो सम्बन्ध हैं, उसका श्रुति और उपनिषदों मे अनेक स्थानों पर, आलङ्कारिक रूप मे वर्णन किया गया है। श्वेताश्वतर उपनिषद् की ऋचा है—

ज्ञाज्ञौ द्वावजावीशानीशावजा
ह्येका भोक्तृ भोगार्थयुक्ता।
अनन्तश्चात्मा विश्वरूपो ह्यकर्ता
त्रय यदा विन्दते ब्रह्ममेतत्॥

दो चेतन हैं—एक पूर्ण ज्ञान वाला ईश, और दूसरा अल्प ज्ञान वाला अनीश। भोक्ता के भोग निमित्त अजा, नित्य प्रकृति है। उनमे से जो अनन्त है और जिसकी शक्ति विश्वभर मे अनेक रूपों मे प्रकट हो रही है वह कर्मो का अकर्ता है। जो मनुष्य इन तीनों को भली प्रकार जान लेता है, उसने जान लिया कि ब्रह्म क्या है? अन्यत्र कहा है :—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया,
समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्-
त्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति॥

ईश्वर सृष्टि का कर्ता और नियन्ता है। मनुष्य कर्म कर्त्ता है और उनके फल भोगता है। प्रकृति जगत् का उपादान कारण है। जीव उस प्रकृति की उस शाखा पर बैठ कर फलों का स्वाद लेता, और ईश्वर के नियम के अनुसार सुख दुःख का उपभोग करता है।

ईश्वर, जीव और प्रकृति के सम्बन्धों का ठीक ठीक परिज्ञान वैदिक कर्मकाण्ड का आधार है। शाखा पर बैठा हुआ भोक्ता पक्षी चाहे जिस फल पर चोंच मार सकता है। वह फल कच्चा भी हो सकता है पक्का भी। वह मीठा भी हो सकता है, फीका भी। जैसे फल पर जीव रूपी पक्षी चोंच मारेगा, सृष्टि का अधिष्ठाता ईश्वर उसी के अनुसार सुख या दुःख देगा। मनुष्य को अपने कर्मों का फल अवश्य मिलेगा देश समय या परिस्थिति के भेद से वह कर्मफल से नहीं बच सकता, क्योंकि ईश्वर नित्य सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक है।

'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा',

उद्यान मे अनार के वृक्ष की डाल पर बैठा हुआ सुग्गा यह नहीं सोचता कि मुझे इसके फलों पर चोंच मारनी चाहिये या नहीं, क्योंकि उसमे धर्म और अधर्म—कर्तव्य या अकर्तव्य—मे भेद करने की शक्ति नहीं, परन्तु मनुष्य को वह शक्ति प्राप्त है। पशु पक्षियों से मनुष्य मे यही भेद है कि मनुष्य सदसद्विवेक का सामर्थ्य रखता है पशु पक्षी नहीं। जो मनुष्य भले और बुरे को पहिचानने का यत्न नहीं करता, वह पशु पक्षियों से बेहतर नहीं।

जो मनुष्य सोचने की शक्ति रखता है, वह प्रकृति रूपी वृक्ष की शाखा पर बैठ कर सोचता है कि मै इसके फलों पर चोंच मारू या नहीं? यदि मारू तो किस फल पर? कौन सा फल पका हुआ होगा, और कौन सा कच्चा? मीठे को खाऊ या कच्चे को? और खाऊ भी या नहीं? ये सब प्रश्न हैं, जो विवेकी पुरुष के मन मे उत्पन्न होते हैं।

कभी कभी ऐसा होता है, कि मनुष्य अकस्मात या अज्ञानवश ऐसे फलों पर चोंच मार बैठता है, जो खट्टे हैं या स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। सुख के लिए काम किया था, फल उल्टा निकला। तब वह खिन्न होकर सोचने लगता है कि मै इस वृक्ष के फलों का उपभोग करू या नहीं? ये फल तो खट्टे या रोगकारी है। क्या यह अच्छा न होगा कि मै खाना पीना छोड कर उपवास द्वारा शरीर त्याग कर दू? दुःख का अनुभूति को याद करके वह जगत को पाप का स्थान और दुःख का कुण्ड मानने लगता है, और समझता है कि यदि मै जगत से सर्वथा अलग थलग हो जाऊ तो मुझे अनन्त सुख मिलेगा। ऐसे सन्देह के जगल मे भटकने वाले लोगों के लिये श्रुति का विधान है कि 'त्यक्तेन भुञ्जीथा' इस जगत का उपभोग करो, परन्तु वह उपभोग त्याग पूर्वक हो।

त्यागपूर्वक भोग का वैदिक सिद्धान्त जितना ऊचा है, उतना ही व्यावहारिक भी है। साधारण रूप से भी यह समझा जाता है कि जो आदर्श बहुत ऊचा हो वह व्यावहारिक नहीं होता। यदि केवल त्याग को ही आदर्श मान लिया जाय, तो वह न मनुष्य मात्र के लिये सम्भव है, और न व्यावहारिक है। इसमे कोई सन्देह नहीं कि सब मनुष्य ससार की सब वस्तुओं को और सब कर्मों को छोडकर निठल्ले होकर बैठना चाहें तो यह ससार पापों का पुज बन जायगा। जीवित मनुष्य सर्वथा कर्महीन नहीं रह सकता। वह सोचेगा भी और करेगा भी। यदि अच्छे काम न करेगा, तो बुरे करेगा। यह लोकोक्ति सर्वथा सत्य है कि निठल्ले को शैतान अगूठा दिखाता है। भगवद गीता मे कहा है—

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत।
कार्यते ह्यवश कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः॥

कोई जीवित मनुष्य क्षण भर भी कर्म किये बिना नहीं रह सकता। प्राकृतिक जगत का ससार उससे बरबस कर्म कराता है। तब मनुष्य के लिए यही उचित है कि ससार मे अच्छे कर्म करता

दीक्षा के विषय में जांच और कुछ सम्मतियां

आर्य समाज उज्जैन ने एक प्रतिनिधि मन्डल तेरा पंथी आचार्य श्री तुलसी द्वारा संचालित बाल दीक्षा के विषय में जांच करने को कायम किया था जिसके संयोजक श्री पं० बसन्तीलाल जी वैद्य हैं। उनका कहना है कि-(१) आचार्य श्री तुलसी ६ वष तक के लड़के लड़कियों को दीक्षा का प्रतिपादन करते हैं। (२) पारमार्थिक शिक्षण संस्था लड़के लड़कियों को दीक्षा देने के लिये ही चलाई जारही है और (३) संस्था में लड़के लड़कियां आचार्य जी की स्वीकृति के बिना न तो दाखिल होते हैं और न खारिज हो सकते हैं। इस प्रकार आचार्य श्री तुलसी जी ही उस संस्था के सर्वेसर्वा हैं। शिक्षण संस्था में इस समय २३ लड़कियां और ७ लड़के दीक्षार्थी मौजूद हैं।

और ईश्वर के दिये हुए भोग योग्य पदार्थों का उपभोग करता हुआ जीवित रहे।

भोग का अभिप्राय क्या है ?

मनुष्य अपनी शारीरिक और मानसिक आवश्यकताओं को बाह्य साधनों से पूरा करके दुःख की निवृत्ति और सुख की प्राप्ति करता है, उसका नाम भोग है। अन्न, वस्त्र, सम्पत्ति, घर, उपवन, यान, मित्र, पत्नी, सन्तान संसार में सम्मान, और पद—ये सब वस्तुयें यदि सीमित रूप में और सद् साधनों से प्राप्त की जांय तो दुःख को दूर करके सुख की प्राप्ति कराती हैं। यदि मनुष्य निर्दोष उपायों से इनकी प्राप्ति का प्रयत्न करे, और फिर नियत सीमा के अन्दर संयम पूर्वक उनका उपयोग करे, तो वह दोषी नहीं होता। अच्छे साधनों द्वारा कर्तव्यों का पालन करते हुए सुख प्राप्त करना बहुत ऊंचा धर्म है। जगत् के नियन्ता ईश की दृष्टि में वह व्यक्ति बुरा नहीं समझा जायगा, जो उसके बनाये उत्तम पदार्थों को निर्दोष उपायों से प्राप्त करेगा, और उचित सीमा के अन्दर २ उनका भोग करेगा।

बुराई तब उत्पन्न होती है, जब भोग के साधनों को प्राप्त करने के लिए कुटिल और नीच साधनों को काम में लाया जाता है। वैभव पाने के लिये ठगी, शक्ति प्राप्त करने के लिये क्रूरता, और इन्द्रियों को सुख देने के लिए दुराचार आदि उपायों का प्रयोग उन कर्मों को पाप और उन सुखों को हेय बना देता है। कर्तव्य मान कर जो भले कर्म किये जाते हैं—उनका फल शुभ होता है, और शारीरिक और मानसिक आवश्यकताओं को पूरा और कर्तव्यों का पालन करते हुए मधुर वस्तुओं के भोग से जो सुख प्राप्त किया जाता है, वह अच्छे कर्मों का फल होने के कारण उचित है।

वह सुख रूपी फल दुःख देने वाला हो जाता है, जब मनुष्य उसमें लिप्त हो जाय—उसका दास बन जाय। मनुष्य की सब से पहली आवश्यकता-भोजन-है। भोजन शरीर रक्षा का साधन है। वह यदि सेहत के लिए लाभदायक और शरीर की प्रकृति के अनुकूल हो, तो वह लाभदायक और सुखकारी होता है। रसना मनुष्य को इस लिये मिली है कि वह अच्छे और बुरे रसों की परीक्षा करके मनुष्य को बतलाए कि क्या भोग्य और अभोग्य है। जब तक हम स्वास्थ्य के उपयोगी, और सौम्य रसों वाले भोजन का सेवन करते हैं तब तक उसमें कोई दोष नहीं आता।

सार्वदेशिक–मासिक पत्र, दिल्ली—

छोटी आयु की कुमारियों के लिये परमार्थ शिक्षण की व्यवस्था करना समझ में आने वाली बात नहीं है। यदि यह व्यवस्था बड़ी आयु के परमार्थ का मर्म समझने वाले स्त्री पुरुषों के लिये होती तो बात समझ में आती। जो माता पिता परमार्थ शिक्षण के लिये इस प्रकार के विद्यालय में स्वयं भर्ती होने के स्थान में अपने सुकुमार बच्चों को भर्ती करते हैं, वे बच्चों का हित नहीं अपितु अहित करने का अपराध करते हैं। आशा है इस प्रकार का आयोजन करने वाले महानुभाव कन्याओं के लिये ऐसी शिक्षा की व्यवस्था करेंगे जो उन्हें अच्छी पुत्री, अच्छी माता, अच्छी गृहणी और अच्छी नागरिका बना सके।

श्री० भंवरलालजी सिंघी, कलकत्ता–

बाल दीक्षा प्रतिरोध के लिये हमें सजग होकर काम करने की जरूरत है।

श्री० सिद्धराजजी ठड्ढा, गया–

नाबालिग बच्चे बच्चियों को संन्यास देना स्पष्ट ही अनुचित है।

श्री० हजारीलालजी सेठिया, बीकानेर–

मैं आचार्य तुलसीजी की पारमार्थिक शिक्षण संस्था के नाम से जो दीक्षार्थी लड़के लड़कियां साथ साथ रहते हैं, उसका घोर विरोधी हूं।

जैनमुनि श्री सुशीलकुमार जी, उज्जैन–

२१ वर्ष से कम उम्र के जिस व्यक्ति को सरकार वोट देने तक का अधिकार नहीं देती हैं, उसे जैन दीक्षा जैसी कठोर संयम साधना में बांधने का किसी को अधिकार नहीं है।

श्री० काका कालेलकरजी, नई दिल्ली —

जो पुरुष साधु, संन्यास और सेवा की दीक्षा लेते हैं, वे स्वयं भले ही अर्थोपार्जन न करें किन्तु उनको व्यावहारिक और अर्थकरी विद्या का ज्ञान तो होना ही चाहिये।

स्त्रियों को तो 'खतरनाक परावलम्बन' से बचाना हो तो कुछ न कुछ समाजोपयोगी हुनर सिखाना ही चाहिये।

आचार्य श्री० विनोबाजी

ता २२-६-५५ का पत्र आज (१५-१०-५५) को मिला सामाजिक कार्य और अध्यात्म का भेद करने की कल्पना स्पष्ट ही एकांगी और अशास्त्रीय है।

महात्मा गांधीजी—

हरेक जवान शंकराचार्य या बुद्ध की नकल करने लग जाय तो यह शोभा के बजाय शर्म की बात होगी। आज कल की दीक्षा में कायरता के सिवा और कोई बात देखने में नहीं आती और इसीसे साधु भी तेजस्वी होनेके बजाय ज्यादातर हम जैसे ही दीन और अज्ञानी होते हैं। सन्तोष के साथ, पाक रहकर, सच्चाई को रखते हुए, गरीबी से घर का काम चलाना, पराई स्त्री को मां बहिन समझना, अपनी स्त्री के साथ भी हद बांध कर भोग भोगना, शास्त्रों वगैरा का अध्ययन करना और भरसक देश की सेवा करना कोई छोटी मोटी दीक्षा नहीं है। मुझे उम्मीद है कि नौजवान (लड़के लड़कियों) को कोई दीक्षा नहीं देगा।

(ता० २८-८-२७)

विनीत—
मूलचन्द अग्रवाल

———

सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

सब द्वार खोल दो

[श्री डा० सूर्यदेव शर्मा साहित्यालंकार एम० ए० डी० लिट्, अजमेर]

१ वर्ष बीते कुल पाँच सहस्र, अविद्या तम का आया तोम।
विश्व में आकर अन्ध अजस्र, किया आच्छादित वैदिक व्योम।।

२ 'फूट' फल खाकर फूटा हाय, महाभारत से भारत भाग।
संकुचित सोया सिकुड़ी काय. न जागा, घर में लागी आग।।

३ अखिल आवृत कर लिये कपाट, न था निर्गम आगम का द्वार।
न अन्तःपुर था सुगम सपाट, बना तम मंडित धूम्रागार।।

४ किन्तु कुछ प्रभु का "दया" प्रभात, अखिल "आनन्द" रूप सुखमूल।
दिव्य ज्योतिः का प्रादुर्भाव, हुआ अविकल अनुपम अनकूल।।

५ नभो मंडल था तिमिराच्छन्न, छटा जब चमकी चपला रूप।
किन्तु क्षण में हो मरणासन्न, तिरोहित होती ज्योति अनूप।।

६ अमावस्या थी मंगलवार, दिवाली का था सन्ध्या काल।
जब कि विद्युत का पुण्य प्रसार. हुआ अन्तर्हित तम के जाल।।

७ किन्तु उसने की जाते समय, एक आकाश गिरा गम्भीर।
सजग हो आओ सारे अमय. दिव्य वाणी सुन लो हो धीर।।

८ यदपि हैं बीते इतने अब्द, सज चुके शतशः नूतन साज।
कान में गूँज रहे हैं शब्द, किन्तु उस दिव्यात्मा के आज।।

९ "धर्म के खोलो सारे द्वार", शीघ्र "कृण्वन्तो विश्वम् आर्य"।
बनो "वसुधैव कुटुम्ब" उदार, करो वैदिक प्रचार सत्कार्य।।

१० यवन ईसाई वा अंग्रेज, यहूदी हबशी हो या बुद्ध।
सभी को धर्म निमन्त्रण भेज, करो वैदिक विधान से शुद्ध।।

११ आपके पतित हुये जो भ्रात, शरण लें यदि कर पश्चाताप।
शुद्धि का खोल द्वार अवदात, प्रेम से मिलो उन्हें भी आप।।

१२ वेद मन्दिर का खोलो द्वार, किसी का हो न निषिद्ध प्रवेश।
सभी का है समान अधिकार, घोषणा कर दो देश विदेश।।

१३ धर्म का कोई ठेकेदार. न प्रभु ने रचा विशुद्ध विशेष।
शूद्र आदिक पर अत्याचार, अब नहीं रह सकता अवशेष।।

१४ वेद अध्ययन नहीं है स्वत्व, किसी ब्राह्मण ही का जग मध्य।
सभी में है प्रभु का सम तत्व, शूद्र को कौन कहेगा बध्य।।

१५ ब्रह्म का वन्दन पूजन पाठ, शूद्र भी करें स्वमति अनुकूल।
किसी को क्यों मारे है काठ, चुभें क्यों पर उन्नति से शूल।।

महर्षि के जीवन के सम्बन्ध में कुछ विवाद-ग्रस्त विषय

[श्रीयुत प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति]

मृत्यु कैसे हुई ?

आर्य पथिक पण्डित लेखराम जी ने जोधपुर और अजमेर जाकर जो छानबीन की उसका परिणाम उनकी मृत्यु के पश्चात् प्रकाशित स्वामीजी के जीवन चरित मे दिया गया है। उस वृत्तान्त में चार बाते मुख्य थीं। (१) स्वामी जी की मृत्यु दूध के साथ दिये हुए विष से हुई। (२) विष देने की प्रेरणा जोधपुर के महाराज की नन्ही जान नाम की वेश्या के षडयन्त्र से की गई। (३) जब तक स्वामी जी जोधपुर मे बीमार रहे तब तक उनका इलाज ठीक नहीं हुआ। (४) समझा जाता है कि डा० अलीमर्दान खां के इलाज से स्वामी जी का रोग दिनों दिन बढ़ता गया।

यह प्रारम्भिक वृत्तान्त था जिसे प्राय सभी ने अब तक प्रामाणिक माना है। कुछ वर्षों के पश्चात उस वृत्तान्त मे एक नई बात जुड़ गई। यह कहा गया कि विष देने वाले रसोइये का नाम जगन्नाथ था। जगन्नाथ के मन में स्वामी जी की दशा देख कर पश्चात्ताप उत्पन्न हुआ और उसने अपना दोष स्वामी जी के सामने स्वीकार कर लिया। इस पर

---

१६ हृदय मन्दिर का खोलो द्वार, मिलो अपनों से बाहु पसार।
शूद्र को दो समान अधिकार, घृणा का भाव हृदय से टार॥

१७ कूप मण्डूक बनो मत और, बनो समदर्शी साधु समान।
समय की देखो गति मति दौर, खंड कर दो पाखंड वितान॥

१८ जाति मन्दिर का खोलो द्वार, कर्म का "पासपोर्ट" सुप्रमाण।
मिले सब को सम अवसर वार, लगा दे उन्नति में प्रण प्राण॥

१९ जाति बन्धन का गढ दुर्जेय, करो श्रुतियों से भस्मीभूत।
एक आर्यत्व सभी का ध्येय, रहे ना कोई कहीं अछूत॥

२० जन्मता कभी न कोई नीच, नहीं लेकर आता है पाप।
एक विधि आते आंखें मीच, गर्भ में लगे न द्विज को छाप॥

२१ कहाँ से लाये बिस्वे बीस, बने कैसे द्विजाति सिरमौर।
कर्म बिनु काढोगे बस खीस, बनो जब कुटिल काल के कौर॥

२२ देश मन्दिर का खोलो द्वार, करो अन्यों से सम व्यवहार।
सदा हो राम राज्य सुखसार, "हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार"॥

२३ इसी का करो सदा शुभ यत्न, रहे दासत्व देश से दूर।
शीघ्र पावें समृद्धि सुरत्न, अनय गढ कर दें चकनाचूर॥

२४ न हो सामुद्रिक यात्रा पाप, विदेशों से होवे व्यापार।
जो कि नूतन पाश्चात्य 'प्रताप', सभी सीखें नव आविष्कार॥

२५ रहे स्वतन्त्र यह भारतवर्ष, खुलें सारे उन्नति के द्वार।
"सूर्य" सम हो वैदिक उत्कर्ष, जाति में हो जीवन-सचार॥

स्वामी जी ने इस भय से कि आर्य लोग जगन्नाथ को कठोर दण्ड न दिलवा दें, सिरहाने के नीचे से निकाल कर पाच सौ रुपये की थैली देते हुए कहा "जो हुआ सो हुआ अब तुम इस रुपये को लेकर नैपाल भाग जाओ, अन्यथा मेरे शिष्य तुम्हें दु खी करेंगे।'

घटना के इस भाग का मूल स्रोत क्या है? और वह कहा तक प्रमाणित है, यह अभी तक विदित नहीं हो सका परन्तु व्याख्यानों और भजनों द्वारा प्रचारित होकर जगन्नाथ और उसके नैपाल जाने की बात भी मुख्य घटना का भाग बन गई है।

इस वृत्तान्त पर कुछ बडी २ आपत्तिया उठाई गई है। उनकी चर्चा भी यहा आवश्यक है।

पहली आपत्ति स्वर्गीय शाहपुराधीश सर नाहरसिंह जी के उस वक्तव्य से उत्पन्न हुई, जो उन्होंने मथुरा की श्रीमद्दयानन्द जन्म शताब्दि के अवसर पर दिया था। उनके वक्तव्य के सम्बद्ध भाग को मै सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रकाशित वृत्तान्त से उद्धृत करता हूँ। आपने कहा—

"स्वामी जी अपने लिए रसोई बनाने वाला आदमी मुझसे ले गये थे। स्वामी जी को विष दिया गया यह बात गलत है। स्वामी जी जोधपुर मे बीमार होकर आबू चले गये थे और आबू से वह अजमेर आकर रहे थे। मै ख्याल भी नहीं कर सकता कि उन्हे विष दिया गया था। जो लोग उनके पास रोटी बनाने वाले थे वे अभी तक मेरे यहा नौकरी करते हैं। उनका नाम श्रीकृष्ण और कल्लु है।"

दूसरी आपत्ति जोधपुर के पुराने आर्यसमाजी के एक वक्तव्य से खडी हुई है। श्री डी० पी० जोहरी, गरमी के दिनों मे जोधपुर गय। वह पानी की तलाश मे एक तालाब के किनारे पहुँचे और वहा उन्ह ने ७० वर्ष के वृद्ध आर्य समाजी को सन्ध्या करते देखा। जब उन्होंने सन्ध्या समाप्त की तो श्री जाहरी ने उनसे स्वामी जी की मृत्यु के सम्बन्ध मे बातचीत आरम्भ की। जोहरी जी के प्रश्नों का उत्तर देने से पहले वृद्ध महाशय ने उनसे यह शपथ ल ली कि उनका नाम प्रकाशित नहीं किया जायगा। यह शपथ लेकर जो कहानी वृद्ध महाशय ने जोहरी जी को सुनाई उसका सक्षेप यह है।

जिन दिनों महर्षि दयानन्द जोधपुर मे थे अग्रेजी सरकार की ओर से, रियासत के एक अत्यन्त आवश्यक अन्तरङ्ग विषय पर चिट्ठी प्राप्त हुई, जिसका उत्तर शीघ्र मागा गया था। रियासत की कौंसिल अभी उस पर विचार ही कर रही थी कि महाराजा ने उस चिट्ठी की चर्चा महर्षि से कर दी। महर्षि ने जो सलाह दी महाराजा ने उसके अनुसार ही उत्तर भेज दिया। उत्तर ऐसा चतुरता पूर्ण था कि उससे इण्डिया आफिस चकित हो उठा। वहा से रेजीडेन्ट को लिखा गया कि जिस दरबार मे इस पत्र पर चर्चा हुई उसकी तस्वीर भेजी जाय। जिससे पता लग सके कि यह उत्तर किसके दिमाग की उपज है। उस चित्र से भी जब इण्डिया आफिस की जिज्ञासा शान्त न हुई तो महाराजा से सीधा पूछा गया। महाराजा ने सरलता से स्वामी जी का नाम लिख भेजा। तब विलायत से गवर्नर जनरल को यह भर्त्सना की गई कि स्वामी दयानन्द जैसे राजद्रोही को प्रचार करने के लिए खुला क्या छोडा गया है।

यह वृत्तान्त सुना कर वृद्ध महाशय ने कहा कि इस घटना की रोशनी मे यह समझना कठिन नहीं है कि स्वामी जी को विष दिलाने वाले कौन थे और सरकारी डाक्टर ने उनका ठीक इलाज क्यों नहीं किया। इस घटना की चर्चा महात्मा मुशीराम ने अपनी Arya Samaj and its detractors नाम की पुस्तक मे भी की है।

जोधपुर के एक वृद्ध सज्जन ने, जिन्होंने स्वामी जी के दर्शन किये थे एक नई बात बतलाई

है। उनका कहना है कि स्वामी जी के निर्वाण के कुछ समय पश्चात् जोधपुर के कूएँ में से एक लाश निकली थी, जिसके सम्बन्ध में समझा गया था कि वह स्वामी जी को विष देने वाले व्यक्ति की है। उनका विचार है कि रसोइये ने पश्चात्ताप की भावना से प्रेरित होकर आत्म हत्या कर ली थी।

इन उपर्युक्त आपत्तियों में से पहली सब से अधिक महत्वपूर्ण है। सर नाहरसिंह जी महर्षि के केवल अनुयायी ही नहीं थे शिष्य भी थे। उनके कथन की आसानी से उपेक्षा नहीं की जा सकती। उनका कथन यह है कि उनके भेजे हुए रसोइयों ने स्वामी जी को विष नहीं दिया। वह इतना ही कह भी सकते थे। यह सर्वथा सम्भव है कि उन दोनों के अतिरिक्त तीसरे नौकर ने दूध मे विष मिलाकर स्वामीजी को पिला दिया। शाहपुराधीश यह नहीं कह सकते थे कि स्वामी जी की मृत्यु विष से नहीं हुई। मृत्यु किस चीज से हुई यह कहने का अधिकार तो केवल उन चिकित्सकों को था जिन्होंने अन्तिम दिनों में स्वामी जी की चिकित्सा की। उन सभी चिकित्सकों का यह मत था कि महर्षि का वह रोग, जिसने उनके शरीर का अन्त किया, विष से उत्पन्न हुआ। शाहपुराधीश जी के वक्तव्य से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उनके दिये हुए नौकर विष देने के अपराधी नहीं थे। प्रतीत होता है कि किसी तीसरे नौकर ने वह पाप कर्म किया और अपने अपराध के दण्ड से बचने के लिए रात में ही भाग गया।

दूसरा प्रश्न यह है कि वह व्यक्ति भाग कर गया कहां? दो तरह की बातें कही गई हैं। दोनों को ही जनश्रुति कह सकते हैं। जगन्नाथ को नैपाल में या अन्यत्र कौन सज्जन मिले और जगन्नाथ ने क्या कहा इसका कोई प्रामाणिक विवरण नहीं मिलता। इसमें भी कोई पुष्ट प्रमाण नहीं है कि जोधपुर के कूएँ में से जो लाश निकली वह उसी व्यक्ति की थी जिसने स्वामी जी को विष दिया। दोनों ही सम्भावनाएं इतनी काल्पनिक हैं कि उन्हें ऐतिहासिक सत्य नहीं माना जा सकता। महर्षि को विष देने के षड्यन्त्र मे कौन २ सी शक्तियां सम्मिलित थीं इस प्रश्न का उत्तर देने में भी बहुत कुछ कल्पना से काम लेना पड़ेगा। दोनों ही बातें सत्य हैं। नन्हीं जान वेश्या स्वामी जी से रुष्ट हो गई थी इसमें कोई सन्देह नहीं। और यह भी असन्दिग्ध है कि अंग्रेजी सरकार राजस्थान में स्वामी जी के बढ़ते हुए प्रभाव से बहुत असन्तुष्ट थी। यह सर्वथा सम्भव है कि उस समय दोनों ही विरोधी शक्तियां मिल गई हों। सरकारी डाक्टरों द्वारा महर्षि के रोग की उपेक्षा केवल नन्हीं जान की प्रेरणा से नहीं हो सकती। स्वामी जी महाराजा के मेहमान थे। महाराजा के छोटे भाई महाराजा सर प्रतापसिंह स्वामी जी के परम भक्त थे। वह पूरा यत्न कर रहे थे कि स्वामी जी का इलाज भली प्रकार हो। परन्तु ज्यों २ इलाज होता गया त्यों २ रोग बढ़ता गया। रियासत के अन्दर और उसके बाहर अन्य रियासतों में तथा अजमेर में भी उस समय यह माना जाता था कि इलाज से रोग घटने की जगह बढ़ रहा है। इसी कारण महर्षि को जोधपुर से आबू ले जाया गया था। यह सन्देह निर्मूल नहीं प्रतीत होता कि महर्षि की मृत्यु के पीछे केवल एक वेश्या का हाथ नहीं था, कोई जबरदस्त हाथ था जो पर्दे के पीछे से इशारे दे रहा था।

इस प्रकार, सब पहलुओं और आपत्तियों पर विचार करके हम निम्नलिखित परिणाम पर पहुँचते हैं।

(१) महर्षि की मृत्यु विष से हुई।

(२) विष दूध में मिला कर किसी नौकर ने दिया। वह नौकर विष देकर लापता हो गया। सम्भव है पश्चाताप की भावना से प्रेरित होकर कूएँ में डूब गया हो और यह भी सम्भव है कि

स्वाध्याय का पृष्ठ

ब्राह्मण कौन है ?

शमोदमस्तपः शौचं, क्षान्तिरार्जव मेव च ।
ज्ञानं विज्ञानमास्ति क्यं ब्रह्म कर्म स्वभावजम् ।।
(गीता अ० १३ श्लोक ४०)

अर्थात अन्तःकरण तथा इन्द्रियों का निरोध, विचार करना, बाहर भीतर पवित्र रहना, क्षमा, कोमलता, शास्त्राचार्य्य द्वारा ज्ञान, अनुभव, विश्वास आदि उत्तम कर्म जिसमें हों उसको ब्राह्मण कहते हैं।

साधु, वैरागी और महात्मा कौन हैं ?

ऋतं तपः सत्यं तपोदमस्तपः स्वाध्यायस्तपः ।।
(तैत्तिरीय उपनिषद्)

अर्थात शुद्ध भाव से सत्य मानना सत्य बोलना, सत्य करना, मन को अधर्म में न जाने देना, वाह्य इन्द्रियों को अधर्म्माचरण से रोकना अर्थात शरीर, इन्द्रिय और मन से शुभ कर्म्मों को करना, वेदादि सत्य विद्याओं को पढ़ना वेदानुसार आचरण करना आदि धर्म्मयुक्त कामों का नाम तप है। इन्हीं कर्म्मों के करने वालों को साधु, वैरागी और महात्मा कहते हैं।

साधयन्ति परकार्य्याणि स्वकर्माणि च
कार्य्याणि स साधुः ।
(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ११ अ० ११)

अर्थात जो मनुष्य यथावत् परोपकार करना ही अपना कर्त्तव्य समझता है, उसी का नाम साधु है। परमेश्वर के पूर्ण ज्ञान होने से जिसे प्रकृति के दुरुपयोग में अरुचि होती है उसे वैरागी कहते हैं। पूर्ण ज्ञानी का नाम महात्मा है।

पुरोहित और गुरु

यस्य चित्तं द्रवीभूतं कृपया सर्व जन्तुषु ।
तस्य ज्ञानेन मोक्षेण किं जटा भस्मलेपनं ।।

अर्थात धर्म्मात्मा, शास्त्रोक्त विधि की पूर्ण रीति को जानने हारा, विद्वान, कुलीन, निर्व्यसनी, सुशील, वेद-प्रिय, पूजनीय, सर्वोपकारी मनुष्य को पुरोहित कहते हैं। जो साङ्गोपाङ्ग वेदों के शब्द, अर्थ, सम्बन्ध तथा क्रिया का जानने वाला, छल कपट रहित, अति प्रेम से सब को विद्या का दाता, परोपकारी, तन मन धन से सब का सुख बढ़ाने में तत्पर, निरपेक्ष होकर सत्योपदेष्टा सब का हितैषी, धर्म्मात्मा जितेन्द्रिय हो उसे आचार्य अर्थात गुरु कहते हैं।

कहीं दूर देश में जा छुपा हो।

(३) विष देने की प्रेरणा करने वाले षडयन्त्रकारियों में कौन थे निश्चय से यह कहना कठिन है। उससे पूर्व की घटनाओं पर दृष्टि डालें तो यह प्रतीत होता है कि विष दिलाने में नन्हीं जान वेश्या और उसके साथियों का और इलाज को बिगाड़ने में किसी सरकारी एजेण्ट का हाथ था।

(४) शाहपुराधीश के दिये हुए दोनों रसोइये निर्दोष थे।

तात्पर्य यह है कि बिना वेदादि विद्या पढे तथा उसके अनुसार आचरण सुधारे, किसी को साधु, वैरागी, महात्मा, सन्त, पुरोहित, आचार्य वा गुरु न कहना चाहिये और न मानना चाहिये।

सूर्य चन्द्र ग्रहण

पोपलीला के अनुसार जब विष्णु जी देवताओं को अमृत बॉट रहे थे. उस समय राहु नाम राक्षस, देवता का रूप धर उनके साथ बैठ गया तथा अमृत पी लिया, पर सूर्य चन्द्रमा ने चुगली कर दी। तब विष्णु ने क्रोध कर चक्र से राहु का सिर काट डाला पर वह अमृत पी चुका था, अत. मरा नहीं। इसी से सूर्य चन्द्रमा को जहां पाता है पकड लेता है। फिर जब भोले भारतवासी उस समय भगी आदि को दान देते हैं तब वे छुटकारा पाते हैं। इसी से सूर्य चन्द्रमा उन लोगों को, जो दान देते हैं, आशीर्वाद देते हैं कि तुम्हारा सदा भला हो जो तुमने हमें छुड़ाया। यह है अन्ध विश्वास और अज्ञान की परा काष्ठा।

ग्रह लाघव मे लिखा है—
छादयत्यर्कमिन्दुर्विधुं भूमिभः।

अर्थात् जिस समय पृथ्वी घूमती हुई सूर्य चन्द्रमा के बीच में आ जाती है तब पृथ्वी की छाया चन्द्रमा पर पडती है इसी को चन्द्र ग्रहण कहते हैं। इसी भांति जब सूर्य तथा पृथ्वी के बीच चन्द्रमा आ जाता है तब चन्द्रमा की छाया पृथ्वी पर पड़ती है अर्थात सूर्य कटता सा दिखाई देता है। इसी को सूर्य ग्रहण कहते हैं।

दिवि सोमो अधिश्रितः।

(अथर्व का० १४ अनु० १ मं० १)

अर्थात सूर्य के प्रकाश से चन्द्रमा प्रकाशित होता है अतः भमि के बीचमें आ जाने से चन्द्रमा में अन्धकार होने लगता है।

पुराणों के उपर्युक्त लेख को मानना महा मिथ्या है। फिर भंगी, नाम मात्र के ब्राह्मणों या कुपात्रों को सूर्य चन्द्र की मुक्ति के लिए दान देना घोर पाप और अनाचार है। दान देश, काल और पात्र के अनुसार देना चाहिये। कुपात्रों को दान देने से दाता और गृहीता दोनों नष्ट हो जाते हैं।

(नारायणी शिक्षा)

त्रैतवाद के सिद्धान्त से ही विश्व का कल्याण सम्भव है

प्रकृतिवाद के अनुसार जड़ प्रकृति के अतिरिक्त और कोई ऊ ची सत्ता नहीं जिसे आत्म-कल्याण की आवश्यकता हो और जिसका नियमन या पथ प्रदर्शन कोई मगलमय शक्ति करती हो। इसलिए उन्मुक्त भोगवाद या सुखवाद ही उसका ध्येय होगा। भारतीय दर्शनों में चार्वाक ने 'ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत' कह कर इसको दिखलाया। जब शरीर पृथिव्यादि भूतों के स्वभाव का परिणाम है और शरीर के जल जाने के बाद कोई स्थायी आत्मा नही रहता तो क्यों न दुनियां मे मजा मारा जाय। पुनर्जन्म में मिलने वाले दण्ड का तो कोई प्रश्न ही नहीं। भोग विलास ही इसका ध्येय है। पाश्चात्य दर्शनों में भी पूर्ण स्वार्थ सुखवाद इसी का रूपान्तर है।

प्रकृतिवादी के लिए आचार शास्त्र के नियमों की कोई आवश्यकता नहीं रहती। यदि चोरी करने और हिसा करने से मनुष्य को सुख मिल सकता है और इतना समर्थ है कि उसे किसी से दबने का डर नहीं तो वह अस्तेय और अहिंसा का क्यों आश्रय ले? शरीर तो जड़ प्रकृति है उसमें कोई जीव नाम का तत्व तो है नहीं जो पीडा प्राप्त करेगा। प्रकृतिवाद में आचार शास्त्र का कोई आधार हो सकता है तो लौकिक भय।

प्रकृतिवाद क्रियात्मक अवश्य है। अपनी सुख प्राप्ति के लिए मनुष्य को पूरा उद्यमी बनाता है

और उसी का परिणाम आज कल की वैज्ञानिक उन्नति है। परन्तु किसी ऊंचे उद्देश्य के न होने से वही विनाश का बीज है जो वर्तमान अशान्ति और महायुद्धों में स्पष्ट हो रहा है।

इसके विपरीत अद्वैतवाद संसार को मिथ्या बताता है और ब्रह्म के अतिरिक्त किसी चीज की सत्ता नहीं मानता। जब सब प्रपंच ही है तो कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। अकर्मण्यता का पूरा पाठ इसका परिणाम है जो भारतीय स्वभाव में ऐतिहासिक रूप में देखा जा सकता है।

प्रकृतिवाद और अद्वैतवाद दोनों हमारी सत्ता के उच्छेद पर जीते हैं। इस तरह दोनों असुन्दर हैं।

त्रैतवाद इन सब त्रुटियों को पूर्ण करता है। जीव मंगलमय भगवान से सहायता की आशा रखता हुआ श्रद्धा और कर्म बुद्धि से अपने लोक और परलोक को सुधार सकता है। प्रकृति को मानने से वह कर्म करने से घबराता नहीं, पर ऊंचा ध्येय होने से वह विनाश से बच जाता है। आत्मा और परमात्मा की कल्पना से सर्वभूतात्म-भाव के द्वारा आचार शास्त्र के सत्य दया आदि गुणों को उपार्जित करना ध्येय समझता है। ईश्वर की सर्वत्र सत्ता से कर्म व्यवस्था के शुभ अशुभ फल की अपरिहार्यता समझता हुआ जीव दुष्कर्मों से बचता है।

यह संक्षेप मे त्रैतवाद का स्वरूप है। वैदिक धर्म मूल भूत इस दर्शन का सत्य, शिव और सुन्दर रूप स्पष्ट हो जाता है। इसके अनुसरण में विश्व का कल्याण है।

—वीरेन्द्र विद्यावाचस्पति एम० ए०
(नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ पृ०-१४८)

कम्यूनिज्म क्या है ?

कम्यूनिज्म (साम्यवाद) प्रकृतिवाद है जो अपनी तर्क सम्मत सीमाओं में परिवेष्टित है। साम्यवादी की मान्यता है कि आत्मा और परमात्मा की सत्ताएं नहीं हैं। एक मात्र प्रकृति का ही अस्तित्व है। इसी लिए जहां आवश्यक होगा वहां भौतिक विकास के निमित्त वह झूठ बोलेगा और छल कपट से काम की सिद्धि करेगा। यदि लोग यह मानने लग जायें कि प्रकृति ही एक मात्र मूल भूत सत्ता नहीं है तो उसकी दुनिया का तख्ता उलट जाय। यदि मनुष्य आत्मा और परमात्मा के अस्तित्व को स्वीकार कर लेता है तो वह प्राणियों की सत्ता को भी मान लेता है जो प्रकृति की अपेक्षा अधिक महत्व रखते होते है। इन सचाइयों का प्रचार और प्रसार करना आधुनिक साम्यवाद के भवन को गिराने मे योग देना है।

(कथोलिक टाइम्स, ३० ९-५५)

नारी महिमा

स्त्री पुरुष की पूरक होती है। परमात्मा ने उसमें वह आत्म विस्मृति भर दी है जिसके सहारे मनुष्य को सुखी बनाकर स्वयं सुखी बनती है। वह विजय के सुख को बढाती और पराजय की पीड़ा को कम करती है। संक्षेप में संसार का समस्त आनन्द पवित्र नारी के हृदय में पाया जाता है।

हेरल्ड कलकत्ता, ४ १२ ५५

अनमोल मोती

—धर्म्म मार्ग में दुष्टता को छोड़ यथार्थ उपदेश करना चाहिये।

—सृष्टि के पदार्थों को देख उनसे नाना गुणों को जो ग्रहण करते हैं वही योग्य होते हैं।

—कभी २ हम मनुष्य की भूलों से जितना सीख सकते हैं उतना उसके गुणों से नहीं सीख पाते।

* दक्षिण भारत प्रचार *

अखिल कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना पूर्णतः निश्चित

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती का दक्षिण भारत में तूफानी दौरा

६ ता० तक प्रदर्शनी की व्यवस्था पूर्ण करने के पश्चात् ६ ता० को संस्कृत विश्व परिषद् के कर्नाटक प्रान्तीय प्राध्यापक एवं काउन्सिल सदस्य होने के कारण तिरुपति के चतुर्थ अधिवेशन में सम्मिलित होने रवाना हुआ। निकट भविष्य में ही कर्नाटक प्रान्तीय संस्कृत विश्व परिषद् की शाखा स्थापित करने का विचार है। तथा उसका मुख्य कार्यालय आर्य प्रतिनिधि सभा के साथ ही रखकर कर्नाटक प्रान्त में संस्कृत भाषा-प्रचार का सूत्र आर्य समाज के हाथों रखने की योजना चल रही है। यदि यह सफल हो गया तो आर्य सिद्धांतों के विद्वद्गण में प्रचार होने में बड़ी सरलता हो जायगी।

आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना

१५ ता० को वापस आकर २६ को पुनः आर्य प्रतिनिधि स्थापना सम्बन्धी व्यवस्थाओं को पूर्ण करने के लिए बंगलौर गया। समाज के अन्तरंग सदस्यों से मिला। यह अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है कि आर्य समाज विश्वेश्वरपुरम् ने अपने भवन में आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय के लिए स्थान देना स्वीकार कर लिया है तथा कर्नाटक प्रान्तीय समाजों के सभी सदस्यों में एक नई उत्साह-तरंग व्याप्त हो गई है जिसको देखकर कर्नाटक में आर्य समाज के उज्ज्वल भविष्य की आशा अधिक उज्ज्वल हो उठी है।

आर्य प्रतिनिधि सभा की संयोजक समिति का अधिवेशन श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी की अध्यक्षता में २५ जनवरी १९५६ को प्रातः ६ बजे आर्य समाज विश्वेश्वरपुरम् बंगलौर में होगा। इसमें अस्थाई अधिकारियों का निर्वाचनादि सम्पन्न होगा। उसी दिन प्रतिनिधि प्रकाशन समिति, गुरुकुल समिति, धर्मार्य सभा संयोजन समिति के अधिवेशन भी रखे गये हैं। २६ जनवरी को गण-राज्य दिवस के शुभ दिन राष्ट्रीय एवं आर्यध्वज के समुत्तोलन, गणराज्य महायज्ञ एवं श्री स्वामी जी के आशीर्वाद के साथ मंगलवाद्यों के बीच निर्वाचित अधिकारियों का (गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन में क्रियमाणरीत्या) अभिषेक श्री स्वामी जी के कर कमलों द्वारा सम्पन्न होगा तथा उनको आर्य प्रतिनिधि सभा का प्रमाण पत्र, अधिकार पत्र एवं मुद्रा सौंपी जाकर आर्य प्रतिनिधि सभा की विधिवत् पुनः स्थापना होगी। आर्य प्रतिनिधि सभा के लिए अस्थाई प्रतिनिधियों को चुन कर उनके पास सभी प्रकार की सूचना भेजी जा चुकी है। निमन्त्रण पत्र भी विशिष्ट व्यक्तियों एवं कर्नाटक प्रान्तीय समाजों के सदस्यों के नाम भेजे जा चुके हैं। इसके अतिरिक्त २६—२७ जनवरी को विभिन्न सम्मेलनों एवं श्री स्वामी जी के प्रवचनों की पूर्ण व्यवस्था की जा चुकी है। इसी प्रकार मैसूर समाज ने भी विभिन्न सम्मेलनों, प्रवचनों एवं मानपत्र भेंट करने की पूर्ण व्यवस्था कर ली है। मैसूर के महाराज से श्री स्वामी जी की भेंट कराने की योजना हो रही है। अन्य समाजों में भी श्री स्वामी जी के स्वागत की उत्साह पूर्ण तैयारियां चल रही हैं।

श्री स्वामी जी का तूफानी दौरा

दक्षिण भारत की आर्य समाजों के सौभाग्य से श्री स्वामी जी महाराज ने इस वर्ष दक्षिण भारत

का दौरा करने की स्वीकृति दे दी है। गत १ वर्ष से इसके विषय में वार्तालाप चल रहा था। यह मद्रास से ४ जनवरी को प्रारम्भ होकर ८ फरवरी को बंगलौर में समाप्त होगा। विस्तृत कार्यक्रम प्रकाशित कर परिपत्रों द्वारा सम्बद्ध संस्थाओं एव व्यक्तियों को भेज दिया गया है। यह १ मास का दौरा कुल लगभग ३५०० मीलों का होगा। संक्षिप्त कार्यक्रम निम्न प्रकार है—

जनवरी ४ ५ ६	मद्रास, बेलूर
" ७	पाण्डेचेरी
" ८	रामेश्वरम
" ९, १०	मदुरा
" ११,१२,१३,१४	त्रिवेन्द्रम, कन्या कुमारी
" १४, १५	चंगन्नूर
" १६	पोन्नानी
" १७, १८	कालीकट
" १८, १९	मंगलूर
" २०	मरकरा
" २१, २२, २३	मैसूर
" २४	श्रीरंगपट्टणम्, मण्डया
" २५, २६, २७	बंगलौर
" २८	त्रिकमंगलूर
" २९	हासन
" ३०, ३१	कारकल
फरवरी १	हिरियडक
" २	उडुपी
" ३	तीर्थहल्ली
" ४, ५	शिमोगा, सागर
" ६	चित्रदुर्ग
" ७	तुमकूर
" ८	बंगलौर

८ ता० को बंगलौर पहुँच कर १ सप्ताह वहीं विश्राम करेंगे। आशा है परमात्मा की कृपा से श्री स्वामी जी का यह भ्रमण दक्षिण भारत में आर्य समाजों के लिए एक महत्व पूर्ण विन्दु होगा तथा दक्षिणभारत उत्तरभारत के साथ आर्यसमाज के प्रचार में प्रतिद्वन्द्विता करने में समर्थ होगा।

प्रतिनिधि प्रकाशन समिति

११ दिसम्बर को इसकी कार्यकारिणी का अधिवेशन हुआ, उसमें समिति के नियमोपनियमों की रचना करके इस समिति को स्थिर करने के लिए २५ जनवरी को साधारण समिति का अधिवेशन करने का निर्णय हुआ।

प्रकाशन का कार्य निरन्तर चल रहा है। श्री महर्षि दयानन्द जी के जीवन चरित्र का कन्नड़ अनुवाद श्री पं० सुधाकर जी का किया हुआ संशोधित हो रहा है। ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका का अनुवाद श्री पं० विश्वमित्र जी कर रहे हैं। आशा है शिवरात्रि के शुभावसर पर श्री महर्षि का जीवन चरित्र आर्य सज्जनों के पास पहुंच जायगा तथा भाष्यभूमिका का अनुवाद पूर्ण होकर प्रेस में दे दिया जायगा।

एतदर्थ धन संग्रहार्थ में १० ता० को बम्बई, गुलबर्गा, व हुबली चल पड़ा हूं। आशा है भिक्षा की झोली भर जायगी।

विक्रय विभाग

इस विभाग को भी विक्रय समिति" के रूप में स्थिर कर देने तथा एक स्थिर पुस्तक भण्डार व दूकान खोलने की योजना चल रही है। आशा है वह भी शीघ्र ही पूर्ण हो जायगी।

समिति की ओर से रूस के प्रधान मन्त्री श्री निकोलई बलगैनिन को "Light of Truth" तथा श्री उपाध्याय जी लिखित कम्यूनिज्म भेंट की गई।

सत्यपाल शर्मा स्नातक

चर्यानिका

उपग्रहों का निर्माण

कुछ दिन पहले यह समाचार निकला था कि 'अमेरिका उपग्रहों का निर्माण कर रहा है जो समस्त भूमंडल की परिक्रमा एक सप्ताह में करके वापस आ जायेंगे।' यह भी अनुमान किया जा रहा है कि 'किसी दिन नकली चन्द्रमा बनना भी सम्भव हो जाय।' बात सचमुच बड़ी आश्चर्य जनक है। पर भारतीयों के मस्तिष्क में यह बात न आई हो, ऐसा नहीं। धारा नरेश प्रसिद्ध महाराज भोज ने 'समराङ्गण सूत्रधार' नामक एक ग्रन्थ ११ वीं शती के आरम्भ में लिखा था। उस में 'यन्त्र विधान' नामक एक अध्याय ही है जिस में उन्होंने बतलाया है कि बनावटी चन्द्र आदि ग्रह गोलक बनाए जा सकते हैं जो अपनी २ यथार्थ गति दिखलाते हुए रात दिन हर समय कल्पित सूर्य की प्रदक्षिणा करते हुए भ्रमण करते रहें। *गोलश्च सूचिविहित: सूर्यादीनां प्रदक्षिणम्। परिभ्रमत्यहो रात्रं ग्रहाणां दर्शयन गतिम्।* इन्हें बनाने में उन्होंने आंशिक सफलता भी प्राप्त की थी। अपने यहां के प्राचीन यंत्र विज्ञान में पारद की शक्ति से बड़ा काम लिया जाता था। हाल ही का समाचार है कि "पश्चिमी जर्मनी के कुछ वैज्ञानिक इसी के प्रयोग में लगे हुए हैं। कहा जाता है कि इससे अणुशक्ति के कारखानों में बहुत काम लिया जा सकता है।"

(सिद्धान्त)

आर्यावर्त्त की विचारधारा

आर्य संस्कृति में सर्व प्रथम ध्यान खींचने वाला सिद्धान्त आत्मा और अनात्मा का विवेक है। यह चेतनावान शरीर जो दीख पड़ता है, दो तत्वों का बना है। यह निश्चय पहले आर्यों ने ही किया। आत्मा चेतन तत्व है और शरीर जड़ पदार्थ। आत्मा अविनाशी और शरीर नाशवान है। इस विचारधारा के अनुसार आर्य लोग त्याग प्रधान जीवन व्यतीत करते थे। आर्यों के जीवन का ध्येय आत्म सुख, मोक्ष था, भोग न था।

आर्य संस्कृति की दूसरी विशेषता है कर्म का अटल सिद्धान्त। जो जैसा कर्म करता है, उसे वैसा ही फल मिलता है। इस सिद्धान्त के मानने से शुभ कर्मों के करने में प्रीति और दुष्कर्मों में अप्रीति होती है।

आर्यों की विचारधारा की तीसरी विशेषता है 'पुनर्जन्म' की मान्यता। इस सिद्धान्त में विश्वास रखने से मनुष्य बुरा काम करने से डरता है और भावी जन्म अच्छा मिले इसके लिये शुभ कर्म करने की प्रेरणा प्राप्त करता है।

आर्य संस्कृति की चतुर्थ विशेषता है पुरुषार्थ चतुष्टय की योजना। वे हैं, धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष। अर्थ काम, अर्थात् जीवननिर्वाह के साधन, इनको अभ्युदय भी कहते हैं। अभ्युदय का साधन भी धर्म्म रखा गया है। अधम से किए गए अभ्युदय को मान्यता नहीं दी गई है। आहार प्राप्ति के लिए भी आजीविका का साधन शुद्ध होना चाहिये। धर्मपूर्वक शरीर निर्वाह करते हुए मोक्ष की साधना का विधान है। यह है मानव-जीवन का ध्येय।

पांचवीं विशेषता है वर्ण व्यवस्था, और छठी है आश्रम व्यवस्था, जो मनुष्य के वैयक्तिक एवं सामाजिक विकास की कुंजी है।

आर्यों की विचारधारा से प्रायः विज्ञानवादी भड़क उठते हैं, क्योंकि उनकी समझ में यह मनोविज्ञान नहीं आता। इसका कारण यह है कि वे लोग देह को ही आत्मा मानते हैं। इसलिये उनके जीवन का ध्येय है विपुल भोग सामग्री एकत्र करना। परन्तु उपर्युक्त व्यवस्था है आर्य संस्कृति की जिसमें मोक्ष ही चरमध्येय है। अमर्यादित भोग और मोक्ष दोनों साथ नहीं रह सकते। अतः यदि आर्य संस्कृति के सिद्धान्तों को समझना हो (और समझने के लिए बाध्य होना पड़ेगा--सम्पादक) तो वेदादि आर्य शास्त्रों को गुरुपद पर स्थापित करना चाहिये और युरोप अमेरिका का अन्धानुकरण छोड़ना चाहिये।

(कल्याण)

सामाजिक रोग

वेश्यावृत्ति एक सामाजिक रोग है और जो समाज-कल्याण की भावना से प्रेरित हैं, उनका ध्यान इसरोगकी ओर जाना स्वाभाविक है। जिस समाज में वेश्यावृत्ति के प्रत्यक्ष चिन्ह मौजूद हों, उसे स्वस्थ समाज नहीं कहा जा सकता। केन्द्रिय समाज कल्याण बोर्ड ने इस रोग की गहराई और उसके निराकरण के उपाय सुझाने के लिए एक समिति नियुक्त की थी। उसने मणिपुर, त्रिपुरा और कच्छ को छोड़कर देश के सभी राज्यों का भ्रमण किया। उसका भ्रमण विशेषत. बड़े बड़े नगरों तक ही सीमित रहा।

समाज कल्याण मंडल की समिति का कहना है कि केवल एक कुर्ग राज्य को छोड़ कर शेष सभी राज्यों में वेश्यावृत्ति की बुराई मौजूद है। किन्तु शेष सभी राज्यों में इस रोग की मौजूदगी शासन के लिये और सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिये गम्भीर चिन्ता का विषय होना चाहिये। अनेक राज्यों में वेश्यालय विरोधी कानून बने हुए हैं, फिर भी यह आश्चर्य की बात है कि वे प्रभावहीन हैं और आम सड़कों पर वेश्यालय चलते हुए देखे जा सकते हैं। समिति को यह मालूम करके आश्चर्य हुआ कि बड़े-बड़े उच्चाधिकारियों तक की वेश्यालयों के सम्बन्ध में स्पष्ट कल्पना नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने वेश्यालयों को खत्म करने का प्रस्ताव किया है और भारत सरकार उनके इस प्रस्ताव से अपनी सहमति प्रकट कर चुकी है। तब यह प्रश्न ही नहीं उठना चाहिये कि वेश्यालयों का उन्मूलन किया जाये अथवा नियमन किया जाये। वेश्यालयों को लाइसेंस देना वेश्याओं की डाक्टरी पूरी परीक्षा की व्यवस्था करना आदि ऐसे उपाय हैं जो इस बुराई की अनिवार्यता को स्वीकार करते हैं। हमारी अपनी राय यह है कि शासन का लक्ष्य इस बुराई का सर्वथा उन्मूलन ही होना चाहिये।

वेश्यावृत्ति के उन्मूलन के लिए उसके मूल कारणों की पहले शोध की जानी चाहिये। समाज कल्याण मंडल की समिति ने अपनी जांच के आधार पर वेश्यावृत्ति सम्बन्धी कुछ अङ्क प्रस्तुत किये हैं। उसका कहना है कि ५५.४ प्रतिशत ने आर्थिक कारणों से प्रेरित होकर इस वृत्ति को अपनाया है, २७.७ प्रतिशत स्त्रियों के मामले में घरेलू अनबन, दुर्व्यवहार, पति द्वारा परित्याग और वंध्यत्व उसके मूल में है और १६.६ प्रतिशत के पतन का कारण धार्मिक और सामाजिक रूढ़ियां है। इसका यह अर्थ हुआ कि पेट की ज्वाला को शान्त करने के लिए जिन स्त्रियों को यह हीन पेशा अख्तियार करना पड़ता है, उनकी संख्या सब से अधिक है और उसे केवल इसी प्रकार कम किया जा सकता है कि जो स्त्रियां आर्थिक दृष्टि से निस्सहाय हो जाएं, उनके लिये ऐसे काम धन्धों की व्यवस्था की जाये कि वे अपने शील और स्वाभिमान की रक्षा करते हुए अपना उदर पोषण कर सकें। स्त्रियों के प्रति समाज की कल्प

स्वास्थ्य-समाचार

दांतों के ब्रुश का मूल

प्लेन फील्ड (न्यूजरसी) का ४ दिसम्बर का समाचार है कि टूथ ब्रुश (दातौन) का प्रयोग सर्व प्रथम प्राचीन भारत और चीन में आरम्भ हुआ था। लोग अपने दांतों की सफ़ाई और अपने श्वास को मनोहर एवं सुगन्धित बनाने के लिये लकड़ी की टहनी को चबाया करते थे।

डा० जोसेफ० जे० डो० ओनोफ्रिक ने जो ईस्ट ओरेन्ज, न्यूजरसी के निवासी हैं उपर्युक्त बात राज्य के दन्त चिकित्सकों को उनके ८१वें अर्द्ध-वार्षिक सम्मेलन में बताई।

डा० महोदय ने यह भी बताया कि सुअर के बालों का ब्रुश लगभग २०० वर्ष पूर्व बनाया गया था। इसने १८ वीं शती में दातौन का. और जीभ को साफ करने वाले पानी सोख कपड़े का स्थान ले लिया। फिर यह घोड़े के बालों का बनने लगा। १६वीं शती में सोने और चांदी की जिम्मियां बनती थीं जिन्हें स्त्रियां अपने नैक लेस पर लटका लेती थीं। यह है दातौन का महत्व।

बुन्देलखंड का सबसे बड़ा व्यसन

बुन्देलखंड का सबसे बड़ा हानिकर व्यसन तम्बाकू और सुपारी का चबाना है, अकेले बांदा जिले में ८ लाख की आबादी में ६ लाख व्यक्ति प्रतिदिन प्रति व्यक्ति २॥ छटांक के औसत से इस व्यसन में ग्रस्त हैं। लगभग १००० मन तम्बाकू और सुपारी खाई जाती है।

———

नाओं में भी परिवर्तन होना चाहिये। अब जमाना स्त्रियों को पांव की जूती समझने का नहीं रहा। स्त्रियों के समान अधिकारों को संविधान ने स्वीकार किया है और कुछ अन्य कानूनों द्वारा भी उनके अधिकार सुरक्षित करने की चेष्टा की जा रही है। किन्तु सभी काम कानून के जोर से नहीं हो जाता है। समाज के दृष्टिकोण को भी बदलना होगा और गलत सामाजिक और धार्मिक रूढ़ियों को खत्म करना होगा।

यह ठीक ही है कि रोग की चिकित्सा के बजाय उसकी रोकथाम ज्यादा श्रेयस्कर होती है। वेश्यावृत्ति का प्रसार न होने देने के लिए शासन और सामाजिक कार्यकर्ताओं को काफी सतर्क रहना होगा। इस क्षेत्र में काम करने वालों को विशेष प्रकार की शिक्षा मिलनी चाहिये। स्त्रियों की सहायता के लिये देश में जो आश्रम चलते हैं, उनमें से बहुतों की बड़ी शोचनीय स्थिति है। कुछ तो स्वयं अनाचार के केन्द्र सिद्ध होते हैं। अनेक केवल निराश्रित स्त्रियों की शादियां कराके अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं। इस दृष्टि से हम समिति की इस सिफारिश का स्वागत करते हैं कि समाज कल्याण मंडल को कम से कम पांच नारी सदनों की स्थापना करना चाहिये, जहाँ स्त्रियों के खान-पान, रहन-सहन, धार्मिक और औद्योगिक शिक्षण की सन्तोषजनक व्यवस्था हो। वेश्यावृत्ति के निरोध के लिए सारे देश में समाज कानून लागू करने और उस पर कड़ाई से अमल करने की आवश्यकता से भी इन्कार नहीं किया जा सकता। ज्यादातर स्त्रियां देहातों से भगाई या फुसलाई जाकर शहरी वेश्यालयों में पहुँचती हैं। स्त्रियों को भगाने वालों और इस पाक-पंक में फंसाने वालों के संगठित गिरोह हैं और उनकी कुप्रवृत्तियों पर सतर्क पुलिस ही काबू पा सकती है। इस रोग की रोक थाम और निराकरण के लिए शासन और सामाजिक कार्यकर्ताओं का घनिष्ठ सहयोग अपेक्षित होगा।

—हिन्दुस्तान

— —

* राजनैतिक रंगमंच *

(अक्टोबर अंक से आगे)

ब्रिटिश तानाशाह सर ओस्वल्ड मोस्ले (Sri Oswal l mosley) से एक बार उनके निर्वाचन क्षेत्र के एक मतदाता ने एक सभा में कहा था "हम आपको एक अवसर देने के लिए राजी हो सकते हैं। परन्तु प्रश्न यह है कि आपके एक बार उस पद पर पहुंच जाने पर हम किस प्रकार आपसे छुटकारा पा सकते हैं? ठीक यही भय फैसिस्ट नेताओं के प्रति रहता है।

अवस्था कुछ भी क्यों न हो, इस समय यह स्पष्ट है कि मनुष्य जाति पवित्र जीवन वाले उच्चकोटि के नेताओं का आवाहन कर रही है। मनुष्य में उच्च चरित्र के सामने श्रद्धा पूर्वक सिर झुकाने और एकान्त निष्ठा से वीरों की पूजा करने की स्वाभाविक उत्कण्ठा होती है। यह उत्कण्ठा बहुत प्राचीन है जो इतिहास के आधुनिक चरणों में पीछे ढकेल दी गई थी क्योंकि अपनी सफलताओं का राग अलापने और अपने को अन्यों के समान अच्छा समझने की प्रवृत्ति प्रबल हो गई थी। वर्तमान मनुष्य ने शौर्य को रंग-मंच वा चित्र-पट पर घुड़दौड़ वा पोलो के क्षेत्र में ला पटका है। संक्षेप में उत्कण्ठा सदैव बनी रहती है भले ही वह कुछ सीमा तक गुप्त हो जाय।

वर्तमान समय में इस बात के अनेक लक्षण देख पड़ते हैं कि उच्चकोटि के नेता का अनुसरण और उसका सत्कार करने की एक नई प्रवृत्ति मानवी आत्मा से प्रस्फुटित हो रही है।

आधुनिक मनोवैज्ञानिक ऊहापोह (Researches) के अनुसार समय की आवश्यकता और उठने वाले नेताओं के मध्य अविच्छन्न सम्बन्ध प्रतीत होता है। वे प्रजा की ज्ञात और अज्ञात इच्छाओं के लिए पारदर्शक शीशे का काम देते हैं। नेताओं में नेतृत्व के तत्व देखने के लिए प्रजा लालायित देख पड़ती है। प्रजा उसी को नेता चुनती है जो उनके हृदय को अपील करता है। यह मांग और पूर्ति का विषय होता है। नामधारी नेता जनता को कभी अपने अधिकार में नहीं कर सकता।

ठीक यही बात धार्मिक नेताओं के विषय में निश्चित रूप से कही जा सकती है।

लोगों में आपस में और व्यक्ति एवं समष्टि के विविध रूपों में लाखों सूक्ष्म Psychic जोड़ होते हैं। वर्तमान अनुसन्धान के अनुसार इस पुरानी धारणा की निस्सारता स्पष्ट हो चुकी है कि मनुष्य न्यूनाधिक रूप में पृथक् व्यक्ति होते हैं। अब समाज की विराट् सत्ता स्वीकार कर ली गई है जिसमें व्यक्ति छिद्रों के सदृश निवास करते हैं।

आज कल लोगों में अपने नेताओं और डिक्टेटरों के लिए उनकी राष्ट्रीय प्रतिभाके अनुसार भक्ति भाव पाया जाता है।

अन्य देशों में उन देशों की परम्परा और मनोवैज्ञानिक भावना के अनुसार इसी प्रकार की प्रवृत्ति काम करती दृष्टिगोचर होती है। ग्रेट ब्रिटेन ने कुछ समय हुआ, राजघराने के प्रति प्रेम के हृदय स्पर्शी दृश्य देखे थे। हालैण्ड में युवराज्ञी के विवाह के अवसर पर प्रजा की राज भक्ति का समुद्र उमड़ा हुआ देख पड़ा था। दूसरे देशों में भी राज-निष्ठा के इसी प्रकार के प्रदर्शन देखे गये

हालैण्ड निवासी प्रसिद्ध मनोविज्ञान वेत्ता डा० मीक की विचार धारा।

थे। यूनान आदि की जन तन्त्र की शासन प्रणालियां राज तन्त्र में परिवर्तित हो गई हैं।

पुरानी शासन-प्रणाली का अपनाया जाना सामाजिक दृष्टि से उपयोगी होगा या नहीं यह अब भी एक समस्या बनी हुई है और इसका सन्तोषजनक हल राजाओं के व्यक्तिगत चरित्र पर निर्भर करेगा।

इन विविध और नये चामत्कारिक प्रयोगों में एक बात विशेष रूप से देख पड़ती है और वह यह है कि प्रजा अपने शासकों में उच्चतम गुणों और विशेषताओं को देखने उनका अनुसरण करने एवं उनकी अंगुली के संकेत पर चलने के लिये लालायित है।

राजाओं की वर्तमान कोटि राजनैतिक और विधान-निर्माण की दृष्टि से तो कदाचित महत्व पूर्ण नहीं है, परन्तु सामाजिक दृष्टि से अत्यन्त महत्व पूर्ण है। ग्रेट ब्रिटेन में सम्राट् और सम्राज्ञी प्रत्येक चारित्रिक तत्व की जिसका राष्ट्र अधिक से अधिक सम्मान कर सकता है सजीव प्रतीक समझे जाते हैं।

इसके साथ ही वे दोनों सभ्यतम पुरुष और स्त्रीके रूपमें राष्ट्रीय आदर्शके प्रतीक भी माने जाते हैं। साम्राज्य के भीतर ब्रिटिश परम्परा के लोगों के जीवनों पर उनका अप्रत्यक्ष प्रभाव साधारण रीति से देख पड़ने वाले प्रभाव से कहीं अधिक है। हालैण्ड में ओरेंज (Orange) का राजघराना राष्ट्रीय-स्वतन्त्रता, एकता, सरलता, सहिष्णुता एवं उदारता की राष्ट्रीय प्रतिभा का द्योतक है। दल-बन्दियों की राजनीति, वादों (Isms) जातियों, आन्दोलनों और सामयिक फैशनों के ऊपर राष्ट्र का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक नेतृत्व इसके हाथ में है। कुछ समय हुआ मजदूर दल के मुखपत्र में एक मजदूर नेता ने इस तथ्य को खुले रूप में स्वीकार किया था।

वर्तमान में उच्च कोटि का राजा राजनैतिक अग्रणी नहीं होता जैसा कि बहुत से वर्तमान लेखक हमें विश्वास करने की प्रेरणा करते हैं। सामाजिक मनो विज्ञान के विद्यार्थियों को उनके गहरे प्रभाव को स्वीकार करना होता है। विपरीत इसके पार्टियों से चिपटे हुए राजनीतिज्ञ केवलमात्र अपने विशेष सामाजिक वर्ग या जातिके हितकेलिए दौड़ धूप करते और समष्टि रूप से मानव-परिवार की दृष्टि से गलती पर गलती करते रहते हैं। उनका मान होता है और अपमान भी। परन्तु राज-छत्र राज्य में शान्ति और अमर-संस्कृति का स्थिर तत्व होता है जो अपने देश को अन्य देशों के साथ मिलाकर उसको मानव परिवार का बहुमूल्य अंग बनाता है।

वर्तमान काल का एक अन्य चमत्कार ध्यान देने योग्य है। पश्चिम के प्रजातन्त्र राज्यों ने अपने राजसी ठाठ-बाट को तिलांजलि दे दी है जब कि उनकी मनोवैज्ञानिक आवश्यकता ज्यों की त्यों बनी हुई है। पूर्व के बहुत से देशों ने अपने चित्ताकर्षक ठाठ-बाट और विभूति की रक्षा की है परन्तु पश्चिम में जीवन साधारण पुरुषों जैसा कला शून्य बन गया है। पश्चिम में 'समानता' की लहर के मन्द पड़ जाने पर लोगों ने प्राचीन भव्य प्रथाओं की खोज करना प्रारम्भ कर दिया था। इससे ग्रेट ब्रिटेन और जर्मनी जैसे विविध देशों में प्राचीन प्रथाओ के प्रति अनुराग बढ़ा अथवा उन प्रथाओं का पुनर्जन्म हुआ।

अपेक्षाकृत नये देशों में जहां प्राचीन प्रथाओं का अभाव था, मनुष्य ने अपनी भावना की संतुष्टि के लिए नूतन विधियों की खोज करके विविध प्रकार के विकल्पों की सृजना करली हैं। उदाहरण के लिए अमेरिका को ले लीजिये। यह देश अपनी जनतन्त्र शासन प्रणाली के लिए जगद्विख्यात है परन्तु वहां एक विचित्र प्रकार के सामाजिक चमत्कार के दर्शन होते हैं। वहां प्रत्येक महत्वपूर्ण

स्थान पर एकतन्त्र प्रणाली के आधार पर निर्मित अर्ध गुप्त सोसाइटियों का जाल बिछा हुआ है।

हर प्रकार के उनके उद्देश्य और लक्ष्य हैं। उनके सदस्य प्रायः दफ्तरों के क्लर्क होते हैं जो सप्ताह में छः दिन अपने डेस्कों पर काम करते हैं। रविवार के दिन वे क्लबों में अथवा मिलने के स्थानों पर एक विशेष प्रकार की भड़कीली और पुराने ढंग की पोशाक पहन कर जाते हैं। जिन पर रहस्य पूर्ण चिन्ह बने होते हैं। उनके विविध प्रकार के नाम और विचित्र प्रकार के उपनाम होते हैं। यथा Super Cave man (गुफा का अलौकिक मनुष्य) King of Diamonds (हीरों का राजा) इत्यादि २। यह सब खेल और मनोरंजन होता है। इसमें सन्देह नहीं कि इस मनोरंजन से मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि हो जाती है। इससे प्रतिदिन के जीवन की नीरसता और कला शून्यता से कुछ समय के लिए छुटकारा मिल जाता है। मनुष्य और स्त्री सर्वत्र पदवियों का सम्मान और अपने नेताओं एवं वीरों से प्रेम करते हैं।

समाज के पथ-प्रदर्शक ब्राह्मणों का कर्तव्य होता है कि वे इन प्रवृत्तियों को ऐसा नियन्त्रित कर दें जिससे वे न तो हास्यास्पद बनें और न उनकी उपेक्षा हो सके और उनके द्वारा मानवता के उच्चतम उद्देश्यों की पूर्ति हो जाय।

इस बात के लक्षण देख पड़ते हैं कि संसार में राज्य और शासन-सत्ताएँ धीरे २ नये राज-वर्ग के हाथों में जा रही हैं जिसका निर्माण समस्त श्रेणियों के व्यक्तियों के द्वारा हो रहा है। उनमें से बहुत थोड़े व्यक्ति कुलीन परिवारों के होते हैं, जिन्हें पैतृक सम्पदा (विरासत) का भान होता है। उनमें से बहु संख्यक बुद्धि जीवी क्षेत्रों से सम्बद्ध होते हैं। पर हर्ष का विषय है उनमें से बहुत से श्रमजीवी श्रेणियों के होते हैं।

चौथा 'वर्ण' जो अब तक उच्च वर्णों के पर्दे के पीछे छिपा हुआ था अब पुनः राजाओं और शासकों की नई श्रेणी का निर्माण कर रहा है।

यही बात उच्चतम सांस्कृतिक श्रेणी (ब्राह्मण वर्ग) पर चरितार्थ होती है। यह स्पष्ट है कि समस्त धर्मों के नेताओं, वैज्ञानिकों, साहित्यिकों तथा अन्यों में से सत्य के पुजारियों की नई श्रेणी का शनैः २ विकास हो रहा है। इस श्रेणी के अग्रणी प्रख्यात विज्ञान वेत्ता, ग्रन्थकार हैं। इस श्रेणी की अन्तर्भावना अन्तर्राष्ट्रीय है। निश्चय ही संसार की शान्ति और सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य की स्थापना की क्रियात्मकता इस श्रेणी के ज्ञात और अज्ञात प्रतिनिधियों पर निर्भर करती है।

यह जरा भी सम्भव नहीं है कि जिन प्रवृत्तियों और मनोभावनाओं की हमने ऊपर चर्चा की है वे उसी अनुपात में वृद्धिगत और परिपक्व होंगी जिसमें वे जनता के हृदयों में घर करेंगी। मनुष्य अनुभव करने लग गया है और उन्हें अनुभव करना होगा कि उच्च श्रेणियां, जातियां और राष्ट्र स्वभाव से एक दूसरे के शत्रु नहीं होते वरन् समष्टि के हित के लिए उन्हें पारस्परिक सहयोग से काम करना होगा। सच्ची कामन वेल्थ (Common wealth) का अर्थ प्राणी मात्र के सम्मिलित हित का सम्पादन करना होता है। जब तक जिम्मेदार उच्च श्रेणियां और उनके प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप दूसरे लोग इस तथ्य को अनुभव नहीं करते तब तक न तो राजनैतिक उथल-पुथल का तांता बन्द होगा ना ही प्रजा के कष्टों और यातनाओं का निवारण होगा और ना ही सांस्कृतिक सामग्री का विनाश रुकेगा।

* ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन *

धर्म परिवर्तन विधेयक

कांग्रेसी सदस्य श्री जेठा लाल जोशी ने धर्म परिवर्तन को नियन्त्रित करने के लिये केन्द्रीय लोक सभा में एक गैर सरकारी बिल प्रस्तुत किया था। गत ३ दिसम्बर १९५५ को इस बिल पर विचार हुआ और वह भारी बहुमत से गिर गया। यद्यपि विधेयक की चर्चा में मुख्यतः ईसाई मिशनरियों द्वारा किए जाने वाले धर्म परिवर्तन का ही उल्लेख हुआ है तथापि विधेयक किसी भी धर्म विशेष से सम्बद्ध नहीं था। विधेयक में कहा गया था कि धर्म परिवर्तन करने वालों की एक रजिस्टर्ड सूची रखी जाय तथा जो धर्म परिवर्तन करने का कार्य करें उनको सरकार से इसके लिये लाइसेंस लेना आवश्यक हो। विधेयक (बिल) में यह भी कहा गया था कि धर्म परिवर्तन से पहले धर्म परिवर्तन करने वाले तथा कराने वाले दोनों को १ मास की सूचना सरकार को देनी होगी। इसके अतिरिक्त विधेयक में यह भी रखा गया था कि जो धर्म परिवर्तन आत्मिक विश्वास से प्रेरित न होकर अन्य किन्हीं कारणों से किया जाय या कराया जाय उसके लिये दण्ड और जुर्माने की व्यवस्था होनी चाहिये।

प्रधान मन्त्री पं॰ जवाहर लाल जी नेहरू ने इस बिल का इस आधार पर विरोध किया कि इस बिल के पास हो जाने से नई २ कठिनाइयां उपस्थित हो जायेंगी। ईसाई सदस्यों ने तथा कुछ मुस्लिम सदस्यों ने भी इस बिल का विरोध किया था।

सदन के अधिकांश सदस्य इस बिल के पक्ष में थे। परन्तु पं॰ जी के विरोध के कारण स्वयं प्रस्तावक महोदय ने बिल को वापस लेने की इच्छा प्रकट कर दी। फिर भी पं॰ नन्दलाल शर्मा के आग्रह पर मत लिया गया।

विधेयक को प्रस्तुत करते हुए श्री जेठालाल जी ने कहा कि ईसाई मिशनरियों द्वारा जो धर्म-परिवर्तन कराया जाता है वह सम्बद्ध व्यक्ति के धार्मिक विश्वासों में परिवर्तन होने के कारण नहीं वरन् अन्य कारणों से होता है। इस बात को सिद्ध करने के लिये प्रस्तावक महोदय ने कुछ धर्म परिवर्तित आदि वासी ईसाइयों के उत्तर पढ़ कर सुनाए जिनमें उन्होंने कहा था कि हैजे से बचने के लिये, अमुक लड़की से शादी करने के लिए तथा अन्य सांसारिक लाभों के लिए वे ईसाई बने हैं। श्री जोशी ने अनेक आंकड़े प्रस्तुत करते हुए कहा कि भारत में ब्रिटिश शासन समाप्त होने के बाद आदिवासियों को ईसाई बनाने की प्रवृत्ति को अधिक प्रोत्साहन मिला है। उन्होंने इस आशय के अनेक उद्धरण सुनाए जिनमें ईसाई मिशनों के संचालक कहते हैं कि अमुक प्रान्त में इतने चमार हैं, उन्हे ईसाई बनाना है, अमुक प्रान्त के इतने पिछड़े हरिजनों को ईसाई धर्म की दीक्षा देनी है इत्यादि। उन्होंने भारत में प्रोटेस्टेंट तथा कैथोलिक गिरजाघरों की सख्या बताते हुए कहा कि उनमें से अधिकांश विदेशी सहायता पर निर्भर हैं और वे अपनी नीति स्वय निर्धारित नहीं करते।

इस बिल के पक्ष में जो भाषण हुए, उनसे से आदिवासी सदस्यों के भाषण विशेष महत्वपूर्ण हैं। उन भाषणों को 'सार्वदेशिक' में प्रकाशित करने का निश्चय किया गया है। सर्व प्रथम ? उइके का भाषण दिया जाता है जो स्वय आदिवासी गोंड हैं।

—सम्पादक

श्री उइके का भाषण

उपाध्यक्ष महोदय, मैं श्री जेठालाल जोशी के विधेयक का हृदय से समर्थन करता हूँ और उनको इस तरह का बिल लाने के लिये हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। उन्होंने जो यह बिल रखा है, उसका मै पूरी शक्ति के साथ समर्थन करता हूँ। हमारी तो आज से नहीं, बहुत दिनों से इच्छा थी कि ऐसा कोई बिल इस पार्लियामेन्ट के सामने आये। किन्तु हम में इतनी पार्लियामेन्टरी बुद्धि न होने के कारण हम खुद इस काम को न कर सके और यह बड़े हर्ष का विषय है कि हमारे श्री जेठालाल जोशी इस तरह का विधेयक इस संसद में लाये हैं, और इस अवसर पर मैं समझता हूँ कि हम अपनी कुछ कहानी सुनायें।

श्री जेठालाल जोशी के भाषण में और उन्होंने जो कोटेशन्स (उद्धरण) दिये हैं उनसे आपको यह विदित हो गया होगा कि यह जो सारे धर्म-परिवर्तन हुए हैं, उनका असर ज्यादातर हमारे आदिवासियों पर ही पड़ा है और हमारे काफी भाइयों का धर्म-परिवर्तन हुआ है, क्योंकि अपने देशमें आदिवासी ही ऐसे भोले भाले हैं जो बहकावे में आ जाते हैं। वे धर्म शब्द को ही नहीं जानते कि धर्म क्या चीज है। अगर किसी भी आदि-वासी के पास आप जाइये और उससे आप पूछिये कि तुम्हारा धर्म क्या है, तो वह नहीं बता सकेगा कि उसका धर्म क्या है। वह धर्म जैसी चीज को नहीं समझता। वह अगर समझता है तो अपनी संस्कृति को समझता है। उसकी समझ में अपने देवी-देवता की पूजा-अर्चना करना ही उसका धर्म है। उसकी जो जाति है, वह उसका धर्म है और अगर उसका नाम उसकी जाति में न लिख कर किसी दूसरी जाति में लिख। जाय तो वह समझता है कि उसका धर्म चला गया। अगर उसके रहन सहन में कोई बाधा डाले तो वह समझता है कि उसका धर्म चला गया। अगर उसके देवी-देवता की पूजा-अर्चना करने में कोई फेर बदल कर दे, तो वह समझता है कि उसका धर्म चला गया और अगर किसी ने उसके पानी को छू दिया या खाने को छू दिया तो वह समझता है कि उसका धर्म चला गया। उसका धर्म इस आचार-विचार में है। बाकी धर्म शब्द का क्या अर्थ है, इसको वह नहीं जानता है। अब मैं आपको बतलाऊं कि जिस हिन्दू जाति के आदिवासी एक अंग हैं वे हिन्दू महादेव को मानते हैं और आदिवासी भी बड़े देवको मानते हैं। महादेवको "बड़ा देव" कहते हैं। महा माने बड़ा होता है और महा से मोटा भी समझा जाता है। अब अगर बड़े और मोटेको उनसे कहा जाय कि महादेव कहां तो वे समझेंगे कि यह कोई दूसरी चीज हमारे सामने ला रहे हैं शब्द का अर्थ बड़ा है, यह उनको मालूम नहीं हैं। वे महादेव को किसी द्वेष भावना से इन्कार नहीं करते, बल्कि वास्तव में उनको महा शब्द का अर्थ ही नहीं मालूम है और वे समझते हैं कि यह कोई दूसरे देवता की पूजा करने को कहते हैं और ऐसा कह कर यह मेरी जाति लेना चाहता है। लाखों आदिवासियों ने हजारों वर्षों से अपना खून बहाया, पसीना बहाया, हजारों मुसीबतें भोगी हैं और अपनी पूजा-अर्च्चना, संस्कृति और आचार-विचार तथा सचाई और ईमानदारी बचाने के लिये वे जंगलों और पहाड़ों में जाकर रहने लगे हैं। आज उनमें इतनी शक्ति और योग्यता नहीं हैं कि वह अपनी बातें आपके सामने पेश कर सकें, किन्तु इन भोले भाले लोगों की निष्कपट वाणी से निकली हुई बातें सबल तथा अर्थभरी होती हैं तथा दिल को हिला देती हैं। आज यह आदिवासी पहाड़ों और जंगलों में कष्टमय जीवन बिता रहे हैं, जहां उनकी आर्थिक अवस्था बड़ी ही दर्दनाक है, लेकिन वे अपनी संस्कृति और अपनी पूजा-अर्चना की रक्षा करते हुए वहाँ इस तरह का जीवन बिता रहे हैं और इतनी कठिनाइयों के बावजूद प्रसन्नचित्त हैं और कोई चिन्ता नहीं

करते। उनको चिन्ता तब व्यापती है जब कोई उनकी पूजा-अर्चना में फेर बदल करे और तब वे समझते हैं कि उनका सर्वस्व लूटा जा रहा है। यहाँ पर मैं मध्य प्रदेश के ३० लाख गोंड आदिवासियों की भावना प्रगट कर रहा हूँ। हालां कि मैं गोंड आदिवासी हूँ, लेकिन चूँकि मेरा जन्म महाराष्ट्र के गाँव में हुआ था और चन्दन आदि लगाया करता था और पढ़ा लिखा होने के कारण कोट कमीज आदि पहनता था तो मेरे प्रान्त के भाई लोग जिन्हों ने मुझे देखा नहीं था, कहते थे कि तुम तो हिन्दू हो, चन्दन लगाते हो। मैने उनको बतलाया कि भाई, मैं तो गोंड भाई हूं और बड़े देव की पूजा करता हूँ। लेकिन उन्होंने नहीं माना और कहने लगे कि तुम्हारी वेश-भूषा तो हिन्दुओं जैसी है। तब और कोई चारा न देख कर मैंने चन्दन लगाना बन्द कर दिया और पूछा—'भाई, अब मैं कौन हूं? अब तुम मुझे आदिवासी भाई समझो और अपने साथ में लो। उन्होंने कहा कि अभी भी हमसे अलग हो, तब मैंने मुर्गियां पालीं। जब मैंने यह किया तो उन्होंने समझा कि यह जरूर आदिवासी है, मुर्गियाँ पालता है। लेकिन इस पर भी पाँच साल तक उन्होंने मेरे हाथ का पानी नहीं पिया और न अपने ही हाथ का, पिलाया। उन्होंने कहा कि भले ही तुम मुर्गी पालते हो, लेकिन हम तुम्हे गोंड मानने के लिये तैयार नहीं हैं। हम न अपनी जाति देना चाहते हैं और न तुम्हारी जाति लेना चाहते हैं। इसी लिये न हम तुम्हारे हाथ पानी पीयेंगे और न अपने हाथ का पानी तुमको पिलायेंगे। कितने अच्छे और सुन्दर भाव हैं! दूसरे की जाति भी नहीं लेना चाहते और अपनी जाति भी नहीं देना चाहते। ऐसे सीधे साधे और भोले लोगों को समझाने के लिये, यह साबित करने के लिये कि मैं गोंड हूं, मुझे पांच साल का समय लगा और बड़े परिश्रम से उनकी समझ में आया। मुझे दो तीन जिलों के गोंड आदिवासियों को अपने साथ ले कर पांच साल तक घूमना पड़ा, अपना रहन-सहन बदलना पड़ा उनके अनुसार अपना रहन सहन करना पड़ा, पुराने ढंग के कपड़े पहनने पड़े, तब कहीं जाकर वे मुझको गोंड मानने के लिये राजी हुए। ऐसे सीधे साधे लोगों के बीच में हमारे ईसाई भाई उनकी सेवा करने दवाई लेकर जाते हैं। बहुत से शहर के लोग कहते हैं कि ईसाई लोग आदिवासियों के ऊपर बड़ा उपकार करते हैं, बड़ी कीमती २ दवा लेकर पहाड़ों पर जाते हैं। आप अगर गवर्नमेन्ट की तरफ से जांच करवायें तो पता चलेगा कि जितने दवाखाने सरकार ने आदिवासियों के इलाके में खोले हैं, सब बन्द पड़े हैं। आदिवासी दवाखानों से कोई दवा नहीं लेना चाहते। वह अपनी जड़ी-बूटी पर भरोसा करते हैं, दवा की गोली भी नहीं चाहते। आदिवासियों के बीच में कुछ ईसाई मिशनरी कीमती कीमती दवाइयां लेकर गये। उनसे भले ही कुछ न होता हो, लेकिन आपको कहने के लिये हो जाता है कि वह लोग हमारे बीच में जाकर बड़ी सेवा कर रहे हैं। जो आज आदिवासियों में जाकर उनको शिक्षित कर रहे हैं और उनका सुधार कर रहे हैं, मैं उनसे प्रार्थना करूंगा कि अगर इसी तरह से उनको हमारी सेवा करना है तो हमें सहायता करने के बजाय वह हमारा शोषण करना छोड़ दें। अगर वह ऐसा करेंगे तो मैं समझूंगा कि आदिवासियों पर उनका बड़ा भारी उपकार हुआ। यह ईसाई मिशनरी हमारा रहन-सहन, आचार-विचार और पूजा-अर्चा का शोषण करके हमारी सचाई और ईमानदारी का नाश कर रहे हैं।

मैं आपसे बताता हूं कि १९४२ में जिस वक्त सारे हिन्दुस्तान में लोग देश को आजाद करने में लगे हुए थे, उस समय मालूम नहीं क्या हुआ, कौन सी राजनीतिक घटना हुई, कि रोमन

कैथोलिक मिशन ने बहुत जोरों से आदिवासियों के बीच में धर्म का प्रचार करना शुरू किया। उनका तरीका क्या था ? सन् १६४२ में जब सब लोग हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई में लगे हुए थे, उस समय यह ईसाई आदिवासी इलाकों में पहुंच गये और उस समय की गवर्नमेन्ट ने उन को इसकी इजाजत भी दे दी। मैं मंडला जिले की कहानी बताता हूँ। वहाँ दो सौ, ढाई सौ मदरसे खुले। वह मामूली मकानों में थे। लेकिन उनके लिये २०)—२०)—२५) - २५) रु० किराये के दिये जाते थे, लेकिन वह बच्चों के पढ़ने के मदरसे नहीं थे, वह चर्च थे। जो स्कूल थे उनमें फादर रहा करते थे। फादर को पादरी कहा जाता है। वहां के आदिवासी पादरी का नाम सुनकर डर जाते थे, वह जानते थे कि पादरी ईसाई होते हैं, और उनके गांव में आ जाने पर गांव भ्रष्ट हो जायेगा। गीरजाघर के नाम से वह समझ जाते थे, कि यह वही लोग हैं जहां ईसाई बनाते हैं। वहां के लोगों के लिये पादरी का नाम बड़े भय का माना जाता था। इसलिये यह रोमन कैथोलिक लोग वहां गये और २००, २५० मदरसे खोले। इन लोगों ने वहाँ जाकर कहा कि हम पादरी नहीं हैं, हम स्वामी हैं, हमें स्वामी कहो। उनके साथ रांची से उरांव, मुंडा ईसाई भी आये हुए थे, वह भी उन्हें स्वामी ही कहते थे। उन्हों ने कहा कि हम ईसाई नहीं हैं, हम रोमन कैथोलिक हैं। वहाँ के लोगों को कैथोलिक शब्द का अर्थ नहीं मालूम था। उन्होंने भी कहना शुरू कर दिया कि यह ईसाई नहीं हैं, जिनसे हम डरते हैं, यह तो कैथोलिक हैं और यह गिरजा घर नहीं हैं, यह तो हमारे बच्चों के पढ़ाने के लिये मदरसे हैं। साथ ही कैथोलिकों ने यह भी बताया कि तुम्हारी जाति भी हम कभी नहीं बदलेंगे, हम तुमको अपने हाथ से खाने पीने के लिये भी नहीं कहते हैं, न हम तुमको अपना खाना पीना देते हैं, हमें सिर्फ तुम अपने गांव में रहने दो। तुम अपनी जाति बनाये रहो, सिर्फ अपने लड़कों को हमारे यहाँ पढ़ने के लिये भेजो। हो गया, जगह देदी। जिन लोगों को मकानों के लिये २ रु० किराया नहीं मिलता था, उनको उसके लिये २०) और ·५) रु० मिलने लगा। गांव का जो मुखिया हुआ करता था, मान लीजिये किसी गांव में १०० घर हैं, वह १०० घर जिस एक आदमी को अपना मुखिया बना लेते थे, उसके ही कहने पर चलते थे, उस मुखिया को वह पादरी लोग अपने वश में कर लेते थे। उन मुखियों के ऊपर उन पादरियों ने लाखों रुपये पानी की तरह बहा दिये। कुछ भी काम न करते हुए उन को उन्हों ने १००) २००) रु० महीना देना शुरू किया, सिर्फ इस लिए कि वह मुखिया हैं, गांव का और उसके कहने से गांव के लड़के मदरसे में पढ़ने के लिए आयें। जब वह लड़के मदरसे जाते थे तो उनको गणेश का 'ग' नहीं पढ़ाया जाता था, बल्कि पहले दिन से ही उनको ईसाई धर्म की आयतें पढ़ायी जाती थीं। जो आदिवासी हमेशा से "जय राम जी की" कहते हैं उन्हें "जै ईशु" कहना सिखाया जाता था। जिसके चोटी होती थी उनकी चोटी काटी जाती थी और गले में पहनने के लिये मरियम के बिल्ले बांटे जाते थे। जितने लड़के पढ़ते थे अगर वह 'जै ईशु" कह देते थे तो उनको मिठाई बांटी जाती थी, कपड़े दिये जाते थे। जो आदिवासी होते थे उनको जानवरों का शिकार कर के दिया जाता था और साथ में दारू दे दी जाती थी कि लो, पिओ। इसी तरह से वह वहां के लोगों को पैसा देने लगे, इस शर्त पर कि वह अपने लड़कों को पढ़ाने के लिये मदरसे भेजें। वह कहते थे कि अगर तुम लड़कों को पढ़ाने के लिये भेजोगे तो ब्याज छोड़ देगें और कुछ दिनों के बाद लड़का "जै ईशु" कहने लगेगा तो असल भी छोड़ देगें इस प्रकार अनेक तरह से प्रलोभन देकर और किसी किसी को धमकी भी देकर कि हमारा राज्य है, ईसाइयों का राज्य है, हम तुम को जेल में

डाल देंगे, तुम्हारा घर फुंकवा देंगे, उन लोगों को ईसाई धर्म की ओर घसीटा जाने लगा। इस प्रकार से नाना तरीकों से काम लिया गया और जहाँ पर 'जय राम जी की' हुआ करती थी वहाँ पर "जय ईशु" होने लगी।

मैं आज उस आदमी का नाम लेना चाहता हूँ, हालां कि कई बातों में उसका और मेरा पूर्व और पश्चिम का सम्बन्ध था, लेकिन फिर भी मैं उस डा० वेरियर एल्विन को धन्यवाद दूंगा कि उसने यह पोल खोली कि रोमन कैथोलिक मिशन आदिवासियों का सत्यानाश कर रहा है, और यह उस जगह पर हो रहा है जो आदि क्षेत्र (पार्शियली एक्सक्लुडेड एरिया) है। सन् १९३५ के ऐक्ट के अनुसार कोई धर्म प्रचार करने वाली संस्था वहाँ जाकर धर्म प्रचार नहीं कर सकती है। सरकार को जांच करनी चाहिये, जांच से उसको पता चलेगा कि वहाँ पर ईसाई धर्म का प्रचार करने वालों के द्वारा आदिवासियों की चोटियाँ काटी गयीं; उनको मरियम के बिल्ले बांटे गये और हर प्रकार उनको ईसाइयत की तरफ घसीटा गया। इतना ही नहीं, वह यह करते थे कि चार मूर्तियां बनाते थे। तीन मूर्तियाँ तो लकड़ी की हुआ करती थीं और एक धातु की होती थी। पहली तीन मूर्तियों में से एक का नाम तो भगवान् शंकर दिया जाता था, एक का भगवान् कृष्ण और एक का भगवान् राम। उसके बाद चौथी मूर्ति जो किसी धातु की होती थी उसका नाम दिया जाता था— भगवान् मसीह। धातु वाली मूर्ति को कोई ऐसा कलर दिया जाता था कि वह पहली तीन मूर्तियों की तरह ही मालूम होती थी, इसके बाद वह देहात के रहने वालों के पास जाकर कहते थे कि यह भगवान् शंकर हैं, यह भगवान् राम हैं, यह भगवान् कृष्ण हैं और यह भगवान् मसीह हैं। अब इन चारों देवताओं को हम आग में डालते हैं जो सच्चा देवता होगा वह रहेगा और जो झूठा देवता होगा वह जल जायेगा। लकड़ी के भगवान् राम, कृष्ण और शंकर जलकर राख हो जाते थे और मसीह वैसे के वैसे निकल आते थे। क्या भोला आदिवासी उनकी इस मक्कारी को समझ सकता था? जब ये सारी चीजें गवर्नमेन्ट के सामने पेश की गयीं तो ब्रिटिश गवर्नमेन्ट ने सन् १९३५ के ऐक्टानुसार उनकी सारी ग्रान्ट बन्द कर दी और न जाने भीतर से क्या हुक्म गया कि जितने मदरसे चलते थे वे सब बन्द हो गये। जो बड़े २ बंगले बने हुए थे सब बन्द हो गये। एक नार्मल स्कूल जो अस्सी हजार की ग्रान्ट से आदिवासियों के लिए बना था, वह बन्द हो गया। और धीरे २ जो ईसा का नाद सुनाई पड़ता था वह बन्द हो गया। बच्चों के गलों से मरियम की मूर्तियाँ हट गयीं और लोगों की चोटियाँ बढ़ने लगीं। अगर वे लोग धर्म को समझ कर ईसाई हों तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। अगर यह समझ कर धर्म परिवर्तन करें कि ऐसा करने से उनका आचार-विचार सुधरेगा, उनको ईश्वर जल्दी प्राप्त होगा या उनकी मुक्ति होगी तो मेरी राय में उनके धर्म परिवर्तन में कोई हर्ज नहीं है। लेकिन जो आदिवासी धर्म का नाम तक नहीं समझते, उनको इस तरह चालाकी से दूसरे धर्म में डाल देना तो गलत चीज है। तो ब्रिटिश गवर्नमेन्ट ने इन सारी चीजों को बन्द कर दिया और उसका नतीजा यह हुआ कि सन् १९४७ तक, बल्कि सन् १९५० तक हमारे यहां शान्ति रही। लेकिन जब सन् १९५० में २६ जनवरी को हमारा विधान लागू किया गया तो उसमें कहा गया कि हमारा धर्म निरपेक्ष राज्य है और आदिवासियों के लिए धर्म की कोई पाबन्दी नहीं है। वे किसी धर्म के भी हों वे आदिवासी ही रहेंगे। यह मालूम होने पर फिर ईसाई बनाने का काम शुरू हो गया। अब उन्होंने यह चालाकी की जो आदिवासी जिस जाति का था उसको उसी जाति का रहने दिया। जैसे अगर कोई उरांव था तो उसको उरांव रहने दिया। अगर कोई मुंडा था तो उसको

मुंडा ही रहने दिया। परन्तु इनके नाम बदल दिये। अगर किसी का नाम मानसिह था तो थामस कर दिया, या अगर कोई रामसिह था तो मार्टिन कर दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि जो सरकार की तरफ से स्कालरशिप मिलते हैं हमारी उन्नति के लिये, उनमें से अधिकतर इन ईसाई आदिवासियों को मिल जाते हैं। मैं आप को कुछ उदाहरण बताना चाहता हूँ। हमारे देश में १,९१,०००० आदिवासी हैं। तो मैं आपको बतलाना चाहता हूँ कि ये स्कालरशिप किस तरह से लोगों को मिलते हैं। सन् १९५३-५४ में दो विदेशी स्कालरशिप दिये गये मिस ओलिव टिप्पू और श्री फ्रैंकलिन टिर्की को। ये दोनों बिहार के हैं। सन् १९५५-५६ में चार विदेशी स्कालरशिप इस प्रकार दिये गये। (१) श्री ए० के० सी धन, बिहार, (२) श्रीमती एल्विन गुहा, आसाम, (३) मिस डा० एस० हुरु, आसाम और (४) डा० मार्टिन एक्का बिहार। इससे मालूम होता है कि मानों बिहार और आसाम में ही आदिवासी रहते हैं और किसी जगह नहीं रहते। ऐसा मालूम होता है कि बाकी जितने प्रदेश हैं उनमें कोई आदिवासी नहीं हैं। इस तरह से ये लोग विदेश शिक्षा पाने गये और आदिवासियों के लड़के नहीं जा सके। यही हाल उन स्कालरशिप का हो रहा है जो कि भारत-सरकार ने देश में पढ़ने वाले आदिवासियों के लिए दिये हैं। आप इस लिस्ट को देखें तो आपको मालूम होगा कि जो आदिवासी बालक दूसरे इलाकों में पढते हैं उनके नाम हैं, अजीतसिंह, मधुकर आदि। लेकिन जो रांची, मध्यप्रदेश के कालिज में हैं उनके नाम इस प्रकार हैं--(१) एलफोंस कुजूर, (२) बलेसियस एक्का, (३) ओलस लकरा, (४) एलाइस बारा, (५) जान करकेटा, (६) सेबेस्चियन कजूर, (७) डोमिनक टिर्की और (८) लारेन्स एक्का। पर इन लोगों की जाति उरांव ही दिखलायी गई। इस तरह से ५९ स्कालरशिप्स में से ३४ इन लोगों को मिल गये हैं और ये रांची कालेज में ही हैं। ये लोग कन्वर्टेड हैं यह तो इनके नाम से ही मालूम होता है। यह बात आपको जबलपुर, नागपुर और रायपुर के कालेजों में नहीं मिलेगी। वहां पर तो आदिवासी लड़कों के ऐसे नाम हैं, जसे मधुकर, या अजयधन आदि। इसके विपरीत आप देखेंगे कि जो लड़के रांची कालेज में आदिवासियों के हैं वे सारे जान, मार्टिन आदि है। सन् १९४४-४५ से १९५० तक हमारे यहां यह बात बन्द रही और शान्ति रही, लेकिन चूंकि हमारे संविधान में लिखा गया है कि अब यह धर्म-निरपेक्ष राज्य रहेगा और आदिवासी चाहे किसी धर्म के हों कोई फर्क नहीं पड़ेगा, तब से यह काम फिर शुरू हो गया है,जो बंगले खाली हो गये थे वे फिर भर गये हैं और "जय ईशु" का जयजयकार होने लगा है। अब तो वहां यह कहते हैं कि अब जाति पात और छूआ-छात कोई चीज नहीं रह गई है तो आदिवासी समझता है कि अब इस राज्य में कोई धर्म नहीं रहा है और सब धर्म के आदमी आदिवासी रह सकते हैं। उनसे कहा जाता है कि अगर कोई छूआ-छात मानेगा तो उसको जेल होगी क्योंकि ऐसा सविधान में लिखा है। ये चीजें उन लोगों के सामने रखी जाती हैं। ये लोग देखते हैं कि ईसाई आदिवासियों के लड़कों को स्कालरशिप मिलते हैं तो वे सोचते हैं कि यदि हम भी अपना धर्म बदल लें तो हमको भी वह सुविधायें मिल सकती हैं।

आज कल यह होता है कि यदि कोई आदिवासी का लड़का मैट्रिक पास कर लेता है तो आज के कानून के अनुसार उसको डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट के पास जाना पड़ता है ताकि वह उसकी तसदीक कर दे, उसके बाद ही उसको नौकरी या स्कालरशिप मिलने में सुविधा हो सकती है। ऐसा करने में उसे बड़ी मुसीबत होती है। उनकी इस कठिनाई का यह मिशनरी लोग फायदा उठाते हैं। उनके आदमी आदिवासी इलाकों में घूमते रहते हैं

जिनको कि वे तनख्वाह देते हैं। वे लोग ऐसे लड़कों की तलाश में रहते हैं जिनको कि किसी तरह की मदद की आवश्यकता हो। वे उनसे पूछते हैं तुमको किस तरह की मदद चाहिये? और उनको वह मदद देते हैं। अगर उनको पैसा चाहिये तो उनको पैसा देते हैं और यहाँतक करते हैं कि उनको लड़कियाँ भी देते हैं और इस तरह से उनको प्रलोभन दिया जाता है। तो मैं कहना चाहता हूँ कि आप किस तरीके से हमारे धर्म-परिवर्तन को रोक सकते हैं, इस पर वचार करें। मैं यह नहीं कहता कि कोई धर्म परिवर्तन न करे। अगर कोई किसी धर्म को वास्तव में अच्छा समझता है तो वह उसमें चला जाय मुझे कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन किसी को लालच देकर या उसकी कठिनाई का लाभ उठा कर ऐसा न कराया जाय। हमारे आदिवासी आज हजारों साल से हिन्दुओं से अलग रह कर अपने आचार विचार की रक्षा करते हुए पहाड़ों में रह रहे हैं, लेकिन क्या कारण है कि आज वे सब एक दम ईशु की जय जयकार करने लगते हैं और अपनी चोटी कटाने लगते हैं। क्या ये लोग मैदानों को छोड़कर जंगलों में सुख के लिये गये थे, नहीं, वे वहाँ अपने रहन-सहन और आचार की रक्षा के लिये गये थे, आज वहां क्या हो रहा है? हम देखते हैं कि आपका विधान आज हमारा सत्यानाश कर रहा है। अगर आप जात पात को नहीं मानते हैं तो न मानें, हम भी नहीं मानेंगे। लेकिन आप इस ओर तो ध्यान दें कि जो कुछ आप हम आदिवासियों की उन्नति के लिये देते हैं, वह हम को नहीं मिलता, दूसरे ले जाते हैं।

अभी हमारे यहां नागपुर में ईसाइयों का एक इन्क्वायरी नाम का पेपर निकला है। मैंने अपने यहां की सरकार को रिपोर्ट दी थी कि सालेवंडा गांव में आदिवासियों को बहुत सताया जा रहा है। उस पर जांच की गई। एक गांव में सात मकान के आदिवासी ईसाई थे और ३७ मकान उस गाँव में आदिवासियों के थे। मिशनरी लोग उस गाव में गये और आदिवासियों पर रोब जताने लगे। उन्होंने वहां कहना शुरू किया, अब जाति पाति नहीं रही है और अगर कोई छूत छात मानेगा तो उसको सजा होगी। इसका नतीजा यह हुआ कि ईसाई आदिवासी लोग आदिवासियों की शादी आदि में उनका खाना छू लेते थे और उसको खराब कर देते थे। इस प्रकार जब उनको बहुत कष्ट हुआ तो वे गांव छोड़ने लगे। उस समय मेरे पास कुछ आदमी आये। मैंने मुख्य मन्त्री से शिकायत की और उन्होंने जांच करवाई। दो डिप्टी कमिश्नरों ने जांच की और उनको मालूम हुआ कि आदिवासियों की देवी देवताओं को उठाकर फेंक दिया गया था और कई मर्तबा शादी आदि में उनका खाना बर्बाद कर दिया गया था और लोगों को भूखा वापिस आना पड़ा था। यह सरकारी जांच का नतीजा निकला। अब हमारे पास तो पैसा नहीं है कि मुकदमा चलायें। इन मिश्नरियों के पास बहुत पैसा है। वे प्रचार कर सकते हैं, तरह २ के स्टेटमेन्ट देते हैं और हर तरह से अपने मामले की पैरवी कर सकते हैं। उन्होंने अभी 'इन्क्वायरी' नामक पेपर निकाला है, इसमें जशपुर के ट्राइबल्स के बारे में पेपर नं० २, सफा ५ पर लिखा है कि दो साल में २० हजार आदिवासी ईसाई हो गये। इसमें इस प्रकार लिखा है :—

"It was a case of mass conversion within 2 or 3 years from 1947, about 20,000 were converted in 2 years."

लेकिन जब इन मिश्नरियों को मालूम हुआ कि इस मामले की चर्चा मेम्बर लोग पार्लियामेन्ट में करने लगे हैं तो उन्हों ने लिखा कि ये २०००० बीस हजार लोग हिन्दुओं से परेशान होकर उनके पास ईसाई होने गये। और ये लोग समझते थे कि ऐसा करने से इनका आचार विचार अच्छा होगा। यह कहा गया है कि ये लोग हिन्दुओं से

मुक्ति पाने के लिये पादरियों के पास गये थे। उन से पादरियों ने कहा है कि अगर तुम को ईसाई बनना है तो हम तुमको ईसाई कर लेंगे किन्तु हम तुमको किसी तरह की सुविधा नहीं दे सकते, हम तुमको कोई खास सहायता नहीं कर सकते हैं। शायद सब माननीय सदस्यों को इस पुस्तक की कापियां भेजी गयी है। ऐसा शायद इसलिये किया गया कि बहुत से लोक-सभा के माननीय सदस्यों को आदिवासियों के धर्म-परिवर्तन के असली कारण मालूम नहीं रहते हैं। उन्हें मिश्नरियों का धर्म-परिवर्तन करने का काम निर्दोष दिखे। मैं जितने पार्लियामेन्ट के माननीय सदस्य गए हैं उनको बतलाना चाहता हूँ कि हमारे आदिवासी भाई हजारों सालों से पहाड़ों और जगलों में रह रहे हैं और किसी प्रकार हिन्दू धर्म के एक अंग बने हुए हैं और अपनी संस्कृति और रहन सहन की रक्षा करते आये है, उनको और आप को ध्यान देना चाहिये और साथ ही सावधानी बर्तनी चाहिये कि कहीं वह बहका कर फुसला कर ईसाई या और धर्म में तबदील तो नहीं किये जा रहे हैं और ऐसा न हो कि वे अपने हिन्दू भाइयों से इतने परेशान हो जाय कि वे अपना धर्म तबदील करने पर विवश हो जांय और ईसाई बन जांय। हमें इस समस्या पर गंभीरता से विचार करना है और इस अपने अंग को अपने से अलग नहीं करना चाहिये। हमारे देहातों में जो भाई रहते हैं वे बहुत भोले और अपढ़ हैं और चूंकि आज उनकी आर्थिक अवस्था बहुत ही शोचनीय है, इसलिये ईसाई मिश्नरीज इनको सब्जबाग दिखा कर और धन का लालच देकर उनको ईसाई बनाने का यत्न करते हैं और इस वास्ते यह जो धर्म परिवर्तन के रजिस्ट्रेशन का विधेयक लाया गया है, उस का मैं दिल से स्वागत करता हूं। मैं अपने हिन्दू भाइयों से अपील करूंगा कि अगर आपको इन १ करोड़ इक्कानवे लाख आदिवासियों को अपने में बनाये रखना है तो आप को उसके लिये अभी से आवश्यक कार्यवाही करनी होगी। और उनकी दशा सुधारने की ओर ध्यान देना होगा।

अभी थोड़े दिन हुए, हमारे उपगृह मन्त्री ने कहा था कि विधान के अनुसार आदिवासी धर्म परिवर्तन के बाद भी आदिवासी रहेगा और इससे कोई फर्क नहीं आयेगा. तो मैं उनको बतलाना चाहता हूं कि आदिवासी इन बातों को नहीं समझते और उनको मन्त्री महोदय के इस स्टेटमेन्ट से बड़ी निराशा हुई है और वह ऐसा महसूस करने लगे है कि उनका कोई मां बाप नहीं हैं और वह ऐसा समझेंगे कि अब तो सब धर्म एक हैं, फिर ईसाई क्यों न बन जाओ। वहां बच्चों की पढ़ाई का भी माकूल इन्तजाम हो जायगा, नौकरी भी आसानी से मिल जायेगी और ईसाई बनने से पैसा भी मिलेगा। मुझे डर है कि अगर उनको रोका न गया तो सारे आदिवासियों को ईसाई बनते पांच या दश साल से अधिक समय नहीं लगेगा, क्योंकि वे आज बिल्कुल उपेक्षित पड़े है और बावजूद इसके कि हम जो उनके प्रतिनिधि लोग है यहां काफी समय से उनकी कठिनाइयों और समस्याओं को पेश करते रहे है और सरकार का उनकी ओर ध्यान दिलाते रहे है लेकिन उनकी जैसी हालत थी वैसी बनी हुई है और उसमें कोई सुधार नहीं हो पाया है, और हो सकता है कि उनमें इससे इतनी निराशा का भाव भर जाय कि वे हिम्मत छोड़ दे और ईसाई बनना शुरू कर दे और यदि ऐसा हुआ तो बड़ी दुर्भाग्यपूर्ण बात होगी। इसलिये मैं हाऊस के तमाम लोगों से चाहे वह हिन्दू हों, मुसलमान हों या ईसाई भाई हों, अपील करूंगा कि यह इन्सानियत का तकाजा है कि जो दुखी हैं और मुसीबत में जकड़े हुए है उनकी मदद की जाय और उनकी अवस्था में सुधार करने का प्रयत्न किया जाय। सच्चा मानव धर्म यही है कि बिना किसी प्रकार के राजनीतिक स्वार्थ के या और किसी स्वार्थ के हरेक धर्मावलम्बी को इन मुसीबत जदा और पिछड़े अभागे आदिवासी भाइयों की सहायता करनी चाहिये और उनको ऊपर उठाने का प्रयत्न करना चाहिये।

* गोरक्षा आन्दोलन *

फटे दूध से बनने वाले पदार्थ

[लेखक—श्रीयुत "अज्ञात"]

दूध में पानी के अतिरिक्त मक्खन, केसीन (छेना) और दुग्ध-शर्करा—ये तीन मुख्य द्रव्य होते हैं। दूध के शर्करा वाले अंश से बक्टीरिया (Bacteria के जीवाणुओं की नैसर्गिक वृद्धि होती है। उससे दुग्धाम्ल (Lactic Acid) पैदा होता है और दूध फट जाता है। यदि गौ का दिया हुआ चारा अच्छा न हो, उसमें अम्ल हो गया हो. थन साफ न हों, दुहने वाले के हाथ और बर्तन साफ न हों, बासी और ताजा दूध मिला दिया जाय, कई जगहों का दूध एक साथ मिला दिया जाय अथवा हवा में बहुत गर्मी हो तो दूध फट जाता है।

बड़ी डेयरियों में मशीन के द्वारा दूध में से मलाई या मक्खन पूरा निकाल लिया जाता है। ऐसे दूध का निर्घृत दूध (Skimmed milk) कहते हैं। ऐसे दूध से केसीन (Casei) और दुग्ध शर्करा (Milk Sugar) निकाल सकते है। केसीन पानी में न घुलने वाली (Insoluble) चाज है। नकली हाथी दाँत, लेक-कालर्स सरेस आदि तय्यार करने में केसीन का बहुत अच्छा उपयोग होता है। रेलवे के डिब्बों के लिए तथा हवाई जहाज के पंखे और प्लाई वुड के तख्ते बनाने में इसका सरेस काम देता है। पुस्तकों की जिल्द बंदी मे कपड़े के नीचे यह सरेस लगाया जाता है। खेलने के ताश और आर्ट पेपर में चमक लाने के लिये भी इसका उपयोग किया जाता है।

केसीन (Casein)

सौ तोले निर्घृत दूध में २ तोले सल्फ्यूरिक एसिड (जिसमें एक भाग एसिड और २० भाग पानी हो) डालकर दूध गरम किया जाता है। उस से दूध का छेना पानी अलग २ हो जाता है। इसे छान लेने पर छेना चलनी में रहता और दूध की शर्करा का पानी नीचे गिर जाता है। इस छेने को गरम पानी से धो लेने पर उसमें जरा सा भी मक्खन नहीं रह जाता। इस धोए हुए छेने को सुखा कर उसकी बुकनी बना कर डिब्बे में रख लेनी चाहिये। यही केसीन है।

दुग्ध-शर्करा (milk Sugar)

दूध मे डाले हुए एसिड को नष्ट करने के लिए एक तोला खड़िया बुकनी उसमें डाल देते हैं। इससे गैस निकलती है और चूने का अंश एसिड से मिल कर उसका प्लास्टर बन कर नीचे जम जाता है। इसे पेरिस का प्लास्टर कहते हैं। ऊपर का पानी औटाने से काली काली सी चीनी तय्यार होती है। दूध की इस चीनी को गरम करके पिंघला कर औटाने से चीनी का रंग पीला सा हो जाता है। इस प्रकार ५-६ बार चीनी को साफ करने के बाद सफेद चीनी निकल आती है।

जो दूध अभी २ फटा हो, उससे अनेक खाद्य पदार्थ तय्यार किए जा सकते हैं। फटा हुआ दूध दो तीन दिन यों ही पड़ा रह जाय तो सड़न की गन्ध आने लगती है, तब यह किसी काम का नहीं रहता।

बादाम केक

दो कप गेहूँ का आटा छाना हुआ ले। उसमें एक चम्मच नमक, पाव चम्मच खाने का सोडा

(Soda-bi-carb) और थोड़ा घी या मक्खन और चीनी डालकर मिला लो। तब उसमें फटा दूध डाल कर इस मिश्रण को अच्छी तरह छान ले। फिर पतली सी कटोरियों में भीतर से घी लगा कर आधी २ कटोरी यह सना हुआ मिश्रण डाल दे। आइल पेपर से काम लिया जा सकता है। तब बादाम, पिस्ता आदि के टुकड़े काट २ कर बीदाना आदि डाले। अनन्तर चूल्हे पर तवा रखे, उस पर महीन बालू फैला दे और बालू पर एक पन्ना रख कर इन कटोरियों को रखे और उन्हें ढक दे। थोड़ी देर में मिश्रण अच्छी तरह फूल आएगा। उसे चाकू से निकाल ले। वे केक बन गए। खाने में बहुत स्वादिष्ट होते हैं।

बंगाली मिठाई

दूध को फिटकिरी की डली से चला कर या टार्टारिक साइट्रिक एसिड (दस सेर दूध में आधा तोला एसिड के हिसाब से) डाल कर दूध गरम करने से फट जाता है। कलकत्ते में फटे हुए दूध के गोले बिकते हैं। इसे वहां 'छेना' कहते हैं। उसी से रसगुल्ला, छेनाबड़ा, चमचम, सरतोया, खीर मोहन, छानामुंडी,गुलाब जामुन, चन्द्रआता, गोला संदेश, रसमुंडी, पांतुआ आदि अनेक प्रकार की मिठाइयां बनती है।

पनीर

पनीर को अंग्रेजी में चीज (Cheese) कहते हैं। कौटिल्य के समय में भी भारतवर्ष में एक ऐसी चीज बनती थी, परन्तु वह शुद्ध और निरामिष होती थी। वर्तमान पनीर पाश्चात्य जगत् की वस्तु है। अवश्य ही भारतवर्ष में आजकल बाबू लोग इसे शौक से खाया करते हैं। पनीर शुद्ध भी बन सकती है। विलायत में तथा उसी की देखादेखी भारत में भी दो एक जगह पनीर बनाई जाती है। कच्चे दूध को एक बर्तन में छान कर उसमें नमक लपेटी हुई गऊ की आंत (Rennet) डुबो दी जाती है। इससे दूध में विकार उत्पन्न होकर वह तुरन्त जम जाता है। इस दही को कपड़े में बांध कर किसी ऊंची जगह लटका देते हैं, जिससे टपक २ कर उसका जल निकल जाता है। इसके बाद उसे नमक के साथ किसी बर्तन में रख देते हैं जिससे रहा सहा पानी भी निकल जाता है। इसके बाद उसे फिर कपड़े में बांध कर उस पर भारी वस्तु रख कर उसका जल बिल्कुल निकाल दिया जाता है। यों जल निकालने के बाद उसे बरतन में रख कर कई दिनों तक छाया और हवा में सुखाते हैं। यूरोप में पनीर खूब चलती है। वहां यह शुद्ध दूध की भी बनती है और मलाई निकाले हुए निर्घृत (Skimmed) दूध की भी। कहीं २ शुद्ध दूध में ऊपर से मलाई मिला कर भी बनाते हैं। कोई कोई मारगरीन की भी बनाता है। इसके बनाने में दो तीन सप्ताह से लेकर चार पांच सप्ताह तक लग जाते हैं। इसमें शराब के समान एक विचित्र गन्ध पैदा हो जाती है। इसे वे लोग बहुत ही पुष्टिकर खाद्य पदार्थ मानते हैं। इसका यूरोप में बहुत बड़ा व्यापार है।

बंगाल में गऊ की आंत से परहेज रखने वाले लोग बकरी की आंत डालते हैं। यह शुद्ध दही का बन सकता है और कुछ लोग वैसा बनाते भी हैं। शुद्धता तथा आंत का परहेज रखने वाले लोगों को बाजार से खरीद कर पनीर कभी न खाना चाहिये।

———

—पुरुषार्थ ही मित्र है वही सुख देता है। आलसी व्यक्ति सदा दुःखी रहता है।
जो मनुष्य क्रिया में कुशल, धार्मिक और परोपकारी होते हैं वही दोनों लोकों में सुख भोगते हैं।

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,

श्रद्धानन्द बलिदान भवन,
देहली—६

सं० ....   दिनांक.................. ..

आर्य समाज का इतिहास

आर्य जनता को विदित ही है कि सार्वदेशिक सभा ने श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति कृत आर्य समाज के इतिहास को प्रकाशित करने का निश्चय किया हुआ है। इतिहास ३ भागों में छपेगा प्रत्येक भाग में $\frac{२० \times ३०}{१६}$ के लगभग ५०० पृष्ठ होंगे तथा अनेक चित्र भी होंगे।

प्रथम भाग प्रेस में छपने के लिये दे दिया गया है। इसमें सन् १६०० तक का इतिहास है और मुख्यतः निम्न विषयों पर विचार किया गया है :—

१—आर्य समाज की स्थापना से पहले की धार्मिक तथा सामाजिक स्थिति का दिग्दर्शन
२—महर्षि दयानन्द का आगमन।
३—आर्य समाज की स्थापना।
४—प्रचार युग।
५—अन्य मतों से संघर्ष।
६—संगठन का विस्तार।
७ संस्था युग का आरम्भ।

इस भाग का मूल्य ६) के लगभग होगा। मार्च ५६ तक जो आर्य नरनारी एवं आर्य समाजें स्थिर ग्राहकों मे अपना नाम अंकित करा देंगे, उन्हें यह ग्रन्थ १) कम मूल्य में दिया जायगा। डाक व्यय ग्राहक के जिम्मे होगा। अतः इस छूट से लाभ उठाने में शीघ्रता करनी चाहिये और ५) प्रति पुस्तक के हिसाब से मनी आर्डर भेज कर स्थिर ग्राहकों में अपना नाम अङ्कित करा लेना चाहिये। निश्चित मूल्य से १) कम करके और डाक-व्यय काट कर यदि कोई राशि ग्राहक की शेष रहेगी तो वह दूसरे भाग के लिये जमा कर ली जायगी।

मनी आर्डर भेजते समय कूपन पर "इतिहास" शब्द तथा अपना पूरा नाम व पता स्टेशन के उल्लेख सहित सुवाच्य शब्दों में लिखना न भूलें।

कालीचरण आर्य
मन्त्री,
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
श्रद्धानन्द बलिदान भवन,
दिल्ली—६

॥ ओ३म् ॥

कार्यालय—

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

दिल्ली।

आर्य पर्वों की सूची

वर्ष १९५६

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली आर्यसमाजों की सूचना के लिए प्रतिवर्ष स्वीकृत आर्य पर्वों की सूची प्रकाशित किया करती है। इस वर्ष की सूची निम्न प्रकार है :—

क्रमसंख्या	नाम पर्व	सौर तिथि	चन्द्रतिथि	अंग्रेजी दिनाङ्क
१	मकर संक्रान्ति	१-१०-२०१२	पौष शुक्ल १	१४-१-१९५६ शनिवार
२	वसन्त पंचमी	५-११-२०१२	माघ शुक्ल ५	१६-२-५६ बृहस्पतिवार
३	सीताष्टमी	२२-११-२०१२	फाल्गुन कृष्ण ८	४-३-५६ रविवार
४	दयानन्द बोधोत्सव	२८-११-२०१२	,, १३	१०-३-५६ शनिवार
५	लेखराम वीर तृतीया	३-१२-२०१२	,, शुक्ल ३	१५-३-५६ बृहस्पतिवार
६	वसन्त नवसस्येष्टि(होली)	१४-१२-२०१२	,, ,, १५	२६-३-५६ सोमवार
७	नव सम्वत्सरोत्सव	३१-१२-२०१२	चैत्र शु० १ सवत् २०१३ वि०	१२-४-५६ बृहस्पतिवार
८	आर्य समाज स्थापना दिवस			
९	राम नवमी	८-१-२०१३	चैत्र शु० ९	१९-४-५६ बृहस्पतिवार
१०	हरि तृतीया (तीज)	२५-४-२०१३	श्रावण शुक्ल ३	९-८-५६ बृहस्पतिवार
११	श्रावणी उपाकर्म	६-५-२०१३	,, १५	२१-८-५६ मंगलवार
१२	सत्याग्रह बलिदान दिवस			
१३	कृष्णाष्टमी	१४-५-२०१३	भाद्रपद कृ० ८	२९-८-५६ बुधवार
१४	विजय दशमी	२९-६-२०१३	आश्विन शु० १०	१४-१०-५६ रविवार
१५	दीपावली (ऋषि निर्वाणोत्सव)	१७-७-२०१३	कार्तिक कृ० ३०	२-११-५६ शुक्रवार
१६	श्रद्धानन्द बलिदान दिवस	९-९-२०१३		२३-१२-५६ रविवार

इन पर्वों को उत्साह पूर्वक ससमारोह मनाकर इन्हें आर्य समाज के प्रचार और वैदिक धर्म के प्रसार का महान् साधन बनाना चाहिये।

कालीचरण आर्य

—सभा मन्त्री

* सूचनाएँ तथा वैदिक धर्म प्रसार *

गुरुकुल कांगड़ी

फरवरी १९५७ में मनाई जाने वाली श्रद्धानन्द जन्म शताब्दी के अवसर पर गुरुकुल कांगड़ी ने एक उत्कृष्ट कोटि का स्मृति ग्रन्थ प्रकाशित करने का निश्चय किया है। इस ग्रन्थ के लिए शिक्षा संस्थाओं में अध्ययन करने वाले छात्रों के लिये एक निबन्ध प्रतियोगिता तथा कविता प्रतियोगिता का आयोजन किया गया है। प्रतियोगिताओं के नियमादि गुरुकुल कांगड़ी से प्राप्त हो सकते हैं।

—धर्मदेव वेदवाचस्पति एम० ए०
मन्त्री, आर्यसमाज गुरुकुल कांगड़ी

समाज मन्दिर निर्माण

आर्य समाज फरीदाबाद ने अपने समाज मन्दिर के निर्माणार्थ ५० हजार रुपये की अपील की है। फरीदाबाद का महत्व औद्योगिक नगर विस्तार योजना के कारण बहुत बढ़ गया है। दानी सज्जनों को अपने धन का सदुपयोग करने की प्रार्थना की जाती है।

—मदनलाल गुप्ता, प्रधान

समाज स्थापना

आष्टा (भूपाल) तहसील के अन्तर्गत एक ग्राम खाम खेड़ा में ६-१२-५५ को समाज की स्थापना की गई है। प्रधान श्री सेठ झाबरमल जी तथा मन्त्री श्री नाथूरामजी आर्य निर्वाचित हुए हैं।

—मन्त्री

साधु आश्रम व वेद मन्दिर की स्थापना

लाडवा (करनाल) से रादौर जाने वाली सड़क पर श्री स्वामी अभयानन्द जी सरस्वती संचालक दयानन्द वेद प्रचार मंडल ने १४ मार्गशीर्ष २०१२ वि० को साधु आश्रम तथा वेद मन्दिर की स्थापना की है। लाडवा मोटर अड्डे से यह स्थान १ मील के अन्तर पर है।

—प्रकाशानन्द सरस्वती

मठ गुलनी घटना

बैरगनिया (बिहार) की आर्य हिन्दू जनता ने ५-१२-५५ को एक सार्वजनिक सभा करके बिहार-राज्य की मठ गुलनी के आर्यों तथा ईसाइयों से सम्बद्ध विज्ञप्ति का विरोध किया है।

—कालेश्वरसिंह मन्त्री
आर्यसमाज

शुद्धि

आर्यसमाज कारंजा (यवतमाल) के प्रयत्न से १६-११-५५ को १९ ईसाइयों की शुद्धि की गई। संस्कार श्री दुर्गाप्रसाद जी आर्य ने कराया। शुद्धि के उपरान्त श्री भाई परमानन्द जी तथा दुर्गाप्रसाद जी के व्याख्यान हुए।

—आर्य समाज मेरठ छावनी में श्रीमती एम० सिन्हा नामक महिला की जो पढ़ी लिखी और निपुण नर्स है शुद्धि की गई। आपने अपने ईसाइयों के गढ़ देहरादून को सदैव के लिये तिलाँजलि दे दी है। ज्ञात हुआ है इनकी बड़ी बहिन भी इससे पहले आर्य धर्म को अपना चुकी हैं।

—नारायणसिंह मन्त्री

उत्सव सूचना

आर्य समाज नया बांस, देहली का वार्षिकोत्सव १७ और १८ मार्च ५६ को होना निश्चित हुआ है।

लन्दन प्रचार

गत अगस्त मास में श्री ब्र० धीरेन्द्र जी शील शास्त्री तथा रिसर्च स्कालर श्री ब्र० उषर्बुध जी के प्रयत्नों से बाढ़ पीड़ितों की सहायतार्थ हजारों वस्त्र एकत्र किये गये जो "जल राजेन्द्र जहाज" से भारत पहुँच गये हैं।

लन्दन के ईसाई कन्वेन्टों और सरकारी शिक्षण संस्थाओं में श्री धीरेन्द्र जी के भाषण हुए। श्री ब्र० उषर्बुध जी ने विश्व धर्म सम्मेलन में आर्य समाज का प्रतिनिधित्व किया।

सितम्बर मास में लन्दन से २० मील दूर एक रोमन कथोलिक मठ ने श्री 'शील' को आमन्त्रित किया था जहां २ घंटे तक एब्बट (गुरु) तथा

दूसरे साधुओं से ईसाई व आर्य दर्शन के सिद्धांतों पर खुली चर्चा हुई। अन्त में शील जी ने एक मठाधिकारी की लालसा का कि उन्हें (शील जी को) ईसाई बना लिया जावे, उत्तर दिया "क्या यह सत्य नहीं है कि आम लोगों के दिमाग में यह भी एक प्रकार का धार्मिक साम्राज्यवाद है जिसका विरोध हमें करना होगा। आप क्यों दूसरे धर्म और विचारों का पृथ्वी पर रहने का अधिकार नहीं मानते ?" मठके ३००वर्ष के इतिहास में यह प्रथम अवसर था कि एक बाहरी और अदीक्षित अतिथि को दीक्षित साधुओं ने अपने सायंकालीन स्वल्पाहार में सम्मिलित किया।

पजाब सरकार से प्रार्थना

आर्य समाज यमुना नगर ने अपने इलाके के पजाब विधान सभा के सदस्य श्री डी० डी० पुरी से प्रार्थना की है कि वे पंजाब सरकार से गऊओं, बछड़ों इत्यादि के पजाब प्रान्त से निर्यात पर प्रतिबन्ध लगवावें, क्योंकि पंजाब का यह धन यू० पी० के कसाइयों के हाथ में जा रहा है।

हिन्दी टाइप राइटर के केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय द्वारा प्रस्तावित "की-बोर्ड" में सुधार की मांग

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री का शिक्षामंत्री के नाम पत्र

मान्य महोदय,

हिन्दी टाइपराइटर के की-बोर्ड की समस्या को हल करने के लिये शिक्षा मन्त्रालय को मैं बधाई देता हूं। साथ ही इस की-बोर्ड की उन कमियों की ओर भी आपका ध्यान दिलाना चाहता हू जिनको पूरा करने के पश्चात यह एक सार्वभौमिक टाइपराइटर का स्थान प्राप्त कर सकेगा। मेरे ये सुझाव परिपुष्ट अनुभव और हिन्दी टाइपराइटर के १५ वर्ष से लगातर तीन हजार आर्य समाजों, १५ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं और हिन्दी जगत के साथ हिन्दी में ही हुये पत्र व्यवहार के आधार पर है जो हमारे केन्द्रीय कार्यालय में तथा १५ प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं में व्यवहृत हो रहा है।

आप यह अनुभव करेंगे कि हिन्दी टाइपराइटर का यह की-बोर्ड बनातेसमय संस्कृतकी वर्तमान लिपि की सर्वथा उपेक्षा की गई है। लखनऊ में लिपि सुधार समिति ने जिस लिपि का सुझाव दिया है उसके औचित्य को तो समय ही बतायेगा परन्तु मैं इतना कहना चाहता हूं कि इस लिपि से ही सब क्षेत्रों का कार्य न चलेगा। जिसके पास आपका निर्धारित की-बोर्ड वाला टाइपराइटर होगा, जिसके लिये वह लग १०००) व्यय करेगा, वह इससे संस्कृत टाइप नहीं कर सकेगा। इसमें "ि ङ, ढ ध, तथा रू अक्षरों को बिल्कुल ही छोड़ दिया गया है, जो इससे पूर्व के टाइपराइटरों में मिलते हैं। इन चारों अक्षरों और छोटी इ की मात्रा के रहते हुये न केवल शुद्ध हिन्दी ही टाइप की जा सकती है अपितु संस्कृत के शब्द भी शुद्ध रूप में टाइप किये जा सकते हैं। आप जिस लिपि को चाहें चलायें यदि जनता का सहयोग होगा तो वह चलेगी आप उसको किसी पर थोप न सकेंगे। परंतु टाइप राइटर का की-बोर्ड बनाते हुये तो आपको ऐसी व्यवस्था रखनी ही चाहिये जिससे हर वर्ग और हिन्दी की हर प्रकार की (प्रचलित और प्रस्तावित) लिपियों को टाइप करने में सुविधा हो।

आपके निर्धारित की बोर्ड में उपरोक्त ४ अक्षरों और छोटी इ की मात्रा (ि) के और जोड़ देने से यह टाइप राइटर केवल लखनऊ समिति द्वारा सुझाई गई लिपि के लिये ही नहीं अपितु हिन्दी और संस्कृत की वर्तमान लिपि के लिये भी उपयोगी सिद्ध होगा। इन चार अक्षरों और छोटी इ की मात्रा (ि) के लिये आपके निर्धारित की बोर्ड को बढ़ाने की भी आवश्यकता नहीं है। केवल इतना भर करना होगा :—

१. हाइफन और डैश के स्थान पर केवल एक ही रख सकते हैं।

* बाल जगत् *

चार बातें

(स्व० डा० अमरनाथ झा के उपदेश के आधार पर)

जीवनकी यात्रामें कई वस्तुओं की आवश्यकता है। सब से पहले तो शरीर को ब्रह्मचर्य रखकर स्वस्थ रखना है। बिना स्वस्थ शरीर के कोई प्रसन्न नहीं रह सकता। इस लिए बालकों को व्यायाम करना चाहिये जिससे उनके शरीर का अंग प्रत्यंग दृढ़ हो जाय।

दूसरा काम है विद्या पढ़ना। विद्या अनेक प्रकार की हैं। सब विद्याओं का ज्ञान कोई एक व्यक्ति प्राप्त नहीं कर सकता परन्तु जिस किसी भी विषय का अध्ययन करना हो उसमें पूर्ण परिश्रम करना चाहिये। अपने विषय विशेष में जहाँ से भी हो. जिस किसी से भी हो, ज्ञान लाभ करना चाहिये। जिस सरलता से युवावस्था में ज्ञान मस्तिष्कमें प्रवेश करताहै और वहाँ चिरस्थायी होकर रहता है वह आगे चलकर संभव नहीं।

तीसरा काम है अपने माता पिता और गुरु जनों की सेवा करना अपने गुणों से अपने घर, ग्राम और देश को चमकाना तथा अपने को समाज सेवा के योग्य बनाना। दूसरों के सुख दुःख में भाग लेना, चिकित्सा करना. बच्चों और पीड़ितों की सहायता करना, परोपकार करना आदि २।

मनुष्य और पशु में भेद इतना ही है कि मनुष्य में बुद्धि और आत्म ज्ञान है। यह आत्मा अजर, अमर है। शरीर के नाश होने पर भी इसका नाश नहीं होता। इस आत्मा के द्वारा ही मनुष्य का ईश्वर से सम्बन्ध स्थापित होता है। ईश्वर की आज्ञा पालन करना ही ईश्वर की भक्ति है। इससे मनुष्य ऊंचा उठता है और चित्त शान्त रहता है। आदमी बुरी संगति से बच कर अच्छे मार्ग पर पड़ जाता है।

---

२. इनवर्टिड कोमाज़ के स्थान पर केवल एक ही रख सकते हैं।

३. शतप्रतिशत और फुल के चिन्ह को हटाया जा सकता है अथवा इनमें से फुल अलग किया जा सकता है।

४ ग और ग् के स्थान पर केवल ग् ही रखा जाये और ग् के साथ । लगा कर ग बनाया जाये।

५. या = के स्थान पर ि मात्रा कर दी जाय।

इस प्रकार द्व,द्ध.द्य, रू और ि मात्रा के लिये स्थान बनाये जा सकते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि यदि कोई चिन्ह छूट जाये तो उतना अनर्थ न होगा जितना कि ि . द्व, द्ध, द्य,;तथा रू अक्षरों के छूट जाने से टाइप राइटर अधूरा रह जायेगा इन चार अक्षरों तथा ि मात्रा के छूट जाने से "द्वार, शुद्ध, विद्या तथा रूप" के जो विकृत रूप इस की-बोर्ड के टाइप राइटर से टाइप होंगे आप इसको भली भांति अनुभव कर सकते हैं।

यदि आपकी समिति ने इन चार अक्षरों और ि मात्रा की अवहेलना तथा बहिष्कार किया तो इसका परिणाम क्या होगा यह समय बतायेगा और हमारे जनता राज्य में जनता की आवाज की अवहेलना का जो परिणाम होगा उसे आप भी अनुभव करेंगे। यदि की-बोर्ड बनाने में आपका उद्देश्य सुविधा और सुधार मात्र है और वर्तमान लिपि से आपका कोई द्वेष नहीं है तो मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप मेरे उपरोक्त सुझावों को (की-बोर्ड में द्व,द्ध,द्य. तथा रू अक्षरों और ि मात्रा को और जोड़ने के) स्वीकार कर एक लम्बे विवाद और विरोध को सदैव के लिये समाप्त कर देंगे। यद्यपि देवनागरी अंकों के स्थान पर रोमन अंकों के कारण सर्वत्र ही क्षोभ प्रकट किया जा रहा है तथापि उपरोक्त अक्षरों के छूटने का मामला किसी भी प्रकार क्षम्य नहीं कहा जा सकता और न इसके सम्बन्ध में भारत का विधान ही आपका साथ देता है। मुझे भय है कि आर्य जनता अपने धर्म ग्रन्थों में प्रचलित लिपि का अपमान सहन न करेगी।

कृपया आप इन सुझावों को क्रियान्वित करने के सम्बन्ध में जो कार्यवाही करें उससे मुझे अवश्य सूचित कीजिये।

भवदीय
कालीचरण आर्य
सभा मन्त्री

(पृष्ठ ५४० (३) का शेष)

पुत्र तथा एक पुत्री) तथा मित्रों के विशाल समुदाय को छोड़ कर दिव्य प्रकाश में विलीन हुए हैं।

हम सोचते हैं कि उनकी मृत्यु से कोई चीज खो गई है, यह सोचना भूल है, उन्हें तो नव जीवन प्राप्त हुआ है। हम सोचते हैं कि उनका वियोग हो गया है परन्तु ऐसा सोचना भी भूल है उनका तो परमपिता के साथ मेल हो गया है। मृत्यु की आवाज यह कहती सुन पड़ती है कि 'तुम्हें इस पार्थिव शरीर को त्यागकर वहां से जाना और परमात्मा के निकट आना ही था।"

परमात्मा से प्रार्थना है कि वे दिवंगत आत्मा को सद्‌गति और उनके परिवार के लोगों तथा इष्ट मित्रों को इस दुःखद वियोग को सहन करने की क्षमता प्रदान करें। (रघुनाथ प्रसाद पाठक)

(पृष्ठ ५४० (४) का शेष)

उत्तर प्रदेश सभा के मन्त्री पद पर आने से पूर्व वे उक्त सभा के भूसम्पत्ति विभाग के वर्षो अधिष्ठाता रहे और सभा की सम्पत्ति को जहां भी बिगड़ते देखा हर प्रकार से सुरक्षित करने में लगे रहे। उनकी कानूनी प्रतिभा इस विभाग के कार्य मे सदैव सहयोगी रही।

उत्तर प्रदेश की सभा में सदैव ही उनका स्थान ऊंचा रहा और वे सभी आर्य समाजों के प्रीति पात्र रहे। वर्षो से उत्तर प्रदेश सभा के प्रतिनिधि रूप मे वे सार्वदेशिक सभा के सदस्य बनकर आते रहे, जहां वे सदैव ही अन्तरंग सदस्य बने रहे। सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग में वे अपने जो सुझाव देते थे वे सदैव सदस्यों के लिए विचारणीय रहते थे।

आज ऐसे कर्मठ साथी और सहयोगी को खोकर मैं जो सूनापन अनुभव कर रहा हूँ इसे भुक्त भोगी ही समझ सकते है। चौधरी जयदेव-सिंह जी के निधन से आर्यसमाज की जो क्षति हुई है वह निकट भविष्य मे भरती नही दीखती।

ऐसा साथी और कर्मठ सेनानी आर्य समाज को युग २ मे मिलता रहे मैं इन शब्दों के साथ दिवंगतात्मा के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हू।

* महिला जगत् *

वर्तमान स्त्री शिक्षा हानिकारक है ?

[लेखक—इतिहास का एक विद्यार्थी]

प्रायः सभी धार्मिक तथा विद्वान् महानुभावों का यह मत है कि वर्तमान धर्म हीन शिक्षा प्रणाली आर्य नारियों के आदर्श के सर्वथा प्रतिकूल है। फिर जवान लड़के लड़कियों का एक साथ पढ़ना तो और भी अधिक हानिकर है। इस सह शिक्षा का भीषण परिणाम प्रत्यक्ष देखने पर भी मोहवश आज उसी मार्ग पर चलने का आग्रह किया जा रहा है। इसका कारण प्रत्यक्ष है।

जिन बातों को हमारे यहां पतन समझा जाता है, वही बातें आज के जगत की दृष्टि में उत्थान या उन्नति के चिन्ह माने जाते हैं। पाश्चात्य सभ्यता का आदर्श आज हमारे हृदयों में सब से ऊंचा आसन प्राप्त कर चुका है। अत एव अन्धे होकर उसकी ओर स्वयं अग्रसर होना और दूसरों को ले जाने की चेष्टा करना स्वाभाविक ही है।

स्त्रियों का क्षेत्र है घर, पुरुष का क्षेत्र है बाहर। स्त्री घर की स्वामिनी है, पुरुष बाहर का मालिक है। घर और बाहर से यह मतलब नहीं कि स्त्री सदा घर के अन्दर बन्द रहे और पुरुष सदा बाहर रहे। स्त्री पुरुष दोनों मिल कर ही एक सच्चा घर है।

स्त्री का खास क्षेत्र मातृत्व है। उसके सारे अंग आरम्भ से इस मातृत्व के लिए सचेष्ट हैं। वह मातृत्व का पोषण करने वाले गुणों से ही महान् बनी है। वह माता बन कर ही बड़े से बड़े यशस्वी पुरुषों को जन्म देती है। जिस शिक्षा से इस मातृत्व में बाधा पहुंचती है, जिस शिक्षा में स्त्री के पवित्र मातृत्व के आधार स्वरूप सतीत्व पर कुठाराघात होता है वह शिक्षा नहीं कुशिक्षा है।

एक पत्र में प्रकाशित हुआ था कि एक फैशनेबिल पाश्चात्य युवती ने अपने बालक को इस लिए मार डाला था कि उसे रात्रि के समय खांसी अधिक आती थी। इस कारण वह बहुत रोता था और इससे युवती के सुख-शयन में विघ्न होता था। एक युवती ने बच्चे के पालन-पोषण से पिंड छुड़ाने के लिये आत्म हत्या कर ली थी। मातृत्व का यह विनाश कितना भयंकर है ? परन्तु जिस स्त्री शिक्षा के पीछे आज हम व्याकुल हैं, जिस सभ्यता का प्रभाव आज की हमारी स्त्री शिक्षा को सचालित कर रहा है उस सभ्यता के मातृत्व विनाश का तो यही नमूना है।

आज हम स्त्रियों के मातृत्व का विनाश कर उन्हें नेतृत्व करना सिखाते हैं, परन्तु यह भूल जाते हैं कि यदि मातृत्व या स्त्रीत्व का आदर्श न रहा, यदि स्त्री अपने स्वाभाविक त्याग के आदर्श को भूल गई वह स्नेह मयी मां, प्रेममयी पत्नी या त्याग मयी देवी न रही तो उसका नेतृत्व किस पर होगा।

स्त्री पुरुष के शरीर की रचना ऐसी है कि उनमें एक दूसरे को आकृष्ट करने की विलक्षण शक्ति मौजूद है। नित्य समीप रह कर संयम रखना असम्भव सा है। खेद है आज बड़े २ दिग्गज विद्वान् भी यूरोप का उदाहरण देकर सह शिक्षा का समर्थन कर रहे हैं। कैसा मति वैचित्र्य है ?

———

उपयोगी साहित्य

वैदिक साहित्य सदन, आर्य समाज बाजार सीताराम, देहली द्वारा प्रकाशित साहित्य की उपयोगिता इसी से सिद्ध है कि—

(१) राजस्थान सरकार ने हमारी निम्न पुस्तकों को राजस्थान इन्टर कालिज तक की शिक्षण संस्थाओं और पुस्तकालय के उपयोगार्थ स्वीकृत किया है।

१ मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२॥)	५ विदेशों में एक साल	२।)
२ पापों की जड़ अर्थात् शराब ।-) तथा =)॥		६ व्यायाम का महत्व	≡)
३ महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी	२)	७ ब्रह्मचर्य के साधन १ २) भाग	।-)
४ हमारा शत्रु तम्बाकू का नशा ।=) तथा =)।		८ नेत्ररक्षा ≡)	९ दन्तरक्षा ≡)

(२) उत्तरप्रदेशीय सरकार ने पंचायत पुस्तकालयों के उपयोगार्थ निम्नलिखित पुस्तकें स्वीकृत की हैं—

१ नेत्ररक्षा	≡)	३ दन्तरक्षा	≡)
२ हमारा शत्रु तम्बाकू का नशा ।=) तथा =)॥		४ पापों की जड़ अर्थात् शराब ।- तथा =)॥	

(३) निम्न पुस्तकें भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की धार्मिक परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में निर्धारित है।

१ आदर्श ब्रह्मचारी	।)	५ व्यायाम का महत्व	≡
२ ब्रह्मचर्यामृत बाल स० ।=) साधारण	=)।	६ मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२॥)
३ वैदिक गीता	३)	७ संस्कृत कथा मञ्जरी	।-)
४ महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी	२)		

(४) निम्न पुस्तक विरजानन्द संस्कृत परिषद् की परीक्षाओं में निर्धारित हैं

१	वैदिक गीता	३)	११	संस्कृत क्यों पढ़े ?	।=)
२	संस्कृत वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय	॥)	१२	छात्रोपयोगी विचारमाला	।=)
३	संस्कृतांकुर	१)	१३	रामराज्य कैसे हो ?	≡)
४	ब्रह्मचर्य के साधन १,२,३,४,५,६,७ ८ ९ भाग		१४	पञ्चमहायज्ञविधि	≡)
५	संस्कृत कथा मंजरी	।-)	१५	आर्य सिद्धान्त दीप	१।)
६	व्यायाम सन्देश	१)	१६	तम्बाकू का नशा	=)॥
७	ब्रह्मचर्य शतकम्	।=)	१७	ब्रह्मचर्यामृत बाल सं०	।=)
८	श्रुति सूक्ति शती	≡	१८	पापों की जड़ शराब	=)॥
९	स्वामी विरजानन्द	१॥)	१९	विदेशों मे एक साल	२।)
१०	वैदिक धर्म परिचय	॥=)	२०	व्यायाम का महत्व	≡)

अन्य नगरों में उक्त पुस्तकें मिलने के पते :—

१ गुरुकुल झज्जर झज्जर (रोहतक)
२ पुस्तक भण्डार, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर
३ पुस्तक मन्दिर, मथुरा
४ हिन्दी पुस्तकालय, माता वाली गली, मथुरा
५ विशन बुक डिपो, माता वाली गली, मथुरा
६ भटनागर ब्रादर्स, उदयपुर
७ आर्यवीर पुस्तकालय, अड्डा होशियारपुर, जालन्धर
८ जवाहर बुक डिपो, सुभाष बाजार, मेरठ ९ विद्या भवन, चौड़ा बाजार, जयपुर।

"सार्वदेशिक" के ग्राहकों को विशेष रियायत

सचित्र बाल्मीकि रामायण

धारावाही हिन्दी में मूल सहित

सम्पादक :—पं० प्रेमचन्द विद्या भास्कर (गुरुकुल ज्वालापुर)

भूमिका लेखक—पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय प्रयाग

रामायण की कथाएं तो सबने सुनी ही है किन्तु रामायण बिरले ही लोगों ने पढ़ा होगा। आजकल रामायण में प्रक्षिप्त और पौराणिक गपोड़े तथा अवैदिक कथाएं बहुत भरी पड़ी हैं, इसमें उनका परिष्कार कराकर पुस्तक को इस उपयोगी रूप में पाठकों के लिए प्रस्तुत किया है।

ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के सत्यासत्य ग्रन्थों के नाम व पठन-पाठन व्यवस्था प्रकरण में लिखा है कि "रामायण बाल्मीकि" के अच्छे-अच्छे प्रकरण जिससे दुष्ट व्यसन दूर हों और उत्तमता सभ्यता प्राप्त हो पढ़ने चाहिएं।

अतः हमने इस संस्करण में प्रक्षिप्त और असंगत कथाएं निकाल कर आर्य संस्कृति के अनुकूल शिक्षाप्रद भाग और कथाएं प्रकाशित की हैं। जिससे यह पढ़ने और कथा वार्ता के लिए उपयोगी ग्रन्थ बन गया है।

अच्छा कागज, मोनो टाइप की सुन्दर छपाई, रंग बिरंगे १२ चित्र, मजबूत जिल्द, मूल्य १२) ३१ दिसम्बर तक ८) में। शीघ्र मंगावें।

दयानन्द ग्रन्थ संग्रह

(स्वामी जी की २० पुस्तकों का संग्रह)

ऋषि के ग्रन्थ व सिद्धान्तों में विभिन्न विरोधी विद्वानों ने अनेक शंकाएं उठाईं, प्रश्न किये उन सब का ऋषि ने जो उत्तर दिये वे सभी इस ग्रन्थ में संग्रहित हैं।

इस ग्रन्थ संग्रह की विशेषता यह है कि प्रत्येक पुस्तक के आरम्भ में सम्पादकीय निवेदन है जिसमें उस ग्रन्थ की आवश्यकता क्या थी? ऐतिहासिक विषयों पर प्रकाश डाला गया है।

इसमें अन्य पुस्तकों के साथ महर्षि की आत्म-कथा, ईसाईयों के साथ लिखित तीन दिन का बरेली शास्त्रार्थ तथा हुगली शास्त्रार्थ भी है।

बड़े साइज के ४८० पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य ४॥) रियायती मूल्य ३॥)

उपनिषद् आर्य-भाष्य

[भाष्यकार-स्वर्गीय श्री पं० आर्यमुनि जी]

उपनिषद् आदि ग्रन्थों के भाष्यकारों में स्वामी जी का विशेष स्थान है। इनकी शैली रोचक तथा सरल है। मन्त्रों का पहले पदार्थ किया है उसके साथ इस पर संस्कृत न जानने वाला भी इन सुगमता से समझने लगता है।

इसमें ईश केन कठ, प्रश्न मुण्डक माण्डूक्य एतरेय, तैतिरीय उपनिषदों का संग्रह है।

७५० पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य ६) मात्र

गायत्री रहस्य

[लेखक श्री प्रभु आश्रित जी महाराज]

(भूतपूर्व महात्मा टेकचन्द जी)

इसमें गायत्री की सुन्दर तथा पाण्डित्य पूर्ण व्याख्या की है। पुस्तक का सातवां संस्करण है। इसी से इसकी उपयोगिता सिद्ध होती है।

४७५ पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक का मूल्य २)

गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क, देहली-६

सार्वदेशिक पत्र (हिन्दी मासिक)

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश १० शिलिङ्ग। अर्द्ध वार्षिक ३) स्वदेश, ६ शिलिङ्ग विदेश।

२. एक प्रति का मूल्य ।।) स्वदेश, ।।=) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क वा नमूने की प्रति का मूल्य ।।=) स्वदेश, ।।।) विदेश।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये। चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा। पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने वा ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न देने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है कि उनकी इच्छा वी० पी० द्वारा चन्दा देने की है।

४. सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख को प्रकाशित होता है। किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय में अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा। डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं। अतः समस्त ग्राहकों को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये।

५. सार्वदेशिक का वर्ष १ मार्च से प्रारंभ होता है अंक उपलब्ध होने पर बीच वर्ष में भी ग्राहक बनाए जा सकते हैं।

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
६. पूरा पृष्ठ (२० × ३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा " ८	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई ,,	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	२०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

७ सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

—व्यवस्थापक
'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

[illegible]

(१) श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की पूर्वीय अफ्रीका तथा मौरीशस यात्रा २।)

(२) वेद की इयत्ता (ले० श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी) १॥)

(३) दयानन्द दिग्दर्शन(श्री स्वा० ब्रह्ममुनिजी ॥)

(४) इंजील के परस्पर विरोधी वचन (पं० रामचन्द्र देहलवी) ।=)

(५) भक्ति कुसुमांजलि (पं० धर्मदेव वि० वा० ॥)

(६ वैदिक गीता (स्वा० आत्मानन्द जी) ३)

(७) धर्म का आदि स्रोत (पं० गंगाप्रसाद जी एम. ए.) २)

(८) भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक (ले०—श्री राजेन्द्र जी) ॥)

(९ वेदान्त दर्शनम् (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ३)

(१०) संस्कार महत्व (पं० मदनमोहन विद्यासागर जी) ॥)

(११) जनकल्याण का मूल मन्त्र „ ॥)

(१२) वेदों की अन्तः साक्षी का महत्व „ ॥=)

(१३) आर्य घोष „ ॥)

(१४) आर्य स्तोत्र „ ॥)

(१५) स्वाध्याय संग्रह (स्वा० वेदानन्दजी) २)

(१६) स्वाध्याय संदोह „ ४)

(१७) सत्यार्थ प्रकाश ॥=)

(१८) महर्षि दयानन्द ॥=

(१९) नैतिक जीवन स०(रघुनाथप्रसाद पाठक)२॥)

English Publications of Sarvadeshik Sabha.

1. Agnihotra (Bound) (Dr. Satya Prakash D. Sc.) 2/8/-
2. Kenopanishat (Translation by Pt. Ganga Prasad ji, M. A.) -/4/
3. Kathopanishat (By Pt. Ganga Prasad M A. Rtd. Chief Judge) 1/4/-
4. The Principles & Bye-laws of the Aryasamaj -/1/6
5. Aryasamaj & International Aryan League (By Pt. Ganga Prasad ji Upadhyaya M. A.)-/1/-
6. Voice of Arya Varta (T. L. Vasvani) -/2/-
7. Truth & Vedas (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/6/-
8. Truth Bed Rocks of Aryan Culture (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/8/-
9. Vedic Culture (Pt. Ganga Prasad Upadhyaya M. A) 3/8/-
10. Aryasamaj & Theosophical Society (Shiam Sunber Lal) -/3/-
10. Wisdom of the Rishis (Gurudatta M. A.) 4/ /-
11. The Life of the Spirit (Gurudatta M.A.) 2/-/-
12. A Case of Satyarth Prakash in Sind (S. Chandra) 1/8/-
13. In Defence of Satyarth Prakash (Prof. Sudhakar M A.) -/2/-
14. We and our Critics -/1/6
15. Universality of Satyarth Prakash /1/
16. Tributes to Rishi Dayanand & Satyarth Prakash (Pt. Dharma Deva ji Vidyavachaspati) -/8/
17. Political Science Royal Editinn 2/8/- Ordinary Edition -/8/-
19. Elementary Teachings of Hindusim „ -/8/- (Ganga Prasad Upadhyaya M.A.)
20. Life after Death „ 1/4/-

Can be had from:—**SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA, DELHI-6**

नोट--(१) आर्डर के साथ २५ प्रतिशत (चौथाई) धन अगाऊ रूप में भेजें।

(२) थोक ग्राहकों को नियमित कमीशन भी दिया जायगा।

(३) अपना पूरा पता व स्टेशन का नाम साफ २ लिखें।

स्वाध्याय योग उत्तम ग्रन्थ

भजन भास्कर मू. १।।।)

तृतीय संस्करण

यह संग्रह मथुरा शताब्दी के अवसर पर सभा द्वारा तय्यार कराके प्रकाशित कराया गया था। इस में प्रायः प्रत्येक अवसर पर गाए जाने योग्य उत्तम और सात्विक भजनों का सग्रह किया गया है।

संग्रहकर्ता श्री पं० हरिशंकर जी शर्मा कविरत्न भूतपूर्व सम्पादक 'आर्य मित्र' हैं।

अङ्गरेज चले गए

अङ्गरेजियत नहीं गई

क्यों ?

इस लिए कि अंग्रेजी जानने वालो के मनों में वैदिक संस्कृति की छाप नहीं रही इसके लिए "Vedic Culture" अंग्रेजी पढे लिखे लोगो तक पहुँचाइए।

VEDIC CULTURE

लेखक :—

श्री गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०

भूमिका लेखक —

श्री डा० सर गोकुल चन्द जी नारंग

मूल्य ३।।)

दयानन्द-दिग्दर्शन

(ले -श्री स्वामी ब्रह्ममुनिजी

दयानन्द के जीवन की ढाई सौ से ऊपर घटनाए और कार्य वैयक्तिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, वेद प्रचार आदि १० प्रकरणो मेक्रमबद्ध हैं। २४ भारतीय और पाश्चात्य नेताओ एव विद्वानो की सम्मतिया है। दयानन्द क्या थे और क्या उनसे सीख सकते हैं यह जानने के लिये अनूठी पुस्तक है। छात्र, छात्राओ को पुरस्कार मे देने योग्य है। कागज छपाई बहुत बढिया पृष्ठ सख्या ८४, मूल्य ।।।)

धर्म प्रेमी स्वाध्याय शील नर-नारियों के लिये

*** शुभ सूचना ***

श्री महात्मा नारायणस्वामी जी कृत, अब तक लगभग १२ संस्करणों में से निकली हुई अत्यन्त लोकप्रिय पुस्तक

कर्त्तव्य दर्पण

का नया सस्ता संस्करण

साईज २०×३० / १२ पृष्ठ ३८४ सजिल्द,

मूल्य केवल ।।।)

आर्यसमाज के मन्तव्यों, उद्देश्यों, कार्यों, धार्मिक अनुष्ठानों, पर्वों तथा व्यक्ति और समाज को ऊंचा उठाने वाली मूल्यवान सामग्री से परिपूर्ण।

मांग धड़ाधड़ आ रही है अतः आर्डर भेजने में शीघ्रता कीजिये, ताकि दूसरे संस्करण की प्रतीक्षा न करनी पड़े।

दयानन्द सिद्धान्त भास्कर

सम्पादक—श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी

द्वितीय संस्करण, मू.२।) प्रति, 'रियायती' मू.१।।) प्रति

इस पुस्तक की विशेषता यह है कि भिन्न-भिन्न महत्वपूर्ण विषयो पर महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज की भिन्न-भिन्न पुस्तको व पत्र-व्यवहार तक मे वर्णित मत को एक स्थान पर सग्रह किया गया है। आप जब किसी विषय मे महर्षि की सम्मति जानना चाहें वा वही प्रकरण इस पुस्तक में देख लें। पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है।

यह पुस्तक सम्पादक के लगभग ११ वर्ष के कठिन परिश्रम का फल है। उनका परिश्रम सराहनीय है।

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ मे छपकर
श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली—से प्रकाशित।

ऋग्वेद

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

यजुर्वेद

अंक १२

माघ २०१५

फरवरी १९५९

वर्ष ३०

मूल्य स्वदेश ५

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ॥)

(९)

हे सोमरूप स्वामी ! उत्तर उपांग तेरा।
सर्वत्र सब दिशा में है आपका बसेरा॥
विज्ञान विधान द्वारा जगती को जगमगाया।
जीवों में चेतना का सञ्चार कर दिखाया॥
हम बार बार, भगवन् ! करते तुम्हें नमस्ते।
यदि द्वेष भावना हो तो न्याय तेरे हस्ते॥

(१०)

हे विष्णु सर्व व्यापिन ! नीचे निवास करते।
फल फूल पेड़ पल्लव सब में तुम्हीं विचरते॥
तुम कर रहे हो रक्षण सन्तानवत् हमारा।
दुःख-सुख सभी समय में साथी-सखा सहारा॥
हम बार बार, भगवन् ! करते तुम्हें नमस्ते।
यदि द्वेष-भावना हो तो न्याय तेरे हस्ते॥

(११)

अन्तर रूपों से दिग्पति ! ऊपर भी दृष्टि आते।
ऋतु सिद्ध वृद्धि होती सब सृष्टि को चलाते॥
भौतिक विभूतियां हैं सब आपकी निशानी।
कैसे कहेगी वाणी अद्भुत अकथ कहानी॥
हम बार बार, भगवन् ! करते तुम्हें नमस्ते।
यदि द्वेष भावना हो तो न्याय तेरे हस्ते॥

सम्पादक—
सभा मन्त्री
सहायक सम्पादक—
श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषय-सूची

१ वैदिक प्रार्थना		५८७
२. सम्पादकीय		५८८
३. न मानने वालों पर उसका वज्र गिरता है	(श्री प० प्रियव्रत जी वेद वाचस्पति)	५६५
४. धर्म और विज्ञान	(श्री प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०)	५६६
५. भारतीय और पाश्चात्य सभ्यता	(श्री प० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड)	६००
६ श्री देवेन्द्रनाथ ठाकुर	(श्री भवानी लाल भारतीय एम० ए०)	६०१
७. सृष्टि उत्पत्ति के विषय में	(श्री महात्मा चन्द्रानन्द जी वानप्रस्थी)	६०५
८. वसन्त का वैदिक स्वरूप	(श्री पन्नालाल परिहार जोधपुर)	६०६
९ स्वर्गीय श्री भाई जयदेव सिंह जी एडवोकेट	(एक दुखित आत्मा)	६१४
१०. वर्तमान भयंकर परिस्थिति में आर्यसमाज का कर्तव्य	(श्री रामगोपाल जी शाल मर्चेंट)	६१६
११. ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन	(श्री पुरुषोत्तमदास जी टंडन का भाषण)	६१७
१२. महिला जगत	(श्री आचार्य श्रीराम जी)	६२०
१३. बाल जगत		६२१
१४. विचार विमर्श		६२२
१५. स्वाध्याय का पृष्ठ		६२३
१६ सूचनाएं तथा वैदिक धर्म प्रसार		६०५
१७. साहित्य समीक्षा		६०८

॥ ओ३म् ॥

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३० } फरवरी १९५६, माघ २०१२ वि०, दयानन्दाब्द १३१ { अङ्क १२

वैदिक प्रार्थना

सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् ।
सनिं मेधामयाशिषᳬ स्वाहा ॥ यजु० ३२ । १३ ॥

व्याख्यान—हे सभापते ! विद्यामय न्यायकारिन सभासद् ! सभाप्रिय सभा ही हमारा राजा न्यायकारी हो । ऐसी इच्छा वाले आप हमको कीजिये । किसी एक मनुष्य को हम लोग राजा,कभी न मानें, किन्तु आपको ही हम सभापति सभाध्यक्ष राजा मानें । आप अद्भुत आश्चर्य विचित्र, शक्तिमय हैं तथा प्रियस्वरूप ही हैं । इन्द्र जो जीव उसको कमनीय (कामना के योग्य) आप ही हैं, "सनिम्' सम्यक् भजनीय और सेव्य भी जीवों के आप ही हैं । मेधा अर्थात विद्या सत्यधर्मादि धारणावाली बुद्धि को हे भगवन् ! मैं याचता हूँ । सो आप कृपा करके मुझको देओ । "स्वाहा" यही स्वकीय वाक आह कहती है कि एक ईश्वर से भिन्न कोई जीवों को सेव्य नहीं है । यही वेद मे ईश्वराज्ञा है । सो सब मनुष्यों को मानना अवश्य योग्य है ।

सम्पादकीय

कार्य का समय है, बातों का नहीं

जब कोई नई विचार धारा लोगों के सामने उपस्थित की जाती है तब उसे सब के कानों तक पहुंचाने के लिए वाणी और लेखनी दोनों का बहुत प्रयोग करना पड़ता है। अपनी बात सुनानी पड़ती है और विरोधियों के आक्षेपों का उत्तर देना पड़ता है। यह प्रचार का पहला पर्व समझना चाहिये। लोग नये सिद्धान्तों को केवल शब्दों द्वारा सुनकर ही सन्तुष्ट नहीं हो जाते, वह उन सिद्धान्तों को कार्य रूप में परिणत होते भी देखना चाहते हैं। यदि चिरकाल तक वे सिद्धान्त शब्दों के क्षेत्र से निकल कर कार्य के क्षेत्र में प्रवेश न करें, जिन आदर्शों का प्रचार किया गया है वह प्रयोग में आते दृष्टिगोचर न हों तो धीरे २ शब्दों की शक्ति जाती रहती है। वह ध्वनि मात्र रह जाते हैं, उनमें कोई सार नहीं रहता।

आर्य समाज का प्रचार पहले पर्व से गुजर चुका है। वाणी तथा लेख द्वारा वैदिक धर्म के सिद्धान्त लोगों के सामने रखे जा चुके हैं। मेरा यह अभिप्राय नहीं कि आर्य समाज के विचारों का प्रचार इतना पर्याप्त हो गया है कि अब आगे उसकी आवश्यकता नहीं रही, परन्तु यह बात निश्चित रूप से समझनी चाहिये कि अब आगे वही शाब्दिक प्रचार प्रभाव उत्पन्न कर सकेगा जो सिद्धान्तों के व्यावहारिक फलों से सम्पुष्ट हो। दृष्टान्त के तौर पर आप वेदों पर विश्वास को ले लीजिये। आर्य समाज के तीसरे नियम का आदेश है कि वेदों का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। इस नियम की पुष्टि में सहस्रों व्याख्यान दिये जा चुके हैं और सहस्रों लेख लिखे जा चुके हैं। व्याख्यानों की संख्या तो अब तक लाखों से ऊपर जा चुकी होगी। उन व्याख्यानों और लेखों का बहुत सा प्रभाव भी अवश्य हुआ होगा। परन्तु वह प्रभाव व्यापक और दृढ़ तभी हो सकता है जब अन्य लोगों को आर्य समाज के सभासद नियमानुसार वेद को पढ़ते पढ़ाते और सुनते सुनाते दिखाई दें। एक समय था जब आर्यसमाज में प्रविष्ट होने वाले नये सज्जन महर्षि दयानन्द के भाष्य तथा अन्य ग्रन्थों की सहायता से वेदों का स्वाध्याय करना अपना आवश्यक कर्त्तव्य समझते थे। यह बात आज से ६०-७० साल पुरानी है। आज दशा बदल गई है। आर्य सभासदों की संख्या बढ़ गई है, परन्तु स्वाध्यायशील आर्य कम हो गये हैं। जिस अनुपात से आर्यों की संख्या बढ़ी है यदि उसी अनुपात से वेद का स्वाध्याय करने वाले व्यक्तियों की संख्या भी बढ़ती तो वेदों का प्रचार बहुत आसान हो जाता।

आर्य समाज गुणकर्मानुसार वर्ण व्यवस्था में विश्वास रखता है और उसी का प्रचार भी करता है। यदि गुणकर्मानुसार वर्ण-व्यवस्था को कार्य का रूप देना हो तो आवश्यक है कि आर्य लोग अपने बच्चों के विवाह के समय जन्म गत जाति का कोई ध्यान न रख कर योग्यता के आधार पर विवाह किया करें। जात पांत के जाल को काटने के लिए आवश्यक है कि यथासम्भव उसके बाहर सम्बन्ध तलाश किये जाएं। अनुभव यह बतलाता है कि अब भी हमारे परिवारों में अधिकतर विवाह अपनी जातियों में ही होते हैं। शायद यह कहने में अत्युक्ति न होगी कि जन्मगत जाति के बन्धनों को तोड़ कर होने वाले विवाहों का अनुपात अभी दस फीसदी से ऊपर नहीं गया। केवल इतना कह देने से काम नहीं चल सकता कि यदि अपनी ही जाति में अच्छा सम्बन्ध मिल जाय तो क्या हर्ज है? हर्ज यही है कि यदि रूढ़ि की लीकपर चलते जाएं तो रूढ़ि के जाल से निकलना अस-

म्भव है। यदि हम किसी कुरीति को तोड़ना चाहते हैं तो उसे इच्छापूर्वक और यत्नपूर्वक तोड़ना होगा। यह स्पष्ट है कि यदि सब आर्य समाजी जाति बन्धन को तोड़ कर गुण कर्मानुसार विवाह सम्बन्ध करने लगें तो वर्णव्यवस्था सबन्धी वैदिक सिद्धान्त को अधिक पुष्टि मिल सकती है।

हम कार्य की अपेक्षा शब्दों को अधिक प्रभावशाली समझते हैं, इसका एक प्रमाण हमारे ईसाई विरोध आन्दोलन ने दिया है। ईसाइयों को भारत वर्ष में अपना विस्तार करते हुए २०० से अधिक वर्ष व्यतीत हो गये हैं। इस बीच में उन्होंने जो कार्य किया है उसका पूरा परिचय हमे तब मिला जब आसाम के इसाइयों द्वारा प्रभावित भाग मे नेहरू जी का अनादर किया गया। तब परिस्थिति की छानबीन आरम्भ हुई। उससे पता चला कि देश के न केवल कुछ जिले अपितु कुछ प्रदेश के प्रदेश ईसाइयत के घेरे में आ चुके हैं। ईसाइयत ने उनमे राष्ट्रीयता के विरोधी जिन भावों का प्रचार किया है उनका पता भी उसी समय लगा। २०० वर्षों तक ईसाई पादरी चुपचाप अपना जाल फैलाते रहे। इतना चुपचाप कि हमारे कानों पर जूं भी न रेंगी। जब हमें ईसाइयों के जाल का पता चला तब देश के समाचार पत्रों मे और व्याख्यान वेदियों पर एक कोहराम सा मच गया। जो शाब्दिक आन्दोलन उठा उसका सार यह था कि ईसाइयों ने छल और फरेब से करोडों भारतवासियों को ईसाई बना लिया है और अब भी बनाते जा रहे हैं। यह शिकायत भी बडे जोर से होने लगी कि स्वतन्त्रता के पश्चात हजारों ईसाई प्रचारक करोड़ों की पूंजी लेकर ईसाइयत के प्रचार के लिये भारत में आ गये हैं। इस प्रकार का शाब्दिक आन्दोलन लगभग ७ साल से चल रहा है। उसे देख और सुनकर प्रतीत होता है कि मानो शाब्दिक आन्दोलन की अमोघता पर हमें पूर्ण विश्वास है। हमें यह भरोसा प्रतीत होता है कि अखबारों और व्याख्यानों के गोलों से घबरा कर ईसाई पादरी भारतको छोडकर भाग जायेंगे और जो भारतवासी ईसाई बन चुके हैं वह आर्य धर्म में वापस आ जायेंगे।

इससे अधिक भ्रमात्मक विचार क्या हो सकता है? मौन परिश्रम का उत्तर मौन परिश्रम से, सेवा का उत्तर सेवा से और त्याग का उत्तर त्याग से ही देना सम्भव है। सार्वदेशिक सभा में ईसाई प्रचार निरोध के सम्बन्ध में प्राय. दो प्रकार के पत्र आते है। कुछ पत्रों में यह शिकायत होती है कि ईसाई पादरी अब भी पिछड़ी हुई जातियों और अनपढ लोगों मे अपना जाल फैला रहे हैं। दूसरे प्रकार के वह पत्र होते हैं जिनमें ईसाइयों के विरुद्ध काफी अखबारी आन्दोलन न होने की शिकायत की जाती है। यदि इन दोनों प्रकार की शिकायतों का विश्लेषण किया जाय तो उनका अभिप्राय यह प्रतीत होता है कि यदि शाब्दिक आन्दोलन पूरे जोर से किया जाय तो ईसाइयों के प्रचार की प्रगति रुक सकती है। वस्तुस्थिति उससे बिल्कुल उलटी है। हम जितना शाब्दिक आंदोलन करते हैं ईसाई प्रचारकों का प्रयत्न उतना ही तीव्र होती है। उनके पास धन भी है और जन भी। इस प्रसंग मे हमारे लिए विचारणीय प्रश्न दो है। पहला प्रश्न यह है कि ईसाई प्रचार निरोध के लिए प्रत्येक आर्य ने और आर्य समाज ने कितना धन दिया, और दूसरा प्रश्न यह है कि दुर्गम पर्वतों और ग्रामों में सेवा द्वारा धर्म प्रचार करने के लिये कितने योग्य व्यक्ति अपना जीवन अर्पण करने को तैयार हुए हैं। खेद से कहना पड़ता है कि इन दोनों प्रश्नों का उत्तर बहुत ही असन्तोष जनक है।

ईसाई प्रचारक यूरोपियन और भारतीय इन दो भागों में विभक्त है। यूरोप से जो लोग क्रास का प्रचार करने के लिये भारत में आते हैं वह प्राय: ऊंची शिक्षा प्राप्त किये होते हैं प्रोटेस्टेंट

पादरी तो परिवारों को साथ लेकर ही आते हैं। वह लोग निर्वाह मात्र लेकर कार्य करते हैं। धन भी अधिकतर बाहर से ही आता है। उनका उत्तर हम मुट्ठी भर प्रचारकों से देना चाहते हैं, यही आश्चर्य की बात है। धन और कार्य की कमी को वाचिक या लिखित आन्दोलन से पूरा करना सम्भव नहीं। मैं इस लेख द्वारा आर्यजनता के हृदयों पर यह अंकित करना चाहता हूँ कि वह ईसाई प्रचार निरोध सम्बन्धी आवेश को निम्नलिखित उपायों से प्रगट करें:—

(१) प्रत्येक आर्य नर-नारी इस कार्य के लिए शक्ति भर आर्थिक सहायता करे। अपने जिले या प्रान्त में यदि कोई ठोस कार्य चल रहा हो तो अपना दान का एक भाग वहां भेजें और दूसरा भाग आसाम, उड़ीसा, मध्यप्रदेश आदि ईसाइयों के कार्य क्षेत्रों में प्रचार करने के निमित्त सार्वदेशिक सभा को प्रेषित करें।

(२) प्रान्तों तथा मण्डलों की सभायें अपने अधिकार-क्षेत्र में दृष्टि दौड़ा कर देखें कि निरोध कार्य की आवश्यकता है या नहीं। जहां आवश्यकता दिखाई दे वहाँ सेवा केन्द्र स्थापित करके कार्य आरम्भ कर दें। कार्य शान्त और गम्भीर भाव से होना चाहिये। दुनिया भर के समाचार पत्रों में समाचार प्रकाशित कराने की चेष्टा न होनी चाहिये। जो आर्य सज्जन प्रचार केन्द्रों में जाकर बसने और निर्वाह मात्र पर सेवा कार्य करने को तैयार हों वह अपनी सेवायें समाज के अर्पण करें। सार्वदेशिक सभा को आसाम और उड़ीसा के लिये ऐसे त्याग वृत्ति वाले कुछ कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। —इन्द्र विद्यावाचस्पति

टंकारा में महर्षि दयानन्द का स्मारक

पांच लाख रुपयों की आवश्यकता

टंकारा में महर्षि दयानन्द की जन्म शताब्दी का जो महोत्सव हुआ था उसमें सर्व सम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया था कि महर्षि के जन्म स्थान टंकारा में एक भव्य और उपयोगी स्मारक बनाया जाय। वस्तुतः यह लज्जा की बात थी कि महर्षि के जन्म के पश्चात एक शताब्दी व्यतीत हो जाने पर भी उनका जन्म स्थान धार्मिक दृष्टि से सूना पड़ा था। शताब्दी महोत्सव का यह निश्चय सर्वथा उचित था। उसके स्वीकार होने के समय आर्यजनों में बड़ा उत्साह था। प्रतीत होता था कि वह प्रस्ताव दिनों में ही कार्यान्वित हो जायगा। उपस्थित आर्यजन प्रस्ताव को स्वीकार करके घरों को चले गये और शायद प्रस्ताव को भूल गये। काठियावाड़ के दानवीर सेठ नानजी कालिदास के मन में आर्य भावना उत्पन्न हुई और उन्होंने स्मारक के लिये डेढ़ लाख रुपया दान कर दिया। दान के साथ ही आर्य जनों की नींद तोड़ने के लिए उन्होंने यह शर्त लगा दी कि जितनी राशि मैंने दान की है न्यून से न्यून उतनी ही राशि आर्यसमाज एकत्र करे तब मेरे दान की राशि व्यय की जाय। सेठ नानजी कालिदास के दान को मिले भी वर्षों व्यतीत हो गये, अब तक सेठ जी के डेढ़ लाख रुपये के अतिरिक्त केवल तीस हजार रुपया एकत्र हुआ है। यह ठीक है कि कुछ समय टंकारा स्मारक ट्रस्ट की योजना बनने, उसके नियमों के ठीक होने और उसके रजिस्टर्ड आदि होने में व्यतीत हो गया, परन्तु अब तो वह सब समस्याए हल हो चुकी। एक यह प्रश्न उलझा हुआ था कि ट्रस्ट का सार्वदेशिक सभा से क्या सम्बन्ध हो। नियमों में ऐसी व्यवस्था कर दी गई है कि सार्वदेशिक सभा का प्रधान निज़ अधिकार से ट्रस्ट का सदस्य रहे। सामान्य रूप से यह भी निश्चय हो चुका है कि ट्रस्ट का सब कार्य सार्वदेशिक सभा की देख रेख में होगा। एक ट्रस्ट को ठीक मार्ग पर रखने के लिये यह मर्यादा पर्याप्त मालूम होती है।

अब कोई कारण प्रतीत नहीं होता कि आर्य समाज अत्यन्त शीघ्र अभीष्ट राशि को पूरा करके

अपनी प्रसिद्ध उदारता और कर्मण्यता का परिचय दें। अच्छा और उपयोगी स्मारक बनाने के लिये न्यून से न्यून पांच लाख रुपयों की आवश्यकता होगी। उस राशि में से डेढ़ लाख प्राप्त हो चुके हैं। यदि आर्यजन दृढ़ संकल्प होकर कार्य में लग जॉय तो शेष राशि का एकत्र करना कुछ भी कठिन नहीं। प्रत्येक आर्य नर नारी यह निश्चय करले कि न्यून से न्यून पाच रुपये स्मारक-कोष में डालेगा। यह राशि सार्वदेशिक सभा को अथवा सीधे ट्रस्ट को भेजी जा सकती है। नगरों और ग्रामोंके सब लोग अपनी राशि एकत्र करके भी भेज सकते हैं। जो बड़ी राशियाँ दान कर सकते हैं उन्हें अपना हिस्सा डालने में विलम्ब न करना चाहिये। यह सचमुच लज्जा की बात है कि एक दानी ने जितनी राशि दान की उतनी अब तक सारा आर्य समाज एकत्र न कर सका। इसमें सन्देह नहीं कि देर होने का कारण अनिच्छा या अशक्ति नहीं है अपितु उपेक्षा है। आशा है अब आर्य समाज अपने उपेक्षा भाव को त्याग देगा और वर्तमान विक्रमी सवत् की समाप्ति से पूर्व इतनी राशि एकत्र कर देगा कि टंकारा में एक उपयोगी और शानदार स्मारक बनाने का कार्य आरम्भ किया जा सके।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियां ❀

सरदार पणिक्कर द्वारा गलत मार्ग-प्रदर्शन

सरदार पणिक्कर देश के एक प्रसिद्ध व्यक्ति हैं जिन्होंने सरकारी उच्च पदों पर रहकर देश की उल्लेखनीय सेवा की है। वे चीन में भारत के सफल राजदूत सिद्ध हो चुके हैं और राज्य पुनर्संगठन आयोग की सम्मानित त्रिमूर्ति में से एक हैं। वे राजनीतिज्ञ हैं और विद्वान भी हैं। देश के कर्णधारों के आदर और विश्वास के पात्र हैं। उनके भाषणों और लेखों को जनता बड़े चाव से सुनती और पढ़ती है। पिछले दिनों उन्होंने 'विश्व भारती' में अपने दीक्षान्त भाषण में ऐसी बातें कह डाली हैं जो यदि उनकी लेखनी से न निकलती तो हम उन्हें किसी बहके हुए दिमाग की उपज समझ कर उन पर ध्यान न देते। उन्होंने 'सादा जीवन और उच्च विचार' की मान्यता रखने वाले देश वासियों की निन्दा की और उन लोगों को आड़े हाथों लिया जो राज्य और प्रजा के लिए 'निर्धनता' के आदर्श को अपनाने की शिक्षा देते हैं। उन्होंने 'निर्धनता' के आदर्श को गलत आदर्श बताकर चेतावनी दी कि स्वेच्छया निर्धनता के आदर्श को अपनाने वाले थोड़े व्यक्ति हुआ करते हैं सब के लिए तो यह आदर्श रोग होता है जिसे भारतीय राजनीति के शरीर से बाहर निकाल फैंकना है। यह है सरदार महोदय की विचारधारा जिसका समर्थन कोई भी विचारशील देश भक्त नहीं कर सकता। यहां तक ही नहीं वे भारत के भूतकाल को काल्पनिक बतलाने का भी दुस्साहस कर बैठे हैं। उनके अपने शब्द सुनिए :—

At a period of change like this when India is taking giant steps for ward, the malignant continuance of unreason, bigotry and blind adherence to past notions based on a perverted idea of an imaginary past is a deadly enemy which each one of us has to fight in his own sphere.

'इस प्रकार के परिवर्तन काल में जबकि भारत वर्ष तेजी से आगे पैर धर रहा है काल्पनिक भूतकाल पर अवलम्बित कुतर्क, धार्मिक कट्टरता और भूतकालिक भावनाओं के प्रति अंधश्रद्धा का जारी रहना घातक शत्रु है जिससे प्रत्येक देशवासी को लोहा लेना है।"

इसके आगे उन्होंने पश्चिम के जड़वाद की

प्रशंसा में जैसा कि उनके नाम से समाचार पत्रों में छपा है जमीन आसमान एक कर दिया है और रोमन कथोलिक चर्च को—उसके उपदेशकों के तप, त्याग, ब्रह्मचर्य पालन एवं निस्स्वार्थ सेवाओं के लिये बहुत बढ़िया प्रमाण पत्र भी दे डाला है। उन्होंने कहा "पश्चिम का तथा कथित जड़वाद क्या है? यदि पाश्चात्य जीवन का गम्भीर अध्ययन किया जाय तो जिज्ञासु को यह निश्चय हुए बिना न रहेगा कि भौतिक वैभव के साथ २ पाश्चात्य लोगों में अनुशासित जनसेवा की भावना भी विद्यमान है। इतना ही नहीं उनमें समस्त मानव जाति के कल्याण में योगदान करने की भी भावना है। मानववाद से उत्पन्न कष्टों के प्रति भी वे जागरूक हैं। इन सब के द्वारा वे आत्मिक धर्म को क्रियात्मक जीवन में परिणत करते हैं।"

सरदार महोदय पूछते हैं "क्या आधुनिक आध्यात्मिक भारत के पास महान् कथोलिक चर्च जैसी वस्तु है? क्या भारत के पास ऐसे स्त्री-पुरुषों का दल है जो तप, त्याग, निर्धनता, सेवा और कठोर जीवनका व्रत लेकर संसारके विभिन्न भागों में फैल कर मानव समाज की सेवा में अपने को मिटाये हुए हैं? क्या भारत के पास ऐसे संगठन हैं जो पाश्चात्य देशों की उन सोसाइटियों की बराबरी कर सकें जिन्होंने हस्पताल खोले हुए हैं जो महामारियों से, कुष्ठ, तपेदिक और कैंसर जैसी घातक बीमारियों से लोहा लेती हैं? क्या ये निःस्वार्थ सेवाएं उन लोगों के द्वारा सम्भव हो सकती हैं जो 'कांचन' धन) के उपासक कहे और समझे जाते हैं?"

यदि प्रजा भोजन, वस्त्र और घर-जीवन निर्वाह की इन अनिवार्य आवश्यकताओं और जीवन विकास की आर्थिक असुविधाओं से तंग रहे तो सचमुच यह निर्धनता बीमारी है और उसके निवारण का भगीरथ यत्न होना ही चाहिये। परन्तु यदि 'निर्धनता' से अभिप्राय विलासिता जन्य कृत्रिम निर्धनता और अपरिमित भोगवाद से है तो हम उसे निर्धनता नहीं मान सकते। यदि भारत की प्रजा कृत्रिम निर्धनता से गरीब बनी रहे और भोगवाद के अभिशापों से मुक्त और जीवन निर्वाह की वस्तुओं और जीवन विकास की सुविधाओं से युक्त रहे तो ऐसी निर्धनता स्वागत योग्य है। भारतीय संस्कृति त्याग प्रधान है और यही उसके जीवित रहने की गारंटी है। यह संस्कृति भोग की अनुमति देती और ऐश्वर्य वृद्धि की प्रेरणा भी प्रदान करती है परन्तु उस सीमा तक जहां तक मनुष्य का नैतिक उत्थान कुण्ठित न हो। 'सादे जीवन और उच्च विचार' के आदर्श का यही लक्ष्य और यही अभिप्राय है। यदि कोई व्यक्ति इस लक्ष्य की खिल्ली उड़ाए तो वह स्वयं अपने को उपहास का पात्र बनाता है।

प्रत्येक देश के लोगों का जीवन सूत्र उसके भूतकाल के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ा होता है। यदि वह जीवन सूत्र कट जाय तो मनुष्यों का जीवन, डोर कटे हुए पतंग के समान संकट पूर्ण बन जाता है। गौरवपूर्ण भूतकाल एवं उसकी सच्ची और श्रेष्ठ परम्पराओं का न कभी अन्त होता है और न हो सकता है। श्रेष्ठ भूतकाल से श्रेष्ठ वर्तमान और श्रेष्ठ वर्तमान से श्रेष्ठ भविष्य बना करता है। भारत का भूतकाल काल्पनिक है वा वह कभी श्रेष्ठ नहीं रहा ऐसी मान्यता भारत के वास्तविक इतिहास से अनभिज्ञ व्यक्ति वा शरारत पूर्ण दिमाग की ही उपज हो सकती है। अवश्य भारत के पूर्व इतिहास में ऐसा समय भी आया जबकि सम्भवतः भोगवाद से क्लान्त प्रजा को त्याग मार्ग का पथिक बनाने के उद्देश्य से संसार को माया वा मिथ्या बताने की अक्षम्य धार्मिक भूल की गई जिसके परिणाम स्वरूप लोगों में प्रमाद, अन्ध विश्वास, अकर्मण्यता और निर्धनता व्याप्त हुए। यदि सरदार महोदय का लक्ष्य इसी भूतकाल से है तो उनका आरोप सही है

परन्तु उनका समस्त भूतकाल पर झाड़ू फेर देना और उस भूत के परिमार्जन स्वरूप "खाओ पीओ और मौज उड़ाओ" का मन्त्र फूंक देना। युक्ति युक्त नहीं है। वर्तमान राजनैतिक स्वतन्त्रता के स्वर्णिम काल में भारत भौतिक अभ्युत्थान के ऊंचे से ऊंचे शिखर पर पहुँचे इससे कौन देशभक्त होगा जो इन्कार कर सके परन्तु यह अभ्युत्थान नैतिक उन्नति के बलिदान पर हो तो यह देश के लिए ही नहीं अपितु समस्त विश्व के लिये दुर्भाग्य की बात होगी।

भारत का पतन निर्धनता के कारण नहीं प्रत्युत अत्यधिक एवं अमर्यादित भौतिक वैभव के कारण हुआ। इस सत्य पर महर्षि दयानन्द सरस्वती ने बड़ा अच्छा प्रकाश डाला है। वे लिखते हैं :—

"यह संसार की स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि जब बहुत सा धन असदिग्ध प्रयोजन से अधिक होता है तब आलस्य, पुरुषार्थ हीनता, ईर्ष्या द्वेष, विषयासक्ति और प्रमाद बढ़ता है। इससे देश में सुशिक्षा नष्ट होकर दुर्गुण और दुष्ट व्यसन बढ़ जाते हैं जैसे मद्य मांस सेवन, स्वेच्छाचारादि दोष बढ़ जाते हैं।"

(सत्यार्थप्रकाश समु० ११)

सरदार महोदय जैसी विचार धारा रखने वाले महानुभावों को देश को इस खतरे में डालने में विशेष सावधान रहना चाहिये और देशवासियों का सही मार्ग प्रदर्शन करना चाहिये जैसा कि माननीय राष्ट्रपति महोदय ने २८ दिसम्बर को नई देहली में आयोजित शिक्षा सम्मेलन के उद्घाटन भाषण में निम्न लिखित शब्दों द्वारा किया है :—

"भारतीय समाज में व्याप्त धनोपासना की नई लहर (जिसके परिणक्कर महोदय भी पृष्ठ-पोषक प्रतीत होते हैं—सम्पादक) ने अनिष्टकारक वातावरण उत्पन्न कर दिया है। समाज में स्थान पाने के इच्छुक समस्त व्यक्तियों का प्रयास आध्यात्मिक उन्नति और ईमानदारी से परिपूर्ण कार्यों की ओर से हट कर बलात् धनोपार्जन पर केन्द्रित हो गया है।"

रोमन कथोलिक चर्च और पश्चिम के जड़-वाद की सरदार महोदय ने प्रशंसा की है। यह उनकी अपनी सम्मति है। हम मानते हैं कि ईसाई प्रचारक जान को हथेली पर रख कर और प्रशंसनीय त्याग का व्रत लेकर ईसाई मिशन की सेवा में तत्पर हैं। निश्चय ही वे ऐसे बीहड़ स्थानों में जा बैठते हैं, जहां साधारण व्यक्ति जाने का साहस नहीं कर सकता। हम यह भी मानते हैं कि पश्चिम ने भौतिक उत्थान की हद कर दी है, परन्तु सरदार महोदय के पास इस जिज्ञासा का क्या समाधान है कि रोमन कथोलिक मिशन रूस, चीन, टर्की आदि देशोंसे क्यों बहिष्कृत कर दिया गया है और गैर कम्युनिस्ट देशों में भी उसके बहिष्कार की प्रक्रिया क्यों जारी है? क्या ये समस्त देश मानवता से इतने गिरे हुए हैं कि मानवता की निःस्वार्थ सेवा करने वालों को सामूहिक बहिष्कार का दंड दे बैठें ? सत्य यह है कि इन लोगों ने धार्मिक साम्राज्य के विस्तार और अपने निकृष्ट स्वार्थों की सिद्धि के लिये भोली भाली अपढ़ गरीब जनता को धर्म के नाम पर सेवा करने के बहाने से पथ-भ्रष्ट करने और उन्हें राष्ट्र विरोधी बनाने का अपराध किया था। पश्चिम के धार्मिक, सभ्य और भौतिक वैभव में खेलने वालों के द्वारा संसार की शान्ति खतरे में क्यों डाली गई और क्यों डाली जा रही है, सरदार महोदय के पास इस प्रश्न का क्या उत्तर है ? क्या हीरोशीमा पर अणु बम डालकर निर्दोष प्राणियों का निर्मम संहार पश्चिम ने नहीं किया था ? क्या विश्व के दो महायुद्धों से पश्चिम का दामन काला नहीं बना है ? यदि सरदार महोदय उन्नति और जन सेवा का यही माप दण्ड मानते हैं तो हम भारतीयों को

ऐसी उन्नति को दूर से ही नमस्कार कर लेना चाहिये। पश्चिम की दशा उस जहाज के सदृश है जो बिना मल्लाह के समुद्र के भयंकर थपेड़ों में इधर उधर डौल रहा हो और किनारे पहुंचने का कोई साधन न हो। वही पश्चिम मार्ग दर्शन के लिये भारत की ओर कातर दृष्टिसे देख रहा है, उसी भारत की ओर जिसका सरदार महोदय की दृष्टि में न तो कोई भूतकाल ही है और न जिसके पास जन सेवा के लिये चमकदार संस्थाएं ही हैं, जिसकी आध्यात्मिकता उपहास्पद और अकर्मण्यता से परिपूर्ण हैं और जो "सरल जीवन और उच्च विचार" के आदर्श पर चलता है।

एक थाली में एक साथ खाना क्यों वर्जित है

सत्यार्थ प्रकाश के १० वें समुल्लास में भक्ष्याभक्ष्य के प्रसंग में लिखते हुए श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती इस जिज्ञासा का कि "क्या एक साथ एक ही पत्तल वा प्याले में खाने में कोई दोष है?" इस प्रकार समाधान करते हैं—

"हां दोष है, क्योंकि एक के साथ दूसरे का स्वभाव और प्रकृति नहीं मिलती, जैसे कुष्ठि आदि के साथ खाने से अच्छे मनुष्य का भी रुधिर बिगड़ जाता है वैसे दूसरे के साथ खाने से भी कुछ बिगाड़ ही होता है सुधार नहीं। स्त्री पुरुष भी परस्पर उच्छिष्ट न खावें क्योंकि उनके भी शरीरों का स्वभाव भिन्न है।"

भोजन का हमारे शरीर के स्वास्थ्य और मन की पवित्रता के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। एक साथ खाने वा जूठन खाने से इन दोनों पर दुष्प्रभाव पड़ता है। एक साथ खाने से जहाँ अरुचि उत्पन्न होती है वहां बुद्धि की विशुद्धता भी नष्ट हो जाती है। प्रायः देखा जाता है कि जूठ खाने वाले व्यक्ति मन्द बुद्धि होते हैं और इनकी विचार शक्ति कुण्ठित हो जाती है। बहुत से व्यक्ति एक ही थाली में खाना खाना प्रेम वा धर्म का हेतु मानते हैं। उनका ऐसा मानना भ्रान्तिपूर्ण है। कुत्ते भी एक ही पात्र में एक साथ खाते पीते हैं परन्तु फिर भी वे एक दूसरे के प्राणों के ग्राहक बने देख पड़ते हैं। आज की नई रोशनी के स्त्री पुरुष एक दूसरे के साथ खाने पीने को सभ्यता का चिन्ह मान कर अपना बड़ा अहित करते हैं। ऐसे व्यक्तियों की तुलना ब्रह्म समाजियों के साथ कर दी जाय तो इसमें अत्युक्ति न होगी। महर्षि दयानन्द इनके विषय में लिखते हैं—

"अंगरेज, यवन, अन्त्यजादि से भी खाने पीने का भेद न रखा। इन्होंने यही समझा होगा कि खाना खाने और जाति-भेद तोड़ने से हमारा और हमारे देश का सुधार हो जायगा, परन्तु ऐसी बातों से सुधार तो कहां है, उलटा बिगाड़ ही होता है।"

यही बात आज की रोशनी के स्त्री पुरुषों के परस्पर एक साथ जूठा खाने की आदत के विषय में कही जा सकती है। जिन सभ्य कही जाने वाली जातियों में एक साथ एक ही थाली में खाना प्रेम वार्धक्य का कारण माना जाता है उन्होंने अपने सामुहिक प्रेम का परिचय अन्य जातियों पर अत्याचार करने में देकर घोर असभ्यता का परिचय दिया है। अतः एक साथ खाना ठीक २ भाव में सभ्यता और प्रेम का परिचायक नहीं है।

बहुत से भोले भाले अज्ञानी जन धर्म के वास्तविक मर्म को न जान कर अनाचारी गुरुओं के चेले चेली बन कर गुरु की जूठन खाने पीने में परम कल्याण मानते हैं। इस गुरुडम ने लोगों के आचार विचार पर कितना घातक प्रभाव डाला

है। इसका एक यह ज्वलन्त उदाहरण है। जो वस्तु शारीरिक स्वास्थ्य तथा आत्मिक एवं मानसिक विशुद्धता की दृष्टि से हेय और त्याज्य हो उसका धार्मिक दृष्टि से ग्राह्य होना धार्मिक प्रवंचना मात्र ही है।

६-१-५६ के समाचार के अनुसार (जो पत्रों में छपा है) उज्जैन के एक रचनात्मक कार्य कर्त्ता ने श्री विनोबा जी से पूछा था कि जो स्त्री पुरुष तथा मित्र आदि एक ही थाली कटोरी में रोटी दाल चावल आदि खाते रहते हैं इस विषय में उनकी क्या सम्मति है। श्री विनोबा भावे जी ने उसका जो उत्तर दिया वह हमारे उपर्युक्त विश्लेषण के अनुरूप है। उत्तर इस प्रकार है :—

"एक थाली में खाने का प्रेम बढ़ाने के साथ क्या सम्बन्ध ? मुझे समझ में नहीं आता। मुसलमान इस तरह खाते हुए दीख पड़ते हैं। वह केवल अरब स्थान के रिवाज का अनुसरण करते हैं। अरब स्थान के लोग एक साथ बैठकर रोटी खजूर खाते हैं और यहां दाल भात आदि खाते हैं। इन सब गलत रिवाजों का हमें निषेध करना होगा चाहे वे किसी भी जमात में चलते हों।"

धर्म निरपेक्ष तथा धर्म तन्त्र राज्यों के परीक्षण

पिछले दिनों पाकिस्तान ने अपने प्रस्तावित संविधान की रूप रेखा की घोषणा की है जिसके अनुसार पाकिस्तान का राजधर्म इस्लाम होगा और उसका शासन कुरान और सुन्ना पर अवलम्बित होगा। इतना ही नहीं पाकिस्तान का राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति मुसलमान ही बन सकेगा अन्य धर्मावलम्बी नहीं। रोशनी के इस युग में कुरान और शरीयत के अनुसार किसी राज्य का लोकप्रिय और उन्नत हो जाना एक बहुत बड़ा चमत्कार ही समझा जायगा। संसार के उन्नततमना व्यक्ति इस विधान की प्रगति को बड़ी उत्सुकता के साथ देखेंगे क्योंकि जिन देशों में प्राचीन काल में या अर्वाचीन काल में इस प्रकार का परीक्षण किया गया है वह न तो सफल ही हुआ और न राजा तथा प्रजा के लिये ही कल्याण प्रद सिद्ध हुआ। औरंगजेब ने एक सच्चे मुसलमान की भांति इस परीक्षण को आजमाया, परन्तु वह भग्न हृदय और विशाल साम्राज्य के धराशायी होने की आशंका को साथ लिये हुए यहां से विदा हुआ। अर्वाचीन काल में जिन शासनों ने इस्लाम को राजधर्म बनाया और अपने विधान को कुरान और सुन्ना पर अवलम्बित किया वे अक्षरशः कुरान और शरीयत के साथ न चल सके। यदि वे कुरान और शरीयत के साथ चलते तो वे वर्तमान प्रगतिशील युग के साथ समन्वय न कर पाते। इतना ही नहीं उनका अस्तित्व और प्रजा की आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक उन्नति खतरे में पड़ जाती।

ईरान के विधान के अनुसार ईरान की धारा सभा का कोई विधेयक शरीयत का उल्लंघन नहीं कर सकता और ५ उल्माओं की एक समिति इस प्रकार के विधेयक को रद्द कर सकती है। इस पर भी ईरान के शासन को विधान की भावना को शब्दों की अपेक्षा अधिक उदार बनाना पड़ा। शरीयत के नितान्त विरुद्ध १६३१ के तलाक विधेयक के अनुसार पुरुषों के साथ २ स्त्रियों को भी तलाक देने का अधिकार दिया गया और स्त्रियों की शादी की उम्र १५ वर्ष नियत करनी पड़ी। अफगानिस्तान का शासन भी शरीयत और कुरान के अनुसार संचालित होता आ रहा है परन्तु नादिरशाह बादशाह को क्रान्तिकारी सुधार करने पड़े। १६२६ के शाही फरमान में घोषणा की गई थी कि अफगानिस्तान की आर्थिक और नैतिक

उन्नति के लिए ज्ञान विज्ञान का महत्व सर्वोपरि है। ईराक के संविधान की धारा १३ में समस्त प्रजा को विभिन्न धर्मों को मानने स्वतन्त्रता दी गई है इस शर्त के साथ कि व्यवस्था, अनुशासन सार्वजनिक नैतिकता में व्याघात उत्पन्न न हो। धर्म निरपेक्ष टर्की मे स्त्रियों को समान मताधिकार प्राप्त हैं। आधुनिक सभ्यता के रंग में रंगे मिश्र, ईराक और ईरान में स्त्रियों को पुरुषों के साथ समान सामाजिक अधिकार प्राप्त हैं यथा सह-शिक्षा, तलाक और सम्पत्ति का अधिकार आदि ?। इस सम्बन्ध में श्रीयुत रमेशचन्द्र घोष कृत "कान्स्टीटयूशनल डेवीलप मेन्ट इन इस्लामिक वर्ल्ड" Constitutional Developments in the Islamic world" पुस्तक की भूमिका में बड़ा अच्छा प्रकाश डाला गया है। वे लिखते हैं :—

"इस्लामी राष्ट्रों में उक्त जातीयता की भावना ने धर्मनिरपेक्षता का सुस्पष्ट रूप ग्रहण किया हुआ है। बुद्धिवाद की प्रखर किरणों के सामने धार्मिक कट्टरता का अन्धकार छिन्न भिन्न हो रहा है। नंगे जड़वाद के घूंसों के प्रभावों को विफल करने के लिए धर्म के मूल भूत सिद्धान्त सक्रिय हैं। लौकिक और पारलौकिक वस्तुओं के मध्य अब भयंकर संघर्ष नहीं रहा है। आज कहीं भी दारुल हवाब (काफिरों की भूमि) नहीं देख पडती। जहाद मृत प्राय हो गया है। उल्मा लोग समाज में अपने देशभक्तों का साथ दे रहे हैं। मिश्र के प्रगतिशील मुफ्तियों, लेखकों और नेताओं ने एक नये इस्लाम की उन्नति में निरन्तर योग दिया है जिसने साइन्स के साथ सुलह कर ली है और जिसने मानव जीवन के प्रत्येक पहलु में कट्टर फतवाओं से शासित होना छोड़ दिया है।"

यदि पाकिस्तान का नया संविधान इस्लाम को नए प्रकाश में ले आने में समर्थ हुआ और बिना ऐसा किये, उसका काम न चल सकेगा, तो यह बात स्वागत योग्य ही होगी। यदि प्रकाश में न ला सका तो उसे देर सवेर में अपने इस परीक्षण के लिये पश्चात्ताप करना होगा। हिन्दुओं आदि अल्प सख्यकों पर जो अन्याय होगा वह अलग होगा।

आज की स्थिति में न तो धर्म निरपेक्ष शासन ही सफल और लोकप्रिय हुए या हो सकते हैं और न धर्म तन्त्र शासन ही। मिश्र को पुनः अपने शासन को इस्लामी राज्य घोषित करना पड़ा है और यही दशा वर्तमान टर्की में व्याप्त है। इग्लैंड आदि देशों ने अपने राजकोय शिक्षा-क्रम में से धर्म शिक्षा को पृथक कर दिया था परन्तु वे पुन इस प्रथा को प्रचलित करने के लिये बाध्य हो गये हैं। धर्म जीवन का मूल होता है। इस मूल की उपेक्षा कर पत्तों को सींचने से ही काम नहीं चल सकता। मनुष्य की बुद्धि प्रकाश और हृदय शान्ति चाहता है। धर्म निरपेक्षता में हृदय की शान्ति की सामर्थ्य कहां ? धर्म तन्त्र शासन वही सफल हो सकते हैं जो मनुष्य की लौकिक और पार लौकिक दोनों प्रकार की आवश्यकताओं को उचित समन्वय पूर्वक पूर्ण कर सके जिनमें धर्म उन्नति विरोधी और उन्नति धर्म विरोधी न हो। जितने मानवीय मत हैं वे एक एक करके आज-माए जा चुके हैं उन से समस्या का हल न हो सकता था और न हो सकता है। ईश्वर विहीन नैतिकता से भी समस्या का हल न हो सका जिसका परीक्षण पाश्चात्य देशोंमे तथा अन्यत्र भी हो चुका है।यह हल एक मात्र उसधर्म से सम्भवहो सकता है जिसमें नैतिकता सच्चे ईश्वर पर अवलम्बित हो और जो मनुष्यके सर्वाङ्गीण विकास की क्षमताओं से परिपूर्ण हों। यही धर्म था जिस का प्रयोग मानव ने सृष्टि के आरम्भ से लेकर महाभारत से १००० वर्ष पूर्व पर्यन्त करके अपने तथा समाज के हर प्रकार के विकास की गंगा बहा कर सुख और शान्ति का जीवन व्यतीत किया था। यह था विशुद्ध वेदों का धर्म। यही एक मात्र संसार के वर्तमान दुःखों के निवारण की रामबाण औषधि है अन्य नहीं।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

स्वामी श्रद्धानन्द जी की स्मृति में दिल्ली के घंटाघर के सामने भव्य स्टेच्यू बने

[लेखक—श्री बालमुकन्द जी आहूजा]

श्री स्व० स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज देश के महान व्यक्ति थे, जिनकी गणना राष्ट्रीय कर्णधारों में होती है। राष्ट्रीय शिक्षा, समाज सेवा और देशोत्थान के कार्य में उन्होंने अपने को मिटा दिया था। उन्होंने अपने तप, त्याग और निःस्वार्थ सेवाओं से राष्ट्र और समाज का मस्तक ऊंचा किया था। देश वासियों के हृदय में उनके व्यक्तित्व और कार्यों के लिए आदर है और आर्य हिन्दू जनता उन्हें परम श्रद्धा के साथ याद करती है।

जब अमृतसर में कांग्रेस का ऐतिहासिक अधिवेशन हुआ था तब देश की मुख्यत: पंजाब की जनता डायरशाही के अत्याचारों से आतंकित थी। देश और कॉंग्रेस की मान मर्यादा का सवाल देश भक्तों के सामने उपस्थित था। वह वह समय था जब कांग्रेस की खुल कर सहायता या सेवा करना आग के साथ खेलना था। कॉंग्रेस अधिवेशन के प्रबन्ध का भार कोई माई का लाल ही अपने सिर पर उठा सकता था। वीर स्वामी जी ने मैदान में आकर स्वागताध्यक्ष का पद सम्भाल कर ब्रिटिश आतकवाद को खुली चुनौती दे डाली थी। कांग्रेस का अधिवेशन हुआ और बड़ी सफलता के साथ हुआ। उस समय क्या गाँधी जी, क्या पं० जवाहरलाल जी देश के प्रायः सभी नेता स्वामी जी की देशभक्ति और निर्भीकता का लोहा मान गये थे। रौलट ऐक्ट आन्दोलन के आतक पूर्ण काल मे उन्होंने चाँदनी चौक में घंटाघर के पास ३० मार्च १६१६ को गोरों की संगीनों के सामने अपनी छाती खोल कर उच्च काम के लिए मर मिटने की भावना, निर्भीकता और देश प्रेम का अनुपम परिचय दिया था। पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने अपनी आत्म-कथा में इस घटना का वर्णन करते हुये बड़े मार्मिक और उज्ज्वल शब्दों में स्वामी जी श्रद्धांजलि प्रस्तुत की है।

दिल्ली का नगर स्वामी जी महाराज की सेवाओं को कभी भुला नहीं सकता, यदि भुलाता है तो वह घोर कृतघ्नता का परिचय देगा। दिल्ली का गौरव उनसे इतना बढ़ गया था कि स्वयं गांधी जी दिल्ली को श्रद्धानन्द जी की दिल्ली कहा करते थे। १६१६ की उपर्युक्त घटना ने तो स्वामी जी को दिल्ली का बेताज का बादशाह बना दिया था। दिल्ली निवासियों का कर्त्तव्य है कि वे स्वामी जी महाराज की सेवाओं के आदर और अपनी कृतज्ञता के प्रकाश स्वरूप दिल्ली में उनकी भव्य यादगार कायम करें। वह सर्वश्रेष्ठ यादगार चांदनी चौक घटाघर के स्थान पर एक भव्य स्टेच्यू की स्थापना हो सकती है। इस रीति से स्वामी जी की पवित्र स्मृति के साथ साथ उस स्थान की ऐतिहासिकता भी सुरक्षित हो जायगी जहां निर्भीक स्वामी जी ने पशुबल को पराजित करके अहिंसा व्रत के गौरव को प्रतिष्ठित किया था।

विश्वास है दिल्ली के कृतज्ञ निवासी और म्यूनिसिपल कमेटी के वरिष्ठ अधिकारी एवं सदस्य गण इस प्रस्ताव के औचित्य को स्वीकार कर अविलम्ब इसे मूर्त्त रूप देंगे। यह कार्य तो अब से बहुत समय पूर्व बिना किसी प्रेरणा के हो जाना चाहिये था। अब इसमें और अधिक विलम्ब करना अपनी अकर्मण्यता और कृतघ्नता का अत्यन्त खेदजनक परिचय देना होगा। स्वामी जी की यादगार तो लोगों के मनो मे सदैव कायम रहेगी ही, इस स्टेच्यू के निर्माण द्वारा दिल्ली के हम नागरिक अपनी कृतज्ञता को ही स्थूल रूप देंगे और यह हम सबका परम कर्त्तव्य है। यदि हम उनकी यह यादगार कायम न कर सके तो निश्चय ही आने वाली सन्तान इस घोर कृतघ्नता के लिये हमे क्षमा न करेगी।

स्वामी जी महाराज का आर्य हिन्दू जनता पर महानतम ऋण है जिसकी रक्षा, सुधार और सेवा के लिये स्वामी जी ने अपना सर्वस्व न्यौछावर किया हुआ था। इस यादगार के कायम कराने मे उन्हें कोई सम्मिलित यत्न उठा न रखना चाहिये। दिल्ली की जनता को चाहिये कि वह अपने २ संगठनों द्वारा दिल्ली की म्यूनिसिपल कमेटी को इस यादगार को चांदनी चौक में घंटाघर के स्थान पर कायम करनेकेलिये शीघ्र से शीघ्र प्रेरणाकरे।

(पृष्ठ ६२६ का शेष)

सागर मेला में वैदिक धर्म की धूम

आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल आसाम की ओर से गंगा सागर मेला में वैदिक धर्म प्रचार का आयोजन किया गया था। दस प्रचारकों का एक दल सभा के उपप्रधान पं० अवधबिहारी लाल एम० ए० बी० एल०, साहित्याचार्य के नेतृत्व में जहाज एवं नौका आदि से ११ जनवरी को कलकत्ते से रवाना होकर १२ तारीख के मध्याह्नोत्तर मेला भूमि में पहुँच गया। १३ के प्रातःकाल से गंगासागर संगम के तट पर वैदिक धर्म एवं ओ३म् के मंत्रों से विभूषित शिविर में सामवेद पारायण यज्ञ का प्रारम्भ हुआ। प्रचार कार्य १६ जनवरी तक चला। समग्र सामवेद मन्त्रों से आहुतियां दी गईं। व्याख्यान भजन आदि के अतिरिक्त मेले में उपस्थित जन समूह में हजारों की संख्या में वैदिक धर्म के ट्रैक्ट परचे आदि वितरण किये गये। इस आयोजन में प्रमुख रूप से हाथ बटाने वाले थे सर्व श्री स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती, पं० श्यामसुन्दर ठाकुर, वनमाली रवजी पारेख, पं० श्रीकृष्ण शर्मा, पं० रखालदास देव शर्मा, द्विजेन्द्रनाथ राय, विमला देवी, सीताराम आर्य, आशुतोष ब्रह्मचारी।

जंगीलाल प्रचार मन्त्री

श्रद्धानन्द सेवाश्रम की शाखा

गुरुकुल कांगड़ी की आयुर्वेद फार्मेसी के नवीन भवनों के समीप ही समाज सेवा और निःशुल्क औषध वितरण के लिए कनखल ज्वालापुर रोड पर एक नवीन धर्मार्थ औषधालय का उद्घाटन जिलाधीश श्री बी० पी० सेठ महोदय के कर कमलों से सम्पन्न हुआ।

अमृतसर की कृष्णा टैक्स टाइल मिल के मालिक श्री इन्द्रनाथ जी तथा अन्य भाइयों ने अपने पूज्य पिता राय साहब गुरुदित्ता मल की स्मृति में यह औषधालय बनवाया है। जिलाधीश महोदय ने गुरुकुल की सामाजिक सेवाओं का उल्लेख करते हुए बताया कि आगामी अर्द्ध कुम्भी के अवसर पर इस सेवाश्रम से लोगों की अच्छी सेवा हो सकेगी।

शुद्धि

निजामाबाद के चर्च में १७-१२-५५ से २०-१२-५५ तक एक ईसाई प्रचारक श्री अमरेन्द्रनाथ सरकार नामी जिन्हें बड़े साधु का नाम दिया गया था पहुँचे। देहातों में ईसाई प्रचारकों ने प्रचार किया कि एक महान् ऋषि आये हुए हैं जो बिना औषधि के केवल प्रार्थना से प्रत्येक प्रकार के रोग की चिकित्सा करते हैं। इस ढोंग से प्रभावित होकर हजारों ग्रामीण साधु महात्मा के पास आने लगे। गर्ल हाई स्कूल की हैड मिस्ट्रेस तथा अन्य एक दो अध्यापिकाओं और सरकारी क्रिश्चियन जनता ने ईसाई बनने और ईसा पर विश्वास लाने का प्रचार किया। हिन्दू स्त्रियों की माथे की बिन्दियाँ उतरवाई गई। आर्य समाज निजामाबाद ने इस ढोंग के विरुद्ध प्रचार किया।

प्रचार

बैरगनियां (मुजफ्फरपुर) द्वारा मठ गुलनी सप्ताह के अवसर पर २ सप्ताह तक वैदिक धर्म का प्रचार विशेष मनोयोग पूर्वक किया गया। बैरगनियाँ बाजार में २८ से २१ दिसम्बर ५५ तक वेद कथा विद्यानन्द शर्मा द्वारा हुई।

उत्सव

आर्य समाज बिसौली (बदायूं) का वार्षिकोत्सव १६-१२-५५ से १९-१२-५५ तक मनाया गया। इस उत्सव से आस पास के ग्रामों में बड़ी जागृति हुई।

कृतज्ञता प्रकाशन

स्व० श्रीयुत चौधरी जयदेवसिंह जी के कनिष्ठ भ्राता श्री विजयसिंह जी (छीपी तालाब) मेरठ उन सभी आर्य संस्थाओं तथा आर्य महानुभावों के प्रति अपनी कृतज्ञता का प्रकाश करते हैं जिन्होंने स्व० चौधरी जयदेवसिंह जी की मृत्यु पर उन्हें सान्त्वना सूचक पत्र वा सन्देश भेज कर उनके दुःख में हाथ बटाया है, और स्व० चौधरी की मृत्यु पर शोक प्रकट किया है।

न मानने वालों पर उसका वज्र गिरता है

[ले० — श्री पं० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति, गुरुकुल काङ्गड़ी हरिद्वार]

यः शश्वतो मह्येनो दधानानमन्यमानाञ्छर्वा जघान ।
यः शर्धते नानुददाति शृध्यां यो दस्योर्हन्ता स जनास इन्द्रः ॥ ऋ० २ । १२ । १० ॥

अर्थ — (यः) जो (महि) बड़ा (एनः) पाप (दधानान) धारण करने वाले (शाश्वतः) बहुसख्यक (अमन्यमानान्) प्रभु की नियम व्यवस्थाओं को न मानने वाले लोगों को (शर्वा) अपने मारने के साधनों से (जघान) मार देता है (यः) जो शर्धते) पाप कर्म के लिए बढ़ना चाहने वाले को (शृध्या) बढ़ने (न) नहीं (अनुददाति) देता (सः) वह (जनासः) हे मनुष्यो ! (इन्द्रः) परमैश्वर्यशाली भगवान ही है।

हम लोगों में बड़ा पाप घुसा हुआ है। हम दिन रात पाप के कीचड़ में फंसे रहते हैं। हम अपने मन से भी पाप करते हैं, अपनी वाणी से भी और अपने कर्म से भी। हम में से कोई इकले-दुकले ही इस पाप के कीचड़ में लथ पथ नहीं रहते हैं, हममें से बहुसख्यक लोगों की यही अवस्था है। भगवान पाप को पसन्द नहीं करते, वे नहीं चाहते कि उनके अमृत पुत्र पाप का कलुषित जीवन व्यतीत किया करें। वे हमें पाप-मार्ग से हटाने के लिए भांति २ की शिक्षायें देते हैं। ये शिक्षाये कई बार बड़ी कठोर भी होती हैं। जितना ही हम पाप-मार्ग से हटने में लापरवाही करते हैं, उतना ही प्रभु के शरु उसके मारने के दण्ड देने के साधन-उग्र हो जाते हैं। परन्तु हमारा दुर्भाग्य यह है हम प्रायः ही पाप के मार्ग पर बड़े उग्र रूप से चलते रहते हैं। हम अपने दैनिक जीवन में प्रायः सत्य को परवाह नहीं करते, न्याय को कुचल डालते हैं, दया का गला घोंट देते हैं, संयम और इन्द्रिय जय को तिलांजली दे देते हैं, ज्ञान के - असलियत पहचानने के — पास नहीं फटकते, परोपकार का नाम नहीं लेते। शरु शब्द में, हम अपने दैनिक जीवन में धर्म को बुरी तरह पैरों तले मसलते रहते हैं और फिर आश्चर्य की बात यह है कि बहुत छोटी-छोटी बातें, बहुत छोटे छोटे लाभों की सम्भावना, बहुत छोटी २ हानियों की आशका हमें धर्मपथ से विचलित कर देती है। जरा सी बात से हम काम, क्रोध, मोह आदि विकारों के आधीन होकर धर्म का मार्ग छोड़ देते हैं। जरा सी बातें हमें छल, कपट, क्रूरता अन्याय आदि करने कराने के लिये उद्यत कर देती हैं। हम थोड़ी ही देर में इस अधर्ममय जीवन के इतने अभ्यस्त हो जाते हैं कि हमें यह मान होना भी भूल जाता है कि हम कोई पाप कर रहे हैं। हम पापी होते हुए भी बड़े आनन्द के साथ अपने आपको निष्कलंक समझा करते हैं। हम आत्म-निरीक्षण करके देखते नहीं कि जब हम अपने को बड़ा निष्कलंक समझ रहे होते हैं, तब भी असल में हमारी आत्मा पर पाप की कितनी मोटी तह चढी होती है। हम सब के इस उग्र पापमय जीवन का परिणाम यह होता है कि हमें प्रायः परमात्मा के शरु की—उसके वज्र की—मार सहनी पड़ती है। कभी भूकम्प आकर जन और धन का विध्वंस कर जाते हैं, कभी अग्नि-ज्वालाएँ नगरों के नगरों को भस्म कर जाती हैं, कभी आंधियें चल कर प्रलयकांड मचा

धर्म और विज्ञान

[ले०—श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०]

धर्म और अधर्म, विज्ञान और अज्ञान, प्रकाश और अन्धकार में सदा विरोध रहा है। धर्म अधर्म नहीं और अधर्म धर्म नहीं। अतः इन दोनों का परस्पर मेल असम्भव है। इस प्रकार ज्ञान और अज्ञान, एवं प्रकाश और अन्धकार एक दूसरे के साथ ठहर नहीं सकते। धर्म, विज्ञान तथा प्रकाश को एक कोटि में और उनके विरोधी अधर्म, अज्ञान और अन्धकार को एक दूसरी कोटि में रक्खा जा सकता है। परन्तु विचित्र बात यह है कि बहुधा धर्म और विज्ञान को परस्पर विरोधी या शत्रु समझ लिया जाता है धर्मात्मा एवं वैज्ञानिकों में कभी २ तो घोर विरोध रहा है। धर्म का अज्ञान से क्यों साहचर्य हो, यह बात समझ में आनी कठिन है। परन्तु वास्तविक स्थिति से इनकार भी नहीं किया जा सकता।

इस समस्या को समझने के लिए हम को धर्म और विज्ञान के वास्तविक लक्षणों पर विचार करना होगा। विज्ञान क्या है? सृष्टि के मौलिक नियमों की खोज और उन नियमों का अपने जीवन के कार्यों में प्रयोग। उदाहरण के लिए न्यूटन को लीजिये। वर्तमान वैज्ञानिक युग के आदि पुरुषों में न्यूटन का नाम विशेष स्थान रखता है। न्यूटन ने देखा कि वृक्ष से एक सेब का फल नीचे आ गिरा। वह सोचने लगा कि फल शाखा से टूट कर नीचे ही क्यों गिरा, वायु में उड़ कर आकाश की ओर क्यों न उड़ गया। साधारण लोग हसेंगे कि इसमें सोचने की क्या बात है? यह तो नित्य ही हुआ करता है। परन्तु

जाती हैं, कभी अतिवृष्टि के कारण बाढ़ें आकर ग्रामों, खेतियों, पशुओं और मनुष्यों को नष्ट कर जाती हैं, कभी अनावृष्टि के कारण खेतियों, चरागाहों और जंगलों के शुष्क हो जाने से मनुष्यों और उनके पशुओं पर विपत्ति के वज्र आ गिरते हैं, कभी संक्रामक रोग मृत्यु का रूप धारण करके प्रान्त के प्रान्त को हड़पने के लिए मुंह खोल कर आ खड़े होते हैं। कभी हमारे पाप हमें भयंकर युद्धों के द्वारा लाखों मनुष्यों का रक्त-पात करने के लिये बाधित कर देते हैं। परमात्मा का शस्त्र—उसका वज्र—अनेक रूपों में हम सब के ऊपर आकर गिरता रहता है। पापी होकर उसके वज्र से कोई नहीं बच सकता। आज नहीं तो कल, इस जन्म में नहीं तो आगामी जीवन में, एक न एक दिन उसके वज्र की मार पापी! तुझ पर अवश्य पड़ेगी।

कोई कितना ही बड़ा हो जाय, देर तक पाप के जीवन में रह कर वह फलता-फूलता और बढ़ता नहीं रह सकता। पुराने शुभ कर्मों के क्षय होने पर एक समय आवेगा, जब उसकी सारी शक्ति और समृद्धि धूल में मिल जायेगी!

हम पापी क्यों हो जाते हैं? इसलिये कि हम 'अमन्यमान' हो जाते हैं। हम अपने आत्मा को नहीं समझते, परमात्मा को नहीं समझते, संसार में चल रही भगवान की नियम-व्यवस्था को नहीं समझते। यदि हम अपनी वास्तविकता का पहिचान लें, भगवान के स्वरूप को जान लें, प्रभु-रचित संसार में काम कर रही नियम-व्यवस्था को समझ लें, 'मन्यमान' हो जायें, तो हम से पापी नहीं होंगे। जब हम से पाप नहीं होंगे, तो भगवान् का वज्र भी हम पर नहीं गिरेगा। भगवान् तो केवल हमें जगाने के लिए ही हम पर वज्र गिराते हैं। जब हम स्वयं ही जागे हुए हों, तब भगवान् को हम पर वज्र गिराने की क्या आवश्यकता है? और हमारे राष्ट्र में जितने ही बहुसंख्यक लोग 'मन्यमान' होंगे—जागे हुए होंगे—उतने ही कम भगवान् के वज्र हमारे राष्ट्र पर गिरेंगे।

मनुष्य! तू 'मन्यमान' होकर अपने को पहिचान, उस परमैश्वर्यशाली भगवान् को पहिचान और उसकी नियम-व्यवस्था को पहिचान। फिर तेरे पास दुःख का मूल पाप नहीं रहेगा।

यह तो थी एक घटना मात्र। उसके भीतर तो एक तात्विक नियम था। न्यूटन ने सोच विचार कर यह परिणाम निकाला कि पृथ्वी में एक आकर्षण शक्ति है, जो सब चीजों को अपने केन्द्र की ओर खीचती रहती है। इस अन्वेषण के द्वारा न्यूटन का नाम वैज्ञानिकों में प्रसिद्ध हो गया, और उसके पश्चात् आने वाले वैज्ञानिकों ने बहुत सी ऐसी चीजों का आविष्कार किया, जिनको हम अपने दैनिक उपयोग में लाया करते हैं। हमारे विशाल भवन, अनेक प्रकार की कलें आदि सब पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के द्वारा ही बन सके। न्यूटन ने जो कुछ किया, वह उसके मस्तिष्क की कोरी कल्पना न थी, सृष्टि की वास्तविक घटना थी, जिसको उसने देखा और जिस पर उसने विचार किया। इसी प्रकार सहस्रों अन्य वैज्ञानिकों की सहस्रों कृतियों की अवस्था है। प्रश्न यह है कि न्यूटन या अन्य वैज्ञानिकों ने कौन सा पाप किया, जिससे उनको धर्म के विरोधी या अधर्मी समझा जाय।

अब थोड़ा सा धर्म का विचार कीजिये। सृष्टि के नियमों में उसके महान नियन्ता का विचार करना. उसके लिए अपने हृदय में श्रद्धा रख कर अपने जीवन को तदनुकूल बनाना, यह है धर्म। इस प्रकार विज्ञान और धर्म में थोड़ा सा भेद रहता है। सृष्टि के मौलिक नियमों का विचार धर्म और विज्ञान दोनों में निहित है। धर्म कुछ और आगे बढ़ कर नियमों के नियन्ता के विषय में भी सोचता है। अतः इनमें विरोध कैसा? यदि मै शरीर-शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करके मानवी भोजन को अनुकूल बनाता हूँ, तो मैं वैज्ञानिक हूं। यदि मैं भोजन करने वाले अदृष्ट आत्मा के विषय में विचार करके पिण्ड के नियन्ता और ब्रह्माण्ड के नियन्ता का परस्पर सम्बन्ध स्थापित करता हूं, तो मैं धर्मात्मा हूँ। इस प्रकार धर्म और विज्ञान में किसी प्रकार का विरोध नहीं रहता।

परन्तु इतिहास बताता है कि धर्म और विज्ञान में अत्यन्त भीषण युद्ध छिड़ा रहता है, सभ्य ससार के आधुनिक साहित्य में इस युद्ध का रोमांचकारी वृत्तान्त पढ़ने को मिलता है। यह सब क्यों?

एक ऐतिहासिक घटना पर विचार कीजिये। गैलीलियो एक प्रसिद्ध विद्वान् था। उसने सोचा कि जिस पृथ्वी पर हम रहते हैं, वह चपटी नहीं हो सकती। इसको गोल होना चाहिये। उसने अपनी इस खोज के पक्ष में बहुत से प्रमाण दिये। धर्म के अधिकारियो ने यह बात सुनी। उनको उसकी यह खोज बुरी लगी। उनके पास उसके खण्डन में कोई युक्ति न थी। परन्तु उनके हाथ में शक्ति अवश्य थी। उन्होंने उसको धर्म का विरोधी घोषित करके बन्दी गृह में डाल दिया। विचारा बूढ़ा गैलीलियो जेल में सड़ता रहा और उस समय तक उसको नहीं छोड़ा गया, जब तक उसने अपने आत्मा और अपने ज्ञान के विरुद्ध यह नहीं कह दिया कि पृथ्वी चपटी है, गोल नहीं। आज कल के साधारण विद्यार्थी इस बात पर हँसेंगे कि इससे गैलीलियो ने क्या बुरा या अधर्म का काम किया था। यदि जमीन का गोल होना सिद्ध न होता, तो आज कल की समुद्र यात्रा में जो प्रगति हुई, वह भी असम्भव होती। परन्तु गैलीलियो को इस विज्ञान के कारण ही धर्म का विरोधी घोषित किया गया। इसी प्रकार सैकड़ों अन्य वैज्ञानिकों को सैकड़ों यातनायें भोगनी पड़ीं।

इसका कारण है धर्मात्माओं की भूल, जिन्होंने अपने मित्रों को शत्रु समझा। परमात्मा की सब से बड़ी कृति है जगत, जगत के अध्ययन करने वाले हैं वैज्ञानिक। अतः विज्ञान धर्म का एक महत्वपूर्ण अ ग है। धर्म को महाप्रभुओं ने समझा कि धर्म उन्ही कुछ थोड़ी सी रूढ़ियों का नाम है, जिनको हम परम्परा से सुनते आये हैं। उनके विरुद्ध जो कोई खोजेगा या मानता है, वह ईश्वर

की गुप्त बातों में हस्ताक्षेप करता है और इसलिये वह पापी है।

मध्यकालीन धर्म के प्रतिनिधियों के विज्ञान के प्रति तीन प्रकार के भाव रहे। आरम्भ में कौतूहल और उपेक्षा। इसके पश्चात् विरोध और क्रूरतामय प्रतिरोध। तीसरा अपनी पराजय मान कर उनके अनुकूल आचरण करना। जब वाष्प-कल के आविष्कारक भाप द्वारा इंजन चलाने का प्रदर्शन करने के लिये इंजन को सड़क पर लाये, तो ग्रामवासियों ने समझा कि यह कोई शैतान है, क्योंकि अद्भुत काम केवल शैतान ही कर सकते हैं। अतः उन विचारों को अपने पड़ोसियों से तंग आकर अपना काम छिपकर करना पड़ा। परन्तु अन्त में विज्ञान की विजय हुई और आज रेल की यात्रा को कोई धर्म के विरुद्ध नहीं समझता।

वैज्ञानिकों की मनोवृत्ति भी सर्वथा पक्षपात-शून्य नहीं रही। उनको धार्मिक पुरुषों के व्यवहार से घृणा हो गई। उन्होंने उस ईश्वर का मखौल उड़ाया, जो सृष्टि के नियमों से विरुद्ध आदेश देता है और ज्ञान प्राप्त करने वालों को दण्ड दिलाता है। उन्होंने ऐसे ईश्वर का बहिष्कार किया और धर्म का जड़ काटने का उद्योग करते रहे। वस्तुतः यह बात वैज्ञानिक मनोवृत्ति के सर्वथा विरुद्ध थी। वैज्ञानिकों को अभिमान हो गया कि हम जल के दो अवयवों—आक्सीजन और हायड्रोजन—को अलग कर सकते हैं। उन दोनों को मिलाकर फिर जल बना सकते हैं। हम को ही सृष्टिकर्ता क्यों न माना जाय? हमसे इतर सृष्टि-कर्त्ता ही कौन हो सकता है। यह भी एक प्रकार की भूल थी। यदि दो बूंद पानी बनाने वाला अपनी कुशलता पर अभिमान कर सकता है, तो उसको उस बड़े कारीगर पर भी श्रद्धा करनी ही चाहिये, जो करोड़ों मन पानी को आकाश से भूमि पर बरसाता और उसे हरा-भरा कर देता है। विज्ञान केवल इतना ही नहीं है कि जल, पृथ्वी, वायु या ताप के विषय में खोज की जाय। ज्यों २ विज्ञान उन्नति करता गया, उसको अपनी सीमा का ज्ञान होता गया। शरीर की बड़ी बड़ी विचित्र घटनायें ऐसी दीख पड़ीं, जिनमें केवल जड़ पदार्थ सम्बन्धी नियम लागू नहीं हो सकते थे। मनुष्य का शरीर केवल जड़-पदार्थों का संयोग ही नहीं है। उससे चेतना प्रकाशित होती है, उसमें दो चीजों में से एक को चुनने की योग्यता है। वह निर्वाचन करता है। निर्वाचन में बुद्धि की अपेक्षा होती है। उस बुद्धि को हम देख नहीं सकते, परन्तु जान तो सकते हैं। न्यूटन ने जिस बुद्धि से पृथ्वी की आकर्षण शक्ति की खोज की, वह बुद्धि उसके नाक कान या मुंह को देखकर जानी नहीं जा सकती। असली न्यूटन वह नहीं था, जो सब को दिखाई देता था। असली डार्विन वह नहीं था, जिसका चित्र उसके ग्रन्थों में लगा है। जिस बुद्धि ने डार्विन या न्यूटन को प्रसिद्ध किया, वह एक आन्तरिक अदृष्ट शक्ति थी। उद्दालक ऋषि ने अपने पुत्र श्वेतकेतु को कहा 'जल लाओ।" वह जल ले आया। उसने कहा, "इसमे नमक छोड़ दो।" उसने नमक छोड़ दिया। नमक घुल गया। उद्दालक ने कहा "श्वेतकेतु नमक कहां है? देखो तो सही।" श्वेतकेतु बोला, "भगवन् दिखाई नहीं पड़ता।" पिता ने कहा, 'चखो'। चखने से प्रतीत हुआ कि जल में नमक का स्वाद है। पिता बोला, "पुत्र, इसी प्रकार तुम शरीर की ऊपर की आकृति को देख कर अपने आपको नहीं जान सकते। जो मूल तत्त्व शरीर को चलाता है, वह तो अदृष्ट है। वही तो तुम हो।" अपने आपकी खोज करना धर्म का मुख्य काम है।

मनु महाराज ने धर्म के दस लक्षण बताये, धृति, क्षमा, दम अर्थात् अपने ऊपर नियन्त्रण रखना, अस्तेय, चोरी न करना, शौच शुद्धता,

इन्द्रिय-निग्रह, अपनी इन्द्रियों को वश में रखना, धी या बुद्धि, विद्या या विज्ञान, सत्य और क्रोध को रोकना, इन दस लक्षणों की खोज क्या विज्ञान नहीं है ? विज्ञान को जल और ताप तक ही क्यों परिमित रक्खा जाय ? क्या मनु के गिनाये दस लक्षण वह तत्व नहीं हैं, जो प्रत्येक मनुष्य की प्रगतियों के अध्ययन से ही जाने जा सकते हैं और जिनका प्रकाश मानवी इतिहास की घटनाओं में होता है ? जिन धृति, क्षमा आदि गुणों का हमने नाम लिया, वे कल्पित नहीं हैं, वास्तविक हैं। मनुष्य के जीवन में इन गुणों की उतनी ही आवश्यकता है, जितनी जल, वायु, अन्न आदि की। हम जल के बिना जीवित नही रह सकते, परन्तु क्या सत्य और धृति के बिना जीवित रह सकते हैं ? क्या अस्तेय, और इन्द्रिय-निग्रह के बिना हमारा समाज ठीक रह सकता है ? सत्य और धृति वैज्ञानिको के परीक्षणालयों में देखे नहीं जा सकते। शीशे की नलिकायें और सर्वोत्कृष्ट तराजू उनका मान नहीं बता सकतीं। वैज्ञानिकों के विश्लेषण उनके अङ्गों, प्रत्यङ्गों के उल्लेख करने में असमर्थ हैं। भौतिकी और रसायन के पण्डित उनके विषय मे कुछ नही कह सकते, परन्तु है तो वह भी विज्ञान का विषय। जिस प्रकार पानी का विश्लेषण होता है, उसी प्रकार मनुष्य के मन और अन्तःकरण का भी। यह कोई नही कह सकता कि उसकी गिनती विज्ञान में नहीं है। मनोविज्ञान उसी भांति विज्ञान है, जैसे भौतिकी और रसायन, इसलिये धर्म और विज्ञान को दो विरोधी कोटियों में रखना भूल है।

सभी धर्मों के आचार्य कहते हैं कि बिना ज्ञान के मुक्ति नहीं, अतः विज्ञान और धर्म का समन्वय करने की प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। यहाँ तक कि भौतिक विज्ञान हमारे धर्म के कामों में परम सहायक होता है। आजकल कोई ऐसा धर्म का कार्य नहीं है, जिसमें विज्ञान की सहायता न ली जाती हो। हमारे आचार्य रेल और वायुयानों में यात्रा करते हैं। धर्म-मन्दिरों में बिजली की रोशनी जलाई जाती है। रेडियो और बिना तार के समाचार मगाये जाते हैं। धर्मार्थ चिकित्सालयों में वैज्ञानिक औजारों का प्रयोग होता है, बिजली के द्वारा चिकित्सा करना पाप नहीं समझा जाता है। मानव जीवन की वृद्धि के लिये वैज्ञानिक लोग जो उपाय सोच रहे हैं, उनको धर्म के आचार्यों की ओर से पूरा प्रोत्साहन मिल रहा है। धर्म विरोधिनी प्रगतियों को नष्ट करने के लिये वैज्ञानिक प्रयोग काम में लाये जा रहे हैं। धार्मिक मन्तव्यों की वैज्ञानिक रीति से व्याख्या की जा रही है और धर्म-सम्बन्धी जो रूढ़ियां विज्ञान के विरुद्ध समझी जाती थीं, उनमें वैज्ञानिक परिवर्तन भी हो रहे हैं। यह सब है विज्ञान की विजय। और क्यों न हो ? विज्ञान है क्या ? उन्हीं नियमों की खोज, जो जगत नियन्ता द्वारा जगत् में जगत् के आदि से ही काम कर रहे हैं। वैज्ञानिक लोग उन नियमों को बनाते नहीं, अपितु उनकी खोज करते हैं। अपने अज्ञान को दूर करने के लिये और मानव जाति के अज्ञान को दूर करने के लिये। अज्ञान अन्धकार है। विज्ञान उस अन्धकार में दीपक जलाने के समान है।

कुछ लोग समझा करते थे कि ईश्वर के गुप्त रहस्यों को जानने का प्रयत्न ही ईश्वर से विद्रोह करना है ! परन्तु यह धारणा अब नहीं रही है। ईश्वर को किसी रहस्य को छिपाने से क्या प्रयोजन ? उसके कोई गुप्त रहस्य नहीं हैं। जो नियम हैं, सब हमारे लाभ के लिये हैं। ऋग्वेद का एक मन्त्र कहता है, भगवान के कर्मों को देखो और उन्हीं से अपने व्रतों को करो। हम ईश्वर का अनुकरण करके उसको अप्रसन्न नहीं करते, अपितु उसकी आराधना करते हैं। यदि ईश्वर ने सूर्य बनाया, तो वह हमारे लिये। यदि उसके

भारतीय और पाश्चात्य सभ्यता

[लेखक—श्रीयुत पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड]

भारतीय सभ्यता के मुख्य तत्त्वों में और पाश्चात्य प्राकृतिक सभ्यता में जिसे स्व० महात्मा गांधी नास्तिक सभ्यता कहा कहते थे, महान भेद है। संक्षेप में इन दोनों का भेद या विरोध इस प्रकार दिखाया जा सकता है :—

(१) आर्य्य भारतीय सभ्यता परार्थ भाव को प्रधानता देती है पर पाश्चात्य सभ्यता स्वार्थ भाव को। जहां तक अपने स्वाथ में बाधा न पड़े वहां तक इसके अनुसार थोड़ा बहुत दूसरों का काम कर देने में हानि नहीं किन्तु अपने स्वार्थ का सर्वथा परित्याग करते हुए परोपकारार्थ जीवन तक दे देना मूर्खता है।

(२) भारतीय सभ्यता का मूल मन्त्र है 'सरल जीवन और उच्च विचार' अर्थात् कम से कम आवश्यकताएँ रखकर तपोमय और परोपकारमय जीवन व्यतीत करना। पाश्चात्य सभ्यता जीवन को अधिक से अधिक विषम बनाना पसन्द करती है। आवश्यकताओं को अच्छी तरह से खूब बढ़ा कर उनकी पूर्ति और तृप्ति के साधन पैदा करना यही सभ्यता का प्रयोजन है। ऊंचे दर्जे का रहन सहन (High Standard) अर्थात् खूब शान से यह पाश्चात्य सभ्यता का आवश्यक अंग है।

अनुकरण-स्वरूप हम दीपक बना लें, तो इसमें उसकी अप्रसन्नता क्यों? अथर्ववेद के एक मन्त्र में प्रश्न उठाया है कि ईश्वर को ठीक-ठीक कौन समझता है? और इसका उत्तर यह दिया है कि जो सृष्टि में ओत-प्रोत नियमों को समझता है, वही ब्रह्म को भी समझ सकता है। इसका अर्थ यह हुआ कि वैज्ञानिक ही ब्रह्मज्ञ है।

वैज्ञानिकों की मनोवृत्ति में भी परिवर्तन हो रहा है। अब उनकी वही मनोवृत्ति नहीं रही, जो हक्सले और डार्विन के समय थी। अब वह भी समझने लगे हैं, कि केवल भौतिक और रसायन ही विज्ञान नहीं है। मनोविज्ञान और आत्म-विज्ञान को भी विज्ञान की कोटि में गिनना चाहिये। यह परिवर्तन कुछ तीव्र गति से नहीं है। यही कारण है कि विज्ञान मनुष्य को आन्तरिक शान्ति प्रदान करने में असमर्थ रहा है। आजकल मनुष्य-घातक शक्तियों का इतना आविर्भाव हुआ है कि लोग विज्ञान से डरने लग गये हैं। परन्तु आशा करनी चाहिये कि अणु-बम इत्यादि की खोज के साथ २ मनुष्य में मनुष्यत्व लाने का प्रयत्न किया जायगा। तभी धर्म और विज्ञान का समन्वय हो सकेगा। यदि वैज्ञानिक युग में भी हम सिंह और भेड़ियों के समान ही रहे, तो विज्ञान का भविष्य उज्ज्वल नहीं रहने का। इसी प्रकार यदि धर्माध्यक्ष अपने आधिपत्य की रक्षा के रूप में पुरानी रूढ़ियों को ही दृढ़ करते रहे तो धर्म का भविष्य उतना ही अन्धकारमय होगा।

यह एक विचारणीय बात है कि आर्यसमाज के संस्थापक ने विज्ञान का कभी किंचित् भी विरोध नहीं किया। परन्तु आर्यसमाज के मंच और प्रेस से मैंने बीसियों लेख या व्याख्यान सुने हैं जिनमें विज्ञान की उसी प्रकार खिल्ली उड़ाई जाती है जैसे ईसाई या मुसलमान मुल्ले पादरियों की ओर से उड़ाई जाती रही है। पुराने संस्कार कठिनता से जाते हैं।

———

तप और संयम जंगली लोगों के आदर्श हैं सभ्य पुरुषों के नहीं।

(३) भारतीय सभ्यता मुख्यतः आत्मिक हित की दृष्टि से सब समस्याओं और प्रश्नों पर विचार करने को कहती है। सत्य और धर्म ही उसके प्राण हैं। पाश्चात्य सभ्यता की दृष्टि में आत्मा, परमात्मा, परलोकादि कोई चीज नहीं। जिस किसी तरीके से भी प्रतिष्ठा प्राप्त हो और आदमी शान से आजीविका कमाता हुआ रह सके, रहना चाहिये। सत्य, यश और ऐश्वर्य का आर्य सभ्यता में जो क्रम है उसको ठीक उलट कर पाश्चात्य सभ्यता में सब से पहला दर्जा ऐश्वर्य को, दूसरा नाम कमाने को और तीसरा सत्य को उस हद तक जहाँ तक वह पहले की प्राप्ति में रुकावट न पैदा करे, पहुंचा देती है। सत्य की रक्षा के लिये हरिश्चन्द्र, रामादि के समान सांसारिक ऐश्वर्य सुख का परित्याग करना इसके अनुसार मूर्खता है।

(४) भारतीय सभ्यता निष्काम भाव से शुभ कर्म करने को कहती है। पाश्चात्य सभ्यता नित नये विज्ञापनो के साधनो का आविष्कार कर सारी दुनियां में अपने नाम और काम का ढिंढोरा पीटने में ही गौरव मानना सिखाती है।

(५) भारतीय सभ्यता स्वार्थ रहित, तपस्वी, सदाचारी ब्राह्मणों को समाज में सब से ऊंचा स्थान दिलाना चाहती है पर पाश्चात्य सभ्यता बड़ी थैली वाले कारखानों और बड़ी २ जमींदारियों तथा बैंकों के मालिकों तथा पूंजीपतियों के हाथ में सब शक्ति रखना चाहती है क्योंकि वे चारे गरीब विद्वानों का भी आखिरकार आश्रय उन्हीं पर है। आज से कुछ समय पूर्व तक सारी शक्ति इन वैश्यों के हाथ में थी, यही बडे २ दार्शनिकों को अंगुलियों पर नचाते थे। पर अब साम्यवाद के प्रचार के कारण मजदूरों की बन आई है।

(६) भारतीय सभ्यता आध्यात्मिक उन्नति को प्राकृतिक उन्नति की अपेक्षा अधिक प्रधानता देती है, यद्यपि यह दोनों को आवश्यक समझती है पर वर्तमान पाश्चात्य सभ्यता तो केवल प्राकृतिक है। इसके भीतर आध्यात्मिक अंश शून्य के बराबर है। जर्मनी के सुप्रसिद्ध दार्शनिक प्रो० आयकन ने 'Can we still be Christians' नामक अपने प्रख्यात ग्रन्थ में इस प्राकृतिक सभ्यता का लक्षण निम्न शब्दों में किया है :—

"Outward greatness with the inward pettiness, wealth and diversity of achievements with hollow emptiness of sp'rit such is the mask of the merely naturalistic culture."

अर्थात ऊपर का बड़प्पन और अन्दर निस्सारता। ऊपर ऊपर की बहुत सी वस्तुओं और धन की प्राप्ति पर अन्दर आत्मिक खोखलापन यही केवल प्राकृतिक सभ्यता का मुख्य चिन्ह है। यह वही सभ्यता है जिस पर पाश्चात्य जगत घमंड करता है और जिसकी चकाचौंध से प्रभावित होकर हमारे देश के शिक्षित जन प्रशंसा के पुल बांधते नहीं थकते।

(७) आर्य संस्कृति सत्य और आत्मिक शक्ति पर विश्वास करती है पर पाश्चात्य सभ्यता उस का मखौल उड़ाती है। उसको अपनी मशीन गनों, बन्दूकों, अणुबमों और राकेटों पर ही अधिक विश्वास है, यद्यपि इस शक्ति की निस्सारता अनेक बार प्रमाणित हो चुकी है।

इस तरह भारतीय और पाश्चात्य सभ्यता में मुख्य भेद है। अब उन महानुभावों के मत की थोड़ी सी आलोचना करना आवश्यक प्रतीत होता है जो पाश्चात्य सभ्यता और विशेषतः उसके आवश्यक अंग व्यवसायवाद का अवलम्बन किए बिना भारत की उन्नति नहीं हो सकती ऐसा कहते

जिनसे महर्षि मिले—

श्री देवेन्द्रनाथ ठाकुर

[लेखक - श्री भवानीलाल भारतीय, एम० ए० सिद्धान्त वाचस्पति]

राजा राम मोहन राय की मृत्यु के पश्चात देवेन्द्रनाथ ठाकुर ब्राह्म समाज के प्रधान आचार्य और नेता बने। वस्तुतः देवेन्द्रनाथ ने ही ब्राह्म धर्म के सिद्धान्तों और कर्मकाण्ड के नियमों का सर्व प्रथम विधान किया। उन्होंने संस्कृत में "ब्राह्म धर्म" नामक एक पुस्तक लिखी और ब्राह्म समाज के निम्न मन्तव्य स्थापित किये—

(१) प्रारम्भ में ईश्वर के अतिरिक्त और कुछ नहीं था। उसने ही सृष्टि बनाई।

(२) ईश्वर अद्वितीय है और उसमें सत्यता सर्वज्ञता, सर्व शक्तिमत्ता, सर्व व्यापकता आदि गुण हैं।

(३) उसके विश्वास और उसकी उपासना से ही हमारी मुक्ति सम्भव है।

(४) ईश्वर विश्वास का तात्पर्य है, उससे प्रेम करना और उसकी आज्ञानुसार चलना।

अपने कलकत्ता प्रवास में महर्षि दयानन्द की भेंट श्री देवेन्द्रनाथ ठाकुर से हुई थी। दोनों व्यक्तियों ने एक दूसरे के प्रति अत्यन्त सम्मान प्रदर्शित किया और विचार विनिमय भी किया।

हैं। हम अपने शब्दों में इस विचार की आलोचना करना आवश्यक नहीं समझते। ऊपर जो भारतीय और पाश्चात्य सभ्यताओं की हमने तुलना की है उनसे यह स्पष्ट मालूम हो सकता है कि प्राकृतिक और आत्मिक दोनों प्रकारकी उन्नति को आवश्यक मानने वाली धर्म प्राण भारतीय सभ्यता को छोड़ कर केवल प्राकृतिक या नास्तिक सभ्यता का अंध अनुकरण करना हमारे देश के लिये हितकर नहीं हो सकता। पाश्चात्य सभ्यता पर गम्भीरता से विचार करते हुए वैज्ञानिक शिरोमणि हक्सले कुछ निराशा सूचक आवाज में कहते हैं :—

"Even the best of modern civilisation appears to me to exhibit a condition of mankind which neither embodies any worthy ideal nor even possesses the merit of stability. If there is no hope of a large improvement of the conditions of the greater part of the human family, I should hail the advent of some kindly comet which wanted to sweep the whole affairs away as a desirable consummation.

अर्थात् अच्छी से अच्छी आधुनिक सभ्यता भी मनुष्यों की एक ऐसी अवस्था की सूचना देती है जिसके सामने न तो कोई उच्च आदर्श है और न स्थिरता। यदि मनुष्य जाति की बहुसंख्या की अवस्था में किसी बड़े भारी परिवर्तन की आशा न हो तो मैं एक ऐसे दयालु धुम्रकेतु के आगमन का स्वागत करूंगा जो आकर सारे जगत का एक दम संहार कर दे।

प्रो० हक्सले के मतानुसार वर्तमान व्यवसाय वाद ही इस शोचनीय दशा का एक मुख्य कारण है।

—

देवेन्द्र बाबू के निवास स्थान पर होने वाले ब्राह्म समाज के उत्सव में भी महर्षि दयानन्द सम्मिलित हुये थे और वहां उनका धर्मोपदेश भी हुआ था।

देवेन्द्रनाथ के विचारों पर प्राचीन वैदिक धर्म और आर्य सभ्यता की बहुत गहरी छाप थी । वे उपनिषदों की उदात्त और स्फूर्तिदायक शिक्षा से अत्यन्त प्रभावित थे, परन्तु राममोहन राय की भांति ईसाई मत और बाइबिल का महत्व उन्होंने स्वीकार नहीं किया था। इस दृष्टि से देवेन्द्रनाथ ब्राह्म समाज को प्राचीन वैदिक धर्म का पुनरुद्धार करने वाला आन्दोलन ही बनाना चाहते थे। जैसा कि J. N. फर्कुहर ने लिखा है —

"Devendra followed Ram Mohan Roy in his belief that original Hinduism was a pure spiritual theism, and in his enthusiasm for the Upnishads, but did not share his deep reverence for Christ. He believed India had no need of christianity, and he was never known to quote the Bible."

अर्थात् राम मोहन राय की तरह देवेन्द्रनाथ भी यह मानते थे कि मूल हिन्दू धर्म ऐकेश्वरवादी था और औपनिषद धर्म के प्रति भी वे उतने ही उत्साही थे जितने राम मोहन राय, परन्तु उन्हें राम मोहन राय की भांति ईसा के प्रति विशेष श्रद्धा नहीं थी। उनका यह विश्वास था कि भारत को ईसाइयत की आवश्यकता नहीं है और न उन्होंने कभी अपने ग्रन्थों में ही बाईबिल को उद्धृत किया।

ब्राह्मसमाज के एक अन्य नेता प्रतापचन्द्र मजूमदार की भी यही सम्मति है। केशवचन्द्र सेन की जीवनी में वे लिखते हैं—

Devendra Nath had never received the advantage of christian training. His religious genious was essentially Vedic, Aryan, National, rapturous."

अर्थात् देवेन्द्रनाथ को ईसाई शिक्षा प्राप्त करने का कभी अवसर प्राप्त नहीं हुआ। उनकी आध्यात्मिक प्रतिभा निश्चित रूप से वैदिक आर्यों की सी तथा राष्ट्रीय और भावुकता पूर्ण थी।

इतना होने पर भी देवेन्द्रनाथ को अपने कार्य में सफलता नहीं मिली। वे ब्राह्म समाज को वैदिक संस्कृति के पुनरुत्थान का अग्रदूत बनाने में सफल नहीं हो सके। इसके विभिन्न कारण थे। प्रथम तो यह कि वेदों के बारे में उनकी कोई निश्चित धारणा नहीं थी। पहले तो वे सामान्य हिन्दू की तरह वेदों की स्वतः प्रामाणिकता में विश्वास करते थे, परन्तु बाद में उनका विश्वास वेदों से उठ गया था। उन्होंने अपने कुछ अनुयायियों को काशी इसलिये भेजा कि वे वहां जाकर वेदों का अध्ययन करें और उन्हें वैदिक शिक्षासे अवगत करें ऐसा प्रतीत होताहै कि काशी में रहने वाले वेद के पण्डितों से देवेन्द्रनाथ के अनुयायी सन्तुष्ट नहीं हो सके। इसके फलस्वरूप उन्होंने अपने आचार्य को वेदों के बारे में जो सम्मति दी वह अत्यन्त निम्न कोटि की थी। फलतः देवेन्द्रनाथ वेदों से विमुख हो गये और उनके ईश्वरीय ज्ञान होने के दावे को उन्होंने अस्वीकार कर दिया। रोमां रोला ने ठीक ही लिखा है—

"Devendra Nath's attitude to the Holly Books was not always consistent Between 1844 and 1846 at Benares he seems to have considered that the Vedas were infallible, but this idea and individual

inspiration gained the upper hand."

(The Life of Ramakrishna P. 110 foot-note No. 3.)

अर्थात् धार्मिक ग्रन्थों के विषय में देवेन्द्रनाथ का दृष्टिकोण कभी एकसा नहीं रहा। सन् १८४४ और १८४६ के बीच में बनारस में वे वेदों को निर्भ्रान्त मानते रहे, परन्तु १८४७ के पश्चात् उन्होंने यह विचार छोड़ दिया और अब व्यक्तिगत प्रेरणा को महत्व देने लगे।

अब तक ब्राह्म समाज में "ईश्वर-प्रेरित आवेशों" के प्रचार की अवस्था नहीं आई थी। राम मोहन राय ने अपने आपको ईश्वर का दूत या "प्रेरित व्यक्ति" नहीं माना, परन्तु देवेन्द्रनाथ से यह "दैवी प्रेरणा" की विदति ब्रह्म धर्म में प्रविष्ट हुई जिसने केशवचन्द्र सेन में जाकर एक ऐसा रूप धारण किया जिसे समाज से पृथक् करना कठिन हो गया तथा जिसके कारण ब्राह्म समाज के संगठन की नींव में ही दरार पड़ गई। इसका विशेष वर्णन हम केशवचन्द्र सेन के प्रकरण में पढ़ेंगे।

प्राचीन वैदिक धर्म के प्रति श्रद्धा रखते हुये भी देवेन्द्रनाथ अपनी बातों पर दृढ़ नहीं रह सके। केशव के परामर्श को शिरोधार्य करते हुए देवेन्द्रनाथ ने स्वयं भी अपना यज्ञोपवीत उतार दिया और ब्राह्म समाज में यह नियम बना दिया कि कोई उपनयन वाला व्यक्ति समाज के आचार्य पद का अधिकारी नहीं हो सकता। उन्होंने केशव की सम्मति मान कर उपनीत ब्राह्मण आचार्यों को आचार्य पद से पृथक भी कर दिया था। वे यद्यपि हृदय से केशव के इन उग्र और परम्परा-विरोधी विचारों से सहमत नहीं थे, परन्तु उनका व्यक्तित्व केशव के सम्मुख कुछ इस प्रकार दबा हुआ था कि वे खुल कर उसका विरोध नहीं कर सकते थे। परन्तु जब उन्हें अवसर मिला, उन्होंने यज्ञोपवीत धारी ब्राह्मणों को पुनः आचार्य का आसन प्रदान कर दिया, जिसका फल यह हुआ कि केशव और उसके साथी देवेन्द्र बाबू की समाज से पृथक हो गये और उन्होंने अपना एक पृथक समाज स्थापित कर लिया। देवेन्द्र केशव के अन्य प्रचार कार्यों—यथा विधवा विवाह, असवर्ण विवाह आदि क्रान्तिकारी कार्यों से असहमत थे।

इतनो होते हुये भी देवेन्द्र को अपने उद्देश्य में सफलता नहीं मिली। इसका कारण था प्राचीन वैदिक धर्म की प्रचलित परम्पराओं के प्रति उपेक्षा और अविश्वास का भाव तथा उनके प्रति अश्रद्धा। जे० एन० फर्कुहर का यह कथन ठीक ही है कि देवेन्द्र अपने आपको पक्के हिन्दू समझते थे और वे यह भी मानते थे कि वेदान्त के भक्तों और विचारकों की गौरवपूर्ण परम्परा में उनका भी महत्वपूर्ण स्थान है, परन्तु वे यह समझने में असमर्थ रहे कि वेदों की प्रामाणिकता को अस्वीकार कर देने तथा सर्वोपरि रूप से पुनर्जन्म और कर्म के सिद्धान्त को न मानने के कारण वे हिन्दू धर्म के विश्वासों और प्रेरणाओं की उस सीमा रेखा के बाहर ही रह जाते हैं, जिनमें विश्वास करने के कारण ही कोई व्यक्ति हिन्दू कहला सकता है। फर्कुहर के वास्तविक शब्द ये हैं—

"He regarded himself a true Hindu, standing in the long noble succession of the thinkers and rapt devotees of the Vedanta, ... but he failed to realise that the rejection of the authority of the Vedas, and above all the doctrine of transmigration and Karma, had set him outside the nexus of the peculiar beliefs and aspirations of

सृष्टि उत्पत्ति के विषय में
पश्चिमी विद्वानों में और हमारे वैदिक-धर्म में क्या भेद है ?

[ले० —महात्मा चन्द्रानन्द वानप्रस्थी, पूर्व चांदकरण शारदा अजमेर]

इस समय वैदिक धर्म के अनुकूल हमारा सृष्टि सवत एक अरब सत्तानवे करोड़ उनतीस लाख उनपचास हजार छप्पन है (१९७,२९,४९,५६) है। हमारे शास्त्रों के अनुसार पृथिवी की आयु ४ अरब ३२ करोड़ वर्षकी है। यही ब्रह्म-दिन है जो चौदह मन्वन्तरों के बाद पूरा होता है। फिर इतने ही समय तक ब्रह्म-रात्रि अथवा प्रलय रहता है। एक हजार चतुर्युगियों का ब्रह्म दिन होता है। एक दिव्य वर्ष तीन सौ साठ सौर वर्ष का होता है। सतयुग सत्रह लाख अट्ठाइस हजार वर्ष का होता है। त्रेतायुग बारह लाख छियानवे हजार वर्ष का होता है। द्वापर युग आठ लाख चौंसठ हजार वर्ष का होता है। कलियुग चार लाख बत्तीस हजार वर्ष का होता है। इस प्रकार एक चतुर्युगी तेतालीस लाख बीस हजार वर्ष की होती है। इसी प्रकार ब्रह्म रात्रि होती है, उस समय इतने ही समय तक अन्धकार रहता है।

सृष्टि की उत्पत्ति के पूर्व केवल अन्धकार था। प्रकृति सत्व, रज, तम साम्यवस्था में पड़ी हुई थी। जल आदि पांच तत्वों में से कोई नहीं थे। प्रलय के पश्चात् ईश्वर की स्वाभाविक ज्ञान; बल, क्रिया और इच्छा से प्रकृति की साम्यावस्था में विकृति आने लगी; परमाणुओं का सचालन होने लगा और अणु के द्विसरेणु फिर त्रिसरेणु बनने लगे और विलीन हुये, बीज रूप सृष्टि के तत्व प्रकट होने लगे। महतत्व से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल तत्व और जल-तत्व से पृथिवी बनी, पृथिवी से औषधि अन्न, अन्न से रेतसवीर्य, वीर्य से पुरुष बना। इस प्रकार वैदिक धर्म मनुष्य की उत्पत्ति मानता है। प्रलय अवस्था में न पाँचों तत्व थे, न सूर्य था, न दिन रात थे। सब जगह अन्धेरा था। असंख्य जीवा

Hinduism'

(Modern Religious Movements in India P. 45.)

वस्तुतः वेदों को प्रामाणिक मानना, पुनर्जन्म और कर्म के सिद्धान्त को मानना ही वैदिक धर्म की मुख्य कसौटी है। स्वामी दयानन्द की बात छोड़िये, लोकमान्य तिलक और महामना मालवीय जी आदि अर्वाचीन हिन्दू नेताओं ने भी हिन्दू विश्वास की जो परिभाषा की है, उसमें वेदों की प्रामाणिकता को प्रमुख स्थान दिया है—' प्रामाण्य बुद्धिर्वेदेषु" जो व्यक्ति वेद के स्वतः प्रमाणत्व मे विश्वास नहीं रखता, वह प्राचीन वैदिक धर्म से भी अपनी परम्परा का सम्बन्ध नहीं जोड़ सकता, फलतः उसका सारा किया कराया निष्फल हो जाता है।

देवेन्द्रनाथ यद्यपि राम मोहन राय और केशवचन्द्र सेन की तरह ईसाइयत के प्रति अधिक उन्मुख नहीं हुये, परन्तु प्राचीन धर्म के मुख्य सिद्धान्तों में भी आस्थावान न होने के कारण वे ब्राह्म समाज को अपने आदर्शों के अनुरूप नहीं बना सके। येन केन प्रकारेण उन्हें केशव की तथाकथित प्रगतिशीलता के सम्मुख घुटने टेकने ही पड़े।

त्मायें अपने २ धर्म अधर्म के संस्कारों को लेकर अदृष्ट अवस्था में पड़ी हुई थीं। वैदिक धर्म यह भी मानता है कि यह सृष्टि विसृष्टि का तत्व अनन्त परम्परा से है और स्वाभाविक है और जीवात्मा का छुटकारा इस चक्र से मोक्ष द्वारा छत्तीस हजार बार सृष्टि की उत्पत्ति तथा प्रलय हो तब तक मुक्त जीव का संसार में जन्म-मरण के बन्धन से छूट जाता है। ईश्वर, जीव, प्रकृति तीनों पदार्थ अनादि हैं।

पश्चिम वाले भौतिक वादी उपरोक्त सिद्धान्तों को नहीं मानते और वे डार्विन के अधिकांश क्रमिक विकास को मानते हैं और कहते हैं कि सृष्टि की उत्पत्ति अपने आप हो गई और क्रमिक विकास करते २ नमूला से कई जानवर बनते २ बन्दर बने और बन्दर से मनुष्य बने। यूरोपियन विद्वान अब मानने लगे हैं कि पृथिवी पर जीवों का प्रादुर्भाव लगभग एक अरब वर्ष पूर्व हुआ। वे कहते हैं कि पचास करोड़ वर्ष तक तो प्रारम्भिक जीव समुद्र में ही अपना विकास करता रहा, जहाँ उसकी अनेकों जातियाँ, उपजातियाँ फूटीं। प्राणी अपनी आवश्यकता और अवस्था के अनुसार बदलता गया। छोटे से "सेल्स" से विकास होकर छोटी सी मछली बनी और छोटी सी मछली का विकास होते २ ह्वेल मछली बन गई। सत्रह करोड़ वर्ष तक अन्य समुद्री जीवों का विकास होता रहा जो रीढ़ वाले अर्थात् मेरु-दण्ड वाले जीव थे। इसके बाद मछलियों का युग प्रारम्भ हुआ, जो लगभग पांच करोड़ वर्षों का माना जाता है। इस युग में रीढ़ वाली मछलियों का बाहुल्य रहा। उसके बाद स्थल के जीव उत्पन्न हुये, जो पृथिवी पर साढ़े आठ करोड़ वर्षों तक रहे। इसके पश्चात् सरिसृप पृथिवी के रंगमंच पर आये, जिन्होंने साढ़े बारह करोड़ वर्ष पृथिवी को अपने अधिकार में रखा। उसके पश्चात् हिमयुग आया और ध्रुवों की ओर से बरफ पिघल २ कर विषु-वृत रेखा की ओर बढ़ने लगा जिससे घने जंगल और भीमकाय सरिसर्प सदा के लिये नष्ट हो गये। जो छोटे २ जीव बचे उन्हीं से स्तन्य प्राणियों का विकास हुआ और क्रः करोड़ वर्षों से इन्हीं स्तन्य प्राणियों का संसार में आधिपत्य है।

हिमयुग के समय में जंगल नष्ट हो गये थे और जीव-जन्तु उष्ण प्रदेशों की ओर आगे बढ़ गये थे। पेड़ों पर रहने वाले जीव-जन्तु लुप्त हो गये और धरती पर रहने वाले जो जीव-जन्तु, पशु बचे वे ही धीरे २ विकसित हुए—यही जीव धीरे-धीरे स्तन वाले बन्दर और वनमानुष बने और इन्हीं वनमानुष, बन्दरों से मनुष्य उत्पन्न हुआ। डार्विन के इस विकासवाद के तथा योग्यतम प्राणी को जीने का अधिकार है, इस सिद्धान्त के माफिक मनुष्य की उत्पत्ति का समय लगभग दस लाख वर्ष का पश्चिमी वैज्ञानिकों ने माना है; परन्तु अन्य जीवों को हरा कर अपनी सत्ता कायम किये अभी स्तन्य प्राणी को एक लाख वर्ष से अधिक नहीं हुए। यद्यपि मनुष्य के पास न सुन्दर पर है और न वह हिरन की तरह तेज दौड़ सकता है और न पक्षियों की तरह आकाश में उड़ ही सकता है और न नुकीले पंजे और तेज दांत उसके पास हैं, परन्तु फिर भी वह सब प्राणियों का राजा है। अगर हम पश्चिम वालों से पूछें कि मनुष्य इतनी उन्नति कैसे कर गया तो उनका उत्तर होगा कि बुद्धि-बल से।

जब हम पश्चिम वालों से पूछते हैं कि बुद्धि-बल मनुष्य में कहाँ से आया क्योंकि पशुओं में तो बुद्धि है ही नहीं। वे तो भोग योनि के जीव हैं, तो डार्विनवादी हार जाते हैं और निरुत्तर हो जाते है और उनको अन्त में स्वीकार करना पड़ता है कि हमारा क्रमिकवाद का धीरे २ पूंछ घिस कर बन्दर से मनुष्य बनने का सिद्धान्त भ्रम-

पूर्ण और असत्य है तथा तर्क बुद्धि की कसौटी पर नहीं ठहर सकता और इनको हार थक कर यही मानना पड़ता है कि सृष्टि उत्पत्ति का वैदिक सिद्धान्त जो पुरुष सूक्त अर्थात् यजुर्वेद के इकत्तीसवें अध्याय में वर्णित है, वही सत्य है। उनको मानना पड़ेगा कि सृष्टि की उत्पत्ति काल से ही प्रत्येक जीव-जन्तु और मनुष्य तथा पशु की परमात्मा ने भिन्न २ योनियां बनाई हैं और एक अरब वर्ष से उन्हीं योनियों में जीव उत्पन्न होते जा रहे हैं। जैसे नीम का बीज डालो तो नीम ही होगा। उसी तरह से कुत्ते की योनि से कुत्ता, घोड़े की योनि से घोड़ा, गाय की योनि से गाय और मनुष्य की योनि से मनुष्य ही उत्पन्न होगा।

परमात्मा ने मनुष्य को बुद्धि दी है, विवेक दिया है और उसी के बल से वह शेर, हाथियों तथा अनेक जंगली जानवरों को अपने वश में कर लेता है। मनुष्य की बुद्धि के चमत्कार हम रात-दिन सरकसों में देखते हैं। विमान बना कर मनुष्य लाखों मील कुछ ही घण्टों में उड़ लेता है और अपनी बुद्धि बल से ही वह प्रत्येक क्षेत्र में प्रकृति पर विजय प्राप्त कर सकता है। इसी वास्ते डार्विन के सिद्धान्त वालों को हार कर यह मानना पड़ा है कि,इस संसार के संचालन के लिए जड़-प्रकृति के साथ २ चेतन शक्ति की भी आवश्यकता है। अगर बुद्धि और चेतन शक्ति मनुष्य में न हो तो वह इतने आविष्कार नहीं कर सकता।

प्रस्तर युग, कांसा युग तथा लोह युग की बातें कपोल कल्पित हैं

एक समय था जब कि यूरोप वाले यह प्रचार करते थे कि मनुष्य पहले जंगली था, जंगलों और गुफाओं में रहता था, पत्थर के औजार बना कर जानवरों का शिकार करता था और उनका कच्चा मांस खाकर उनकी खालों को पहन लेता था या नंगा ही रहता था। इस जमाने को ये लोग प्रस्तर-युग (पत्थर-युग) कहते हैं। इसके बाद मनुष्य ने अग्नि का आविष्कार किया और अग्नि से तप कर अपनी रक्षा करना सीखा और फिर धीरे २ क्रम से विकास करते २ मनुष्य ने पशु-पालन, खेती बारी और ग्राम-नगर आदि बसाने सीखे। पश्चिमी विकासवादियों का कहना है कि इस प्रकार कांसा-युग और लोह युग में आते २ मनुष्य को पन्द्रह बीस हजार वर्ष लग गये। जिस समय मनुष्य अपनी रक्षा के लिये केवल पेड़ से गिरी हुई लकड़ी से काम लेता था, उस समय में और आज कल के अणु बम के समय में विकास करने का समय ये लोग कुछ ही हजार वर्ष बतलाते हैं।

भारत का इतिहास बतलाता है कि विकासवाद के परोक्ष क्रमिक विकास की बातें कपोल-कल्पित हैं। हमें तो पुरुषसूक्त बतलाता है कि दो अरबवर्ष पहले मनुष्य पूर्ण विद्वान् उत्पन्न हुआ और वेदों के ज्ञान से सारे संसार को आलोकित किया। प्राचीन गुफाओं में जो हस्तकला के चित्रों के उत्कृष्ट नमूने हमको मिलते हैं उससे भी डार्विन का सिद्धान्त मिथ्या सिद्ध होता है। यदि मनुष्य जंगली होता तो वह संगीत, चित्रकारी आदि ललित कलायें कैसे जानता, क्योंकि वे बातें पशुओं में तो होती ही नहीं। ये विकासवादी मानते हैं कि दस हजार वर्ष पूर्व मनुष्य प्रस्तर-युग में था और शिकारी से किसान का रूप धारण कर रहा था और अन्न उगा कर एक स्थान पर बसने का प्रयत्न कर रहा था। नहीं तो इससे पहले वह भेड़-बकरी व अन्य पशु लेकर वह एक स्थान से दूसरे स्थान पर मारा २ फिरता था और फिर वह पशुओं को पालना सीखा और उनसे अपनी खेती-बारी और सामान ढोने का काम लेने लगा। इसके बाद कांसे का युग आया, जिसमें पत्थर की जगह कांसे के औजार बनाये और मिट्टी पका कर बर्तन बनाये और छाल से कपड़े बनाये और इस समय को

पश्चिम के विकासवादी पांच हजार वर्ष पूर्व का मानते हैं, परन्तु उनकी यह बात भी मिथ्या सिद्ध हो गई क्योंकि पांच हजार वर्ष पहले तो महा भारत का युद्ध हुआ था जिसमें सारे संसार भर के राजा और योद्धा युद्ध करने आये थे और गीता जैसे अनुपम ग्रन्थ की रचना हो चुकी थी। इससे हजारों वर्ष पहले वाल्मीकि रामायण त्रेतायुग में महर्षि वाल्मीकि ने रच दी थी। और वेद की ऋचयें तो ऋषि मुनियों ने करीब दो अरब वर्ष पहले गाई थीं और इसके बाद ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद् काल और सूत्र ग्रन्थों का काल आया जिससे पश्चिमी विद्वानों की उपरोक्त सब बातें कपोल कल्पित सिद्ध होती हैं।

इन पश्चिम वालों की लोहयुग, कांसायुग और प्रस्तर युग की बातें तो मोहनजोदारो और हरप्पा की खुदाइयों से भी मिथ्या सिद्ध हो गई। इन खुदाइयों से सिद्ध होता है कि हजारों वर्ष पहले मनुष्य सभ्य था, उत्तम २ नगर बसाता था, हवाई जहाज बनाता था और ज्ञान-विज्ञान तथा आध्यात्म विद्या में बहुत बढ़ा चढ़ा था, परन्तु पश्चिम वाले जिस वक्त में पत्ते पहनते थे और जंगलों में भटकते थे उस समय हमारा भारतवर्ष उन्नति के शिखर पर था। रेल, तार, वायुयान, ऐटम बम और आधुनिक विज्ञान की सब बाते भारत के पूर्वजों को लाखों वर्ष पहले ज्ञात थीं। भारतवर्ष का प्राचीन इतिहास डार्विन के सिद्धान्त को मिथ्या सिद्ध करता है।

वैदिक काल

वैदिक काल के विषय में भी पाश्चात्यों और उनके अनुयायी भारतीय विद्वानों ने बहुत भ्रम-पूर्ण बातें लिखी हैं। "वैदिक एज" नामकपुस्तक जो भारतीय विद्या-भवन की ओर से भारतीय-संस्कृति और तत्त्व-ज्ञान के तथा इतिहास के विषय में प्रकाशित हुई है, उसमें श्रीमन आर० सी० मजूमदार वेदों को ईसामसीह के एक हजार वर्ष पूर्व के मानते हैं। इसी प्रकार पश्चिमी विद्वानों ने भी अपनी पुस्तकों में वेदो का काल प्रो० मैक्समूलर का अनुसरण करके पंद्रहसौ वर्ष पूर्व ईसा से माना है। दुःख तो इस बात का है कि पाश्चात्य विद्वानों के पास कोई प्रामाणिक युक्तियां न होने पर भी उनकी कपोल-कल्पित वैदिक-काल की बातों को हमारे भारतीय विद्वानों ने भी अपनी पुस्तक "भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास", "प्राचीन भारत", "भारत का वृहत इतिहास", "भारतीय इतिहास की रूप रेखा", "भारत की प्राचीन संस्कृति", "भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास", "प्राचीन भारत का इतिहास", "हिन्दू सभ्यता", "भारतीय दर्शन-शास्त्र का इतिहास" आदि अनेक हिन्दी की पुस्तकों में वेदो का काल चार हजार, पांच हजार ईसा से पूर्व से अधिक नहीं बतलाया है और हमारे गुरुकुलों के स्नातक भी काल निर्णय करते हुए वैदिक सिद्धान्तों को भूल गये हैं।

जब वेद ईश्वरीय ज्ञान है तो फिर इसमें इतिहास बताना और ऐतिहासिक दृष्टिकोण से काल निर्णय करना सरासर भूल है। महर्षि दयानन्द ने अनेक प्रमाण देकर सिद्ध किया है कि चारों वेद सृष्टि के आरम्भ मे अग्नि, वायु, आदित्य, अ गिरा इन चार ऋषियों के हृदय में जब वे समाधि अवस्था में थे तब प्रकट हुये और उन दिव्य ऋषियों ने उनको दूसरे ऋषियों पर प्रकट किया। पण्डित सत्यव्रत जी सामश्रमी ने "त्रयी चतुष्टय" में फोटोग्राफी। फोनोग्राफी, टेली-फोन, धूम्रकल, वायुयान आदि सब का वर्णन किया है और महर्षि दयानन्द की सब बातों का समर्थन किया है। अतः पाश्चात्य विद्वान श्लेगल, वेबर आदि ने स्पष्ट लिख दिया है कि वेद संसार के सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं और इनका समय निश्चित नहीं किया जा सकता। इतना होने पर भी हमारे

वसन्त का वैदिक स्वरूप

[लेखक—श्री पन्नालाल परिहार बी० ए० एल० एल० बी० जोधपुर]

वसन्त ऋतु में दिव्य आश्रय-लोक त्रिपुट अर्थात् तिगुने रूप में अति प्रबलता से प्रकट होते हैं। इस ऋतु में प्राणबल द्वारा तथा अग्नि के उत्तरोत्तर तेज प्रभाव से जीवात्मा और समस्त प्राणी जगत् में अन्न, आयु और बल धारण किये जाते हैं और क्रमशः बढ़ाये जाते हैं। यह क्रिया तीव्र होती जाती है जैसे जैसे मकर संक्रांति के उपरान्त सूर्य उत्तरायण अभिमुख होता हुआ उत्तरोत्तर तेजस्वी होता है। वह सृष्टि का रथन्तर है जो प्रति वर्ष प्रादुर्भूत होता रहता है। पृथिवी अपनी धुरी पर घूमती है जिससे रात दिन उत्पन्न होते है। पृथिवी की दूसरी धुरी वह है जिससे वह एक परिधि पथ पर सूर्य के चारों ओर चक्र लगाती है। यह क्रिया स्वाभाविक ऋतु शक्ति के कारण होती रहती है और मानवी एक वर्ष में समाप्त हो जाती है। बारह मास में बारह संक्रान्तियां आती है और इनके दो दो मास के विभाग करने पर छः ऋतुएँ बनती हैं। जब सूर्य छः मास तक दक्षिणायन रहता है तब हमारा उत्तरायण खंड प्रायः शीतमय रहता है। और जब मकर संक्रान्ति के पश्चात् अर्थात् मकर के दारुण शीत के उपरान्त सूर्य देव उत्तरायण की ओर देवयान अभिमुख होता है, तब हमारे यहां मधु माधव संज्ञक वसन्त का सुहावना ऋतु आता है। मधु मास में समस्त वनस्पति वर्ग और प्राणि जगत् में मधुर रस का सचार होने से सृष्टि में स्वतः ही स्वाभाविक मधुरता आती है। माधुर्य सम्पन्न होने पर वृक्ष लतादि वनस्पति औषधियों में किसलय नवकुसुम फूल पत्तियां व कोंपले फूट निकलती हैं। इससे हमारी धरातल का वातावरण शीतल मन्द सुगन्ध

स्कूल और कालेजों में यही शिक्षा दी जा रही है कि वेदों का काल पांच हजार ईसा से पूर्व का नहीं है।

जब कि हम उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध कर चुके हैं कि वेदों का ज्ञान एक अरब सत्तानवे करोड़ उनतीस लाख ऊनपचास हजार छप्पन वर्ष का पुराना है। उसी समय सृष्टि उत्पन्न हुई और उसी समय अमैथुनी सृष्टि द्वारा मनुष्य युवावस्था में उत्पन्न हुए और उसी समय चारों ऋषियों के हृदय में वेदों का प्रकाश हुआ। डार्विन के मत का खण्डन तो भाषा विज्ञान से भी हो जाता है। वेदों की भाषा शुद्ध वैदिक संस्कृत है। वेद अनादि हैं और सृष्टि के आरम्भ में मनुष्य समाज के हित के लिए ईश्वर ने नित्य वेदों के ज्ञान का प्रादुर्भाव किया। अतः वेदों की भाषा भी नित्य है। जब इस सिद्धान्त के सामने डार्विन का सिद्धान्त कि भाषा क्रमिक विकास से उत्पन्न हुई, नहीं ठहरता। श्रीमान् पण्डित भगवत दत्त जी ने वेदवाणी के पाश्चात्य मत परीक्षा-अङ्क में "भाषा की उत्पत्ति-विषयक यूरोपियन विचार धाराओं का खण्डन किया है क्योंकि इन पश्चिमी विद्वानों ने डार्विन के क्रमिक विकासवाद के प्रभाव में आकर वैदिक काल बहुत थोड़ा पांच हजार वर्ष का ही बतलाया है। परन्तु पश्चिम में ही डार्विन के सिद्धान्तों का बड़े २ वैज्ञानिकों ने खण्डन कर दिया है और वह समय दूर नहीं है जब विद्वानों को वैदिक उत्पत्ति का काल एक अरब सत्तानवे करोड़ उनतीस लाख ऊनपचास हजार छप्पन वर्ष का मानना पड़ेगा।

सुरभि से सौम्य तथा फलोत्पादक बनता है । यह माधव है । यजुर्वेद के शब्दों में यह दो मास वसन्त ऋतु के दो स्वरूप हैं । यही संवत्सर अग्नि के रूप अन्तः श्लेष कहलाते हैं । यह रथन्तर क्रिया मानो चक्र की भांति कल्प से लेकर निरंतर प्रलय तक होती रहती है । वसन्त नामक समय विभाग इस कालचक्र का प्रमुख आरा है ।

वसन्त ऋतु मुख है । यह संवत्सर का सिर कहलाता है । गीता के शब्दों में यह ऋतनां कुसुमाकर है । यही ऋतुराज, प्रथम ऋतु और प्रकृति का राजा है । इसे कल्प पर्व भी कहते हैं क्योंकि सर्ग सृष्टि इसी काल में प्रारम्भ हुआ करती है । वसन्त में सृष्टि बसाने वाला तत्व प्रादुर्भूत होता है । प्राणी जगत् के आविर्भाव का यही मुख्य काल माना जाता है । इसी में प्रकृति के पदार्थ यौवन को धारण करते हैं और समस्त संसार स्फूर्ति चेतनता और प्रगति को प्रकट करता है । औषधियाँ बलवती होती हैं और उनमें भर्गः ज्योति उत्पन्न होती है ।

आदिकाल से ही विप्र कवियों ने इस ऋतु के गुण बखाने हैं । यह वसन्त काल पौराणिक समय में मदनोत्सव के रूप में मनाया जाता था ।

वेद ने एक अनूठे ढंग से वसन्त का सुन्दर वर्णन किया है । यजुर्वेद के अध्याय २१ का २३ वाँ सुप्रसिद्ध मंत्र देखिये ।

वसन्तेन ऋतुना देवा वसवस्त्रिवृता स्तुताः ।
रथन्तरेण तेजसा हविरिन्द्रे वयो दधुः ॥

इस सार गर्भित मंत्र पर विचार करने से पूर्व हम इस पर रचे हुए कतिपय सुप्रसिद्ध भाष्यों को उद्धृत करते हैं ।

दयानन्द भाष्य —

जो वसु पृथिवी आदि ८ वसु अथवा प्रथम कक्षा वाले विद्वान लोग दिव्य गुणों से युक्त स्तुति को प्राप्त हुए, तीनों कालों में विद्यमान जिसमें रहते हैं, उस प्राप्त होने योग्य वसन्त ऋतु के साथ वर्तमान हुए जहाँ रथ से तैरते हैं उस तीक्ष्ण स्वरूप से सूर्य के प्रकाश में देने योग्य आयु बढ़ाने हारे वस्तु को धारण करे ।

भावार्थ—उनको स्वरूप से जान कर संगति करो । जो मनुष्य लोग रहने के हेतु दिव्य पृथिवी आदि लोकों वा विद्वानों की वसन्त में संगति करें, वे वसन्त सम्बन्धी सुख को प्राप्त होवें ।

वैदिक संस्थान मथुरा का भाष्य—

पृथिव्यादि आठ वसु वसन्त ऋतु में त्रिवृत स्तोम और रथन्तर साम से प्रशंसित होतेहुए तेज के द्वारा जीवात्मा में हविष्य पदार्थ आयु को धारण करते हैं ।

जयदेव भाष्य—

वसु नामक देव विद्वान् वसन्त ऋतु में त्रिवृत स्तोम और रथन्तर साम से और तेज पराक्रम से राजा या राष्ट्र में अन्न, बल, दीर्घ जीवन को धारण कराते और स्वयं धारण करते हैं ।

सायण के आधार पर मिश्र भाष्य—

त्रिवृत् सोम रथन्तर पृष्ठ से स्तुति को प्राप्त हुए वसन्त ऋतु सहित आठों वसु तेज के साथ आयु को स्थापन करते हैं ।

उपरोक्त भाष्यों से ज्ञात होगा कि वेद के सारगर्भित सूक्ति पर प्रकाश तो डाला गया है अवश्य, परन्तु सर्व साधारण के लिये उसका पूर्णतया समझना कठिन है । इन भाष्यों की भी विशद व्याख्या वांछनीय है क्योंकि वेद मंत्र में आये हुए पारिभाषिक शब्द इन भाष्यों में दोहरा दिये हैं । प्रत्येक शब्द पर विस्तार से विचार करने पर ही अनन्ता वै वेदाः का रहस्य खुल सकता है । इस कारण से ही वेद रूप देव काव्य मानव मस्तिष्क से परे की वस्तु बन गया है । ऋषि

दयानन्द ने जिस गुत्थी को सुलझाने का बीड़ा उठाया था और वेदाध्ययन एवं प्रचार का मुख्य भार आर्य समाज पर उत्तराधिकार रूप में पड़ा था उस पर अब तक बहुत कम ध्यान दिया गया है। आर्य समाज कई एक गौण विषयों में उलझ गया। नियम तीन का ध्यान नहीं रहा। ऋषि के बाद ७० वर्ष बीत गये परन्तु वेद का यथेष्ट उद्धार नहीं हो सका। वेद के प्रत्येक मंत्र पर व्याख्या रूप ग्रन्थ लिखे जाने चाहिएं तब जनता वेद को जान सकती है। उदाहरण रूप में उपरोक्त मंत्र हमारे सामने है। जो विद्वान इसे पढ़ कर भाष्यों को देखते हैं उन्हें प्रत्येक शब्द में एक विचारधारा मिलती है। अस्तु, चलिये, हम भी वसन्त का गुण गान इस मंत्र के आधार पर करें। यद्यपि यह केवल दुःसाहस ही है। हमारी धारणा है कि वेद का पूर्ण अनुवाद किसी मानवी भाषा में होना कठिन है। हां वेद का व्याख्यान या प्रवचन तो थोड़ा बहुत अधूरा हो सकता है। वेद तो देव काव्य है। उसकी रचना में, उसके शब्दों में तो मानो गागर में सागर भरा है। मानवी भाषा में सर्वार्थ सर्वाङ्गपूर्ण अभिप्राय कैसे व्यक्त हो सकता है?

जैसा कि ऊपर निर्दिष्ट है यह मंत्र यजुर्वेद का है। इसका ऋषि आत्रेय है और देवता लिंगोक्त। अर्थात् इस मंत्र के भावार्थ को साक्षात्कार करने वाले आत्रेय ऋषि हुए हैं और अब भी जो विद्वान इसे समझने का प्रयत्न करते हैं उनकी संज्ञा या उपाधि आत्रेय है। अद् धातु से अत्रि मुखरूप है। खाद्य पदार्थ सम्बन्धी ज्ञान इसमें निर्दिष्ट है। अत्रि रेसः वीर्य अथवा वाक् को भी कहते हैं। इस मंत्र का विषय देवता भी लिंगोक्त है अर्थात् इसमें ऋतु सम्बन्धी, सृष्टि रचना राष्ट्रवाद और शिक्षा परक कुछ मूल सिद्धान्त मुख्य रूप से झलकता है। मंत्रार्थके कुछ दृष्टिकोण यहां रखेजाते हैं।

ऋतु परक भावार्थ--

वसन्त ऋतु में दिव्य अष्ट वसु लोक त्रिवृत् अर्थात् प्रबल रूप में प्रकट होते हैं। निवास योग्य पृथिव्यादि लोकों में नवीन जागृति उत्पन्न होती है। रथन्तर अर्थात् उत्तरोत्तर प्रबलता को धारण करते हुए सूर्य के प्रकाश से हवि अर्थात् अन्नादि की खेती पकती है और इन्द्र अर्थात् प्राणिवर्ग से वय आयु और बल धारण किया जाता है। वसन्त में सूर्य ताप के प्रभाव से अन्नादि पकते, प्राणों में बल आता, मन प्रफुल्लित होता और बलदायक नवान्न होला आदि पौष्टिक अन्न और औषधियों के सेवन से वीर्य में बल आता है। इन्द्र सूर्य का अनुपम प्रभाव प्राणी एवं वनस्पति जगत् पर इस ऋतु में पड़ता हुआ दिखाई देता है। पृथिव्यादि सब प्राकृत देव, दैविक शक्तियां और लोक प्रफुल्लित हो उठते हैं। उनमें प्रकाश मोद और काम्यना बढ़ जाती है। जीवित त्रिदेव माता पिता आचार्य और विद्वान सभी प्रशंसित होने हैं। हमारे देव दैविक इन्द्रियां भी रंजित व प्रसन्न हो उठती हैं। सत्य यजादि व्रतों से दिव्य विद्वान विप्रों का आदर किया जाता है जिसके फल स्वरूप हमें ज्ञान का प्रकाश दान मिलता है और विश्व आनन्द विभोर हो जाता है। ऐसा प्रतीत होता है मानो विश्वपति के आनन्द सागर में हम गोता लगा रहे हैं। हमारे वसु अर्थात् त्रिवृत नामी प्राण अपान और व्यान भी प्रफुल्लित होते हैं। हमें त्रिवृत तीन प्रकार का सुख आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक अनुभव होता है। त्रिवृत त्रिताप शान्त होते हैं। तीनों प्रकार के शरीर (स्थूल, सूक्ष्म और कारण) में आनन्द की लहर त्रिवृत प्रबल रूप से दौड़ती है। त्रिदोष शयन हो जाते हैं। यजन याजन में मन आकृष्ट होता और यज्ञ के त्रिवृत रूप देव पूजा संगतिकरण और दान मे हम कृतार्थ होते हैं। वर्तमान समय के इस भूखे भारत में भी किसान और मजदूर

सभी समुदायों में वसन्त कालीन सहसा आनन्द उमड़ आता है। लहलहाते खेतों में श्रमजीवी स्त्री-पुरुष, आबाल वृद्ध गुनगुनाने लगते हैं। यह प्रकृति का सुखद प्रभाव है। आधा भूखा और नंगा व्यक्ति भी शान्ति की सांस लेता हुआ अपनी व्यथाएँ भूल जाता है। इसमें न तो अतिशयोक्ति है और न कवि की कल्पना। धन धान्य सम्पन्न प्राचीन भारत का तो क्या पूछना। आदर्श रूप वसन्तोत्सव का समय हमें पुनः भारत में लाना है। तभी स्वराज्य सुराज्य बनेगा। आर्थिक स्वतन्त्रता मिलने पर ही हम कह सकेंगे कि "हविरिन्द्रं वयो दधुः" अभी तो हवि अन्नादि की कमी और मंहगाई के मारे नाक में दम है। जो कुछ उपजता है सेठ साहूकारों के गोदामों और यदाकदा चोर बाजार में चला जाता है। हमारे नैतिक पतन की सीमा है। आत्रेय (खाद्य मन्त्री) क्या करे। भगवान् करे हमारे राष्ट्र में यजुर्वेद के शब्दों में 'आब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्' आदि की राष्ट्रीय व्यवस्था हो। यह वैदिक साम्यवाद रूसी विचारों से बहुत ऊंचा है। इसी से वसु लोक त्रिवित् प्रशंसित होंगे। प्रभु के प्रताप से हमारी वसुन्धरा धन धान्य से पूर्ण हो और हमारा प्राण बल बढ़े तथा हम दीर्घायु बनकर अपना जीवन स्तर देव तुल्य बनावें। अभी तो हम आसुरी सम्पत्ति में फंसे हुए मानव से दानव बन रहे हैं। वसन्त ऋतु की पुकार है कि सावधान हो जाओ।

सृष्टि की उत्पत्ति का भावार्थ

वसन्त नामी वसने योग्य सर्ग में प्राणियों का निवास युग वह है जब भगवान् की ऋतु शक्ति द्वारा पृथिवी आदि ८ वसु गण लोक तथा ३३ दिव्य पदार्थ प्रकट होते हैं। ये दिव्य वसु त्रिवृत् होते हैं और इनके तीन विभाग होते हैं अर्थात् पृथिवी अन्तरिक्ष और द्यौ जिनमें ग्यारह देव बसते हैं। इन ३३ देवों में त्रिगुण रूप होता है। यही इनका त्रिवृत् है। सत्व, रज और तम इन तीनों से आवृत और त्रिशक्ति (उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय रूप) में वे ओत प्रोत रहते हैं। प्रभु ने जितनी और जिस प्रकार की शक्ति जिस पदार्थ में निहित की है, वह उसी प्रकार और उसी सीमा तक क्रियाशील है। कोई परमाणु सर्वं रूप इस निर्धारित नियम का उल्लंघन नहीं कर सकता। ऋतु के आधीन अन्य सब सत्य नियम चल रहे हैं। यह भगवान की लीला है। अनादि रथन्तर चक्र घूम रहा है। कल्प, संवत्सर और महारात्रि के आरे चल रहे हैं। श्वेताश्वतर पुकारता है, "देवस्य एष महिमा तु लोके येनेदं भ्राम्यते ब्रह्मचक्रम्।" समस्त प्रकृति त्रिवृत् है और तीन रूप और त्रिकाल में बंधी है। प्रभु की ऋतशक्ति के आधार पर सत्य रूप भौतिक नियमों से परमाणु कल्प से प्रलय पर्यन्त अटल वृत्त में चल रहे हैं। वसन्त तो मानो इस संवत्सर चक्र का एक आरा है जो प्रतिवर्ष आता है और चला जाता है। विश्वपति विश्वात्मा विश्वनायक के इस प्रवाह से अनादि रथन्तर का कोई छोर नहीं है। चेतन सृष्टि में प्राण बल का यही स्रोत है। इसके तेज से जीवन आता है। प्राण शक्ति और अग्नितत्व का मिश्रण ही तो हमारे जीवन का आधार है। हविरिन्द्रं वयो दधुः का शाब्दिक चमत्कार देखें। अश्विनौ नामक युग्मशक्ति से जीवन मिल रहा है। हमारा प्राणवायु विश्वायु अनिल (कारणवायु) पर निर्भर है। इन्द्र जीवात्मा को आयु बल सब हवि अन्न से मिल रहे हैं। यह क्रम कल्पान्त पर विश्राम लेगा।

राष्ट्रपरक भावार्थ

वसन्त अर्थात् प्राणियों के दुःख से निवास करने योग्य समय आने पर मानव समाज में देव अर्थात् विद्वान और वसुगण (विभागों के अध्यक्ष) त्रिपुट तीन संघों में विभाजित होते हैं। धर्म

कर्तव्य विधान सभा, कार्यकारिणी समिति और न्याय विभाग स्तुत प्रकट होकर सामाजिक व्यवस्था बांधते है। पुनः रथन्तर अर्थात् सेनाबल अपने तेज पराक्रम और प्रभाव से राष्ट्र मे शान्ति धारण कराता है। इन्द्र राष्ट्रपति मे हवि खाद्य साधनो द्वारा राष्ट्रीय स्थिरता आती है। राज्य की शक्ति अपने साधनों पर निर्भर होती है। यह तभी संभव है जब राष्ट्र मे देव विशिष्ट विद्वान् अपने ज्ञान तप और विद्या के प्रकाश से निष्काम सत्य यज्ञ परोपकार की भावना रखते है और राज्य के अधिकारी वसु गण भी प्रजारंजक प्रजा को बसाने वाले सुखवर्षक होते है। यह भाव देव और वसु का है। जब राष्ट्रपति, अमात्य और सेनापति इनका त्रिपुट त्रिवृत बंधता है तभी पूर्ण शान्ति का राज्य स्थापित समझो। वेद ने ठीक ही कहा है

"यत्र ब्रह्म च क्षत्र च संम्य चो चरतः सह।
तं लोक पुण्यं प्रज्ञेय यत्र देवा सहाऽग्निना॥"

अर्थात् ब्रह्म शक्ति, क्षात्र शक्ति और निर्देशन शक्ति (देव) इन तीनो का पूर्ण सहयोग होने से राष्ट्र अनन्त होता है।

शिक्षा रक भावार्थ

प्राचीन वैदिक काल मे यह परिपाटी प्रचलित थी कि वसन्त ऋतु मे देव विद्वान आचार्य अपने गुरुकुल सस्थानों मे एकत्रित होते थे। सम्मेलन के दीक्षान्त समारोह मे वसु अर्थात् स्नातक ब्रह्मचारियो को त्रिवृत् उपाधियां वसु, रुद्र और आदित्य नामक वितीर्ण की जाती थी। यह क्रम अथवा पुरोगम त्रिवृत् तीन वेद के अध्ययन की योग्यतानुसार सम्पन्न होता था। इस प्रकार स्नातको की स्तुति प्रशंसा होती थी। ऐसे अवसरों पर बृहद् यज्ञ होता था जो त्रिवृत् कहलाता था। उसमे रथन्तर नामक साम गान के स्तोमं (त्रिऋचा समूह) गाये जाते थे। इस भव्य दिव्य साम गान मे रथन्तर होते थे अर्थात् यथाक्रम यथाविधि सम, बिलम्बित, द्रुत, उदात्त, अनुदात्त, स्वरित, मन्द्र मध्यम तार, स्वर, ताल, लय आदि शास्त्रीय शिक्षानुरूप होते थे। इस आध्यात्मिक, सात्विक उपासना योग से सभा का तेज शोभा बढ जाते थे। इसी अवसर पर इन्द्र राष्ट्रपति अपने इन्द्रासन को सुशोभित करता हुआ हवि रूप उपाधियां वितीर्ण करके स्नातको को मान्यता प्रदान किया करता था। यह अभिप्राय काल्पनिक नही है। उपरोक्त भाष्यों मे इस ओर स्पष्ट संकेत है। विचारके देखे। यह इतिहास का भी विषय नहीं है बल्कि ऐसा सिद्धान्त है जिस पर पहले भी आचरण हुआ और अब भी होता रहेगा। वेद तो सिद्धान्त ग्रन्थ है, इतिहास नहीं। उपरोक्त मन्त्र के अन्य दृष्टिकोण भी है जो मन्त्रद्रष्टा ऋषियो का काम है। वैसे उपनिषद् कार ने पाच प्रकार के वेदार्थ माने है। वसन्त की यह महिमा है जिसे वेद ने सुन्दरता से सार रूप वर्णन कर दिया।

चुने हुए फूल

—अपने आपको परमात्मा की सेवा मे व्यस्त रखने के अतिरिक्त मृत्यु के भय से निःशक होने का दूसरा उपाय नहीं है।

—अच्छे व्यक्ति सुख से मरते हैं और जिनके हृदय ग्रीष्म की धूल के समान सूखे होते है वे कष्ट से मरते हैं।

स्वर्गीय श्री भाई जयदेवसिंह जी एडवोकेट

(एक दुःखित आत्मा)

श्री जयदेवसिंह जी एडवोकेट हमारी आर्य प्रतिनिधि सभा यू० पी० के यशस्वी सचिव, मेरठ कालेज कमेटी के वर्चस्वी सदस्य तथा आर्य समाज मेरठ के कर्मठ कार्यकर्ता थे। श्री बा० कालीचरण मन्त्री सार्वदेशिक सभा ने युक्त प्रान्तीय मन्त्रित्व-पद का भार बड़ी सूझ बूझ के साथ एक योग्यतम व्यक्ति को सौंपा था। यह किसी को भी विदित न था कि इस भार को सम्भालने के कुछ काल बाद ही वे हमसे वियुक्त कर दिये जायेंगे। श्री जयदेवसिंह जी का जन्म मेरठ जिले के फलावदा नामक उपनगर में आज से ५२ वर्ष पूर्व हुआ था। आपके पिता श्री ईश्वरी प्रसाद विश्नोई वैश्यों में प्रतिष्ठित जमींदार थे। आसामियों को दुःख देना तो दूर रहा, वे सैकड़ों रुपया उधार देकर फिर तकाजा करना न जानते थे। मेरठ कालेज में बी० ए०, एल० एल० बी० परीक्षा उत्तीर्ण कर लेने के बाद जयदेवसिंह जी ने आर्य-समाज की सक्रिय सेवा आरम्भ कर दी थी। वे अपने कार्य नैपुण्य के कारण ही जिला उपसभा में मन्त्री पद पर वर्षों प्रतिष्ठित रहे थे। उनके प्रेम पूर्वक व्यवहार तथा अदम्य विचारों के कारण ही अपने विरोधियों के भी प्रशंसनीय थे। विवादास्पद विषयों को सुलझाने में उनकी प्रतिभा प्रसिद्ध थी। कठोर समालोचक होते हुए भी गुण-ग्राही, वकील होते हुए भी सत्यान्वेषी, निर्भीक होते हुए भी धर्मभीरु, वकालत करते हुए भी मितभाषी, कर्मठ होते हुए भी गम्भीर विचारशील नायक होते हुए भी गर्व रहित एवं स्मितभाषी थे। उनके निधन से वस्तुतः आर्यसमाज की बड़ी क्षति हुई है। हम कृतान्त की गुण-दोष विचार शून्यता पर जितना भी उपालम्भ दें, थोड़ा है।

सृजति तावदशेष गुणाकरं
पुरुषरत्नमलङ्करणं भुवः।
तदपि तत्क्षणभङ्गि करोति
चेद् इह कष्टमपण्डिता विधेः॥

हम इस महान् शोक में उनके लघुभ्राता श्री विजयसिंह जी से समवेदना प्रकट करते हैं तथा उस स्वर्गीय आत्मा की सद्गति के लिए प्रार्थना करते हैं। अधिक क्या—

सुहृद् वरेण्यो हृदये कृतेन,
यमप्रहारेण हतो हृदयः।
सदाचिसिंहःकृतिभिश्चसिंहः
मिहोरुसत्वो जयदेवसिंहः॥

मन्ये विना त्वां सुहृदं समासु
न कोऽपि सत्तर्क पटुः सभासु।
हीनंत्वयाऽऽत्मानमवैमि
शून्यम् सरस्सु यदवत् हिमपात दैन्यम्॥

शोक सन्तप्त—हरिदत्त शास्त्री

—हंसती हुई भूमि को चित्रित करने के लिये वसन्त फूलों का भंडार खोल देता है।
—परमात्मा को धन्यवाद है कि वसन्त ऋतु हम पर सदैव मनोहर प्रभाव डालती है और जीवन की पुस्तक का सुन्दरतम अध्याय खोल कर हमारे सामने प्रस्तुत कर देती है।

वर्तमान भयंकर परिस्थिति में
आर्य समाज का कर्त्तव्य
प्रत्येक आर्य नर-नारी के गम्भीर विचारार्थ

(लेखक—श्री ला० रामगोपाल जी शाल मर्चेंट, मन्त्री आर्य युवक संघ दिल्ली)

आज से ८० वर्ष पूर्व परतन्त्र भारत में महर्षि दयानन्द ने देश की चहुं मुखी दुर्दशा का अनुभव करने पर ही आर्य समाज की स्थापना की थी। यह वह समय था जब विदेशी प्रभुत्व के सन्मुख किसी को आह भरने की भी हिम्मत नहीं होती थी तब अकेले महर्षि ही थे जिन्होंने विदेशी सत्ताधीशों के सम्बन्ध में ललकारते हुए कहा था:—

"प्रजा पर पिता माता के समान कृपा न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।"

—सत्यार्थप्रकाश अष्टम समुल्लास

महर्षि द्वारा प्रदत्त भारतीयों के हृदय में स्वराज्य के इस मूल मन्त्र का परिणाम यह हुआ कि महर्षि के शिष्य श्री महादेव गोविन्द रानाडे के शिष्य श्री दादा भाई नौरोजी भारतीय कांग्रेस के पालक-पोषक हुए। यह वही कांग्रेस थी जिसके साथ—नहीं, नहीं अग्रसर होकर महर्षि के लाखों अनुयायियों और उनकी संस्थाओं ने देश की स्वतन्त्रता में महत्व पूर्ण भाग लिया। इस सत्य तथ्य को आज राज्यमद में मतवाले होकर कतिपय लोग चाहे न मानें, पर यह उतना ही सत्य है जितना दो और दो चार।

महर्षि के अनुयायी आर्य जनों ने राष्ट्रीय संग्राम में भाग लेकर किसी पर एहसान नहीं किया अपितु महर्षि के आदेशानुसार राष्ट्रीय कर्तव्य से प्रेरित होकर। राष्ट्रीय युद्ध लड़ने का मूल्य लेना आर्यों का न कभी ध्येय था और न आज है। परन्तु आज स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत भर के आर्यों के हृदय में एक बड़ी वेदना और बेचैनी अवश्य है। वह है देश में ईसाइयों का भयंकर षड्यन्त्र, वह है भारतीय संसद में आर्यत्व नाशक बिलों का निर्माण, वह है भोगवादी विश्व की चकाचौंध में भारतीयों का नैतिक पतन, वह है भारतीयों की आर्थिक गिरावट, वह है देश में डाकुओं, चोरों, लुटेरों, रिश्वतखोरों और ४२० में रंगे हुओं की भयंकर वृद्धि, वह है देश में शराब, मांस और गोवध का घातक प्रसार, वह है कला और संस्कृति के नाम पर भारतीय ललनाओं के अर्ध नग्न नृत्यों के घिनौने प्रदर्शन।

आज से ८० वर्ष पहले महर्षि दयानन्द ने आर्य जाति को चेतावनी दी थी कि :—

"देखो! तुम्हारे सामने पाखण्ड मत बढ़ते जाते हैं, ईसाई मुसलमान तक होते जाते हैं। तनिक भी तुमसे अपने घर की रक्षा और दूसरों को मिलाना नहीं बन सकता। बने तो तब जब तुम करना चाहो।"

महर्षि की उक्त चेतावनी पर आज भारत का प्रत्येक आर्य तथा भारतीयता का सच्चा हितचिन्तक प्रत्येक मानव, यह अनुभव कर रहा है कि यदि हमने महर्षि की उक्त चेतावनी पर ८० वर्ष पूर्व ही आचरण किया होता तो भारत माता के टुकड़े २ होने की अवस्था ही उत्पन्न न होती। आज यह तो हुआ ही परन्तु अब भारत और भारतीयों को

हड़प करने के लिये ईसाइयों द्वारा देश भर में भयंकर जाल बिछा दिये गये तथा बिछाये जा रहे हैं। हमारे राज्य की धर्म निरपेक्षता की आड़ में ईसाइयों को आर्यत्व अर्थात भारतीयता के खून में हाथ रंगने का सुअवसर अभी ही मिला है। जो अंग्रेजी राज के सर्वेसर्वा सन् १८५७ के पश्चात् भारतीयता विरोधी काम करने में कुछ संकोच करने लगे थे जिनकी आंखें उस भयंकर कांड को देखकर खुल चुकी थी, वे गोरी चमड़ी वाले और उनके काले चेला चेली आज धर्म निरपेक्षता की आड़ में भारत के अन्दर और दरवाजों पर अपने भयंकर अड्डे जमाने में विदेशों का अरबों रुपया बहा रहे हैं। दिन रात अनथक परिश्रम करके भारत की भोली भाली अपढ़ निर्धन जनता की दयनीय दशा से लाभ उठा कर उन्हें विदेशी दासता की जंजीरों में जकड़ने का पुनः प्रयास कर रहे हैं।

ऐसी भयंकर अवस्था में भारत के प्रत्येक आर्य के हृदय में वेदना पूर्ण जख्म हो गये हैं। आर्यों के इन जख्मों में उस समय बड़ी दर्द होती है जिस समय कुछ अदूरदर्शी नेता राष्ट्रीयता का धुंधला सा चोला पहन कर इन विदेशी मिशनरियों की कुचालों को सेवा कह कर उनकी मुक्त कठ से प्रशंसा करते नहीं अघाते। इन चापलूस नेताओं के मुखसे पादरियों की अनधिकृत प्रशंसा करना भारत माता के कटे जख्मों पर नमक छिड़कना ही तो है।

महर्षि का उत्तराधिकारी आर्य समाज ८० वर्षों से अनेक संघर्षों में से गुजरता हुआ आज भी जीवित है। भारत की विभिन्न संस्थाओं में आर्य समाज आज भी सूय के समान है, परन्तु आज ऐसा लगता है कि आर्य समाज ने जिन मुसलमानों को झंझोड़ा, ईसाइयों को झटके दिये, उनमें जागृति आ गई, वे चैतन्य हो गये। परन्तु जगाने वाला आर्य समाज स्वयं ही प्रसुप्त हो गया। भारतीय गुलामी की जंजीरों को काटने के लिए आर्यसमाज ने हथोड़े का काम दिया और आर्यों ने लुहार का, परन्तु जैसे लुहार किसी की जंजीर काट कर औजारों सहित घर लौट जाता है, ठीक उसी प्रकार आर्य समाज ने भारतीय परतन्त्रता की जंजीरो के तो टुकड़े २ कर दिये, परन्तु यह भूल गये कि महर्षि दयानन्द ने चक्रवर्ती आर्य साम्राज्य के निर्माण के लिए भी आर्यों को प्रेरणा दी थी। पता नहीं चलता कि आर्य समाज में अब राजधर्म के प्रति क्यों वैराग्य उत्पन्न हो रहा है।

आज आर्य समाज का प्रत्येक सदस्य व्यक्तिगत रूप से अनुभव कर रहा है कि यदि हम राजधर्म से ऐसे ही उदासीन रहे तो जिस प्रकार हमें पहले मुस्लिम और ईसाइयत की गुलामी भोगनी पड़ी थी, उसी प्रकार स्वतन्त्र होने पर भी कहीं अवैदिक, रूसी या अमरीकी विचारों की गुलामी में न फंस जांय यह प्रश्न है जो आज प्रत्येक आर्य के मस्तिष्क में घूम रहा है।

कहने को तो आज हमारा राज्य है, संसद हमारी है, भारी बहुमत में हम हैं, हमारे झंडे में अशोक चक्र, हमारा राष्ट्रीय वाक्य "सत्यमेव जयते" है, परन्तु व्यवहार में हम पूर्णतया विपरीत जा रहे हैं। हमारी संसद में आर्य जाति पर मुस्लिम नमूने का तलाक थोप दिया गया मुस्लिम शरियत उत्तराधिकार बिल हमारे सर पर (संसद) सवार है, जिन दलितों को हम ८० वर्षों से अपनों से संघर्ष करके सफलता पूर्वक ब्राह्मण क्षत्रिय वर्णों में मिला रहे थे, हमारी संसद ने एक कानून बना कर उन्हें हम से अलग खड़ा कर दिया अर्थात् हमारी ८० वर्ष की मेहनत पर पानी फेर दिया। हमने ८० वर्ष से देश भर में मद्य मांस के विरुद्ध घोर संघर्ष किया और उसमें सफलता भी मिली थी, परन्तु आज खाद्य स्वास्थ्य और पौष्टिक तत्त्व के नाम पर हमारी ही सरकार ने मांस भक्षण को महान् प्रोत्साहन देकर भारतीय

* ईसाई धर्म प्रचार निरोध आन्दोलन *

श्री जेठा भाई का धर्म्म परिवर्तन विषयक विधेयक

(श्री पुरुषोत्तम दास टंडन का भाषण)

राजर्षि श्री टंडन जी ने उपर्युक्त विधेयक पर निम्नलिखित भाषण लोक सभा में दिया: —

उपाध्यक्ष महोदय, अभी जो भाषण हुए उन को सुन कर मेरे हृदय में यह भावना है कि जो विधेयक हमारे सामने उपस्थित किया गया है, उस के पीछे बहुत अच्छे कारण हैं। इस पर हमारे उपमन्त्री जी जो यहाँ उपस्थित हैं, क्या करेंगे यह तो मैं नहीं जानता, लेकिन उन से, उनकी गवर्नमेन्ट से तथा यहां के सदस्यों से मेरा यह कथन है कि जो कारण बताये गये हैं, उन कारणों के अतिरिक्त हम सबों को भी अनुभव इन मिश्नरी पादरियों का है। उन सब बातों को जानते हुए, उनका अनुभव करते हुए, यह उचित है कि हम इस प्रकार से अपने देश के लोगों को दूसरे देश के लोगों द्वारा दूसरे धर्मों में जाने से बचावें।

यह ठीक है कि हमारे संविधान में इस बात की छूट है जो पुरुष या नारी किसी दूसरे धर्म में जाना चाहें वह जा सकें। दूसरे धर्म के लोगों को अपने धर्म के प्रचार का भी अवसर हमारे यहाँ दिया गया है। साथ ही संविधान का यह भी अभिप्राय है कि जहां हमें यह दिखाई पड़े कि इस धर्म-परिवर्तन के पीछे छल कपट है, उसे हम रोक सकते हैं। किसी गवर्नमेन्ट को जिसमें नैतिकता का आदर है, जो डरपोक नहीं है, किसी दूसरे देश से डरती नहीं है, इस प्रकार की अनुचित बातें सहन नहीं करनी चाहियें। हमें इस विषय के भीतर घुस कर जो ऐसे खराब मार्ग हैं लोगों के धर्म-परिवर्तन कराने के लिये उनको

खान-पान पर भयंकर कुठाराघात कर दिया। हाँ इससे मुसलमानों और ईसाइयों को भारी प्रोत्साहन मिला है। प्रत्येक भारतीय और विशेषतया आर्य समाजी यह भी अनुभव करते हैं कि राष्ट्रीयता की दुहाई देने के इस युग में वर्ग संघर्ष, प्रान्तीयता का भूत भाषाओं पर युद्ध और बात की बात में तोड़-फोड़ द्वारा राष्ट्रीय क्षति करने का भयंकर प्रचार हुआ है जो आज से ४० वर्ष पूर्व, जब कि आर्य समाज का प्रचार जोरों पर था देश में नाम मात्र को भी नहीं था। इत्यादि।

आर्य बन्धुओ! यह तथा इसी प्रकार की अनेक घटनाएं प्रति दिन घट रही हैं। अब हमें अपनी कुम्भकर्णी निद्रा को भंग कर अपने कर्तव्य कर्म पर विचार करना होगा। इस सारी परिस्थिति पर विचार करने तथा कार्यक्रम बनाने के लिए अनेक उत्साही कर्मठ और विचार शील आर्य सज्जनों ने दिल्ली में आर्य युवक संघ को पुनः प्रतिष्ठित किया है। आप से अत्यन्त विनम्र तथा सानुरोध प्रार्थना है कि आप आज की दशा के सम्बन्ध में अपने और हमारे इन विचारों के प्रति जो भी विचार समझें हमें सूचित करें।

हमारी प्रबल इच्छा है कि हम शीघ्र ही देश भर के ऐसे आर्य पुरुषों का एक संगठन संगठित करें जो "मनसा वाचा कर्मणा" भारतीय राष्ट्र को महर्षि दयानन्द के प्रकाश में प्रकाशित करने के प्राणपण से जुट जायें। हमें पूर्ण विश्वास है कि आप हमारी प्रार्थना पर अवश्यमेव और अविलम्ब ध्यान देकर आज ही अपने सुझाव भेजेंगे।

रोकना है। डा० एल्विन ने जो बातें कई वर्ष पहले अनुभव से लिखी थीं, उनको हम लोग पहले भी कुछ पढ़ चुके हैं और इधर भी हम सदस्यों को एक पुस्तिका बांटी गई है, जिसको देखने का मुझे अवसर मिला। यह बहुत भयानक है, बहुत डरावनी है। डा० एल्विन का जो अपना अनुभव है इन मिश्नरियों के बारे में, उससे यह प्रकट है कि यह लोग जो काम करते हैं, उन में से कुछ अच्छे लोग भी हैं सज्जन भी हैं, लेकिन उन में बहुत लोग ऐसे हैं जो ईसाई बनाने के लिये छल कपट का सहारा लेते हैं।

अभी हमारे एक भाई ने कहा कि वे आदिवासी हैं, आदिवासियों में ईसाई मिश्नरी किस तरह से काम कर रहे हैं, यह उन्होंने बताया। अपने को स्वामी बताना जैसा उन्होंने कहा कि यह स्वामी बन कर जाते हैं, इसका क्या अर्थ है? मैंने पहले देखा था कि एक दूसरी संस्था के लोग थे, सैल्वेशन आर्मी के लोग, वह भी साधु का वेश रख कर जाते थे, जैसे हमारे यहाँ साधु संन्यासी हुआ करते हैं, उसी प्रकार वह भी गाँव गाँव का दौरा करते थे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह यह सब काम सेवा के रूप में करते हैं। ऐसी २ जगहों पर पहुँचते हैं जहां हमारे आदमियों का जाना कठिन होता है। वह लोग शिक्षा भी देते हैं। हम लोगों ने सुना कि किस प्रकार से वह पैसा बांटते हैं। लेकिन इस सब का असली तात्पर्य यह होता है कि वह किसी तरह से लोगों को ईसाई बना सकें। डा० एल्विन ने अपने वक्तव्य में बहुत बल के साथ कहा है कि यहां यह ईसाई जो बातें कर रहे हैं वह दूसरे देशों में बाहर के लोग नहीं कर पाते। उन्होंने हालैण्ड की मिसाल दी और बताया कि यहाँ डच मिश्नरीज बहुत फैल रहे हैं और घुसे हुये काम कर रहे हैं। वे स्वयं हालैंड में वह बातें नहीं कर सकते जो यहां करते हैं। यह छल कपट का रास्ता हमें बन्द करना है। डा० एल्विन ने अपना वक्तव्य शायद सन् १६४४ या ४५ में लिखा था, मुझे ठीक याद नहीं है। उस समय उन्होंने विश्वास प्रगट किया था कि जब इस देश की अपनी गवर्नमेंट आवेगी तब वह इन चीज़ों को रोकेगी और जो बातें आज हो रही हैं उनकी अनुमति कभी नहीं देगी। आज मुझे ऐसा लगता है कि इन पादरियों के काम में हमारी स्वतन्त्रता के आने के बाद भी छल कपट बन्द नहीं हुआ और ईसाई होने वालों की संख्या बढ़ती जाती है।

इसका यह कारण नहीं है कि जनता में कोई धर्म परिवर्तन की लालसा बढ़ती जाती है। असल बात यह है कि ये मिश्नरी इन लोगों की गरीबी का बहुत बड़ा फायदा उठा रहे हैं। हमारा देश गरीब है, आदिवासी भी गरीब हैं और हरिजन भी गरीब हैं। इन आदिवासियों और हरिजनों की गरीबी का यह लोग बेजा फायदा उठाते हैं। अभी जो भाई जेठालाल जी ने पढ़ा, वह मैंने सुना। उन्होंने बतलाया कि उत्तर प्रदेश में जो चमारों की ५ लाख संख्या है, उस पर इन मिशनरियों की निगाह लगी हुई है। वे समझते हैं कि ये हरिजन उनकी खुराक हैं। जेठा लाल जी ने और भी समूहों के नाम गिनाये हैं जिन पर इन की निगाह है और जिनके बारे में इनकी मान्यता है कि ये गरीब हैं। हिन्दू धर्म इनको अच्छी तरह अपनाता नहीं है, तो हम ही क्यों न इनको घसीट कर ले आवें और ईसाई बनावें। मेरा कहना है कि हमें इस बात को रोकना है। हमने हिम्मत करके यह फैसला किया है कि हम अछूतपन बन्द करेंगे और उसका परिणाम यह हुआ कि आज हमारे देश में अछूतपन बन्द हो गया। यह ठीक है कि यह नियम द्वारा बन्द किया गया है और अभी भी कहीं २ देहातों में कुछ बना हुआ है। इसका कारण यही है कि यह बहुत पुरानी प्रथा है, एकदम से नहीं जा सकती। लेकिन अब

हमारी सरकार का कर्तव्य है कि वह इस तरह के छल कपट से लोगों का धर्म-परिवर्तन न होने दे। इसमें कोई संकुचित धार्मिक भावना की बात नहीं है, इसका बहुत गहरा राजनीतिक प्रभाव पड़ता है, यह नहीं भूलना चाहिये। डा० एल्विन ने स्वयं इस बात पर बल दिया है कि जिनका इस प्रकार से धर्म परिवर्तन किया जाता है उन पर दूसरे प्रकार के राजनीतिक असर पड़ते हैं और देश में नये नये प्रकार के अल्पसख्यक समूह बन जाते हैं जो भिन्न २ प्रकार के अधिकारों की मांग करते हैं।

जो हमारे यहां ईसाई भाई हैं, हम उनका आदर करते हैं और जो दूसरे धर्म वाले हैं उन का भी हम आदर करते हैं। हमारा देश तो इस विषय में सदा से उदार रहा है। यह खाली सनातनधर्मियों का ही देश नहीं है। यहां सब धर्मों के लोग हैं। हमारे यहां प्राचीन समय से लोग अलग अलग मतों के अनुसार चलते रहे हैं। परन्तु यह उनका स्वतन्त्र मत होता था, वे लोग स्वतन्त्रता के साथ इन मतों के अनुसार चलते थे। हमारा तो यह कथन रहा है : "नास्ति मुनिर्यस्य मतिर्न भिन्ना"। यह हमारी दुर्बलता का एक कारण भी हो सकता है, लेकिन यह हमारा बड़प्पन भी बतलाता है कि इस बारे में हमने कोई रोक थाम नहीं की। मुनियों में भी आपस में मतभेद रहा है। स्मृतियों में भी भेद रहा है। इस प्रकार हमारे यहां परिवर्तन होते रहे हैं। लेकिन अपनी संख्या बढ़ाने के लिये, धोखाधड़ी से लोगों का धर्म-परिवर्तन किया जाय और उनको हमारे देश की संस्कृति से अलग कर दिया जाय यह बहुत ही भयानक है और इसका एक राजनीतिक पहलू भी है। यह केवल सामाजिक प्रश्न नहीं है। इस लिये हमको यह उचित लगता है कि इस ओर हमारी सरकार ध्यान दे। यदि इस बिल में हमारे मन्त्रियों को कुछ बदलने की आवश्यकता प्रतीत हो तो वे इसमें संशोधन कर सकते हैं। मुझको तो यह बिल सादा लगता है। अगर सरकार जरूरत समझे तो कुछ परिवर्तन कर ले।

इस बिल में यह कहा गया है कि यदि कोई अपना धर्म परिवर्तन करना चाहे तो पहले वहाँ के अधिकारी को इसकी सूचना दे दे। अगर वह सचमुच धर्म-परिवर्तन करना चाहता है तो उसके लिये इस बिल में कोई रोक नहीं है। हां, जो लोग छिपा कर काम करने वाले हैं उनको यह बात पसन्द नहीं आयेगी। नहीं तो इसमें तो यह सीधी सी बात है कि जो धर्म-परिवर्तन करना चाहे वह पहले से उसकी सूचना दे दे, और जो आदमी धर्म-परिवर्तन कराने में हिस्सा लेना चाहता है, चाहे वह पादरी हो या कोई दूसरा हो, जो इस काम में मदद करना चाहता है कोई किताब पढ़ा कर या कोई रस्म करा के, उसको पहले ऐसा कराने की अनुमति लेनी होगी। उस को इस बात के लिये आज्ञा लेनी होगी कि वह धर्म-परिवर्तन कराने में भाग ले। तो मुझे ऐसा नहीं लगता कि इस बिल में कोई आपत्तिजनक बात हो।

ये पादरी लोग सब पैसे वाले हैं। विलायत से, अमरीका से और दूसरे देशों से इनके पास पैसा आता है। ये लोग इस पैसे का यह उपयोग करते हैं कि हमारे गरीब भाइयों को बहका कर उनका धर्म परिवर्तन करा लेते हैं। ये लोग इन गरीब लोगों को कुछ धन का फायदा करा देते हैं या पैसा दे देते हैं और इनका धर्म-परिवर्तन करा लेते हैं। डा० एल्विन ने भी यह लिखा है कि ये लोग उनको कर्जे देते हैं और थोड़ी थोड़ी सुविधा देकर धीरे २ इनको ईसाई बना लेते हैं। हमको यह बर्दाश्त नहीं करना चाहिये कि कोई आदमी आवे और पैसे का लोभ देकर हमारे यहां के आदमियों का धर्म-परिवर्तन कर दे। हमारी गव-

महिला जगत

पातिव्रत्य धर्म्म का एक महान् तत्त्व

THE LAW OF TELEGONY

[ले०—श्री आचार्य श्रीराम जी]

प्रश्न यह है कि हमारे दूरदृष्टि सम्पन्न गम्भीर विचारक ऋषियों ने पातिव्रत्य को ही नारी जीवन का ध्रुव तारा क्यों बतलाया ?

पाश्चात्य समाज शास्त्रियों ने इस विषय पर संशोधन की दृष्टि से बहुत सोच विचार किया। इस संशोधन में Law of Telegony का तत्त्व पाया गया है। उसी से पातिव्रत्य धर्म्म का स्पष्टीकरण बहुत अच्छी तरह मिल जाता है।

ला आफ टेलीगौनी का ऐसा रूप है—

Woman is the medium of pro-

र्नमेंट को इस विषय में सचेत होने की आवश्यकता है। मैं समझता हूँ कि यह बिल जो उस के सामने पेश है, बहुत उचित है। उसकी बातें बहुत सीधी सी हैं। उसमें केवल दो तीन बातें ही हैं। एक यह कि जो धर्म-परिवर्तन कराना चाहे वह पहले इसकी सूचना अधिकारी को दे दे। दूसरी यह कि धर्म-परिवर्तन कराने वाला अधिकारी व्यक्ति हो, अर्थात् राज्य के किसी अधिकारी से उसको यह अधिकार मिला हो कि वह यह काम कर सकता है। तीसरी यह कि जिनका धर्म-परिवर्तन होता है उनका एक रजिस्टर रखा जाय। यही तीन बातें इस बिल में मुख्य हैं। मैं नहीं समझता कि इन में कोई ऐसी बात है जिस को अनुचित कहा जा सके। यह सब संविधान के भीतर है। संविधान उनको सुविधा देता है।

Shri Kanavade Patil (Ahmednagar North): There is no need for conversion now-a-days in India.

श्री टंडन : आप कहते हैं कि धर्म-परिवर्तन करने की अब कोई आवश्यकता नहीं है। यह प्रश्न तो किसी व्यक्ति के धर्म का है जिसका हम और आप फैसला नहीं कर सकते। अगर किसी को ऐसा लगता हो कि उसे ईसाई बनना चाहिये, तो आपका यह कहना पर्याप्त नहीं होगा कि इस की आवश्यकता नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि आप मेरी हिन्दी समझते हैं। मैं तो आपकी अंग्रेजी समझ गया। आपने मुझे अंग्रेजी भाषा में यह समझाया है कि अब धर्म-परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है, लेकिन इस से कोई प्रश्न हल नहीं होगा। हमने इस विषय में अपने संविधान में छूट दे दी है। अगर आप हिन्दू से ईसाई होना चाहें तो हो सकते हैं, लेकिन हम इस बात की रोक कर सकते हैं कि आपको कोई छल कपट से, धोखा देकर ईसाई न बनावे।

यह नियम सब के लिये लागू है। केवल ईसाइयों के लिये ही नहीं है। अगर कोई हिन्दू किसी ईसाई को हिन्दू बनाना चाहेगा, तो उस पर भी यह नियम लागू होगा। अगर हमारा कोई हिन्दू धर्म का प्रचार करने वाला जायेगा तो उस पर भी यह नियम लागू होगा, यह कोई ईसाइयों के लिये ही नहीं है। कोई धोखाधड़ी नहीं होने दी जायेगी। जिसको हिन्दू होना होगा वह डंके की चोट हिन्दू होगा। वह कहेगा कि मुझे हिन्दू धर्म स्वीकार है, इस लिये मैं हिन्दू होना चाहता हूँ। इसी प्रकार जो ईसाई होना चाहेगा, वह डंके की चोट ईसाई हो सकेगा। यह आवश्यकता का प्रश्न नहीं है, यह तो अपने अपने मत की बात है। हमारे देश में सदा मत की स्वतन्त्रता रही है लेकिन हम छल कपट नहीं होने देंगे। छल कपट से छोटे छोटे बच्चों तक को यहां ईसाई बनाया जाता रहा है। मुझे आशा है कि हमारे उपमन्त्री जी इस पर ध्यान देंगे और गवर्नमेंट इस पर ध्यान देगी।

बस मुझे इतना ही कहना है।

* बाल जगत् *

विश्वासी विद्यार्थी बालक

पाठशाला में गुरु जी लड़कों को बतला रहे थे भगवान् सर्वव्यापक है। जमीन, आसमान, पृथ्वी, पाताल, जल, थल, घर, जंगल, पेड़, पत्थर, सुबह, शाम, रात, दिन ऐसा कोई भी स्थान और समय नहीं है जिसमें भगवान् न हों। वे बाहर भीतर की सब बातें सभी समय देखते सुनते रहते हैं। उनसे छिपा कर कोई कभी कुछ भी नहीं कर सकता। सुनने वाले विद्यार्थियों पर गुरु जी के उपदेश का बड़ा प्रभाव पड़ा। विद्यार्थियों में एक किसान का भी लड़का था। पाठशाला से लौट कर जब वह घर आया तब उसके पिता ने कहा, चलो एक काम करना है। लड़का पिता के साथ हो लिया। किसान उसे किसी दूसरे किसान के खेत में ले गया और बोला, बेटा देख, इस समय यहां कोई देखता नहीं है। अपनी गाय के लिये मैं खेत से थोड़ी घास काट लाता हूं। ज्यादा होगी तो बेच लेंगे। तू देखता रह, कोई आ न जाय।

लड़का बैठ गया, परन्तु सोचने लगा, क्या पिता जी इस बात को नहीं जानते कि भगवान सब समय, सब जगह, सभी बातों को देखते रहते हैं। किसान घास काटने लगा। उसने कहा, पिता जी, आपके और मेरे सिवा यहां कोई आदमी तो नहीं है जो हमारे काम को देखे लेकिन पिता जी मेरे गुरु जी ने बतलाया था कि ऊपर नीचे, बाहर, भीतर, जल, थल में भगवान व्यापक है और वह सब समय सबकी बातें देखता रहता है। कोई कितना भी एकान्त में करे उससे छिपा कर किसी काम को कर ही नहीं सकता। हम लोग जो यह चोरी करते हैं इसे भी भगवान् तो देखता ही है। बच्चे के मुंह से यह बात सुन कर किसान कॉप गया। उसके हाथ से हंसिया गिर पड़ा और वह काटी हुई घास वहीं छोड़कर बच्चे के साथ घर लौट आया। उस दिन से उसने चोरी करना छोड़ दिया।

— —

---

geny. Man disperses and woman absorbs. Woman's organism is permanently affected by man's connection, as she is innoculated by his seed."

निसर्ग की रचना में नारी संतति का माध्यम है और उसकी देह रचना फोटो की नेगेटिव की कांच के समान है। उसकी देह पर एक ही पुरुष सम्बन्ध से स्थायी नियत परिणाम हो जाता है। इंग्लैंड की रायल सोसाइटी के कार्यालय में इस तत्त्व के फल स्वरूप काफी प्रयोग लिखे हैं। Law of Telegony की स्पष्टता के लिये उनमें से एक नीचे दिया जाता है—

प्राणि संग्रहालय में यह प्रयोग देखा गया। एक अरबी घोड़ी के साथ एक मेवा के सदृश क्वागा का प्रथम समागम कराया गया पर इससे घोड़ी को कोई सन्तान नहीं हुई। कुछ महीनों के बाद इसी अरबी घोड़ी के साथ उसी की जाति के अरबी नर का सम्बन्ध कराया गया। इस दूसरे सम्बन्ध से जो सन्तान पैदा हुई उस पर क्वागा के बहुत से लक्षण और चिन्ह दिखाई पड़े। क्वागा के पूर्वोक्त प्रथम समागम के स्थायी नियत परिणाम घोड़ी की देह पर हो गये थे, यह उसी का फल था।

नारी के लिये आमरणान्त एक ही पति का विधान करने वाले हमारी संस्कृति के महान ऋषियों ने इस तत्त्व को अपनी दिव्य दृष्टि से देखा था और विशुद्ध विमल सन्तान के लिये नारी धर्म्म की इमारत इसीलिये पातिव्रत्य धर्म की नींव पर उन्होंने रची थी। यह सारा प्रयत्न मुख्यतया शुद्ध सन्तान के लिये था। शुद्ध सन्तान नारी जाति की समाज को सर्वोत्तम देन है। आज भी शुद्ध वंश के लिये पातिव्रत्य की समाज शास्त्र और धर्म शास्त्र की दृष्टि से बड़ी आवश्यकता है। नारी जाति का सम्मान और सुख सर्वस्व इसी में समाया है।

विचार विमर्श

आर्य विद्वानों की सेवा में एक जिज्ञासु की जिज्ञासा

(श्री प्रेमचन्द्र शास्त्री, आर्यसमाज दीवानहाल, दिल्ली)

'संस्कारविधि' के कई प्रकरणों के सम्बन्ध में मेरी चिरकाल से निम्न जिज्ञासाएँ बनी हुई हैं। मैंने कई वार अनेक आर्य विद्वानों के समक्ष इन्हें प्रस्तुत भी किया, किन्तु मुझे कुछ सन्तोष नहीं हुआ और मेरी जिज्ञासा अभी तक वैसी ही बनी हुई है। आशा है ये पंक्तियां विद्वानों के दृष्टिगोचर होंगी और वे मुझे इनका उत्तर समझा देंगे। मैं बहुत कृतज्ञ होऊंगा।

१—शान्ति प्रकरणम्

शान्ति प्रकरण के अन्त में "ओ३म् अभयं मित्रादभयममित्राद्०" मन्त्र आता है। इस मन्त्र को विभिन्न स्थलों और विभिन्न संस्करणों में देखने पर इसमें कभी तो "पुरोयः" दिखाई देता है और कभी "परोक्षात"। इस पाठभेद का क्या कारण है ?

२—पात्र लक्षणानि

सामान्य प्रकरण में जहाँ महर्षि ने यज्ञ पात्रों के लक्षण लिखे हैं, वहां अन्तिम भाग में पात्रों के पश्चात् ऋत्विक् के वरण करने का वर्णन किया है। उसमें "ऋत्विग्वरणार्थं" से लेकर "वरार्थ चतस्रो गावः" तक के भाग का अर्थ जानना चाहता हूँ। समझाने की कृपा करें।

३—निष्क्रमण संस्कार

इस संस्कार में 'त्वं जीव शरदः शतं वर्धमानः' इस वचन से बालक को आशीर्वाद देने का विधान है और तत्पश्चात् महर्षि ने लिखा है कि— तत्पश्चात् बालक के माता और पिता संस्कार में आये हुए स्त्रियों और पुरुषों का यथायोग्य सत्कार करके विदा करें।" मेरी सम्मति में बालक को आशीर्वाद देने और अतिथियों को विदा करने के पश्चात् संस्कार का कोई भी कार्य शेष नहीं रहना चाहिये। किन्तु इस संस्कार में विदा करने के पश्चात् रात्रि के समय जब चन्द्रमा प्रकाशमान हो उस समय चन्द्रमा की ओर मुख करके माता और पिता द्वारा ओं यददश्चन्द्रमसि० मन्त्र से पृथ्वी पर जल छोड़ने का विधान है। क्या यह आवश्यक है, यदि आवश्यक है तो इससे लाभ क्या है, और फिर क्या यह विधि पौराणिकों द्वारा चन्द्रमा और सूर्य पर चल चढ़ाने के समान नहीं है ?

४—कर्णवेध संस्कार

मैं यह जानना चाहता हूं कि कर्णवेध से अभिप्राय केवल कर्ण के वेध का है या नासिका का भी ? यदि नासिका का भी अभिप्राय है तो इस संस्कार में नासिका का स्पष्ट वर्णन क्यों नहीं है जैसा कि कर्ण का ? यदि केवल कर्ण के वेध का ही अभिप्राय है तो "भद्रं कर्णेभिः०" मन्त्र के नीचे नासिका शब्द कहां से आ गया ?

आशा है विद्वज्जन इन पर विस्तृत प्रकाश डालने की कृपा करेंगे।

———

स्वाध्याय का पृष्ठ

जगत् मिथ्या नहीं है

जब जीव और शिव (ब्रह्म) एक ही हैं तो किसकी भक्ति किसे करनी चाहिये। किसी जीव को दुःख भी क्यों हो ? ऋग्वेद में **'द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया'** अर्थात जीव और ब्रह्म भिन्न हैं ऐसा स्पष्ट उल्लेख है। यदि जगत मिथ्या है तो कहने वाले सुनने वाले और उनका उपदेश भी मिथ्या ठहरा ? भूतकाल के ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि पूर्वकाल मे जगत् था। वर्तमान काल में प्रत्यक्ष प्रतीत होता है। संसार असार है, जगत मिथ्या है ऐसे निराशा जनक तत्व वेद में नहीं हैं। यह शरीर केवल हाड़ मांस और चाम का पिंजर नहीं है। संसार असार नहीं है परन्तु सारयुक्त ही है। सार मोक्ष है। शरीर उसे प्राप्त करने का साधन है। संसार कार्य क्षेत्र है। इसमें रह कर सार—अभ्युदय—मोक्ष साधन ही कर्तव्य है। तभी तो वेदों में **'कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतः समाः'** अर्थात् कर्म करते हुए सौ वर्ष पर्यन्त जीवित रहो। और 'न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवा' (ऋग्वेद ४-३३-११) बिना परिश्रम किये देव मित्रता नहीं करते। अर्थात् पुरुषार्थ करने वाले ही की देव सहायता करते हैं। इस प्रकार के स्पष्ट उल्लेख हैं। इन पर विचार करने से ज्ञात होता है कि शरीर और संसार मिथ्या नहीं हैं परन्तु मोक्ष सिद्धि के क्षेत्र और साधन हैं।

(भारत का धार्मिक इतिहास पृ० १७८)

आदि सृष्टि स्थल

सृष्टि के आदि उत्पत्ति के स्थान के विषय में बड़ा मतभेद है। बाल गंगाधर तिलक उत्तर ध्रुव के पास बतलाते हैं। बंगाल के सुप्रसिद्ध पंडित उमेशचन्द्र विद्यारत्न मंगोलिया कहते हैं। इतिहासकार हंटर कास्पियन समुद्र के पास मानते हैं। मनुस्मृति में कुरुक्षेत्र बतलाया है। विलासपुर के वी० सी० मजूमदार कहते हैं कि आर्य लोग कहीं बाहर से न आये थे परन्तु यहीं के आदि निवासी थे। अध्यापक मेकडानल्ड का भी ऐसा ही मत है। सर विलियम जोन्स और सर वाल्टर रेले भी आर्यावर्त्त ही बतलाते हैं। यज्ञेश्वर शास्त्री ने आर्य विद्या सुधाकर में आर्यावर्त्त ही आर्यों का आदि उत्पत्ति स्थान सिद्ध किया है। मिश्रदेशस्थ दरियल बाहरी में हासतोप की समाधि और मन्दिर की दीवारों पर अंकित लेखों से ज्ञात होता है कि वे जिस पवित्र भूमि से मिश्र देश में आ बसे थे वह पवित्र भूमि आर्यावर्त्त ही है। डा० अलेक्जैण्डर डेलमार कहते हैं कि कोलम्बस ने जब अमेरिका का स्वप्न देखा उसके बहुत पहले हिन्दुओं ने उसे खोज कर वहां उपनिवेश की स्थापना कर निवास किया था। मि० काउन्ट जोर्जसजेना लिखते हैं कि आर्यावर्त्त आर्य धर्म का ही घर नहीं अपितु अखिल संसार की सभ्यता का आदि भंडार है।

(भारत का धार्मिक इतिहास पृ० ३०)

नोट—महर्षि दयानन्द के मतानुसार आदि सृष्टि स्थल तिब्बत है। यहीं से चलकर आर्य जन

सर्वोत्तम भूमि खंड आर्यावर्त्त में आकर बसे।

(सम्पादक सार्वदेशिक)

जाति भेद के अभिशाप

भारत की निम्न जातियों में उत्पन्न हुए महापुरुषों की न्यून संख्या का क्या कारण है ? श्रीयुत स्मिल (Mr. Smil) ने अपनी पुस्तक Self help में ब्रिटेनके ऐसे प्रसिद्ध पुरुषोंकी एक लम्बी सूची दी है जो निम्नलिखित जातियों में उत्पन्न हुए थे।

नाई, मजदूर, जुलाहे, मोची, दर्जी, कसाई आदि। भारत में ऐसा क्यों नहीं ? इसका प्रधान कारण यह है कि जन्म मूलक जाति भेद में केवल उच्च जाति के मनुष्यों को ही मानसिक विकास और उन्नति का अवसर दिया जाता है। इससे अधिक अन्याय और क्या हो सकता है कि एक मनुष्य को उन शक्तियों का विकास करने से भी रोका जाय जो उसे परमात्मा की ओर से दी गई हैं। श्री स्व० रमेशचन्द्र दत्त के शब्दों में विद्या का सर्वाधिकार मानव जाति के एकतन्त्राधिकारों में सब से बुरा है।"

(नारायण अभिनन्दन ग्रन्थ पृ० ३०)

"भारतवर्ष का जातिभेद बहुत सी बुराइयों के लिए उत्तरदाता है किन्तु इसका सब से बुरा और दु:खदायी परिणाम प्रेम और एकता के स्थान में फूट विरोध तथा राष्ट्रीय शक्ति और राष्ट्रीय जीवन के बजाय राष्ट्रीय निर्बलता और राष्ट्रीय मृत्यु है।

(श्री स्व० रमेशचन्द्र कृत सिविलिजेशन इन एनशियन्ट इण्डिया पृ० ६८४)

पुनर्जन्म के सिद्धान्त को मानने से ही विश्व-बन्धुत्व चरितार्थ हो सकता है

"यह दुःख की बात है कि हम पाश्चात्यों ने इन प्रबलतम युक्तियों में से एक युक्ति का परित्याग कर दिया है जो हमारी आध्यात्मिक उत्तरदायिताओं पर बल देती है। हमारी यह सर्व सामान्य मान्यता है कि शरीर के जन्म के साथ ही आत्मा का जन्म होता है। यह मान्यता, जैसा कि निकोलस बर्दे याव ने कहा है "इतनी शोकजनक है कि इस पर गम्भीरता पूर्वक विचार करने की आवश्यकता नहीं है।" ५५३ ई० में कुस्तुनतुनिया में हुई कौंसिल में रोमन कथोलिक चर्च ने यह घोषणा की थी कि आत्मा के पूर्व अस्तित्व को स्वीकार करना अभिशाप है। परन्तु पश्चिम के महान् विचारक सदियों से इस मत का प्रकाश करते आ रहे हैं कि इस जन्म से पूर्व भी हम जीवित थे। आत्मा का जन्म शरीर के साथ होता है इस भावना के बना लिये जाने से आत्मा की अमरता पर विचार करना कठिन है। पुराने यूनानियों का पुनर्जन्म में विश्वास था। क्या हम आर्यों और बौद्धों की तरह इस बात को मानलें कि मनुष्य की आत्मा अपनी पवित्रता के लिए बार २ शरीर धारण करती है ? ऐसा मान लेने से जनसाधारण के हृदयों पर जीवन का वास्तविक ध्येय अंकित करने के सम्मिलित यत्न में बड़ी सुविधा हो सकती है। इस रीति से हम 'मानव जाति' को व्यक्तिगत जीवनों का निरन्तर गतिमान प्रवाह मान सकते हैं जो विश्व के अध्यात्म जीवन के सुधार के निमित्त आते और जाते हैं। यह भावना मानव समाज को अपने आत्म-जनित कष्ट से युक्त करने के अपने समस्त प्रयत्न में इस बात को निरन्तर ध्यान में रखने की आवश्यकता का निर्देश करती हुई विशेष संसार के प्राणियों से प्रेम करना भी सिखायगी।

(बैरेन पामिस्ट्रना)

—प्रेम व्यर्थ नहीं जाता। यदि उसका बदला न दिया जाय तो यह पीछे लौटकर हृदय को पवित्र और लचकीला बना देता है।

—प्रेम आंखों से नहीं वरन् मस्तिष्क से देखता है।

* सूचनाएँ तथा वैदिक धर्म प्रसार *

निर्वाचन

आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद

प्रधान श्रीयुत प० नरेन्द्र जी एम० एल० ए०
उपप्रधान ,, कोतुर सीतैया जी गुप्त
,, एस० वैंकट स्वामी वकील
मन्त्री ,, वशीलाल जी व्यास
उपमन्त्री ,, वैंकट स्वामी
,, ,, बाल रेड्डी
कोषाध्यक्ष ,, रामरखा जी बी० ए०
पुस्तकाध्यक्ष पं० मदनमोहन जी विद्यासागर

इसके अतिरिक्त १६ अन्तरंग सदस्य निर्वाचित हुए। यह चुनाव आगामी वर्ष के लिये २५-१२-५५ को साधारण सभा द्वारा हुआ जिसमें ३७ प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

समाजों के निर्वाचन

हावड़ा

प्रधान श्री रेखाराम जी गम्भीर
उपप्रधान ,, धर्मचन्द्र धीमान
,, ,, प्यारेलाल गुप्त
मन्त्री ,, गुरुदेव विद्यालकार
उपमन्त्री ,, सत्यनारायण जी
कोषाध्यक्ष ,, ब्रह्मदेवसिंह जी
पुस्तकाध्यक्ष ,, भगवानदास जी

* एफ० ब्लाक गंगानगर (बीकानेर)

प्रधान श्री करमचन्द भाटिया
उपप्रधान ,, ताराचन्द बजाज
मन्त्री ,, विशनदास आर्य
उपमन्त्री ,, मथुरादास भाटिया
कोषाध्यक्ष ,, नौरंगराय जी
पुस्तकाध्यक्ष ,, भद्रसेन जी

* १२ अन्तरंग सदस्य चुने गये जिनमें श्रीमती सुन्दरा देवी, श्रीमती परमेश्वरी देवी, श्रीमती भागवन्ती देवी और श्रीमती शान्तिदेवी ४ महिलाएं भी चुनी गईं।

रतलाम

श्री मदनगोपाल जी शर्मा
,, रणजीत सिंह जी
,, रामलाल जी
,, शिवशंकर शर्मा
,, बिहारीलाल जी शर्मा
,, ओंकारलाल जी

सरसपुर (अहमदाबाद)

श्री नारायणदास धमनदास
,, मथराभाई नाथूराम जी
,, मोतीसिह विजयसिह आर्य
,, बासुदेव सहाय छेदालाल आर्य
,, ठा० मगनलाल ओधवजी
,, हरिकृष्ण प्रेमराज जी

(८-१-५६ को)

गुरुकुल कांगड़ी (सहारनपुर)

उस्मानिया विश्व विद्यालय ने गुरुकुल कांगड़ी की अलंकार उपाधि को अपने यहाँ की बी० ए० उपाधि के समान मान लिया है। इस प्रकार गुरुकुल के स्नातक उस्मानिया विश्व विद्यालय की हिन्दी और संस्कृत साहित्य की एम० ए० परीक्षा में सम्मिलित हो सकते हैं। दक्षिण भारत के गुरुकुलीय स्नातकों को इस मान्यता से बड़ी सुविधा हो जायगी।

नए बालकों का प्रवेश

गुरुकुल में नए बालकों का प्रवेश वार्षिकोत्सव पर १३ से १६ अप्रैल १९५६ तक होगा।

समाज मन्दिर का उद्‌घाटन

११-१२-५५ को आर्यसमाज ग्राम खेड़ा (बैजनाथ) ता० आष्टा (भूपाल) के मन्दिर का उद्‌घाटन बड़े समारोह के साथ हुआ। माननीय श्रम मंत्री श्री उमरावसिंह जी, श्री हरिकृष्ण सिंह जी कांग्रेस अध्यक्ष सीहोर, श्री चन्दन मल जी वनवट एम० एल० ए०, पं० अग्निवेश जी पांडेय, श्री बिहारी लाल जी पटेल, श्री कालिका प्रसाद जी, श्रीमती लक्ष्मी बाई, श्री गौरी शंकर जी कौशल, श्री बालकृष्ण मिंगन आदि २ महानुभावों ने सम्मिलित होकर आस पास के ग्रामों से आए हुए लगभग १ हजार नर नारियों को आर्य समाज के उद्देश्यों तथा कार्यों से परिचित कराया। श्री पं० सुरेन्द्र शर्मा आर्य भजनोपदेशक के भजनों ने बड़ा उत्तम प्रभाव डाला। इस समाज की स्थापना का श्रेय श्री भारमल जी धाखो को है।

गुरुवर विरजानन्द की जन्म तिथि

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा गुरुवर की जन्म-तिथि का अनुसंधान कर रही है जिससे आर्य पर्व सूची में विरजानन्द दिवस का समावेश होकर यह दिवस भी विधिवत् मनाया जाया करे। यदि किसी महानुभाव को प्रामाणिक तिथि का ज्ञान हो तो उससे सार्वदेशिक सभा देहली को सूचित कर देवें।

श्री शारदा जी संन्यास आश्रम में

हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के द्वितीय सर्वाधिकारी, आर्य जगत के सुप्रसिद्ध सेनानी देशभक्त श्री चाँदकरण जी शारदा एडवोकेट सुप्रीम कोर्ट गत वष महर्षि दयानन्द स्मारक टंकारा के लिये धन संग्रहार्थ अफ्रीका में लगभग ८ मास प्रचार के बाद लौटे थे तब से बीमार हैं। उन्होंने आश्रम मर्यादा के परिपालनार्थ वानप्रस्थ लिया और चन्द्रानन्द नाम रखा। यद्यपि वे इन दिनों चलने फिरने में असमर्थ हैं तथापि लेखनी द्वारा प्रचार में प्रवृत्त हैं। अब आगामी ऋषि बोध दिवस पर १० मार्च को विधिपूर्वक संन्यास ग्रहण करेंगे।

भगवान स्वरूप, न्याय भूषण,
उपप्रधान, नगर आर्य समाज, अजमेर

श्रद्धानन्द बलिदान दिवस

२३-१२-५५ को पं० वागीश्वर जी एम० ए० विद्यालंकार रजिस्ट्रार गुरुकुल कांगड़ी की अध्यक्षता में 'बुद्धपुरी' कानपुर की सब संस्थाओं की ओर से समारोह पूर्वक मनाया गया। श्री पुरुषोत्तम आर्य बी० ए०, श्री सिद्धेश्वर विशारद एम० ए० एल० टी०, श्री आचार्य मेधार्थी विद्यालंकार एम०ए० एल०टी०, आचार्य जन्मेजय विद्यालकार एम० ए० और पं० विनायक जी आनन्दकर ने अपनी श्रद्धांजलि प्रस्तुत कीं।

—गुड़गावाँ की सब आर्य समाजों की ओर से यह दिवस श्री ठा० आनन्दपाल जी एडवोकेट की अध्यक्षता में बड़े उत्साह के साथ मनाया गया। एक विशेष प्रस्ताव द्वारा सरकार से माँग की गई कि वह २३ दिसम्बर को सार्वजनिक छुट्टी किया करे।

वैद्य श्रीचन्द मन्त्री

साहित्य समीक्षा

वेद का राष्ट्रीय गीत

लेखक—आचार्य प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति आचार्य गुरुकुल कांगड़ी।

प्रकाशक—प्रकाशन मन्दिर गुरुकुल कांगड़ी विश्व विद्यालय, हरिद्वार।

पृष्ठ संख्या १५१ ($\frac{२० \times २६}{८}$ आकार के)

भूमिका पृ० सं० ६८। मूल्य सजिल्द ५)

अथर्ववेद का भूमि सूक्त राजनीति से संबंध रखता है। आज हमारा भारत स्वतन्त्र है और राजनीति के सम्बन्ध में अनेकों प्रयोग चल रहे हैं। राजनीति के सम्बन्ध में वेद क्या उपदेश करता है और भारत की वर्तमान परिस्थितियों में ये उपदेश कहां तक लाभकारी सिद्ध हो सकते हैं और इनसे राष्ट्र का क्या हित हो सकता है। इसको प्रकाश में लाने के लिये उपरोक्त भूमि सूक्त को वेद का राष्ट्रीय गीत नाम से एक स्थान पर देकर लेखक महोदय ने न केवल वेद की ओर राजनीतिज्ञों का ध्यान आकर्षित किया है बल्कि देश का भी समान रूप से हित किया है और वैदिक साहित्य में वृद्धि भी की है। भूमि सूक्त के मन्त्रों की जो व्याख्या श्री आचार्य जी ने की है वह इतनी सरल और प्रभावोत्पादक है कि आर्य समाज की वेदी से कथा रूप में मन्त्रों की व्याख्या को श्रोताओं के सम्मुख रखा जा सकता है।

भूमि सूक्त के मन्त्र की व्याख्या से भी उपयोगी इस ग्रन्थ की भूमिका है जिसके द्वारा विद्वान् लेखक ने वेद को आदि ईश्वरीय ज्ञान और अपौरुषेय सिद्ध किया है। वेदों के सम्बन्ध में ब्राह्मण, उपनिषद्, मनु, शंकराचार्य, दर्शन ग्रन्थ, व्याकरण महाभाष्य, यास्क, सायण, गीता, महाभारत, रामायण, गौतम बुद्ध, मध्यकालीन वेद भाष्यकार देशी तथा विदेशी विद्वानों आदि की जो सम्मतियां हैं इस भूमिका में एक स्थान पर रख कर वेद की मान्यता को सर्वोपरि सिद्ध किया गया है। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि प्रस्तुत पुस्तक की भूमिका स्वमेव एक उपादेय ग्रन्थ है जिसने वेदों के सम्बन्ध में न केवल सर्व साधारण जनता के लिये अपितु वेद के सम्बन्ध में खोज करने वालों के लिये भी उपयोगी सामग्री प्रस्तुत की है।

हम लेखक तथा प्रकाशक दोनो को हार्दिक बधाई देते हैं जिन्होंने ऐसे उपयोगी ग्रन्थ को लिख और सुन्दर तथा शुद्ध रूप में प्रकाशित करके आर्य साहित्य की वृद्धि की है। ऐसे उपयोगी ग्रन्थ का जितना आदर किया जाय, थोड़ा है। यह ग्रन्थ तो हजारों की संख्या में नहीं, लाखों की संख्या मे छपवा कर देश विदेश में वितरण कराया जाय तो वेदों के प्रसार में एक महान् योग होगा।

निरञ्जन लाल गौतम

सार्वदेशिक पत्र (हिन्दी मासिक)

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश १० शिलिङ्ग । अर्द्ध वार्षिक ३) स्वदेश, ६ शिलिङ्ग विदेश ।

२. एक प्रति का मूल्य ॥) स्वदेश, ॥=) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क या नमूने की प्रति का मूल्य ॥=) स्वदेश, ।॥) विदेश ।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये । चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा । पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने या ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न देने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है कि उनकी इच्छा वी० पी० द्वारा चन्दा देने की है ।

४ सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख को प्रकाशित होता है । किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय मे अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा । डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं । अत समस्त ग्राहकों को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये ।

५ सार्वदेशिक का वर्ष १ मार्च से प्रारम्भ होता है अंक उपलब्ध होने पर बीच वर्ष में भी ग्राहक बनाए जा सकते हैं ।

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
६ पूरा पृष्ठ (२०×३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा " "	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई "	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	२०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है ।

७ सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है ।

—व्यवस्थापक

'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

Regd No D 51

उत्तम ग्रन्थों के स्वाध्याय से अपना जीवन यज्ञमय बनायें

स्वर्गीय महात्मा नारायण स्वामी जी के अमूल्य ग्रन्थ आपके आध्यात्मिक मित्र हैं।

इन्हे मंगा कर अवश्य पढें और दूसरो को पढने को।

कर्त्तव्य दर्पण

आर्य समाज के मन्तव्यो उद्देश्यो, कार्यों, धार्मिक अनुष्ठानों पर्वों तथा व्यक्ति और समाज को ऊँचा उठाने वाली मूल्यवान् सामग्री से परिपूर्ण—पृष्ठ ४००, सफेद कागज, सचित्र और सजिल्द। मूल्य प्रचारार्थ केवल ।।।)—२५ प्रतिया लेने पर ।।≈) प्रति। अभी अभी नवीन सस्करण प्रकाशित किया है।

उपनिषद् रहस्य

ईश, केन, प्रश्न, मुण्डक (छप रहा है) माण्डूक्य, ऐतरेय तैत्तिरीय और बृहदारण्यकोपनिषद् की बहुत सुन्दर, ओजपूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्यायें। मूल्य क्रमश

।≈), ।।) ।।) ।≈), ।), ।), १) ४),

मगाने मे शीघ्रता करें।

मृत्यु और परलोक

इसमें मृत्यु का वास्तविक स्वरूप, मृत्यु दु खद क्यों प्रतीत होती है? मरने के पश्चात् जीवकी क्या दशा होती है? एक योनि मे दूसरी योनि तक पहुँचने मे कितना समय लगता है? जीव दूसरे शरीर मे कब और क्यो आता है, आदि महत्वपूर्ण प्रश्नों पर गम्भीर विवेचन किया गया है। अपने विषय की अद्वितीय पुस्तक है। मूल्य १।)

योग रहस्य

इस पुस्तक में योग के अनेक रहस्यो को उद्घाटित करते हुए उन विधियो को बतलाया गया है जिन से प्रत्येक आदमी योग के अभ्यासो को कर सकता है।

मूल्य १।)

मिलने का पता—**सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा**, बलिदान भवन, देहली–६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागज दिल्ली—७ मे छपकर श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली–से प्रकाशित।

ऋग्वेद

यजुर्वेद

सार्वदेशिक

वर्ष ३१

मूल्य स्वदेश ५

विदेश १ शिलिङ्ग

एक प्रति ।)

अङ्क १

फाल्गुन २०१२

मार्च १९५६

निनरा ग ग्रात्मन १० ३ ५६ को मनाया जाएगा)

सम्पादक—
सभा मन्त्री
सहायक सम्पादक
श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषय-सूची

१. वैदिक प्रार्थना		१
२. सम्पादकीय		२
३ आर्यो को ऋषि-ऋण चुकाने का सुअवसर	(श्री ज्ञानेश्वरानन्द वानप्रस्थी)	६
४. महर्षि जीवन घटनाएं		१३
५. ऋषि दयानन्द का समन्वय	(श्री डा० सूर्यदेव शर्मा)	१४
६. ऋषि का विष-दाता	(श्री हरिशंकर शर्मा)	१५
७. सा मा शान्ति रेधि	(श्री आचार्य नरदेव जी शास्त्री)	१७
८. इदन्न मम का तात्विक विवेचन	(श्री आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री)	०१
९ श्रुति सूक्ति सुधा		२६
१० आर्यसमाज के बाहर क्षेत्र में सम्पर्क तथा प्रचार कार्य	(श्री पं० शिवचन्द्र जी)	२७
११ महिला जगत्		३१
१२. स्वाध्याय का पृष्ठ		३३
१३. साहित्य समीक्षा		३४
१४. धर्म्मार्य सभा		३५
१५. बाल-जगत्	(डा० गोपीकृष्ण शर्मा)	३६
१६. दक्षिण भारत प्रचार		३७
१७ सूचनाएं तथा वैदिक धर्म प्रसार		३९

कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सम्मेलन

आर्य समाज विश्वेश्वरपुरम, बंगलौर (२६-१-५६)

नवनिर्मित कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रतिनिधि तथा अधिकारी गण
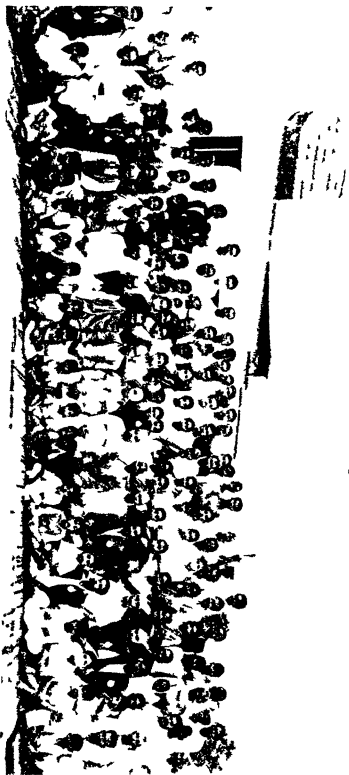
मध्य में संस्थापक के रूप में श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी सरस्वती

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३१ } मार्च १९५६, फाल्गुन २०१२ वि०, दयानन्दाब्द १३१ } अङ्क १

वैदिक प्रार्थना

उपहूता इह गाव उपहूता अजावयः । अथोऽन्नस्य कीलाल उपहूतो गृहेषु नः ।
क्षेमाय वः शान्त्यै प्रपद्ये शिवꣳशग्मꣳशंय्योः शंय्योः ।। यजु० ३ । ४३ ।।

व्याख्यान—हे पश्वाधिपते महात्मन् ! आपकी ही कृपा से उत्तम २ गाय, भैंस, घोड़े, हाथी, बकरी, भेड़ तथा उपलक्षण से अन्य सुखदायक पशु और अन्न सर्वरोगनाशक औषधियों का उत्कृष्ट रस "नः" हमारे घरों में नित्य स्थिर (प्राप्त) रख जिससे किसी पदार्थ के बिना हमको दुःख न हो। हे विद्वानो ! "वः" (युष्माकम्) तुम्हारे संग और ईश्वर की कृपा से क्षेमकुशलता और शान्ति तथा सर्वोपद्रव विनाश के लिये "शिवम्" मोक्षसुख "शग्मम्" और इस संसार के सुख को मैं यथावत् प्राप्त होऊं, मोक्ष सुख और प्रजा-सुख इन दोनों की कामना करने वाला जो मैं हूं उन मेरी उक्त दोनों कामनाओं को आप यथावत् शीघ्र पूरी कीजिये, आपका यही स्वभाव है कि अपने भक्तों की कामना अवश्य पूरी करना ।।

सम्पादकीय

सार्वदेशिक सभा का अनुसन्धान तथा पुस्तक प्रकाशन विभाग

लगभग ११ वर्ष से सार्वदेशिक सभा की कार्य-वाहियों में यह प्रस्ताव चला आता था कि सभा के अन्तर्गत एक अनुसन्धान विभाग की स्थापना की जाय, जिसका मुख्य उद्देश्य वैदिक तथा धार्मिक साहित्य का निर्माण प्रकाशन हो। यद्यपि प्रस्तावों में केवल अनुसन्धान का निर्देश था परन्तु प्रस्तावों से यह आशय स्पष्ट होता था कि यह विभाग आर्य समाज की साहित्यिक न्यूनताओं को पूरा करने के लिये स्थापित किया जायेगा।

अनेक कारणों से अनुसन्धान सम्बन्धी योजना अब तक कार्यान्वित न हो सकी। प्रसन्नता की बात है कि इस वर्ष परिस्थितियों की अनुकूलता के कारण कार्य प्रारम्भ किया जा सका है। वर्ष के प्रारम्भ मे ही अन्तरंग सभा ने यह निश्चय कर दिया था कि यथा सम्भव शीघ्र ही वेदों के सरल भाषार्थ तथा वैदिक अनुसन्धान सम्बन्धी एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ कर दिया जाय। सभा ने इस कार्य के लिये अपने साहित्यिक कोष से २५ हजार रुपयों की राशि अलग कर दी, और सभा प्रधान को यह आदेश दे दिया कि वह सब प्रकार की व्यवस्था पूरी करके अनुसन्धान का कार्य आरम्भ करा दे।

सभा प्रधान के सामने दो बड़ी समस्यायें थीं। एक समस्या थी—एक ऐसे विद्वान् के चुनाव की जो वेदों के पण्डित और अनुभवी लेखक होने के अतिरिक्त आर्य सिद्धान्तों का गहरा ज्ञान रखते हों। दूसरी समस्या थी—स्थान की। बलिदान भवन की दो तीन वर्ष से यह अवस्था है कि प्रसिद्ध लोकोक्ति के अनुसार उसमें "तिल धरने की भी जगह नहीं।" यदि कोई सभा करनी हो तो कार्यालय की मेजे उठानी पड़ती हैं, कोई विद्वान् तथा प्रतिष्ठित अतिथि आ जाये तो ठहराने के लिये स्थान का अभाव था। लेखक, लेख सामग्री, रजिस्टर और पुस्तकें सब खचाखच भरे हुए थे। ऐसे स्थान में अनुसन्धान अथवा साहित्य निर्माण जैसे गम्भीर कार्य के लिये न पर्याप्त स्थान निकाला जा सकता था और न अनुकूल वातावरण। पहली समस्या तो आसानी से हल हो गई। विद्यामार्तण्ड पं० विश्वनाथ जो विद्यालङ्कार, जो कई वर्ष पूर्व गुरुकुल कांगड़ी मे वेदोपाध्याय थे और आज कल कन्या गुरुकुल देहरादून में वेदों का अध्यापन कर रहे थे, अनुसन्धान विभाग का कार्य संभालने के लिये उद्यत हो गये। परन्तु दूसरी समस्या का हल होता कठिन प्रतीत होता था। अधिकारियों के सामने प्रश्न इस रूप मे आ गया था कि कोई नया मकान खरीदा जाय अथवा किसी स्थान पर नया निर्माण किया जाय।

ऐसी विकट समस्याओं को एक दम हल करना मनुष्य के हाथ की बात नही है। शुभ कार्यों की पूर्ति परमात्मा की सहायता के बिना नहीं हो सकती। दिल्ली के एक प्रसिद्ध रईस हैं जो "छुन्नामल वाले" के नाम से मशहूर हैं। उनका आमोद भवन था, जो राम बाग कहलाता था। कई वर्षो से वह सूना पड़ा था। राम बाग के मालिक के मन में यह भावना उत्पन्न हुई कि उसे बेच दिया जाय। सुनते है उस बाग और कोठी के बनाने में दस लाख से ऊपर रुपया खर्च हुआ था। जिस समय वह बेची गई उसकी बहुत ही टूटी फूटी दशा थी। बिक्री की बात चलने पर उसे देखने तो बहुत से गये परन्तु खरीदने की हिम्मत की एक आर्य पुरुष ने। लाला गोविन्दराम जी पंजाब के प्रसिद्ध उद्योगी और सफल आर्य कार्यकर्ता हैं। वर्षो तक आपने गुजरांवाला में

गुरुकुल विद्यालय का सफलता पूर्वक संचालन किया था। आपका संकल्प था कि लगभग चार लाख रुपयों की राशि को सार्वजनिक कार्य में खर्च करेंगे। आपके मन में प्रेरणा हुई और आपने ढाई लाख में राम बाग खरीद लिया।

राम बाग खरीद लेने के पश्चात् ला० गोविन्द-राम जी को यह चिन्ता हुई कि उसमें आर्यसमाज का कार्य किस प्रकार आरम्भ किया जाय? एक दिन मुझे आपका टेलीफोन मिला जिसमें आपने यह पूछा कि क्या सार्वदेशिक सभा के किसी काम के लिये आपको राम बाग की कोठी में कुछ स्थान की आवश्यकता है? मैंने उत्तर दिया कि हमें वैदिक अनुसन्धान के कार्य के लिये खुला और बड़ा स्थान चाहिये। लाला जी ने बड़े उत्साह से टेलीफोन में ही सूचना दी कि बाग को खरीदने के जो उद्देश्य रखे गये हैं उनमें अनुसन्धान कार्य भी है। आप कोठी का जो भी हिस्सा अपने कार्य के लिये उपयोगी समझें ले लें। यही बात आपने लिख कर भी सभा कार्यालय में भेज दी। बात तय हो गई और लाला गोविन्दराम जी ने दयानन्द वाटिका (राम बाग) में ले जाकर कोठी की सब से ऊपरली सारी मंजिल और बीच की मंजिल के दो कमरे सार्वदेशिक सभा के अनुसन्धान कार्य के लिये सौंप दिये।

उस समय सारे बाग की और कोठी की दशा शोचनीय थी। बाग झाड़-झंकाड़ से भरा हुआ था और कोठी का रूप-रंग मुगल काल के खण्डहरों से भी बुरा था। सार्वदेशिक सभा के वहां पहुंचने के दो मास पश्चात् आज उस स्थान की जो सूरत शक्ल बन रही है उसे जब आर्य लोग देखेंगे तब प्रसन्न हो जायेंगे। राम बाग का नाम दयानन्द वाटिका रख दिया गया है। सार्वदेशिक सभा के अतिरिक्त पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा, आर्यसमाज आर्यपुरा, महिला वानप्रस्थाश्रम, शिशु सेवा सदन आदि संस्थाओं के स्थान निश्चित हो चुके हैं। एक धर्मार्थ चिकित्सालय तो लाला गोविन्दराम जी ने बाग को खरीदते ही प्रारम्भ करा दिया था, वह चल रहा है।

सार्वदेशिक सभा के अनुसन्धान विभाग का कार्य प्रारम्भ हो गया है। पं० विश्वनाथ जी देहरादून से आ गये हैं, अनुसन्धान सम्बन्धी पुस्तकालय वाटिका में पहुँच गया है और जब तक पाठकों के पास यह लेख पहुँचेगा तब तक वेदार्थ और वैदिक अनुसन्धान सम्बन्धी त्रैमासिक पत्र का कार्य दो एक छोटे स्टेशनों को पार कर चुका होगा। यह तो केवल प्रारम्भ है, सभा की अभिलाषा यह है कि यह विभाग वैदिक धर्म और आर्य समाज की साहित्य सम्बन्धी सब आवश्यकताओं को पूरा करने का साधन बन जाय। विश्वास रखना चाहिये कि जैसे ईश्वर की सहायता से कार्य प्रारम्भ हुआ है उसी प्रकार उसकी पूर्णता भी हो जायगी। —इन्द्र विद्यावाचस्पति

वार्षिक चुनाव साधन है, साध्य नहीं!

नवीन भारत में आर्य समाज पहली सार्वजनिक संस्था थी, जिसका निर्माण पूरे जनतन्त्र के सिद्धान्त के अनुसार हुआ। महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज का संविधान वेद के "समानो मन्त्रः समितिः समानी" इस आदेश का पालन करते हुए अधिकारियों के निर्वाचन का सब आर्य सभासदों को समान अधिकार दिया था। नियमों में प्रतिवर्ष अधिकारियों तथा अन्तरंग सभा के चुनाव की व्यवस्था रखी गई थी। आर्यसमाजें, आर्य प्रतिनिधि सभायें तथा सार्वदेशिक सभा—इन सब का उद्देश्य आर्य समाज के कार्य को चलाना और जिस उद्देश्य से आर्यसमाज की स्थापना की गई थी उसे पूरा करना है। वह उद्देश्य साध्य है और आर्यसमाज साधन। आर्यसमाज की संस्थाओं के जो निर्वाचन होते हैं उनके सम्बन्ध में यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि वे स्वयं साधन हैं

जिनका साध्य आर्यसमाज के कार्य का समानता के सिद्धांत के अनुसार संचालन है। इस प्रकार हम इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि मुख्य उद्देश्य विश्व में वैदिक आर्य धर्म का प्रचार करना है, आर्यसमाजें उसका साधन हैं। व्यवहार में आगे चल कर आर्यसमाज साध्य हो जाता है और निर्वाचन उसका कार्य भली प्रकार चलाने के साधन।

संसार में प्रायः देखा जाता है कि कुछ समय पीछे मनुष्यों की दृष्टि साध्यों से हटकर साधनों की ओर चली जाती है। वह मुख्य को गौण और गौण को मुख्य मानने लगते हैं। रूढ़िवाद के चलने का यही कारण है। किसी कार्य को करने के लिये जो उपाय या क्रम काम में लाये जाते हैं वह कुछ दिनों में रिवाज और फिर रूढ़ि बन कर अन्त में धर्म के अटल सिद्धांत माने जाने लगते हैं। यह मनुष्य प्रकृति की निर्बलता है। वह परोक्ष लक्ष्य को छोड़कर प्रत्यक्ष साधनों को पवित्र और पूज्य मानने लगते हैं।

आर्यसमाज केवल श्रद्धा पर आधारित संस्था नहीं है। उसका आधार श्रद्धा और मेधा इन दोनों शक्तियों पर है। इस कारण इसमें किसी रूढ़ि का दृढ़ हो जाना बहुत आसान नहीं है, तो भी यह खतरा तो अवश्य है कि कहीं हम भी मनुष्य प्रकृति के वश में आकर साधनों को साध्य मानने की भूल न करबैठें। ऐसी आशंका उत्पन्न होने का कारण यह है कि कुछ वर्षों से आर्यसमाज में जो साधनों का भी साधन है उसे अन्तिम लक्ष्य और उद्देश्य मानने की प्रवृत्ति बढ़ती दिखाई देती है। आर्य समाज का उद्देश्य वैदिक धर्म का प्रचार और चुनाव का उद्देश्य आर्यसमाज के कार्य का भली प्रकार संचालन है। परन्तु देखने में ऐसा आता है कि अधिकतर स्थानों पर वार्षिक चुनाव आर्य समाज के कार्यक्रम का सब से प्रधान अंग बन गया है। आर्य सभासदों का ध्यान वर्ष भर समाज के रचनात्मक कार्यों की ओर उतना नहीं रहता जितना गत चुनाव की घटनाओं पर और अगले चुनावों की सम्भावनाओं पर। ऐसे भाग्यशाली आर्यसमाज कम होंगे जिनमें वार्षिक चुनाव पर सभासदों का आपसी संघर्ष न होता हो। जिन समाजों के चुनाव में किसी प्रकार का संघर्ष हो जाय उसमें वर्ष के पहले तीन चार महीने परस्पर झगड़ों की चर्चा में लगते हैं और उसके पश्चात् अगले चुनाव के लिये व्यूह रचना आरम्भ हो जाती है। इस प्रकार सारा साल लगभग चुनाव की उलझन में ही व्यतीत हो जाता है। यह दशा केवल स्थानीय आर्य समाजों की ही नहीं है, कई प्रादेशिक आर्य प्रतिनिधि सभाओं की भी यही दशा है। कई सभाओं के चुनाव सम्बन्धी झगड़े वर्षों पुराने हो गये हैं। यदि इस परिस्थिति को संभालने और वातावरण को बदलने का कोई ठोस प्रयत्न न किया गया तो दशाके अधिक बिगड़ जाने की आशंका है। मुझे ऐसे लगभग एक दर्जन आर्यसमाजों का पता है जो एक समय पहली कोटि के साधन सम्पन्न आर्य समाज समझे जाते थे, परन्तु अब कई वर्षों के चुनाव-संघर्ष के कारण उनका केवल अस्थि-पंजर शेष रह गया है। उनके बड़े २ भवन भी हैं और सभासदों की लम्बी सूची भी है, परन्तु वास्तविक कार्य लगभग बन्द पड़ा है क्योंकि सभासदों में धड़ाबन्दी जोरों पर है जिसने परस्पर सहयोग को असम्भव बना दिया है। दोनों धड़े न स्वयं अलग २ काम कर सकते हैं और न दूसरों को करने देते हैं। इस प्रकार निर्वाचन की वह पद्धति जिसका उद्देश्य आर्य समाज के कार्य को ऊंचे आदर्शों के अनुसार चलाना था कार्य के मार्ग में बाधक बन रही है।

परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि पद्धति दोष युक्त है। दोष है हम लोगों का, जो उसके चलाने वाले हैं। हम लोग यदि साधन को साध्य मानकर पूजने लगें तो उसमें साध्य का क्या दोष है? संस्थाओं के अधिकारी इस लिये चुने

जाते हैं कि वह संस्था द्वारा समाज की सेवा करें। उन्हें समाज के बड़े सेवक समझना चाहिये। "अधिकारी" इस शब्द में थोड़ी सी अधिकार की बू आती है। वस्तुतः वह अधिकार भी सेवा करने का अधिकार ही है। इसे मनुष्य प्रकृति की विशेषता ही समझनी चाहिये कि चुनाव की सफलता प्रायः मनुष्यों के हृदय में अधिकारों की बू और उसके साथ मिला हुआ थोड़ा सा गर्व उत्पन्न कर देती है। यही सर्व संस्थाओं में होने वाले बहुत से झगड़ों की जड़ है।

आर्य समाज के नियमों में सामान्य रूप से अधिकारियों तथा अन्तरंग सभाओं के प्रतिवर्ष चुनाव की व्यवस्था रखी गई है। जहां चुनाव तीसरे या पांचवें वर्ष होते हैं वहीं आन्तरिक संघर्ष उत्पन्न होता रहता है जो संस्थाओं को निर्बल बना देता है। फिर जहां प्रतिवर्ष चुनाव हो वहां तो सघर्ष की संभावना और भी अधिक बढ़ जाती है। यह एक विचारणीय प्रश्न है कि जैसे प्रांतीय सभाओं के लिये प्रतिनिधियों के चुनाव हर तीसरे वर्ष होतेहैं क्या उसी प्रकार अधिकारियों के चुनाव भी प्रति तीसरे वर्ष ही न किये जाया करें? परन्तु यह तो नियमों के परिवर्तन की बात है जिसे सभाओं में ही सोचा जा सकता है। यहां तो मैं आर्यजनों के सामने कुछ ऐसे सुझाव रखना चाहता हूँ जो समाज को निर्वाचन की वर्तमान पद्धति से उत्पन्न होने वाले दोषों से बचा सके।

मेरा पहला सुझाव यह है कि प्रतिवर्ष निर्वाचन की पद्धति होते हुए भी एक अलिखित नियम प्रचलित किया जा सकता है कि जब तक कोई असाधारण कारण ही न हो, एक बार चुने हुए अधिकारियों को तीन वर्ष तक कार्य करने का अवसर दिया जाय। यह आपसी समझौता रहे कि सामान्य दशा में वही चुनाव तीन बार दोहराया जायेगा। विशेष दशा में परिवर्तन हो सकता है। परन्तु केवल व्यक्तिगत कारणों से अधिकारियों में बार २ परिवर्तन करना कार्य को हानि पहुँचाता है।

इसके साथ ही लगा हुआ वह विचार भी है कि तीन वर्ष तक अधिकारी रहने के बाद किसी व्यक्ति को यह यत्न न करना चाहिये कि अपने पद पर जमने का यत्न करे। उसकी प्रवृत्ति यही होनी चाहिये कि वह दूसरे भाइयों को काम करने का अवसर दे। यदि सभा सर्व सम्मति से कोई सेवा उसे सौंपना चाहे तो उसे अंगीकार करना तो धर्म हो जाता है अन्यथा प्रत्येक आर्य की इच्छा यही रहनी चाहिये कि जैसे मैंने तीन वर्षों तक समाज की सेवा का अवसर प्राप्त किया है वैसे ही दूसरों को भी अवसर मिलना चाहिये।

सब से अच्छी बात तो यह हो कि आर्य समाज के पुराने सेवक अपने मन में यह निश्चय कर लें कि अधिकारियों के चुनाव में उम्मीदवार बन कर खड़े ही न होंगे और यदि कोई पार्टी या धड़ा उन्हें सामने रखकर चुनाव लड़ना चाहेगा तो उसके औजार बनने से इन्कार कर देंगे। घर की धड़ाबन्दी से राष्ट्र के राष्ट्र नष्ट हो जाते हैं, संस्थाओं का तो कहना ही क्या? उसे तो धड़ाबन्दी के दो चार झटके ही निर्जीव बना देते हैं।

इन परामर्शों के अनुसार काम करने के लिये थोड़े से मानसिक परिवर्त्तन की आवश्यकता है। पुराने कार्यकर्ता नये कार्यकर्ताओं का स्वागत करें और नये कार्यकर्ता पुरानों का यथोचित आदर करें। समाज भी एक बड़ा परिवार है जिसकी समृद्धि उन्हीं नियमों के अनुसार होती है जिनके अनुसार परिवार की। भेद इतना ही है कि संस्थाओं में हम बड़े छोटे के सम्बन्धों को स्वयं मिल कर तय करते हैं। यह अनुभव सिद्ध बात है कि जिन आर्यसमाजों में कुछ वर्षों तक चुनाव की खेंचातानी जारी रहती है वह प्रारम्भ में चाहे कितने ही बलवान् दिखाई दें कुछ समय पीछे जर्जे-

रित और निर्बल हो जाते हैं। इसके विपरीत, जो आर्य समाज चुनाव संघर्ष के रोग से बचने में समर्थ होते हैं उनकी शक्ति प्रतिदिन बढ़ती जाती है। निर्वाचन के झगड़ों से उत्पन्न होने वाले रोगों से बचने का एक यही उपाय है कि हम निर्वाचन को साधन समझें, साध्य नहीं।

--इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियां ❀

दयानन्द बोध रात्रि

संसार को दु:खी देख कर सिद्धार्थ के मन में विचार पैदा हुआ कि उन उपायों को ढूंढें जिन से दु.ख की निवृत्ति हो जाय। लाठी के बल एक वृद्ध पुरुष को धीरे २ चलते और मुर्दे को श्मशान में ले जाते हुए देखकर सिद्धार्थ पर जीवन की क्षण-भंगुरता और मृत्यु की वीभत्सता अंकित होकर अमर पद प्राप्त करने की इच्छा जाग्रत हुई। यों तो वृद्धावस्था, दु:ख और मृत्यु दिन प्रति दिन की घटनायें हैं जिन्हें मनुष्य देखता और सुनता है परन्तु यही बातें संस्कारी बच्चों और जनों के लिये असाधारण घटनाएं बन कर उनकी जीवन-धारा को बदल कर उन्हें महापुरुष बना देती हैं। इन्हीं बीजरूप घटनाओं ने सिद्धार्थ से अपना राजपाट, अपनी प्यारी पत्नी और पुत्रादि हितू-बांधवों का परित्याग करा के उन्हें सद्मार्ग और सद्ज्ञान की खोज करने के लिये घर से बाहर निकल जाने को विवश किया और उन्हें युग प्रवर्त्तक महान् पुरुष बना दिया।

फलों को पृथ्वी पर गिरते हुए मनुष्य प्राय: प्रतिदिन देखते थे। यह बात उनके लिये साधारण थी। परन्तु जब न्यूटन ने एक फल को पृथ्वी पर गिरते हुए देखा तब वही बात उनके लिये असाधारण बन गई और उन्होंने आकर्षण शक्ति के नियम को प्रकाशित किया।

बंगाल में मृत पति के साथ विधवा के सह-मरण की प्रथा एक साधारण बात बनी हुई थी। परन्तु जब राममोहन राय ने अपनी भाभी के बलात सहमरण की वीभत्स घटना देखी तो उनके आत्मा पर इतनी प्रबल प्रतिक्रिया हुई कि उन्हें उस समय तक शान्ति प्राप्त न हुई जब तक उन्होंने अपने अनवरत प्रयत्न से उसका वैधानिक रूप से उन्मूलन न करा दिया।

असंख्य मनुष्यों ने मूर्ति पर चूहे को चढ़ते देखा होगा परन्तु बालक मूलशंकर के हृदय पर इस घटना का ऐसा चमत्कारी प्रभाव पड़ा कि वह सच्चे शिव (ईश्वर) की खोज के लिये आतुर हो गया और इस प्रतिक्रिया ने उन्हें वैराग्य धारण करने एवं माता पिता आदि सांसारिक स्नेहों के बंधनों को तोड़ने के लिये विवश करके उन्हें युग प्रवर्त्तक महर्षि बना दिया।

यह शिवरात्रि की रात भारत वासियों के लिये सौभाग्य की रात थी। इस रात्रि के प्रभाव से एक बार ज्वलन्त दैवीय प्रकाश हुआ जो न केवल भारत का ही अपितु सारे संसार के अन्धकार और दु:ख के नाश करने का सामर्थ्य रखता है।

इस बोध रात्रि ने भारत में महर्षि दयानन्द के द्वारा जो जागृति उत्पन्न की वह किसी से छिपी नहीं है। यह जागृति सत्य की जागृति थी। इस बोध रात्रि ने सबसे बड़ा पाठ यह पढ़ाया कि अन्ध विश्वासों को छोड़ कर अपनी बुद्धि और ज्ञान से प्रत्येक नर नारी को काम करना चाहिये। यदि समस्त देशवासी तथा संसार के लोग यह निश्चय कर लेवें कि जो बात सत्य है उसी को हम मानेंगे और जो बात बुद्धि ज्ञान और सृष्टि नियमों के विपरीत है उसको नहीं मानेंगे तो संसार का वैमनस्य और दु:ख बहुत कम हो जावें।

स्वामी दयानन्द ने मनुष्य मात्र की उन्नति के

लिये यह आवश्यक समझा कि सब के धार्मिक विचार एक से होवें और वे विचार सृष्टि नियम बुद्धि तथा वेद ज्ञान के अनुकूल होवें । उन्होंने यह भी अनुभव किया कि किसी जाति की राजनैतिक व्यवस्था उसके धार्मिक विचार और पारस्परिक व्यवहार के गठन पर निर्भर रहती है । जिस जाति के धार्मिक विचार ऊंचे हों, जिसका आचार-विचार उत्तम और जिसके पारस्परिक व्यवहार में सचाई और प्रेम हो उसकी राजनैतिक व्यवस्था भी उत्तम होगी और किसी अन्य जाति को उस पर राज करने का साहस न होगा। भारत को उच्च बनाने का उन्होंने आर्य समाज को साधन बनाया और उच्च बनने के प्रायः सभी साधनों का प्रचार किया। आज स्वराज्य मिल जाने पर आर्य समाज को देश की राजनैतिक व्यवस्था को दृढ़ और उत्तम रखने के लिये लोगों के विचार आचार और पारस्परिक व्यवहार को सही दिशा में बनाये रखने का विशेष काम करना है । महर्षि द्वारा प्रदर्शित मार्ग ही एक मात्र मार्ग है जो मानव मात्र को एक जगह एकत्र कर सकता है और एक दूसरे के वैमनस्य को यदि उसमें सत्यता है तो दूर कर सकता है। ऐसे महान् गुरु की शिक्षा को कभी न भुलाना चाहिये और जिन लोगों के हृदय में सत्य को जानने और परोपकार करने की लगन हैं उनको अवश्य स्वामी जी के जीवन और साहित्य का मनन एवं परायण करना चाहिये।

शिव रात्रि की रात को हिन्दू लोग तो पवित्र मानते ही हैं परन्तु उन लोगों के लिये भी जो स्वामी जी को अपना शिक्षक मानते हैं यह आवश्यक है कि इस रात्रि को स्वामी जी महाराज के सिद्धान्तों पर विचार करें। सत्य और ईश्वर में विश्वास रखते हुए अपने हृदय और आत्मा को बलवान् बनाएं और अन्ध विश्वास और असत्य की लहरों से बचें। इसी रात्रि को प्रत्येक आर्य को शान्त भाव में आत्म-निरीक्षण करके अपनी त्रुटियों को दूर करने का भी संकल्प करना चाहिये।

बम्बई और उड़ीसा के उपद्रव

बम्बई और उड़ीसा के गत उपद्रवों से भारत के भव्य भाल पर लगी कलंक कालिमा के लिये कौन देश भक्त होगा जिसे लज्जा अनुभव न हो। विदेशीय जनोंके सामनेजो हमसेप्रकाश ग्रहणकरनेके लिये उत्सुक रहते हैं, इस प्रकार की घटनाओं के कारण हमारा मस्तक ऊंचा नहीं उठ सकता। बम्बई के उपद्रवों के विदेशीय पत्रों में जो सही या अतिरंजित विवरण छपे हैं उनमें "लंदन टाइम्ज" के ३० जनवरीके अङ्कमेंप्रकाशित एक नमूना नीचे प्रस्तुत किया जाता :—

"तोड़ दो, जलादो, मार दो !!! यह वह भयावनी वेला थी जिसकी कम्युनिस्ट लोग आशा लगाये बैठेथे और जिसकेलिएवे तैयारी कररहे थे। यह बात बम्बई राज्य के मुख्य मन्त्री मोरार जी देसाई को ज्ञात थी जो नेहरू जी के उत्तराधिकारी कहे जाते हैं। देसाई की आज्ञा से भोर होने से पूर्व ही पुलिस ने कम्युनिस्टों, प्रजा सोशलिस्टों और संयुक्त महाराष्ट्र दल के ४३५ नेताओं को गिरफ्तार किया। कम्युनिस्टों ने अपने को इस अवश्यम्भावी घटना के लिये भी तैयार किया हुआ था। गुप्त रीति से प्रशिक्षित किये हुए उनके आदमी मोरचे पर आ डटे। उनके संकेत पर सैकड़ों और सहस्रों महाराष्ट्रीय कार्यकर्ता काम छोड़कर जहाजों और रेल गोदामों, दूकानों और मिलों से निकल कर 'नेहरू मुर्दाबाद' के नारे लगाते हुए सड़कों पर जमा हो गये। उपद्रवियों ने तेल और तारकोल के बड़े २ ड्रामों से रास्ते रोके, बिजली के खम्भे गिराये, तार काटे, महात्मा गांधी की मूर्ति को तोड़ा (जो स्वयं गुजराती थे) देसाई का पुतला जलाया, और नेहरू के चित्रों पर पुराने जूतोंके हार चढ़ाकर उन्हेंविकृत किया। भीड़ने जो

कभी कभी १०-१० हजार तक पहुंच जाती थी,पुलिस चौकियों पर आक्रमण किये । गुजरातियों की दुकानों को लूटा और तेजाब से भरे हुए बिजली के बल्ब पुलिस और राहगीरों पर फेंके। पटरियां हटाकर रेल गाड़ियां गिराईं। बसों पर पत्थर फेंके और मोटर कारों को आग लगाई। उपद्रवी लोग काले झंडे लिये और भाले घुमाते हुए बम्बई की गलियों में घूमे। एक वृद्ध गुजराती दुकानदार ने अपनी दुकान बन्द करने की चेष्टा की तो एक उपद्रवी ने लपक कर वृद्ध को गिरा कर लोहे की एक छड़ से उसका सिर तोड़ डाला। जब दुकानदार की छोटी सी पुत्री रोती हुई अपने पिता के पास गई तो उसी उपद्रवी ने उस बच्ची के मुंह पर छड़ मारी और वह वहीं अपने पिता की मृत देह पर ढेर हो गई।"

रक्तपात, विनाश और पैशाचिकता के इससे भी अधिक लोमहर्षक विवरण प्रकाश में आ रहे हैं जिन्हें उपस्थित करके हम अपने सहृदय पाठकों की कोमल भावनाओं को और अधिक ठेस पहुंचाना उचित नहीं समझते। अपने ही व्यक्तियों के द्वारा अपनी सम्पत्ति के विनाश और अपने ही व्यक्तियों के हनन, पीड़न और बलात् स्वत्वापहरण के ये कांड! परमात्मा को धन्यवाद है कि राज्य की देर से हुईकठोरतम कार्यवाही के फलस्वरूप इन कांडों का शीघ्र ही अन्त हो गया। अपनी बात को मनवाने की यह रीति सभ्योचित नहीं है। "जिसकी लाठी उसकी भैंस" का नियम जंगली पशुओं और जंगली व्यक्तियों का ही नियम हो सकता है। आर्य सभ्यता में तो धर्म बल को ही मान्यता प्राप्त है और इसी विशद परम्परा से उसकी व्यावहारिकनीति गौरवान्वित रहीहै। भारतीयों की देश भक्ति मानवता और विश्व प्रेम की भावना ये तीनों भौगोलिक सीमाओं में अवरुद्ध होने वाली वस्तुएं नहीं हैं। फिर यह भौगोलिक संकुचितता और मानवता का अपमान क्यों? निश्चय ही आने वाली महाराष्ट्रीय सन्तति अपने पूर्वजों के इन दुष्कृत्यों के लिये स्वस्थ लोकमत के सामने लज्जित होती रहेगी। महाराष्ट्र के गौरवपूर्ण इतिहास में जुड़ेहुए इस काले अध्याय की कालिमा के हल्के होने का एक मात्र उपाय यही है कि महा राष्ट्र की प्रजा और वहां के सम्बद्ध नेता प्रदेशीय भावना से ऊपर उठकर देश हित का ऐसा उदात्त उदाहरण प्रस्तुत करदें जिससे समस्त देश में उन घटनाओं से व्याप्त रोष घृणा और निराशा दूर होकर उन जैसी विचारधारा रखने वाले देश वासियों का उत्तम मार्ग प्रदर्शन हो सके। देश हित के लिये प्रान्त को और संसार के हित के लिये पृथ्वी तक को छोड़ देने की शिक्षा जिस जाति के बच्चों को घुट्टी में पिलाई जाती रही हो उसी गरिमामय जाति के लोगों के द्वारा इस शिक्षा का अपमान बड़ा ही दुःखद है।

अपने ही राज्य में अपने भाईयों के हाथों लोगों की जान, माल और इज्जत का अरक्षित रहना राज्य और प्रजा दोनों के लिये ही अमंगल का सूचक है। इस प्रकार की स्थिति से बहुत सावधान रहने की आवश्यकता है। बम्बई और उड़ीसा की दुर्घटनाओं के लिये जितनी प्रान्तीयता की संकुचित भावना जिम्मेवार है उससे कहीं अधिक भोली जनता का अपराध पूर्ण गलत मार्ग प्रदर्शन जिम्मेवार है जिसके कारण वे उपद्रवी तत्वों का सहज ही शिकार बन गये।

गलत मार्ग प्रदर्शन तथा इन तत्त्वों से प्रजा के रक्षण के लिये यह अनिवार्य है कि उनमें असन्तोष व्याप्त न होने दिया जाय साथ ही उन पर प्रजातन्त्र की प्रणाली का महत्व तथा अपने जनतंत्र के प्रति उनके दायित्व को भली-भांति अंकित किया जाय।

समाज का वर्तमान ढांचा और जिन नमूनों पर वह संशोधित किया जा रहा है एक दम भार-

तीय प्रतिभा और भावना के प्रतिकूल है । आवश्यकताओं को अपरिमित रूप से बढ़ाने और भोगवाद की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करने वाले विदेशीय नमूनों पर अवलम्बित समाज व्यवस्था से असन्तोष बढ़ेगा, घटेगा नहीं। आवश्यकताओं को कम से कम रखकर उच्च विचारमय जीवन की प्रेरणा देने वाले साचे में ढलने से ही हमारी समाज व्यवस्था कल्याणप्रद हो सकती है जैसी कि भारत के स्वर्णिम युग में रह चुकी है । अतः समाज के ढांचे में ऐसा स्वस्थ परिवर्तन किया जाय जो भारतीय श्रेष्ठ परम्पराओं और भारतीय आत्मा से अनुप्राणित हो। बलवान के हाथों कमजोर का शोषण होने से, गरीब ग्राहक का लोभी विक्रेता से लूटे जाने से, जन साधारण प्रजा का स्वार्थान्ध राज्याधिकारियों, शक्ति सम्पन्न व्यक्तियों संगठनों, स्वयं भू नेताओं के द्वारा दोहन होने से और हर समय रोटी कपड़े, बच्चों क शिक्षा और समाज मे नाक रखने की चिन्ता से आक्लान्त होने से जनता की धार्मिक विशेषताओं के प्रति उपेक्षा बढ़ रही है और आसुरी प्रवृत्तियां धार्मिक प्रवृत्तियो पर छा रही हे। यह स्थिति बड़ी खतरनाक है। इस दुरवस्था के लिये हमारा वर्तमान शासक दल (कांग्रेस) भी बहुत बड़ी सीमा तक उत्तरदाता है। दल गत राजनीति के कारण जहाँ भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन मिल रहा है वहां शक्ति और सम्पत्ति की प्राप्ति तथा आत्म-संवर्धन के लिये बड़े घृणित उपाय भी बर्ते जा रहे हैं । केन्द्र में और राज्यों में भ्रष्टाचार और लाल फीता शाही से प्रजा दुःखी और तंग है। अयोग्य व्यक्ति दाव-पेच, सिफारिश, खुशामद और घूस आदि अनुचित हथकंडों से ऊपर पहुंच कर बनदना रहे हैं। धार्मिक और नैतिक मूल्यों का जितना अपमान और जितनी उपेक्षा राजवर्ग में हो रही है उतनी शायद ही प्रजावर्ग में हो रही हो। यदि सर्व साधारण प्रजा को नेताओं के आत्म त्याग सत्य, ईमानदारी और सहयोग के आदेश उपदेशों के प्रति उपेक्षा उत्पन्न हो जाती है तो इसमे उनका अधिक दोष नहीं है। कांग्रेस के संभलने के लिये अभी समय है। यदि कांग्रेस पुनः सत्य, तप त्याग और आत्म बलिदान को वही रूप दे सके जो उसने स्वराज्य प्राप्ति के काल में गांधी जी के नेतृत्व में दिया हुआ था तो वह उपर्युक्त जिम्मेदारी से बहुत कुछ बच सकती है। देश ने विशुद्ध धार्मिक भावना के बल पर ही देश की स्वतन्त्रता प्राप्त की थी और इसी के सहारे उसकी रक्षा हो सकती है।

प्रजातन्त्र की प्रणाली अत्यन्त प्राचीन वेदकालीन उपयुक्त, न्यायपूर्ण और स्थिरता की संभावनाओं से परिपूर्ण शासन पद्धति है परन्तु प्रजा के ज्ञानवान समाज सेवी और चरित्रवान होने से ही यह व्यवस्था सफल होती है। इसके लिये अपने हित के साथ समाज का हित भी सामने रखना होता है। समाज हित के बलिदान पर अपना हित सिद्ध करने से परहेज करना पड़ता और अधिकारों की अपेक्षा कर्त्तव्यों को प्रमुखता देनी होती है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज के नियम सं० ९ और १० मे व्यक्ति और समाज के पारस्परिक सम्बन्धों और दायित्वों का कितना विशद निरूपण कर दिया है। दोनों नियम इस प्रकार हैं :—

(९) प्रत्येक को अपनी ही उन्नतिसे सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

(१०) सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और स्व हितकारी नियम पालने में सब स्वतन्त्र रहें।

प्रजातन्त्र की पद्धति सबको समान नहीं बना सकती वह मनुष्य को अपना हर प्रकार का

विकास करने की स्वतन्त्रता देती और अवस्था उत्पन्न करती है। भारत को सदियों की पराधीनता में रहने के कारण, इस पद्धति को सफलता पूर्वक व्यवहृत करने मे समय लगेगा। इसके प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी आवश्यक है।

देश के बच्चे २ को यह समझ लेना चाहिए कि यह राज्य उसका अपना है। राज्य की उन्नति में उसकी उन्नति और उसके यश मे उसका अपना यश है। राज्य की उन्नति और कीर्ति में योग देना उसका परम कर्त्तव्य है। शासकों को यह समझ लेना चाहिए कि राज्य शासन उनके हाथों में एक पवित्र धरोहर है। जनता के सच्चे सेवक बनकर उन्हें इस दायित्वको खूबसूरती के साथ निवाहना है। वाह्याडंबर विलासित, टीमटाम में जनता की गाढ़ी कमाई का पैसा बर्बाद करने राज्य को आत्म संवर्द्धन का साधन बनाने, और सांस्कृतिक आयोजनों के नाम पर विलासिता एवं कामुकता। को आश्रय देने का उन्हें अधिकार नहीं है वरन् ऐसा करना सामाजिक अपराध है। उन्हें इतिहास की इस चेतावनी को हृदङ्गम करना चाहिये कि बाह्य आडम्बरों विलासिता अहंभाव और तानाशाही से मुगल साम्राज्य जैसे महान वैभव और वर्चस्व पूर्ण साम्राज्य और यूनान जैसे महामहिम गणतन्त्र शासनों को धराशायी होते देर न लगी।

संक्षिप्त राष्ट्रभाषा कोष

'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा' ने प्रारम्भिक से लेकर कोविद आदि तक की अपनी परीक्षाओं के लिये 'संक्षिप्त राष्ट्रभाषा कोश' नामक एक हिन्दी कोश प्रकाशित किया है। इसके सम्पादक हैं महापंडित श्री राहुल सांकृतायन। इसके पृष्ठ ५८ पर आर्य समाज शब्द का अर्थ निम्न प्रकार लिखा है :—

आर्य समाज—पु० (सं०) ऋषि दयानन्द का चलाया पन्थ। पुनः पृ० २८३ पर पन्थ शब्द का अर्थ दिया है—पन्थ पु० (सं०) १ आचार व्यवहार का ढङ्ग २—रास्ता ३—सम्प्रदाय।

आर्य समाज सेवा केन्द्र बिलोनिया के श्रीयुत पं० सदाशिव जी द्वारा इस अनर्थ की ओर सार्वदेशिक सभा कार्यालय का ध्यान आकृष्ट किये जाने पर, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति को लिखा गया कि यह अर्थ सर्वथा असत्य और निर्मूल है। महर्षि दयानन्द पन्थ के कट्टर विरोधी थे। आर्य समाज एक विशाल संगठन है जिसका उद्देश्य वैदिक (आर्य) धर्म का प्रचार करना है साथ ही मांग की गई कि वे शीघ्र से शीघ्र इस भूल का परिमार्जन करदे। प्रसन्नता है राष्ट्रभाषा प्रचार समिति ने आगामी संस्करण में इस भूल का संशोधन करना स्वीकार कर लिया है। इतना ही नहीं उन्होंने इस भूल के लिये जो अनजान में हुई खेद भी प्रकाशित किया। सभा से उन्हें पुनः लिखा गया कि वे इस भूल का समाचार पत्रों मे प्रकाशन करके उसका यथेष्ट परिमार्जन करदे और कोश की अवशिष्ट प्रतियाँ संशोधित रूप में ही प्रचारित करने की व्यवस्था करे। यह भी लिखा गया कि अभीष्ट संशोधन सभा से भेजा जा सकता है।

राष्ट्रभाषा समिति ने अपने मुख पत्र मे संशोधन प्रचारित करना स्वीकार करके अभीष्ट संशोधन भेजने की कार्यालय को प्रेरणा की तदनुसार निम्न लिखित संशोधन भेज दिया गया :—

आर्य समाज का अर्थ—महर्षि दयानन्द द्वारा संसार के उपकारार्थ संस्थापित आर्यो का समाज।"

———

श्री पं० रामदत्त जी शुक्ल

श्रीयुत पं० रामदत्त जी शुक्ल के निधन (४ फरवरी ५६ की रात्रि) का समाचार देते हुए हृदय को बड़ी वेदना होती है। १९५३ के दिसम्बर मास में लखनऊ में उन पर पक्षाघात का आक्रमण हुआ था। तभी से वे शय्यागत होकर आर्य-समाज की सक्रिय सेवा से पृथक् होने के लिए विवश हो गये थे। अपने स्व० पिता श्रीयुत पं० नन्दकिशोर जी से जो उत्तरप्रदेश में आर्यसमाज के प्रख्यात उपदेशक थे, उन्होंने आर्य समाज की सेवा का व्रत ग्रहण किया था और उसके लिये अपने को पूर्णतया तैयार भी किया था। उन्होंने बी० ए० एल० एल० बी० पास करके एम० ए० संस्कृत में उत्तीर्ण किया और धार्मिक साहित्य में विशेष योग्यता प्राप्त की। इतना ही नहीं उन्होंने आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने का निश्चय करके उसे अन्त समय तक निबाहा। कहने को तो उनका व्यवसाय वकालत का था परन्तु उसमें उनका बहुत कम समय लगता था। उनका प्रायः सब समय स्वाध्याय और आर्य समाज की सेवा में ही व्यतीत होता था। आर्यसमाज मे उनकी टक्कर के बहुत कम विद्वान है। वे वर्षो तक आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के मन्त्री आदि पदों पर कार्य करते रहे और सार्वदेशिक सभा के प्रतिनिधि तथा अन्त-रंग सदस्य रहे।

सार्वदेशिक सभा की बैठकों में उन्हें विशिष्ट स्थिति प्राप्त रहती थी। उनकी बातें तथा भाषण विद्वत्ता, वैधानिकता, मधुर हास्य, प्रगल्भ चुटकियों युक्तियों और उक्तियों से प्रभावोत्पादक और जीवित बन जाया करते थे। उनके जीवन तथा हृदय की स्वच्छता और सरलता आकर्षण से परिपूर्ण थी। आर्यसमाज का दुर्भाग्य है कि वह अपने एक विशिष्ट विद्वान एवं कार्यकर्ता से जिनसे उसे विशेष आशाएं थीं, इतना शीघ्र वंचित हो गया। परमात्मा से प्रार्थना है कि वह दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदान करे।

बड़ा ही अच्छा हो यदि उत्तर प्रदेश की आर्य जनता श्री शुक्ल जी की अच्छी यादगार कायम करे।

'जिन्दगी'

देहली से प्रकाशित होने वाले ईसाइयों के उर्दू मासिक 'जिन्दगी' पत्र के जनवरी और जून ५५ के अंकों में महर्षि दयानन्द सरस्वती के पवित्र जीवन पर कीचड़ फेंकी गई थी जिससे महर्षि के अनुयायियों एवं आर्य जगत में क्रोध और रोष का फैलना स्वाभाविक था। राज्य के अधिकारी जानमें वा अनजान में इस अनर्थ पर मौन साधे रहे परन्तु जब आर्यजनों का रोष द्रुतगति से बढ़ने लगा और यह मांग जोर पकड़ती गई कि उक्त लेखों के लेखक, पत्र के सम्पादक और मुद्रक के विरुद्ध तत्काल कानूनी कार्यवाही की जाय और पत्र की जब्ती की जाय तो राज्याधिकारियों की नींद टूटी! सार्वदेशिक सभा की ओर से दिल्ली के चीफ कमिश्नर को लिखा गया कि वे आर्य-समाज को परीक्षण में डालने के लिये विवश न करें और तत्काल उचित पग उठाकर बढ़ते हुए असन्तोष को दूर करें। प्रसन्नता है दिल्ली के चीफ कमिश्नर महोदय ने आर्यो की सामूहिक मांग की गम्भीरता को अनुभव किया और ९ फर-वरी १९५६ की आज्ञा के द्वारा उक्त पत्र के जनवरी और जून ५५ के अंकों को जब्त कर लिया। यदि राज्य सरकार समय पर यह आवश्यक कार्यवाही कर देती तो इसकी शोभा बनी रहती। खेद है राज्य सरकार इस अवसर से चूक गई।

उद्घाटन

आर्यसमाज बिजनौर ने अपने समाज मन्दिर में लगभग ३० हजार की लागत से एक विशाल वेद भवन का निर्माण कराया है जिस में वैदिक

साहित्य का संग्रह करके स्वाध्याय का समुचित प्रबन्ध रहेगा। समाज के ७१ वें वार्षिकोत्सव पर १७-१२-५६ को श्री पं० अलगूराय जी शास्त्री संसद् सदस्य द्वारा उक्त भवन का उद्घाटन हुआ।

बौद्ध सन्तों के अवशेष

भारत सरकार ने ब्रिटिश म्यूजियम से बौद्ध सन्तों के २००० वर्ष पुराने अवशेष मंगाये हैं जो ब्रह्मदेश तथा लंका के राजदूतों को सौंप दिए गए हैं। अवशेषों की इस अन्ध-विश्वास पूर्ण प्रतिष्ठा से न तो बौद्धमत की सेवा ही हो सकती है और न बौद्ध सन्तों के प्रति सम्मान और कृतज्ञता का वास्तविक प्रकाश ही हो सकता है। बौद्धमत के पतन का एक प्रमुख कारण अवशेषों की यह प्रतिष्ठा ही थी जिसने एक अनुष्ठान का रूप लेकर लोगों को बौद्धमत की प्रेरक शक्ति से वंचित कर दिया था। भगवान बुद्ध के चमत्कारों का अंध विश्वासपूर्ण ढकोसला खड़ा करके और उनके तथा बौद्धसन्तों के दाँतों, पैरों के नाखूनों तथा भौहों के बालों को सुरक्षित रखने के बहाने से बड़े २ स्तूपों और विहारों के निर्माण के लिये अपरिमित धन एकत्र करने का उपाय निकाला गया था। भगवान बुद्ध और बौद्ध सन्तों की स्मृति को बनाये रखने के लिये उपयुक्त स्थान हृदय है और उनकी सत्शिक्षाओं को क्रिया में लाकर उन्हें मूर्त रूप देना ही उनका वास्तविक सम्मान है।

इस प्रकार के अंध विश्वासों ने भोली जनता से न केवल धन की ही अपितु राज्याश्रयों में पालित पोषित होनेसे रक्त की भी बलि ली। जिस प्रकार प्राचीन काल के चक्रवर्ती राजा यज्ञ के अश्व को पकड़ने वाले राजाओं के साथ युद्ध करते थे उसी प्रकार बौद्ध सम्राट बौद्ध मत की आत्म-संयम एवं मानव प्रेम की शिक्षाओं के विपरीत मूल्यवान अवशेषोंकी प्राप्तिके लिए आपसमें लड़कर खून के दरिया भी बहाते थे (देखें हावैल की आर्यन रूल इन इण्डिया) हमारी धर्म निरपेक्ष शासन को जनता में इस प्रकार के अन्ध विश्वासों के प्रसार का कारण बनने से परहेज करना चाहिये। बौद्ध मत के पतन का एक कारण भगवान बुद्ध तथा बौद्ध संघ की भावना के सर्वथा विरुद्ध अन्ध विश्वासों एवं चमत्कारों का प्रवेश विविध अभिशापों के साथ महंगे बाह्याडम्बरों का सूत्रपात और प्रदर्शन था जिसके प्रसार में सम्राट अशोक का भी हाथ रहा था। सम्राट अशोक को अपना आदर्श मानने वाले देश के कर्णधारों को उस भूल से बचना चाहिये। जो स्वयं सम्राट अशोक ने भी की थी। निःसन्देह भावना का अर्थ और मूल्य है परन्तु बुद्धि विहीन भावना व्यर्थ ही नहीं हानिकारक भी होती है। इसी प्रकार भावना विहीन बुद्धि व्यर्थ होती है। भावना और बुद्धि दोनों ही व्यर्थ होती है यदि वे ईश्वरीय प्रेरणा और कर्तव्य पालन की भावना से परिपूर्ण न हो।

—रघुनाथप्रसाद पाठक

मणिमाला

१. प्रत्येक शुभ कार्य अपना मार्ग स्वयं बना लेता है।

२. श्रेष्ठ कर्म्म आभ्यन्तरिक पवित्रता को दृढ़ करता है।

३. अच्छा काम कभी नष्ट नहीं होता।

४. निःस्वार्थ भाव में किए हुए उत्तम कार्य्य मनुष्य के जीवन चरित्र के उज्ज्वलतम पृष्ठ होते हैं।

५. विचारों के समान ही कर्म्मों में महान बनो।

६. कर्म्म हमारे हैं उनका फल ईश्वराधीन है।

७. इस जीवन के कर्म दूसरे जीवन का प्रारब्ध होता है।

८. समय पर अच्छा कर्म करने से तुम जन्म-जन्मान्तर के लिए अच्छा संग्रह कर लोगे।

९. अच्छे कर्म्म का प्रभाव इतनी दूर तक जाता है जिसकी तुम कल्पना भी नहीं कर सकते।

आर्यों को ऋषि-ऋण चुकाने का सुअवसर

लेखक—श्री ज्ञानेश्वर नन्द वानप्रस्थी

अनादि काल से सृष्टि चक्र के नियमानुसार ब्रह्मरात्रि के समाप्त होने पर सदैव ही ब्रह्म दिन का आरम्भ होता है। उसी आधार पर ही इस बार भी ब्रह्म-रात्रि के व्यतीत होनेपर जब ब्रह्म दिन का आरम्भ हुआ तो सर्व प्रथम हमारा यह देश भारतवर्ष ही आर्यावर्त्त देश के नाम से प्रसिद्ध हुआ। एक लम्बे समय तक हमारा देश संसार का शिर मौर देश बना रहा। यहां के निवासी ईश्वर विश्वासी, प्रभु भक्त देवताओं की भांति सत्यवादी, ब्रह्मज्ञानी वेदज्ञान के वास्तविक ज्ञाता, सारे के सारे भूमण्डल को भली एवं कल्याणकारी शिक्षा से सुशिक्षित करके उच्च और आदर्श मार्ग जताते और बताते रहे। दूर २ देशों के लोग यहां पर आते, उच्च शिक्षा ग्रहण करते, और अपने देशों को लौट जाते. वहां जाकर उस विद्या का, विज्ञान का, कला कौशल का प्रचार करते और विस्तार करते। अर्थात उस समय विश्व की शिक्षा का आदि स्रोत यह आर्यावर्त्त देश ही था। वह समय तो गुजर गया और यहां पर महाभारत के समय का आगमन हुआ, तब यहां भाई २ में परस्पर युद्ध की रचना हो गई। बस फिर क्या था, उस युद्ध में यहां की सारी कीर्ति का, यश का, वैभव का, विद्या का, बल का, तेज का, ज्ञान का, सत्यता का तथा सर्व प्रकार की अच्छाइयों का विनाश हो गया, सब मिट्टी में मिल गया, दशा ही पलट गई। आर्यों का यह देश आर्यावर्त अनारियों की सी भूमि प्रतीत होने लगा। यहां पर सदैव के लिये युद्ध का अखाड़ा सा बन गया। उस समय यहां का योग्य ब्राह्मण वर्ग इस देश का त्याग करके चला गया। तब उस शर्मन वर्ग ने यहाँ से दूर बहुत दूर एक नवीन नगरी शर्मन नाम से बसाई। इस शर्मन नगरी का नाम बदलते २ आज जर्मन नाम से प्रसिद्ध है। वह शर्मन जाति वेद ज्ञान के आश्रय से ही अपने देश को महान् बनाने में सफल हुई। परन्तु आर्य्यावर्त दिन प्रति-दिन अधोगति को ही प्राप्त होता गया। यहां तो आर्यों के स्थान पर अनार्य, वाममार्गी अर्थात उल्टे मार्ग पर चलने वालों का एक समूह दिखाई देने लगा। धर्म का चारों ओर अभाव सा होता चला गया। मांस भक्षण, मदिरा सेवन, नारी से बुरा व्यवहार, दुराचार का भैरवी चक्र सा चलने लगा, जुआ, मांस, भंग, चरस, अफीम, गांजा, सुलफा, बीड़ी, सिगरेट आदि समस्त मादक पदार्थों का सेवन यहां के लोगों में बड़ी तीव्रता के साथ फैलता जा रहा था। यहां के लोग देवी देवताओं के नाम ले लेकर यज्ञ रचते, और उन यज्ञों में देवी देवताओं के नाम पर ही पशु बलि, नर बलि आदि पिशाच कर्म करते, मांस को यज्ञ में चढ़ाते थे। बाल काल के विवाह होते, बाल विधवायें रो-रो और तड़प २ कर अपनी आयु के यौवन काल को सड़ा २ कर काटतीं और नर पिशाच उनके सतीत्व का विनाश करते। पंडे-पुजारी अत्याचारी उन पर भयंकर कष्टों के पर्वत गिराते. देश के अनाथ तड़पते। तात्पर्य यह कि चारों ओर घोर तिमिराच्छादित था।

ऐसी महान् भयंकर दशा थी। देश दिन २ अधोगति की ओर गिरता जा रहा था। विदेशियों

को सुअवसर हाथ आया। उन्होंने भाई २ के इस पारस्परिक कलह को अपने लिये वरदान मान कर भारत में पग बढ़ाया और उस समय जिसके हाथ शासन आया, उसने शासक बनते ही अपने मत को शास्त्र बल से फैलाने का यत्न किया। इस प्रकार एक नहीं, अनेक विदेशी जातियों ने आक्रमणों द्वारा, छल कपट द्वारा समय २ पर यहां आकर भिन्न २ प्रकार से अपना प्रभाव जमाने का प्रयत्न किया। आज से दो सहस्र वर्ष पूर्व यहां की जनता इतनी स्वार्थ परता में फंसी हुई थी कि देश की परिस्थिति की ओर से वह अचेत हो गई। अत्याचारी समुदायों को प्रविष्ट होना सुगम हो गया। यहाँ यवन और अंग्रेजों ने अपने २ समय में मनमाने अत्याचार करने में किसी प्रकार की कसर नहीं छोड़ी। आर्यों के प्राचीन बहुमूल्य साहित्य को अग्नि देव की भेंट चढ़ाया, और उसके समाप्त हो जाने पर जनता की सभ्यता, आचार-विचार भाषा के विनाश करने वाले गन्दे साहित्य को वह स्थान दिया गया।

इतना भ्रष्ट समय आ चुका था। भारतवर्ष का समस्त चित्र परिवर्तन हो गया था। प्रभु परमेश्वर के स्थान पर लोग सोने चाँदी पीतल, ताम्र और मिट्टी कागज आदि की मूर्तियां अपने ही हाथों से बना २ उसे भगवान कह कर पुकारते थे। उसे सुलाते, जगाने, खिलाते, पिलाते, स्नान कराते, वस्त्र पहनाते. प दीप दिखाते, फिर उसी का कीर्तन करते, आराधना करते, याचना करते. अभ्यर्थना करके अपने कष्टों की निवृत्ति चाहते। इस प्रकार अन्धकार की पराकाष्ठा हो चुकी थी। यवन और ईसाइयों ने आर्य जाति को उसकी इस मन्दमति अवस्था में अपना शिकार बनाने के लिये अनेकों ही यन्त्रणायें बना रखी थीं। छोटी जाति के लोगों को हिन्दू कहलाने वाले उस समय के आर्यों की ओर से तिरस्कृत किया जाता था, उन्हें पास बिठाना जन्मगत जात के अभिमानी अच्छा न मानते थे। यह बात विधर्मियों के लिये एक बहुत बड़े शास्त्र के रूप में हाथ आ गई। हिन्दुओं के परस्पर के वैर विरोध से एक दूसरे के मान्य महापुरुषों पर आरोप. गाली, निन्दा आदि का आश्रय लेकर उन्हें अपने प्रचार का प्रसार करने का बहुत सुगम साधन मिल गया था।

ऐसे ही समय में काठियावाड़ गुजरात प्रान्त में मौरवी टंकारा की पवित्र भूमि में एक ज्योति का प्रकाश हुआ. जिसमें बाल काल से ही प्रकाश के चिन्ह दिखाई दे रहे थे। बालक मूलशंकर ने अपनी छोटी सी आयु में ही अनेक बड़े २ ग्रन्थों को कण्ठस्थ कर लिया था। माता पिता ने अपने पारिवारिक नियमों के अनुसार ही बालक मूलशंकर को भी शिव भक्त बनाया और शिव चौदस के दिन मूलशंकर ने व्रत रखकर महात्म्य के अनुसार महादेव के साक्षात दर्शन करने की इच्छा से. लालसा से जागरण किया। परन्तु वह मनोरथ सिद्ध न होकर उलटे अनेकों शंकायें खड़ी हो गई और हृदय पर शंकाओं ने डेरा डाल दिया। कुछ ही दिनों के पश्चात् प्यारी भगिनि और पूज्य चाचा जी की मृत्यु हो जाने पर मूलशंकर की शंकाओं में और वृद्धि हो गई जिसका निवारण संसारी लोग न कर सके। तब मूलशंकर शंकर के मूल को जानने और मृत्यु को पहचानने के लिये गृह को परित्याग कर चल दिये। मूल जी गृह त्याग के पीछे शुद्ध चेतन ब्रह्मचारी ने सोचा कि बिना योग और तप के कुछ प्राप्त न हो सकेगी. तो वह सब शंकाओं की पूर्ति के लिये तपस्वी और योगी बनने को श्री स्वामी पूर्णानन्द जी संन्यासी से संन्यास की दीक्षा लेकर दयानन्द बने। फिर वन, पर्वत, नदी, नाले और बड़े २ हिंसक पशुओं के भरे जंगलों में घूम २ कर प्रतीक्षा की, परन्तु कहीं भी हृदय की वेदना शान्त

न हुई। हाँ देश की दशा का पूर्ण ज्ञान होने पर अब दयानन्द के सामने वही एक दो नहीं अनेक प्रकार की उथल-पुथल व जटिल समस्यायें खड़ी हो गई। मूर्तिपूजा एवं मृत्यु की वास्तविकता के जानने के लिये निकले हुए दयानन्द ने अब भारत निवासियों की दशा को भी देखा। अनाथों, विधवाओं और छोटी जाति के लोगों की हीन दशा, तिस पर हिन्दू, यवन, ईसाइयों का कसाई का सा व्यवहार देखा। अंग्रेजों ने भारतवासियों को अपने ही रंग में रंगने और भारतीयों की सभ्यता को मिटाने का जो जाल बिछा रखा था, उस सब को देख २ कर दयानन्द का दिल तड़प उठा था : उस तड़पते हुए दिल की सद्मार्ग प्राप्ति के लिये दयानन्द एक दिन मथुरा में श्री दण्डी स्वामी विरजानन्द की कुटिया में उनके चरणों में आ बैठे। वहाँ से दयानन्द को एक अपूर्व ज्ञान, एक अद्भुत प्रकाश प्राप्त हुआ। चारों ओर का तिमिर जाता रहा। वेद ज्ञान की दिव्य ज्योति को प्राप्त कर दयानन्द अपने गुरुवर श्री दंडी जी के आदेशानुसार ही संसार के कल्याण के लिये कार्य क्षेत्र में निकले। आपने गुरु आज्ञा से अपने स्वार्थ (मोक्ष) मार्ग का त्याग किया और ससार के उपकार में लीन हो गये।

महर्षि श्री स्वामी दयानन्द से पूर्व और महाभारत युद्ध के पश्चात् इस ऋषियों की पवित्र और पुण्य भूमि भारत के उत्थान और कल्याण के लिये यहां एक दो ही नहीं, भारत मां के सैकड़ों ही लाल समय २ पर इसकी रक्षार्थ और देशोत्थान के लिये यत्नवान होते रहे और वह अपने २ समय में बड़ी उपयोगी सेवायें करते रहे। श्री स्वामी शंकराचार्य, श्री कुमारिल भट्ट, वीर शिवाजी, राणा प्रताप, वन्दा वीर वैरागी, श्री गुरु गोविन्दसिंह जी आदि इसी प्रकार के अन्य अनेक महापुरुषों ने भारत मां की सेवा के लिये कोई कसर नहीं की थी। परन्तु हमें यह मानने में तनिक भी संकोच न होगा कि इन सब महानुभावों ने केवलमात्र अपनी दृष्टि और कार्य की गति मां के एक २ कष्ट की ओर ही सीमित रक्खी थी। परन्तु ऋषि दयानन्द ने तो चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। उसने देश के प्रत्येक कष्ट को पहचाना और सभी कष्टों को मिटाने के उपाय किए, साधन खड़े किये। चारों ओर की व्याधियों को मिटाने के लिए ही दयानन्द ने कहा कि ईश्वर किसी सीमामें नहीं आसकता। इसलिये उस प्रभु की कोई मूर्ति नहीं, कोई अवतार नहीं, वह जन्म और मृत्यु से परे है। उसका मुख्य नाम ओ३म् है, शेष सब गौण। दयानन्द ने कहा बच्चों को यदि आचार वाला बनाना चाहते हैं तो धार्मिक विचार देने के लिये माता को चाहिये कि गर्भ से पूर्व उसकी शिक्षा के लिये स्वयं सुशिक्षित बने। पिता और आचार्य भी पूर्ण योग्य हों। माता पिता आचार्य के जीवन से ही बालकबालिकायें सदाचारका जीवन ग्रहण करते हैं। उनकी बुरी आदतें बालकों के निकट न आनी चाहियें। वह अपना जीवन आदर्श ब्रह्मचर्य पूर्ण वितायें। प्रथम आश्रम से उत्तीर्ण होकर दूसरे आश्रम में जाने योग्य हों। तब माता पिता आचार्य और गुरुजनो की अनुमति प्राप्त कर अपने २ योग्य वर्ण वाले लड़के व लड़की का गुण कर्म स्वभावानुसार विवाह होकर गृहस्थ जीवन को काम वासना पूर्ति के लिये नहीं, नियमानुसार ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए उत्तम व अल्प सन्तान के माता पिता बने प्रत्येक गृहस्थ को सदा पंच महायज्ञ कराने चाहियें। प्राणिमात्र को मित्र की दृष्टि से देखें। किसी से वैर विरोध और अत्याचार पूर्वक व्यवहार न करें। गृहस्थ के पश्चात वानप्रस्थाश्रम और संन्यास का भी समय पर सेवन करें। मानव जीवन की सफलता के लिये राजा को अपनी प्रजा को पुत्रवत देखना योग्य है,

और प्रजाजन अपनी राष्ट्र सत्ता के नियमों को सच्चे हृदय से पालन करें। महर्षि ने देश की परतन्त्र दशा को देख स्वतन्त्रता के उपाय बताये। नीच ऊंच के भेद मिटाने का आग्रह किया। मानव मात्र उस प्रभु के अमृत पुत्र के रूप में हैं। इसलिये छुआछूत के भूत को भगाने की प्रेरणा दी। देश का कोई बालक अनाथ नहीं, राष्ट्र उसका पिता और वह राष्ट्र की सन्तान है, वह सनाथ है। बाल विवाहों, बहु विवाहों वृद्ध विवाहों की प्रथा को देश व जाति के लिये नाशकारी बताया।

उपर्युक्त समस्त बातें आज फिर देश के स्वतन्त्र वातावरण में भी वैसे ही कंटक बन कर खड़ी हैं जैसे ऋषि के आगमन से पूर्व कंटक बनकर खड़ी थीं। महर्षि के जीवन काल में तथा उसके पीछे कुछ समय तो लोगों ने उनके आदेश को सच्चे आर्यों के रूप में पालन किया था और उस समय कुछ अच्छा सुधार भी हुआ था। परन्तु जब से इस देश की कमान स्वर्गीय राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने सम्भाली, और अब से आर्यों ने देश की स्वतन्त्रता को मुख्य स्थान दिया और धर्मके कार्यों को पछाड़ दिया स्वतन्त्रता संग्राम में लड़ना तो कर्तव्य था, मगर धर्म को बिसार कर नहीं। उसके फलस्वरूप प्रभु कृपा से विजय भी प्राप्त हुई। परन्तु देश का आचार विचार धर्म के बिसार देने के कारण इस युग में सर्वथा विनाश को प्राप्त हो गया नवयुवक और नवयुवतियां चरित्र की पवित्रता का विचार तो सर्वथा छोड़ बैठे। सब पश्चिम के रंग में रंगे दिखाई देने लगे। इधर हरिजनों की एक पृथक रूप से रेखा खड़ी कर दी गई। देश के प्रत्येक व्यक्ति ने निजू कार्य को ही एक जाति का नाम देकर अपना एक पृथक संगठन बना डाला जिससे प्रत्येक जाति को राष्ट्र के सिंहासन में एक कुर्सी प्राप्त हो जाय। जिन अछूतों एवं दलितों को आर्यसमाज ने एक लम्बे समय से पण्डित और शास्त्री बना रखा था, वह सब महात्मा गांधी जी के हरिजन आन्दोलन के आते ही पुनः अछूत के अछूत ही बन बैठे और हम से बहुत दूर चल दिये। राष्ट्र ने घोषणा की कि हम धर्म से पृथक रह कर कार्य करेंगे तो सब ने सोच लिया कि इस युग में या इस राष्ट्रमें धर्म और धार्मिक जीवन की कोई आवश्यकता नहीं है। इस कारण चारों ओर अधर्म के ही जयकारे होने लगे। हिन्दू कहलाने वाले राष्ट्र वादी लोग तो इस विचार के आते ही तत्काल धर्म से परे भाग गये और धर्म का सर्वथा त्याग कर दिया परन्तु ईसाई, यवन और अन्य मत वालों ने अपने २ मतों के विस्तार के तार अधिक से अधिक फैलाने आरम्भ कर दिये। महर्षि के भी कुछ कच्चे अनुयायी इस बहाव में हिन्दू के साथ २ राष्ट्रवादी गति के बहाव में बहुसंख्या में बह गये।

आज आर्य्यावर्त देश में चारों ओर पतन का शोर मच रहा है। इस पतन में सिनेमा का, नाच का, गाने का, पठन पाठन का, खान पान का और रहने सहने का बहुत बड़ा और बहुत भयंकर हाथ है। यह सब कुछ बढ़ता जा रहा है और इस अवस्था में भी ऋषि के अनुयायी परस्पर की लड़ाई के चक्कर में (अधिकारों के मोह में) ग्रस्त हुए पड़े हैं। वह समझते हैं हमने मैदान मार लिया है। अब आर्य समाज की आवश्यकता शेष नहीं रही क्योंकि महर्षि के सभी सिद्धान्तों को संसार ने स्वीकार कर लिया है। परन्तु मैं कहता हूँ कि ऋषि के कथनानुसार तो आर्य समाज की आवश्यकता अब ही आरम्भ होती है और आर्यों के ऋषि ऋण चुकाने का तो अवसर ही अब आया है। आर्यो! या आर्य कहलाने वाले बन्धुओ ऋषि ऋण का हम सब

* महर्षि जीवन घटनाएँ *

परमेश्वर पर विश्वास

काशी शास्त्रार्थ के समय बलदेव प्रसाद ने कहा—"महाराज, काशी गुंडों का घर है। फर्रुखाबाद होता तो १८-२८ आदमियों का प्रबंध करते।" स्वामी दयानन्द जी ने हंस कर कहा—'योगियों का निश्चित सिद्धांत है बलदेव! कि सत्य का सूर्य अन्धकार की सेना पर अकेला ही विजय प्राप्त करता है। पक्षपात रहित होकर ईश्वरानुकूल सत्य के उपदेष्टा को भय कहां? सत्पुरुष डर कर कभी सत्य नहीं छिपाते। क्या चिंता है, बलदेव! एक मैं हूं, एक ईश्वर है, एक धर्म्म है, क्या डर है भाई?'

सहन शीलता

फर्रुखाबाद में स्वामी जी वायु सेवन के लिये जा रहे थे। मार्ग में एक व्यक्ति ने गालियों का झड़ी लगा दी। आप सुनकर हसते रहे। वापस आये तो वह व्यक्ति डेरे पर गया कि अब सामने बैठकर सुनाऊंगा। महाराज ने बड़े ही मीठे शब्दों में 'आओ बैठो' कह कर सत्कार किया। स्वामी जी का बर्ताव देख कर वह भक्त बन गया। चरणों में गिर कर बोला, 'महाराज मुझे क्षमा करें, मैंने बड़ा अपराध किया है।' स्वामी जी ने कहा—"शांत हो जाओ, तुम्हारे शब्द वायु मे लीन हो गये हैं, उनसे हमारी कोई हानि नहीं हुई है'

महान् योगी

उदयपुर में जब स्वामी जी महाराज अन्त समय पधारे तो कविराज श्यामलदास जी ने गुरुदेव से पूछा—'क्यों महाराज, आपका कोई स्मारक बनना चाहिये या नहीं?' स्वामी जी ने गम्भीरता से उत्तर दिया—'देखना, ऐसा न करना। मेरे मृतक देह की राख को किसी खेत में डाल देना, वहाँ वह खाद का काम देगी। स्मारक कोई खड़ा न करना, ऐसा न हो कि मूर्ति पूजा फिर से प्रचलित हो जाय।

ब्रह्मचर्य का प्रताप

बगाल के एक ग्राम में स्वामी जी अमृत वर्षा कर रहे थे। शिवमत के एक अनुयायी ने एक काला जहरीला साँप स्वामी जी की तरफ फैंक कर कहा—"अब यह देवता फैसला कर देगा कि हममें से कोन सच्चा है?' सांप स्वामी जी की टांग पर लिपट गया। स्वामी जी ने यह कहते हुए, 'अच्छा तुम्हारा देवता ही मध्यस्थ ठहरा', एक झटके से सांप को अलग कर अपनी एड़ी से कुचल कर कहा, "अरे, आओ देखो। तुम्हारा देवता तो बहुत कमजोर निकला। मैंने ही इसका फैसला कर दिया। जाओ सब लोगों से कह दो कि झूठे देवता आसानी से कुचले जा सकते हैं।"

(अमृत वाणी)

पर बहुत बड़ा दायित्व है. बहुत बड़ा अभियोग है। इसलिये इस समय तुम सब वैर विरोध को छोड़कर अधिकारोंकी दलदलकेलिये लड़नाछोड़कर देश में फैलेहुए भ्रष्टाचार और वाममार्गका जो जोर होता जारहा है,उसे मिटादो। यह समय पूर्वापेक्षा भयंकर है। इसे स्वच्छ बनाने के लिये सब मिल कर यत्न करो नहीं तो आपका यह परस्पर का कलह ऋषि की सारी मेहनत और तपस्या के लिये घातक सिद्ध होगा। यह एक बहुत बड़ा अभियोग आप पर चलने वाला है। इस हत्यारे पन से बचो, और ऋषि ऋण को उतरने के लिये आज इस कल्याणकारी रात्रि में वैर-विरोध को जलाकर राख कर दो।

ऋषि दयानन्द द्वारा समन्वय

[ले०—श्री डा० सूर्यदेव शर्मा एम० ए० एल० टी०, डी० लिट्०]

अब इस प्रकाश युग में यह बात किसी से छिपी नहीं है कि ऋषि दयानन्द जहां एक ओर प्राचीनता के पुजारी और वेदोद्धारक थे वहां वे दूसरी ओर नवयुग के नेता, वर्तमान के विधाता और भविष्य के भारी पथ-प्रदर्शक थे। इसलिये देश और विदेशों के महान् विद्वान् प्रचारकों की ओर से ऋषि दयानन्द के लिये जो सम्मतियां दी गई हैं उनमें ऋषिवर को विभिन्न दृष्टिकोणों से उपस्थित किया गया है। कोई तो उन्हें केवल धार्मिक सुधारक ही कहता है, कोई हिन्दू जाति का उद्धारक, कोई अनाथ विधवाओं का रक्षक और कोई स्वराज्य का प्रवर्त्तक, कोई उन्हें केवल वेदों का प्रचारक और कोई महान् क्रान्तिकारी समझता है। पार्लियामेंट के सदस्य तथा प्रसिद्ध पत्रकार सर वेलेन्टायन शिरोल के शब्दों में तो वे भारत से विदेशी प्रभाव की जड़ उखाड़ कर फेंक देने वाले ही थे। शिरोल साहब लिखते हैं :—

The whole drift of Dayanand's teaching is far less to reform Hinduism than to rouse it into active resistance to the Alien influences which threatened in his opinion, to denationalize it.

अर्थात् दयानन्द के उपदेशों का सारा झुकाव हिंदू धर्म को सुधारने के लिये उतना नहीं है जितना कि उसे विदेशी प्रभावों के विरोध में एक क्रियात्मक शक्ति का रूप देने की ओर है, क्योंकि उनकी सम्मति में यह विदेशी प्रभाव हिंदू-राष्ट्रीयता को आघात पहुंचा सकते हैं। मेरी दृष्टि में ऋषि दयानन्द को किसी एक कार्य अथवा सुधार से ही सम्बद्ध करना उनके प्रति घोर अन्याय होगा। वे तो एक प्रबल समन्वयवादी थे। उनकी प्रतिभा सर्वोन्मुखी थी। भला कौनसा ऐसा मानव सुधार का क्षेत्र है जिस पर उनकी तीव्र दृष्टि न पड़ी हो। शिक्षा, अछूतोद्धार, अनाथ विधवाओं की रक्षा, सामाजिक सुधार, राजनीति, राष्ट्र-भाषा, वेद प्रचार आदि प्रत्येक कार्य में उनकी प्रतिभा प्रकट हुई है। भारत के धार्मिक क्षेत्र में तो उन्होंने कमाल का समन्वय किया है। उदाहरण के लिये जरा देखिये :-

१—बुद्ध भगवान् ने अपने सिद्धांतों में केवल त्याग और कर्म पर ही बल दिया था। आत्मज्ञान और परमात्मा की सत्ता को नितांत उपेक्षित ही कर दिया था। केवल कर्म को ही मोक्ष का साधन बताया था।

२—उनके बाद शंकर स्वामी ने केवल ज्ञान कांड पर बल दिया और नवीन वेदांत का ही प्रचार किया। 'एकम् ब्रह्म द्वितीयं नास्ति' कह कर संसार को ही मिटा दिया। उनके लिये ब्रह्म ज्ञान ही सब कुछ था। जहाँ बुद्ध ने केवल कर्म से ही मोक्ष की प्राप्ति मानी वहां शंकर ने केवल ज्ञान से।

३—मध्यकाल में भारत में रामानुज, वल्लभाचार्य, कबीर आदि अनेक धार्मिक आचार्य हुए जिन्होंने केवल भक्तिवाद अथवा उपासना कांड पर ही बल दिया। कर्म और ज्ञान सबको परे फेंक दिया। 'भक्त के वश में हैं भगवान्' की गूंज

सर्वत्र सुनाई देने लगी। उन्होंने केवल भक्तिमार्ग से ही मोक्ष की कुंजी प्राप्त करनी चाही।

४—आधुनिक काल में ऐसे सुधारक हुए जिन्होंने ज्ञानकांड, कर्मकांड और उपासना कांड को धता बताकर केवल पाश्चात्य विज्ञान का और पाश्चात्य रीति रस्मों का ही आश्रय लिया। राजा राममोहन राय ने सन् १८२८ में ब्रह्म समाज की स्थापना की। ठाकुर देवेन्द्रनाथ ने वेदों को छोड़ दिया। श्री केशवचन्द्र सेन ने सन् १८६० में यज्ञोपवीत को तिलांजलि दी। सन् १८६७ में बम्बई में प्रार्थना समाज की स्थापना हुई। लाहौर में श्री सत्यानन्द जी अग्निहोत्री ने देव समाज की स्थापना की। इन सब ने विज्ञान कांड को अपना आधार बनाने का दावा किया।

इस प्रकार पाठकों ने देखा कि ऋग्वेद का ज्ञान कांड यजुर्वेद का कर्म कांड, सामवेद का उपासना कांड और अथर्ववेद का विज्ञान कांड पृथक् पृथक् विचार धाराओं का धार्मिक क्षेत्र में आधार बना, लेकिन धन्य है ऋषि दयानन्द को कि उन्होंने चारों विचार धाराओं को एकत्र मिला दिया और सच्चे वैदिक धर्म का स्वरूप हमारे सामने उपस्थित किया। सब विचार धाराओं का स्रोत ऋषि दयानन्द ने वेदों में ही बतलाया और इस समन्वय का श्रेय उन्हीं को है। इसीलिये भारत के महान् योगी श्री अरविंद घोष ने लिखा था :—

Dayanand will be honoured as the first discoverer of the right clues. He has found the keys of the doors that time had closed and has rent asunder the seals of the imprisoned fountains

अर्थात् वेदों के सत्य अर्थ के इस युग में प्रथम ज्ञाता होने के रूप में दयानन्द का सदा सम्मान किया जायगा। उन्होंने अतीत काल से आवृत्त द्वारों को खोलने की कुंजी प्राप्त करली है और बंदी भूत ज्ञान के स्रोतों की मोहर तोड़ दी है। इसी में ऋषि का ऋषित्व है और इसी में शिव रात्रि का शिव संकल्पमय शुभ संदेश निहित है। इसी में ऋषि दयानन्द का वैदिक समन्वय है। इसी में ऋषि का महत्व है।

— —

ऋषि का विष-दाता

[ले०—श्री हरिशङ्कर शर्मा]

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान आचार्य श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति ने 'सार्वदेशिक' में प्रकाशित अपने एक लेख में लिखा है कि किसी दुष्ट द्वारा महर्षि दयानन्द को विष अवश्य दिया गया, इस घटना से इन्कार नहीं किया जा सकता यद्यपि उसका विवरण प्राप्त नहीं है। इस सम्बन्ध में मुझे अपने विद्यार्थी-जीवन की एक बात याद है। आशा है, उससे वस्तुस्थिति पर कुछ प्रकाश अवश्य पड़ सकेगा। शायद सन् १६२४ ई० में यह बात मैं 'आर्यमित्र' में भी लिख चुका हूँ। उस समय मैं ही 'मित्र' का सम्पादक था। बात इस प्रकार है:—

सन् १६०७ की ग्रीष्म ऋतु में एक संन्यासी, मेरी जन्म भूमि—हरदुआ गंज (अलीगढ़) के

एक बाग मे आकर रहा। यह बाग स्वर्गीय श्री प० शकरलाल शर्मा गली वालों का था। शर्मा जी आर्य समाजी तो नहीं थे, परन्तु आर्य समाज के सहायक और महर्षि दयानन्द के भक्त अवश्य थे। उनकी बठक-उठक मेरे स्व० पिता श्री नाथूराम शकर शर्मा के पास रहती थी। प० शकरलाल जो सम्पन्न और प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। वे साधु सन्यासियों की बड़ी श्रद्धा से सेवा करते थे। उनके यहा महीनों ऐसे कितने ही अतिथि रहे आते थे।

बाग मे ठहरे हुए सन्यासी ने अपना नाम 'शकरानन्द' बताया। वह टूटे फूटे सस्कृत वाक्य ब ल लेता था। यह भी कहता था कि मै श्री स्वा० दयानन्द सरस्वती जी के साथ रहा हू। जब पिता जी को यह मालूम हुआ तो वे उसके दर्शन करने गये और कुछ विस्तार पूर्वक बातें हुई। पिताजी को विश्वास हो गया कि वह सन्यासी महर्षि के साथ अवश्य रहा है। फिर क्या था, उसके स्वागत सत्कार की धूम मच गयी। हमारे घर तो वह नित्य आने लगा। पिताजी उसकी बातें सुन कर गद्‌गद् हो जाते और ऋषि जीवनचर्या के सम्बन्ध मे अनेक नवीन बातें जानकर अपने को धन्य समझते थे। हमारे और अन्य परिवारों मे भी शकरानन्द की देवता के समान पूजा होने लगी। प्राय दो मास के घनिष्ठ सम्बन्ध और सम्पर्क से मेरे पिता जी की इस सन्यासी के साथ काफी बेतकल्लुफी हो गई थी। हम लडके लोग दोनों की बातें, चुप-चुप बडे शान्त भाव से सुनते रहते थे। एक दिन शकरानन्द बातों ही बातों मे पिता जी से कहने लगा—"मुझ से जीवन में एक बड़ा पाप बन पडा है, मैं पापी हूँ—हत्यारा हूँ।" पिता जी ने बडे आश्चर्य और औत्सुक्य से पूछा—"महाराज, वह क्या? अनुचित न हो तो, बता दें। आग्रह तो मैं करता नहीं। ऐसा कौन सा व्यक्ति है, जिससे जीवन मे अपराध न बन पडे हों।" सन्यासी धाड मार कर रोने लगा और बोला—"महर्षि को इस पापी ने ही विष दिया था।" पिता जी यह सुन कर सन्न रह गये और भी कई लोग बैठे थे उनके क्रोध का तो ठिकाना न रहा। उस सन्यासी के प्रति श्रद्धा-सत्कार की भावना उसी समय समाप्त हो गई। वह बाग को चला गया चार-पाच दिन और ठहरा। फिर उससे नौकर द्वारा भोजन देने के अतिरिक्त, किसी ने किसी प्रकार का सम्बन्ध न रखा। हरदुआगज से चलकर शकरानन्द राजघाट (बुलन्दशहर) गगा तट पर रहने लगा। व्यास पूजा का दिन था, कितने ही लोग हरदुआ गज से भी राजघाट गगा स्नान को गये थे। उन्होंने सुना—व्यास पूर्णिमा से पाच दिन पूर्व वह सन्यासी गगा के गहरे जल मे डूब गया। सबके देखते • । अपने आप जान बूझ कर डूबा या दुर्घटना ग्रस्त होकर इसे कौन जानता है। कुछ लोगों ने यह भी अनुमान किया कि गहरे पानी मे कोई मगर-जल जन्तु उसे घसीट ले गया। जो हो, पर, राजघाट मे उसकी जीवन-लीला समाप्त अवश्य हो गई।

यह सन्यासी बोल चाल या स्वर लहजे से राजस्थानी मालूम होता था। काफी मोटा था। दाढी सफेद थी। गेरुआ वस्त्र पहने और सिर पर एक बड़ा साफा बाधे रहता था। कमण्डलु हर वक्त हाथ मे रखता था। यह एक कथा है। ज्ञात नहीं, इससे महर्षि की विष-दान सम्बन्धिनी घटना पर कुछ प्रकाश पडेगा या नहीं। यह विश्वसनीय भी समझी जायगी अथवा नहीं। मेरे पिता जी ने अपनी डायरी मे यह सारी चर्चा ज्यों की त्यों दर्ज करली थी। परन्तु वे उसे सुनकर इतने दु खी और क्रुद्ध हुए कि इस विष दान विधि को उस सन्यासी से विस्तृत रूप से जानने के लिये जरा भी तैयार न हुए। हो सकता था शकरानन्द कुछ बातें और उगलता और वे इतिहास की वस्तु बनतीं।

जिस समय यह बात मैंने 'आर्यमित्र' मे प्रकाशित की थी, एव श्री प० घासीराम जी एम० ए०, स्व० श्री मुन्शी ज्वालाप्रसाद जी (कानपुर) आदि आर्य नेताओं ने उसे बहुत महत्वपूर्ण बताया था। पूज्य श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज ने तो स्वय मेरे पिता जी के मुख से यह सारा वृत्तान्त सुना था।

———

'सा मा शान्ति रेधि' (यजु० ३६ । १७)

वही शान्ति मुझे मिले

(लेखक—आचार्य श्री नरदेव जी शास्त्री, वेदतीर्थ ज्वालापुर हरिद्वार)

वह कौन सी शान्ति है जो मुझे मिले—दुःख से संत्रस्त व्यक्ति ही शान्ति चाहता है, उसके लिये प्रयत्न करता है, करता रहता है। वैसे संसार में सैकड़ों प्रकार के दुःख हैं किन्तु दूरदर्शी अथवा सूक्ष्मदर्शी शास्त्रकारों ने सभी प्रकार के दुःख को तीन वर्गों में वर्गीकरण किया है :—

(१) आधिभौतिक दुःख।

(२) आधिदैविक दुःख।

(३) आध्यात्मिक दुःख।

इसलिये इन तीनों प्रकार के दुःखों के छुटकारे केलिये पुरुषार्थ करते है। इसीलिये हम लोग वैदिक सिद्धान्तानुरूप सब प्रकार के यज्ञ-यज्ञादि कर्मों के अन्त में तीन बार 'ॐ शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः'का उच्चारण करते रहते हैं। मतलब तीनों दुःखों की शान्ति हो। ये तीनों प्रकार के दुःख जहां नहीं सताते वह एक ही अवस्था है—वह अवस्था है मोक्ष की। इस अवस्था को छोड़कर संसार भर में एक भी व्यक्ति नहीं मिलेगा जिसको उपर्युक्त तीन प्रकार के दुःखों में से एक न एक दुःख न चिपटा हो, अथवा न चिपटा रहता हो। इसी लिये सांख्य दर्शन कहता है कि—त्रिविध-दुःखात्यन्त निवृत्तिरत्यन्त पुरुषार्थः।

इसीलिये तीनों दुःखों के निवारणार्थ यजुर्वेद (३६-१७) निम्नलिखित मन्त्र मिलता है--

द्यौः शान्तिः

प्रकाशयुक्त पदार्थ शान्ति कारक हों।

अन्तरिक्षꣳ शान्तिः

दोनों लोकों का बीच जो आकाश है, वह शान्तिकारी हो।

पृथिवी शान्तिः

भूमि सुखकारी, निरुपद्रवी हो।

आपः शान्तिः

जल वा प्राग शान्तिदायी हों।

ओषधयः शान्तिः

सोमलता आदि ओषधियां सुखदायी हों।

वनस्पतयः शान्तिः

वट आदि वनस्पति शान्तिकारक हों।

विश्वेदेवाः शान्तिः

सब विद्वान लोग शान्ति का उपाय करें, सोचें।

ब्रह्म शान्तिः

परमेश्वर अथवा वेद हमें शांति की शिक्षा दे।

सर्वꣳ शान्तिः

संसार की सम्पूर्ण वस्तुएं हमें शान्ति देवें और चहुं ओर से मुझे।

शान्तिरेव शान्तिः

शान्ति ही शान्ति मिले।

सा मा शान्तिरेधि

और वह शान्ति बढ़ती ही रहे।

जहां २ से उपद्रवों की आशंका रहती है, उन सब स्थानों से शान्ति ही मिले यह अभिप्राय है। इस मन्त्र में शान्ति का उपाय वेदों का यथार्थ ज्ञान

और आध्यात्मिक शान्ति का उपाय ब्रह्म प्राप्ति यह भी ध्वनित किया है।

(१) आधिभौतिक दु:ख—शरीर सम्बन्धी दुख है, जो पंचमहाभूतों में विकार के कारण होते हैं। ये दु:ख व्यक्ति, जाति, समुदाय, समाज, देश राष्ट्र आदि सभी को होते हैं।

(२) आधदैविक दु:ख—अकस्मात् दैवी घटनाओं के कारण होने वाले दु:ख जिनका कारण कोई नहीं बतला सकता। ये दु:ख भी व्यक्ति, जाति, समुदाय, समूह, समाज. देश राष्ट्रों को लगे रहते हैं।

(३) आध्यात्मिक दु:ख—जो कि शरीर के भीतर द्वन्द्व चलते रहते हैं। भीतर ही भीतर त्रिगुणों के द्वन्द्व चलते हैं, उनसे सम्बन्ध रखते हैं और इनका सम्बन्ध भीतर आत्मा से रहता है। योगीजन बड़े साधनों के पश्चात् इन दु:खों को दबा पाते हैं।

प्रश्न यह है—ये दु:ख होते ही क्यों हैं ?

उत्तर—आत्मा के साथ चिपटे हुए धर्माधर्म रूपी कर्म विस्तार के कारण।

प्रश्न—कब से चिपटे हैं ?

उत्तर—जब से आत्मा है तब से।

प्रश्न—आत्मा कब से है ?

उत्तर—जब से सृष्टि है तब से, ये भी अनादि प्रवाह से चली आ रही है। कब से यह कोई नहीं बतला सकता।

प्रश्न—क्या इससे छुटकारा नहीं होता।

उत्तर—होता है केवल एक मोक्ष दशा में।

प्रश्न—शेष दशा में ?

उत्तर—जन्म मरण के चक्र में घूमा करो।

बात यह है कि प्रकृति तीन गुणों की पुतली है। इसलिये मनुष्य भी तीन गुणों का पुतला है—सत्व, रज, तम इन तीन गुणों का पुतला। संसार में ऐसा कोई प्राणी नहीं जिसमें ये तीनों गुण न हों।

सत्वगुण में आनन्द ही आनन्द है। प्रकाश का द्योतक है।

रजोगुण—में मिश्रित भाव रहता है सुख दुख का, इसी लिये इस गुण में कुछ प्रकाश रहता है कुछ अन्धकार। क्योंकि रजोगुणी बुद्धि यथार्थदर्शिनी विवेकिनी नहीं होती।

तमोगुण—यह तो है अन्धकार, अज्ञान और दु:ख का कारण है।

मनुष्य समुदाय, देश अथवा राष्ट्र में कभी कोई गुण उभर जाता है, कभी कोई। कभी कोई गुण किसी को दबा देता है। कभी अकेला ही दोनों गुणों को, कभी दो मिलकर एक गुण को। जो गुण जिसमें उभरा रहता है वह व्यक्ति, समुदाय वह देश, वह राष्ट्र उस गुण वाला कहलाया जाता है।

ये गुण मनुष्य, जाति, व्यक्ति, समुदाय, राष्ट्र को प्रेरित करते हैं जिनके अनुसार संसार विवश होकर उन २ कर्मों में प्रवृत्त होते रहते हैं। गीता मे भगवान कृष्ण कहते है:—

प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति निग्रहः किङ्करिष्यति।

हे अर्जुन प्रकृति तुझको युद्ध करने के लिये विवश कर देगी. कब तक अपने आपको रोक सकेगा।

कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात्,
करिष्यस्यवशोऽपि तत्॥

हे अर्जुन, तू मोह के कारण जो बात करना नही चाहता, विवश होकर वही तुझको करना पड़ेगा।

इस लम्बी विवेचना से आप समझ गये होंगे कि—

(१) दुःख तीन प्रकार हैं।

(२) उन्हीं से छूटने के यत्न का नाम पुरुषार्थ है।

(३) तीनों से सर्वथा छूटने का नाम परम पुरुषार्थ है अर्थात् वह तो बात मोक्ष की हुई।

संसारी साधारण जन को तो साधारण सी जीवन निर्वाह की ही चिन्ता खाती रहती है। योगीजन आध्यात्मिक दुःख की निवृत्ति के लिये प्रयत्न शील रहते हैं। साधारण जनता उतनी दूर नहीं जाने पाती अथवा इतनी दूर नहीं जा सकती। हमारे धर्म शास्त्र मानते चले आये हैं कि एक सा ही आत्म तत्व सब प्राणियों में ओत प्रोत है। इसलिये वे उपदेश देते चले आये हैं कि सब में आत्म तुल्य व्यवहार करो और संसार में आकर ऐसा व्यवहार करो अथवा रक्खो कि अपने कारण किसी को किसी प्रकार का दुःख न होने पाये, यदि ऐसा न हो सके तो कम से कम इस बात का तो विचार अवश्य रक्खे कि अपने कारण दूसरे को कम से कम दुःख हो। महाभारत कहता है—

अनभिद्रोहेण भूतानामल्पद्रोहेण वा पुनः।

पर रजोगुण में फंसा हुआ संसार इस बात को कहां समझता है। फल यह है कि व्यक्ति के रजोगुण दूसरे व्यक्ति के रजोगुण के साथ और समूहों, समुदायों, देशों और राष्ट्रों के रजोगुण समूहों समुदायों, देशों और राष्ट्रों के रजोगुणों के साथ टकरा जाते हैं और संसार में अशान्ति फैलती अथवा मचती है।

आज कल जो संसार में इतनी अशान्ति है और न कोई शान्ति से बैठता है और न ही दूसरों को शान्ति से बैठने देता है, उसका यही कारण है कि पाश्चात्य राष्ट्र अध्यात्म शून्य कोरे भौतिकवाद में लिप्त हैं और यह सब विनाश 'मैं' अर्थात् अहम्भाव के कारण और संसार में आसुरी सम्पदा जाग उठी है और ललकार रही है, सब को, कि आओ तो सही मेरे सामने कोई—सब कोई इस आसुरी संपद से घबरा उठे हैं और पंचशील की भारतीय भावना का चहुं ओर स्वागत हो रहा है।

"पंचशील कहता है—हे संसार के लोगों, तुमने रजोगुण के सब खेल खेल डाले—विनाश के सब उपाय ढूंढ निकाले इससे तो महाविनाश की ओर जा रहे हो। सावधान! संसार में सब को रहने का अधिकार है, इस लिये तुम भी सुखपूर्वक रहो औरों को भी रहने दो। कोई झगड़े हों तो समझौते से, सौमनस्य से निपटाओ। एक दूसरों पर आक्रमण मत करो। प्रेम और शान्ति से काम लो। वैर से वैर कभी नहीं निमटा करते। युद्ध का उत्तर महायुद्ध, महायुद्ध का उत्तर दूसरा महायुद्ध, यह सिलसिला कभी नहीं टूटेगा, इसलिए परस्पर प्रेम, शान्ति से काम लो, नहीं तो सब का विनाश निश्चित है।"

आज कल जो संसार मे मात्स्य-न्याय चल पड़ा है वह भी आसुरी वृत्ति का खेल है। जैसे एक बड़ी मछली अपने से छोटी मछली को निगल डालती है और दूसरी एक बड़ी मछली उन दोनों मछलियों को निगल डालती है, इसी प्रकार रजोगुणी आसुरी में बंधे हुए राष्ट्र अपनी स्वार्थी गुटबन्दी से किसी को स्वतन्त्र नहीं रहने देना चाहते—रहो तो हमारे साथ रहो, बढ़ो तो हमारे साथ बढ़ो तब तो बच सकोगे नहीं तो पिस जाओगे यही उनका सन्देश है छोटे २ राष्ट्रों को। इस प्रकार गुटबन्दी में बंटा जा रहा है संसार का राष्ट्र समुदाय। भारत के स्वतन्त्र होने के पश्चात् भारत का सब से महत्वयुक्त पग यही हुआ कि संसार को सच्ची शान्ति का उपाय बतलाया गया। संसार अब समझने लगा है कि केवल विज्ञान के नये २ आविष्कारों के कारण तुम सर्व शक्तिमान नहीं बन सकोगे। संसार में सब से बड़ी शक्ति है वह अदृश्य शक्ति जो अगाध में तुम्हारे अस्त्र-शस्त्रों

को, आविष्कारों को छिन्न-विछिन्न कर सकती है। तुम्हारे विज्ञान द्वारा आविष्कृत महामारक अस्त्र ही स्वयं तुम्हारा विनाश कर देंगे। इस लिये सच्ची शान्ति का उपाय है—

"आत्मवत् सर्वभूतेषु"

इस तत्व का विचार, उच्चार, आचार,
प्रसार और प्रचार और सर्वत्र संचार !!

इस लिये भारत यदि संभल जाय और अपनी विद्या, संस्कृति, सभ्यता से काम लेने लगे तो उसमें संसार को शान्तिधाम बनाने की शक्ति है। सारा संसार मुंह ऊपर उठाये हुए भारत की ओर देख रहा है कि भारत पाश्चात्य प्रजातन्त्र का अपनी आध्यात्मिकता के साथ कैसे मेल बैठाता है यदि भारत नवीन प्राप्त स्वतन्त्रता में संचालित स्वसंविधान द्वारा पोषित पाश्चात्य प्रजातन्त्रीय शासन प्रणाली में आध्यात्मिकता का प्रवेश करा सका तो संसार भारत को गुरु मान कर उसके पीछे चलने को तैयार हो जायगा और यदि भारत स्वयं ही अपनी आध्यात्मिकता को छोड़कर अथवा भूल कर केवल पाश्चात्य प्रजातन्त्र के कीचड़ में फँस जायगा तो वह स्वयं नष्ट-भ्रष्ट, छिन्न-विच्छिन्न हो जायगा और संसार के लिए यह बड़ी दुर्घटना बन जायगी : क्योंकि संसार के सभी राष्ट्रों में सच्ची शान्ति का उपासक भारत के अतिरिक्त और कोई नहीं है और न ही और कोई हो सकता है—इसी लिये हम वेदों के शांति सूक्त के शब्दों में यह कहना चाहते हैं कि 'सा मा शान्तिरेधि' हे ईश्वर संसार के कल्याण के लिए (सा) वह (शान्ति) शांति (मा) मुझ को (एधि) मिले, बढ़े, मेरी रक्षा करे, और संसार को भी अशान्ति से बचाये रक्खे।

इस समय अशान्ति का मुख्य कारण धर्मशून्य विज्ञान द्वारा आविष्कृत संहारक अथवा मारक अस्त्र-शस्त्र के भरोसे पर एक बली राष्ट्र दूसरे बली राष्ट्र को ललकार रहा है और छोटे २ राष्ट्र असमंजस में पड़े हुए हैं कि हम किस गुट में मिलें, किसके साथ रहें, किसके साथ बहें, किस गुट के साथ रहने से हमारा कल्याण होगा। जो राष्ट्र गुटबन्दी से पृथक रहना चाहते हैं, वे पृथक हो रहे हैं, जो किसी के साथ मिलना चाहते हैं, मिल रहे हैं। उधर महायुद्धों से बचने के लिये यू० एन० ओ० बड़ा राष्ट्र संघ बना हुआ है पर उससे भी वह उद्देश्य सफल न हो सका जिसके लिये कि उसकी स्थापना हो चुकी थी। इसमें लगभग छोटे बड़े बावन राष्ट्र हैं पर सबसे बड़े प्रबल राष्ट्र है चार-पांच ही ये ही अन्यों को नचाते रहते हैं।

अभी वहाँ वर्ग भेद नहीं मिटा, अभी वहां काला-गोरा भाव नहीं मिटा—इस प्रकार प्रबल राष्ट्रों की सदैव के लिये प्रबल बने रहने की लालसा, और अपने राष्ट्र के स्वार्थों के कारण अशान्ति मची हुई है। सब राष्ट्र शांति की बातें करते हैं और सभी अशान्ति के बीज बोते जा रहे हैं। संहारक अथवा मारक अस्त्र-शस्त्रों के घटाने की घोषणा करते हैं पर साथ ही अस्त्र-शस्त्रों की वृद्धि करते जा रहे हैं। पर शान्ति कैसे हो- संसार के राष्ट्रों में यह भावना प्रदीप्त हो रही है कि यदि अपने आपको बचा रखना है तो प्रबल राष्ट्रों की गुटबन्दी में किधर ही तो जाना ही पड़ेगा-- यह जो असुरक्षिता की बात है वही सब को बेचैन करती रहती है।

फिर ? फिर क्या

जब तक संसार मे वैदिक धर्म प्रतिपादित सच्ची शान्ति का प्रचार न किया जायगा तब तक क्या संसार शांति-सुख-समाधान से बैठ सकेगा ? कदापि नहीं, कदापि नहीं, महाभारत मे शांति पर्व में नशास्य धर्म का वर्णन आया है, वह इस प्रकार है और आजकल जिस पंचशील की धूम है, वह इसी से निकला है।

"इदन्न मम" का तात्विक विवेचन

[लेखक—श्रीयुत आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री, पोरबन्दर]

आज से कुछ समय पहले श्री पंडित ऋषिमित्र जी शास्त्री ने मुझसे अनुरोध किया कि मैं 'इदन्न मम' के विषय में अपने विचार प्रकट करूं। यही अनुरोध मेरे परममित्र श्री पंडित धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति विद्यामार्तण्ड और सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के वर्तमान मन्त्री श्री पंडित विश्वश्रवा जी आचार्य द्वारा दुहराया गया। समयाभाव से मैं कुछ लिख नहीं सका परन्तु आज "सार्वदेशिक" के मान्य सम्पादक जी की प्रेरणा मिली कि मैं सार्वदेशिक के लिये कोई लेख भेजूं। साथ ही यही प्रेरणा आदरणीय श्रीमान् सम्पादक जी वेदवाणी की भी मिली कि वेदवाणी के लिये लेख भेजूं। इन सब विद्वज्जनों की इच्छाओं के पूत्यर्थ यह लेख आज मैं लिखने को उद्यत हुआ हूँ।

"इदन्न मम" विहित है या नहीं इस विषय पर अनेक बार विचार चल चुका है और अब भी स्यात् विचाराधीन है। इस विषय में कुछ पंक्तियाँ यहाँ अपेक्षित हैं। हवन करते समय श्रुवा में बचे हुये घृत को पृथक् रखे हुये पात्र में छोड़ना चाहिये या नहीं, यही लेख का विवेचनीय विषय है।

यज्ञ का पारिभाषिक स्वरूप और इदन्न मम की कल्पना

यज्ञ और याग दोनों ही शब्द 'यज्' धातु से बने हैं—इसमें कोई विप्रतिपत्ति नहीं है। जब

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ।।

जिस बात को हम स्वयं प्रतिकूल समझते हैं उस प्रकार का प्रतिकूल व्यवहार हम दूसरों के साथ भी न करें। यदि मनुष्य परस्पर व्यवहार में इस बात का ध्यान रक्खे और जाति, समूह, समुदाय, राष्ट्र, देश भी सामुदायिक रूप में इस बात का ध्यान रक्खे तो फिर संसार में अशान्ति नहीं रह सकती, पर वह होने के लिये "आत्मवत् सर्वभूतेषु" इस आत्मतुल्यता का ध्यान रखना पड़ेगा। तभी यह सम्भव है।

और एक महत्वयुक्त बात कही गई है। वह यह कि—

यदन्येषा हितं न स्यात् आत्मनः कर्म पौरुषम् ।

अर्थात् अपना कोई भी कर्म अथवा पुरुषार्थ दूसरों के हित में ठीक नहीं बैठता तो उस कर्म और पुरुषार्थ को प्रयत्न पूर्वक छोड़ दे। सारांश यह केवल व्यक्ति का धर्म नहीं अपितु देश-धर्म है, राष्ट्र धर्म है। आज कल संसार के सभी राष्ट्रों में संकुचित राष्ट्रीयता समा गई है। इसी लिये संकुचित दृष्टि से काम हो रहा है, यह जो संकुचित राष्ट्रवाद है वह भी अशांतिका मुख्य कारण है। कोरा भौतिकवाद (अध्यात्म शून्य) राष्ट्रवाद न जाने उन राष्ट्रों को किस गढ़े में ले जा रहा है। वैदिक अध्यात्मवाद के बिना पाश्चात्यों का यह अज्ञान कभी दूर न हो सकेगा और न ही संसार में सच्ची शांति प्रसरित होगी। इस लिये पुनः हम वेद के शब्दों में प्रार्थना कर रहे हैं कि "वही शांति हम को मिले, हम में रहे, हम में बढ़े, हम में पले।"

कोई कहता है कि अमुक व्यक्ति यज्ञ करता है तब 'स यजति' अथवा 'देवदत्तो यजति' के रूप में 'यजति' क्रिया का प्रयोग देखा जाता है। इस 'यजति' का क्या अर्थ है, इस पर यज्ञ सम्बन्धी शास्त्रों में विचार मिलता है। इन शास्त्रों के अनुसार यजति का अर्थ द्रव्य (सामग्री आदि) देवता (वेदमंत्र या इन्द्र आदि) और त्याग (अग्नि में प्रक्षेप) इन तीनों से सम्बन्ध रखता है। याग शब्द भी इसीलिये ऐसे अर्थ को ही प्रकट करता है। वस्तुतः याग वह है जिस में हवि आदि द्रव्यों से इन्द्र, वायु, सूर्य आदि देवता एवं वेदमंत्रों के उच्चारण के साथ अग्नि में प्रक्षेप अर्थात् त्याग किया जावे। कात्यायन श्रौतसूत्र १।२।१-२ (१) में लिखा है कि अब यज्ञ की व्याख्या करेंगे और वह यज्ञ द्रव्य, देवता और त्याग से सम्बन्ध रखता है। आगे पुनः कात्यायन ने १।६।६ (२) में लिखा है कि देवता, आहवनीय मंत्र और क्रियाओं के स्थान में कोई प्रतिनिधि नहीं हो सकता है। इन्हें तो करना ही पड़ेगा। आगे चलकर २।२।२७ (३) पर टीकाकार लिखता है कि मंत्र सर्वत्र स्वाहाकारान्त ही पढ़ना चाहिये। होम पक्ष में 'इदं जातवेदसे इदन्न मम' ऐसा त्याग करना चाहिये। पक्षान्तरों में यज्ञ का अभाव होने से त्याग नहीं करना चाहिये। अच्युत ग्रन्थमाला से छपे हुये शतपथ ब्राह्मण की भूमिका के १६वें पृष्ठ पर विद्याधर शर्मा लिखते हैं कि (४) "देवता को उद्देश्य में रखते हुए अग्नि में प्रक्षेप विशेष द्रव्य त्याग का नाम याग है। मीमांसा में भी याग का अर्थ करते हुए जैमिनि ४।२।२८-२६ पर लिखते हैं कि (५) यजति का अर्थ द्रव्य, देवता और क्रिया के समुदाय में चरितार्थ है। जुहोति का अर्थ आसेचन से अधिक है। अर्थात् याग और होम का भेद है। यहाँ पर ऐसा समझना चाहिये कि आहवनीय आदि अग्नि में छोड़ी हुई हवि का जो प्रक्षेप है वही होम कहा जाता है। वह दो प्रकार है— प्रधान होम और अंग होम। "अग्निहोत्रं जुहोति" प्रधान होम है और अपने फल उद्देश्य से विहित है। इन में प्रक्षेपमात्र ही धातु का अर्थ नहीं है, किन्तु प्रक्षेप, उद्देश्य, त्याग तीनों ही अर्थ हैं। होम में भी ये तीनों अंग होते हैं और याग में भी। परन्तु याग में तीनों अंशों के होते हुए भी प्रक्षिप्त विशिष्ट द्रव्यत्याग की विशेषता है। होम में जहाँ तीनों अंशों की समप्रधानता है वहाँ याग में प्रक्षेप की अङ्गता (प्रधानता है) और शेष दोनों की समप्रधानता या समानता है। यही होम और याग का भेद है। अतः यह सुतराम्

१—यज्ञं व्याख्यास्यामः, द्रव्यं देवता त्यागः। का० श्रौतसूत्र १।२।१-२।

२—न देवता अग्निशब्दः क्रिया परार्थत्वात्। का० श्रौ० १।६।६।

३—मंत्रश्च सर्वत्र स्वाहाकारन्त एव पठनीयः होमपक्षे। इदं जातवेदसे इतित्यागः कार्यः।

विद्याधर गौड़।

४—तत्र यागोनाम—देवतोद्देशेन अग्नौ प्रक्षेपविशिष्टो द्रव्यत्यागो यागः। सर्वत्र हि यजति चोदना चोदितस्थले। अर्थात् 'सोमेन यजेत' इत्यादौ यजिधात्वर्थः कश्चित्प्रतीयते। तस्मिन्नेव वाक्ये तदुद्देशेन किञ्चिद्द्रव्यमपि विधीयते। वाक्यान्तरेण च देवताया अपि विधानमस्ति। तत्र तां देवतामुद्दिश्य तस्य द्रव्यस्य यस्त्यागः 'इदमिन्द्राय न मम' इत्यादिरूपो मानसिकव्यापारः स एव यागपदार्थः।

५—यजतिः चोदना द्रव्यदेवताश्रितं समुदायं कृतार्थत्वात् तदुक्ते श्रवणय्ज्जुहोतिरासेचनाधिकः स्यात्।

मीमांसा॥

स्पष्ट है कि याग का अर्थ देवता, द्रव्य और त्याग का समुदाय है। इस त्याग को जतलाने के लिये "इदन्न मम" की प्रक्रिया वर्ती जाती है। 'इदं जातवेदसे इदन्न' का अर्थ है कि यह त्याग जातवेदस् के निमित्त है मेरा नहीं। आहुति प्रदान के निमित्त एवं मन्त्र में आये देवता के नाम लेकर त्याग की प्रथा इसी आधार पर होने लगी ऐसा मालूम पड़ता है।

"इदन्न मम" से जलपात्र में शिष्ट घी छोड़ने की प्रथा कैसे पड़ी

"पाकयज्ञेष्ववत्तस्यासर्व होमः हुत्वा शेष प्राशनम्" अर्थात् पाकयज्ञों में सब होम नहीं किया जाता। हवन करके बचे हुये का प्राशन किया जाता है। कात्यायन के इस वचन से होम से बचे हुये का प्राशन सिद्ध होता है। (१) पारस्कर गृह्यसूत्र १।२।१२ में लिखा है कि यज्ञ करके शेष को खाया जाता है। इस सूत्र पर हरिहर लिखते हैं कि (२) अग्नि में डालकर खाता है। यहां पर प्राशन का उपदेश होने से खाने योग्य की आकांक्षा है, तो क्या वह हुतशेष है या अन्य कोई वस्तु? उत्तर है कि पाकयज्ञों में सबका होम नहीं होता। हवन करके शेष का भक्षण होता है। ऐसा ही कात्यायन का मत है। श्रुवा से ग्रहण किये हुये होम द्रव्य का सब हवन करने का निषेध होने और हवन से बचे का प्राशन विहित होने से ऐसा ही प्रतीत होता है। सारी आहुतियों का श्रुवा में बचा होम द्रव्य 'संस्रव' रूप में प्रसिद्ध है। यह एक पृथक् पात्र में डाला जाता है और वह खाया जाना चाहिये। इस पर गदाधर अपने भाष्य में लिखता है कि (३) परिस्तरण बर्हि से हवन करके दूसरे पात्र में स्थापित होमशेष द्रव्य को खाता है। ………श्रुवा आदि से जो ग्रहण किया गया है उसका हवन करके कुछ बचा करके दूसरे बर्तन में रखना चाहिये।

पुनः अपनी पद्धतिमें हरिहर कहता है (४)कि 'प्रजापतये स्वाहा' ऐसा मन से ध्यान करते हुए आघार करता है। इदं प्रजापतये, ऐसा कहकर त्याग करके हुतशेष को एक दूसरे पात्र में डाले। इन्द्राय स्वाहा करके इदमिन्द्राय ऐसा कहकर त्याग करके वैसा ही करे। परन्तु यहाँ पर ही अपनी पद्धति में गदाधर इससे विलक्षण लिखता है। वह

१—बर्हिर्हुत्वा प्राश्नाति। पा० १।२।१२॥

२—अग्नौ प्रक्षिप्य प्राश्नाति भक्षयति। अत्र प्राशनोपदेशसामर्थ्यात् प्राश्यमाकांक्षितम् तत्किं हुतशेषः अन्यद्वा किञ्चित्। उच्यते "पाकयज्ञेष्ववत्तस्यासर्वहोमः। हुत्वा शेषप्राशनम्" इति कात्यायन वचनोक्तिः स्रुवेणावत्तस्य होमद्रव्यस्य सर्वस्यानिषेधात् हुतशेषस्य प्राशनविधानात्। सर्वासामाहुतीनां होमद्रव्यं स्रुवेऽवशोषितं संस्रवत्वेन प्रसिद्धम् पात्रान्तरे प्रक्षिप्यते तत्प्राश्यम इति।

३—परिस्तरणं बर्हिस्तेनैव हुत्वा पात्रान्तर स्थापितहोमशेषद्रव्यम् भक्षयति। प्राशनस्य प्राप्तत्वाद् बर्हिर्होमोत्तरकालविधानार्थग्रहणम्। शेषरक्षणं भक्षणञ्च श्रौतसूत्रे उक्तमस्ति। पाकयज्ञेष्ववत्तस्यासर्वहोमः, हुत्वा च शेषप्राशनम्। स्रुवादिभिर्यद्गृहीतं तद् हुत्वा किञ्चित् परिशेष्य पात्रान्तरे स्थापनीयमित्यर्थः………आज्यं द्रव्यमनादेशे जुहोतिषु विधीयते। मन्त्रस्य देवतायाश्च प्रजापतिरिति स्थितिः॥ छान्दोग्यपरिशिष्टे कात्यायनोक्तेश्च॥

४—"प्रजापतये स्वाहा" इति मनसाध्यायन्………आघारयति। इदं प्रजापतये इति त्यागं कृत्वा हुतशेषं पात्रान्तरे क्षिपेत्। इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्रायेतित्यागं विधाय॥

कहता है (२) कि मन से पूर्वाघार करे । "इदं प्रजापतये स्वाहा" इदं प्रजापतये न ममेति-ऐसा कहकर त्यागान्त में अग्नि में द्रव्य को छोड़े । पुनः उसी स्थल पर (३) इदं प्रजापतये न ममेति-ऐसा कहकर त्याग करने को लिखता है । इसपर हरिहर ने पात्र में छोड़ने को लिखा है । हरिहर के अनुसार होम से श्रुवा में शेष रहे द्रव्य का पृथक् पात्र में छोड़ना प्रकट होता है और गदाधर के अनुसार इदन्न मम से त्याग करके अग्नि में छोड़ना विदित होता है । इस प्रकार यह यहां पर सुतराम् स्पष्ट है कि "इदन्न मम" से हवन करने से बचे हुये द्रव्य को पात्र में छोड़ने की प्रथा का उद्भव "त्याग" की धारणा को लेकर किया गया ।

इस विषय में महर्षि दयानन्द के विचार

महर्षि दयानन्द ने इस विषय में क्या लिखा है इसका यहाँ पर दिग्दर्शन कराया जाता है । आचार्य ने संस्कारविधि के गर्भाधान प्रकरण में पृष्ठ ३५ (शताब्दी संस्करण ग्रन्थमाला) पर लिखा है कि "यदस्य कर्मणो अत्यरीरिचम्" इस मंत्र से एक स्विष्टकृत आहुति घृत की देवें जो इन मंत्रों से आहुति देते समय प्रत्येक आहुति के स्रुवा में शेष रहे घृत को आगे धरे हुये कांसे के एक पात्र में इकट्ठा करते गये हों--जब आहुति हो चुके तब उन आहुतियों के शेष घृत को वधू लेके स्नान के घर में जाकर उस घी का पग के नख से लेके शिरपर्यन्त सब अङ्गों पर मर्दन करके स्नान करे ।

पुनः पृष्ठ ३३ पर आचार्यवर लिखते हैं कि बीस आहुति करने से यत्किंचित् घृत बचे वह कांसे के पात्र में ढांक के रख देवें । इसके पश्चात् भात की आहुति देने के लिये यह विधि करना । अर्थात् एक चांदी वा कांसे के पात्र में भात रख के उसमें घी दूध और शक्कर मिला के कुछ थोड़ी देर रख के जब घृत आदि भात में एक रस हो जाय, पश्चात् नीचे लिखे एक एक मन्त्र से एक एक आहुति अग्नि में देवें और स्रुवा मेका शेष आगे धरे हुये कांसे के उदक पात्र में छोड़ता जाये । पृष्ठ २५ पर लिखते हैं कि सबको विदा कर स्त्री पुरुष हुतशेष घृत भात का मोहन भोग को प्रथम जीम के पश्चात् रुचिपूर्वक उत्तमान्न का भोजन करें ।

यहां इन प्रमाणों से दो बात प्रकट होती हैं । प्रथम जो 'इदन्न मम' करके स्रुवा से बचा घृत है उसे उपयोग में लाना । दूसरी बात यह है कि हवन करने से हवन के पात्र में बचे हुये का अर्थात् हुतशेष का भक्षण करना ।

ऋषि के सन्दर्भो से यह नहीं प्रकट होता कि 'इदन्न मम' बोलकर पात्र में छोड़ा हुआ शेष ही हुतशेष है । वस्तुतः यह स्पष्ट मालूम पड़ता है कि स्रुवा से बचा हुआ द्रव्य अलग है और हुतशेष अलग है । हुतशेष वह है जो यज्ञ करने से द्रव्य वाले पात्र में शेष रह गया है । 'इदन्न मम' बोलकर अलग पात्र में छोड़ा जाने वाला द्रव्य नहीं । संस्कारविधि के उनके पृष्ठ १४८-१४९ के लेख से भी यही निर्देश मिलता है । वे लिखते हैं- तत्पश्चात् जो ऊपर सिद्ध किया हुआ ओदन अर्थात् भात है उसको एक पात्र में निकाल कर उसके ऊपर स्रुवा से घृत सेचन करके घृत और भात को अच्छे प्रकार मिला कर दक्षिण हाथ से थोड़ा थोड़ा भात दोनों जने लेके इन में से प्रत्येक मन्त्र से एक एक करके ४ स्थाली पाक अर्थात् भात की आहुति देनी । तत्पश्चात् शेष रहा हुआ भात एक पात्र में निकाल उस पर घृत सेंचन और दक्षिण हाथ रख के इन तीन मन्त्रों को मन में

२—ममसा पूर्वाघारः । ओं प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये न ममेति त्यागान्ते अग्नौ द्रव्यप्रक्षेपः ।
३—बर्हिर्होम स्वाहेति, इदं प्रजापतये न ममेति त्यागः ।

जब कर वर उस भात में से प्रथम थोड़ा सा भक्षण करके—इत्यादि। यह शेष रहा हुआ ही वस्तुतः हुतशेष कहा जा सकता है। अतः यह भली प्रकार स्पष्ट समझना चाहिये कि हुतशेष का अर्थ 'इदन्न मम' पात्र वाला द्रव्य नहीं अपितु उसका पात्र में बचे हुए घृत आदि से तात्पर्य है।

उपसंहार

ऊपर इस विषय के भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण दिये गये। अब इनसे क्या परिणाम निकलता है इस पर विचार किया जाता है।

प्रथम बात तो यह यहां पर निश्चित समझनी चाहिये कि 'इदन्न मम' से पात्र में प्रथक् स्रुवा से बचे घी के छोड़ने की प्रथा यज्ञ के त्यागभूत अंग पर आधारित है। यह करना चाहिये या नही इस पर विचार अपेक्षित है। पौराणिक विद्वानों के दो दृष्टिकोण ऊपर दिखाई पड़े। उन में गदाधर का विचार है स्रुवा मे बचे द्रव्य को पृथक् पात्र में रखा जावे और हवन के बाद शेष खाया जावे। परन्तु ऐसा लिखने पर जेसा पहले लिखा गया है गदाधर पद्धति मे इससे कुछ थोड़ा विपरीत लिखता है। वहां वह ऐसा लिखता है, इस 'इदन्न मम' त्याग करके अग्नि में द्रव्य छोड़े। इस मे पूर्व बात से विलक्षणता मालूम पड़ती है। अर्थात् एक स्थान पर वह स्रुवा से बचे को पात्र में छोड़ने को कहता है और दूसरी जगह त्याग करके अग्नि मे छोड़ने को कहता है।

हरिहर सभी आहुतियों मे स्रुवा में बचे का 'इदन्न मम' पृथक् पात्र में रखना मानता है और उसका भक्षण मानता है। उसका मत सर्वत्र एकसा है। परन्तु इन दोनों आचार्यो का यह विचार कात्यायन के श्रौतसूत्र ६।१०।२६–२७ के 'पाकयज्ञ-ष्ववत्तत्यासर्वहोमः' हुत्वा च प्राशनम्' आदि वचनों पर आधारित है। इसलिये इस प्रसंग में इन वचनों का विचार आवश्यक है। वस्तुतः कात्यायन का वचन सर्वत्र यज्ञ में यह विधि लागू करने का द्योतक नहीं मालूम पड़ता। क्योंकि उस मे 'पाकयज्ञे' पद पड़ा है। अर्थात् यह विधि पाक यज्ञों में ही वर्ती जाने वाली है। यह पक्ष अग्नि होत्र में भी जाता है क्योंकि अग्निहोत्र भी श्रौतकर्म है। गृहाग्नि पर जो स्मार्त यज्ञ होते हैं, वे सब पाकयज्ञ हैं। उनमे स्रुवा मे लिए हुए सम्पूर्ण द्रव्य का होम नहीं करना चाहिये। बचे हुये का भक्षण विहित है। परन्तु 'प्रतिहोमं भक्षणार्थ किञ्चित परिशेषणीयम्' अर्थात् प्रत्येक होम में भक्षणार्थ कुछ बचा लेवें। यह कोरी पौराणिक कल्पना है। हां पाकयज्ञ मे प्रत्येक आहुति मे कुछ शेष रखे—यह ठीक है। उससे अन्यत्र यह ठीक नहीं मालूम पड़ता। हरिहर का यह कहना कि इस 'इदन्न मम' से त्याग मे छोड़ हुए से बचे हुये पात्र मे अलग स्रुवा से चुवाये हुये द्रव्य का नाम स्रव भाग या संश्रव भाग है यह भी ठीक नहीं। संश्रव भाग इस से पृथक् वस्तु है। उसका ऐसा मानना गलत है। कात्यायन 'संस्रवभाग' का अर्थ इस प्रकार करते हैं। 'स्रुचो प्रगृह्णानि सदंस्रवभागा इति' (का श्रौ. ३।६।१६) अर्थात् यदि स्रुवा में आदि मे घी लगा हुआ रह जावे तो संᳪस्रवभागा-इस यजुर्वेदीय (२।१८) मन्त्र से स्रवभाग की आहुति देवे। इसके देवता विश्वेदेव हैं। परन्तु यदि संस्रवान बचा हो तभी नहीं तो नहीं। टिप्पणी मे श्री विद्याधर शर्मा लिखते हैं--अत्रश्च यत्र कर्मणि पूर्वकृतहोमसम्बन्ध्याज्यं पात्रे संलग्नं भवति तत्र सर्वत्रापि अयं होमो भवत्येव। स्रुक्स्थस्याज्यस्य पूर्वमेव निखशेषितत्वात् संस्रवाणां न यागाङ्गत्वम्। अर्थात् जहां पर पूर्वकृत होम में सम्बन्धी घृत पात्र मे लगा हुआ रह जाता है वहों पर सर्वत्र यह स्रवभाग होम होता है। स्रुवा के घी के पहले ही समाप्त हो जाने से संस्रव को याग का अङ्ग नहीं कहना चाहिये। इस लिए यहों पर पूर्णतया स्पष्ट है कि 'इदन्न मम' से स्रुवा से बचे हुये अलग पात्र मे छोड़े गये घृत को संस्रव नहीं कहा जा सकता।

यदि यह संस्रव भाग है तो फिर यह तो आहुति दे दिया जावेगा फिर खाने के लिये क्या रहेगा।

यहां पर गदाधर और हरिहर आचार्यों के विचारों के विचार से यही परिणाम निकला कि वे कहीं पर तो सही हैं और कहीं पर गलत। परन्तु उन्होंने अपनी जो भी कल्पना की है उसका आधार कात्यायन को माना है। कात्यायन पाक यज्ञ में ही ऐसा विधान करते हैं अतः यह निश्चित है कि पाकयज्ञ में ऐसा करना चाहिये अन्यत्र नहीं। इसके अतिरिक्त यज्ञों में इस प्रकार की कल्पना कोरी पौराणिक है।

दूसरी बात यह है कि यागों में त्याग की प्रधानता है। अतः वहां पर 'इदन्न मम' से यह त्याग की विधि वर्ती जाती है सर्वत्र नहीं। इसके अतिरिक्त यह त्यागविधि वहीं पर 'इदन्न मम' के साथ वर्ती जाती है जहाँ देवता का नाम स्पष्ट करके आहुति दी जाती है। कहीं कहीं पर मन्त्र ही होते हैं और इदन्न मम का वहां प्रयोग भी नहीं होता। फिर वहाँ पात्र में घृत कैसे छोड़ा जा सकता है। जैसे सायं, प्रातः काल में "सूर्योज्योतिः" और "अग्निज्योतिः" से आहुतियां दी जाती है। परन्तु इन में देवता के नाम से इदन्न मम का प्रयोग नहीं है। यहां पर इदन्न मम की विधि भी नहीं चलायी जा सकती। अतः जहां पर इदन्न मम से अलग पात्र में स्रुवा के शेष घृत को छोड़ने की विधि हो वहाँ पर वैसा करना चाहिये। जहाँ पर नहीं है वहां पर नहीं।

ऋषि दयानन्द ने भी जहां पर करना आवश्यक था वहां पर इदन्न मम से वैसा करने को लिखा है। जहां पर नहीं वहां पर नहीं लिखा। अतः मन्तव्य यही है कि जहाँ पर ऋषि ने "इदन्न मम" बोल कर स्रुवा में बचे घृत को दूसरे पात्र में छोड़ने और उसके प्रयोग करने को लिखा है वहाँ करना चाहिये जहाँ पर नहीं लिखा वहां नहीं करना चाहिये। जैसे ऊपर दिये गये गर्भाधान संस्कार में उन्होंने ऐसा करने को लिखा है अतः वहां करना चाहिये। सामान्य प्रकरण या दैनिक यज्ञ आदि में ऐसा करने का विधान नहीं किया है, अतः यहां पर नहीं करना चाहिये। आशा है सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के विद्वज्जन इस पर विचार करेंगे। मैंने यह निर्देश मात्र करके अपने मित्र आर्य मनीषियों तक इसे पहुंचाना अपना कर्तव्य समझा।

श्रुति सूक्ति सुधा

कर्म

(१) देवोः वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्म्मणे ॥ य० १। १॥
उत्तम प्रेरणा देने वाला परमात्मा तुम्हें सब अधिक श्रेष्ठ कर्म के लिये भली प्रकार अर्पण करे।

(२) क्रतुं स्मर ॥ य० ४०। १५॥
हे कर्मशील जीव किये हुए कर्म को स्मरण कर। अपने किये हुए कर्म को स्मरण करने से मनुष्य बुराई से बच सकता है।

(३) व्रतं कृणुत ॥ य० ४। ११॥
शुभ कर्म करने का व्रत लो।

(४ अकन् कर्म्म कर्म्म कृतः सहवाचा मयोभुवा ॥ य० ३। ४७॥
परोपकार आदि कर्म करते हुए मनुष्य को मीठी सुखदायी वाणी बोलनी चाहिये।

(५) देवेभ्यः कर्म कृत्वारते प्रेत सचाभुवः ॥ य० ३। ४७॥
धार्मिक परोपकारी जनों की सेवा तथा अग्नि होत्रादि यज्ञ। ये ऐसे कर्म हैं जिनसे जीवन श्रेष्ठ बनता है। —(श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ कृत श्रुति सूक्ति शती से साभार)

आर्य समाज के बाहर क्षेत्र में सम्पर्क तथा प्रचार कार्य

(लेखक—श्री पं० शिवचन्द्र जी आजीवन सदस्य सार्वदेशिक सभा)

एक शिक्षित मुस्लिम देवी की आर्य समाज में रुचि

कुछ दिन व्यतीत हुए एक दिन एक शिक्षिता मुस्लिम देवी ने सभा कार्यालय में अंग्रेजी भाषा में फोन किया कि मैं आर्य समाज के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिये कुछ अंग्रेजी भाषा में साहित्य चाहती हूँ और यदि हो सके तो कोई अंग्रेजी जानने वाले सज्जन ही उस साहित्य को लेकर मेरे पास आवें ताकि वह मुझे अंग्रेजी के माध्यम से ही आर्य समाज के सिद्धान्तों को भी समझा सकें।

प्रथम बार आर्य समाज का प्रारम्भिक ज्ञान सूचक साहित्य ही लेकर मै इस देवी के पास गया। ताकि उसकी वास्तविक स्थिति को समझने के पश्चात् ही उसे यथायोग्य कोटि का साहित्य दिया जाये।

उसने निम्न आशय का अपना परिचय दिया:—

मैं ए सम्भ्रान्त मुस्लिम परिवार की पुत्री हूँ। मेरे माता पिता तथा परिवार के अन्य सदस्य उदार विचार के व्यक्ति हैं। मेरे पिता जो कई वर्षों तक अमेरिका में रहे हैं। मेरे परिवार में अंग्रेजी का अधिक व्यवहार है। मेरी मैट्रिक तक की शिक्षा हिन्दू वातावरण में हुई और प्रथम ब्रह्म समाज और उसके पश्चात थियोसोफीकल सोसायटी के निकट सम्पर्क में आई। मैंने बी० ए० की परीक्षा दर्शन शास्त्र विषय लेकर पास की हुई है। इन परिस्थितियों में मैंने ब्रह्म समाज तथा थियोसोफीकल सोसायटी का 'साहित्य भली प्रकार अध्ययन किया हुआ है और दर्शन विषय में रुचि होने के कारण मैंने सांख्य और वेदान्त को भी समझने का यत्न किया है। ब्रह्म समाज तथा थियोसोफीकल सोसायटी के साहित्य का अध्ययन करते हुए मुझे आर्य समाज की संस्था के विषय में भी कुछ ज्ञान हुआ और उसी समय से इस संस्था के विषय में अधिक जानकारी प्राप्त करने की लालसा जाग्रत होनी आरम्भ हो गई थी।

अपना इतना परिचय देने के पश्चात् इस देवी ने मुझ से सांख्य का अनीश्वरवाद स्वामी शंकराचार्य का वेदान्त और महर्षि दयानन्द का त्रैतवाद, वेद का ईश्वरीय ज्ञान के रूप में प्रादुर्भाव होना, बौद्ध धर्म, वैदिक धर्म, आर्य धर्म, सनातन धर्म का समन्वय, आर्य तथा हिन्दू शब्द में अन्तर. हिन्दू शब्द की उत्पत्ति मनुष्यों द्वारा चलाये गये मत और उनकी आयु, धर्म और मत में अन्तर, थियोसोफीकल सोसायटी और आर्य समाज, श्री रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द स्वामी रामतीर्थ, डा० राधाकृष्णन का नवीन वेदान्त आदि विषय पर काफी प्रश्न किये। जब सब ही विषयों पर इस देवी को सन्तोष जनक उत्तर मिले तो इसने बड़ी हार्दिक प्रसन्नता तथा सन्तोष प्रकट किया।

प्रथमदिन ३ घंटेतक इस देवीको उपरोक्त विषयों पर समझाता रहा। दूसरे दिन यह देवी सभा कार्यालय में आई। उसे स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के बलिदान की तमाम कथा सुनाई और श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय द्वारा लिखित

दयानन्द फिलोसफी नामक ग्रन्थ सभा की ओर से भेंट किया चूंकि दर्शन विषय में उसकी विशेष रुचि है।

तीसरे दिन उसने मुझे पुनः बुलाया। इस दिन भी इसके साथ कई घंटे बातचीत हुई। आज की बातचीत का विषय था "भावी जीवन का मार्ग।" इस दिन की बात चीत का परिणाम भविष्य के गर्भ में छिपा हुआ है। भविष्य ही बतायेगा।

२--भारत में विश्वख्याति प्राप्त ईसाई पादरी डाक्टर बिली ग्राह्म

ईसाई जगत् में सब से अधिक ख्याति प्राप्त पादरी डाक्टर बिली ग्राह्म अमेरिका निवासी है। अमेरिका की धन की सहायता से उन्होंने समस्त विश्व को ईसाई बनाने का निश्चय किया हुआ है। अमेरिका से प्रकाशित होने वाले १ फरवरी १९५४ के प्रसिद्ध साप्ताहिक पत्र न्यूज वीक के मुख-पृष्ठ पर इनके फोटो और नाम के साथ यह शब्द लिखे हुए हैं:-वर्ल्ड टू विन। इसी अंक में इनकी जीवनी और किस प्रकार से यह ईसाइयत का प्रचार करते हैं यह सब बातें प्रकाशित हुई हैं। अमेरिका के वर्तमान राष्ट्रपति श्री आईजनहावर के साथ हाथ में बाईबिल लिये बातचीत करते हुए फोटो भी प्रकाशित हुआ है। उसमें यह भी प्रकाशित है कि यह राष्ट्रपति आईजनहावर से कई बार मिल चुके हैं। अमेरिका के बड़े २ अधिकारियों और धनाढ्य वर्ग से इनका परिचय है। कहा जाता है कि वहां के धनाढ्यों से करोड़ों रुपया ईसाई प्रचार की अपील के आधार पर एकत्रित करते हैं। गत वर्ष इन्होंने अमेरिका से ब्राडकास्ट करते हुए भारत में ईसाई मत का प्रचार करने के लिये धन की अपील करते हुए यह शब्द कहे थे :—

"बूढ़ा हिन्दू धर्म अवश्य समाप्त होना चाहिये।"

मैंने समाचार पत्रों में पढ़ा कि यही डाक्टर बिली ग्राह्म दिल्ली भी आये हैं और तीन दिन तक नई दिल्ली में ईसाइयों को एक महान् कान्फ्रेंस करने जा रहे हैं तो मैंने भारत सरकार के गृहमन्त्री श्री पं० गोविन्द वल्लभ पन्त तथा प्रधान मन्त्री श्री नेहरू जी के प्राइवेट सेक्रेटरी के साथ फोन पर सम्पर्क करने का यत्न किया और गृह मन्त्री श्री पन्त जी की सेवा में एक पत्र भेजा और उसकी प्रतिलिपि प्रधान मन्त्री श्री नेहरू जी की सेवा में भेजी जिसके द्वारा भारत सरकार का ध्यान उपर्युक्त ब्राडकास्ट पर खींचा।

देहली में तीन दिन तक उनके भाषण हुए। मैं उनके भाषणों में भी जाता रहा। इनके ये भाषण सार्वजनिक होते थे। उपस्थिति लगभग २० सहस्र होती थी। भारत के प्रत्येक कोने से ईसाई, उनके परिवार तथा पादरी लोग. (विदेशी तथा देशी दोनों) इस कान्फ्रेंस में सम्मिलित होने के लिये आये हुए थे। इन भाषणों में इन्होंने ईसाई मत से सम्बन्धी अधिकांश अन्धविश्वास की भावना पूर्ण बातें कही थीं। जिनका सार था कि प्रभु ईसा पर ईमान लाओ वह तुम्हारे सारे गुनाहों को माफ कर देगा। संसार में शान्ति की स्थापना केवल प्रभु ईसा की शरण में ही आने से हो सकती है। इनके भाषणों में न कोई युक्ति होती थी और न गम्भीरता। बोलने का ढंग उस वकील की तरह था जिसका मुकदमा कमजोर होता है उसके पास अपने मुकदमे के पक्ष में कोई युक्तियां और सबूत तो होते नहीं हैं परन्तु वह जोर से बोल कर हाथ पांव फैंक कर ही अदालत, अपने प्रतिद्वन्द्वी वकील और अपने मुवक्किल पर प्रभाव डालना चाहता है। यही अवस्था इन डाक्टर बिली ग्राह्म की थी।

मैं स्वयं क्रिश्चियन कालेज का विद्यार्थी रहा

हूं और जीवन में कई बार ईसाइयों के गिरजा घरों में भी गया हूँ। परन्तु ऐसे गम्भीरता विहीन और केवल शोर मचाने वाले व्याख्यान मैंने पूर्व कभी नहीं सुने। उस कान्फ्रेंस में कई ईसाई सज्जनों और पादरियों से भी मेरी बात चीत हुई, उन्होंने स्पष्ट शब्दों में मुझ से प्राइवेट रूप में मेरी सम्मति का समर्थन करते हुए कहा कि डा० बिली ग्राह्म की सफलता का सबसे बड़ा कारण है उन्हें ईसाइयत के प्रचार के लिये अमरिका से करोड़ों डालरों की सहायता प्राप्त होना और उस अतुल धन राशि के बलबूते पर समस्त विश्व में और विशेषतया भारत में ईसाई प्रचार कार्य को संगठित रूप में आगे बढ़ाना।

डाक्टर बिली ग्राह्म समस्त पादरियों तथा ईसाई कार्यकर्ताओं की प्राइवेट मीटिंग भी बुलाते रहे हैं जहां उन्होंने प्राइवेट रूप से वह सारी योजनायें बनाई हैं कि भारत में ईसाइयत का प्रचार तेजी के साथ किस प्रकार हो सकता है।

सामयिक महत्व की दृष्टि से एक और बात ध्यान देने योग्य है। कहा जाता है कि भारत में आने से पूर्व डा० बिलीग्राह्म अमेरिका के राज्य मन्त्री श्री डलेस से भारत के सम्बन्ध में काफी बातचीत कर चुके थे और उन्हें श्री डलेस महोदय के आगमन से पूर्व ही यहाँ भेजा गया था। हो सकता है कि इसमें कोई राजनैतिक रहस्य और चाल हो। यह कर्तव्य भारत सरकार का है कि वह इस ओर सचेत रहे।

३—भारत सरकार के परराष्ट्र विभाग के उ मन्त्री श्री अनिलकुमार चन्दा से भेंट

टेलीफोन पर इनके प्राइवेट सेक्रेटरी के साथ भेंट के लिये दिन तथा समय निश्चित होने के अनुसार मैं तारीख ७ फरवरी १९५६ को ११ बजे उनके कार्यालय में पहुंच गया। जैसे ही वार्तालाप आरम्भ हुई उन्होंने कहा कि मैंने समस्त योरुपियन देशों तथा अमेरिका का भ्रमण किया है परन्तु वहाँ कहीं भी आर्य समाज की शाखा नहीं है जब कि रामकृष्ण मिशन की शाखायें सब ही बड़े २ स्थानों में खुल चुकी हैं। इस प्रकार की बातें बहुधा मुझे आर्य समाज के क्षेत्र के बाहर के शिक्षित और शुभचिन्तकों से सुननी पड़ती हैं और इस प्रकार के प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर देने में मैं ही नहीं किन्तु आर्य समाज का प्रत्येक कार्यकर्ता अपने को असमर्थ पावेगा।

मैंने उनसे पूछा कि संसद सदस्य बनने से पूर्व आप कहां थे और क्या करते थे ? उन्होंने कहा कि विदेश में मेरी शिक्षा होने के पश्चात मैं यहां से पूर्व कई वर्ष तक शान्ति निकेतन विश्व विद्यालय का प्रिन्सिपल रह चुका हूं।

शिष्टाचार के ढंग से उन्होंने मुझसे पूछा कि मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूं ? मैंने उनसे निवेदन किया कि भारत सरकार समय समय पर विदेशों के राजनीतिज्ञों आदि को आमन्त्रित करती रहती है और उन सब का प्रोग्राम आदि बनाना आप के हाथ में है। अतः हमारी सभा की ओर से मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप गुरुकुल कांगड़ी को भी अन्य सांस्कृतिक दर्शनीय स्थानों में सम्मिलित करने की कृपा करें। उन्होंने बताया कि उनकी सूची में अब तक बनारस विश्व विद्यालय, अलीगढ़ विश्व विद्यालय, शान्ति निकेतन, जामिया मिलिया, बिरला मन्दिर, जामा मस्जिद दिल्ली, लाल किला, ताज, कुतुब मीनार आदि सांस्कृतिक स्थान है परन्तु गुरुकुल कांगड़ी नहीं है। कहने लगे कि अब आपके सुझाव पर मैं गुरुकुल कांगड़ी का भी नाम नोट किये लेता हूँ परन्तु इनमें से किसी स्थान पर जाना अथवा न जाना उन लोगों की रुचि पर भी निर्भर करता है।

मैंने उनसे पूछा कि क्या आपने गुरुकुल काँगड़ी देखा है तो उन्होंने कहा कि अभी तक नहीं किन्तु मेरी तथा मेरे सब से बड़े भाई जो अविभाजित बंगाल में सर्व प्रथम भारतीय डायरेक्टर आफ पब्लिक इन्स्ट्रक्शन थे और कार्यमुक्त (रिटायर्ड) होने के पश्चात से अधिकांश में मेरे साथ ही रहते हैं दोनों की ही इच्छा गुरुकुल कांगड़ी देखने की है, चूंकि हम दोनों ही ऐज्यूकेशनलिस्ट रहे हैं। मैंने उन से कहा कि अप्रैल मास में गुरुकुल का वार्षिकोत्सव होता है उस अवसर पर वहां पधारने के लिये आपको गुरुकुल की ओर से निमन्त्रण मिल जावेगा और आप अवश्य पधारने की कृपा करें। यह सब समाचार मैं अपनी सभा के माननीय प्रधान और गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के उपकुल पति श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति को दे चुका हूं।

अन्त में मैंने उन्हें दयानन्द फिलासफी नामक ग्रन्थ तथा आर्यसमाज एन्ड वर्ल्ड प्रोबलम्स नामक पुस्तिका सभा की ओर से भेंट की जिसे उन्होंने स्वयं तथा अपने बड़े भाई आदि द्वारा पढ़ेजाने का आश्वासन दिया।

४—स्वीटजरलैंड निवासी श्री योगी जार्ज से भेंट

भारत की प्राचीन योग विद्या को सीखने और योग सिखाने वाले योगियों की तलाश में कभी कभी कोई विदेशी पुरुष तथा स्त्री भारत आते रहते हैं। जब से भारत स्वतन्त्र हुआ है उस समय से ऐसे लोगों की संख्या बढ़ती जा रही है। गत वर्षों में मुझे कई ऐसे स्त्री पुरुषों से मिलने का अवसर मिला है। जब ऐसे लोग दिल्ली आते हैं तो वे नई दिल्ली स्थित बिरला मन्दिर में प्रायः दानवीर सेठ जुगलकिशोर जी बिरला के अतिथि के रूप में कुछ दिन निवास करते हैं। मैं समय समय पर ऐसे व्यक्तियों का पता लेने और उन्हें आर्य धर्म के सम्पर्क में लानेके अभिप्राय से बिरला मंदिर जाता रहता हूं।

अभी पिछले दिनों एक ऐसे ही सज्जन स्वीटजरलैंड निवासी श्री योगी जार्ज से कई बार मिलने का अवसर प्राप्त हुआ। इनके कथनानुसार इनका परिचय निम्न प्रकार है—

इनका जन्म स्वीटजरलैंड में हुआ था। वहीं इनकी शिक्षा हुई। इन्होंने दो बार समस्त विश्व का भ्रमण किया है। गत बीस वर्ष से अब ये भारत में हैं और योग का अभ्यास कर रहे हैं। योगियों की तलाश में इन्होंने समस्त भारत का भ्रमण किया है। गर्मियों में हिमालय में रहते हैं। बहुत से साधुओं के सम्पर्क में रह चुके हैं। गृहस्थ में प्रवेश नहीं किया। आयु ४८ वर्ष है।

जब इनके साथ दार्शनिक ढंग से बातचीत आरम्भ हुई तो ज्ञात हुआ कि अहं ब्रह्मास्मि नवीन वेदांत और जैन दर्शनों का इन पर प्रभाव है। गुजरातके एक प्रसिद्ध विद्वान जैन महात्मा स्व०श्री शान्ती विजय की सेवा में यह निरन्तर तीन वर्ष तक रह चुके हैं और उस काल में उन्होंने बड़ी तपस्या का जीवन व्यतीत किया था।

जब मैंने उन्हें शंकर के नवीन वेदान्त को व्यास के प्राचीन तथा वास्तविक वेदान्त से युक्तियों द्वारा विपरीत सिद्ध किया तो उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ और कहने लगे कि बड़े दुःख की बात है कि शंकर के नवीन वेदान्त के मार्ग पर स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ और वर्तमान में डा० राधाकृष्णन जैसे विद्वान् अग्रसर रहे हैं। मैंने उनसे कहा कि जब मार्ग ही गलत है तो उस पर जो भी चलेगा वही गलती की ओर जावेगा तथा जिन अन्यों को भी वह उस मार्ग पर चलने का उपदेश देगा, उन सब को ही गलती की ओर ले जावेगा और यह शंकर के नवीन वेदांत के गलत

महिला जगत

महारानी लक्ष्मी बाई

स्मरणीय उद्बोधन

[ले०—श्रीयुत वृन्दावन लाल जी वर्मा]

संध्या होने में विलम्ब था । लू तेज चल रही थी । महारानी लक्ष्मी बाई मुन्दर के साथ स्त्री-वेश में बाबा गंगादास (ग्वालियर) की कुटी पर पहुंचीं । घोड़े एक पेड़ से बांध दिये । बाबा के सामने पहुंच कर नमस्कार किया । बाबा ने आसन दिया । ठण्डा पानी पिलाया ।

रानी ने कहा—मैं आपसे कुछ पूछने आई हूं । मेरा मन अशांत है । आपके उत्तर से शांति मिलने की आशा है ।

बाबा बोले—मैं ईश भजन के सिवाय और कुछ जानता ही नहीं हूं ।

रानी—आप रावसाहब पेशवा के यहां ब्राह्मण भोजन में गये ?

बाबा नहीं गया । यहीं बहुत खाने को मिल जाता है ।

रानी—इसीलिये आपके पास आई हूं । आप टाल नहीं सकेंगे । बतलाना होगा । आपने अकेले अपने मन को शांत कर लिया तो क्या हुआ ? हम लोगों को भी शांति दीजिये ।

बाबा—पूछो बेटी । यदि समझ में आ जायगा तो बतला दूंगा ।

रानी—यहां थोड़े दिनों में युद्ध होने वाला है । आप की कुटी का स्थान रक्षित नहीं है । किसी सुरक्षित स्थान में न चले जाइये ?

सिद्धांत अहं ब्रह्मास्मि के प्रचार तथा उसका फल अकर्मण्यता ही कारण था कि विश्व का गुरु और सरताज यह भारत देश विदेशियों द्वारा एक सहस्र वर्ष तक पादाक्रांत रहा और अब भी असली वेदान्त के नाम पर नकली वेदान्त का उपदेश यहां की भोली भाली जनता को दिया जाता है ।

मैंने उनसे कहा कि आपने भारत में रहकर गत बीस वर्ष में जो कुछ प्राप्त किया है तथा भविष्य में जो कुछ प्राप्त करेंगे उसके लिये केवल सत्य को तराजू बनायें और निरन्तर सत्य की ही खोज में रहें तब ही आप योग का भी वास्तविक रूप में अभ्यास कर सकेंगे अन्यथा नहीं । इन्होंने मेरे इस कथन को स्वीकार किया । मैंने इन्हें त्रैतवाद का सिद्धांत विस्तार सहित समझाया और व्यास द्वारा रचित वेदांत का त्रैतवाद के साथ पूरा मिलान समझाया । उन्होंने मुझ से इस विषय पर कोई अंग्रेजी की पुस्तक मांगी । दूसरे दिन मैंने उन्हें दयानन्द फिलासफी नामक ग्रन्थ सभा की ओरसे भेंट किया । इनके साथ मिलना जारी है ।

बाबा—सुरक्षित है। बात पूछो।

रानी—इस देश को स्वराज्य कैसे प्राप्त होगा ?

बाबा—इस प्रश्न का उत्तर तो राजा लोग ही दे सकते हैं।

रानी—नहीं दे सकते, तभी आपसे पूछने आई हू।

बाबा—जैसे प्राप्त होता आया है, वैसे ही होगा।

रानी—कैसे बाबा जी ?

बाबा—सेवा, तपस्या, बलिदान से।

रानी—हम लोग कैसे स्वराज्य स्थापित कर पावेंगे ?

बाबा—गड्ढे कैसे भरे जाते हैं ? नींव कैसे पूरी जाती है ? एक पत्थर गिरता है, फिर दूसरा, फिर तीसरा और चौथा, इसी प्रकार और तब उसके ऊपर भवन खड़ा होता है। नींव के पत्थर भवन को नहीं देख सकते। परन्तु भवन खड़ा होता है उन्हीं के भरोसे—जो नींव में गडे हुये हैं। वह गड्ढा या नींव एक पत्थर से नहीं भरी जाती और न एक दिन में। अनवरत प्रयत्न, निरन्तर बलिदान आवश्यक है।

रानी—हम लोगों के जीवन काल में स्वराज्य स्थापित हो जायगा ?

बाबा—यह मोह क्यों ? तुमने आरम्भ किये हुये कार्य को आगे बढ़ा दिया है। अन्य लोग आयेंगे। वे इसको बढ़ाते जायेंगे। अभी कसर है। स्वराज्य स्थापना के आदर्शवादी अपने अपने छोटे छोटे राज्य बना कर बैठ जाते हैं। जनता और उनके बीच का अन्तर नहीं मिटता। घटता ही बहुत कम है। जनता त्रस्त बनी रहती है। जब जनता का पूरा सहयोग राज्य को प्राप्त हो जाये और राजा टीमटाम तथा विलासिता का दासत्व छोड़ कर प्रजा का सेवक बन जाय तब जानो स्वराज्य की नींव भर गई और भवन बनना आरम्भ हो गया। शाश्वत धर्म का रूप बिगड़ गया है। इसके सुधार के बिना यह भवन खड़ा न हो पायेगा।

रानी—हम लोग प्रयत्न करते रहें ?

बाबा—अवश्य। तुम तो गीता की भक्त हो।

रानी—आपने कैसे जाना ?

बाबा मुस्कराये और बोले—सब कहते हैं।

रानी—मै पाठ करती हूँ, परन्तु समझने तो आप महात्मा लोग ही हैं।

बाबा—गृहस्थ से बढकर और कोई साधु नहीं। मुझसे कुछ और नहीं हो सका, इसलिये कुटी बना ली।

सूर्यास्त होने को आया। रानी को सन्ध्या-ध्यान का स्मरण हुआ, कहा—बाबा जी फिर कभी दर्शन करूंगी। आपकी इतनी बात से चित्त को बहुत शांति मिली और नमस्कार करके चली गई।

मार्ग में सुन्दर ने कहा, 'सरकार भी इन्हीं बातों को बतलाया करती हैं।

परन्तु रानी बोली--बाबा के समान होने मे बहुत देर है।

नोट—ऐतिहासिक स्थापना के अनुसार महारानी लक्ष्मी बाई की बाबा गंगादास के साथ यह अन्तिम भेंट थी। ग्वालियर के युद्ध में इन्हीं बाबा की कुटिया पर रानी परम गति को प्राप्त हुईं।

—सम्पादक

स्वाध्याय का पृष्ठ

सृष्टि के आरम्भ का वास्तविक काल

वर्तमान सृष्टि का आरम्भ कब हुआ इस विषय मे बड़ा मतभेद है। यहूदी और ईसाई धर्म के बाइबिल में ई० स० पू० ४००४ में सृष्टि का आरम्भ बतला कर नूह के तीन पुत्र हेम, शेम जेफुट प्रलय होने के बाद एशिया, यूरोप और अफ्रीका गये और उनकी सन्तानों से वे देश आबाद हुए, ऐसा लिखा है। मेजियन और जरथोस्ती मतानुसार उत्पत्ति काल की एक मियाद अर्थात् ६ के ऊपर २१ शून्य रखे जायें, इतने वर्ष हुए। मुसलमान लोग सृष्टि का उत्पत्ति समय ७००० वर्ष मानते हैं और बुद्ध ने तो इस विषय का विचार ही करने से किनारा खींचा है। भूस्तर शास्त्र वेत्ताओं की खोज से पता लगता है कि सृष्टि के आरम्भ को कम से कम २० हजार वर्ष हो चुके जे० यम० केनेडो लिखते हैं कि आर्यों की उत्पत्ति ई० स० पू० ६० हजार वर्ष से कम कदापि नहीं हुई है। इन सब को दृष्टि में रखते हुए आर्य लोगों की गणना ही सत्य प्रतीत होती है। उनकी गणनानुसार सृष्टि और वेद का आरम्भ काल इस समय १९७२९४९०५६ है।

पोपों के अत्याचार

पोप के अधिकारों की रक्षा करने के लिये इन्क्वीजीशन कोर्टों की स्थापना हुई थी फ्रांस, स्पेन, नीदरलैण्ड इत्यादि स्थानों में उनका अस्तित्व था। वह इन्हें कार्यालय (होली आफिस) कहते थे। पोप का विरोध करने वाले याहुनी और लूथर के अनुयायियों को वहां सजा दी जाती थी। स्पेन के ऐसे न्यायालय में सन् १४८१ से १७८१ तक ३१९१०को जीवित जला देनेकी,प्रत्यक्ष न मिल सकने के कारण १७६५९ के पुतले बनाकर जलाने की और २९१४५० को सपरिश्रम कारावास की सजायें दी गई थीं। पाठक अनुमान करें कि ऐसे ही अन्य न्यायालयों में कितने मनुष्यों को सजायें दी गई होंगी। इस समय कहीं भी ऐसे न्यायालयों का अस्तित्व नहीं है। मुसलमानों ने भी अपने राज्य काल में एक हाथ में कुरान और दूसरे में तलवार ले दो में से एक को शिर झुकाने के लिए हिन्दुओं को बाध्य किया था। उनके धर्म ग्रन्थों को जलाने तथा उनसे एक विशेष प्रकार का राजस्व (जजिया) लेने का वर्णन इतिहास ग्रन्थों में पाया जाता है परन्तु आत्मवत सर्व भूतेषु मानने वाली आर्य प्रजा ने धर्म के निमित्त किसी समय में किसी पर अत्याचार करने की इच्छा भी नहीं की।

नियोग

ऋग्वेद में नियोग का विधान है। पृथ्वी के प्रत्येक भाग और प्रत्येक जाति में यह पुराणकाल के आरम्भ तक प्रचलित था (ऐन साइक्लो पीडिया ब्रिटानिका भा० ११ पृष्ठ ५११) परन्तु लोगों में इन्द्रिय सुख की लालस को देख अनाचार और व्यभिचार की वृद्धि होने की आशंका से पुराण काल के पंडितों ने यह प्रथा बन्द कर दी थी तथापि प्रकारान्तर से अनेक जातियों में वह आज भी प्रचलित है।

धर्म का आदि स्रोत

डा० वेलेंटाइन लिखते हैं कि संस्कृत भाषा ही सर्व भाषाओं की माता है। स्केफल साहब

साहित्य समीक्षा

दो महा मानव

लेखक श्री विजयेन्द्र शर्मा, फीजी निवासी प्रकाशक मित्र प्रकाशन ८ डी० रोड, इलाहाबाद (३) भूमिका लेखक चन्द्रशेखर बाजपेयी, एम०एस० सी० एल० टी० पृष्ठ संख्या १३६ मूल्य २)।

प्रस्तुत नाटक 'दो महा मानव' पृथ्वीराज चौहान और चन्द्र वरदायी के जीवन की अन्तिम घटनाको लेकर नाटक रूप में लिखा गया है। पृथ्वीराज चौहान जब मुहम्मद गौरी का बन्दी बना कर गजनी ले जाया गया तो उसकी चिन्ता देश के कितने व्यक्तियों को थी यह नहीं कहा जा सकता किन्तु उसके परम मित्र चन्द्र वरदायी अपने सिर को हथेली पर लेकर गजनी पहुँचे और पृथ्वीराज को जेल से निकलवा कर मुहम्मद गौरी का वध करवाया यह कथा सर्व विदित है। इस ऐतिहासिक घटना के साथ बदले की भावना से प्रेरित होकर दो कल्पित पात्रों को भी भारत से गजनी पहुंचा कर और चन्द्र वरदाई के पौरोहित्य में गजनी की एक मुस्लिम महिला से उनमें से एक के साथ विवाह करवाना और वैदिक धर्म की शिक्षाओं का दिग्दर्शन कराना आदि ऐसी घटनाये हैं जो ऐतिहासिक नहीं हैं। फिर भी लेखक ने आर्य समाज के दृष्टिकोण को रखा है। यदि यह घटना इस पुस्तक में न जोड़ी गई होती तो पुस्तक का विषय और प्रखर हो जाता। पुस्तक के लेखक फीजी द्वीप में आर्य समाज के वातावरण में पले हैं और उन्होंने मातृभूमि भारत के प्रति जो निष्ठा, हिन्दी के प्रति जो महान् प्रेम और वैदिक धर्म तथा संस्कृति के प्रति जो श्रद्धा प्रदर्शित की है वह सराहनीय है। भाषा और छपाई आदि की दृष्टि से पुस्तक सुन्दर है। इस पुस्तक को अपनाना दूरस्थ देश में रहने वाले एक नवयुवक को प्रोत्साहन देना है। हम कामना करते हैं कि लेखक महोदय भारत, हिन्दी और वैदिक धर्म और संस्कृति के प्रति अपनी निष्ठा पूर्ववत् रखते हुए हिन्दी की और भी सेवा करेंगे।

पुस्तक की भूमिका लिखकर श्री चन्द्रशेखर जी ने अपनी विद्वत्ता का परिचय दिया है और पुस्तक को और भी उपयोगी बना दिया है। लेखक तथा प्रकाशक दोनों ही बधाई के पात्र हैं।

—निरञ्जनलाल 'गौतम'

लिखते हैं कि संस्कृत के समान पूर्ण भाषा संसार में और है ही नहीं। मि० डब्ल्यू० सी० टेलर का मत है कि यूरोप की समस्त भाषाओं की जननी संस्कृत है। इन बातों से प्रमाणित है कि संस्कृत ही सर्वापेक्षा प्राचीन भाषा है। अच्छे २ विद्वानों ने अनेक प्रमाणों द्वारा सिद्ध किया है कि सर्वोत्तम संस्कृत भाषा में वेद ही एक मात्र धर्म ग्रन्थ है। वेद धर्म पर से साल्डियन धर्म और साल्डियन पर से असीरियन धर्म की स्थापना हुई थी। जार्ज स्मिथ और डाक्टर माइन्स के कथनानुसार असीरियन धर्म के आधार पर यहूदी धर्म के केबाला और केबाला के आधार पर बाइबिल की रचना हुई है। ईसा मसीह ने भारत से धर्म शिक्षा प्राप्त कर क्रिश्चियन धर्म की स्थापना की थी। क्रिश्चियन धर्म की शिक्षा प्राप्त कर हजरत मुहम्मद पैगम्बर ने इस्लाम धर्म की नीव डाली थी। उनका लाइलाह इल्लल्लाह यह सूत्र आर्य धर्म के एकोऽहं ब्रह्म का अनुवाद मात्र है। जरथोस्ती धर्म की स्थापना भी वेदमन्त्रों के आधार पर हुई थी। कितने ही प्रधान धर्म तो वेद धर्म के रूपान्तर हैं। अन्यान्य सभी मत पन्थ और शाखा सम्प्रदाय वेद धर्म के शाखा स्वरूप हैं। फ्रीमैसन वाले भी अग्नि की स्तुति करते हैं। इन बातों से प्रमाणित होता है कि वेद ही सब धर्मों के मूल हैं।

—भारत का धार्मिक इतिहास

आर्य विद्वानों के नाम पत्र

विद्वद्वर्ये, सादर नमस्ते ।

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की साधारण सभा के अधिवेशन ता० २७-८-५५ में यह निश्चय हुआ था कि :—

समिदाधान के मन्त्रों में दूसरी समिधा के दो मन्त्रों में से एक प्रथम मन्त्र समिधाग्नि दुवस्यत० मन्त्र में स्वाहा और इदन्न मम उच्चारण न किये जावें। इस पर कुछ सदस्यों को आपत्ति है अतः नियम सं० २२ के अनुसार सब सदस्यों की लिखित सम्मति प्राप्त करने के उद्देश्य से यह विज्ञप्ति भेजी जा रही है। सम्मति अवश्य भेजने की कृपा करें।

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् ।
आस्मिन हव्या जुहोतन स्वाहा ॥ इदमग्नये इदन्न मम ॥२॥

सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन ।
अग्नये जातवे० से स्वाहा ॥ इदमग्नये जातवेद से इदंन मम ॥३॥

संस्कार विधि में इस प्रकार मन्त्र पाठ मुद्रित है। ता० २७-८-५५ के अधिवेशन में निश्चय यह हुआ है कि मुद्रित तो ऐसा ही करना चाहिये पर एक टिप्पणी दे देनी चाहिये कि प्रथम मन्त्र में स्वाहा और इदन्न मम उच्चारण न किये जावें। आक्षेप करने वालों का कहना यह है कि ऋषि ने यह नहीं लिखा कि उच्चारण मत करो। जो लिखा है वह उच्चारण करने के लिये ही लिखा है। हम लोगों को कोई व्यवस्था स्वयं नहीं बनानी चाहिये। उनलोगोंका यह भी कहना है कि ठीक है कि यह समिधा एक ही दोनों मन्त्रोंसे चढ़ाई जाती है पर अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा चित्रं देवानां......जगत स्तस्थु षश्च स्वाहा आदि में भी स्वाहा होने से स्वाहा का अर्थ प्रक्षेप मात्र ही नहीं है अतः जैसा लिखा है वैसा उच्चारण करना चाहिये। इत्यादि आक्षेप के स्वरूप है अतः सब की सम्मति विशेष विचारार्थ प्रार्थनीय है।

निवेदक
आचार्य विश्वश्रवाः
मन्त्री
सार्वदेशिक धर्मार्य सभा, देहली।

---

* बाल जगत् *

बालकों की कूकर खांसी

[[लेखक — डा० गोपी कृष्ण शर्मा एल० एम० एस० (होमियो०)']

बच्चों के लिये एक बड़ी भयङ्कर बीमारी है। संक्रामक रोग होने के कारण यदि इस रोग से ग्रस्त बच्चों के साथ स्वस्थ बच्चे खेलें तो उन्हें भी यह बीमारी हो जाती है रोग की प्रारम्भिक अवस्था में बच्चों को सर्दी और खांसी होती है तथा खांसते समय कुत्ते के भौंकने जैसी आवाज होती है। इसी कारण से बहुधा लोग इसे 'कूकर खांसी' कहते हैं। पहले खांसी की संख्या दिन में चार पांच बार ही रहती है तथा खांसते २ कभी उल्टी भी हो जाती है । यदि आरम्भ में ठीक उपचार न किया जाय तो रोग जटिल रूप धारण कर लेता है। खांसते २ उल्टी, दस्त और कभी कभी मुंह नाक, फेफड़ों से रक्त-स्राव भी हो जाता है। इस रोग में जीवनी शक्ति का ह्रास क्रमशः होता जाता है। अन्त में मृत्यु तक हो जाती है। इस प्राण घातक बीमारी से हजारों बच्चों के प्राण प्रति वर्ष जाते हैं ।

ऐलोपैथिक-चिकित्सा में इसके लिये पर्टुसिन का प्रयोग करते हैं तथा पर्टुसस वेक्सीन (pertussus vaccine) का इंजेक्शन देते हैं। उन की धारणा के अनुसार यह एक मियादी खांसी है जिसकी चिकित्सा के लिये कम से कम तीन महीने की आवश्यकता है। हमारे देश की गरीब जनता के लिये इतना मंहगा और लम्बा इलाज उपयुक्त नहीं हो सकता। इसकी चिकित्सा सदृश विधान चिकित्सा (Homeopathy) से अल्प समय तथा कौड़ियों में सफलता पूर्वक की जा सकती है।

यह निदान होने पर कि बच्चे को कूकर खांसी है उसे सुबह खाली पेट ड्रूसेरा (Drosera) ३० शक्ति की २ गोलियां आधा औंस चुआये हुए पानी (Distilled Water) में गला कर पला दीजिये। आप इसी से देखेंगे कि रोग बहुत अंशों में घट गया।

यदि बच्चा खांसते २ दस्त या उल्टी कर देता है तो इपिकाक (Ipeco) ६ शक्ति की ८ गोलियां २ औंस चुआये हुये पानी में डाल कर दिन में चार बार दीजिए। इसीसे बच्चा आरोग्य हो जायगा।

यदि खांसी का बार बार तेज दौरा हो, मुंह या नाक से खून निकले, चेहरा भी नीला पड़ जाय तो कोरेलियम रुब्रम (Coraleum Rubum) ३ शक्ति २ बूंद ४ औंस चुआये हुये पानी में, जब तक खांसी का दौरा न घटे २-२ घंटे में एक चम्मच देते रहें।

यदि गले में घर-घर आवाज हो, हिलने-जुलने से खांसी बढ़े, बच्चा दांत कड़कड़ाये तो सिना (Cina) ३० शक्ति की ८ गोलियां चार औंस चुआये हुये पानी में गला कर दिन में चार बार दें।

यदि खांसी आधी रात के बाद बढ़े, गले में दर्द रहे तो बेलडोना (Balladona) ३० शक्ति की चार गोलियां २ औंस चुआये हुये पानी में गला कर चार बार दें।

इसके अतिरिक्त कूप्रयमेट, ब्रोमियम, नेप्थेलिन आदि दवायें भी इस खांसी में फायदा करती हैं।

दवा लेते समय चर्बी युक्त पदार्थ, घी या तेलों में तली चीजें, सड़े गले फल, गरिष्ठ पदार्थ, आईस-क्रीम, पिपरमेंट की गोलियां आदि न खानी चाहियें। यदि बच्चा मां का दूध पीता हो तो उस की माता को उपर्युक्त पथ्य से रहना चाहिये।

खुशबूदार तेल, सेंट, क्रीम, पाउडर आदि का व्यवहार बिल्कुल बन्द कर देना चाहिये। जिन बच्चों को यह बीमारी हो उनके माता-पिता का यह परम कर्त्तव्य है कि वे अपने बच्चों को स्वस्थ बच्चों में न खेलने दें जिससे कि रोग फैल न सके। बच्चा स्कूल जाता हो तो उसे स्कूल न जाने दें।

यदि उपरोक्त बातों का पूर्ण रूपेण पालन किया गया तो निश्चय ही इस भयंकर बीमारी से छुटकारा मिल सकता है।

* दक्षिण भारत प्रचार *

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती का दक्षिण भारत में सफल दौरा

कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की पुनःस्थापना

३ जनवरी से २ फरवरी १९५६ तक का श्री स्वामी जी का यह दौरा दक्षिण भारत में आर्य समाज के सिद्धांतों के प्रचार तथा आर्यों में नूतन उत्साह भरने की दृष्टि से बड़ा ही सफल रहा। इस संक्षिप्त से समय में मद्रास, मदुरा, त्रिवेन्द्रम, चेंगनूर, पोनान्नी, कालीकट, मंगलूर, मैसूर, बेंगलूर, कारकल, हिरियडक, उडुपी, तीर्थहल्ली, शिमोगा आदि सभी स्थानों की समाजों की स्थिति गति का निरीक्षण श्री पूज्य स्वामी जी ने किया तथा सदस्यों के साथ वार्तालाप एवं विचार विनिमय भी किया। इसके अतिरिक्त मलाबार जिले में तानूर ग्राम में एक आर्यसमाज की स्थापना भी श्री स्वामी जी के कर-कमलों से हुई। इन सभी स्थानों पर आर्य कार्य कर्ताओं ने श्री स्वामी जी का सोत्साह स्वागत किया तथा अधिकाधिक सार्वजनिक भाषणों की योजना की। श्री स्वामी जी के मधुर एवं उत्साहप्रद भाषणों का बहुत ही अच्छा प्रभाव रहा। यद्यपि दक्षिण भारत के लिए हिन्दी काफी अपरिचित है तथापि स्वामी जी की भाषण शैली तथा भाषा इतनी सरल थी कि जनता उनके भावों को समझने में विशेष कठिनाई अनुभव नहीं करती थी। इस प्रकार स्वामी जी के सैद्धांतिक भाषणों ने न केवल दक्षिण भारत की सामान्य जनता की दृष्टि में आर्य समाज के सिद्धांतों की विशालता को अंकित किया अपितु आर्य कार्य कर्ताओं को भी नई चेतना व जीवन प्रदान किया। इस दौरे में इस वृद्ध अवस्था में स्वामी जी को अत्यन्त कष्ट हुआ। एक दिन तो पूर्ण उपवास भी रखना पड़ा, परन्तु इन सभी कष्टों तथा हमारे अनुभवों की न्यूनता से होने वाले सभी दुःखों को सहकर भी उन्होंने भारत के इस खण्ड को सजग एवं अनुप्राणित कर कृतार्थ किया। उनके प्रति कृतज्ञता का प्रकाशन शब्दों में असम्भव है। जहाँ अनेक भाषणों से इस प्रकार का उत्साह जगा उनके उज्ज्वल व्यक्तित्व ने और भी अधिक प्रभाव डाला।

कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना

मद्रास, मैसूर आदि सब स्थानों पर होते हुए ता० २३ की रात्रि को बेंगलूर पहुंचे। अब तक कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की सभी तैयारियां ज़ोर शोर से प्रारम्भ हो गई थीं तथा आर्य सम्मेलन के लिये आर्यसमाज के विश्वेश्वरपुरम् स्थित भवन को सजा दिया गया था।

प्रतिनिधियों के ठहरने के लिये श्री मन्नाजी राव जी ने ५ दिन के लिये सज्जनराव छत्र बिना शुल्क दिया था। बेंगलूर के उत्साही कार्य कर्ताओं तथा दानदाताओं के अमूल्य सहयोग से यह कार्य अत्यन्त सफल एवं यशस्वी रहा।

२५ जनवरी को प्रातः ८ बजे छत्र में श्री पूज्य स्वामी जी का अनुपम स्वागत हुआ तथा प्रतिनिधियों एवं अन्य आर्य सज्जनों व नगर के प्रमुख कार्य कर्ताओं के साथ स्वामी जी जुलूस के रूप में आर्य समाज मन्दिर पहुंचे। जुलूस में सब से आगे दक्षिण भारत का प्रसिद्ध "नागस्वर" संगीत चल रहा था। उसके पीछे वेदमन्त्रों का उद्घोष करते हुये वेदपाठी चल रहे थे। उनके पीछे उज्ज्वल शरीर श्री स्वामी जी पैदल ही चल रहे थे। उनके पीछे आर्य नरनारियों का सह

था। आर्य समाज के मुख्य द्वार पर आर्य कन्याओं ने स्वामी जी की आरती उतारी तथा तिलक किया। फिर भवन में यज्ञ किया गया। यज्ञ के उपरान्त कर्नाटक प्रान्त के विभिन्न समाजों के उपस्थित प्रतिनिधियों की सभा प्रारम्भ हुई। कुल ३२ प्रतिनिधि उपस्थित थे। सर्व प्रथम स्वामी जी को अध्यक्ष पद पर आसीन कराने के अनन्तर "आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना" के सम्बन्ध में सर्व सम्मति से स्वीकार किया गया कि कर्नाटक प्रान्त में ऐसे संगठन की अत्यन्त आवश्यकता है अतः उसकी स्थापना अवश्यमेव होनी चाहिये। इस उत्साहप्रद प्रस्ताव के एक स्वर से स्वीकार होने के पश्चात् स्वामी जी के मधुर एवं हृदयस्पर्शी सन्देश से उत्पन्न स्नेहमय वातावरण में सभी अधिकारियों का निर्वाचन सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ। तदनुसार—

प्रधान—	श्री जे० नारायनराव बंगलौर
उपप्रधान—	,, बी० मोहनप्पा तिरूलाय, बंगलौर
,,	,, विजय कपूर बंगलौर
मन्त्री—	,, आर्य मूर्ति बंगलौर
उपमन्त्री—	,, एस० मरिमय्या बंगलौर
,,	,, वेङ्कटराम.नुजैया मैसूर
कोषाध्यक्ष—	,, बत्तनलाल जी बंगलौर

ये सात पदाधिकारी निर्वाचित हुए तथा कार्य कारिणी समिति भी बनादी गई।

२६ जनवरी का शुभ दिन समुपस्थित हो गया। आज बहुतों का स्वप्न पूर्ण होने वाला था इसलिये मानस का प्रत्येक कण उल्लास से परिपूर्ण था। प्रातः ८ बजे गणराज्य महायज्ञ का कार्य प्रारम्भ हुआ। स्वागत समिति के अध्यक्ष श्री गार्ले नारायण शेट्टी यजमान थे। पण्डितों के मन्त्रोच्चारण के द्वारा गणराज्य का स्वागत हुआ। तदन्तर श्री पूज्य स्वामी जी के कर कमलों से ओ३म् ध्वजा एवं राष्ट्र पताका का आरोहण हुआ। ध्वजारोहण के अनन्तर वेदपाठियों के मन्त्रोद्घोष के साथ "कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा" के उद्घाटन का समारोह प्रारम्भ हुआ। समस्त प्रतिनिधियों की पूर्ण सहमति लेकर स्वामी जी ने अध्यक्ष के रूप में समस्त निर्वाचित अधिकारियों व कार्य कारिणी समिति के सदस्यों को घोषित किया कि "मैं आज इस कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा का प्रसन्नता के साथ उद्घाटन करता हूँ" इन शब्दों के साथ सभा की स्थापना कर दी। समस्त अधिकारियों व कार्यकारिणी के सदस्यों ने श्री स्वामी जी के आचार्यत्व में यज्ञ किया तथा अपने उत्तरदायित्व को न्याय शान्ति एवं सद्भावना के साथ पूर्ण करने का प्रण किया। स्वामी जी ने सभी अधिकारियों को सदुपदेश एवं आशीर्वाद दिया। तदन्तर समस्त आर्य जनों का छत्रम् में प्रीति भोजन हुआ। इस प्रकार परमात्मा की कृपा से बड़े उल्लासमय शांत एवं स्नेहपूर्ण वातावरण में चिर-प्रतीक्षित कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना हो गई। आशा है कि सभी आर्य जनों के सहयोग एवं नेताओं व आचार्यों के आशीर्वाद एवं परमपिता की असीम अनुकम्पा से यह शतशः और सहस्रशः शाखाओं में फलता फूलता चलेगा।

आर्य-सम्मेलन

इसी अवसर पर आर्य महिला सम्मेलन व अन्य भाषणों की भी आयोजना की गई। यह तीन दिन का आर्य सम्मेलन बहुत ही समारोह-पूर्वक सम्पन्न हुआ। २७ ता० को गायत्री महायज्ञ दर्शनीय एवं प्रभावकारी था। श्रीमती विद्यावती कपूर यजमान बनीं।

एम० आर्यमुनि
मन्त्री, कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा, बंगलौर

———

* सूचनाएँ तथा वैदिक धर्म प्रसार *

निर्वाचन

नामसमाज	प्रधान	मन्त्री	दिनांक
आ० स० गंगोह (सहारनपुर)	श्री मथरासिंह जी	श्री जनार्दन दास	२२-१-५६
७ अन्य अधिकारी तथा ६ अन्तरङ्ग सदस्य भी चुने गये।			
(२) आ० स० आबू रोड	श्री जयनारायण जी	श्री किशनलाल आर्य	२६-१-५६
यह निर्वाचन श्रीयुत पं० धर्मवीर जी वेदालंकार एवं श्री वेणी भाई जी उपप्रधान तथा मन्त्री मुम्बई प्रदेश प्रतिनिधि सभा की उपस्थिति में हुआ।			
(३) आ० स० गाजियाबाद (मेरठ)	श्री मुरलीधर जी	श्री कर्मचन्द जी परमानन्द उपमन्त्री	+
(४) आ०स० बजाजा बाजार अलवर	श्री वेलीराम जी आर्य	श्री हीरालाल वर्मा मोहनदेवी आर्या उपमन्त्री	
(५) आ० स० खडवा	श्री डा० रघुनाथसिंह जी	श्री कैलाशचन्द्र जी	३-१-५६

शुद्धि कार्य

आर्य समाज खडवा के तत्वावधान में श्री स्वामी दिव्यानन्द जी की अध्यक्षता में २३-१२-५५ से ३०-१२-५५ तक शुद्धि सप्ताह मनाया गया। १-१-५६ तक ईसाई परिवारों की जिनमें ६१२ व्यक्ति हैं तहसील निमाड़ में आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश के शुद्धि विभाग के अधिष्ठाता श्री दिव्यानन्द जी के उद्योग से शुद्धियां हुईं।

रक्षा कार्य

आर्य समाज अलवर (राजस्थान) की संरक्षता में शान्ति नाम्नी ब्राह्मण विधवा का जो लगभग ३ वर्ष से पीरू नामक यवन के चक्कर में थी आर्य समाज द्वारा मुक्त की जाकर एक ब्राह्मण के साथ विवाह कराया गया। ३००) रुपया आर्य संस्थाओं को दान प्राप्त हुआ।

— शान्ता आर्या उपमन्त्राणी

समाज निर्माणार्थ

आर्यसमाज कारकल (दक्षिण) के मन्त्री श्री केशोरामचन्द्र शैणै ने १०००) तथा श्री दामोदर भंडारी ने २५) कारकल समाज के निर्माणार्थ सार्वदेशिक सभा में भेजा है। इसके अतिरिक्त १००) शैने जी ने शुद्धि कार्यार्थ भी भेजा।

संस्कार

१५ १-५६ को आर्य समाज कायमगंज (फरूखाबाद) के उत्साही उपमन्त्री श्री उमाशंकर जी आर्य के यहां अत्यन्त उत्साह के साथ बच्चे का निष्क्रमण संस्कार कराया गया। २०-१-५६ को स्थानीय समाज के वयोवृद्ध नेता प० रामेश्वर-दयाल जी के नाती के उपाकर्म व कर्णवेध संस्कार प्रभावशाली ढंग से हुए। ये संस्कार पं० शिवदत्त जी शर्मा शास्त्री द्वारा हुए।

समाजों का पुनर्संगठन

१३ से १५ जनवरी ५६ तक आर्य समाज

बहेड़ी बरेली) का वार्षिक उत्सव ससमारोह मनाया गया। श्रीयुत पं० रामचन्द्र जी देहलवी, श्री आचार्य विश्वश्रवाः जी, श्री पं० बुद्धदेव जी, विद्यालंकार, श्री पं० बिहारीलाल जी शास्त्री, श्री शिव स्वामी जी महाराज आदि २ महानुभावों ने उत्सव में भाग लिया। श्री पं० सुरेन्द्र जी शर्मा के धनुर्विद्या के खेलों से जनता प्रभावित हुई। इस समाज का कार्य कुछ वर्षों से शिथिल सा हो गया था। अब बड़े उत्साह के साथ प्रारम्भ हुआ। नवीन अधिकारियों का चुनाव भी हो गया है। प्रधान श्री ऊधोसिंह तथा मन्त्री श्री चिन्तामणि जी आर्य निर्वाचित हुए। चुनाव श्री आचार्य विश्वश्रवाः जी मन्त्री सार्वदेशिक धर्मार्य सभा तथा श्री चन्द्रनारायण जी उपमन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश की अध्यक्षता में हुआ।

अखिल बंग आसाम आर्य महासम्मेलन

यह सम्मेलन २४ से २६ मार्च तक कलकत्ता में होगा। श्री मिहिरचन्द्र जी धीमान स्वागताध्यक्ष तथा श्री कान्ताचरण जी देव वर्मन स्वागत मन्त्री, पं० अवध बिहारीलाल एम० ए० बी० एल० प्रचार मन्त्री तथा श्री शान्तिस्वरूप गुप्त कोषाध्यक्ष निर्वाचित हुए हैं। विभिन्न विभागों के मन्त्री तथा उपप्रधानों को लेकर कुल इक्कीस पदाधिकारी एवं तेईस अन्तरंग सदस्य चुने गये। यह निर्वाचन पं० सुरेन्द्रनाथ जी सिद्धान्त विशारद के सभापतित्व में हुआ और इसमें मेदिनीपुर, हुगली, हावड़ा २४ परगना के ३० समाजों के सदस्यों ने भाग लिया।

निधन

कारंजा (विदर्भ) के श्री दुर्गाप्रसाद जी आर्य की हृदय की गति बन्द हो जाने से १०-२-५६ को अकस्मात मृत्यु हो गई। वे आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश के उपमन्त्री तथा कारंजा आर्य समाज के एकमेव प्रमुख संचालक थे। अस्पृश्यता निवारण के लिए उन्होंने विशेष कार्य किया। उनके शोक में स्कूल, काटन मार्कीट, अन्न बाजार, पहार गृह तथा किराना शाप बन्द रहे। शोक सभा में आर्यों के अतिरिक्त साम्यवादी, कांग्रेसी और सर्वोदयवादी प्रायः सभी राजनैतिक विचारधाराओं के सज्जनों ने भाग लिया।

बाबूराव चिखलकर आर्य

आदर्श विवाह (१)

१६-२-५६को सुप्रसिद्ध आर्योपदेशक श्रीयुतपं० सुरेन्द्रजी शर्मा गौर के सु०श्री राजेन्द्रजीका विवाह संस्कार वरला (अलीगढ़ निवासी श्रीयुत ला० बद्रीप्रसाद जी की सुपुत्री सौभा० ओ३मवती के साथ देहली के आर्य समाज सीताराम बाजार में सम्पन्न हुआ। वर जन्मना ब्राह्मण और कन्या वैश्य हैं। वर महोदय श्री प्रतापसिंह जी शूरजी के यहां नेवी विभाग में अच्छे पद पर कार्य करते हैं तथा कन्या बी० ए० है और एम० ए० में पढ़ रही है। संस्कार श्रीयुत स्वामी सर्वानन्दजी (भूतपूर्व श्रीयुत पं० चूड़ामणिजी, श्री पं० सुरेन्द्र शर्माजी के गुरुदेव) की अध्यक्षता में श्री पं० लोकनाथजी तक वाचस्पति, श्री प० रामचन्द्र जी जिज्ञासु, श्री पं० जगतनारायण जी द्वारा सम्पन्न हुआ। इस संस्कार में देहली के प्रायः सभी प्रमुख २ आर्य सज्जनों ने भाग लिया। श्री पं० सुरेन्द्र जी शर्मा और ला० बद्रीप्रसाद जी दोनों ही को हार्दिक बधाई दी गई जिन्होंने आर्य समाज के एक सिद्धांत की रक्षा करके बड़ा उत्तम और साहस का काम किया है।

(२)

आर्य जगत को ज्ञात ही है कि गत वर्ष सार्वदेशिक सभा के भूतपूर्व मन्त्री श्रीयुत कविराज हरनामदास जी ने अपनी भान्जी का रिश्त

श्रीयुत ठा० धर्मसिंह जी सरहदी (जो जन्मना यवन थे और शुद्धि के पश्चात लगभग २५-३० वर्ष से आर्य धर्म पर डटे हैं।) के सुपुत्र श्री रामपाल सिंह के साथ निश्चित किया था। आर्य जगत्को यह जानकर हर्ष होगा कि यह ऐतिहासिक विवाह २८-२-५६को देहली में सम्पन्न होगा।

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ का वार्षिकोत्सव १६, १७, १८ मार्च १६५६ शुक्र, शनि, रविवार को है। सस्था की १२८० बीघे सुन्दर भूमि और विशाल पक्के भवन हैं। पिकनिक के लिये दिल्ली निवासी समय २ पर यहां आते रहते हैं।

शिक्षा बेसिक जिससे विद्यार्थी दस्तकारी को भी ग्रहण कर शिक्षा काल में ही आत्म निर्भरता की योग्यता प्राप्त कर सकें, और साथ ही किसी शारीरिक श्रम से घबराएं नहीं। अतिरिक्त इसके चरित्र, सामाजिक सेवा, तथा सस्कृति के स्रोत सस्कृत की शिक्षा विशेष है। यह सस्थ स्व०स्वामी श्रद्धानन्दजी का दिल्ली स्थित एक महत्वपूर्ण स्मारक है। ३० मार्च १६१६ को स्वामीजी ने चांदनी चौक स्थित घटाघर के समीप विदेशी फौजों की संगीनों के सामने छाती खोलकर दिल्ली वासियों की अभूतपूर्व रक्षा की और अन्त में देशोद्धार का काम करते हुए दिल्ली में छाती पर गोलियां खाकर आत्म बलिदान किया था। अतः उनके स्मारक गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ की दिल खोल कर धन से सहायता करने की श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति एम० पी० ने अपील की है।

विन्ध्य प्रदेश में ईसाइयों का कुप्रचार

छतरपुर (वि० प्र०) में १५ दिसम्बर से १६ दिसम्बर तक एक विशाल ईसाई सम्मेलन हुआ जिसमें कलकत्ता, उड़ीसा, बम्बई तथा मद्रास प्रांत तक के पादरियों ने भाग लिया। सम्मेलन में ईसाई पादरियों ने बड़े स्पष्ट शब्दों में हिन्दू धर्म पर बड़े ही असत्य दोषारोपण किये और साथ ही मर्यादा पुरुषोत्तम राम और योगीराज कृष्ण को धोखेबाज और चोर शब्दों से सम्बोधित किया।

छतरपुर में पौराणिक और जैन धर्मावलम्बी ही रहते हैं और आर्यसमाज वहाँ नियमित रूप से नहीं है। केवल एक डाक्टर और अ० भा० आर्यवीर दल के प्रधान शिक्षक श्री ठा० रामसिंह जी वहां आर्यसमाज का व्यक्तिगत रूप से प्रतिनिधित्व करते हैं। पौराणिक भाइयों को जब ईसाइयों की बातें असह्य हो गईं तो उन्होंने श्री रामसिंह जी के द्वारा सार्वदेशिक सभा से प्रार्थना की कि वह इसका विरोध करने की कृपा करे। तार पाते ही सार्वदेशिक सभा ने श्री ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी प्रधान सेनापति सार्वदेशिक आर्यवीर दल को वहां भेजा। वह १७ तारीख को वहाँ पहुंचगये और उसीदिनसे वहां अपना कार्यप्रारम्भ कर दिया। परिणाम यह हुआ कि ईसाइयों के सम्मेलन का वहां की जनता ने बहिष्कार कर दिया और उल्टे उनके सम्मेलन में लोग जाकर ईसाई धर्म सम्बन्धी बातों पर प्रश्न करने लगे।

ईसाइयों को नित्य शास्त्रार्थ के लिये ललकारा गया। अन्त में पादरियों ने अपनी भूल स्वीकार की और मौखिक रूप से क्षमा मांगी। पौराणिक भाइयों पर आर्यसमाज के इस प्रचार का बड़ा प्रभाव पड़ा और उन्होंने श्री पुरुषार्थी जी का बड़ा स्वागत किया और वहां उन्हीं की प्रेरणा से आर्य समाज की स्थापना की गई। इसके पश्चात श्री पुरुषार्थी जी ने महाराजपुर, भूपाल, गंज बासौदा आदि स्थान पर भी जाकर प्रचार किया और ईसाइयों के षड़यन्त्र से आर्य जनता को सचेत किया।

———

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर
श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली-से प्रकाशित।

ऋग्वेद

यजुर्वेद

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

वर्ष ३१

मूल्य स्वदेश ५)

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ॥)

अंक २

चैत्र २०१३

अप्रैल १९५६

बम्बई में सर्वप्रथम आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती

सामवेद

अथर्ववेद

सम्पादक—
सभा मन्त्री
सहायक सम्पादक—
श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

विषय-सूची

१. वैदिक प्रार्थना		५६
२. सम्पादकीय		५८
३ अध्यात्म सुधा		५७
४ आत्म हत्या—महापाप	(श्री प० इन्द्र विद्यावाचस्पति)	५८
५ आर्य समाज का भूत, भविष्य और वर्तमान	(श्री प० मुनिदेव उपाध्याय शास्त्री)	६३
६ आर्य समाज की महिमा		६६
७. आर्य समाज स्थापना दिवस		६८
८ यह उपेक्षा घातक है	(श्री ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी)	६६
६. महर्षि जीवन चरित्र		७१
१० स्वाध्याय का पृष्ठ		७४
११ ईसाई धर्म प्रचार निरोध आंदोलन		७७
१२. बाल-जगत्		७६
१३ महिला जगत्		८०
१४. कृतज्ञता प्रकाश	श्री रामपाल सिंह)	८१
१५ मठगुलनी अभियोग की सहायता		८५
१६. आर्य समाज के इतिहास की झलक		८३
१७. साहित्य समीक्षा		८६
१८ सूचनाएं तथा वैदिक धर्म प्रसार		८७
१९ धर्म्मार्य सभा		९३

* नव दम्पति *

(१) श्री रामपाल सिह (२) सौ० शकुन्तला प्रभाकर

जनवरी १९५६ मे हालैड की महारानी जुलियाना ने आर्य प्रतिनिधि सभा सुरीनाम डच गयाना के आर्य अनाथालय का उद्घाटन किया।
इस चित्र मे महारानी उद्घाटन के लिए जा रही है।

यह चित्र साम्राज्ञी के आगमन से कुछ मिनटों पूर्व लिया गया था। इसमें अनाथालय भवन का प्रवेश

* ओ३म् *

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३१ } अप्रैल १९५६, चैत्र २०१२ वि०, दयानन्दाब्द १३२ { अङ्क २

वैदिक प्रार्थना

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति ।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ यजु० ३४।१॥

व्याख्यान—हे धर्म्मनिरुपद्रव परमात्मन् ! मेरा मन सदा शिवसंकल्प धर्म कल्याण सकल्पकारी ही आपकी कृपा से हो, कभी अधर्मकारी न हो, वह मन कैसा है ? कि जागते हुए पुरुष का दूर २ आता जाता है, दूर जाने का जिसका स्वभाव ही है, अग्नि, सूर्यादि, श्रोत्रादि इन्द्रिय, इन ज्योतिप्रकाशकों का भी ज्योतिप्रकाशक है, अर्थात मन के बिना किसी पदार्थ का प्रकाश कभी नहीं होता । वह एक बड़ा चचल वेगवाला मन आपकी कृपा से स्थिर, शुद्ध, धर्मात्मा, विद्यायुक्त हो सकता है "दैवम्" देव (आत्मा का) मुख्य साधक भूत, भविष्यत् और वर्तमानकाल का ज्ञाता है, वह आपके वश में ही है । उसको आप हमारे वश में यथावत् करें जिससे हम कुकर्मों में कभी न फंसें, सदैव विद्या, धर्म्म और आपकी सेवा में ही रहें ।

सम्पादकीय

स्थापना दिवस के लिये विचार

१२-४-५६ के दिन आर्य जगत मे आर्य-समाज की ८१ वीं वर्ष गाठ मनाई जायेगी। ८१ वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द ने बम्बई में आर्य समाज की स्थापना की थी। उस समय निर्धारित नियमों मे आर्य समाज की स्थापना का यह उद्देश्य बतलाया गया था—' सब मनुष्यों के हितार्थ आर्य-समाज का होना आवश्यक है।" आर्य समाज के समासद् होने के सम्बन्ध में निम्नलिखित निर्देश दिया गया था —

"जो मनुष्य इन नियमों के अनुकूल आचरण करने वाला धर्मात्मा, सदाचारी हो उसको उत्तम समासदों में प्रविष्ट करना, इसके विपरीत को साधारण समाज में रखना और अत्यन्त प्रत्यक्ष दुष्ट को समाज से ही निकाल देना, परन्तु पक्षपात से यह कार्य नहीं करना किन्तु यह दोनों बातें श्रेष्ठ समासदों के विचार से ही की जावें अन्यथा नहीं।"

यह वाक्य बहुत ही सीधे सादे और सरल हैं। यह जितने सरल हैं उतने ही महत्व पूर्ण भी हैं। वस्तुतः यह महर्षि की हार्दिक भावनाओं के सूचक हैं। महर्षि ने आर्य समाज की स्थापना सब मनुष्यों के हितार्थ की थी। न उसमें कोई जाति का भेद था और न वर्ग का। उनकी इच्छा थी कि जिस सत्य का वह प्रचार कर रहे हैं उससे मनुष्य मात्र को लाभ हो। वह सत्य को समय अथवा देश से परिमित नहीं मानते थे। सत्य को वह कितना महत्व देते थे यह लाहौर में अन्तिम रूप से निर्धारित दश नियमों में से चौथे नियम से स्पष्ट है। चौथा नियम यह है —

"सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।"

महर्षि सत्य को सर्वोपरि स्थान देते थे। उनकी यही भावना थी कि आर्य लोग और आर्य-समाज स्वयं सत्यवादी और सत्यकर्मा बनें और अन्य सब को भी सत्यवादी और सत्यकर्मा बनायें।

आर्य समाज के स्थापना दिवस पर मनन करने के लिये आर्य जनों के सामने मैं पहला यही विचार रखता हूँ। महर्षि दयानन्द के अनुयायियों का दृष्टिकोण विशाल होना चाहिये, संकुचित नहीं। महर्षि की विचारधारा मे साम्प्रदायिकता का लेश भी नहीं था। वह उनके उस उद्योग से प्रगट होता है जो उन्होने सन् १८७७ के दिल्ली दरबार के अवसर पर किया था। उस दरबार मे देश के सब बडे २ राजा-महाराजा और लोक नेता उपस्थित थे। स्वामी जी ने उनमे से कुछ महानुभावों को अपने विश्राम स्थान पर निमन्त्रित किया। निम्नलिखित सज्जन उपस्थित हुए : (१) बाबू केशवचन्द्र सेन (२) आनरेबल सर सैयद अहमद खाँ (३) मुन्शी कन्हैयालाल अलखधारी (४) बाबू नवीनचन्द्र राय (५) बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि और (६) मुंशी इन्द्रमणि। इन नामों से स्पष्ट है कि स्वामी जी अपने क्षेत्र को केवल किसी एक सम्प्रदाय तक परिमित नहीं मानते थे। उन्होंने उपस्थित सज्जनों के सामने यह सुझाव रखा कि देश के कल्याण के लिये हम सबको मिलकर काम करना आवश्यक है। इस कारण यह आवश्यक है कि सब धार्मिक विरोधों को दूर करके एक मत होकर देश की उन्नति में लग जायें। यद्यपि यह सुझाव उस समय सर्वसम्मत न हो सका तो भी महर्षि जीवन भर उसी विशाल और ऊंचे दृष्टिकोण से प्रचार का कार्य करते रहे। उन्होंने जो कुछ लिखा संसार के लिये और मनुष्य मात्र के लिये लिखा और

जो कुछ कहा वह भी संसार तथा मनुष्य मात्र के कल्याण के लिये कहा। कभी २ हम लोग समय के प्रवाह में बह कर अपने दृष्टिकोण को परिमित कर लेते हैं और साथ ही अपने समर्थन के लिये महर्षि के वाक्यों का अर्थान्तर करने का भी दुःसाहस करते हैं। आर्य समाज के स्थापना दिवस पर हमारा पहला कर्त्तव्य यह है कि उस महान् आदर्श का जिसके सत्य और जनकल्याण ये दो मुख्य अंग हैं चिन्तन करें और उनके अनुगामी बनने का संकल्प करें।

आर्यसमाज की वर्ष गांठ के अवसर पर विशेष रूप से विचारने योग्य जो दूसरी बात है वह हमारे अपने जीवन से सम्बन्ध रखती है। आर्य सभासदों की योग्यता के सम्बन्ध में बम्बई के नियमों में जो विधान किया गया है वह प्रत्येक आर्य नरनारी के विचार करने योग्य है। उसमें आर्यसमाज के उत्तम सभासद होने के लिये नियमों के अनुकूल आचरण करना, धर्मात्मा और सदाचारी होना आवश्यक बतलाया गया है। यह तीनों आर्य के लक्षण हैं। जो नियमानुसार जीवन व्यतीत करने वाला, धर्मात्मा और सदाचारी है वही आर्य कहला सकता है, अन्य नहीं। उत्तम आर्य बनने के लिए तो इन गुणों की अत्यधिक साधना की आवश्यकता है। हम लोग अपने को आर्य कहते हैं और सारे विश्व को आर्य बनाने का दावा करते हैं। सब से पूर्व हमें यह विचार करना चाहिये कि क्या हम आर्य इस विशेषण के योग्य हैं ?

एक और प्रश्न है जिस पर हमें इस अवसर पर विचार करना चाहिये। प्रश्न यह है कि गत ८१ वर्षों के प्रयत्नों के होते हुए भी भारत में ईसाइयों का जाल इतना विस्तृत कैसे फैल गया ? जब तक अंग्रेजी राज्य था, ईसाइयों के प्रचार और विस्तार पर एक पर्दा सा पड़ा हुआ था। स्वाधीनता प्राप्त करने के पश्चात् वह पर्दा उठ गया है। अब प्रकाशित वातावरण में यह दृष्टिगोचर होने लगा है कि ईसाई-मिशन का प्रभाव भारत की नस २ में व्याप गया है। हरेक प्रदेश के पहाड़ी और देहाती इलाकों में, आज विशेष रूप से दलित जातियों में ईसाइयत ने घर कर लिया है। यदि इस वस्तु स्थिति पर गम्भीरता से विचार किया जाय तो विदित होगा कि ईसाइयत के ये दुर्ग न शहरों में व्याख्यान देने से टूट सकते हैं और न समाचार पत्रों के लेखों से। यों राष्ट्रीय दृढ़ता के दृष्टिकोण से यह भी आवश्यक प्रतीत होता है कि भारत वासियों पर से विदेशी प्रचारकों के प्रभाव को यथा सम्भव कम किया जाय। इसका यह उपाय नहीं है कि ईसाई प्रचारकों के विरुद्ध आन्दोलन करके सन्तोष कर लिया जाय, अपितु यह है कि सेवा और सहायता के जिन साधनों द्वारा ईसाई मिशनरियों ने ईसाइयत का विस्तार किया है उन्हीं उपायों से उनका उत्तर दिया जाय। यह स्पष्ट है कि इस लक्ष्य की पूर्ति करना तभी सम्भव है जब हम अपनी प्रचार नीति में कुछ परिवर्तन करें। हमें ग्रामों में और विशेषतः पिछड़े हुए प्रदेशों में वहां के निवासियों की सेवा और सहायता करने की योजना बनानी चाहिये। प्रत्येक समाज में एक सेवा विभाग स्थापित होने की आवश्यकता है। पिछड़े हुए प्रदेशों में सेवा केन्द्रों की स्थापना करना प्रतिनिधि सभाओं और सार्वदेशिक सभा का काम है।

यह कुछ सामयिक विचार हैं जिनपर स्थापना दिवस के अवसर पर आर्य नर-नारियों को मनन करना चाहिये। ऐसे पर्वों का सब से बड़ा यही उपयोग हो सकता है कि उन पर हम आत्म-निरीक्षण करें। मैंने ऐसे तीन शीर्षक सामने रखे हैं जिन पर इस समय ध्यान को केन्द्रित करना आवश्यक है। —इन्द्र विद्यावाचस्पति

राज्यों का पुनर्गठन और आर्य समाज

कई प्रदेशों से कुछ ऐसे समाचार आ रहे हैं, जिनसे प्रतीत होता है कि प्रान्तों के राजनैतिक पुनर्गठन की सम्भावना से आर्य समाज के वर्तमान संगठन में परिवर्तन करने की चेष्टायें आरम्भ हो गई हैं। बम्बई प्रान्त से जो समाचार आये हैं वह विशेष चिन्ताजनक हैं। बम्बई प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग के एक प्रस्ताव से विदित होता है कि उस प्रदेश में अभी से गुर्जरात को अलग प्रान्त मानकर नई प्रतिनिधि सभा का आन्दोलन आरम्भ हो गया है। इस प्रसंग में आर्य मात्र को सावधान कर देना आवश्यक है। अभी तक राजनैतिक पुनर्गठन का रूप ही निश्चित नहीं है। सभी कुछ विचाराधीन है। फिर यह भी आवश्यक नहीं कि आर्य समाज का संगठन सर्वथा राजनैतिक संगठन के अनुसार ही हो। उन्हें अपनी सुविधा देखनी है तो हमें अपनी सुविधा देखनी होगी। जब राजनैतिक पुनर्गठन का अन्तिम रूप निश्चित हो जायगा तब सब परिस्थितियों पर विचार करके सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा निर्णय करेगी कि आर्य समाज को पुनर्गठन करने की आवश्यकता है या नहीं और यदि है तो कहां तक और कैसी? उससे पूर्व वर्तमान संगठन की पूर्ण रूप से रक्षा करना अत्यन्त आवश्यक है। यदि कोई प्रान्त अथवा प्रान्त का भाग विधिवत् निश्चय से पूर्व ही किसी परिवर्तन की चेष्टा करेगा तो वह दोषी समझा जायगा। आशा है सब आर्य लोग और आर्य-समाजें इस निर्देश को अत्यन्त आवश्यक और महत्वपूर्ण मानकर इसका पालन करेंगे। स्मरण रखना चाहिये कि संघ-शक्ति ही आर्य समाज के जीवन का आधार है।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

आर्य समाज के इतिहास की प्रगति

प्रथम भाग

इतिहास का प्रथम भाग छप रहा है। परिशिष्टों को मिलाकर कोई ४५०-५०० पृष्ठ होंगे। दो दर्जन के लगभग विषय से सम्बन्ध रखने वाले लाइन-ब्लाक के चित्र दिये गये हैं। परिशिष्टों में महर्षि की जन्म तिथि, आर्य समाज का स्थापना दिवस, महर्षि की मृत्यु कैसे हुई? इत्यादि विवादास्पद विषयों पर विचार किया गया है। आशा है प्रथम भाग दो तीन मास में छप कर तैयार हो जायेगा।

दूसरा भाग

दूसरा भाग लिखा जा चुका है। पाण्डुलिपि की टाइप की हुई कापी सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में पहुंच चुकी है। वह इतिहास-समिति के सदस्यों को सम्मति के लिये भेजी जा रही है। पहला भाग छप कर पूरा होने पर दूसरे भाग की छपाई आरम्भ हो जायेगी। उसमें भी चित्र रहेंगे और आवश्यक विषयों पर विचारात्मक परिशिष्ट भी रहेंगे। उसकी पृष्ठ संख्या भी पहले भाग के बराबर ही हो जायगी।

तीसरा भाग

तीसरा भाग लिखा जा रहा है। दूसरा भाग हैदराबाद के आर्य सत्याग्रह पर पूरा हो गया है। इससे आगे के वर्षों का वृतान्त तीसरे भाग का पूर्वार्द्ध होगा। उत्तरार्द्ध में आर्य समाज के सम्बन्ध में विविध प्रकार की पूरी जानकारी देने का यत्न किया जायगा। उस भाग के कुछ शीर्षक निम्नलिखित होंगे :—

(१) आर्य समाज का विस्तृत संगठन।

(२) सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं के संक्षिप्त विवरण।

(३) आर्य समाजों के प्रान्तवार संक्षिप्त विवरण।

(४) आर्य समाज के साहित्य का संक्षिप्त परिचय।

(५) आर्य समाज के प्रचारक, लेखक, कवि तथा पत्रकार-संक्षिप्त परिचय।

(६) हुतात्मा आर्य जनों का परिचय।

(७) आर्य पुरुषों तथा आर्या महिलाओं का परिचय (Whos' who)।

यह स्पष्ट है कि तीसरे भाग के उत्तरार्द्ध की पूर्ति आर्य जनों के तुरन्त और पूरे सहयोग के बिना असम्भव है। परिश्रम से क्रम-बद्ध करना और सम्पादन करना हमारा काम है, परन्तु सामग्री उपस्थित करना आर्य जनता का काम है। जिसके पास जो सामग्री है वह भेजने की कृपा करें। सब के संक्षिप्त परिचय तभी दिये जा सकेंगे यदि हमें प्राप्त होंगे। जिनके पास आर्य-समाज का साहित्य है वह उनके नमूने भेजें। जिनके पास विशिष्ट आर्य नर नारियों के चित्र या वृत्तान्त हैं वह उनके भेजने में विलम्ब न करें। मेरी इच्छा है कि तीसरा भाग आर्य समाज का विश्व कोष हो। इस इच्छा की पूर्ति ईश्वर की कृपा और आर्य जनता के पूर्ण सहयोग पर ही अवलम्बित है।

भारत की स्वाधीनता प्राप्ति में आर्य-जनों का भाग

दूसरे भाग के अन्त में उन सब आर्य समाजियों का परिचय देने का विचार है जिन्होंने भारत की स्वाधीनता की प्राप्ति में सक्रिय सहयोग दिया है। लगभग दो वर्ष से मैं बार-बार समाचार पत्रों और विज्ञप्तियों द्वारा यह प्रार्थना करता रहा हूं कि सब प्रान्तों की प्रतिनिधि सभायें तथा समाजें इस सम्बन्ध में आवश्यक ज्ञातव्य बातें मुझे लिखें। परन्तु मुझे खेद से लिखना पड़ता है कि बम्बई, सिन्ध और उत्तरप्रदेश को छोड़कर अन्य प्रदेशों से बहुत ही कम सामग्री प्राप्त हुई है। यदि यह प्रकरण अधूरा रहा तो इतिहास की शोभा कम हो जावेगी। इस विज्ञप्ति द्वारा मैं इस प्रार्थना को दोहराता हूं। जिन स्थानों से देश की स्वाधीनता के लिये सक्रिय कार्य करने वाले आर्य जनों के परिचय अभी तक न भेजे गये हों वे भेजने में जल्दी करें। यदि पूरी सामग्री के अभाव के कारण वह अंश दूसरे भाग में न जा सका तो जहां दूसरा भाग अधूरा रह जायेगा वहां तीसरा भाग सीमा से अधिक बढ़ जायेगा।

आर्य समाज के इतिहास के दूसरे भाग की विषय-सूची

खण्ड १

अध्याय

(१) गुरुकुल युग का सूत्रपात
(२) महात्मा मुन्शीराम जी
(३) गुरुकुलों की स्थापना
(४) गुरुकुलों का विकास
(५) सरकारी कोप की घटनाएं
(६) पटियाले में अग्नि परीक्षा
(७) काली घटाएं फट गईं
(८) सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना
(९) विदेशों में धर्म प्रचार
(१०) प्रचार और प्रचारक

खण्ड २

अध्याय

(१) शुद्धि
(२) जाति-पांति तथा दलितोद्धार

(३) प्रदेशों में आर्यसमाज की प्रगति
(४) ,, ,, ,, ,, , (२)
(५) ,, ,, ,, ,, ,, (३)
(६) ,, ,, ,, ,, ,, (४)
(७) ,, ,, ,, ,, ,, (५)
(८) दक्षिण अफ्रीका में आर्यसमाज का प्रचार
(६) दिल्ली में दलितोद्धार
(१०) समाज-सेवा

खण्ड ३

अध्याय
(१) धर्म-युद्ध में सहयोग
(२) मत-भेद
(३) शुद्धि और आर्य समाज
(४) साम्प्रदायिक उपद्रव और आर्य समाज
(५) दक्षिण में प्रचार
(६) श्रीमद्दयानन्द जन्म शताब्दी
(७) शताब्दी महोत्सव के सभा-सम्मेलन
(८) टकारामें ऋषि दयानन्द शताब्दी महोत्सव
(९) स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान

खण्ड ४

अध्याय
(१) बलिदान की प्रतिक्रिया
(२) सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन
(३) महाशय राजपाल जी का बलिदान
(४) बरेली में दूसरा आर्य महासम्मेलन
(५) अजमेर में दयानन्द-निर्वाण अर्द्धशताब्दी
(६) सार्वदेशिक सभा का विस्तार
(७) महात्मा नारायण स्वामी जी
(८) प्रान्तों में कार्य-विकास
(६) संयुक्त प्रदेश
(१०) आर्य-प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा
(११) राजपूताना
(१२) बम्बई
(१३) दक्षिण हैदराबाद
(१४) विविध प्रदेशों में आर्य समाज
(१५) आर्यसमाजकी संस्थाओं का सिंहावलोकन

खण्ड ५

अध्याय
(१) हैदराबाद के शासक और उनकी नीति
(२) प्रजा में जागृति
(३) संघर्ष का सूत्रपात
(४) सत्याग्रह की घोषणा
(५) आर्य सत्याग्रह का प्रारम्भ
(६) आर्य सत्याग्रह का प्रगति
(७) निज़ाम सरकार की कला बाजियाँ
(८) राष्ट्रीय भारत की सहानुभूति
(६) मुसलमानों के विरोध का रहस्य
(१०) जेलों में अत्याचार
(११) आठवें सर्वाधिकारी—श्री विनायक राव विद्यालङ्कार
(१२) सत्याग्रह की सफल समाप्ति
(१३) बधाइयां और स्वागत
(१४) हैदराबाद के आर्य शहीद
(१५) स्वाधीनता प्राप्ति मे आर्यसमाजका भाग

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियां ❀

हमारे नवयुवक

रायपुर के समाचार के अनुसार वहा की कन्या पाठशालाओं की छात्राओं ने छात्रों की बढ़ती हुई उद्दण्डता और एक अध्यापिका को राज मार्ग में पीटने के विरोध में हड़ताल की और सार्वजनिक सभायें करके उनके दुष्कृत्यों का प्रस्तावों द्वारा घोर प्रतिवाद किया। यह घटना नई नहीं है। जिन नवयुवकों से नारी सम्मान की आशा की जाती है उन्हीं के द्वारा उसका अप-मान हमारी शिष्ट भावना और शिक्षा पद्धति का

खेद जनक परिचायक है। इस प्रकार की घटनाओं के प्रति जन सामान्य आंखें बन्द कर सकते हैं परन्तु समाज के शुभचिंतक इनका कड़ा नोटिस लिये बिना नहीं रह सकते। कामुकता और विलासिता से परिपूर्ण अस्वस्थ वातावरण में इस प्रकार की घटनाओं का होना आश्चर्य की बात नहीं है। नवयुवकों के अभिभावकों गुरुजनों और देश के नेताओं को हृदय पर हाथ रख कर देखना चाहिये कि वे स्वयं नवयुवकों की मार्ग भ्रष्टता, उच्छृङ्खलता, और अनुशासन हीनता के लिये कहां तक जिम्मेवार हैं। यदि हमको ही इस प्रश्न का उत्तर देना हो तो हम कहेंगे कि ये तीनों ही प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष रूप में जिम्मेवार हैं।

माता पिता मोह वा अज्ञान वश घरों में बच्चों के स्वस्थ विकास के लिये उपयुक्त अवस्थाओं के उत्पन्न करने की ओर ध्यान नहीं देते और न अपने बच्चों की गति विधि पर नियन्त्रण ही रखते हैं। इस लापरवाहीका परिणाम यह होता है कि बच्चे उनके हाथों से निकल जाते हैं। घरों में होने वाली धर्मचर्चाओं. माता-पितादि के उत्तम व्यवहार और बच्चों द्वारा मातापितादि का प्रेममय भय मानने से बच्चों की गति विधि सन्तोष जनक रहती है। अध्यापकगणों के हाथ से ब का सन्मार्ग पर चलाने का अधिकार छिन गया है। वर्तमान शिक्षा पद्धति के निकृष्ट होते हुये भी यह अधिकार चिरकाल पर्यन्त उनके हाथ में रहा, जब वे बच्चों को पवित्र धरोहर मान कर उनकी उन्नति में अपनी उन्नति मानते थे और बच्चों के अभिभावक और बच्चे उन्हें आदर की दृष्टि से देखते थे। उनका नैतिक आतङ्क बच्चों के दिलों पर रहता था। बच्चों के हृदयों से उनका भय निकल जाने और उनके प्रति आदर भावना के दुर्बल हो जाने से भी उनकी पथ भ्रष्टता में वृद्धि हुई है। यह ठीक है कि बाहर के गन्दे वातावरण ने और शारीरिक दण्ड के लगभग उठ जाने से अध्यापकों की कठिनाइयां बढ़ी हैं परन्तु उन कठिनाइयों पर उनके उदात्त जीवन विजय प्राप्त करने में अग्रसर रहे यह सहसा ही नहीं कहा जा सकता। अभिभावकों अध्यापकों और बच्चों में घनिष्ठ वैयक्तिक श्रेष्ठ सम्पर्क के स्थापित होने से ही स्थिति में सुधार सम्भव हो सकता है जबकि अभिभावक अपने बच्चों के स्कूलों में सुधार और शैक्षणिक उन्नति की ओर से निश्चिन्त रहें। अध्यापक गणों को अभिभावकों का सहयोग प्राप्त रहे तथा बच्चों के सुधार और उत्थान के लिये राज्य और अभिभावकों से उन्हें कोरा चैक प्राप्त रहे। भारत के शैक्षणिक काल में वह समय दुर्भाग्यपूर्ण था जब विद्यार्थियों को राजनैतिक संग्राम में झौंका गया। स्व० ऐनी-बिसेन्ट ने इस पग के विरुद्ध प्रबल आवाज उठाई थी परन्तु वह अरण्यरोदन सिद्ध हुई थी। हमारे नेताओं की इस अदूरदर्शिता का फल देश को अब तक भुगतना पड़ रहा है। यदि वे आज किसी राजनैतिक दल के खिलौने बन जाते हैं तो इसमें उनका दोष उतना नहीं है जितना हमारेनेताओंकी उस भूल का है। सब से बड़ा दोष उस वातावरण को बनाये रखने का है जिसमें नवयुवकों को शैतानी करने का प्रोत्साहन मिलता है। बच्चों का राजनैतिक चालोंका मुहरा बनना तभी रुक सकता है जब वातावरण शुद्ध होकर उन पर नैतिक और भौतिक नियन्त्रण रहे और उनके हृदय देश प्रेम की भावनाओं से इतने ओत प्रोत हो जायें कि राजनैतिक दलों की चालें उन पर प्रभाव न डाल सकें।

वातावरण को दूषित करने वाले सिनेमा तथा अन्यान्य मनोरंजनों पर कठोर हाथों से नियन्त्रण होना चाहिये। यदि उन्हें बन्द करना आवश्यक हो तो बन्द करने में भी आगा पीछा न करना चाहिये। धार्मिक शिक्षा ऊँचा उठाने वाले साहित्य और उच्च प्रेरणाओं के लिये भरसक प्रयत्न

होना चाहिये। इन उपायों को काम में लाने से हमारे नवयुवकों का और अन्य जनों का आभ्यन्तर रोग दूर हो जायगा जिनसे उनका मन विकृत है भले ही उनका बाह्य कलेवर साफ सुथरा और आकर्षक क्यों न हो।

हम यह नहीं कहते कि सभी छात्र वा नवयुवक गिरे हुये हैं। अनेक छात्र और नवयुवक हैं जो समाज के आभूषण हैं। उनका भी कर्तव्य है कि वे अपने साथियों वा परिचितों की समाज विरोधिनी हरकतों के प्रति उदासीन न रह कर उनका विरोध करें और सन्मार्ग पर लाने की चेष्टा करें। जो नवयुवक संघर्षमें पड़ने से किसी असमर्थता वा अशक्यता वश परहेज करें वे अपने उच्च जीवन के प्रकाश का प्रसार कर सकते हैं।

युवावस्था कुछ करने और बनने की आयु होती है। यह काल गुरुजनों को अपमानित करने मारने, पीटने, बहिनों बेटियों को छेड़ने, तङ्ग करने, देश की सम्पत्ति को नष्ट करने, कानून को हाथ में लेने, अनुशासन को चुनौती देने, भङ्ग करने आदि आदि, दानवोचित मार्ग पर पड़ने के लिये नहीं अपितु देवोचित मार्ग पर पड़ने के लिये होता है जब कि नवयुवक परिवार, समाज और देश के गौरव रक्षा की आशायें उत्पन्न करें और जिनके हाथों में नेतृत्व सुरक्षित समझा जाने लगे। जीवन के इस बसन्त काल में ही बनने और बिगड़ने के बीज का वपन होता है। यदि इस काल में अच्छा बीज न बोया गया तो बाद में अच्छी फसल की क्यों कर आशा की जा सकती है?

युवावस्था की मूर्खतायें, प्रौढ़ावस्था की बुराइयां और वृद्धावस्था का अभिशाप बना करती है। यदि नवयुवकों को अपनी प्रौढ़ावस्था को बुराइयों से रहित और बुढ़ापे को अभिशापों से मुक्त रखना अभीष्ट हो तो उन्हें युवावस्था की मूर्खताओं से अपने को पृथक् रखना चाहिये। युवावस्था में लोगों में उमङ्ग और उत्साह तो होता है परन्तु वह उत्साह अनुभव विहीन होने से हानिप्रद और दूसरे के अनुभवों से लाभ उठाने की प्रवृत्ति मय होने से लाभप्रद हुआ करता है। जीवन का उद्देश्य निश्चित करने का यही समय होता है। इस काल में नवयुवकों को तलवार की धार पर चलना होता है। इसी समय नवयुवक गण अपनी सम्मतियों को ही प्रमुखता देने लग जाते हैं। यदि वे अपनी सम्मतियों पर अधिक भरोसा न रख कर अधिकारी जनों की सम्मतियों का आदर करना सीखलें, कम बोलें, अधिक सुनें और गुण-दोषों पर विचार करने लगें तो अपना परम हित कर सकते और अपने जीवनोद्देश्य के चुनने में अधिकाधिक सफल हो सकते हैं। वह नवयुवक कितना भाग्यशाली है जिसमें बुजुर्गों जैसी दायित्व की भावना और चरित्र की श्रेष्ठता हो।

हम इस प्रसङ्ग में नवयुवतियों से भी एक शब्द कह देना आवश्यक समझते हैं। उनका रहन, सहन, बोल चाल, उठना बैठना और चलना फिरना इस प्रकार का होना चाहिये जिससे उनपर अंगुली न उठ सके। यदि वे लोगों में वासनाओं को उद्दीप्त किये बिना बाहर स्वच्छन्दता से घूम सकती हों तो घूमें अन्यथा उस घूमने के बजाय उनका घर में बन्द रहना श्रेयस्कर है। उनकी इज्जत अपने हाथ में है। यदि वे उसकी सुरक्षा के लिये सन्नद्ध रहें तो कोई पाशविक शक्ति उनके मार्ग में बाधक नहीं बन सकती। उन्हें सदैव यह बात अपने लक्ष्य में रखनी चाहिये कि वे सीता और सावित्री के देश की बालायें हैं जिनके शील के अजस्र प्रवाह में वासनाओं का कूड़ा कर्कट अनायास ही बहता रहा है और जिनके दृढ़ व्रतों को भयङ्कर से भयंकर झंझावात भी भङ्ग करने में असमर्थ रहे हैं।

इस सम्बन्ध में आर्य्य कुमारों और आर्य्य

वीरों का भी कर्त्तव्य है। परमात्मा की कृपा से उनमें अपने नवयुवक भाईयों का मार्ग प्रदर्शन करने की क्षमता है और वे इसके पात्र हैं। क्या हम आशा करें कि हमारे आर्य्य कुमार और आर्य्य वीर इस दिशा में अग्रसर होंगे?

बधाई

गत २८ फरवरी ५६ को सार्वदेशिक सभा के भूतपूर्व मन्त्री श्रीयुत कविराज हरनामदास जी की भांजी शकुन्तला कुमारी का विवाह श्रीयुत ठा० धर्मसिह जी के सुपुत्र चिरंजीव रामपाल सिह के साथ कन्या के निवास स्थान पर देहली नगर में ससमारोह सम्पन्न हो गया। श्री ठा० धर्मसिह जी जन्मना यवन थे और लगभग २५-३० वर्ष पूर्व शुद्ध होकर आर्य धर्म में प्रविष्ट हुए थे, तब से अब तक वे आर्य धर्म में दृढ़ हैं। उनकी दोनों पुत्रियां आर्य घरानों मे विवाही हैं। उनके सामने अपने पुत्र के विवाह का प्रश्न था जिससे वे चिन्तित थे क्योंकि वे, मुस्लिम समाज में किसी भी मूल्य पर वापस जाने को उद्यत न थे। हिन्दू लोग यहां तक कि आर्यजनों को भी अपनी कन्या देने का साहस न होता था। उनका पुत्र योग्य था। देखने भालने में सुन्दर और स्वस्थ था। मुस्लिमेतर और आर्येतर वर्ग में उसका विवाह सुगमता से हो सकता था परन्तु यह ठाकुर साहब को क्योंकर गवारा हो सकता था। इस प्रकार स्वयं ठाकुर साहब और आर्य समाज एक परीक्षण में पड़ गये थे। यह परीक्षण ठाकुर साहब को विचलित करने विशेषतः आर्य समाज के शुद्धि कार्य के विरोधी मुस्लिमों को उपालम्भ देने का अवसर प्रदान करने के लिए पर्याप्त था। ऐसे भीषण परीक्षण से आर्य समाज को उभारने का साहस किया तो वह उस समय के सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री ने किया। कविराज जी ने ठाकुर साहब पर कोई उपकार नहीं किया अपितु आर्य समाज के एक सदस्य के नाते अपने कर्तव्य का सुन्दरता के साथ पालन किया। उनके साहस और आर्योचित कार्य की चहुं ओर से प्रशंसा होनी ही थी और हुई भी। यह रिश्ता गत वर्ष निश्चित हो गया था और परमात्मा की कृपा से विवाह भी सम्पन्न हो गया है। हम सार्वदेशिक परिवार तथा आर्य जगत् की ओर से मंगलकामनाओं के साथ श्री ठा० साहब और श्री कविराज जी को हार्दिक बधाई देते हैं। यह विवाह वैयक्तिक नहीं अपितु सामाजिक महत्व रखता है। इसने आर्य समाज विशेषतः शुद्धि के इतिहास को उज्ज्वल किया है। निश्चय ही यह उदाहरण विरोधियों का मुंह बन्द करने के लिए पर्याप्त है जो आर्य समाज पर यह लांछन लगाकर शुद्धि के कार्य को निरुत्साहित किया करते हैं कि आर्य समाज शुद्ध हुए भाइयों को लावारिसों की स्थिति में छोड़ देता है।

इस शुभ अवसर पर ठा० धर्मसिह जी को बधाई के जो अनेक सन्देश प्राप्त हुए थे उनमें निम्नलिखित महानुभावों के सन्देश विशेष उल्लेखनीय हैं।

राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद जी, श्री देवदास गांधी (महात्मा गांधी के सुपुत्र), चौ० चरण-सिह जी मालमन्त्री उत्तरप्रदेश, बख्शी टेकचन्दजी, श्री रामगोपाल जी मोहता बीकानेर, श्री गोस्वामी गणेशदत्त जी, श्री सन्तराम जी बी० ए०, कविरत्न प्रकाशचन्दजी अजमेर, सर गोकुलचन्द जी नारंग, सेठ जुगलकिशोर जी बिड़ला और श्री लाला देवी-चन्द जी एम ए, केन्द्रीय मंत्री श्री मेहरचन्द्र खन्ना।

आर्य समाज का परिचय और उसका गुणगान

लण्डन से प्रकाशित होने वाले थियोसोफी-कल न्यूज ऐंड नोट्स नामक पत्र में श्री आई०

ऐम० पर्नेल लाइसन आफिसर ने आर्य समाज पर एक उत्तमलेख लिखा है। वह लेख अङ्गरेजी और हिन्दी में नीचे प्रस्तुत किया जाता है :

A Branch of the Arya Samaj, or World Reform Movement, which has its H. Q. in Delhi, has been formed in London at 154, Tufnell Park Road, No. 7. The movement was founded in 1875 by Swami Dayanand with ten principles.

The first two principles indicate that the Arya Samaj is first a *religious* movement; secondly, a *theistic* movement and thirdly a *montheistic* movement. The third principle shows that the Vedas are its religious scriptures, that is, that it has doctrinal connection with the old scriptures of the Aryas. Principles 4 and 5 emphasize not only a regard for truth but a regard for the *search for truth* They enjoin members to remain seekers after truth for their whole life, and whenever they find that they were hitherto entertaining untruth, they should be ready to discard it. The remaining five principles deal with the duties which a man owes to other beings in this world. Religion for an Arya Samajist is not an exclusively individual affair. We are a part of a greater whole and our place in this whole has to be determined and constantly kept in view in the performance of our religious duties. Religion, as referred to in these principles, is something that establishes an adjustment between the whole and the part. We are not isolated beings arbitrarily put together by some external agency. We are tied down by natural and inseparable relations, and our individual well-being is not at all conceivable, much less realizable, except through the well-being of others

The most sacred Scriptures of the Arya Samaj are the four Vedas, Rig Veda, Yajur Veda, Sama Veda and Atharva Veda. The founder wrote several books to elucidate the Vedas, the chief being the Satyartha prakasha (Light of Truth .

The Arya Samaj does not believe in isolated abstract spirituality, but is active in Social Service. In India it has fought for the emancipation of women, and the spread of education, and against untouchability and the caste system. Swami Dayanand considered caste to be a degenerate successor of the once pure *varna* system, and maintained that social position should not be based on birth. The Central Representative Body of all the branches, of which there are 3,000, comprising six million members in India, Burma, Africa, South America, etc., is the International Aryan League. The organization of the movement is democratic, all members having a voice in the administration. The Arya Samaj advocates a social structure based on spiritual values, pacifism, vegetarianism, and a World Government. Those agreeing with the ten Principles are welcomed as members. The annual subscription is ten shillings, but members are encouraged to contri-

bute one per cent of their income.

I. M. PURNELL, *Liaison Officer.*
Theosophical News and Notes.
(June 1955)

आर्य समाज अथवा 'विश्व सुधार आंदोलन' की एक शाखा (जिसका मुख्य स्थान देहली मे है) लंदन में १५४ टफनेल पार्क रोड नं० ७ पर खोली गई है। इस आंदोलन की स्थापना १८७५ में स्वामी दयानन्द ने १० नियमों के साथ की थी।

पहले २ नियमों से ज्ञात होता है कि आर्य समाज (१) धार्मिक आंदोलन है (२) आस्तिक समाज है और (३) एकेश्वर वादी है अर्थात् इस आंदोलन का आर्यों के प्राचीनतम शास्त्रों के साथ सैद्धान्तिक सम्बन्ध है। नियम सं० ४ और ५ न केवल सत्य पर अपितु सत्य की खोज पर भी बल देते हैं। इतना ही नहीं वे सदस्यों का यह आवश्यक कर्त्तव्य ठहराते हैं कि वे जीवन पर्यन्त सत्य के जिज्ञासु बने रहें और जब कभी उन्हे यह ज्ञात हो जाय कि वे असत्य को मानते रहे हैं तो उसका परित्याग करने के लिए भी उद्यत रहें। शेष ५ नियमोंमें उन कर्त्तव्यों का विधान है जो मनुष्य को अन्य प्राणियों के प्रति पूरे करने होते हैं। आर्य समाज के सदस्य के लिए 'धर्म्म' एक मात्र वैयक्तिक विषय नहीं होता। हम विशाल समष्टि के अङ्ग हैं और अपने धार्मिक कर्त्तव्यों का परिपालन करने से ही इस समष्टि में हमारी स्थिति का निरूपण होता है जिसे हमें सदैव दृष्टि में रखना पड़ता है। इन नियमों में उल्लिखित धर्म्म वह वस्तु है जो व्यष्टि और समष्टि में सामंजस्य उत्पन्न करके उसे स्थिर रखती है।

हम पृथक् सत्ताधारी जीव नहीं है जिन्हें किसी बाह्य एजेन्सी ने अपनी मर्जी से मनमाने ढंग से एक साथ रख दिया हो। हम स्वाभाविक और अविच्छिन्न सम्बन्धों से आपस में बंधे हुए हैं, तथा अन्यों के हित सम्पादन के माध्यम के अतिरिक्त हमारा हित अचिन्त्य है। हम दूसरों का हित करने से ही अपना हित कर सकते हैं।

आर्य समाज के पवित्रतम धर्म्म ग्रन्थ ४ वेद— ऋग्० यजु० साम० और अथर्व० हैं। आर्य समाज के संस्थापक ने वेदों की अपने अनेक ग्रन्थों में व्याख्या की है जिनमें सत्यार्थ प्रकाश मुख्य है।

समाज सेवा आर्य समाज के धर्म्म का अविभाज्य अङ्ग है और वह समाज सेवा में आगे बढ़ा हुआ है। भारत में आर्य समाज ने स्त्रियों के उद्धार, शिक्षा के प्रसार, अस्पृश्यता और जन्म गतजात के उन्मूलन के लिए बड़ा प्रशंसनीय कार्य किया है। स्वामी दयानन्द सरस्वती जात पात को विशुद्ध वर्णव्यवस्था का विकृत रूप मानते थे। उनके मतानुसार मनुष्य की सामाजिक स्थिति जन्म पर नहीं अपितु गुण पर आश्रित होनी चाहिए। भारत, ब्रह्मा, अफ्रीका, दक्षिण, अमेरिका आदि में ३००० आर्य समाजें स्थापित हैं जिनकी मुख्यतम प्रतिनिधि सभा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा (इन्टर नेशनल एर्यन लीग) है। आर्य समाज का सगठन जनतंत्रात्मक है और उसके समस्त सदस्यों का शासन में हाथ होता है।

आर्य समाज धर्म्म, शान्ति, सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य और निरामिष भोजन पर अवलम्बित समाज रचना का प्रतिपादन करता है। दस नियमों को स्वीकार करने (और उन सिद्धांतों को स्वीकार कर आचरण में लाने वाला जिनकी महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में व्याख्या की है— सम्पादक) वाला कोई भी व्यक्ति आर्य समाज मे प्रविष्ट हो सकता है। वार्षिक चन्दा सदस्यों की आय का शतांश होता है।

———

श्रीयुत मदन मोहन सेठ जी

श्रीयुत मदन मोहन जी सेठ की मृत्यु का समाचार देते हुए हृदय को बड़ी वेदना होती है। सेठ जी आर्य समाज के उस युग की देन थे जिससे वर्तमान सन्तति अमित प्रकाश प्राप्त करती है। आर्य समाज के महारथियों के निधन का जो क्रम इस समय चलता देख पड़ता है वह बड़ा दुर्भाग्य पूर्ण है। मृत्यु अवश्यम्भावी घटना है परन्तु महारथियों की मृत्यु से जो स्थान रिक्त होते जाते हैं उनकी पूर्ति होती नहीं देख पड़ रही। इसी लिये निराशा और दुःख में वृद्धि होती जाती है।

श्री सेठ जी अपने विद्यार्थी काल से ही आर्यसमाज की सक्रिय सेवा में संलग्न चले आते थे। जब मुंसिफ हुए तब आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश के उपमन्त्री और मन्त्री थे। इसके पश्चात् जब सेशन जज हुए तब भी उक्त आर्य प्रतिनिधि सभा से सम्बद्ध रहे उसके सदस्य वा अधिकारी के रूप में। वे आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश के महानतम स्तम्भों में थे। वर्षों तक उसके प्रधान भी रहे। आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश के विषय में सेठ जी के बिना और सेठ जी के विषय में उत्तरप्रदेश की सभा के बिना सोचना कठिन हो जाता था।

श्री सेठ जी वर्षों तक सार्वदेशिक सभा के सदस्य और प्रधान भी रहे। सेशन जज के पद से रिटायर होकर वे लखनऊ में रहने लगे थे तथापि अपनी जन्म भूमि बुलन्दशहर से उनका सक्रिय सम्पर्क बना रहा था। कुछ समय पर्यन्त वे पटना (उड़ीसा) तथा शाहपुरा राज्यों में दीवान तथा भरतपुर में चीफ जस्टिस रहे। पटना (उड़ीसा) अन्तर्गत बलांगिर में उनके पुरुषार्थ और प्रेरणा से न केवल आर्य समाज का प्रचार ही हुआ अपितु वहां १०१२ हजार का एक विशाल आर्य समाज मन्दिर भी बन गया। आर्य समाज की दृष्टि से अत्यन्त पिछड़े हुए उड़ीसा प्रान्त में उनका यह कार्य कभी भुलाया नहीं जा सकता।

श्री सेठ जी की सूझबूझ बड़े गजब की थी। मथुरा शताब्दी के मनाये जाने की सूझ उन्हीं के दिमाग की उपज थी।

श्री सेठ जी उन सरकारी उच्च अफसरों में थे जो ब्रिटिश काल में अंग्रेजों की कृपा वा अकृपा का खयाल किये बिना निर्भीकता पूर्वक डंके की चोट आर्य समाज का प्रचार करते और अपने को आर्य कहलाने वा समझे जाने में गौरव अनुभव करते थे। वे अपने निर्णय प्रथा के प्रतिकूल हिन्दी भाषा में ही लिखा करते थे। इससे उनके मुस्लिम वा अहिन्दी भाषा भाषी अहलकारों को कठिनाइयां होती थीं परन्तु वे इसकी पर्वाह न करते थे। उनके इस कार्य का फल यह होता था कि हिन्दी न जानने वालों को हिन्दी सीखनी पड़ जाती थी। उस समय यह छोटा काम नहीं था।

श्री सेठ जी स्वयं बड़े हंसमुख और जिन्दादिल थे। जहां बैठते वहां जीवन ज्योति प्रसारित हो जाती थी। स्वयं हंसते और दूसरों को खूब हंसाते थे परन्तु कर्तव्य और मर्यादा के पालन करने कराने में बड़े सावधान रहते थे।

वे लगभग १ वर्ष से रक्त चाप के रोग से पीड़ित थे। उनका अन्त इतने शीघ्र हो जायगा इसकी किसी को कल्पना नहीं हो सकती थी। १७ मार्च को वे हम सबसे वियुक्त हो गये।

परमात्मा से प्रार्थना है कि उनकी आत्मा को सद्गति प्रदान करें। हम उनके अवशिष्ट परिवार के प्रति इस महान् दुःख में अपनी तथा सार्वदेशिक परिवार की ओर से हार्दिक समवेदना का प्रकाश करते हैं।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

———

अध्यात्म-सुधा

प्राण की सर्वोत्कृष्टता

भार्गव वैदर्भि ने पिप्पलाद ऋषि से पूछा कि मनुष्य शरीर के धारण और प्रकाशन करने वाले कौन हैं और उनमें कौन श्रेष्ठ है ?

पिप्पलाद ने उत्तर दिया कि आकाशादि पंच भूत और मन, वाणी, चक्षु, श्रोत्रादि ज्ञान और कर्मेन्द्रियां इस शरीर को धारण और प्रकाशन करने वाले हैं। एक बार इन इन्द्रियों को अभिमान हुआ और प्रत्येक ने अभिमान से कहा कि उनमें से प्रत्येक इस शरीर को धारण कर रहा है। इस पर प्राण ने उनसे कहा कि वे अविवेक से ही ऐसा कह रहे हैं। वास्तव में शरीर को तो मैं अपने पांच भागों में विभक्त करके धारण कर रहा हूँ। प्राण की इस बात को इन्द्रियों ने स्वीकार न किया। इस पर प्राण ने अपने दावे को प्रमाणित करने के लिये शरीर से निकलना चाहा। उसके निकलने के साथ ही इन्द्रियों ने देखा कि उन्हें भी निकलना पड़ रहा है। तब उन्हें विश्वास हुआ कि प्राण के साथ ही वे शरीर में रहती हैं और प्राण के निकलने पर वे भी निष्प्राण हो जाती है। इस प्रकार का विश्वास होने पर उन्होंने प्राण को अग्नि, पर्जन्य, वायु, पृथिवी आदि कहते हुए उसकी स्तुति की। इस संवाद का भाव स्पष्ट है। इस संवाद द्वारा यह शिक्षा दी गई है कि मनुष्य को प्राण की सर्वोत्कृष्टता की रक्षा करनी चाहिये जिसके साधन ये हैं—

(१) प्राणायाम द्वारा प्राण की पुष्टि करनी चाहिये। प्राण की पुष्टि से एक ओर हृदय और फेफड़े आदि पुष्ट होते हैं तो दूसरी ओर आयु की वृद्धि होती है।

(२) जिस प्रकार अपने कार्य में प्रमाद रहित होकर प्राण तत्पर रहते हैं उसी प्रकार की तत्परता मनुष्य को अपने कर्त्तव्य कर्मों में लानी चाहिये।

(३) जिस प्रकार स्वार्थ रहित होकर प्राण निरन्तर दिन रात अपना कार्य करते हैं उसी का अनुकरण करते हुये मनुष्य को भी स्वार्थ रहित (निष्काम) होना चाहिये जिससे उसकी निष्कामता जीवन के अन्तिम ध्येय की प्राप्ति का साधन बन सके।

(४) मनुष्य जब प्राणायाम परायण हो जाता है तब प्रत्याहारादि के अभ्यासों को काम में लाते हुए आत्म-परायण बना करता है। आत्म-परायण होने पर ही उसके हृदय के पट खुलते हैं और वह हृदय मन्दिर में घुसकर अपने चिरिच्छित प्रियतम के दर्शन करके कृत्य कृत्य हो जाता है।

आत्महत्या–महापाप

(श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति)

ईशोपनिषद् की तीसरी ऋचा में आत्म हत्या रूपी महापाप का फल बतलाया गया है :—

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः ।
तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः॥

जो मनुष्य आत्मा का (अपना) वध करते है, वे मर कर उन योनियों में उत्पन्न होते हैं, जो अन्धकारमय हैं, और जिनमें आसुर भावों की प्रधानता है ।

आत्मा अमर है । मैत्रेयी को आत्मा के रूप का उपदेश देते हुए याज्ञवल्क्य मुनि ने कहा था– 'अविनाशी वाऽयमात्माऽनुच्छित्तिधर्मा' (बृहदारण्यकोपनिषद्) । यह आत्मा अमर और अच्छेद्य है ।

भगवद्गीता में आत्मा की अमरता के सम्बन्ध में कहा है—

न जायते म्रियते वा कदाचि-
न्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥

वह कभी उत्पन्न नहीं होता, और न मरता है । उसका कभी अभाव नहीं होता । वह अजन्मा, नित्य अपरिवर्तनशील और सनातन है। शरीर को मार दो, तो भी वह नहीं मरेगा ।

ऐसे अमर आत्मा के सम्बन्ध में इस मन्त्र में कहा है कि जो मनुष्य आत्मा का वध करते हैं, इसका क्या अभिप्राय है ? जब आत्मा अमर है, तो उसे कौन मार सकता है ? यहां कुछ परस्पर विरोध प्रतीत होता है । परन्तु वस्तुतः इसमें कोई परस्पर विरोध नहीं है । इस ऋचा में 'आत्महन्' शब्द का अभिप्राय है--'अपना नाश करने वाले' जो मनुष्य, जीवन में मिली हुई शारीरिक और मानसिक शक्तियों, और भलाई के अवसरों को व्यर्थ नष्ट कर देते हैं' वे आत्महन् कहलाते हैं ऐसे लोग इस जीवन में तो दुःख पाते ही हैं, मर कर दूसरे जन्म में भी अन्धकार से आवृत निम्न कोटि की योनियों में जन्म लेते हैं ।

आत्मा के अनेक रूप हैं ।

मनुष्य को नर-देह अच्छे कर्मों से मिलता है । पशु पक्षियों का देह पाकर मनुष्य किये हुए कर्मों का फल भोग करता है। सत्कर्मों द्वारा भविष्य को उज्ज्वल नहीं बना सकता । यह नर-देह जीवात्मा को प्रभु की सब से बड़ी देन है । जो इस देह को असमय में नष्ट कर देता है, वह पाप का भागी होता है ।

असमय में शरीर नष्ट होने के तीन कारण होते हैं । वे तीनों क्रमशः एक दूसरे से अधिक दोष युक्त और इसी लिये परिणाम में अधिक अन्धकार मय होते हैं ।

पहला कारण है, शरीर की उपेक्षा । कुछ लोग अज्ञान वश शरीर की उपेक्षा करते हैं । उन्हें मालूम ही नहीं कि शरीर की रक्षा करना भी धर्म है, और वे यह भी नहीं जानते कि शरीर की रक्षा कैसे की जाती है । उनमें से कुछ बिरले ऐसे भी होते हैं, जो जान-बूझ कर शरीर की उपेक्षा करते हैं । वे मानने लगते हैं कि शरीर को स्वच्छ रखना निकृष्ट कर्म है और पहुंचे हुए भक्त बनने के लिए शरीर को गन्दा या असुरक्षित रखना उत्कृष्ट कर्म है । ऐसे दोनों ही ठीक मार्ग से भटके

हुए हैं। 'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्' शरीर को स्वच्छ और स्वस्थ रखना धर्म का पहला साधन है। जो मनुष्य अज्ञान या भ्रान्त ज्ञान के कारण, शरीर की शक्तियों को उपेक्षा द्वारा नष्ट हो जाने देते हैं, वे पहली कोटि के आत्मघाती हैं।

उनसे अधिक दोष के भागी वे लोग हैं, जो दुर्वासनाओं के पीछे भाग कर शरीर का दुरुपयोग करते हैं, और दुष्ट आहार-विहार द्वारा उसे असमय में ही क्षीण कर देते हैं। मद्य, अफीम, कोकीन आदि घातक वस्तुओं के सेवन, और अत्यन्त विषय-भोग से शरीर का नाश हो जाता है। जो मनुष्य पूर्वजन्म के शुभ कर्मों से प्राप्त इस नर देह को हानिकारक खान पान और रहन सहन द्वारा नष्ट कर देते हैं, वे दूसरी कोटि के आत्मघाती हैं।

तीसरी, और सब से अधिक दूषित कोटि के आत्मघाती वे लोग हैं, जो आत्मिक निर्बलता के वशीभूत होकर, शुभ कर्म करने के साधन इस नर देह को स्वय नष्ट कर देते हैं। आत्म हत्या को महापातक कहा गया है। नीतिकार ने कहा है —

त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत् ।
ग्रामं जनपदस्यार्थे आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत् ॥

कुल के हित के लिये एक व्यक्ति को, गांव के हित के लिये कुल को और ग्राम समूह के हित के लिये एक ग्राम को छोड़ दे—परन्तु यदि आत्मा पर संकट आता हो तो सारी पृथिवी का भी त्याग कर दे। इस नीति वाक्य का यह अभिप्राय नहीं कि मनुष्य घोर स्वार्थी हो जाय। इसका अभिप्राय यह है कि यदि किसी भी कारण से मनुष्य की आत्मा दबती हो, उसकी शक्तियाँ क्षीण होती हों या उसे हृदय की भावनाओं के विरुद्ध काम करने के लिए बाधित होना पड़े तो उसे अन्य सब बन्धनों को तोड़ कर आत्म रक्षा करनी चाहिये। आत्मा को नर देह पाकर यह अवसर मिला है कि वह इस जीवन में अभ्युदय और अगले जीवन में मोक्ष प्राप्त कर सके। यदि एक ही जीवन में मोक्ष प्राप्त न कर सके, तो भी अमरपद तक पहुंचने की सीढ़ियों पर चढ़ना तो प्रारम्भ करे। ऐसे दुर्लभ अवसर को पाकर भी यदि उसने उपेक्षा अनार्य जीवन या घोर निराशा से पैदा होने वाली मानसिक निर्बलता के कारण नर देह को व्यर्थ खो दिया, या पाप कमाने का साधन बना दिया, तो उससे बड़ा आत्मघाती कौन होगा? ऐसे व्यक्ति ने परमात्मा की दी हुई अतुल विभूति को राख की तरह बखेर कर अपना वर्तमान और भविष्य दोनों बिगाड़ लिये।

जो लोग नैष्कर्म्यवाद का समर्थन करते हैं, वे वस्तुतः आत्मघात का ही समर्थन करते हैं। मनुष्य जीवन सत्कर्मों का फल है तो सत्कर्म करने का साधन भी है। जो इस जीवन में सत्कर्म करेंगे, अगला जीवन उन्हीं के अनुसार पायेंगे। यदि इस जीवन में कर्तव्य कर्म न करेंगे, तो अगला जीवन बिल्कुल शून्य और अन्धकारमय हो, इसमें सन्देह ही क्या है? सत्कर्मों का त्याग भी एक प्रकार का आत्मघात ही है।

ज्ञान और कर्म का समन्वय

क्या कर्म ही सब कुछ है, ज्ञान कुछ भी नहीं?

इस प्रश्न का उत्तर कुछ विचारक यह देते हैं कि ज्ञान ही सब कुछ है, कर्म कुछ भी नहीं। वे 'ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः' ज्ञान के बिना मोक्ष नहीं मिलता आदि शास्त्र-वाक्यों को अपना आधार बना कर, तथा कर्म की अनित्यता और ज्ञान की नित्यता का सहारा लेकर कर्म के त्याग और ज्ञान उपार्जन का प्रतिपादन करते हैं।

तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति
नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ।

इस श्रुति का अर्थ वे लोग यह करते हैं कि केवल ब्रह्म को जानना ही मोक्ष का साधन है, अन्य कर्मादि के कोई उपाय मनुष्य को मोक्ष का अधिकारी नहीं बनाते।

नैष्कर्म्यवादी लोग प्रायः उपनिषदों के कुछ वाक्यों को अपने मत की पुष्टि में पेश करते हैं।

उपनिषद् की एक ऋचा है—

प्लवाह्येते अदृढा यज्ञरूपा
अष्टादशोक्तमवरं येषु कर्म।
एतच्छ्रेयो येऽभिनन्दन्ति मूढा
जरा मृत्युन्ते पुनरेवापियान्ति ॥

मुण्डकोपनिषद्।

इस प्रकार के वाक्यों से वे लोग कर्म की निःसारता और केवल ज्ञान की सार्थकता का समर्थन करते हैं।

उनका विचार कितना निराधार है, यह उपनिषदों के अनुशीलन से सहज ही में पता लग सकता है। उपनिषदों के इन वाक्यों पर ध्यान दीजिये—

तदेतत्सत्यं मन्त्रेषु कर्माणि कवयो यान्यपश्यंस्तानि त्रेतायां बहुधा सन्ततानि। तान्याचरथ नियतं सत्यकामा एष वः पन्थाः सुकृतस्य लोके ॥

मुण्डक०।

वेदों में जिन कर्मों का विधान है, उनका त्रेतायुग में बहुत विस्तृत रूप से पालन किया जाता था। सच्चे मार्ग पर चलने की इच्छा रखने वाले मनुष्य! तुम उनका पालन करो। संसार में शुभ कर्मों का मार्ग ही तुम्हारे लिये कल्याणकारी है।

छान्दोग्योपनिषद् में बतलाया है :—
'त्रयो धर्मस्कन्धाः यज्ञोऽध्ययनन्दानमिति'—

धर्म के तीन आधार हैं—यज्ञ, अध्ययन और दान। ये तीनों कर्म हैं।

तैत्तिरीयोपनिषद् में 'ओ३म्' (परब्रह्म) के ज्ञान के लिये साधनों का जो उपदेश दिया गया है, वह कर्ममय है।

ऋतं च स्वाध्याय प्रवचने च। सत्यं च···। तपश्च···। दमश्च··· मानुषं च······। प्रजा च···। सत्यमिति सत्यवचा राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टिः। स्वाध्याय प्रवचने एवेति नाको मौद्गल्यः।

सत्यवादी राथीतर केवल सत्य को ब्रह्मप्राप्ति का मुख्य साधन बतलाता है, तपस्वी पौरुशिष्टि तप को मुख्यता देता है, और मौद्गल्य स्वाध्याय प्रवचन को। परन्तु उपनिषद्कार उन सब को ब्रह्मप्राप्ति के उपाय मानते और उनका उपदेश करते हैं। परन्तु तैत्तिरीयोपनिषद् के कर्त्ता ने सभी शुभ-कर्मों को ब्रह्मप्राप्ति के लिये आवश्यक माना है

इस प्रकार उपनिषदों के बिखरे हुए वाक्यों का आश्रय लेकर कुछ लोग ज्ञान को प्रधानता देते हैं, तो कुछ कर्म को। इस मतिभेद की उलझन को, ईशोपनिषद् की इन तीन ऋचाओं ने जड़ से ही काट दिया है—

अन्धतमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायांरताः।

जो लोग अविद्या (केवल कर्म) की उपासना करते हैं, वे अन्धकार में पड़े रहते हैं और जो केवल विद्या (केवल ज्ञान) में तल्लीन रहते हैं, वे उससे भी गहरे अन्धकार में डूब जाते हैं।

इस ऋचा का अर्थ बहुत गम्भीर है। यदि उथली दृष्टि से देखें तो मन्त्र के पद अत्युक्तिपूर्ण मालूम होते हैं, परन्तु वस्तुतः वे सर्वथा सत्य हैं।

हमने अविद्या शब्द का अर्थ कर्म किया है। इस पर यह विप्रतिपत्ति हो सकती है कि अविद्या तो विद्या के अभाव को कहते हैं, उसका अर्थ कर्म क्यों किया गया। पहली तो यह बात समझ लेनी चाहिये कि इस मन्त्र में 'अविद्या' शब्द का प्रयोग केवल विद्या के अभाव के अर्थ में सम्भव ही नहीं है। अभाव की उपासना क्या? और अभाव से मृत्यु को तरना कैसा? स्पष्ट है कि हमें अविद्या शब्द का वह अर्थ करना होगा जो जहां शब्दार्थ की दृष्टि से ठीक हो, वहाँ प्रकरण सगत भी हो। प्रकरण है कर्म का। अमृत की प्राप्ति के लिये मनुष्य जो साधन काम मे लाता है उनमे दो ही मुख्य है, एक विद्या (ज्ञान) और दूसरा विद्या से भिन्न (कर्म)। प्रकरण सगत होने के कारण यहा अविद्या शब्द से अमृत प्राप्ति के विद्या से भिन्न साधन कर्म का ही ग्रहण करना चाहिये।

उपनिषदों मे अन्य स्थलों पर भी विद्या और अविद्या शब्दों का इन्हीं अर्थों मे प्रयोग किया गया है।

विद्या अविद्या सम्बन्धी प्रथम मन्त्र मे कहा गया है कि न केवल विद्या से अमृतत्व की प्राप्ति होती है और न केवल कर्म से। दूसरा मन्त्र है -

अन्यदाहुर्विद्यया अन्यदाहुरविद्यया।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ॥

जो ज्ञानी लोग इन तत्वों को हमे बतला गये हैं उनसे हमने सुना है कि विद्या और अविद्या दोनों के पृथक् २ फल होते हैं।

वे फल क्या हैं? इस प्रश्न का उत्तर तीसरे मन्त्र मे दिया गया है।

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयथ्सह।
अविद्यया मृत्युन्तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते ॥

जो विद्या और अविद्या दोनों को जानता है वह अविद्या द्वारा मृत्यु से पार होकर विद्या से अमृतत्व को प्राप्त करता है।

मनुष्य को सुख की प्राप्ति अच्छे कर्मों से होती है, परन्तु अच्छे कर्म करना तभी सम्भव है, जब मनुष्य ज्ञान-पूर्वक करे। ज्ञान-पूर्वक शुभ कर्म करता हुआ मनुष्य इतनी उन्नति कर लेता है कि परम ज्ञान अर्थात् आत्मा और परमात्मा के ज्ञान तक पहुँच जाय। तभी वह अमृतत्व को प्राप्त कर सकता है। छान्दोग्योपनिषद् मे कहा है —

नाना तु विद्या चाविद्येति। यदेव विद्यया करोति श्रद्धयोपनिषदा, तदेव वीर्यवत्तरं भवतीति ॥

विद्या और अविद्या, ज्ञान और कर्म दोनों भिन्न २ हैं। उनमे सम्बन्ध यह है कि जो कर्म ज्ञान-पूर्वक किया जाता है वह श्रद्धा और तत्व बोध पूर्वक होने के कारण अधिक फलदायक होता है।

शास्त्रों के जिन वाक्यों मे कर्म की निष्फलता बतलाई गई प्रतीत होती है, उनका यही अभिप्राय है कि जो कर्म केवल कठपुतली बन कर अज्ञान पूर्वक किये जाते हैं, उनसे अमृतत्व की आशा रखना व्यर्थ हैं। इच्छा पूर्वक समझ बूझ कर जो शुभ कार्य किये जाते हैं वे ही उत्कृष्ट फल देने वाले होते हैं।

हमे शास्त्रों मे केवल कर्म की अपूर्णता के समान ही, केवल ज्ञान की अपूर्णता का भी वर्णन मिलता है। कठोपनिषद् में कहा है—

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो
न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्य-
स्तस्यैष आत्मा वृणुते तनूं स्वाम् ॥

यह आत्मा न उपदेशों से प्राप्त हो सकता है, और न बुद्धि और बहुत अध्ययन से। यह तो उसी को प्राप्त होता है, जिस पर इसकी कृपा होती है। उसे आत्मा ऐसे मिल जाता है जैसे आप अपने शरीर को।

नाविरतो दुश्चरितान्नाशान्तो नासमाहितः।
नाशान्तमानसो वापि प्रज्ञानेनैनमाप्नुयात् ॥

जिसने बुरे कर्मों का त्याग नहीं किया, जिसका शरीर स्वस्थ और मन शान्त और एकाग्र नहीं, वह केवल विज्ञान से आत्मा को उपलब्ध नहीं कर सकता।

इस सारे विवेचन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि न केवल ज्ञान मनुष्य को परमात्मा तक पहुंचा सकता है और न केवल कर्म। कर्म ज्ञान-पूर्वक हो, और ज्ञान सत्कर्मों पर आश्रित हो, तभी मनुष्य अपने लक्ष्य तक पहुंच सकता है। ज्ञान और कर्म के इस समन्वय को भगवत्गीता में कर्मयोग तथा योग के नाम से निर्दिष्ट किया गया है।

योगस्थः कुरु कर्माणि
संगं त्यक्त्वा धनंजय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो
भूत्वा समत्वं योग उच्यते ॥

आसक्ति को छोड़ कर सिद्धि और असिद्धि में समान बुद्धि रख कर कर्म करने का नाम योग है। हे धनञ्जय। तुम योगस्थ होकर कर्म करो।

योगः कर्मसु कौशलम्।

ज्ञान पूर्वक कर्म करना ही योग है।

मुण्डकोपनिषद् में इसी अर्थ को दूसरे प्रकार से कहा है :—

तदेतत्सत्यं मन्त्रेषु कर्माणि कवयो यान्यपश्यं-
स्तानि त्रेतायां बहुधा सन्ततानि।
तान्याचरथ नियतं सत्यकामा
एष वः पन्थाः सुकृतस्य लोके ॥

वेदों के अनुसार ऋषियो ने जिन कर्तव्य कर्मों को जाना और जिनका उपदेश दिया, और जिन कर्मों का पूर्वकाल के लोग पालन करते रहे हैं, हे सत्य के अभिलाषियो। तुम अपने आचरण उन्हीं के अनुसार बनाओ। ससार मे सत्कर्मी बनने का यही मार्ग है।

[संवत् २०१३ में श्रद्धानन्द स्मारक निधि के सदस्यों को स्वाध्याय मंजरी में भेंट की जाने वाली पुस्तक का अंश]।

———

चुने हुए मोती

आ देवानामपि पन्थामगन्यः (ऋ० १०।२।३)

प्रभो ऐसी कृपा कर कि हम तेरे प्यारों के मार्ग का अनुसरण कर सकें।

विश्वायुर्धेहि यजथायदेव (ऋ० १०।१।१)

हे भगवन्! ऐसी कृपा करो जिससे हमारा सारा जीवन यज्ञमय हो। भले मनुष्यों की संगति करें, भले कर्म करें।

भद्रं कर्णेभिः शृणुयामदेवाः (यजु० २५ २१)

हम उत्तम भावों वाले होते हुए कानों से भला सुनें।

भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्रा (यजु० २५।२१)

यज्ञ भावना से भरपूर होते हुए आंखों से भला देखें। (श्रुति सूक्ति शती)

आर्यसमाज का भूत, भविष्य एवं वर्तमान

[ले०—श्री पं० मुनिदेव उपाध्याय, शास्त्री, काव्यतीर्थ, संस्कृताध्यापक
संस्कृत विद्यालय, धार]

"आर्य्य" शब्द जो कि सृष्टि के आदि से ही प्रचलित है. तथा जिसका मार्मिक अर्थ अतीव उच्च है, उसके समाज की स्थापना जगद्गुरु, महर्षि स्वामी दयानन्द ने अत्यन्त उदार "कृण्वन्तो विश्वमार्य्यम्" की भावना से ओत-प्रोत होकर की थी, जो कि आज विश्व के कोने-कोने में व्याप्त है, प्रसरित है, गुंजित है, तथा पतित पावकमया पावन है।

आर्य्य, एव समाज, इन दोनों का विग्रह करने पर 'श्रेष्ठ समाज, के अर्थ की ही प्रतीती होती है। अत. श्रेष्ठों का समुदाय आर्य्य समाज, था, है। स्वामी दयानन्द के काल में आर्य्य समाज का जो प्रचार हुआ, वह तो इतना अद्भुत एव अद्वितीय है कि उसने विश्व में एक नयी ज्योति फैलादी, तथा महाभारत के अनन्तर प्रसरित अज्ञानान्धकार को अपनी ऊषःकालीन पूत किरणों से सहसा ही पराभूत, तिरस्कृत, एवं विनष्ट किया, पाखण्ड की उत्तुङ्ग चोटियां आर्य्य समाज के नियमों की पताका रूपी वायु से इतनी शीघ्र चंचलित होकर अन्तराल को प्राप्त होगी, इसमे शङ्का ही थी. किन्तु आर्य्य समाज ने तो न केवल पाखण्ड की चट्टानों को ही खण्ड-खण्ड में खण्डित कर रसातल को पहुंचाया, अपितु उसने तो 'सत्य शील एवं, वेद की ऋचाओं के धूम से सम्पूर्ण भारतवर्ष में एक नया रूप, नयी ज्योति, नया कार्य्य स्थापित किया, जो कि सामने है, आर्य्य समाज ने क्या किया है अधुनापर्य्यन्त, यह दिग्दर्शित करवाना उतना ही कठिन है, जितना कि शरीर के बालों को गिनना, और आकाश के जगमगाते सितारों की गिनती का खेल रचना। आर्य्य समाज की स्थापना का उद्देश्य तो यह था कि **मानवमात्र की उन्नति, प्राणिमात्र का अभ्युदय हो, उत्थान हो, और वह विकासोन्मुख संसार का मार्ग हो, फिर उसमें जातीयता, व प्रान्तीयता की भावनाओं एवं संकुचित दृष्टिकोण का प्रश्न ही नहीं है।**

ऋषि दयानन्द ने आर्य्य समाज के १० नियमों में जो भावनाएं उदात्त रूप में प्रकटित की है, वे सम्पूर्ण विश्व के लिये है। जैसे उदाहरणार्थ संक्षेप में—(१) सत्य विद्या, एव पदार्थ विद्या का आदि मूल परमेश्वर को माना है। (२) ईश्वर के अनन्त विशेषण, एव गुण प्रदर्शित करते हुए, सृष्टिकर्त्ता मानकर उसकी उपासना बतलाई है। (३) वेद ही सब विद्याओं का मूल है। (४) सत्य को ही ग्रहण करना चाहिये, असत्य को नहीं। (५) सब कर्मों की व्यवस्था धर्मानुसार होनी चाहिये। (६ संसार का उपकार करना आर्य्य समाज का मुख्य उद्देश्य है। (७) सब से प्रीति पूर्वक, व्यवहार। (८) अविद्या का नाश एव विद्या की वृद्धि (९) प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये, किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये। (१०) सब मनुष्यों को सामाजिक, सर्व हितकारी नियम पालनेमें परतंत्ररहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियमभें सब स्वतंत्र रहे। इन १० नियमों की नींव पर ही आर्य्य समाज की वेदी का भवन निर्माण

किया गया है। इन दस नियमों की व्याख्या एवं विश्लेषण न करके यहां तो केवल आर्य्य समाज के ६ठे नियम पर दृष्टिपात करना है—संसार का उपकार करना आर्य्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है। वास्तव में इसी आधार शिला को लेकर आर्य्य समाज चला है।

आर्य्य समाज के सिद्धांत अपने आप में सब पूर्ण है। संसार के उपकार की भावना को लेकर आर्य्य समाज जो चला, उसमें समय एवं परिस्थिति के अनुसार अत्यन्त सफल हुआ है।

ऋषि दयानन्द के पथ प्रदर्शनानुसार आर्य्य समाज ने सभी कार्यों का प्रसार किया। जैसे कतिपय उदाहरण : भिन्न २ मत मतान्तरों, देवी देवताओं को मनवाकर अन्धकार फैलाकर, उपद्रव रचा था, वेदशास्त्रों के अनर्गल अर्थ किए थे, साम्प्रदायिक भावना, धर्म के इन ठेकेदारों ने जिस तरह फैलाई थी, वर्णाश्रम के रूप को विकृत कर जातीय साम्प्रदायिकता का विष फैलाया था. बौद्ध, जैन, शैवों, के मत मतांतरों का जिस रूप में विनाश किया था 'आर्य्य संस्कृति के मूल तत्व वेदों के अध्ययन के लिये - शङ्कराचार्य जी के वाक्य जैसे थे कि शूद्रों के कर्णों में सीसा भर दो, जिह्वा काट दो, इत्यादि, के कार्यों पर आर्य्य समाज ने महान् विजयशील विध्वंसात्मक कार्य किया हैं। इस भूमण्डल की विशृङ्खलित आर्य्य जाति जब जर्जरित हो रही थी तब अनेकेश्वरवाद के अंधकार को मिटाकर एक ईश्वर की स्थापना का कार्य अत्यन्त आवश्यक था, इसकी ज्योति आर्य्य समाज ने ही फैलाई है। आर्य्य समाज ने 'गोरक्षा, हरिजनोद्धार' वेद, संस्कृत भाषा एवं हिन्दी की उन्नति के लिये प्रसार किया है, वह वास्तव में कम सराहनीय नहीं है। फिर आज जन २ के मानस गुह्वर में यह प्रश्न क्यों आंदोलित हो रहा है कि अब आर्य्य समाज का भविष्य क्या होगा? अब आर्य्य समाज की ज्योति कैसे टिकी रहेगी, अब आर्य्य समाज का लक्ष्य क्या होगा, और अब आर्य्य कौन एवम् कैसे होंगे।

मैंने अधुना पर्य्यंत आर्य्य समाज के लिये जो कुछ भी यत्किंचित्मात्र सोचा है, विचारा है, उससे यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि जैसे आर्य्य समाज का विगत अच्छा रहा है, वैसे ही आर्य्य समाज का भविष्य स्वर्णिम एवमुज्ज्वल है।

आर्य्य समाज के भविष्य के लिये क्या सोचा जा रहा है? भविष्य को सम्हालने के लिये हमें किन साधनों, किन प्रयत्नों, एवम् किन आवश्यकताओं की अभिलाषा है, जो बीत गया उस पर विचार नहीं करना है, हमें करना क्या है, और किस प्रकार हम आर्य्यत्व 'कृण्वन्तो विश्वमार्य्यम्' को सार्थक कर सकेंगे इस पर हमें विचार करना है। आर्य्य समाज के सब कार्यों को शासन ने अपने हाथ में ले लिया है, ऐसा अनेक प्रश्न कर बैठते हैं।

ठीक है, आओ मित्रो हम आज इसी प्रश्न पर विचार करें। शासन ने हरिजन समस्या, आर्थिक समस्या, साम्प्रदायिकता एवमन्य सभी मुख्य २ कार्यों को अपने आधीन ले लिया है, और देश में अनेक सुधार भी हो रहे हैं, तब भी क्या आर्य्य समाज की आज नितान्त आवश्यकता नहीं है। यह बात नहीं है।

आज आप विश्व की ओर झांकिये, दृष्टिपात कीजिये भोगवाद की जड़ें, मानसिक विषमताओं के महल, एक दूसरे के रक्त की प्यास सब एक दूसरे से जूझ रहे हैं, और भौतिकता तथा विज्ञान की चरमसीमा, एक दूसरे को नष्ट भ्रष्ट, करके अपना आधिपत्य जमाना चाहती है, इतस्ततः एटम, और हाईड्रोजन की गैसें, विश्व को

बजर करना चाहती है, तो क्या यह सब होकर ही रहेगा, विज्ञान के ताण्डव नृत्य पर जहां एक दूसरे विश्व के प्रत्येक क्षण परस्पर मिलते जुलते खेलते हैं, वहां पर क्या मानव २ को अब नहीं समझ पायेगा, एक दूसरे की मौत पर क्या मानवता जरा भी नहीं तरसेगी। विश्व का सर्वनाश क्या देखते ही देखते होगा, और महाभारत के बाद के पाखण्डों के मैल को आर्य्य समाज ने जो अपने सिद्धांतों की गङ्गा से प्रक्षालित किया है, वह क्या यहीं अवरूद्ध होगा।

आज जब कि—समस्त पश्चिम, और वहां की सस्कृति, अन्धकार, अत्याचार, एवं पतन की पराकाष्ठा पर विराजमान है, अभिभूत है, तब क्या आर्य्य समाज सोया ही रहेगा, और ऋषि का स्वप्न स्वप्न ही रहेगा, क्या होगा ?

यूरोप की मानसिक दासता, यूरोप की आधुनिकता यूरोप की वैषम्यता क्या सब की सब भारत की सभ्यता और वैदिक सस्कृति को निगल जाना चाहती है ? पश्चिम में इन दिनों आत्म हत्या की—जो लहर चल पड़ी है वह क्या चिन्तनीय नहीं है, इस समस्या का परिवर्तन यदि हो सकता है तो वह केवल वैदिक सिद्धांतों के परिपालन, एव प्राचारिक दृष्टिकोण से, ही केवल इस वैषम्यमयी आत्म हत्या की प्रवृत्ति रोकी जा सकती है।

आज सर्वत्र अशान्ति के काले बादलों पर शान्ति की आवश्यकता है। आज उदधि के ज्वार को शांत एवं सम्मानित करने की नितान्तावश्यकता है। इसी लिये आर्य्य समाज की आज विश्व को सब से बड़ी आवश्यकता है।

भारत और भारतीय सस्कृति के सिद्धांतों की आधार शिला वेद है, और वेद चिल्ला-चिल्ला कर कहता है "मा गृधा कस्य सिद्धनम्" किसी के धन को मत लो, मत इच्छा करो, चोरी मत करो, किन्तु आज तो राष्ट्र की राष्ट्र एक दूसरे का ग्रास करना चाहते हैं, पाशविकता बढ रही है, और यदि इस लहर, इस समस्या, की कोई पूर्ति कर सकता है, तो वह केवल आर्य्य-समाज है।

अभी हम स्वतन्त्र अवश्य हुए हैं, किन्तु मानसिक दासता से स्वतन्त्र नहीं हुए, हमारे क्षण क्षण गुलाम मनोवृत्ति के प्रतीक हैं, हममें जो कुछ है वह पश्चिम की सस्कृति के लिए ? कितना कटु सत्य है कि स्वय आर्य्य समाज की स्थापना ऋषि दयानन्द ने सम्प्रदाय, मठ, शठता के तोड़ने के लिये की थी, रूढिवाद को समूलत नष्ट करना आर्य्य समाज का उद्देश्य था, फिर स्वयं आज आर्य्य समाज ही क्यों रूढ़िवाद के पजे से सित है ? आज स्वयं आर्य्य समाज ही क्यों संकुचित बनता जा रहा है, आर्य्य समाज स्वयं ही क्यों संस्थावाद के फेर में है ? आर्य्य समाजी संस्थावादी बनते जा रहे हैं, यह सब क्यों ? आर्यसमाज के सिद्धांतों की जड़ वेद पर आधारित है, और फिर क्यों आज आर्य्य समाजी वेदों से दूर भाग रहे हैं, कितने आर्य्य समाजियों ने अपनी सन्तानों को संस्कृत का अध्ययन करवा कर आर्य्य समाज के सिद्धान्तों की ओर प्रेरित किया है ? उत्तर में क्या है आर्य्य समाजियों के पास ?

मै यह देख कर रोता हूँ, मैं तो क्या आर्य्य समाज की वेदी को जिन्होंने अपना समस्त जीवन समर्पित किया है, ऐसे श्री मा० आत्माराम जी, आर्य्यरत्न स्वामी श्रद्धानन्द जी, स्वामी दर्शनानन्द जी, एव प० गणपति शर्म्मा जी, भी आर्य्य समाज

आर्य समाज की महिमा

विशिष्ट जनों की सम्मतियां

आर्य समाज एक त्याग प्रधान आन्दोलन है अपने आदर्श के लिये यह आन्दोलन भारत के प्राचीन काल को देखता है। इसका मुख्योद्देश्य यह है कि बीच की शताब्दियों में जो घास उग आई है और अच्छे बीज को उगने नहीं देती उसे साफ कर दिया जाय।

युरोपीय पुनरुत्थान के समय लूथर और एरस्मस ने भी इसी प्रकार का निश्चय किया था। उन्होंने पुनरुत्थान को सुधार में परिवर्तित किया। महर्षि दयानन्द ने भी भारतवर्ष में ऐसा ही किया। उनका मूर्ति पूजा का निषेध, जन्म की जात-पांत का विरोध, अनार्ष साहित्य का खंडन इन सब ने आर्य समाज को त्याग प्रधान और सुधारक समाज बना दिया है।

मेरी अपनी इच्छा है कि आर्य समाज इस प्रकार घास को साफ करता रहे और उसे अपने भीतर उगी हुई घास की भी उपेक्षा न करनी चाहिये। इस शती में उसी प्रकार सत्य की खोज करनी चाहिये जिस प्रकार महर्षि ने १९वीं शती में की थी। आर्य समाज को समाज सुधार के कार्य के साथ २ आध्यात्मिक विषय पर अत्यधिक बल देना चाहिये।

(स्व० दीनबन्धु ऐन्ड्रूज)

(२)

आर्य समाज ने समाज सुधार की दिशा में जो प्रशसनीय और व्यापक कार्य किया है इसमें सन्देह नहीं किया जा सकता। जहां आर्य समाज के सस्थापक की मृत्यु के बाद उस काम के भाग पर बहुत बल दिया गया और शिक्षा तथा दुष्काल

की वर्तमान दशा पर अभ्युपात करते हुए यह कहते थे कि—आर्य्य समाज का यह रूप जो वर्तमान में है यदि यही रहा तो आर्य्य समाज का पनपना कठिन है, और भी महानुभाव समयानुसार इसी सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते रहे हैं।

अब आर्य्य समाज के सिद्धांतों के अनुसार हमें 'मनसा वाचा कर्मणा'। चल कर अपना सुधार करना होगा। आभ्यन्तर एव बाह्य सुधार दोनों को ही अपनाना होगा। अन्यथा एक दिन जैसे कि सब धर्म्मों पर कुठाराघात पहुंचा है, वैसी गति को कहीं हम न पहुंच जाते? आर्य्य समाज का भविष्य, आर्य्यों के नैमित्तिक जीवन, चारित्रिक शुद्धता, धार्मिकता, एवं पवित्रता पर निर्भर है। आर्य्यों के श्रम एव प्रयत्न से ही आर्य्य समाज की शिथिलता को सशक्तता उपलब्ध होगी। आर्य्यों के कर्मों पर ही कृण्वन्तो विश्वमार्य्यम् का निनाद होगा, इस लिये आर्य मित्रों, उठो, जागृत हो जाओ, और फिर से आर्य समाज के भविष्य के सम्बन्ध में यह सोच लो कि—आर्य्य समाज के भविष्य का प्रश्न, वैसा ही गम्भीर है, जैसा कि प्रारम्भ मे था, इसलिये अपनी सम्पूर्ण शक्तियों के साथ एक बार, पुनः विश्व को बतलादो कि आर्य्य समाज कभी थका नहीं है, रुका नहीं है और अब जो कार्य करेगा, उससे सम्पूर्ण विश्व आर्यवैदिक संस्कृति की शरण में नत मस्तक होकर आयेगा और आर्य्य समाज अपने प्रकाश पुञ्ज से सर्वत्र दीप्तिमान रहेगा।

———

सम्बन्धी उन्नत उपायों से काम के इस भाग को परिवर्द्धित किया गया वहां आर्य समाज का विशुद्ध धार्मिक कार्य पीछे जा पड़ा।

आर्य समाज के राजनैतिक अग को जो इस की राष्ट्रीय भावना में केन्द्रित है लाला लाजपत राय जी द्वारा बहुत प्रोत्साहन मिला (१८६५ १९२८) इस दृष्टि से मैं आर्य समाज को इस रूप में पेश कर सकता हूं कि यह एक धार्मिक शक्ति है जो समाज सुधार के लिये कार्य कर रही है और जो आज भी भारत के राष्ट्रीय जीवन का एक महान् और शक्तिपूर्ण अङ्ग है। यह ऐसी सस्था है जिसके भविष्य का सुगमता से पता नहीं चल सकता।

प्रो० ऐच० सी० ई० पी० ऐच० डी०
कथोलिक विश्वविद्यालय, लिली
(फ्रांस)

आर्यसमाज १९ वीं शती का महानतम धार्मिक आन्दोलन है।

ब्लन्ट १९११ की
जनगणना रिपोर्ट

आर्यसमाज वर्तमान हिन्दू विचारधारा का अत्यन्त महत्वपूर्ण और मनोरंजक अध्याय है।

सर हेनरी काटन
(न्यू इडिया पुस्तक)

आर्यसमाज शिक्षित हिन्दुओं के सम्मुख सुनिश्चित सिद्धान्त प्रस्तुत करता है जिनका मूल स्रोत प्राचीन भारतीय ग्रन्थ और परम्पराए हैं तथा सामाजिक एव शैक्षणिक उन्नति की ऐसी योजनाएं प्रस्तुत करता है जिनके बिना वास्तविक उन्नति संभव नहीं है।

सर हर्बर्ट रिस्ले

मैं एक ऐस' अग्नि देखता हूं जो सर्वव्यापक है वह अप्रमेय प्रेम की अग्नि है जो सर्व विद्वेष को भस्मसात करने के लिये प्रज्वलित हो रही है और सर्व वस्तु जात को पवित्र बनाने के लिये पिघला रही है। इस अनन्त अग्निको जो निश्चय रूप से ससार भर के राज्यों, साम्राज्यों और शासन सम्बन्धी दोषों को पिंघला देगी देख कर मैं अतीव प्रसन्न हू, और जाज्वल्यमान उत्साह के साथ जीवन धारण करता हूं। सनातन आर्य धर्म को उसकी आद्य पवित्र अवस्था को प्राप्त करने के लिये आर्य समाज नामक अग्निकुंड मे इस अग्नि का आधान हुआ था और यह भारत में ईश्वर के प्रकाश प्राप्त पुत्र दयानन्द सरस्वती के हृदय में प्रादुर्भूत और प्रज्वलित हुई थी।

(डा० ऐन्डयू जेक्सन डेविस)

आर्य समाज आन्दोलन के साथ मेरी पूर्ण सहानुभूति है।

(मैक्समूलर)

संगठित कार्य, दृढ़ता, उत्साह और समन्व्यात्मकता की दृष्टि से आर्य समाज की समता कोई समाज नहीं कर सकता।

(श्री सुभाष बाबू)

आर्य समाज धम शक्ति के रूप में समाज सुधार के लिये कार्य कर रहा है और भारत के राष्ट्रीय जीवन में यह बात अत्यन्त महत्व की है जिसे भविष्य में भी भुलाया न जा सकेगा।

(रामानन्द चटर्जी)

जहां आर्य समाज एक वास्तविकता है वहां जन साधारण का आश्चर्य जनक उत्थान हुआ है। (यदुनाथ सरकार)

आर्य समाज मेरी माता है।

(लाजपत राय)

जहां २ आर्य समाज है वहां २ जीवन और ज्योति है। (महात्मा गांधी)

आर्य समाज ने लड़कों और लड़कियों की शिक्षा, स्त्रियों की दशा के सुधार और दलित वर्गों को ऊंचा उठाने की दिशा में बड़ा अच्छा कार्य किया है।

(जवाहरलाल नेहरू)

आर्यसमाज स्थापना दिवस को धूम से मनाइये
आर्यसमाजों के नाम सभा का परिपत्र

सेवा में,

श्रीयुत मन्त्री जी,

आर्य समाज.....................

श्रीमन्नमस्ते।

आर्य समाज स्थापना दिवस का कार्यक्रम संलग्न परिपत्र में अंकित है। आर्य जनता के लिये यह दिन परम महत्त्व का है। यह एक महान पर्व है। इसे समारोहपूर्वक मनाना और सभा की वेदप्रचार निधि की अपील को सार्थक बनाना प्रत्येक आर्य समाज का कर्त्तव्य है। सार्वदेशिक सभा की स्थिर आय के लिये प्रांतीय सभाओं के परामर्श से यही दिन नियत किया गया है। सभा की अपील का उत्साहवर्द्धक उत्तर देना सभा के हाथ दृढ़ करना और उत्साह वर्द्धक उत्तर न देना सभा के वेद प्रचार, ईसाई मिशनरी निरोध आदि कार्यों में एक रूप से असहयोग करना है और यह बात किसी आर्य समाज वा आर्य नर नारी को वांछनीय न होगी। बहुत उत्साहपूर्वक अधिक से अधिक धन संग्रह करें और धन एकत्र होते ही सभा के कार्यालय में भिजवा देना चाहिये, किसी दशा में भी रोका न जाना चाहिए। छोटी से छोटी समाज से भी यह राशि यथासम्भव कम से कम १०१) अवश्य प्राप्त होनी चाहिये; क्योंकि ईसाईयों के ऊधम के विरुद्ध प्रचार आदि प्रयत्नों में विशेषतः बहुत रुपया व्यय हो रहा है और होना है।

कृपया निम्नाङ्कित चिट को भरकर और पृथक् करके शीघ्र से शीघ्र सभा कार्यालय में भेज दीजिये।

भवदीय

कालीचरन आर्य

सभा मन्त्री

सेवा में,

श्री मन्त्री जी,

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

नमस्ते।

आर्य समाज.......................................में आर्य समाज स्थापना दिवस बड़े समारोहपूर्वक मनाया गया।.......................रुपये की धन राशि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की वेद प्रचार निधि के लिये एकत्र हुई, जो मनीआर्डर/चैक द्वारा भेजी जाती है।

चैक या मनीआर्डर का नम्बर.......................दिनांक.......................

डाकघर या बैंक का नाम.......................जिला.......................

मन्त्री-आर्य समाज.......................

यह उपेक्षा घातक है

(श्री ओ३म्प्रकाश जी पुरुषार्थी)

कांग्रेस के गत अमृतसर अधिवेशन में स्वीकृत प्रस्तावों को पढ़ने व मनन करने के पश्चात् हर्ष व खेद दोनों ही होने स्वाभाविक हैं। हर्ष तो इस बात का कि देश में फैली आर्थिक विषमता, बेकारी, निर्धनता आदि के निवारणार्थ बहुत कुछ सोचा विचारा गया है और प्रस्तावों के रूप में देशवासियों को आश्वासन भी दिया गया है। शेष अधिकांश प्रस्ताव घुमा फिरा कर विदेश नीति से ही सम्बन्धित थे।

परन्तु खेद एवं आश्चर्य इस बात का रहा कि देश की भूतपूर्व दासता के मूल कारण तथा वर्तमान समय देश की उन्नति में बाधक एवं राष्ट्रीय वातावरण को विषाक्त बनाने वाले जातिवाद, प्रान्तवाद, छूत-छात, रूढ़िवाद, संकीर्ण साम्प्रदायिकता तथा छात्र-छात्राओं में बढ़ रही अनुशासन हीनता तथा चरित्र हीनता आदि दोषों के बारे में सर्वथा उपेक्षा की गई। यह उपेक्षा ऐसी अवस्था में और भी अधिक अखरी कि जब अधिवेशन में भाग लेनेवाले सीमा कमीशनके सरकारी निर्णयपर बम्बई, उड़ीसा आदि स्थानों की गुण्डागर्दी को देख या सुन चुके थे।

रंगमंच पर आने वाले लगभग सभी वक्ताओं ने गला फाड़ २ कर लगभग इन सभी दोषों की ओर संकेत अवश्य किया, परन्तु न जाने क्यों विषय निर्धारिणी समिति में प्रस्ताव बनाते समय या समस्याओं का समाधान ढूंढते समय उनकी वाणी क्यों मौन साध गई इसके दो ही अर्थ हो सकते हैं—पहिला यह कि उनको इनके समाधान के लिये योजना या प्रस्ताव बनाने की आवश्यकता ही अनुभव नहीं हुई और उनकी दृष्टि में रंगमंच पर की गई उनकी घोषणायें यथेष्ट थीं। इसका कारण यह हो सकता है कि वह इन समस्याओं की गम्भीरता को तो समझते थे, परन्तु उनके मस्तिष्क में इनका कोई समाधान था ही नहीं।

इन कारणों में से कोई भी कारण क्यों न रहा हो, परन्तु परिणाम यही रहा कि राष्ट्र के कर्णधारों ने इन समस्याओं की अपेक्षा बड़े २ उद्योगों, नदियों के बांधों, कल कारखानो, चीन, कोरिया, बगदाद सन्धि, सीटो आदि समस्याओं को ही महत्वपूर्ण समझा।

मेरी दृष्टि में यह उपेक्षा घातक ही नहीं अपितु राष्ट्र-विघातक सिद्ध होगी। मैं यह इस लिये कह रहा हूं कि यह उपेक्षा कांग्रेस की नहीं अपितु वास्तव में कांग्रेस सरकार की है। कांग्रेस और सरकार की नीति एक ही है। अतः मैं चेतावनी स्वरूप अपने राष्ट्र-निर्माताओं को बतलाना चाहता हूं कि भारत में विदेशियों के आक्रमण के पूर्व यहां रोटी-कपड़े का लेश-मात्र भी अभाव नहीं था। यदि रोटी-कपड़ा ही इस देश की महानतम समस्यायें हैं तो फिर उस समय मुट्ठी भर विदेशियों के द्वारा हम क्यों पददलित कर दिये गये?

यह बात ध्रुव सत्य है कि विदेशियों द्वारा हमारे पादाक्रान्त होने का कारण हमारी निर्धनता न हो कर हमारी सामाजिक कुरीतियाँ थीं। आज भी बारूद की भांति ये कुरीतियां हमारे देश के प्रत्येक कोने में किसी न किसी रूप में फैली हुई हैं। यदि इनकी ओर ध्यान न दिया गया तो इनके ऊपर बनाया गया हमारा यह समस्त

आर्थिक ढाँचा अर्थात् यह कल-कारखाने सदैव अस्थिर और अरक्षित रहेंगे, और जिस किसी दिन भी इस बारूद के ढेर को किसी स्वार्थान्ध राजनैतिक नेता ने इसमें चिनगारी लगा दी तो यह समस्त ढांचा भस्मीभूत हो जायगा।

यह बारूदी संकट कितना भयंकर है इसका स्पष्ट प्रमाण हमारे सन्मुख अभी आ चुका है कि जब प्रान्तों की सीमाओं को लेकर यहां बड़े २ वह देश भक्त जो कांग्रेस के महामन्त्री रह चुके हैं और जिन्होंने वर्षों महात्मा गांधी जी के साथ जेलों में यातनायें सहन की हैं। प्रान्तीय भक्ति से बहक गए। जब शंकरराव देव, माननीय श्री चिन्तामणि देशमुख जैसे व्यक्ति भी इस लहर में बह सकते हैं तो फिर साधारण व्यक्तियों की अवस्था का तो कहना ही क्या है।

इसलिये मैं अपने राष्ट्र-विधाताओं से करबद्ध प्रार्थना करता हूं कि वह इन सामाजिक कुरीतियों की उपेक्षा न कर दृढ़ता के साथ इनका समाधान करें और इनके आगे झुकने की नीति का सर्वथा परित्याग कर दें। इनका समाधान भाषणों से नहीं अपितु क्रियात्मक रूप में ही होना आवश्यक है, और इन्हें दासता का ही एक अङ्ग समझ कर दूर करना चाहिये अन्यथा हमारी स्वतन्त्रता इनके रहते कदापि पूर्ण नहीं कही जा सकती है।

इनका समाधान निम्न उपायों द्वारा होना ही सम्भव है :—

१—राष्ट्र में एक संस्कृति, एक भाषा तथा एक विचार की शीघ्र से शीघ्र स्थापना, प्रचार व प्रसार होना चाहिये।

२—शिक्षा व्यवस्था में गुरुकुल प्रणाली को अपनाया जाय और चरित्र-निर्माण को प्रधानता दी जाय। अर्थात् मनुष्य निर्माण को शिक्षा का मुख्य लक्ष्य बनाया जाये।

३—राष्ट्र के कर्णधारों कांग्रेस व अन्य संस्थाओं के सक्रिय सदस्यों को जाति पांति तोड़ कर अपने बच्चों के विवाह करने चाहियें। ऐसे ही व्यक्तियों को सार्वजनिक तथा सरकारी क्षेत्र में प्रधानता दी जाय अर्थात् अन्य योग्यताओं के साथ इसे भी एक योग्यता समझा जाय।

४—देश का विभाजन भाषा के आधार पर न होकर शासन की दृष्टि से हो और कम से कम इकाइयों में हो। इन इकाइयों को राज्यों की संज्ञा न देकर इन्हें प्रान्त ही पुकारना चाहिये।

आर्य जाति के इतिहास का सही स्वरूप उपस्थित किया जाय जिसमें से यह अंश सर्वदा के लिये समाप्त कर देना चाहिये कि आर्य लोग बाहर से भारत में आये और यहां के आदिवासियों को मार कर जगलों में और दक्षिण को भगा दिया।

६—सरकार वास्तव में सेक्यूलर बने अर्थात बिना किसी का लिहाज किये उसे समस्त अच्छी और सर्वहितकारी बातों को तुरन्त अपनाना चाहिये चाहे वह वेद, कुरान, बाइबिल कहीं भी क्यों न हो। किसी भी समुदाय के प्रसन्न और अप्रसन्न होने का उसे अपने इस कर्तव्य पालन में कदापि ध्यान नहीं देना चाहिये।

आशा है कांग्रेस और कांग्रेस सरकार मेरे इन सुझावों पर ध्यान देगी।

मणि माला

—उपेक्षा आत्मा का जक होता है।

—जिम्मेवार लोगों की उपेक्षा अपराध होता है।

—उत्तम से उत्तम उपेक्षित भूमि में भी शीघ्र ही घास उग आती है।

—आत्म प्रेम उतना भयकर पाप नहीं होता जितनी आत्म उपेक्षा।

* महर्षि जीवन चरित्र *

शंका समाधान

नाच गाने मे नीद क्यों नही आती ?

प्रश्न

लाहौर में एक भक्त ने स्वामी जी से पूछा 'भगवन्! इसका क्या कारण है कि जहा नाच होता है, राग रङ्ग होता है, हास विलास होता है वहा तो सारी सारी रात बैठे बीत जाती है और नींद नहीं आती परन्तु जहा सत्सङ्ग हो, धर्मोपदेश हो वहाँ लोग थोड़ी देर मे ही ऊँघने लगते हैं ?"

स्वामी जी ने कहा 'ईश कथा तो एक सुकोमल शय्या है। यदि उस पर नींद न आए तो और कहा आए ? नृत्य गीतादि उत्तेजक भाव आत्मा के लिए काटों का बिछौना है। उस पर निद्रा कैसे आ सकती है ?'

(२)

ईश्वर एक देशी है अथवा सर्वव्यापक ?

प्रश्न

कृपाराम नामक एक महाशय ने पूछा 'ईश्वर एक देशी है या सर्व व्यापक ?' 'महाराज ने कहा परमात्मा सर्वव्यापक है।' कृपाराम ने अपनी जेब से घड़ी निकाल कर मेज पर रखदी और कहा, 'यदि ईश्वर सर्व व्यापक है तो बताइए इस घड़ी मे कहा बैठा है ?' महाराज ने कहा 'परमात्मा आकाश की भाति परम सूक्ष्म और सर्व व्यापक है। इस लिए चर्म चक्षुओं से अगोचर है' फिर अपना लोटा उठाकर कहा, 'आकाश सर्व व्यापक है इस लोटे के भीतर और बाहर रमा हुआ है। जैसे इस लोटे मे आकाश तो दीखता नहीं इसी प्रकार आपकी घड़ी मे ईश्वर है परन्तु परम सूक्ष्म होने से इन्द्रियों द्वारा ग्रहण नहीं हो सकता।'

(३)

प्रारब्ध और पुरुषार्थ

एक सिक्ख साधु ने शङ्का की कि पुरुषार्थ की कोई आवश्यकता नहीं है प्रारब्ध ही बड़ा है। महाराज ने कहा 'प्रारब्ध और पुरुषार्थ दोनों ही ठीक है। प्रारब्ध पूर्व के भोग का नाम है। इस जन्म में जो शास्त्रीय कर्म किए जाते हैं वह पुरुषार्थ हैं। पुरुषार्थ अवश्य करना चाहिए।"वह साधु महाराज की बात न मानता था और यही कहे चले जाता था कि पुरुषार्थ की कोई आवश्य कता नहीं जो होना होता है वह अपने आप होता रहता है स्वामी जी ने सेवक को आदेश दिया 'इस महाराज की लोई उतारकर सड़क पर फेक दो। देखें पुरुषार्थ के बिना यह इसके पास कैसे आ जाती है ?" जब सेवक उससे लोई लेने लगा तो वह साधु लोई से इतना लिपट गया कि सेवक उसे बल लगा कर भी न उतार सका। फिर उस साधु ने स्वामी जी से कहा 'आपने पुरुषार्थवाद को सिद्ध कर दिया।'

(४)

ज्ञानी और अज्ञानी

कुछ व्यक्तियों ने परस्पर मे विचार किया कि स्वामी जी तो सब का मुख बन्द कर देते हैं उनसे ऐसा प्रश्न करो जिससे एक बार तो उनको नीचा देखना पड़े। सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि उनसे यह प्रश्न किया जाय कि आप ज्ञानी है या

अज्ञानी। यदि वे कहें कि मैं ज्ञानी हूं तो उनको कहा जाय कि महापुरुष अहङ्कार नहीं किया करते और यदि वे अपने को अज्ञानी कहें तो उन्हें कहा जाय कि जब आप स्वयं अज्ञानी हैं तो हमें क्या समझाये गे।

अगले दिन जब यह प्रश्न स्वामी जी से किया गया तो उन्होंने तत्काल उत्तर दिया."मै कई विषय में ज्ञानी हूं और कईयों में अज्ञानी। वेद शास्त्रादि विषयों में पूर्ण ज्ञानी हूं और फारसी, अरबी और अङ्गरेजी आदि विषयों को मैं नहीं जानता इसलिए उनमें अज्ञानी हूं।" यह उत्तर पाकर प्रश्न कर्त्ता लोग हक्के बक्के रह गए और एक दूसरे का मुह ताकने लगे।

(५)

क्या परोपकार ढकोसला है ?

एक दिन दो उच्च राज कर्मचारियों ने स्वामी जी से कहा, "स्वामीजी आप खंडन क्यों करते हो। इसमें क्या धरा है? इससे लोग बहुत भड़क उठते हैं। हम तो जिस कर्म में अपने को लाभ है उसी को अच्छा समझते हैं। पर हित चिन्तन और परोपकार व्यर्थ का ढकोसला है।"

स्वामी जी ने कहा, "यदि अपना भला करना ही उद्देश्य हो तो मनुष्यता क्या हुई? अपने भले का भाव तो गधों में भी पाया जाता है। पशु मात्र अपने लिए जीता है। परोपकार और पर हित साधन का नाम ही तो मनुष्यत्व है।"

(६)

सर्व धर्म्मान् परित्यज्य

आगरा में एक दिन कैलाश स्वामीजी से किसी भक्त ने पूछा, महाराज! गीता के सर्व धर्म्मान् परित्यज्य' इस पद का अर्थ समझाइए। कैलाश स्वामी जी ने जो अर्थ किया उससे लोगों को सन्तोष न हुआ। उनमें से एक जन ने वही निवेदन स्वामी दयानन्द जी से जा किया। स्वामी जी ने कहा कि इस पद में जो समास है उसमें अकार लोप हुआ है इसलिए 'सर्व अधर्म्मों' को छोड़कर' अर्थ करना चाहिए। यह सुनकर लोग परम सन्तुष्ट हुए।

(७)

मांस भक्षण में क्या हानि है ?

मुल्तान में एक दिन स्वामी जी ने मांस भक्षण को वेद विरुद्ध बताया। इस पर म० कृष्ण नारायण ने कहा, 'इसके खाने में कोई हानि तो नहीं है।' स्वामीजी ने कहा, "परमात्मा की आज्ञा का पालन न करना यही एक बड़ी हानि है।"

तब कृष्ण नारायण ने कहा, 'मैं मांस खाता हूं। यदि इससे कोई हानि होती तो मैं अनुभव करता,' 'स्वामी जी ने उत्तर दिया,' आज्ञाएँ दो प्रकार की होती हैं—एक शरीर के साथ सम्बन्ध रखने वाली और दूसरी आत्मा के साथ। शरीर के साथ सम्बन्ध रखने वाली आज्ञा की भंग करने से रोग शोक आदि दुःख होते हैं। आत्मा से सम्बन्ध रखने वाली आज्ञा के उल्लघन से शारीरिक दुःख तो नहीं होते परन्तु आत्मा उच्च पद को प्राप्त नहीं होता। मांस खाना आत्मा से सम्बन्ध रखने वाली परमात्म—आज्ञा का भंग करना है इस लिए मांस खाने वाले को योग विद्या नहीं आती, उसे योग की सिद्धियां भी नहीं होतीं।"

(८)

क्या मुसलमान भी आर्य बन सकता है ?

मेरठ में उमीद खां और पीर जी इब्राहीम ने स्वामी जी से पूछा, "महाराज! हमने सुना है कि आप मुसलमानों को भी आर्य बना सकते हैं? यह क्योंकर? महाराज ने उत्तर दिया," आर्य्य

सन्मार्ग पर चलने वाले श्रेष्ठ मनुष्य को कहते हैं सो यदि आप धर्म्माचरण ग्रहण करलें तो आप भी आर्य बन जायंगे।"

तब उन दोनों ने पूछा, "हमारे आर्य बन जाने पर क्या आप हमारे साथ मिलकर भोजन करेंगे?" स्वामी जी ने उत्तर दिया, "हमारे धर्म में केवल किसी का जूठा न खाना वर्जित है। सह भोजन में तो कुछ भी दोष नहीं है।"

वे बोले, "जूठा खाने से परस्पर प्रेम बढ़ता है।" इस पर महाराज ने कहा, "इस प्रकार प्रीति बढ़ती हो तो कुत्ते भी तो इकट्ठे खाते है परन्तु खाते-खाते ही एक दूसरे को काटने नोचने लग जाते हैं।"

(९)

मुल्तान में एक दिन स्वामी जी ने स्वास्थ्य रक्षा पर एक उपयुक्त भाषण दिया। उसकी समाप्ति पर एक पारसी सेठ ने उनसे कहा कि "जब आप यह कहते हैं कि मनुष्य मात्र एक हैं तो हमारे साथ मिल कर आप खाना क्यों नहीं खाते?" स्वामीजी ने उत्तर दिया, "मुसलमानादि केसाथ आप खान पान का व्यवहार करते हैं। नहीं तो दूसरी कोई रुकावट नहीं। यदि आप आर्य लोगों से अधिक मेल जोल करने लग जायं तो कालांतर में यह रुकावट हटाई जा सकती है।"

एक थाल में भोजन पाने का जब प्रसङ्ग चला तो सेठ ने कहा कि "इससे प्रेम बढ़ता है।" स्वामी जी ने कहा, "कि यदि इकट्ठे होकर खाने से प्रेम बढ़ता हो तो मुसलमान मिल कर खाते हैं उनमें झगड़ा बखेड़ा न होना चाहिए। जब रूस ने तुर्कों पर आक्रमण किया था तो इकट्ठे मिल कर खाने वाले अफगानों ने, माँगने पर भी तुर्कों को सहाहता न दी थी। मिल कर खाने से कई संक्रामक रोग लग जाते हैं। चिकित्सा शास्त्र के अनुसार भी एक दूसरे का जूठा खाना हानि कारक है।

(१०)

क्या मादक वस्तुओं के सेवन से ध्यान में सहायता मिलती है?

कन्हैयालाल नामक एक इंजीनियर रुड़की में रहते थे। उन्होंने स्वामी जी से कहा, 'मादक वस्तुओं के सेवन से ध्यान अत्युत्तम लगता है। चित्त इधर उधर भटकना छोड़ देता है।' स्वामीजी ने उत्तर दिया, "यह तो ठीक है कि मादक वस्तु से मत्त मनुष्य का मन एक ही विचार में गड़ जाता है, परन्तु इससे वस्तु के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान नहीं होता। यथार्थ ज्ञान तो एक दूसरे के साथ गुणों की तुलना करने से होता है। गुण गुणी का ज्ञान और सत्यासत्य का विवेक मादक वस्तुओं के प्रभाव में होना असम्भव है।"

(११)

जीवात्मा ब्रह्म नहीं है

रुड़की में मोटूसिंह नाम का एक वेदान्ती सज्जन स्वामी जी के पास आकर कहने लगा, 'आप परा विद्या नहीं जानते। यदि आपको परा विद्या आती होती तो आप द्वैतवाद का प्रचार कभी न करते।' उस समय उसने अनेक उपनिषद् वाक्य बोल कर बताया कि यह जीवात्मा ही ब्रह्म है।

महाराज ने पूछा, 'क्या आप भी ब्रह्म हैं?' मोटूसिंह ने उत्तर दिया, 'निस्सन्देह मैं ब्रह्म हूं।' फिर स्वामी जी ने पूछा, 'इस चराचर सृष्टि को किसने रचा है?' मोटूसिंह ने कहा, 'ब्रह्म ने।'

तब स्वामी जी ने पास ही मरी पड़ी मक्खी को उठाकर मोटूसिंह के आगे धरा और कहा, 'यदि आप ईश्वर हैं तो इसमें जीवन डाल दीजिये जिससे आपके ईश्वरत्व का पूरा परिचय मिल जाय।' इसका मोटूसिंह के पास कोई उत्तर न था।

स्वाध्याय का पृष्ठ

हवन धूम

एक बार स्वामी रामतीर्थ जी ने कहा था कि भारत में अनेक शिल्पालय और अनाथाश्रम खुलने चाहिये और जो धन हवन धूम में व्यर्थ जाता है उसको बचाना चाहिये। इतना ही नहीं उन्होंने विज्ञान की दृष्टि से यह भी दर्शाने की चेष्टा की थी कि हवन यज्ञ करने से जो धुआं उत्पन्न होता है उसमें कारबन डाक्साइड Carhon Dioxide अधिक होता है इसलिए हवन का करना आरोग्यता की दृष्टि से अच्छा नहीं।

कपूर, जटामांसी, सरसों. केसर, गुग्गल. काशमीरी धूप. अगर, चन्दन, लोबान आदि हवन सामग्री के ये पदार्थ सुगन्धित और दुष्ट वायु नाशक हैं Sweet scented Disinfectant। बडे २ वैज्ञानिकों ने इस बात की पुष्टि की है। मद्रास प्रान्त के सरकारी सेनेटरी कमिश्नर डा० कीङ्ग एम० डी० महोदय का नाम देना पर्याप्त होगा जो घृत केसर युक्त हवन से विद्यार्थियों को प्लेग को दूर भगाने का आदेश देते रहते थे।

सुश्रुत नामी प्रसिद्ध ग्रन्थ में वैद्य ऋषि लिखते हैं 'घृत' परम विष नाशक है।

भारत में प्राय: सांप के काटे हुए को केवल घृत पिला पिला कर अच्छा कर लेते हैं। विषनाशक घी विषनाशक सामग्री के साथ जलने पर संक्रामक रोग नहीं होते। The Buobanic Plague by Dr. Haffkin नामक एक पुस्तक पायोनियर प्रेस इलाहाबाद (अब यह पत्र लखनऊ से निकलता है) से प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तक में प्लेग का इंजेक्शन निकालने वाले डा० हेफकीन लिखते हैं कि "मैंने नई बात यह ज्ञात की है कि Clarified Butter जिसे भारत मे घी (Ghee) कहते हैं भारी विष नाशक है।" अत: घी का जलाना डा० हेफकीन तथा डा० कीङ्ग के मत से भी रोग की निवृत्ति के लिये परमावश्यक है। हमारे वैदिक ऋषियों ने इंजेक्शन से भी बढ़ कर जो विधि औषध प्रयोगी निकाली थी वह हवन धूम है। जिस कमरे मे दैनिक चार वा आठ आहुति का घृत युक्त हवन होता है उसमे मच्छरों से आवृत होने पर भी पांच व्यक्ति बिना मसहरी के आराम से सो सकते हैं। अग्निहोत्र का नियम से सेवन करने वाले को जीवन भर किसी इंजेक्शन की आवश्यकता नहीं हो सकती।

(स्व० मास्टर आत्माराम जी अमृतसरी के प्रवचन से)

सफलता का रहस्य

उत्क्रामात: पुरुष माव पत्था। अथर्व० ८।१।४।

अर्थात् हे पुरुष! यहां से ऊपर चढ़, नीचे मत गिर। फिर एक दूसरी जगह कहा गया है

उत्यानं ते पुरुष नावयानम्॥ अथर्व० ८।१।६

अर्थात् हे पुरुष! तेरी उन्नति की ओर प्रगति हो। अवनति की ओर गति न हो। इसी प्रकार की बात अमेरिका के प्रसिद्ध लेखक मार्डन ने भी एक जगह कही है:—

The Law of the Soul is eternal endeavour. That bears the man on

ward and upward for ever.

अर्थात् आत्मा के लिये नियम यह है कि वह नित्य पुरुषार्थ करे जिससे वह सदैव आगे बढ़ता और ऊपर चढ़ता है।

प्रेंटिस मुल फोर्ड ने कहा है जो व्यक्ति संसार में सफलता प्राप्त किया करते हैं उनके मस्तिष्कों में पहले से जिन्दा रहने, पुरुषार्थ करने, विचारने और उस विचार को काम में लाने का साहस विद्यमान रहा करता है अन्यथा वे सफलता प्राप्त नहीं कर सकते थे। इमरसन ने भी एक स्थान पर इसी प्रकार की बात कही है :

We go forth austere dedicated believing in the iron links of destiny, and will not turn on our heels to save our lives

अर्थात् हमें अपने उद्देश्य की ओर इतनी तत्परता से चलना चाहिये कि मरने जीने का विचार भी हमारे पास न आ सके।

—(महात्मा नारायण स्वामी जी की डायरी)

दक्षिण दिशा में पैर करके सोने की हानियां

सोने में दक्षिण को पांव न करना चाहिये क्योंकि मनुष्य के भेजे मे एक शक्ति है जिसको अंग्रेजी में 'मैगनेट' तथा अरबी में 'कुव्वत जाजवा' कहते हैं। उसशक्तिका धड़कने वाला भाग अधिकतर मनुष्य की चोटी की ओर होता है। जब उसका सिर उत्तर की ओर होता है तब उसकी गति नियुक्त संख्या से बढ़ जाती है। देखो ध्रुव यन्त्र को (जिसको अंग्रेजी में 'कम्पास' और उर्दू में कुतुबनुमा कहते हैं) लोहे में इस शक्ति का अधिक भाग होता है अतः वह सुई जो कुतुबनुमा में लगाई जाती है सदा हिला करती है और इसका एक सिरा उत्तर की ओर रहता है क्योंकि इस शक्ति का यही स्वभाव है। बस जब कि मनुष्य दक्षिण की ओर पांव करके सोवेगा और देह गति का कम्प भेजे में न पहुचेगा और भेजा स्थिर होगा तो वह शक्ति मैगनेट) जो भेजे में है अपना जोर करेगी और धड़कने लगेगी और समस्त रात्रि नियुक्त संख्या में जो दूसरी ओर रहने से कम धड़कती है अधिकतर धड़केगी, जिससे कुछ न कुछ हानि भेजे में होगी। यदि कोई मनुष्य सदा दक्षिण की ओर पैर करके सोये और उसके भेजे का मैगनेट उत्तर की ओर रहे तो निःसन्देह एक वर्षमे उसका भेजा डामाडोल हो जायगा वा शिर में दर्द व्याप जायगा और सन्देह नहीं कि कुछ समय पश्चात् पागल हो जाय। —(नारायणी शिक्षा)

प्रतिमा

'प्रतिमीयते यया सा प्रतिमा' अर्थात प्रतिमानम जिससे प्रमाण अर्थात परिमाण किया जाय उसको प्रतिमा कहते हैं जैसे छटांक, आध पाव, पाव सेर, सेर पसेरी इत्यादिक और यज्ञ के चमसादिक पात्र क्योंकि इनसे पदार्थों के परिमाण किये जाते हैं। इससे इन्हीं का नाम है प्रतिमा। यही अर्थ मनु भगवान् ने मनुस्मृति में लिखा है :—

तुला मानं प्रतिमानं सर्वं च स्यात् सुलक्षितम्।
षट्सु षट्सु च मासेषु पुनरेव परीक्षयेत्॥

एक पक्ष में वा मास २ में अथवा छटवें २ मास तुला की राजा परीक्षा करे क्योंकि तराजू की दण्डी में भीतर छिद्र करके उसमें पारा डाल देते हैं। जब कोई पदार्थ को तोल के लेने लगते हैं डंडी को पीछे नमा देते हैं। फिर पलड़ा पीछे आने से चीज अधिक आती है और जब देने के समय में डंडी आगे नमा देते हैं उससे चीज थोड़ी आती है। इससे तुला की परीक्षा अवश्य करनी चाहिये तथा प्रतिमान अर्थात प्रतिमा की भी परीक्षा अवश्य राजा करे" जिससे कि न्यून प्रतिमा अर्थात् दूकान के बाट जितने हैं उन्हीं का ही नाम है प्रतिमा। इसी वास्ते प्रतिमा के भेद

(क) अर्थात घाट बाद तौलने वाले के ऊपर दंड लिखा है।

(स्वामी जी का पत्र व्यवहार
पृ० १२,१३) सं० २० २का संस्करण

कीट-पतंगो ने विज्ञान को हराया

कीट-पतंगों का विनाश करनेकेलिये वैज्ञानिकों ने कई रासायनिक मसाले बनाये हैं। इनमें 'डी० डी० टी०' मसाला बड़ा शक्तिशाली माना जाता है। कहा जाता है कि "इसकी गन्ध से ही कीट-पतंग मर जाते हैं।" आजकल इसकी बड़ी मांग है। एक बड़ी मात्रा में विदेशों से यह भारत में लाया जाता है। इसे तैयार करने के लिये अपने यहां भी कुछ कारखाने खुल गये हैं, पर साथ ही अब यह पता लगा है कि "इस संहारक मसाले से भी बच निकलने की शक्ति कीट-पतंगों में आ गई है।" गत पहली तारीख को 'विश्व स्वास्थ्य-संघ' की कार्य-परिषद् की बैठक हुई, उसमें उस संघ के प्रधान सचालक डाक्टर कैंडाऊ ने बतलाया कि 'मलेरिया फैलाने वाले मच्छर, पित्तज्वर फैलाने वाले चौल्हड़, प्लेग पहुंचानेवाली मक्खियां, खटमल आदि ने अब ऐसी शक्ति उत्पन्न करली है कि जिन पर डी० डी० टी० का प्रभाव नहीं पड़ता।"

टिड्डी मारने के लिये अपने यहां सरकारी विभाग खुले हैं, जिन पर करोड़ों रुपया खर्च होता है। इस सम्बन्ध में कड़े कानून बनाये गये हैं। यदि टिड्डी मारने में अधिकारियों को सहयोग प्रदान करने से कोई इन्कार करता है तो उसे दण्ड दिया जा सकता है। पर यह प्रयत्न भी विफल सिद्ध हो रहा है। 'संयुक्त राष्ट्र खाद्य तथा कृषि-संगठन' गत ८ वर्षों से टिड्डियों के विनाश के लिये यह प्रयत्न कर रहा है। पर इसे विफलता का ही सामना करना पड़ रहा है। १९५८ में अफ्रीका तथा पश्चिमी एशिया के मरुस्थलों से टिड्डियों की एक बाढ़ ने भारत से लेकर अफ्रीका के अतलान्तक तट तक लगभग ७०८० मील के क्षेत्र में ऊधम मचा दिया। इस पर विजय पाने के लिये १४ राष्ट्रों ने अपनी शक्ति लगाई। हाल ही में उस सस्था की एक बैठक रोम में हुई थी। उसमें बतलाया गया कि 'लाख प्रयत्न करने पर भी अब तक उस टिड्डी दल पर विजय प्राप्त नहीं हो सकी।' गत वर्ष इस पर लगभग १ करोड़ रुपया खर्च किया। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि अब तक कितनी धनराशि इस विनाश कार्य में लग चुकी। अरब की मरुभूमि में टिड्डियों के अड्डे हैं। खोजने पर भी उनका पता नहीं लग पाता। अतिप्राचीन काल से अरब इनका शिकार बना हुआ है। वहीं से इनके दल निकल कर पूर्व और पश्चिम की ओर धावा बोलते हैं। जहां उन्होंने डेरा डाल दिया, वहीं हरे भरे खेत, वृक्ष नष्ट हो गये। 'पुरानी बाइबिल' मे जो ईसा से कई सौ वर्ष पूर्व की मानी जाती है, टिड्डियों के विनाश कृत्यका कई जगह वर्णन आया है। टिड्डी कहीं एक जगह अधिक समय तक टिकती नहीं। उसमें विचरने की प्रवृत्ति है। इसी लिये दूर २ तक उसका धावा होता रहता है। इनका विनाश कैसे किया जाय इस पर विभिन्न देशों में बड़े २ वैज्ञानिक अनुसन्धान कर रहे हैं। इस बार ११ राष्ट्रों ने, जिनमें भारत भी है, टिड्डियों के विरुद्ध युद्ध करने के लिये अरब को कई प्रकार की सहायता देने का वचन दिया है। पर क्या इसमें सफलता होगी?

आधुनिक विज्ञान को प्रकृति के विजय पर बड़ा गर्व है। पर प्रकृति दिखला रही है कि उसके छोटे २ कीट पतंग भी यह गर्व किस तरह चूर-चूर कर सकते हैं। इन संहारक मसालों के प्रयोग का एक और कुप्रभाव देखा गया। गत वर्ष डाक्टर कैंडाऊ ने इस ओर भी ध्यान आकृष्ट किया था। उनका कहना है कि 'इनके प्रयोग से ऐसे कीट-

* ईसाई धर्म प्रचार निरोध आन्दोलन *

सम्वाद

[लेखक—एक सम्वाद प्रेमी]

ईसाई पादरी – आखिर विश्वास (ईमान) मे ही तुम्हारा बचाव है । यदि मृत्यु के समय तुम्हारा अविश्वास ठीक निकला तो उससे तुम्हारा कोई लाभ न होगा । यदि तुम गलती पर साबित हुए तो हमेशा के लिए जहन्नम में ढकेले जाओगे ।

अविश्वासी—हरगिज नहीं । यदि मैं सचाई पर हूँगा तो मृत्यु के पीछे वह सचाई दूसरों के साहस को बढायेगी और तुम्हारे मिथ्या विश्वासों के जाल को तोडेगी ।

ईसाई पादरी– परन्तु सम्भव यही है कि तुम गलती पर हो, ओह ! बचाव इसी मे है कि तुम ईमान लाओ, विश्वास करो ।

अविश्वासी—ईमान किस पर ?

पादरी—ईसाई मत पर ।

अविश्वासी—किसी और मत पर क्य नहीं ?

पादरी—ईसा द्वारा ही सच्चा और नया मत प्रकट हुआ है ।

अविश्वासी—करोडों इन्सान ईसा पर विश्वास नहीं रखते । मुसलमान, बौद्ध हिन्दू पारसी तथा अनेक दूसरे मत वालों का जिन्होंने कभी ईसा का नाम भी न सुना होगा, क्या बनेगा ?

पादरी—सच्चा मत तो ईसा का ही है, उसी का स्वीकार करने से मुक्ति मिलेगी ।

अविश्वासी—कौनसा ईसा ? क्या वह जिसे रोमन कथोलिक मानते हैं ? या प्रोटेस्टेंट ?

पादरी—वह ईसा जिसका वर्णन नए अहद नामे मे है ।

पतग भी मर जाते हैं, जिनका उपज की रक्षा के लिये रहना आवश्यक है ।' जहर छिडकने से वायु दूषित होता है । उसका प्रभाव मनुष्य पर भी पड सकता है । प्रकृति की सृष्टि और सहार दोनों साथ २ चलते रहते हैं । उनमे सन्तुलन बना रहना बहुत आवश्यक है । वह किस तरह रह सकता है, इसे प्रकृति ही समझ सकती है, सीमित बुद्धि वाला मनुष्य नहीं । प्रकृति द्वारा सन्तुलन का प्रयत्न प्रत्येक क्षेत्र में देख पड़ता है । जब किसी जीव की सख्या आवश्यकता से अधिक बढ़ जाती है, तब न जाने कैसे उसमें कोई रोग उत्पन्न हो जाता है, जो उनका बहुत कुछ विनाश कर देता है । विज्ञान यह सन्तुलन बिगाड रहा है । इसका परिणाम कभी अच्छा नहीं हो सकता । डाक्टर कैण्डाऊने स्पष्ट शब्दोंमें इसके लिये वैज्ञानिकों को चेतावनी दी है ।

आजकल केवल सहार होता है । वैसा ही फल भी सामने आ रहा है । वैज्ञानिक जैसे २ सहार के उपाय ढू ढते जायेंगे, प्रकृति भी उन्हें हराने का मार्ग निकालती जायगी । उस पर क्या मनुष्य की विजय कभी सम्भव है ?

—(सिद्धान्त)

अविश्वासी—परन्तु नए अहदनामे में ता ईसा के साथ और होली घोस्ट पाक आत्मा तीनों में विश्वास लाजमी ठहराया है।

पादरी—हा तीनों में एकत्व स्वीकार करना होगा। एक में तीन और तोन में एक यह पहेली है पर मानने योग्य है क्योंकि मुक्ति इसी विश्वास के द्वारा प्राप्त होगी।

अविश्वासी परन्तु ईसा तो पैदा हुआ था। पैदा हाने वाली सत्ता को ईश्वर के साथ अनादि और अनन्त कैसे स्वीकार कर सकता हू ? क्या तुम्हारे त्रैतवाद के तीनों व्यक्ति ईश्वर के बरा बर हैं ?

पादरी—हा, परन्तु ईश्वर एक ही है और वह ससार को इतना प्रेम करता है कि उसको अपना एकलौता बेटा मनुष्य मात्र के लिये मरने को भेजना पड़ा।

अविश्वासी—क्या ईसा ईश्वर का इकलौता बेटा था ?

पादरी—हाँ ठीक है। वह सबसे पूर्व जन्मा था।

अविश्वासी—क्या ईसा परमात्मा है ?

पादरी—बेशक, परमात्मा ही है।

अविश्वासी—क्या ईसा के मा थी ?

पादरी—हा, क्वारी मेरी उसकी मा थी।

अविश्वासी—ईसा का जन्म कब हुआ था ?

पादरी—१६५६ वर्ष पूर्व।

अविश्वासी—क्या ईसा को सब से पूव जन्मना कहते हैं ?

पादरी—तुम्हारा इस प्रकार युक्ति करना तुम को अधर्म मार्ग पर ले जा रहा है। बिना युक्ति के विश्वास करने में ही बचाव है।

अविश्वासी—क्या ईसा की मृत्यु भी हुई थी ?

पादरी—हा हुई थी।

अविश्वासी—क्या ईसा बिल्कुल मर चुका था ?

पादरी—हा बिल्कुल।

अविश्वासी—क्या बिल्कुल मरने के पीछे उसने कुछ खाया पिया था ?

पादरी—हा वह पुन जीवित हो गया था।

अविश्वासी—पुन जीवित होने के पहले कितनी देर तक मरा रहा ?

पादरी—वह शुक्रवार को मरा था एतवार को उषाकाल से पूर्व पुन जिन्दा हो गया था।

अविश्वासी—अच्छा तो ईश्वर को अपना इकलौता बेटा मनुष्यमात्र के प्रति प्रेमप्रदर्शन केलिए इतने थोडे समय के लिए जगत में भेजना पडा और क्या मुर्दे जिन्दे हो सकते हैं ?

पादरी—तुम फिर दलील के क्षेत्र में जाकर अधर्म के मार्ग पर चलते जा रहे हो। यह मान लो कि ईसा जिदा हो गया था। कबर मे ईसा ने मौत पर विजय प्राप्त की थी। विश्वास करो ईमान लाओ।

अविश्वासी—ईमान किस पर विश्वास किस पर ?

पादरी—वह परमात्मा जो आसमान पर है और हम सब का पिता है।

अविश्वासी—क्या वह परमात्मा आसमान पर ही रहता है ? क्या वह काले, गोरे, पाश्चात्य तथा पौर्वात्य सबका पिता है ? क्या इस हिसाब से हम सब भाई भाई हैं ? तो फिर गोरों का कालों पर अत्याचार क्यों ?

पादरी—तुम पुन युक्ति के त्याज्य क्षेत्र में प्रवेश कर रहे हो। सन्देह छोड़ो, विश्वास का सहारा लो। एक में स्वर्ग दूसरे में नरक छिपा

❀ बाल-जगत् ❀

विद्यार्थियों का अपूर्व बलिदान

नालन्दा के जगत प्रसिद्ध विश्व विद्यालय में पढ़ने के लिए हुएन्सांग चीन से आये। यहां उनको विद्यार्थियों और अध्यापकों द्वारा खूब सम्मान प्राप्त हुआ था। हुएन्सांग जब पढ़कर स्वदेश लौटे तो यहां से बौद्ध धर्म्म ग्रन्थों की हस्तलिपि अपने साथ ले गए। उसे विदा करने के लिए उनके प्रेम में मुग्ध अनेक विद्यार्थी सिन्धु नदी के मुहाने तक जाने के लिए तय्यार हो गये परन्तु दुर्भाग्य से आधे रास्ते जहाज तूफान में पड़ गया। उसमें पानी भर गया और डूबने के लिए तय्यार हो गया। हुएन्सांग की सारी मेहनत पर पानी फिरने को आ गया। उस समय उन विद्यार्थियों ने असाधारण साहस का परिचय दिया। उन्होंने सोचा कि यदि ये धर्म्म ग्रन्थ नदी में डूब गए तो हमारे धर्म्म का चीन में प्रचार होने का अवसर हाथ से निकल जायगा। इसलिए अपना सर्वस्व त्याग कर उस स्मारक की रक्षा करने का उन्होंने सङ्कल्प किया और देह का मोह त्याग अमर कीर्ति की प्राप्ति के लिए वे नदी के प्रवाह में कूद पड़े और देखते२ उनका पवित्र शरीर नदी तल में प्रविष्ट हो गया। अपनी देह सरिता को अर्पण करके उन्होंने जहाज के भार को हल्का किया और हुएन्सांग और उन धर्म्म ग्रन्थों की रक्षा हुई। यह अपूर्व आत्मोत्सर्ग नालन्दा के शिक्षण का प्रभाव था। इस प्रकार हमारे आर्य ब्रह्मचारी विद्यार्थियों के बलिदान से ही चीन में धर्म्म ज्ञान का प्रचार हुआ।

———

हुआ है। तुम्हारी तुच्छ बुद्धि असीम परमात्मा पर हावी नहीं हो सकती।

अविश्वासी—क्या सब अविश्वासी नरक में ढकेले जावेंगे ?

पादरी—बेशक।

अविश्वासी-क्या इसमें परमात्मा का अन्याय न समझा जायगा कि वह उन आत्माओं को भी नरक में ढकेलता है जिन्होंने ईसा का कभी नाम तक भी नहीं सुना?

पादरी -तुम फिर बुद्धि से इन बातों की परीक्षा करने लग गए हो।

अविश्वासी—जब तुम खाने, पीने, पहरने आदि छोटी छोटी चीजों को भी बुद्धि से जांच पड़ताल करते हो तो मैं ईमान, धर्म की बातों की पड़ताल कैसे न करूं ? जिनपर मेरे सारे भविष्य का दारोमदार है। यदि छोटी बातों का बुद्धि से परीक्षण ठीक है तो धर्म जैसी महत्वपूर्ण बात का बुद्धि से जांचना क्यों ठीक नहीं है ?

* महिला जगत् *

झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई

अन्तिम समय

[ले०—श्री वृन्दावनलाल वर्म्मा]

रोते हुए दामोदरदास (महारानी का दत्तक पुत्र)को एक ओर बिठलाकर रामचन्द्रराव ने अपनी वर्दी पर रानी को लिटाया और बचे हुए साफे के टुकड़े से उनके सिर के घाव को बांधा। रघुनाथ-सिंह ने अपनी वर्दी पर मुन्दर के शव को रख दिया।

बाबा गङ्गादास ने पहचान लिया। बोले '-सीता और सावित्री के देश की लड़कियाँ हैं ये।"

रानी ने पानी के लिए मुँह खोला। बाबा गङ्गादास तुरन्त जल ले आए। रानी को पिलाया। कुछ चेत आया।

मुँह से पीड़ित स्वर में धीरे से निकला 'भगवान' उनका चेहरा कष्ट के मारे बिल्कुल पीला पड़ गया। अचेत हो गई।

बाबा गङ्गादास ने पश्चिम की ओर देखकर कहा, अभी कुछ प्रकाश है परन्तु अधिक विलम्ब नहीं। थोड़ी दूर घास की एक गंजी लगी हुई है उसी पर चिता बनाओ।

मुन्दर (रानी की सखी और दासी) की ओर देख कर बोले, यह इस कुटी में रानी लक्ष्मीबाई के साथ कई बार आई थी। इसका तो प्राणांत हो गया है।

उसके मुँह में भी बाबा ने जल की कुछ बूँदे डालीं।

रानी फिर थोड़े से चेत में आईं। कम से कम रघुनाथसिंह इत्यादि को यही जान पड़ा। दामोदरदास पास आ गया। उसको अवगत हुआ कि मां बच गई और फिर खड़ी हो जायगी। उत्सुकता के साथ उनकी ओर टकटकी लगाई।

रानी के मुँह से बहुत टूटे स्वर में निकला 'ओ३म्'।

इसके उपरांत उनके मुँह से जो कुछ निकला वह अस्पष्ट था। होठ हिल रहे थे। वे लोग कान लगाकर सुनने लगे। उनकी समझ में केवल तीन टूटे हुए शब्द आये······

··· ··द······ह··· ति नै·· नं ·· पावक: मुख मण्डल प्रदीप्त हो गया।

सूर्य्यास्त हुआ। प्रकाश का अरुण पुँज दिशा की भाल पर था। उसकी अगणित रेखाएं गगन में फैली हुई थीं।

देशमुख ने बिलख कर कहा, झांसी का सूर्य्य अस्त हो गया।

रघुनाथसिंह बिलख २ कर रोने लगा.

दामोदरदास ने चीत्कार किया।

बाबा गङ्गादास ने कहा, प्रकाश अनन्त है। वह कण-कण को भा समान कर रहा है। फिर उदय होगा। प्रत्येक कण मुखरित हो उठेगा।

रानी का कण्ठा उतार कर दामोदरदास के पास रख दिया। मोतियों की एक छोटी कण्ठी उनके गले में रहने दी। उनका कवच और तवे भी। चिता पर देशमुख ने रख दिया और अग्नि संस्कार कर दिया। अपनी और रघुनाथसिंह की वर्दियां भी चिता पर रख दीं।

आधी घड़ी में चिता प्रज्वलित हो गई।

उस कुटी की भूमि पर रक्त बह गया था। उसको देशमुख ने धो डाला।

परन्तु उन रक्त की बूंदों ने पृथ्वी पर जो इतिहास लिख दिया था वह अमिट रहा।

कृतज्ञता प्रकाश

मै श्री ठाकुर धर्म्मसिंह जी सरहदी का नव-आर्य सुपुत्र हूं, जिसके विवाह में सब आर्य जगत ने इतनी दिलचस्पी की। मुसिलमानों में से २५ वर्ष पूर्व आर्य धर्म में प्रविष्ट हुए मेरे पिता जी को आर्य समाज ने जो आदर स्थान अपने हृदय में दिया है उसके लिये धन्यवाद के हमारे परिवार को शब्द नहीं मिलते। श्री पूज्यपाद सेठ जुगल किशोर जी बिड़ला का तो हमें आरम्भ से सहारा प्राप्त रहा है, नथा उनके मन्त्रीं जनों की मुफ पर जो कृपा रही है उसका भी मै बहुत कृतज्ञ हूं।

मै समाज का तुच्छ बालक होते हुए कृतज्ञता के ये दो शब्द भेंट करने का कदापि साहस न करता, यदि मैं श्री कविराज हरनामदास जी और उनकी बहिन तथा बहनोई के आर्य घराने में और ऊंचे संस्कारों में पली अपनी धर्मपत्नी श्रीमती शकुन्तला प्रभाकर के शील, व्यवहार कुशलता, सुघड़ता और समझदारी से अत्यन्त प्रभावित न होता। मेरे पिता जी मेरे बड़े भाई श्री भूपाल सिंह से प्रायः कहा करते थे कि रामपाल सिंह के विवाह के लिये तब तक जल्दी मत करो जब तक कि आर्यों के उतने ऊंचे घराने की सुयोग्य, सभ्य, सुसंस्कृत वधु हमको नहीं मिलती, जितने ऊंचे पठानों के घराने से हम आये हैं। आखिर पिता जी की मुराद बर आई। श्री क० हरनामदास जी इतने लखपति और बड़े आदमी होते हुए अपनी प्रभाकर भांजी के लिये अपनी बरादरी में से बहुत ही अच्छा वर तलाश कर सकते थे. तिस पर भी एक आर्य उपदेशक मात्र के लड़के मुफ नव आर्य को अपना कर जिस धर्म परायणता और उदारता का परिचय देकर उन्होंने आर्य समाज का मस्तक ऊंचा किया है, तथा मुसलमानों और ईसाइयों में से आए नव आर्यों की जो ढारस बंधाई है उसके लिये हम सब उनके ऋणी रहेंगे और आर्य जगत् उन का आभारी रहेगा। हमें मुसलमान मौलवियों और चचा डाक्टर खान साहिब बुजर्गवार के उलाहने सहने पड़ते थे कि "आर्य्या तुम्हारी लड़कियां ले तो लेंगे, पर देंगे नहीं; और अगर देंगे तो कोई ऐसी निखद और बेवकूफ सी भीख मंगे की लड़की जिसे और कोई नलेता होगा देंगे वगैरा। पर आर्य समाज की सबसे बड़ी संस्था सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उस समय के महामन्त्री श्री कविराज हरनामदास बी० ए० ने हमें घर बैठे शगन भेज कर हमारी इज्जत रख ली, और जो हमें बहकाते थे, उनको इतनी बड़ी हस्ती का नाम सुनते ही शर्मिन्दा होना पड़ा। कविराज जी ने तो यहां तक पिता जी से कह दिया कि "ठाकुर साहिब! मेरी कोई लड़की नहीं वरना उससे रामपाल सिंह का पाणिग्रहण करा कर पुण्य का भागी बनता और पिता जी की हार्दिक इच्छा को पूरा करता।" ऋषि दयानन्द के इस सच्चे अनुयाई और सारे हिन्दू जगत को शुद्धि का क्रियात्मक रूप दिखाने वाले इस महान् व्यक्ति का शुभ नाम रहती दुनिया तक स्वर्णाक्षरोंमें लिखा रहेगा। अब तो रास्ता खुल गया है, आर्य जगत को तथा समस्त हिन्दू जगत को दलेरी दिखानी चाहिये, फिर देखें कि शुद्धि का आन्दोलन आप से आप जोर पकड़ता है या नहीं।

मै पुनः उन आर्य बन्धुओं के प्रति कृतज्ञता प्रकाश करता हू जो विवाह के उपलक्ष में एकत्रित हुए और बारात को ऐसा शोभनीय और रईसी रूप दिया जैसे उनके अपने लड़के की बारात हो, वरना हम तो अपनी सारी रईसी वैदिक धर्म पर कुर्बान करके खाली हाथ ही पेशावर से भारत चले आये थे।

धन्यवादपूर्वक
रामपाल सिंह
हिन्दुस्तान टाईम्स, नई दिल्ली

———

मठ गुलनी अभियोग की सहायतार्थ

सार्वदेशिक सभा के प्रधान की आर्य जनता से अपील

आर्य जनता को विदित ही है कि बिहार के मठगुलनी नामक स्थान पर हुई कथित दुर्घटना के अभियोग में लगभग १२ आर्य बन्धु ग्रस्त हैं, जिनके विरुद्ध ईसाई चर्च पर आक्रमण करने मारपीट करने तथा कत्ल और बल्वे के आरोप लगाये गये हैं। इस दुर्घटना के उपरांत आर्य भाइयोंके कष्टों में अमित वृद्धि हो गई है। वे भय आतङ्क और अभाव के वातावरण में ग्रस्त हैं। विरोधियों ने इस दुर्घटना को अखिल विश्व का स्वरूप देने, अपने मतानुयायियों की सहानुभूति एवं सहयोग प्राप्त करने आर्य समाज को बदनाम करके उसे जनता तथा राज्याधिकारियों की दृष्टि में अपराधी दिखाने का कोई भी कुत्सित प्रयत्न नहीं छोड़ा है। उनके इस आंदोलन से आर्य समाज का कुछ बनता बिगड़ता तो नहीं है परन्तु उसकी कठिनाइयों और चिन्ताओं में वृद्धि हो गई है। आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार अभियोग की पैरवी और पीडित आर्य परिवारों की आर्थिक सहायता तथा उनकी रक्षा करने में जुटी हुई है। यह अभियोग एक प्रकार से हमारी परीक्षा है और हम उनके द्वारा परीक्षा में डाले गये हैं जिनके आर्थिक साधन अपरिमित हैं और जिनकी साधन सम्पन्नता विशाल है। ऐसी अवस्था में आर्य समाज को गौरव की रक्षा और न्याय प्राप्ति के लिये कितना परिश्रम करना होगा कितनी बड़ी शक्तियों से लोहा लेना होगा, कितना धन व्यय करना होगा इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है।

इस अभियोग की पैरवी और पीड़ितों की सहायता के लिये कम से कम १० हजार रुपया तत्काल चाहिये। आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार परिमित साधनों के बल पर अभियोग की पैरवी और पीड़ितों की रक्षा का काम कर रही है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने भी अपने कोष से २०००) दिया है। परन्तु आर्य जगत् की आर्थिक सहायता के बिना अभीष्ट की सिद्धि नहीं हो सकती।

अतः आर्य समाजों से बलपूर्वक निवेदन है कि वे इस अभियोग की सहायतार्थ धन एकत्र करके यहां भेजना अपना अवश्यक कर्तव्य समझे और ज्यों ज्यों धन एकत्र होता जाये भेजते रहें। यदि आर्य समाजो ने और आर्य जनता ने सार्वदेशिक सभा के आर्थिक दृष्टि से हाथ दृढ़ कर दिये तो दोनों सभाओं का कार्य सुगम हो जायेगा और वे अपनी शक्ति और ध्यान निश्चिन्तता पूर्वक अभियोग की ओर लगा सकेंगे।

प्रत्येक प्रकार का धन मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नया बाजार, देहली—६ के पते पर आना चाहिये।

भवदीय—

इन्द्र विद्यावाचस्पति
सभा प्रधान

आर्य समाज के इतिहास की झलक

परोपकारिणी सभा (फरवरी के अङ्क से आगे)

इस विज्ञप्ति के अनुसार २८-१२-१८८७ को परोपकारणी सभा के अधिवेशन में निश्चय हुआ कि २६-१२-१८८७ के मध्यान्ह में श्री मद्दया नन्दाश्रम की नींव रखी जावे और अस्थि भस्म रखने का कार्य सब की ओर से प० मोहनलाल जी विष्णुलाल जी पड़्या मन्त्री श्रीमती परोपकारणी सभा करे। तदनुसार २६-१२-१८८७ के मध्यान्ह के १२ बजे श्रीमती परोपकारणी सभा के समासद और समस्त आर्य समाजों के प्रतिनिधियों ने गाजे बाजे के साथ श्रीयुत शाहपुराधीश जी के प्रदान किए हुए बगीचे में एकत्र होकर परम पद प्राप्त श्रीमन् परम पूजनीय परम हंस परिब्राजकाचार्य स्वामी जी महाराज श्री दयानन्द सरस्वती जी महाराज की अस्थि भस्म पधरवा कर (सभा इस सम्बन्ध में निश्चय कर चुकी थी कि अस्थि पधारते समय उस पर स्पष्ट संस्कृत भाषा मे लिख दिया जावेगा कि उक्त भस्म धार्मक हेतु से नहीं पधराई गई हैं किन्तु साधारण रूप से देखो अधिवेशन का निश्चय सं० ७) आश्रम की नींव समस्त आर्य समाजों की ओर से श्री पं० मोहनलाल जी विष्णुलाल जी पड़्या के हाथ से रखवा दी गई। नींव रखने के पश्चात् ला० लाजपतराय जी प० श्यामजी कृष्ण वर्मा मसूदा ठाकुर साहबराव श्री बहादुरसिंह जी, कविराज श्री श्यामलदास जी और पण्डित गौरीशङ्कर जी आदि के व्याख्यान हुए।

आश्रम के लिए भूमि प्राप्त करने, नकशे बनवाने, सहायता संग्रह करने का कार्य प्रारम्भ हुआ रावसाहब श्री बहादुरसिंह जी, मुन्शी पद्मचन्द जी प्रधान आर्य समाज अजमेर आदि केसरगंज में भूमि प्राप्त करने के उद्योग में लगे और दो तीन वर्ष के प्रयत्न से आई हुई विघ्न बाधाओं का निवारण करते हुए यथेष्ठ प्राप्त करली गई। उधर श्री मोहनलाल जी विष्णुलाल जी पंड्या धन संग्रह मे संलग्न हुए। श्री पड़्या जी ने इस सम्बन्ध में जो प्रथम दान पत्रिका छपवाकर प्रकाशित की उस में ३४३८) रु० का दान तो परोपकारणी सभा के समासदों ने लिखवाया था, १०००) रु० की प्रतिज्ञा आर्य समाज बरेली की तरफ से थी और २५०) रु० मुरादाबाद, ४००) रु० शाहजहाँपुर, १०१) रु० बम्बई, ५००) रु० अमृतसर और ३००) रु० नारायणसिंह मिर्जापुर, १००) रु० रामानन्द ब्रह्मचारी, २५०) रु० जयपुर, १००) ठा० भूपालसिंह, १००) रु० ठा० मुकन्दसिंह, ३००) रु० फ़िरोजपुर १००) रु० रुड़की, १००) मुरलीधर अमृतसर और १००) रु० मेरठ आर्य समाजों के प्रतिनिधियों ने अपने स्थानों से भेजनेको लिखवाया। जैसा प्रायः होता आया है कि सारा दान वसूल नहीं हो पाता वही परिस्थिति यहाँ भी रही। कार्तिक अमावस्या सं० १६४७ को श्रीमद्दयानन्द आश्रम निमित्त प्राप्त धन का संक्षिप्त व्यौरा नीचे लिखे प्रकार है।

१५०००) रु० उदयपुरी सिक्के के आधार पर मूल्यांकित राजाधिराज शाहपुराधीश का बगीचा ११०००) रु० उदयपुरी सिक्के ६१५) रु० तीन आना उदयपुरी और १६३) रु० ग्यारह आने कल-

दार में मेवाडाधिपति के १००००) रु० सहित और ८४८०) रु० कलदार इन ८४८०) में ५०००) रु० प्रोनोटों का धन सभा को मिला या नहीं यह अन्वेषण की आकांक्षा रखता है। परोपकारणी सभा मेवाड़ राज्य राज कर्मचारियों का दान जिस में तत्कालीन रैजीडेन्ट कर्नल वाल्टर के ५०) रु० थे।

शेष धन का विवरण इस प्रकार हैं १२०) रु० आठ आना ब्रह्मचारी रामानन्द, ८०१) रु० मेवाड़ राज्य के अतिरिक्त राजस्थान है। १२६) रु० तीन आने उत्तर प्रदेश से, १२२) रु० मध्य प्रदेश. ४६) रु० दस आने आसाम से, ८७) पजाब से, १०५) रु० बम्बई से, पञ्जाब से केवल ८७) रु० प्राप्त होने का कारण दयानन्द आश्रम के लिए संग्रहीत चन्दे का डी० ए० वी० कालेज लाहौर के लिए भेज दिया जाना हुआ। आर्य समाज ने सूचना दी कि उनके यहां के श्री मद्दयानन्दाश्रमके चन्दे १८६०) रु० ऐंग्लोवैदिक कालेज लाहौर को भेज दिए हैं इस पर परोपकारणी सभा ने निश्चय किया कि उक्त चन्दा रजिस्टर से खारिज लिया जावे और ऐसे ही कोई प्रसङ्ग आवे तो खारिज किया जावे। शाहपुराधीश द्वारा प्रदत्त बाग में जहां आधार शिला रखी गई थी, उस पर वैदिक धर्म विजय स्तम्भ निर्माण का निश्चय हुआ और उपदेशक विद्यालय के लिए मकान बनवाने की स्वीकृति भी इसी बाग में दी गई। सं० १६०० तक इस संबन्ध में कुछ न हो सका और सारा उद्योग केसरगंज अजमेर में जो भूमि खरीदी गई उसमें आश्रम के विभिन्न अङ्गों के नक्शे बनवाए जा कर क्रमशः उनके निर्माण कार्य में सन् १८६० ई० तक लगभग १५०००) रु०, ३१-१२-१८६६ तक ६०००) रु० और तदुपरांत ३१-१०-१६०७ तक ७०००) रु० व्यय हुआ।

केसरगंज में निर्माण कार्य प्रथम आरम्भ करने का मुख्य हेतु यह था कि यन्त्रालय, पुस्तकालय, पाठशाला और अनाथालय आदि यहीं स्थापित करने का निश्चय किया गया।

वैदिक यन्त्रालय

अजमेर में दयानन्द आश्रम के निर्माण के अतिरिक्त सभा का सन् १६०० तक दूसरा कार्य वैदिक यन्त्रालय को प्रयाग से लाकर अजमेर में उसका संचालन करना रहा।

जब स्वामी जी महाराज ने वेद भाष्य का प्रकाशन आरम्भ किया, तदुपरांत काशी में वैदिक यन्त्रालय खोला गया, जो पीछे प्रयाग में लाया गया। जब स्वामी जी महाराज का स्वर्गवास हुआ और परोपकारणी सभा ने कार्य सम्भाला तब यंत्रालय की सम्पत्ति का मूल्यांकन ४०००) रु० किया गया था और ४८०००) रु० की पुस्तकें विक्रयार्थ बतलाई गईं। पुस्तकों की यह कूत लागत की कूत होकर स्फुट बिक्री योग्य मूल्य पर आश्रित थी यह पुस्तके अनुमान है कि वेदभाष्य आदि के बम्बई, काशी और प्रयाग में छपे मासिक अङ्क थे जिनका विश्रृखलित अवशिष्टांश अब भी मिल रहा है प्रयाग में यन्त्रालय का काम वहां के आर्य पुरुषों की एक उपसमिति रायबहादुर श्री सुन्दरलाल जी अलीगढ़ के अधिष्ठातृत्व में काम करती थी।

स्वामी जी महाराज के ग्रन्थों में छापे की भूलों आदि के उपालम्भ तब भी होने लगेथे और संशोधक पण्डितों की जो ऐसे समय पं० भीमसेन और ज्वाला प्रसाद जी थे आलोचना होती थी। सभा के तीसरे अधिवेशन में पं० लेखराम जी ने अप्रबन्ध पर कुछ कहा जिसका समाधान भी सुन्दरलाल जी ने कर दिया और साथ ही यन्त्रालय के अधिष्ठातृत्व से अपना त्याग पत्र दे दिया। इस पर सभा की ओर से ला० साईदास जी लाहौर और बा० दुर्गाप्रसाद जी फरुखाबाद और आर्य समाजों की ओर से अधिवेशन में उपस्थित सब प्रतिनिधियों की सेवा ली गई। देवीप्रसाद जी

ने सभापति जी से निवेदन किया कि पं० सुन्दर लाल जी का त्याग पत्र स्वीकार न किया जाय। सभापति जी ने पण्डित जी को समझाया परन्तु वे सहमत न हुए तब विवश त्याग पत्र स्वीकार किया, और यन्त्रालय का अधिष्ठातृत्व जो अधिकार पं० सुन्दरलाल जी को थे उन्हीं अधिकारी सहित आर्य प्रतिनिधि सभा पश्चिमोत्तर और अवध को दिया जाना निश्चित हुआ इसे पं० बिवाशलाल जी मन्त्री प्रतिनिधि सभा ने जो अधिवेशन में उपस्थित थे अपनी सभा की ओर से प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार किया। इस समय यह स्पष्ट कर दिया गया था कि सुविधा होते ही यन्त्रालय अजमेर लाया जावेगा। तदनुसार आर्य समाज अजमेर ने स्थान आदि का प्रबन्ध कर लिया और यन्त्रालय का प्रबन्ध कर्ता और प्रतिनिधि सभा पश्चिमोत्तर और अवध की सूचना मिलने पर अजमेर ले आने की तैयारी की। इसी अवसर में पश्चिमोत्तर प्रदेश के सभा के ६ सदस्यों ने पत्र लिखा कि यन्त्रालय प्रयाग से न उठाया जावे। यह पत्र अधिवेशन ४ में उपस्थित किया गया, उक्त ६ सदस्य में से अधिवेशन में कोई नहीं आया, और निश्चय हुआ कि फिलहाल यन्त्रालय अजमेर में स्थायी भवन बनाने तक प्रयाग में रहे। और प्रतिनिधि सभा और उक्त ६ सदस्य उसका प्रबन्ध करें यदि वे अस्वीकार करे तो यन्त्रालय को तुरन्त अजमेर लाया जावे। इस निश्चय के दूसरे दिन ०६-१२ ८८ को अधिवेशन से ही प्रतिनिधि सभा पश्चिमोत्तर प्रदेश व अवध का तार मिला कि पूर्ण अधिकार देना अस्वीकार हुआ और यन्त्रालय अजमेर मंगा लिया गया और श्याम जी कृष्ण वर्मा उसके अधिष्ठाता, आर्य समाज प्रबन्ध कर्तृ सभा और भगत रेमल श्री प्रबन्ध कर्ता नियत हुए।

दयानन्दाश्रम में जो स्थान महाविद्यालय के लिए निश्चित हुआ था उसके व्याख्यान गृह के बनने पर यन्त्रालय उससे लाया गया और १९०० तक वहीं रहा। और स्वामी जी के ग्रन्थों का मुद्रण प्रकाशन और विक्रय यन्त्रालय ही करता रहा। दयानन्दाश्रम के शेष अङ्गों की पूर्त्यर्थ, आश्रम भवन निर्माण और यन्त्रालय के सामान, आर्य समाज अजमेर ने ऐंग्लो वैदिक पाठशाला प्रारम्भ की और उसके संचालनार्थ परोपकारणी सभा से मासिक सहायता दी जाती रही। यह क्रमशः दयानन्द आश्रम ऐंग्लो वैदिक हाई स्कूल बनी और अब एक स्वतन्त्र सस्था के रूप में इन्टर कालेज और सहायक पाठशाला उनका रूप धारे हुए है।

इसी प्रकार परोपकारणी सभा द्वारा जो भूमि खरीदी गई उस पर दयानन्द अनाथालय का निर्माण हुआ सभा ने अपनी खरीदी हुई भूमि में यद्यपि औषधालय के लिए स्थान निश्चित किया था परन्तु वहाँ औषधालय न बन सका, तथापि इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए केसरगज से ही एक ब्रह्मचारी रह, सर्व साधारण और विशेषकर भारतवर्षीय राजाओं में वेद प्रचार और राजधर्म का उपदेश दिया उन ब्रह्मचारी नित्यानन्द जी की स्मृति में नित्यानन्द परोपकारी भवन बना। इसमे परोपकारी औषधालय सचालित किया।

यह सब कार्य केसरगज में ही होते रहे शाहपुराधीश प्रदत्त बगीचे की ओर इस अवधि में ध्यान नहीं दिया जा सका। इस भमि के भाग्योदय की कथा आगे आवेगी।

दयानन्द पुस्तकालय का निर्माण इस अवधि में जो-जो ग्रन्थ संग्रह स्वामी जी के समय का प्राप्त हुआ उससे किया गया, इसकी वृद्धि का वर्णन भी आगे के भाग अध्याय का विषय है। परोपकारणी सभा और आर्य समाजों के पारस्परिक सम्बन्ध तो यह थे. कि सभा को सब आर्य समाजे अपनी शिरोमणि सभा मानती रही। तदन्तर ज्यों-ज्यों प्रांतीय प्रतिनिधि सभा और प्रांतीय संस्थाएँ बनी यह सम्बन्ध शिथिल होता गया।

साहित्य समीक्षा

Philosophy of Dayananda by Shri Pt. Ganga Prasad ji Upadhyaya M.A. Kala Press, Allahabad Price Rs. 10-0 0.

श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय समस्त भारत में और उसके बाहर भी अपनी अत्युत्तम आस्तिक वाद, अद्वैतवाद, जीवात्मा, Vedic Culture, I and my God, worship इत्यादि पुस्तकों के कारण इतने प्रसिद्ध हैं कि उनका परिचय देना सूर्य को दीपक दिखाने के समान है।

समाज सुधारक के रूप में महर्षि दयानन्द की जितनी प्रसिद्धि है उतनी उच्चकोटि के दार्शनिक के रूप में नहीं यह खेद की बात है क्योंकि यद्यपि महर्षि ने नये दार्शनिक तत्वों के प्रवर्त्तक होने का कोई दावा नहीं किया तथापि वैदिक तत्त्वज्ञान की उन्होंने ऐसी युक्तियुक्त उत्तम व्याख्या सत्यार्थ प्रकाशादि में की है और षड्दर्शनों में अविरोध, मुक्ति से पुनरावृत्ति, प्रकृति. जीव ब्रह्म की नित्यता इत्यादि विषयों में उनके विचार इतने वैदिक प्रमाण तथा तर्क सङ्गत हैं कि उनकी गणना अत्यन्त उच्चकोटि के दार्शनिकों में करना सर्वथा उचित प्रतीत होता है। महर्षि दयानन्द के दार्शनिक तत्त्वों को सुशिक्षित जनता के सम्मुख अंग्रेजी में तुलनात्मक रूप से युक्तियुक्त सरल प्रकार से रखने की बड़ी आवश्यकता थी। इस त्रुटि को पूर्ण कर के मान्य उपाध्याय जी ने अत्यन्त अभिनन्दनीय कार्य किया है। प्रथम अध्याय में महर्षि की संक्षिप्त जीवनी, द्वितीय में ज्ञान प्राप्ति के साधन, प्रत्यक्ष अनुमानादि प्रमाण, तृतीय में ईश्वर चतुर्थ में आत्मा और जीवन, पञ्चम में प्रकृति, षष्ठ में आत्माओं की नित्यता और अमरता, सप्तम मे नैतिक जीवन का आधार, अष्टम में धर्म और सदाचार, यम नियमादि अष्टम में समाज शास्त्र वर्णाश्रम व्यवस्था तथा राज्य व्यवस्थादि इन अध्यायों में पुस्तक को विभक्त करके इन पर प्राचीन तथा अर्वाचीन दार्शनिकों और वैज्ञानिकों की दृष्टि से इतना उत्तम प्रकाश डाला गया है और महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित वैदिक धर्म के दार्शनिक तथा सामाजिक तत्त्वो का इतना उत्तम समर्थन किया गया है कि वह किसी भी निष्पक्ष पात-पाठक को प्रभावित किये बिना न रहेगा यह मेरा विश्वास है। दर्शन शास्त्र स्वयम् एक नीरस सा विषय प्रतीत होता है, किन्तु मान्य उपाध्याय जी ने अपनी सिद्ध लेखनी से उसे इतने उदाहरणादि देकर इतने सरल रूप में रखने का प्रयत्न किया है कि वह विचारशील सुशिक्षित पाठकों को बड़ा रोचक लगेगा। इस अद्भुत ग्रन्थ को आद्योपान्त पढ़कर मैं सुयोग्य लेखक महोदय की विद्वत्ता, परिश्रम, अत्यन्त प्रभावोत्पादिनी शैली आदि पर इतना मुग्ध हुआ हूँ कि उसकी पर्याप्त प्रशंसा करने के लिये शब्द मेरे पास नहीं। अद्वैतवाद विशिष्टाद्वैतवाद शुद्धाद्वैतवाद' भेदाभेदवाद इत्यादि जितने भी प्रसिद्ध दार्शनिकवाद हैं उन सबका इस पुस्तक में निष्पक्षपात अत्युत्तम विवेचन किया गया है। अध्यायों की अति दीर्घता विशेषतः उपशीर्षकों का अभाव पाठकों को कुछ अवश्य अखरेगा किन्तु प्रारम्भ में जो विस्तृत विषय सूची दी गई है उनको ध्यान पूर्वक पढ़ लेने पर कोई

* विविध सूचनाएं तथा वैदिक धर्म प्रसार *

नोटः—समाचार और प्रचार विवरण मास की १५ ता० तक सभा कार्यालय में पहुंच जाने चाहिएँ। यदि समाजें, संस्थाएं और प्रदेशीय सभाएं अपना संक्षिप्त इतिहास भेजें तो उन्हें प्राथमिकता दिए जाने का प्रयत्न किया जायगा —सम्पादक

निर्वाचन

समाज व सभा	प्रधान	मन्त्री	निर्वाचन तिथि
आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य भारत	श्री बाबूलाल जी गुप्त M.S C. भूतपूर्व शिक्षा सञ्चालक मध्य भारत	श्री डा० महावीरसिंह जी भूतपूर्व सिविल सर्जन लशकर	२६-२-५६ उज्जैन नगर में
आर्य समाज देवबन्द	श्री पं० देवदत्त जी वकील	श्री नरसिंह देव जी आर्य	४-३-५६ विश्वम्भर देव शास्त्री उपमन्त्री
,, आबूरोड	,, जयनारायण जी	,, किशनलाल जी आर्य	२६-१-५६ जेठमल उपमन्त्री
,, गंज स्टेशन रोड मुरादाबाद	,, गणेशीदास जी	,, सन्नूलाल जी	१२-२-५६
,, मैंडू (अलीगढ)	,, किशोरीलाल शर्म्मा	,, सूर्यपालसिंह जी	४-३-५६
,, रिवाली (अलवर)	,, जगतराम पन्च	,, सूरजभान जो	२६-२ ५६ कुन्दनलाल शर्म्मा उपमन्त्री

कठिनाई नहीं रहती। यदि मध्य में भी मुख्य शीर्षक के अतिरिक्त उपशीर्षक रख दिये जाते तो मेरे विचार में अधिक अच्छा होता। आशा है अगले संस्करण में सुयोग्य लेखक महोदय पाठकों की सुविधा के लिये ऐसा कर देंगे क्योंकि संभवतः अनेक पाठक प्रारम्भ की सम्पूर्ण सूची को पढ़ने का कष्ट न करें।

पुस्तक की आकार, प्रकार, छपाई आदि सब आकर्षक हैं। देश-विदेशके सुशिक्षित वर्गमें इसके प्रचार की बड़ी आवश्यकता है। यदि कोई वैदिक धर्म और संस्कृति प्रेमी दानी मानी सज्जन इसकी प्रतियां स्वयं खरीद कर देश-विदेश के सुशिक्षित विद्वानों तक उन्हें पहुंचाने की उचित व्यवस्था करें तो बड़ा भारी लाभ हो सकता है।

मैं इस अत्युत्तम ग्रन्थ के लिखने पर मान्य उपाध्याय जी का हार्दिक अभिनन्दन करता हूं और इसका सुशिक्षित वर्ग में अधिक से अधिक प्रचार चाहता हूँ।

प्रत्येक आर्य समाज को अपने पुस्तकालयार्थ इस ग्रन्थरत्न की प्रति मंगवा कर सुशिक्षित लोगों को उससे लाभान्वित करना चाहिये।

श्री श्रद्धानन्द प्रतिष्ठान
गुरुकुल कांगड़ी — धर्मदेव विद्यामार्तण्ड
१८-२-५६

धार्मिक परीक्षा फल

भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद् अजमेर की परीक्षायें इस वर्ष जनवरी मास में हुई थीं। उनका परीक्षा फल का सारांश नीचे दिया जाता है। विस्तृत विवरण "परीक्षा फल गजट" में छप रहा है जो पृथक् केन्द्रों को भेजा जायगा।

विद्या वाचस्पति परीक्षा

कुल १७८ आवेदन पत्र प्राप्त हुये। परीक्षा फल ६६.५ प्रतिशत रहा। सर्वप्रथम—सावित्रीदेवी (कर्नेल गंज), सर्वद्वितीय ओम् प्रकाश (अजमेर) सर्वतृतीय—ओम् प्रकाशचन्द्र (बुलन्दशहर)।

विद्या विशारद परीक्षा

कुल १६० आवेदन पत्र प्राप्त हुये। परीक्षा फल ६६ प्रतिशत रहा। सर्वप्रथम—नन्दकुमार (अजमेर), सर्वद्वितीय--रामगोपाल मिश्र (बुलन्द-शहर), सर्वतृतीय—सतीश कुमार (अजमेर), कन्या प्रथम--गुलाबदेवी पाठक (पिलखुवा)।

विद्यारत्न परीक्षा

कुल ३०४ आवेदन पत्र प्राप्त हुये। परीक्षा फल ९८.७ प्रतिशत रहा। सर्व प्रथम—रजनीकांत शर्मा (अजमेर), सर्वद्वितीय—श्यामलाल राव (बरेली), तथाहरनामसिंह (कर्नल गज), सर्वतृतीय छोगालाल लढा (भीलवाड़) कन्या प्रथम—मालती देवी (एटा)।

विद्या विनोद परीक्षा

कुल ५३८ आवेदन पत्र प्राप्त हुये। परीक्षा फल ६७ प्रतिशत रहा। सर्व प्रथम—रमेशचन्द्र (अलीगंज) तथा समयसिंह (लखावटी), सर्वद्वितीय उदयवीरसिंह (लखावटी), सर्वतृतीय—कन्हैयालाल (श्रीनगर), कन्या प्रथम—सत्यभामा देवी (गोरख पुर)।

डा० सूर्यदेव शर्मा, एम० ए० डी० लिट्,
परीक्षा मन्त्री,
भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद्,
अजमेर

शोक प्रस्ताव

आर्य समाज भोलेपुर (फतहगढ़) ने श्रीयुत स्व० पं० रामदत्त जी शुक्ल और चौ० जयदेवसिंह जी की मृत्यु पर शोक मनाया।

गुरुकुल समाचार

गुरुकुल कांगड़ी (हरिद्वार) में नए बालकों का प्रवेश वार्षिकोत्सव पर १३ से १६ अप्रैल ५६ तक होगा। गुरुकुल की उपाधियों को सरकार ने और यूनिवर्सिटियों ने स्वीकार कर लिया है। प्रवेश फार्म गुरुकुल से प्राप्त हो सकते हैं।

गुरुकुल ने आचार्य नरेन्द्रदेव जी तथा श्री मावलकर जी के निधन पर शोक मनाया। श्री आचार्य जी ने १६३१ में दीक्षात भाषण दिया था तथा गुरुकुल के साथ उनका पुराना सम्बन्ध था।

—आचार्य प्रियव्रत

समाजों तथा संस्थाओं के कार्य विवरण

आर्य समाज विनय नगर देहली ने ११.३-५५ को एक विशेष आयोजन के द्वारा आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब के प्रधान श्रीयुत स्वामी आत्मानन्द जी महाराज को उनकी सेवाओं के आदर स्वरूप अभिनन्दन पत्र भेंट किया।

आर्य समाज खड़वा ने १० मार्च को बोधोत्सव बड़े समारोह से मनाया। प्रातःकाल ६ बजे प्रभात फेरी निकाली। ५ बजे सायंकाल समाज मंदिर में हवन यज्ञ हुआ। रात्रि को ८ बजे गांधी चौक में श्री डा० रघुनाथसिंह वर्म्मा की अध्यक्षता में सार्वजनिक सभा हुई।

आर्य अनाथालय धारा शिव (उस्मानाबाद) आर्य समाज के सञ्चालन में काम कर रहा है। इसे सेन्ट्रल सोशल वैल फेयर बोर्ड दिल्ली से २०००) तथा हैदराबाद राज्य की ओर से १६००) सहायतार्थ मिले। संस्था अपनी निजी इमारत में

है। यह संस्था आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के अन्तर्गत कार्य करती है।

आर्य समाज गढ़वा (पलामू) के मन्त्री तथा उपमन्त्री गत फरवरी मास में एक भजनोपदेशक के साथ ईसाई प्रचार निरोध आंदोलन के कार्यार्थ भंडरिपी आदि ग्रामों में गए और जन सामान्य को ईसाइयों के हथकण्डों से सचेत और अपने आर्य धर्म पर दृढ़ रहने की प्रेरणा की।

सिंध सभा

२३-१२-५५ को श्रद्धानन्द भवन (सिंध नगरी बम्बई) में नारायण आर्य वीर निःशुल्क हिन्दी विद्यालय में श्रद्धानन्द दिवस मनाया गया।

२४-१२-५५ को छात्र और छात्राओं का नगर कीर्तन हुआ।

६-१-५६ को हुतात्मा नारायणदेव शहीदी दिवस इन्दुमती कन्या निःशुल्क हिन्दी विद्यालय का पहला प्रमाण पत्र दिवस मनाया गया।

१४ १-५६ को मकर संक्रांति दिवस मनाया प्रभात में प्रभात फेरी निकाली।

१६-२ ५६ को बसंत पञ्चमी तथा वीर हकीकत दिवस मनाया गया।

मंत्री
आर्य वीर दल सिंध नगर

शुद्धि

ग्राम कुडिया तहसील खंडवा जिला निमाड़ में आर्य समाज खंडवा के तत्वावधान में २० ईसाई परिवारों की जिनकी संख्या ११२ थी शुद्धि हुई। इससमय तक खंडवा समाज केद्वारा २२००ईसाइयों की शुद्धि हुई है।

कैलाश कुवर
मंत्री

अन्तर्जातीय विवाह

श्री स्वर्गीय मुंशी मगलसेन जी के पौत्र तथा श्री बा० दयाशङ्कर वकील के सुपुत्र आर्य समाज बदायूं के आर्य सभासद् श्री प्रभाशङ्कर जी वकील (सक्सेना कायस्थ) का विवाह जन्मगत जात-पात तथा रूढियों को तोड़ कर बरेली के डा० निरञ्जनप्रसाद अग्रवालकी बहिन श्रीमती राजकुमारी एम ए-एल. टी. के साथ आर्य समाज मंदिर करौल बाग दिल्ली में १६ २-५६ को पं० हरिदेव जी के पौरोहित्य में पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। श्री आचार्य वीरेन्द्र शास्त्री, श्री शङ्करप्रसाद जी आई सी. ऐस. भूतपूर्व चीफ कमिश्नर दिल्ली आदि अनेक गण्यमान्य सज्जन उपस्थित थे। विवाह बड़ी सादगी से हुआ।

ऋषि बोधोत्सव के उपलक्ष्य में महत्वपूर्ण गोष्ठी

देहली के आर्यों और नागरिकों की ओर से ऋषि बोधोत्सव के उपलक्ष्य में १०-३ ५६ को कान्स्टीट्यूशन हाउस नई देहली में एक जलपान गोष्ठी हुई जिसमें चुने हुए आर्य नेताओं, विद्वानों केन्द्रीय मन्त्रियों तथा राज्य सभा के सदस्यों ने भाग लिया। गोष्ठी का प्रधानत्व लोक सभा के स्पीकर श्री अनन्त शयनम् ने किया।

श्री शयनम् महोदय ने कहा कि "भारतीयों को सस्कृत पढ़नी चाहिए जो समस्त लोक भाषाओं की जननी और ज्ञान का आदि स्रोत है। उन्होंने यह भी कहा कि मनुष्य की जाति कर्म से होती है जन्म से नहीं। स्वामी दयानन्द ने हिन्दू धर्म के मौलिक सिद्धांतों का प्रचार किया और वे अन्त र्राष्ट्रीय नेता बने। उन्होंने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश को हिन्दीमें लिखकर हिन्दीको राष्ट्र-भाषा का स्वरूप प्रदान किया।"

श्रीयुत आबिद अली ने भारत की प्राचीन संस्कृति पर प्रकाश डालते हुए कहा कि यह संस्कृति सर्वोत्तम संस्कृति है। भारत के लोगों को अपनी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति पर अभिमान करना चाहिए।

श्रीयुत जगजीवन राम जी केन्द्रीय सरकार के श्रम विभाग के मंत्री ने कहा—स्वामी दयानन्द जी अपने समय के सबसे बड़े क्रांतिकारी थे। आर्य समाज को जीवित जागृत शक्ति बन कर स्वामी जी का सन्देश समस्त देशों में प्रसारित कर देना चाहिए।

श्रीयुत प्रो० अब्दुल मजीद ने कहा—सबसे पहले स्वामी दयानन्द जी ने ही 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया था और उन्होंने ही सर्व प्रथम ऐक्य सम्मेलन बुलाया था जिसमें सर सय्यद अहमद खां भी आमन्त्रित किए गए थे।

गोष्ठी की सफलता की कामना सूचक सन्देश श्रीयुत गोविंद वल्लभ पंत (केन्द्रीय गृह मन्त्री) श्रीयुत डा० काटजू तथा अनेक विदेशी राजदूतों से प्राप्त हुए थे।

श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति और श्रीयुत ईश्वरदासजी के भी स्वामीजीके जीवन तथा शिक्षाओं पर भाषण हुए।

गोष्ठी मे भाग लेने वालों मे से श्रीयुत मेहर चन्द महाजन, श्रीयुत भीमसेनजी सच्चर, श्री डा० गोकल चन्द नारङ्ग, श्रीयुत म० कृष्ण जी, श्रीयुत गुरुमुख निहालसिंह, श्रीयुत डा० युद्धवीरसिंह जी और श्री आर० एन० अग्रवाल के नाम उल्लेखनीय हैं।

साप्ताहिक सत्संग

(१) साप्ताहिक सत्सङ्ग कम से कम दो घंटे हो।

(२) उसमें वेद तथा उपनिषद् की कथा हों, किसी एक दो विद्वानों के सामयिक भाषण हों, कुछ सङ्गीत भी हो, सङ्गीत यदि साज के साथ हो तो अच्छा।

(३) कथा करने वाले भाई बहनों को उतना अंश पहले से देख लेना चाहिये तथा कठिन भाग की व्याख्या अपनी ओर से करनी चाहिये।

(४) सत्सङ्ग में लड़कियों, महिलाओं और दलित-वर्ग के लोगों को विशेष आकर्षित किया जाय. ये सब उपदेश सुनने के विशेष पात्र हैं।

(५) प्रत्येक आर्य बन्धु को कम से कम एक घंटा नित्य प्रति स्वाध्याय में और औसतन एक घंटा समाज सेवा में लगाना चाहिये उसके बिना किसी भी संस्था में तेजस्विता तथा जीवन नहीं आ सकता है।

(६) सेवा कार्य मे आर्यों की तथा आर्येतरों की दुःख दर्द में सहायता करना तथा पढ़ाने और विचार विनिमय का कार्य सम्मिलित है।

(७) आर्य बन्धु, यदि व्यवसायी हों, तो साप्ताहिक सत्संग के दिन पूरे या आधे दिन अपनी दुकान बन्द रखा करें।

(मूलचन्द अग्रवाल)
: सत्यार्थी :
अन्तरग सदस्य आर्य प्रतिनिधि सभा.
मध्य भारत उज्जैन म० भा०

कार्यालय
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
श्रद्धानन्द बलिदान भवन,
श्रद्धानन्द बजार, देहली।
दिनांक ३०।३।५६

आर्य समाज का स्थापना दिवस १२।४।५६ को मनाइये

श्रीमन्नमस्ते।

आर्यसमाज का स्थापना दिवस आर्यसमाज के स्वीकृत पर्वों में से एक महान् पर्व है। सभा के निश्चयानुसार इस वर्ष यह पर्व १२ अप्रैल १९५६ को मनाया जायेगा। इसकी सूचना अपने नगर में बहुत विस्तार पूर्वक दें और इसका प्रबन्ध बहुत उत्तम ढंग से किया जाये। सब समाजों के लिये कार्यक्रम निम्न प्रकार निश्चय किया गया है —

[१] संकीर्तन

प्रातःकाल नर नारी अपने अपने ग्रामों में संकीर्तन और उसके पश्चात मन्दिर में सन्ध्या हवन करें। प्रयत्न यह होना चाहिये कि नगर का कोई बाजार मोहल्ला छूटने न पाए। संकीर्तन में भजनों की संख्या बहुत अधिक करने की आवश्यकता नहीं। परन्तु जो भजनादि सब सुनने वालों के लिये रुचिकर और शिक्षाप्रद हों, वही गाये जायें। सारे का सारा भजन भी पूरा करना आवश्यक नहीं। दृष्टाँत रूपेण "यह ओ३म् का झण्डा आता है" भजन में से इस अवसर पर "जब गोली गोले बरसेंगे" छोड़ा जा सकता है। "हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मगन" में "मौत के पंजे" वाला पद छोड़ा जा सकता है। आर्य समाज के स्थापना दिवस का सन्देश विश्वास शान्ति और आध्यात्मिक तथा सामाजिक उन्नति का सन्देश है इसी को लक्ष्य में रखा जाये।

[२] नारे और जयघोष–

आर्य समाज अमर रहे, वैदिक धर्म की जय, भारत माता की जय, गोवध बन्द हो, महर्षि स्वामी दयानन्द की जय, नेताओं में से एक दो सर्वमान्य नेताओं के नाम की जय बुलाई जाये। आर्य समाज के क्षेत्र से बाहर के किसी भी नेता का कदापि नाम न लिया जाये। मुख्य कार्यकर्ता पहले ही दिन सब निश्चित कर लें।

[३] सार्वजनिक सभा –

प्रातः दोपहर या सायंकाल को स्वसुविधानुसार आर्य मन्दिरों इत्यादि में सार्वजनिक सभाय की जायें। सभा में पर्वपद्धति के अनुसार प्रथम सरस्वती (वेद वाणी) और ईश्वर की महिमा के प्रदर्शक वेद मन्त्रों का पाठ, प्रवचन और व्याख्या हो। पत्पश्चात् आर्य समाज स्थापना दिवस की स्मृति में आर्य समाज स्थापना के इतिहास, आर्य समाज की उपयोगिता, अब तक के प्रमुख कार्य, सार्वजनिक सेवायें, संस्थायें और समाज के भावी कार्यक्रम पर निबन्ध पाठ तथा भाषणादि किये जायें। देश, काल और स्थिति के अनुसार पुरोगम उचित समय ले, तथा सभा से लोग आकर कह

सकें कि आर्यसमाज स्थापना दिवस के समारोह में सम्मिलित होकर बहुत कुछ प्राप्त किया, बड़ा आनन्द आया।

स्मरण रहे कि सार्वजनिक सभाओं में आर्यसमाज के सद्गुणों और आर्यसमाज की इस युग में विशेष आवश्यकता पर बल देना चाहिये। त्रुटियों का वर्णन करने का स्थान अन्तरंग सभा से बाहर कहीं नहीं, यह बात आपके ध्यान से ओझल न होने पाये।

[४] प्रीति भोज—

इसके अतिरिक्त इस दिन आर्य नर नारियों को प्रीति-भोज आदि की व्यवस्था करके आर्य परिवारों को पारिवारिक मेल-जोल प्रेम प्रदर्शन और सम्बर्धन की भी योजना करनी चाहिये। नगर के अन्य उदार और आर्य समाज के प्रति सत्कार भाव रखने वाले नागरिकों को भी निमन्त्रित किया जा सकता है।

[५] आर्य घरों और मन्दिरों में दीपमाला—

यदि अधिक न कहा जाये तो आर्यों के लिये प्रचलित दीपमाला के बराबर का यह उत्सव है। अतः इस दिन प्रत्येक आर्य परिवार अपने घरों में दीपमालिका जलाये। ओ३म् का अरुण रंग का ध्वज प्रत्येक आर्य घर पर तथा समाज मन्दिर पर लहराया जाना अभीष्ट है। इसी दिन आर्य समाज मन्दिरों और संस्थाओं में भी रोशनी की जाये।

[६] वेद प्रचार निधि के लिये अपील—

इस दिन की सार्वजनिक सभा में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की वेद प्रचार निधि (फंड) के लिये अधिक से अधिक धन संग्रह करके सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ६ के पते पर उसे तुरन्त भेज दिया जाये जिससे सभी देशदेशान्तरों में वैदिक धर्म प्रचार कार्य का अधिक विस्तार कर सके। सब प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं की सहमति से सभा ने गत कई वर्षों से निश्चय किया है कि इस आर्य समाज स्थापना दिवस के पवित्र उत्सव के उपलक्ष में प्रत्येक आर्य समाज अपने सभासदों से उनके परिवार के प्रत्येक व्यक्ति से और प्रत्येक आर्य और अन्यों से पुष्कल धन एकत्र करके सभा की वेद प्रचार निधि के लिये भेजें। आशा है आप इस वर्ष पूरे उत्साह से दान की राशि एकत्र करके भेजने की कृपा करेंगे। कृपया इस आवश्यक कर्तव्य को न भूलिये ताकि पुनः इस दान को एकत्र करने में समय और शक्ति का व्यर्थ व्यय न करना पड़े। वर्ष भर के बाकी सब दिन आपकी सभा के अपने कार्यों के लिये धन संग्रह के हैं।

[७] नवीन आर्य समाजों की स्थापना—

यह भी यत्न किया जाये कि उस दिन अधिक संख्या में निकटवर्ती स्थानों में जहां आर्य समाज नहीं हैं आर्य समाजें स्थापित की जाएं।

भवदीय
इन्द्र विद्यावाचस्पति
सभा प्रधान

धर्मार्य सभा के समस्त सदस्यों की सेवा में

परिपत्र

विद्वद्वर्य सादर नमस्ते ।

सार्वदेशिक सभा द्वारा सन्ध्या पद्धति, नित्य यज्ञ पद्धति, साप्ताहिक सत्सग पद्धति, साप्ताहिक सत्सग यज्ञ पद्धति प्रकाशित होने जारही है। यदि इन पद्धतियों के सम्बन्ध मे आप कोई सम्मति देना चाहें तो शीघ्र भेज देवें।

नित्य यज्ञ की पद्धति पचमहायज्ञ विधि और सस्कार विधि के गृहाश्रम प्रकरण मे ऋषि न लिखी है। इनके सम्बन्ध मे सार्वदेशिक धर्मार्य सभा मे यह निश्चय हो चुका है कि पचमहायज्ञ विधि वर्णित यज्ञ पद्धति आहिताग्नि के लिये है और सस्कार विधि गृहाश्रम प्रकरण प्रोक्त सब साधारण के लिये नित्य यज्ञ की पद्धति है।

गृहाश्रम मे जो यज्ञ की पद्धति है उसमे प्रार्थना के आठ मन्त्र "अयन्त इध्म आत्मा' से पचाहुतिया नहीं हैं। यहा तक कि "अमृतापस्त रणमसि" आदि से तीन आचमन और अङ्ग स्पश भी नहीं हैं। वहा केवल सन्ध्या की पद्धति का समाप्त करते हुए यह लिखा है कि—

(श नो देवो०) इस मन्त्र से तीन आचमन करके अग्नि होत्र का आरम्भ करें। यहा यह भी विचारणीय है कि यह आचमन सन्ध्या का चरमाङ्ग है या अग्निहोत्र का पूर्वाङ्ग।

अग्नि होत्र प्रकरण मे केवल नीचे लिखे विधान ही हैं—

(१) अग्न्याधान (२ समिदाधान
(३) जल सिचन (४)आघारावाज्य भागा हुतिया ४
(५) सूर्यो ज्योति० ४ (६) अग्निर्ज्योति
(७) भूरग्नये प्र णाय०४ (८) आपो ज्योती १
(९) या मेधा० १ (१०) विश्वानि देव० १
(११ अग्ने नय सुपथा १

सर्व योग १६

कम से कम १६ आहुतियों का जो ऋषि निर्दिष्ट विधान है वह यही है। साय प्रात मे अग्निर्ज्योति० और सूर्यो ज्योति मे विकल्प है अत उनकी सख्या एक बार ही जोडी है।

विचारणीय बात यह है कि—

क क्या नित्य यज्ञ पद्धति मे प्रार्थना के आठ मन्त्र न रखे जावें ?

ख—क्या आचमन और अङ्ग स्पर्श भी न रखा जावे ?

ग—पंचाहुतियां भी क्या नित्य यज्ञ में नहीं है ?

घ—संस्कार विधि लिखित सन्ध्या की पद्धति के अन्त में जो ये शब्द हैं कि—

(शं नो देवी०) इस मन्त्र से तीन आचमन करके अग्नि होत्र का आरम्भ करें।

एक सम्मति यह भी है कि -

१—नित्य यज्ञ की आहुतियों में विश्वानि देव और अग्ने नय सुपथा० की आहुति ज्ञापक है कि आरम्भ में प्रार्थना के ८ मन्त्र बोले गये हैं।

२—जल सिंचन ज्ञापक है पंचाहुतियों का।

३—अमृतोपस्तरणमसि० आदि आचमन और अंग स्पर्श स्वतः सिद्ध यज्ञ के अनिवार्य अंग हैं।

४—अग्न्याधान में अग्नि समिधा उद्बुध्यस्वाग्ने० भी सम्मिलित समझना चाहिये और अग्न्यानयन आदि भूर्भुवः स्वः भी।

इस सम्मति के अनुसार नित्य यज्ञ पद्धति नीचे लिखी बनती है—

१—अमृतोपस्तरणमसि०...आचमन
२—वाङ्म आस्येऽस्तु०...अंग स्पर्श
३—भूर्भुवः स्वः...अग्न्यानयन आदि
४—भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव०... अग्न्याधान
५—उद्बुध्यस्वाग्ने० अग्नि समिन्धन
६—अयन्त इध्म० आदि...समिदाधान
७—अयन्त इध्म० पंचाहुतियां
८—अदितेऽनुमन्यस्व०.. जलसिंचन
९—अग्नये स्वाहा० ...आघारावाज्यभागाहुति
१०—सूर्यो ज्योति०
११—अग्निर्ज्योति०
१२—भूरग्नये प्राणाय०
१३—आपो ज्योति०
१४—यां मेधां०
१५—विश्वानि देव०
१६—अग्ने नय सुपथा०
१७ - सर्वं वै पूर्णं ँ स्वाहा—३ पूर्णाहुतियां

नोट—अंग स्पर्श के पश्चात प्रार्थना के ८ मन्त्र भी रहेंगे।

यह नित्य यज्ञ की पद्धति रखी जावे या संस्कार विधि गृहाश्रम प्रकरण में जितनी प्रतिपदोक्त पद्धति हैं उतनी ही निर्धारित की जावे। उपरोक्त बातों के सम्बन्ध में अपनी विद्वत्तापूर्ण सम्मति जो उनके स्वाध्याय के आधार पर बनी हो शीघ्र सार्वदेशिक सभा को भेजने का कष्ट करें। इस विषय पर शीघ्र अन्तिम निर्णय करके पद्धतियां निर्धारित कर प्रकाशित की जावेंगी।

निवेदक—

आचार्य विश्वश्रवाः
मन्त्री, सार्वदेशिक धर्मार्य सभा,
श्रद्धानन्द बलिदान भवन, दिल्ली–६

सभा का वार्षिक साधारण अधिवेशन

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का वार्षिक साधारण अधिवेशन २८ और २९ अप्रैल १९५६ को दयानन्द वाटिका देहली में होगा।

सार्वदेशिक पत्र (हिन्दी मासिक)

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश १० शिलिङ्ग। अर्द्ध वार्षिक ३ स्वदेश, ६ शिलिङ्ग विदेश।

२. एक प्रति का मूल्य ।) स्वदेश, ।=) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क वा नमूने की प्रति का मूल्य ।=) स्वदेश, ।।) विदेश।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये। चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा। पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने वा ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न देने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है कि उनकी इच्छा वी० पी० द्वारा चन्दा देने की है।

४. सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख़ को प्रकाशित होता है। किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय मे अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा। डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं। अत समस्त ग्राहको को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये।

५ सार्वदेशिक का वर्ष १ मार्च से प्रारम्भ होता है अंक उपलब्ध होने पर बीच वर्ष में भी ग्राहक बनाए जा सकते हैं।

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
६. पूरा पृष्ठ (२०×३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा " "	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई ,,	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	२०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

७ सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

—व्यवस्थापक

'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(१) यमपितृ परिचय (प० प्रियरत्न आर्य) २)
(२) ऋग्वेद में देवृकामा ,, -)
(३) वेद में असित् शब्द पर एक दृष्टि ,, -)।
(४) आर्य डाइरेक्टरी (सार्व० सभा) १।)
(५) सार्वदेशिक सभा का
सत्ताईस वर्षीय कार्य विवरण प्र० २)
(६) स्त्रियों का वेदाध्ययन अधिकार
(प० धर्मदेव जी वि० वा०) १।)
(७) आर्य समाज के महाधन
(स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी) २॥)
(८) आर्यपर्व पद्धति (श्री प० भवानीप्रसादजी) १।)
(९) श्री नारायण स्वामी जी की स० जीवनी
(प० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) -)
(१० आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण(पं०इन्द्रजी) ।=)
(११) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या
(अनुवादक प० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) ।)
(१२) आर्य मन्दिर चित्र (सार्व० सभा) ।)
(१३) वैदिक ज्योतिष शास्त्र(प०प्रियरत्नजी आर्य) १॥)
(१४) वैदिक राष्ट्रीयता (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।)
(१५) आर्य समाज के नियमोपनियम(सार्व सभा) -)॥
(१६) हमारी राष्ट्रभाषा (प०धर्मदेवजी वि० वा०) ।-)
(१७) स्वराज्य दर्शन स०(प०लक्ष्मीदत्तजी दीक्षित) १)
(१८) राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती) ॥)
(१९) योग रहस्य (श्री नारायण स्वामी जी) १।)
(२०) मृत्यु और परलोक ,, १।)
(२१) विद्यार्थी जीवन रहस्य ॥=)
(२२) प्राणायाम विधि ,, =)
(२३) उपनिषदें — ,,
ईश केन कठ प्रश्न
।=) ॥) ॥) ।=)
मुण्डक माण्डूक्य ऐतरेय तैत्तिरीय
(छप रहा है) ।) ।) १)
(२४) बृहदारण्यकोपनिषद् ४)
(२५) आर्यजीवनगृहस्थधर्म(प०रघुनाथप्रसादपाठक)॥=)
(२६) कथामाला ,, ॥।)
(२७) सन्तति निग्रह , १।)
(२८) नैतिक जीवन स० ,, २॥)
(२९) नया संसार ,, ≡)
(३०) आर्य शब्द का महत्व ,, -)॥
(३१) मांसाहार घोर पाप और स्वास्थ्य विनाशक -)
(३२) मुर्दे को क्यों जलाना चाहिए -)
(३३) दश नियम व्याख्या -)॥
(३४) हकीकते हकीकत उर्दू
(डा० ज्ञानचन्द जी आर्य) ॥=)
(३५ वर्ण व्यवस्था का वैदिक स्वरूप , १॥)
(३६) धर्म और उसकी आवश्यकता ,, १)
(३७) भूमिका प्रकाश (पं० द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री) १।)
(३८) एशिया का वैनिस (स्वा० सदानन्द जी) ॥।)
(३९) वेदों में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां
(प० प्रियरत्न जी आर्य) १)
(४०) सिंधी सत्यार्थ प्रकाश २)
(४१) सत्यार्थ प्रकाश और उस की रक्षा में -)
(४२) ,, ,, आन्दोलन का इतिहास ।=)
(४३) शांकर भाष्यालोचन (प०गंगाप्रसादजी उ०) ५)
(४४) जीवात्मा ४)
(४५) वैदिक मणिमाला ।=)
(४६) आस्तिकवाद , ३)
(४७) सर्व दर्शन संग्रह ,, १)
(४८) मनुस्मृति ,, ५)
(४९) आर्य स्मृति , १॥)
(५०) जीवन चक्र ,, ५)
(५१) आर्योदयकाव्यम् पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध, १।।), १॥)
(५२) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौतम) ॥=)
(५३) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर
(श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी) २।) रिया० १॥)
(५४) भजन भास्कर (संग्रहकर्त्ता
श्री प० हरिशंकरजी शर्मा १॥)
(५५) मुक्ति से पुनरावृत्ति ,, ,, ।=)
(५६) वैदिक ईश वन्दना (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।=)॥
(५७) वैदिक योगामृत ,, ॥=)
(५८) कर्त्तव्य दर्पण सजिल्द (श्री नारायण स्वामी) ॥।)
(५९) आर्यवीरदल शिक्षणशिविर(ओमप्रकाशपुरुषार्थी) ।=)
(६०) ,, ,, ,, खेलमाला ,, १।।)
(६१) ,, ,, गीतांजलि(श्री रुद्रदेव शास्त्री) ।=)
(६२) ,, ,, भूमिका =)
(६३) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी २।)

मिलने का पता —सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, बलिदान भवन, देहली ६ ।

स्वाध्याय योग्य साहित्य

(१) श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की पूर्वीय अफ्रीका तथा मौरीशस यात्रा २)
२) वेद की इयत्ता (श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी) १॥)
(३) दयानन्द दिग्दर्शन(श्री स्वा० ब्रह्ममुनिजी) ॥)
(४) ईंजील के परस्पर विरोधी वचन ।≊)
(पं० रामचन्द्र देहलवी)
(५) भक्ति कुसुमांजलि (पं० धर्मदेव वि० वा० ॥)
(६ वैदिक गीता
(श्री स्वा० आत्मानन्द जी) ३)
(७) धर्म का आदि स्रोत
(पं० गंगाप्रसाद जी एम. ए.) २)
(८) भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक
(श्री राजेन्द्र जी) ॥)
(९) वेदान्त दर्शनम् (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ३)
(१०) संस्कार महत्व
(पं० मदनमोहन विद्यासागर जी) ॥)
(११) जनकल्याण का मूल मन्त्र ,, ॥)
(१२) वेदों की अन्तः साक्षी का महत्व ,, ॥≈)
(१३) आर्य घोष ,, ॥)
(१४) आर्य स्तोत्र ,, ॥)
(१५) स्वाध्याय संग्रह (स्वा० वेदानन्दजी) २)
(१६) स्वाध्याय संदोह ,, ४)
(१७) सत्यार्थ प्रकाश सजिल्द १॥≈)
(१८ महर्षि दयानन्द ॥≈

English Publications of Sarvadeshik Sabha.

1. Agnihotra (Bound) (Dr. Satya Prakash D. Sc.) 2/8/-
2. Kenopanishat (Translation by Pt. Ganga Prasad ji, M. A.) -/4/
3. Kathopanishat (Pt. Ganga Prasad M A Rtd. Chief Judge) 1/4/-
4. The Principles & Bye-laws of the Aryasamaj -/1/6
5. Aryasamaj & International Aryan League Pt. Ganga Prasad ji Upadhyaya M. A.)-/1/-
6 Voice of Arya Varta (T. L. Vasvani) -/2/-
7. Truth & Vedas (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/6/-
8. Truth Bed Rocks of Aryan Culture (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/8/-
9. Vedic Culture (Pt. Ganga Prasad Upadhyaya M. A) 3/8/-
10. Aryasamaj & Theosophical Society (Shiam Sunber Lal) -/3/-
10. Wisdom of the Rishis (Gurudatta M. A.) 4/ /-
11. The Life of the Spirit (Gurudatta M.A.) 2/ /-
12. A Case of Satyarth Prakash in Sind (S. Chandra) 1/8/-
13. In Defence of Satyarth Prakash (Prof. Sudhakar M A.) -/2/-
14. Universality of Satyarth Prakash /1/
15. Tributes to Rishi Dayanand & Satyarth Prakash (Pt. Dharma Deva ji Vidyavachaspati) -/8/
16 Political Science (Mahrishi Dayanand Saraswati) -/8/-
17. Elementary Teachings of Hindusim -/8/- (Ganga Prasad Upadhyaya M.A.)
18. Life after Death ,, 1/4/-

Can be had from:—**SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA, DELHI 6**

नोट--(१) आर्डर के साथ २५ प्रतिशत (चौथाई) धन अगाऊ रूप में भेजें।
(२) थोक ग्राहकों को नियमित कमीशन दी जाएगी।

धर्म प्रेमी स्वाध्याय शील नर-नारियों के लिये

* शुभ सूचना *

श्री महात्मा नारायणस्वामी जी कृत, अब तक लगभग १२ संस्करणों में से निकली हुई अत्यन्त लोकप्रिय पुस्तक

कर्त्तव्य दर्पण

का नया सस्ता संस्करण

साईज $\frac{२० \times ३०}{१२}$ पृष्ठ ३८४ सजिल्द,

मूल्य केवल ।।।)

आर्यसमाज के मन्तव्यों, उद्देश्यों, कार्यों धार्मिक अनुष्ठानों, पर्वों तथा व्यक्ति और समाज को ऊंचा उठाने वाली मूल्यवान सामग्री से परिपूर्ण।

मांग धड़ाधड़ आ रही है अतः आर्डर भेजने में शीघ्रता कीजिये, ताकि दूसरे संस्करण की प्रतीक्षा न करनी पड़े।

स्वाध्याय प्रेमी जनता के लिए बहुमूल्य उपहार

स्वाध्याय सन्दोह

वैदिक मणियों का अलभ्य संग्रह

साइज $\frac{२० \times ३०}{८}$ पृ० स० ५००, मू० ६)

रियायती मूल्य ४), एक प्रति का डाक खर्च १=), तीन प्रतिया १।। सेर के रेल पार्सल द्वारा कम व्यय मे भेजी जा सकेंगी।

दिन प्रतिदिन के व्यवहार से सम्बद्ध एव जीवन को ऊंचा उठाने वाले चुने हुए वेद मन्त्रों की विद्वत्तापूर्ण व्याख्या।

व्याख्याकार

वेदों के सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ। स्वाध्याय तथा भेट करने और पुस्तकालयों मे रखने योग्य प्रामाणिक ग्रन्थ, धड़ाधड़ मांग आ रही है।

दयानन्द सिद्धान्त भास्कर

सम्पादक—श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी

द्वितीय संस्करण, मू. २।) प्रति, 'रियायती' मू. १।।) प्रति

इस पुस्तक की विशेषता यह है कि भिन्न- भिन्न महत्वपूर्ण विषयों पर महर्षि दयानन्दसरस्वती जी महाराज की भिन्न-भिन्न पुस्तकों व पत्र-व्यवहार तक मे वर्णित मत को एक स्थान पर संग्रह किया गया है। आप जब किसी विषय में महर्षि की सम्मति जानना चाहें तो वही प्रकरण इस पुस्तक मे देख ले। पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है।

यह पुस्तक सम्पादक के लगभग ११ वर्ष के कठिन परिश्रम का फल है। उनका परिश्रम सराहनीय है।

मिलने का पता—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
दिल्ली–६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर

ऋग्वेद

यजुर्वेद

॥ ओ३म् ॥ गुरुकुल कांगड़ी

सार्वदेशिक

वर्ष ३१

मूल्य स्वदेश ५

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ।।)

अंक ३

वैसाख २०१३

मई १९५६

सम्पादक—
सभा मन्त्री

सहायक सम्पादक—
श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषय-सूची

१. वैदिक प्रार्थना		१०५
२. सम्पादकीय		१०६
३. पूर्व ऋषियों के मार्ग पर चल	(श्री स्वामी गंगागिरि जी महाराज)	११७
४. आध्यात्मिक अनुभूति और नैतिक उत्तरदायित्व	(श्री पं० ऋषिराम जी B A)	११९
५. शाकाहार अथवा संसार व्यापी दुर्भिक्ष		१२१
६. महर्षि दयानन्द के प्रति अन्याय	(श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक)	१२३
७. महर्षि दयानन्द	(संचार मन्त्री श्री जगजीवन राम जी)	१२८
८. शंका समाधान		१३१
९. स्वाध्याय का पृष्ठ		१३५
१०. गुरुकुल महत्व		१३८
११. आर्य सन्तान (कविता)	(श्रीमती शांति देवी एम० ए०)	१४१
१२. बाल-जगत्		१४२
१३. महिला जगत्		१४३
१४. विचार विमर्श		१४४
१५. स्वास्थ्य सुधा	(श्री विजय कुमार पाठक)	१४५
१६. सूचनाएं तथा वैदिक धर्म प्रसार		१४६
१७. सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का वार्षिक अधिवेशन		१४९

॥ ओ३म् ॥

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३१ { मई १९५६, वैसाख २०१३ वि०, दयानन्दाब्द १३२ } अङ्क ३

वैदिक प्रार्थना

यो नः पिता जनिता यो विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।

यो देवानां नामधा एक एव तꣳ सम्प्रश्नं भुवना यन्त्यन्या ॥ यजु १७। २७

व्याख्यान हे मनुष्यो! जो अपना पिता (नित्य पालन करने वाला) जनिता (जनक) उत्पादक "विधाता" सब मोक्ष सुखादि कामों का विधायक (सिद्धिकर्त्ता) "विश्वा" सब भुवन लोक-लोकान्तर धाम अर्थात् स्थिति के स्थानों को यथावत् जानने वाला सब जातमात्र भूतों में विद्यमान है जो दिव्य सूर्यादिलोक तथा इन्द्रियादि और विद्वानों का नाम व्यवस्थादि करने वाला एक अद्वितीय वही है जो अन्य कोई नहीं, वही स्वामी पितादि हम लोगों का है इसमें शंका नहीं रखनी तथा उसी परमात्मा के सम्यक् प्रश्नोत्तर करने में विद्वान् वेदादि शास्त्र और प्राणिमात्र प्राप्त हो रहे हैं क्योंकि सब पुरुषार्थ यही है कि परमात्मा, उसकी आज्ञा और उसके रचे जगत् का यथार्थ से निश्चय (ज्ञान) करना उसी में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चार प्रकार के पुरुषार्थ के फलों की सिद्धि होती है अन्यथा नहीं इस हेतु से तन, मन, धन और आत्मा इनसे प्रयत्न पूर्वक ईश्वर के साहाय्य से सब मनुष्यों को धर्मादि पदार्थों की यथावत् सिद्धि अवश्य करनी चाहिये।

सम्पादकीय

शक्ति और शान्ति में समन्वय

आर्य की सन्ध्या का पहला मन्त्र "शम्" शब्द से आरम्भ होता है। आर्य ईश्वर से प्रार्थना करता है कि हमें शक्ति प्राप्त हो। सारा शान्ति प्रकरण 'शान्ति' की प्रार्थनाओं से भरा पड़ा है। हमारे सब कार्य "द्यौः शान्ति" इस मन्त्र से समाप्त होते हैं। यह स्पष्ट है कि वैदिक धर्म में आस्था रखने वाले मनुष्य का ध्येय शान्ति के अतिरिक्त कोई और हो ही नहीं सकता।

वेदों में तेजस्विता पूर्ण प्रार्थनाओं और उपदेशों की भी कमी नहीं है। स्मृतियों में शायद ही ऐसी कोई स्मृति हो जिसमें राजधर्म का विस्तृत वर्णन न हो। शस्त्रों और अस्त्रों का निर्माण तथा व्यवहार क्षत्रिय का आवश्यक धर्म है।

बलमसि बलं मयि धेहि,
वीर्यमसि वीर्यंमयि धेहि,
मन्युरसि मन्यु मयि धेहि,
ओजस्योजो मयि धेहि।

इस मन्त्र में परमात्मा से तेज, बल, वीर्य, ओज और मन्यु की प्रार्थना की गई है। मन्त्र के अन्तिम पद में सहनशील परमात्मा से सहन शक्ति की प्रार्थना भी की गई है।

ऋग्वेद के निम्नलिखित मन्त्र में दुष्ट शत्रुओं को पराजित करने के लिए सेनाओं का संग्रह करने का विधान है।

स्थिरा वः सन्त्वायुधा पराणुदे,
वीलू उत प्रतिष्कभे। युस्माकमस्तु,
तविषी पनीयसी मा मर्त्यस्य
मायिनः

हे मनुष्यो! तुम्हारे अस्त्र और शस्त्र शत्रुओं के पराजित करने के लिए और रोकने के लिए प्रशंसित तथा दृढ़ हों। तुम्हारी सेना ऐसी बलवती हो कि तुम किसी छल कपट वाले मनुष्य के वश में न आ सको और उससे परास्त न हो। इस प्रकार हम देखते हैं कि जहां एक ओर वेद मनुष्य को मन्यु और बल धारण करने का उपदेश देता है, वहां साथ ही शान्ति प्राप्त करने की प्रेरणा भी देता है। वेदों में और वैदिक शास्त्रों में शान्ति और शक्ति इन दोनों के लिए प्रार्थना मिलती है।

मोटी दृष्टि से देखें तो शान्ति और शस्त्र में विरोध प्रतीत होता है। शान्ति शब्द के अन्तर्गत व्यक्तिगत, सामाजिक और नैतिक सभी प्रकार की शांति आजाती है। शास्त्र कहते हैं कि त्रिविध शान्ति मनुष्य का ध्येय है। उसके सब प्रयत्नों का अन्तिम केन्द्र विन्दु यही है। आज भी नैतिक जगत में सबसे अधिक चर्चा शान्ति की ही सुनने में आती है। प्रत्येक राष्ट्र के मुख्य राजनीतिज्ञ डंके की चोट से यह घोषणा करते नहीं थकते कि हमारे देश की राजनीति का लक्ष्य शान्ति की स्थापना करना है। जितनी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थायें स्थापित हुई हैं, या राष्ट्रों के जितने पैक्ट और गुट्ट बनाये गये हैं, उनका उद्देश्य भी शान्ति की स्थापना करना ही बताया जाता है यहां तक कि मनुष्य-जाति का नाश करने की शक्ति रखने वाले अणुबम के स्वामी भी यही दावा करते हैं कि उनका उद्देश्य अणुबम द्वारा विश्व में शान्ति को स्थापना करना है।

हमारे शास्त्रों की एक बड़ी विशेषता यह है कि उनमें जिस स्पष्टता से शान्ति की उपादेयता बतलाई गई है, उसी विशेषता से शक्ति की उपादेयता का प्रतिपादन भी किया गया है। एक आर्य प्रतिदिन परमात्मा से केवल शान्ति ही नहीं मांगता, बल, वीर्य, ओज और मन्यु भी मांगता है। वेदों और अन्य आर्य ग्रन्थों में शान्ति और शक्ति दोनों कोही मनुष्य और मनुष्य समाज की अनिवार्य आवश्यकतायें माना गया है।

शान्ति और शक्ति का समन्वय सर्वथा स्पष्ट है। शान्ति साध्य है, और शक्ति साधन है। शक्ति के बिना शान्ति स्थापित नहीं हो सकती यह बात इतनी स्पष्ट है कि इसे सिद्ध करने के लिए किसी लम्बी युक्तिशृङ्खला की आवश्यकता नहीं है। यदि एक शक्ति सम्पन्न देश के पड़ौस में एक शक्तिहीन और निर्बल देश विद्यमान हो तो स्वाभाविक है कि बलवान् देश निर्बल देश को खाने के लिये सदा लालायित रहेगा और एक न एक दिन उसे खा भी जायगा। यदि दोनों देश शक्ति सम्पन्न हों तो प्रथम तो वे दोनों एक दूसरे से बचने की चेष्टा करते रहेंगे, और यदि कभी युद्ध होगा भी तो एक दूसरे को नष्ट नहीं कर सकेंगे। इस जीवन संघर्ष से भरे हुए संसार में वही जीवित रह सकता है जिसमें बाहर की टक्करों को सह कर भी जीतने और जीने की शक्ति है, शान्ति कायम रहे इसके लिये आवश्यक है कि समाज का प्रत्येक अंग शक्ति सम्पन्न हो

यहां एक प्रश्न उत्पन्न हो सकता है कि क्या शक्ति के बढ़ जाने का यह स्वाभाविक परिणाम न होगा कि व्यक्ति और राष्ट्र शक्ति के मद में मस्त होकर आपस में टकरा जायें? व्यावहारिक जगत् में यह देखा भी जाता है कि शक्ति की तलाश और शक्ति की दौड़ प्रायः देशों को संग्राम के मैदान में खेंच ले जाती है। उसका समाधान क्या है? उसका समाधान भी यजुर्वेद के उस मन्त्र में पढ़ा हुआ है जिसमें प्रभु से बल की प्रार्थना की गई है।

"सहोऽसि सहो मयि धेहि।"

हे परमात्मन्, तुम सहनशील हो, मुझे सहनशीलता प्रदान करो। शक्ति सम्पन्न होने के साथ साथ जिस गुण के पुष्ट होने की अत्यन्त आवश्यकता है, वह है सहिष्णुता। हम एक दूसरे के साथ रहना सीखें, एक दूसरे की विशेषताओं का आदर करना और उन्हें सहना अपना कर्तव्य समझें, हम "जियें और जीने दें" के सिद्धान्त का दृढ़ता से पालन करें

इस प्रकार हम देखते हैं कि शान्ति और शक्ति का समन्वय सहिष्णुता द्वारा होता है। 'मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे' इस वेद वाक्य का यही अभिप्राय है।

हमें स्मरण रखना चाहिये कि—

(१) हमारा लक्ष्य त्रिविध शान्ति है।

(२) शान्ति की प्राप्ति के लिये आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति तथा राष्ट्र हर प्रकार से शक्ति सम्पन्न हो।

(३) यह तभी सम्भव है यदि सहिष्णुता को भी शक्ति का अविवार्य सहचर मान लिया जाय। सहिष्णुता से शून्य शक्ति बर्बरता के नाम से पुकार जाती है।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियाँ ❀

ज्योतिषियों के विरुद्ध जिहाद

सहयोगी हिन्दुस्तान यत्र तत्र सर्वत्र के स्तम्भ में 'ज्योतिषियों के विरुद्ध जिहाद' शीर्षक से लिखता है —

'यह समाचार सुनकर भारत के ज्योतिषियों के पांव तले से जमीन खिसक गई होगी कि अब डाक्टर लोग वैज्ञानिक उपायोंसे बिल्कल निश्चित रूप में बता सकते हैं कि किसी स्त्री के गर्भ से होने वाली सन्तान पुत्री होगी या पुत्र। ब्रिटिश वैज्ञानिक डा० सी० जे० ड्यूहर्स्ट का कहना है कि गर्भस्थ सन्तान को चारों ओर से घेरे हुए जो द्रव्य पदार्थ रहता है उसे एक पिचकारी से निकाल कर और अणुवीक्षण यन्त्र से उसको परीक्षा कर असंदिग्ध रूप से यह बताया जा सकता है कि गर्भस्थ सन्तान कन्या है या पुत्र। अभी इस वैज्ञानिक प्रक्रिया को पूर्ण नहीं किया जा सका, क्योंकि इससे जिस स्त्री के गर्भ की परीक्षा की जाती है उसकी मृत्यु का भी भय

रहता है। किन्तु यदि किसी समय इस प्रक्रिया को बिल्कुल पूर्ण और खतरे से रहित बनाया जा सका तो उन ज्योतिषियों का क्या होगा जो बेचारे 'पुत्रो न पुत्री" की चातुर्यपूर्ण भाषा में आय के लिये भावी सन्तान की भविष्य वाणी कर अपने लिए थोड़ा बहुत जुगाड़ कर लिया करते हैं।

आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सबसे पहले फलित ज्योतिष के विरुद्ध जिहाद बोला था। उसके बाद प्रधान मन्त्री नेहरू जी भी ज्योतिषियों के पीछे हाथ धोकर पड़ गये और अब वैज्ञानिक फलित ज्योतिषियों को विस्थापित करने में लगे हुवे हैं। यद्यपि वैज्ञानिकों के लिये यह नई बात नहीं है। उन्होंने बहुत पहले ही फलित ज्योतिष के अंग हस्तसामुद्रिक को 'बच्चों का खेल' घोषित कर दिया था. किन्तु नेहरू जी का जिहाद एकदम नई चीज है। आजादी मिलने के बाद नेहरू जी समाज के दो वर्गों के पीछे, जो अब तक प्रतिष्ठित समझे जाते रहे हैं, लट्ठ लेकर पड़ गये हैं। इनमें से एक हैं वकील और दूसरे हैं ज्योतिषी। वकीलों के प्रति उनके विद्रोह की बात समझ में आ सकती है क्योंकि नेहरू जी ने स्वय वकालत पास की थी। यद्यपि बाद में राजनीति का आकर्षण उनके लिये अधिक प्रबल सिद्ध हुआ। यह सम्भव है कि वकीलों के गुण दोष से वह परिचित हो गये हों और अपने उस ज्ञान के आधार पर ही उन्होंने अपनी यह धारणा बना ली हो कि वकील वर्ग की समाज के लिये कोई आवश्यकता नहीं है। परन्तु ज्योतिषियों के खिलाफ उनके विद्रोह का क्या कारण है? नेहरू जी का ज्योतिषियों से कभी साबिका पड़ा या नहीं, यह नहीं कहा जा सकता, किन्तु यह बात पत्रा देखे या मीन-मेष-वृष तुला किये बिना भी निश्चित रूप से कही जा सकती है कि ज्योतिषियों का काम नेहरू जी के बिना नहीं चल सकता और साल में दो-चार शुभ मुहूर्त ऐसे आ ही जाते हैं जबकि उन्हें नेहरू जी की कुंडली में आंखें गड़ा कर उनके शुभ अशुभ ग्रहों की छान बीन करनी पड़ती है। पहले ज्योतिषी सौर वर्ष या चान्द्र वर्ष के प्रारम्भ अथवा सूर्य ग्रहण और चन्द्र ग्रहण के मौकों पर ही पोथी पत्रे खोलकर वर्ष फल निकाला करते थे परन्तु अब कम्बख्त १५ अगस्त और २६ जनवरी का दिन और आ गये हैं जबकि उन्हें देशवासियों के उपकार के लिये नेहरू जी के अनिवार्य ग्रह-कुग्रह देख कर स्वाधीनता और गणराज्य का वर्षफल निकालना पड़ता है।

नेहरू जी को शायद यह मालूम नहीं है कि ज्योतिष आम जनता का शास्त्र और विज्ञान है। दुनियां में ऐसे ऐसे ज्योतिषी भरे पड़े हैं जो पोथी पत्रा देखकर ही नहीं, जिज्ञासु के मुंह से किसी फूल के नाम या अंक को सुनकर भी उस का वर्षफल बता सकते हैं। यदि नेहरू जी का यह जिहाद सफल हो गया तो कितने देशवासी अपने रोजगार से वंचित हो जायेंगे। यह हिसाब लगाकर नहीं, केवल पत्रा देख कर ही बताया जा सकता है। इसलिये अब समय आ गया है जब कि ज्योतिषियों को संघ बना कर कम से कम नेहरू जी से तो मोर्चा लेना ही चाहिये। हालांकि विज्ञान से मोर्चा लेना उनके लिये सम्भव नहीं है। उन्हें चाहिये कि भविष्य में वे वर्षफल निकालने के शुभ अवसरों पर कम से कम नेहरू जी की कुंडली देखने की तकलीफ न करें और अश्रद्धालु लोगों को यह न बताए कि उनकी कुंडली में कहाँ कौन सा भला योग पड़ा है और कौनसा दुष्ट। परन्तु इसमें भी एक कठिनाई है। उनके इस बायकाट से नेहरू जी का शायद कुछ बने बिगड़ेगा नहीं, किन्तु मुसीबत खुद ज्योतिषियों पर आ जायगी, क्योंकि नेहरू नाम का जो नया दुर्ग्रह उनकी जन्म कुंडली में आ पड़ा है, उसे टालने का कोई विधान भृगु मुनि अपनी संहिता में कर गये हों, इसमें संदेह है।"

भारत में ईसाई प्रचारक

लन्दन के मैनचेस्टर गार्जियन ने अभी प्रकाशित हुए 'भारतवर्ष में ईसाई प्रचारक' शीर्षक से एक अग्रलेख लिखा है। उसका प्रासंगिक उपयोगी भाग इस प्रकार है :--

"भारत के स्वतन्त्र हो जाने के पश्चात अमेरिकन ईसाई प्रचारकों ने बहुसंख्या में भारत में प्रवेश किया जिनमें से कुछ स्वतन्त्र थे और उन पर चिरकाल से स्थापित सोसाइटियों का नियन्त्रण था। दुर्भाग्य पूर्ण प्रवृत्ति से आविर्भूत हुए इन बहु संख्यक प्रचारकों ने हिमालय पर्वत की उपत्यकाओं में निवास करने वाले जंगली लोगों में प्रचार करना चाहा। यत: इनमें से कुछ लोगों में मुख्यतया नागाओं में राजनैतिक कारणों से असन्तोष था अत: भारतीय शासन का सन्देह करना स्वाभाविक था।

स्वभाव वश बहुत से अमेरिकन ईसाई प्रचारक भारतीय शासन के विरुद्ध हैं। जिस भावना के वशीभूत हो वे लोग ब्रिटिश राज्य काल में ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के विरुद्ध कांग्रेस के पक्षपाती थे, वही भावना कांग्रेस शासन के विरोधी तत्वों का साथ देने के लिए उन्हें प्रेरित कर सकती है। विगत कुछ वर्षों में भारत का उत्तर पूर्व का भाग वह सीमावर्ती प्रदेश बन गया है जिसकी भारत को बड़ी सतर्कता से चौकसी करनी है और इसी सीमा में बहुत से ईसाई प्रचारक पहुंचे हुए हैं। अमेरिका की वैदेशिक नीति की भावना को समक्ष रखते हुए भारत का प्रचारकों की हलचल के प्रति सतर्क हो जाना समझ में आने वाली बात है भले ही ईसाई प्रचारकों का अपने देश की गवर्नमेण्ट के साथ किसी प्रकार का सम्बन्ध न हो।

इस बात के होते हुए भी भारत के नये उपायों के पीछे अन्य मनो भावनाएं भी काम करती हैं। भारत सरकार द्वारा जब उन उपायों की पहली बार गत वर्ष कुछ अनिश्चित रूप में घोषणा हुई थी तब वे उपाय कट्टर पन्थी हिन्दुओं के आन्दोलन और आग्रह के परिणाम स्वरूप ही उद्घोषित किये गये थे। उन्होंने सदैव ही ईसाइयत के प्रचार को पश्चिम से आने वाले विविध अभिशापों में से एक निकृष्टतम अभिशाप माना है। उनका विश्वास है कि राजनैतिक आक्रमण के अग्रिम दलों के रूप में ही मिश्नरी लोग भारत में आते हैं, और वे हिन्दू सभ्यता के समन्वय को भंग करने का लक्ष्य रखने वाले किसी भी आन्दोलन से रुष्ट होते हैं।

ईसाइयों के प्रचार की भारतीयों के हृदयों में कैसी दुःखद स्मृतियां हैं इसको पाश्चात्य जन सदैव नहीं समझ पाते। ईसाइयत के प्रति महान हिंदू विद्वानों और महान प्रतिभाशाली विशिष्ट व्यक्तियों के विचारों को पढ़कर आश्चर्य होता है। अछूतों और निम्न वर्गों में ईसाइयत का प्रचार पंचमांगियों की एक श्रेणी की सृजना समझी जाती है। यह भावना इतनी प्रबल है कि भारतीय गवर्नमेंट के लिए देर सवेर में इस सम्बन्ध में पग उठाना संभवतः अनिवार्य ही था।

भारत सरकार ने जो प्रतिबन्ध लगाए हैं वे अपेक्षाकृत नर्म हैं और सम्भवत: यह बात अच्छी मानी जायगी।

यह तो समझ ही लेना चाहिए था कि एशिया में राष्ट्रीयता की विजय होने पर ईसाइयों के शुद्धि कार्य के विरुद्ध प्रतिक्रिया का होना आवश्यम्भावी था। भारत सरकार ने जो नए प्रतिबन्ध लगाए हैं उनसे ईसाई धर्म को तो हानि नहीं होगी। कट्टर पन्थी हिन्दू भी शान्त हो सकते हैं। हिन्दुओं की भावना की सहसा ही उपेक्षा नहीं की जा सकती। ईस्ट इण्डिया कम्पनी को भी हिन्दुओं की भावना को सन्तुष्ट करने के लिए ईसाई प्रचारकों पर भारतीय गवर्नमेंट के

प्रस्तावित प्रतिबन्धों से अधिक कड़े प्रतिबन्ध लगाने पड़े थे। अधिकांश ईसाई प्रचारकों ने इस बात को अनुभव कर लिया है कि भारत में ईसाइयत तभी फल फूल सकती है जबकि वह देशी आन्दोलन समझा जाए और पश्चिम के प्रचारकों पर अवलम्बित न रहे। भारत सरकार के नए प्रतिबन्धों का अतिशयोक्तिपूर्ण विरोध करने से ईसाइयों को क्षति पहुंचेगी।"

बुद्ध जयन्ती

आगामी २४ मई को देश विदेश में भगवान बुद्ध की २५००वीं जयन्ती मनाई जायगी। हम भारतीयों का यह सौभाग्य है कि हमारी भारतभूमि महात्मा बुद्ध जैसे युग प्रवर्त्तक महान् पुरुषों की जन्म दातृ भूमि है जिनके प्रकाश से लोक लोकांतर उपकृत और प्रकाशित हुए हैं।

भारत में जयन्ती समारम्भ का प्रधान केन्द्र वाराणसी के निकट सारनाथ रहेगा, जहां भगवान बुद्ध के देश विदेशके अनुयायी और प्रशंसक एकत्र होकर उस महाभाग के प्रति अपनी श्रद्धांजलि प्रस्तुत करेंगे और जहाँ हम भारतीयों को उनका स्वागत और आतिथ्य करने का सुअवसर प्राप्त होगा।

सारनाथ वही स्थान है जहाँ हृदय में ज्ञान की ज्योति का प्रकाश पड़ने के पश्चात् उन्होंने अपना सर्व प्रथम उपदेश दिया और जहां से जन कल्याणार्थ उपदेश यात्राएं प्रारम्भ की थीं।

सारनाथ आने से पूर्व ज्ञान प्राप्ति के लिए उन्होंने छः वर्ष तक गया में एक वृक्ष के नीचे कड़ी तपस्या की। शरीर को सुखाया। कई बार बेहोश होकर मृतवत हुए। इसी स्थान पर उनको वैशाख की पूर्णिमा के दिन इस सत्य की अनुभूति हुई कि आत्म-पीड़न और व्रत उपवास से शरीर को नष्ट कर देने से निर्वाण की प्राप्ति नहीं होती अपितु लोक हित में अपने को मिटा देने से ही परमपद प्राप्त होता है।

जन-हित सम्पादन में लगे हुए शरीर का स्वाभाविक अन्त उत्तम और आमरण अनशन और कष्ट के द्वारा उसका हनन अप्रशस्त है। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ आत्मा निवास करता है।

गया के बोधि वृक्ष को नष्ट हुए शताब्दियां व्यतीत हो गई हैं परन्तु इसके निकट एक दूसरा वृक्ष विद्यमान है, जो मूल वृक्ष का वंशज कहा जा सकता है। लंका में आज भी एक वृक्ष है जो इतिहास का सबसे पुराना वृक्ष माना जाता है। ईसा के जन्मसे २४५ वर्ष पूर्व मूल वृक्ष की एक शाखा के रूप में यह वृक्ष लगाया गया था जिसकी बड़े यत्न से रक्षा की जाती रही है। इसकी बड़ी २ शाखाएं खंभों के सहारे खड़ी की गई हैं। इस एक वृक्ष के मुकाबले में मानव इतिहास बड़ा छोटा जान पड़ता है। दुःख इस बात का है कि महात्मा बुद्ध के शिष्यों ने उनकी शिक्षाओं के रक्षण पर इतना ध्यान नहीं दिया जितना जड़ वृक्ष और जड़ वस्तुओं की रक्षा पर दिया है। ध्यान भी क्यों दिया जाता जब कि प्रारम्भ से ही उनके जीवन तथा उपदेशों को गलत प्रकार से समझा तथा प्रस्तुत किया गया है। उनके जीवन तथा उपदेशों को सृष्टिक्रम विरुद्ध चमत्कारों, अन्ध विश्वासों और दन्त कथाओं से परिवेष्टित करके उनकी वास्तविक महत्ता और प्रेरणा से जन साधारण को वंचित किया गया। उदाहरणार्थ उनके जन्म के विषय में यह गप्प उड़ाई गई कि बुद्ध का जन्म अमानवीय था। जब उनकी माँ एक सुन्दर सफेद हाथी का स्वप्न देख रही थी तब बुद्ध दैवीय रूप से उनके पेट में प्रविष्ट हो गए थे। भगवान बुद्ध पिछले जन्म में छः दांतों वाले हाथी थे इत्यादि २। सभी समझदार जन यह मानते हैं कि उनका जन्म कपिल वस्तु में महाराज शुद्धोदन के औरस से हुआ था।

महात्मा बुद्ध ने अपने प्रारम्भिक ५ शिष्यों को जो उपदेश दिए थे वे ही प्रकारान्तर से उनकी मौलिक शिक्षाएँ थीं। उनकी मुख्य २ शिक्षाएं ८ 'आर्य्य मार्ग' के नाम से विख्यात हैं। वह कहते

थे कि मनुष्य को अपनी इच्छाओं को घटाना चाहिए। जिसकी जितनी कम इच्छाएँ होंगी वह उतना ही अधिक सुखी होगा। जिसकी इच्छाएँ कम होंगी उसकी जरूरतें अपने आप कम हो जायेंगी। वह लोगों से चीजों के लिए झगड़ा करने न जायगा। उसके भीतर दूसरों के लिए प्रेम होगा। वह किसी से वैर न करेगा। उसका चित्त अपने आप शान्त हो जायगा। वैर से वैर कभी शान्त नहीं किया जा सकता। प्रेम से ही वैर शान्त किया जा सकता है। भगवान् बुद्ध कहते थे कि सब आदमी बराबर हैं जाति के कारण कोई ऊँचा नीचा नहीं है। सब आदमी सत्ज्ञान एवं सत् व्यवहार से मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। आत्मा अमर है। पुनर्जन्म होता है। जीव हत्या वा जीव पीड़न पाप है। यज्ञ में पशुओं के बलिदान से मोक्ष नहीं मिलती अपितु यह जघन्य कर्म है। महात्मा बुद्ध का सन्देश विश्व प्रेमका सन्देश है।

सत्य विचार के लिए विचारों और भावनाओं को सत्य एवं बुद्धिकी कसौटी पर परखना चाहिए। इस कसौटी में अंध विश्वास की गुञ्जाइश नहीं हो सकती। शुद्ध भाव के लिए दुष्ट भाव का परित्याग तथा उच्च भाव का ग्रहण आवश्यक है। दूसरों की सेवा करना, दूसरों के साथ न्याय करना और न्याय प्राप्त कराना अनिवार्य है। महात्मा बुद्ध इस बात को बर्दाश्त न करते थे कि मनुष्य के विचार तो उच्च हों और कर्म हेय हों। कर्म में निष्काम भावना होनी चाहिए। स्वार्थ और यश का पुट न लगा होना चाहिए, साधना सार्थक होनी चाहिए निरर्थक नहीं। ईर्ष्या, द्वेष, काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि की विकृतियों से ऊपर उठकर महान् उद्देश्य की प्राप्ति में 'अहम्' को विलीन कर देने से ही मानव का वास्तविक हित सिद्ध होता है।

बौद्ध मत ने प्रारम्भ में अनेक उच्च जीवन प्रदान किए जिन्होंने अपनी तपस्या से, निष्ठा से, विनम्रता, मधुर भाषिता और बलिदान से बौद्धमत को दिग्दिगंतर में प्रसारित किया। राजाश्रय प्राप्त हो जाने पर उसका विस्तार तो बहुत हुआ उसमें राजसी चमक भी बहुत आई परन्तु वह बहुत गहरा न जा सका। स्वार्थियों और झूठे अनुयायियों की भरमार हो जाने और उसे प्रदर्शनों की वस्तु बना देने से वह वाह्याडंबर की दलदल में फंस गया, और उसमें आचरण की श्रेष्ठता का जो थोड़ा बहुत सार था वह विलुप्त हो गया। संसार से विरक्त रहने का उपदेश देने वाले, स्वयं राजसी आडम्बरों से परिपूर्ण मठों और विहारों में मौज मारने लगे और इस प्रकार संसार से भागने वाले 'स्व' से दूर न भाग सके।

भगवान बुद्ध का प्रादुर्भाव उस समय हुआ जब वैदिक संस्कृति का स्वरूप बहुत विकृत हो गया था और जीवन तथा मुक्ति के सम्बन्ध में अनिष्टकारी सिद्धाँत और उपदेश प्रचलित हो गए थे। विशुद्ध वैदिक संस्कृति के भग्नावशेषों पर बौद्धमत का उदय हुआ। यद्यपि उसने एक विशिष्ट पद्धति को जन्म दिया तथापि उसकी भावना आर्य भावना ही बनी रही। वेदों का प्रामाण्य स्वीकार न करके भी वह वेदों की शिक्षाओं से पृथक न रह सका।

बौद्धमत की मौलिक दुर्बलता यह थी कि वह विशुद्ध वैदिक धर्म्म के समान मानव के सर्वांगीण विकास की क्षमताओं को प्रस्फुटित न कर सका। संसार के मिथ्यात्व जड़ प्रकृति के पूजन, भिक्षु संघवाद और सृष्टि में ईश्वरीय प्राधान्य की अवहेलना ने उसके ह्रास की प्रक्रिया को वेगवान बना कर उसे शीघ्र पूर्ण कर दिया। बौद्धमत बौद्धिक प्रभुत्व कायम न कर सकने के कारण लोगों के मस्तिष्क पर हावी न हो सका यद्यपि हृदयों पर हावी हुआ। ईश्वरीय प्रेरणाओं की अवहेलना होने से मानव की नैतिकता का विकास कुंठित रहा। क्या वास्तविक सत्य है और क्या असत्य इसका निरूपण अल्पज्ञ मनुष्य नहीं करसकता जबतक कि उसका मार्गप्रदर्शन विशुद्ध दैवीय उच्चसत्ताके द्वारा न हो। इस मौलिक तत्वके विहीन होनेसे बौद्धमतकी नैतिकता बहुत दूर तक न जा सकी। यह सब कुछ

होने पर भी बौद्धमत ने नैतिक, सामाजिक और बाह्य जीवन के आदर्शों को उत्तम रखने में सामयिक उत्तम योग दिया।

आज ससार की सामाजिक अवस्था विकृत है। सामाजिक सुरक्षा और शान्ति खतरे में ग्रस्त है। अच्छे शासकों और धार्मिक नेताओं का अभाव है। आज संसार को भगवान् बुद्ध जैसे लोकोत्तर महा पुरुषों की आवश्यकता है जो मानव के हृदय में आर्य भावना की सच्ची ज्योति को जगा कर उसका प्रमुत्व कायम कर सकें और जगत के प्राणी अपने को पर-हित में मिटाने में अधिकाधिक समर्थ हो सकें।

पंजाब में गोवध पर पूर्ण प्रतिबन्ध

पंजाब की विधान सभा ने एक विधेयक पारित करके राज्य भर में गोवध पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया है। जो व्यक्ति इस विधेयक का उल्लंघन करेगे उन्हें ५ वर्ष तक की सजा और २ हजार रुपये तक जुर्माने का दण्ड दिया जायगा।

पंजाब सरकार ने इस विधेयक को पास करके लोक मत का आदर और अपने कर्त्तव्य का पालन किया है जिसकेलिए वह बधाई की पात्र है। विधेयक में इस बात की भी व्यवस्था की गई है कि सूखी बूढ़ी और रोग ग्रस्त गऊओं की रक्षा के लिए गो सदन भी खोले जायें। यदि विधेयक में गऊओं के प्रदेश से बाहर जाने पर भी प्रतिबंध लग जाता तो विधेयक और भी प्रभावोत्पादक बन जाता, क्योंकि उन्हें वध के लिए उन प्रदेशों में ले जाया जाता है जहां गोवध पर वैधानिक प्रतिबंध नहीं है। इस मांग की स्वीकृति केन्द्रीय शासन के हाथ में बताई जाती है। जनता का कर्त्तव्य है कि वह केन्द्रीय शासन को इस मांग की स्वीकृति के लिए वैध उपायों से विवश करे। जब तक यह मॉग स्वीकृत नहीं होती है तब तक इस दिशामें आंदोलन जारी रखा जाय। केवल कानूनके बन जाने मात्र से ही गोवध निषेध की समस्या का संतोषजनक हल सम्भव नहीं है। जनता को स्वयं भी जागरूक रहना पड़ेगा। स्वार्थी जन कानून का उल्लंघन न कर सकें और गऊएँ प्रांत के बाहर न जायें इस सम्बंध में विशेष ध्यान रखना और यत्न करना होगा। बिरादरी की पंचायतें चाहें तो इस दिशा में बहुत कुछ कर सकती हैं। वे अपने लोगों पर सामूहिक दंड और नैतिक जोर के द्वारा गऊओं की निकासी रोकने में बहुत बड़ा काम कर सकती है।

स्वामी श्रद्धानन्द जी का स्मारक

दिल्ली की नगर पालिका समिति ने श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की स्मृति में नगर में उनका एक स्टेच्यू स्थापित करने का निश्चय करके अपने चिर प्रतीक्षित कर्त्तव्य को पूरा करने की दिशा मे पग बढ़ाया है जिसके लिए वह बधाई की पात्र है। समिति इससे पूर्व भी दिल्ली के दो नेताओं की प्रतिमाएं स्थापित कर चुकी है—एक स्व० आसफ अली की और दूसरी स्व० देशबन्धु गुप्त की। श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी को दिल्ली के सामाजिक और राजनैतिक जीवन में जो मूर्धन्य स्थान प्राप्त था उसे दृष्टि में रखते हुए दिल्ली की नगर पालिका समिति को अबसे बहुत पूर्व ही इस प्रकार का निश्चय करके और उसे कार्यान्वित करके उसके गौरव को कायम रखना चाहिए था। स्वामी जी महाराज ने अपने तप. त्याग, सेवा और बलिदान से जनता के हृदय में जो स्थान पाया था वह स्पर्धा योग्य था। वे अपने काल के देहली के अद्वितीय पुरुष थे और देश के महा सम्मानित नेता थे। महात्मा गांधी उन्हें अपना बड़ा भाई समझते और दिल्ली को स्वामी जी की दिल्ली कहा करते थे। हिन्दू मुस्लिम एकता का जो वातावरण उन्होंने एक बार दिल्ली में पैदा कर दिया था वैसा फिर कभी यहां दृष्टि गोचर नहीं हुआ। घण्टाघर के सम्मुख गोरों की किर्चों के सामने सीना तानकर उन्होंने अच्छे काम के लिए मर मिटने की जिस वीरोचित भावना का परिचय दिया था उसकी मिसाल बहुत कम मिलती हैं। श्री स्वामी जी के स्मारक के लिए घंटाघर से अधिक उपयुक्त दूसरा स्थान नहीं हो सकता। अत यह स्मारक वहीं स्थापित होना चाहिए और कोई भावना इस दिशा में बाधक न बनने देनी चाहिए।

—रघुनाथप्रसाद पाठक

पूर्व ऋषियों के मार्ग पर चल

(लेखक—श्री स्वा० गङ्गागिरि जी आचार्य गुरुकुल रायकोट)

जिन ऋषियों ने आत्मा और परमात्मा का साक्षात्कार किया है, कल्याण के इच्छुक मनुष्य को उनके ही मार्ग पर चलना चाहिये, इसके लिए भगवान की वेद में आज्ञा है।

मैतं पन्थामनुगा भीम एष येन पूर्वं नेयथ तं ब्रवीमि। तम एतत्पुरुष मा प्र पत्था भयं परस्तादभयं ते अर्वाक् ॥

(अथर्व ८ १-१०)

(एतं पन्थाम्) इस मार्ग पर (मा अनु गाः) मत चल (एषः भीमः) क्योंकि यह भीम है (येन) जिस मार्ग से (पूर्वम्) पहले (नेयथ) ले जाया गया। (तं ब्रवीमि) उसे बताता हूं। (पुरुष) हे पुरुष, नागरिक (एतत्, तमः) इस अन्धकार को (मा प्र पत्था) मत प्राप्त हो, अथवा इस अन्धकार में मत गिर परस्तात् भयं) पिछली ओर भय है (अर्वाक्) इस ओर (ते अभयम्) तुझे अभय है।

जीवन का मार्ग बहुत बीहड़ और भयावह है। इसमें बड़े-बड़े समझदार कहे और समझे जाने वाले महानुभाव भटक जाते हैं, मार्ग भ्रष्ट हो जाते हैं, साधारण जनों का तो कहना ही क्या है। 'कः पन्थाः' मार्ग कौन सा है, यह सनातन प्रश्न है, सब कालों सब देशों में यह प्रश्न विचारकों के सामने आया है। बहुत थोड़े ऐसे भाग्यवान् हैं, जो इस प्रश्न का पूरा समाधान कर सके हैं, तदनुसार जीवन यात्रा कर सके हैं, मैतं पन्थां अनुगाः—मनुष्य मत इस राह पर चल, सभी मनुष्यों का यह अनुभव है, कठोर कर्तव्य पालन के समय उन्हें संसार का मोह विचलित कर देता है न्यायाधीश का अपना पुत्र अपराधी के रूप में उसके सामने उपस्थित किया जाता है. अपराध प्रमाणित हो जाता है किन्तु पुत्र का प्रेम न्याय के मार्ग में आ खड़ा होता है। वह न्याय नहीं करने देता, क्या यह किसी विद्वान का कथन न्यायाधीश के ध्यान में रहा, गुरूपदिष्टेन रिपौ सुतेपि वा निहन्ति दण्डेन स धर्म-विप्लवम्। कानून भग करने वाले को. धर्मोल्लघन वाला पुत्र हो या शत्रु न्याय व्यवस्थानुसार अवश्य ही दण्ड का भागी है। मोह के वश होकर न्याया-धीश फिसल जाता है। वह मार्ग छोड़ जाता है। वह उस मार्ग पर चलता है जिसके लिये वेद कहता है। मैतं पन्थामनुगाः, मत इस राहपर चल। मनुष्य जीवन का लक्ष्य क्या है? क्या खाना, पीना, भोग करना बस, बहुत पुराने काल में भगवती सीता को कहा था।

भुङ्क्ष्व भोगान यथाकामं पिब भीरु रमस्व च।

वा० रा० सुन्दर का० २० २५

रावण का कथन सीते यथेच्छ भोग भोग, खा पी और मौज कर।

पिब विहर रमस्व भुङ्क्ष्व भोगान्।

वा० रा० सुन्दर का० २०-३५

पी, विहार कर रमण कर, भोगों को भोग। किन्तु सीता देवी ने वेदों में पढ़ रखा था—मैतं पन्थामनुगाः। सीता इस मार्ग पर चलने के लिये अनेक कष्ट सह कर भी नहीं चली। रावण के प्रणय प्रलाप को उसने ठुकरा दिया। भोग भोगना मनुष्य का धर्म नहीं। क्या मनुष्य भोग में खान पान आदि में पशुओं की समता कर

सकता है। भोग भोगना राक्षसों का धर्म है। स्वयं रावण ने कहा है :—

स्वधर्मो राक्षसां भीरु सर्वथैव न संशयः।
गमनं वा परस्त्रीणां हरणं सं प्रमथ्य वा ॥

वा० रा० सुन्दर का० २० ५

हे सीते धर्मभीरु! परस्त्रीगमन (व्यभिचार) भोग परदाराहरण यह तो राक्षसों का स्वधर्म है। तो क्या हम राक्षस बनें। वेद कहता है, ना भाई। भीम एष—यह मार्ग भयङ्कर है। आजकल भी जो खाओ, पीओ आनन्द उड़ाओ का उपदेश करते हैं, वे सब रावण का ही समर्थन करते हैं। राक्षस धर्म का प्रचार करते हैं। जब जीवन यात्रा के लिये मनुष्य तैयार होता है, तब उसके सामने दुराहा आता है। एक मार्ग पर सब लुभावनी सामग्री, नाच, गान, स्त्री, खान, पान आदि होता है। दूसरे मार्ग पर ऐसा कुछ नहीं दीखता है, मनुष्य साधारण मनुष्य, अपरिपक्व विवेक वाला मनुष्य, पहले मार्ग को ही अंगीकार कर लेता है। मन्दमति को संसार की लालसाओं की पूर्ति की भावना रहती है। यम ने नचिकेता को इस दोराहे की बात भली भांति समझाई थी। उसने कहा था :—

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतः।

कठ० १।२।२॥

श्रेयमार्ग प्रेयमार्ग दोनों ही मनुष्य को मिलते हैं। किन्तु—

प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद् वृणीते।

कठ० १।२।२॥

मन्दमति मूर्ख योगक्षेम के कारण—सांसारिक भोग भावना के कारण प्रेयमार्ग को पसन्द करता है।

मूर्ख दोनों भेद नहीं जानता है, वह उनमें पहचान नहीं कर पाता है। पहचान तो धैर्यवान् विचारशील ही कर सकता है।

तौ सं परीत्य विविनक्ति धीरः।

कठ० १।२।२॥

धीर मनुष्य ही उन दोनों श्रेय और प्रेय मार्गों की जाँच करके भेद कर सकता है। महा-अज्ञानी मूढ़ ही इस प्रेय मार्ग पर चलते हैं। यम कहता है—

अविद्यायामन्तरे वर्त्तमानाः स्वयंधीराः पंडितं मन्यमानाः। दन्द्रम्यमाणाः परियन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः॥

कठ० १।२।५॥

जो अविद्या में फंसे हैं, किन्तु अपने आपको ध्यानी और पण्डित मान रहे हैं। ऐसी दुरवस्था में ग्रस्त महामूढ़ लोग ही इस प्रेय मार्ग पर चलते हैं। वे स्वयं अन्धे हैं, और अन्धों ही के पीछे चल रहे हैं। वेद कहता है मत चल इस माग पर। तुझे मैं मार्ग बताता हूं। पहले भी इसी मार्ग पर ऋषियों को चलाया था। येन पूर्व नेयथ तं ब्रवीमि। अन्धे यह मार्ग अन्धकार से छाया हुआ है। अन्धकार मृत्यु है। प्रकाश जीवन है। तू अन्धकार में मत पड़। भगवान ने कहा है—तम एतत् पुरुष मा प्रपत्थाः। नगर के रहने वाले यह अन्धकार है इसमें मत गिर। नगरवासी तो प्रकाश का अभ्यासी होता है। पुरुष की नगरी शरीर है—जो ज्योति से आवृत है। प्रकाश से ओत-प्रोत है। अन्धकार में गिरना इसके लिये लज्जास्पद है। जो परमात्मा की ज्योति से आवृत है। यदि संसार पथ प्रेयमार्ग भोग पद्धति इतनी भयावह है, तो ऐसा हमें प्रतीत क्यों नहीं होता है। इस पुराने प्रश्न की मीमांसा यम ने इस प्रकार की है:—

न साम्परायः प्रतिभाति बालं प्रमाद्यन्तं

आध्यात्मिक अनुभूति और नैतिक उत्तरदायित्व

(लेखक—श्रीयुत पं० ऋषिराम जी बी० ए० लन्दन)

मनुष्य का विश्व में क्या स्थान है? यह बात ठीक प्रकार जान लेने से उसके नैतिक और आध्यात्मिक जीवन का वास्तविक रहस्य स्पष्ट हो जाता है। सबसे पहली बात यह है कि मनुष्य भौतिक सत्ता है। उसका शरीर उन भौतिक नियमों से शासित होता है जो किसी मनुष्य या मजहब का लिहाज नहीं करते। वायु, सूर्य, प्रकाश आदि भौतिक तत्वों के साथ मनुष्य का सम्बन्ध समन्वयात्मक है। यदि इन तथ्यों के साथ उसका कोई विरोध होता है तो वह रोगादि से पीड़ित हो जाता है।

मनुष्य के मन का विकास हो जाने पर वह न केवल जीता ही है अपितु संसार को जानने की भी उसे इच्छा होती है। संसार की शक्तियों के इस बौद्धिक ज्ञान से उसे उन शक्तियों पर शासन और अपने लाभ के लिये उनका प्रयोग करने की शक्ति प्राप्त हो जाती है। इस क्षेत्र में भी उसके वैयक्तिक मस्तिष्क तथा विश्व व्यापक मस्तिष्क में समन्वय रहना चाहिये।

इसके पश्चात् मनुष्य में एक और भाव उत्पन्न होता है। उसे अपनी सन्तुष्टि के लिये वस्तुओं की आवश्यकता होती है परन्तु पग २ पर उसके मन में यह प्रश्न उठता है कि मुझे अमुक वस्तु की इच्छा करनी चाहिये या नहीं। इस संकल्प विकल्प की भावना ने मनुष्य में जीवनोद्देश्य के तत्व का सूत्रपात कर दिया है जिसका पशुओं में अभाव होता है। वह विशाल मानव समाज में जन्म लेता है। उसकी सम्पत्ति हस्त गत करने तथा मौज उड़ाने की भावना उसके संगी साथियों के हित से अनुकूल होनी चाहिये। इस भावना से सदाचार के जीवन का सूत्रपात होता है जिसके बिना मनुष्य पशुओं के स्तर पर आ जाता है। यह धार्मिक नियम न सिर्फ व्यक्तियों के जीवन में ही अपितु जातियों के जीवन में भी काम करता है। यह नियम भी किसी व्यक्ति, शक्ति या मजहब का लिहाज नहीं करता। यह नियम विश्व के प्राणी मात्र के हित में बड़ी कठोरता से काम करता है, और इस धार्मिक या नैतिक नियम की उपेक्षा करने वाले

वित्तमोहेन मूढम्। अयं लोका नास्ति पर इति मानी पुनः पुनर्वशमापद्यते मे ॥

कठ० १।२।५॥

यह सम्पराय यानी जाना दुनिया विनश्वर संसार बालक को तथा मूढ अज्ञानी को नहीं दिखना, प्रमादी को भी नहीं सूझता।

भर्तृहरि जी ने अपने शब्दों में कहा है उसने तो शराब पी रक्खी है, पीत्वा मोहमयीं प्रमाद मदिरामुन्मत्तभूत जगत। प्रमाद की मोह की मदिरा शराब पीकर संसार पागल हो रहा है।

धन के मद में मत्त भी इसको नहीं देखता है। धन का नशा बड़ा ही तीव्र होता है। इन तीनों की दृष्टि इस संसार से परे नहीं जाती है। वे इस लोक में अपने शरीर को ही सब कुछ समझ रहे हैं। अतः जन्म मरण के चक्र में फंसे रहते हैं। वेद कहता है—भय परस्तात् अरे पीछे तो भय है। अतः इस पर मत चल। अभय ते अर्वाक्। इस ओर अभय है। आ इधर चल।

चाहे वे शक्तिशाली व्यक्ति हों या जातियां हों कुछ दूर तक ही अधर्म पथ पर जा सकते हैं। परन्तु अन्त में उनका विनाश अवश्यम्भावी होता है। मानव जाति के समस्त इतिहास में यह नियम काम करता है। बड़े २ राज्यों और साम्राज्यों के उत्थान और पतन के कारण इस नियम के द्वारा सहज ही जाने जा सकते हैं।

मनुष्य के लिए सदाचार का जीवन ही पर्याप्त नहीं है। वह असीम आनन्द,सच्चाई और सुन्दरता की इच्छा करता और दुःख, कष्ट. बुढ़ापे और मृत्यु से पार होने का प्रयत्न करता है। इस खोज में उसे परमात्मा का ज्ञान प्राप्त होता है जो इस चमत्कारिक संसार का रचयिता और पालक होता है। वह यह भी अनुभव करता है कि परमात्मा निराकार है, सर्व शक्तिमान् है और असीम आनन्द और शान्ति का भंडार है। वही अन्तिम सत्य है।

सब से बढ कर उसे यह अनुभूति होने पर कि वह भी उस दिव्यता का भागीदार है और वह परमात्मा उसके अपने हृदय में बैठा है, उसे बड़ा हर्ष होता है। संकुचित अहंभाव पूर्ण जीवन के दृष्टिकोण के कारण ही उसका परमात्मा के साथ समन्वय भंग होता है। परमात्मा सृष्टि के जर्रे २ में ओत प्रोत है। जब मनुष्य तप और पवित्रता से दुई की भावना से मुक्त होकर सब के जीवन में अपना जीवन ओत-प्रोत हुआ देखता है तब वह शान्ति. ज्ञान और आनन्द की उस उच्चतम अवस्था में पहुंच जाता है जिसे कोई भी बाह्य स्थिति भंग नहीं कर सकती और वह संसार में तूफानों और उपद्रवों से ऊपर उठ जाता है। संसार में रहते हुए भी उसका आत्मा शाश्वत शान्ति, हर्ष और ज्ञान पर केन्द्रित रहता है। यह अनुभूति उसमें प्राणी मात्र के प्रति प्रेम एवं एकता का संचार कर मनुष्य को प्राणी मात्र के लिये जीवित रहना सिखाती है। ये चारों प्रक्रियायें जो जीवन को सर्वाङ्ग पूर्ण बनाती हैं विश्व व्यापक हैं।

यदि मनुष्य का धर्म इस सर्वतोमुखी समविकास में उसकी सहायता करता है तब तो वह धर्म ठीक और आवश्यक है। यदि वह धर्म इस विकास के लिए उसका मार्ग प्रशस्त नहीं करता तो वह व्यर्थ है और यदि वे धर्म विश्वास और पंथ इस विकास में रोड़े अटकाएं तो निश्चय ही वे हानिकारक हैं। यही गन्तव्य स्थान है जिसकी मनुष्य जाति खोज कर रही है, जिसके लिये यत्न कर रही है और जिसकी ओर अग्रसर होना चाहती है।

कोई भी शक्ति मार्ग में बाधक बन कर गति को रोक नहीं सकती। शान्ति के द्वारा या युद्ध के द्वारा कर्म के द्वारा या ज्ञान के द्वारा आभ्यन्तरिक उद्देश्य काम कर रहा है। यदि विविध मतों के नेता और प्रचारक इस केन्द्रीय उद्देश्य को अनुभव करके उस तक पहुंचने के लिये मिलकर काम करें तो बड़ा अच्छा हो।

मणि माला

ओ३मसि श्रोत्रं मे दाः स्वाहा ॥ (अ० २।१७।५)

प्रभो तू श्रोत्र है मुझे सुनने की शक्ति दे। यह मैं सच्चे मन से कहता हूं।

चक्षुरसि चक्षुर्मे दाः स्वाहा ॥ (अ० २।१७।६)

प्रभो ! तू सबको दिखाने वाला है। मुझे नेत्र दे। मैं यह आपसे अच्छी प्रकार कहता हूँ।

हे परमात्मन् ! तू हमें देखने तथा सुनने की शक्ति दान कर जिससे हम भला सुनें तथा भला देखें।

(श्री पूज्य स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ कृत श्रुति सूक्ति शती से)

शाकाहार अथवा संसार व्यापी दुर्भिक्ष

(पीटर फ्रीमैन, सदस्य ब्रिटिश पार्लियामेण्ट)

शाकाहारी समिति की ओर से लैवलिन हाल किज्जवे स्वैनसी इगलैण्ड में ब्रिटिश पार्लियमैंट के सदस्य श्री फ्रीमैन ने एक भाषण दिया जिसमे शाकाहार को युद्ध को और दुर्भिक्ष की रोकथाम का कारण बताया और उसका आर्थिक तथा राजनैतिक जो सम्बन्ध है उसका वर्णन किया। उन्होंने कहा कि खाद्य पदार्थों का प्रश्न राजनैतिक क्षेत्रों से अलग है; परन्तु यह एक सत्य है कि आधी दुनिया को पहले से ही खुराक नहीं मिलती और यह भय है कि निम्न लिखित कारणों से यह प्रश्न राजनैतिक रूप धारण न कर ले।

(१) दुनिया मे मनुष्य संख्या अब २,५००,-०००,००० (अढ़ाई अरब) है। इस शताब्दि के अन्त तक यह बढ़ कर ५,०००,०००,००० (पाँच अरब) हो जायेगी।

(२) और देशों से इगलेंड में खाद्य पदार्थ कम आने लगेंगे क्योंकि वह देश अपने मनुष्यों को भी पूरी खुराक न दे सकेंगे।

(३ खाद्य पदार्थ पैदा करने के लिये भूमि की कमी हो रही है क्योंकि शहरी बस्तियां उद्योग धन्धों, मकानों, कारखानों, खेल के स्थानों, स्कूलों के लिये उसकी आवश्यकता बढ़ रही है।

(४) भारत जैसे देशों में रहन-सहन का स्तर ऊँचा हो जाने से खाने के पदार्थों की आवश्यकता बढ़ रही है। जो वहा के पदार्थ इंग्लैंड आदि के लोगों के लिये निकाल लिये जाते थे, न आ सकेंगे।

श्री फ्रीमैन ने बताया कि पिछली सभ्यताओं की बुनियाद ' मनुष्य दासता" पर थी। पर उसे अब छोड़ा जा रहा है। क्योंकि यह एक बुरा नियम है। अभी तक पशुओं के साथ दास मनुष्यों से भी बढ़ कर बुरा व्यवहार किया जाता रहा है। परन्तु वह समय आ रहा है जब मांसा-हारियों को उसी बुरी दृष्टि से देखा जायगा जैसे कि मनुष्यों को खाने वालों का देखा जाता है। पशुओं को मनुष्य की सेवा के लिये एक बिक्री की चीज न समझा जावे। संसार केवल मनुष्य के भोग विलासों के लिये नहीं है। यह तो सब जीव धारियों की जगह है और मनुष्य अधिक उन्नत होने से केवल मात्र ट्रस्टी तथा रक्षक मात्र है।

श्री फ्रीमैन ने प्रश्न किया कि प्रति वर्ष जो दो करोड़ नये मनुष्य पैदा होते हैं उनके खाने-पीने का क्या प्रबन्ध किया जावे ? क्या उनको मार दिया जावे ? अथवा उनको भूखे रख कर मार दिया जावे ? अथवा उनको ही खा लिया जावे ? निःसन्देह वह मांसाहारी नहीं बनाये जा सकते। इस प्रकार का समाधान तो केवल शाका हार से ही हो सकता है और इसकी पुष्टि में फ्रीमैन ने निम्नलिखित आंकड़े उपस्थित किये जिनसे पता लगता है कि एक एकड़ भूमि मे पोषक खाद्य पदार्थ अधिक पैदा किये जा सकते हैं, जब कि उतनी ही भूमि में मांस के पदार्थ बहुत थोड़े पैदा हो सकते हैं :—

प्रतिवर्ष एक एकड़ भूमि में तुलनात्मक रूप से खाद्य पदार्थ तथा मांस पदार्थ निम्न लिखित तोल में पैदा किये जा सकते हैं।

पशु मांस	पौंड	अनाज तथा सब्जी उपज	पौंड
गऊ का	१६८	गेहूं जौ आदि	२०००।२५००
भेड़ का	२२८	मूंग उड़द मक्का आदि	३०००।४०००
सुअर का	३००	आलू	२००००
मुर्गी का	३५०	मूली गाजर	२५०००
औसत	२५०।.००	स्वीडन या सलगम	३००००

इससे यह स्पष्ट है कि एक एकड़ में अनाज आदि की उपज मांस की उपज से दस गुना अधिक होती है और सब्जी सौ गुणा से भी अधिक है। और पीछे से कहा कि देश के प्रत्येक एकड़ में सूखे मेवों तथा फलों के पेड़ सुगमता से लगाये जा सकते हैं।

अपने वर्णन की पुष्टि में फ्रीमैन ने इंग्लैंड के कृषि मन्त्रालय के मुख्य वैज्ञानिक और कृषि सलाहकार सर जेम्स स्काट वाटसन् का वक्तव्य पढ़ कर सुनाया जिसक उन्होंने बरमिघम में १९५२ में इस प्रकार आलोचना की थी: —

"दुनिया में बढ़त हुई संख्या के खाद्य पदार्थों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए केवल एक ही मार्ग है कि लोग मांस खाना छोड़ कर शाकाहारी बनें और दूध का व्यवहार करें। जो लोग बड़ी मात्रा में मांस खाते हैं, उनके भी अपने स्वभाव में बहुत बड़ा परिवर्तन करने की सम्भावना है। यह अनुमान लगाया है कि यदि हम शाकाहारी खुराक पर रहें जो सन्तोषजनक रूप से पुष्टिकर है तो हम प्राय: स्वावलम्बी हो सकते हैं।"

फ्रीमैन ने यह भी कहा कि पहले विश्व युद्ध में डेनमार्क में बाहर से मांस नहीं मंगवाया जा सकता था और उनके बहुत सारे पशु मारे गये तो डेनमार्क का देश का देश प्राय: शाकाहारी हो गया। उस युद्ध की समाप्ति पर जब डेनमार्क के लोगों की शारीरिक शक्ति तथा स्वास्थ्य के आँकड़े लिये गये तो वह उसके पहले आंकड़ों से कहीं ऊँचे और अच्छे थे और यूरोप भर में वह स्थिति सब से अच्छी थी।

लीग आफ नेशन्स १९३२ ने ग्रेट ब्रिटेन, अमरीका, फ्रांस, रूस, स्वीडन आदि देशों का एक अन्तर्राष्ट्रीय कमीशन नियुक्त किया और बातों के अतिरिक्त उस कमीशन से यह भी रिपोर्ट करने के लिये कहा गया कि जब एक सिपाही युद्ध भूमि में हो तो उसके स्वास्थ्य तथा शक्ति को ठीक रखने के लिये कम से कम कितना मांस मिलना चाहिये। उसके उत्तर में कमीशन ने कहा कि किसी भी मांस की उसे आवश्यकता नहीं क्योंकि वह बिना मांस के पूर्ण रूप से स्वस्थ रह सकता है।

फ्रीमैन ने अन्त में मांसाहारियों को खुले तौर पर चुनौती दी कि वह आगे आवें और पशुओं के खाने के पक्ष में एक भी दलील दें और कहा कि जो लोग मांस खाना नहीं छोड़ते वह वास्तव में तीसरे विश्व महायुद्ध के लाने में सहायता दे रहे हैं क्योंकि उनके इस व्यवहार से यह होगा कि दुनिया के किसी न किसी भाग में लोगों को कम खुराक मिलेगी और हो सकता है वह भूखे भी मर जायें। जो कोई भी शाकाहारी बनेगा वह संसार में शान्ति लाने का भागीदार होगा।

———

महर्षि दयानन्द के प्रति अन्याय

[लेखक — रघुनाथ प्रसाद पाठक]

श्री रामधारीसिंह दिनकर का अक्टूबर ५५ की सरस्वती (प्रयाग) में 'धर्म्म की साकार प्रतिमा परम हंस रामकृष्ण देव' शीर्षक से एक लेख प्रकाशित हुआ है जिसमें कई स्थलों पर श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती का उल्लेख किया गया है।

लेख का प्रारम्भ इस प्रकार होता है :—

"स्वामी दयानन्द से परम हंस रामकृष्ण की भेंट हुई थी। स्वामी जी स्वयं रामकृष्ण के पास नहीं गए थे, वे ही स्वामी जी के कलकत्ता पधारने पर उनसे मिलने आए थे। रामकृष्ण के मन पर इस भेंट का जो प्रभाव पड़ा यह उन्हीं के शब्दों में इस प्रकार वर्णित है :—

'दयानन्द से भेंट करने गया। मुझे ऐसा दीखा कि उन्हें थोड़ी बहुत शक्ति प्राप्त हो चुकी है। उनका वक्षस्थल सदैव आरक्त दिखाई पड़ता था। वे वैखरी अवस्था में थे। रात दिन लगातार शास्त्रों की ही चर्चा किया करते थे। अपने व्याकरण ज्ञान के बल पर उन्होंने अनेक शास्त्र वाक्यों के अर्थ में उलट फेर कर दिया है। 'मैं ऐसा करूंगा, मैं अपना मत स्थापित करूंगा ऐसा कहने में उनका अहङ्कार दिखाई देता है।'

अन्य स्थलों पर श्री स्वामी जी के विषय में लेखक महोदय अपना मत व्यक्त करते हुए लिखते हैं :—

"आर्य समाज और ब्रह्मसमाज बड़े ही प्रबल सांस्कृतिक आंदोलन थे। किन्तु उनकी जो कमजोरियां थीं वे रामकृष्ण को ठीक दिखाई पड़ीं। आर्य समाज के प्रवर्त्तक स्वामी दयानन्द बाल ब्रह्मचारी, निरीह संन्यासी, प्रचण्ड तार्किक और उद्‌भट विद्वान् थे किन्तु सन्तों की नम्रता और निरहङ्कार उनमें नहीं था।"

इनके सिवा इन आंदोलनों का एक दोष और था। हिन्दुत्व को निन्दित और आक्रांत देखकर राममोहन राय, दयानन्द और केशवचन्द्र में यह उत्साह जगा कि हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए कुछ न कुछ अवश्य किया जाना चाहिए किन्तु जब वे रक्षा को तत्पर हुए तब उन्हें यह दिखाई पड़ा कि हिन्दुत्व का समग्र रूप रक्षित होने के योग्य नहीं है। निदान ऋषि दयानन्द ने उतने ही हिन्दुत्व को रक्षणीय माना जिसका आख्यान वेदों में मिलता है अर्थात् जिसमें मूर्तिपूजा नहीं है जिसमें तीर्थ व्रत अनुष्ठान और श्राद्ध का अभाव है जिसमें अवतारवाद, स्वर्ग, नरक देवी देवता कुछ भी नहीं है। सच पूछिए तो दयानन्द और राममोहन राय ने जिस हिन्दुत्व की रक्षा की वह हिन्दुत्व का एक खण्ड मात्र था। यही कारण था कि यद्यपि दयानन्द और राममोहन राय ने हिन्दू विचारों की दिशा में महान क्रांति उपस्थित की किन्तु हिन्दू जनता का अत्यन्त विशाल भाग उनकी ओर उत्साह से नहीं दौड़ा। सच पूछिए तो हिन्दुत्व का इससे अधिक प्रतिनिधित्व श्रीमती एनी बिसेन्ट ने किया क्योंकि वे शास्त्र, पुराण, स्मृति और गीता हिन्दुत्व के देवी देवता और उनके द्वारा पूजित अवतार एवं ब्रह्म विद्या और परलोक सब की ओर एक समान उत्साह से बोल रही थीं। हाँ इतना अवश्य हुआ जब थियोसोफी और ब्रह्म समाज सिमट कर धनियों और विद्वानों की महफिल में ही सीमित रह गए तब आर्यसमाज क प्रचार समाज के कुछ निम्न स्तरोंमें भी हुआ।

किन्तु जिसे सचमुच जनता का मुक्त सहयोग कहते हैं वह इन तीनों आंदोलनों में से किसी को भी प्राप्त नहीं हो सका। आर्य समाजी, ब्रह्म समाजी और थियोसोफी पंडित ईसाई और मुस्लिम पंडितों से विद्या का विवाद कर रहे थे किन्तु जनता इस विवाद में रस लेने को तय्यार न थी।

भारत वर्ष की परम्परा है कि यहां की जनता विद्या से आतङ्कित नहीं होती। पंडितों का वह सत्कार करती है उनकी पूजा और भक्ति नहीं। हम तर्क से पराजित होने वाली जाति नहीं हैं। हां कोई चाहे तो नम्रता, त्याग और चरित्र से हमें जीत सकता है। धर्म्म-धर्म्म चिल्लाने से धर्म्म का अर्थ नहीं खुलता, न मोटी २ पोथियां रच देने से धर्म्म किसी की समझ में आता है। दयानन्द, और राममोहन राय तथा एनी बीसेन्ट के प्रचारों से यह तो सिद्ध हो गया कि हिन्दू धर्म्म निन्दनीय नहीं है वरेण्य है, किन्तु जनता तो यह देखना चाहती थी कि धर्म्म जीता जागता रूप कैसा होता है? धर्म्म का यह जीता जागता रूप उसे परमहंस रामकृष्ण के आविर्भाव होने पर दिखाई पड़ा।

"दयानन्द और राममोहन राय तथा केशवचन्द्र सेन से रामकृष्ण अनेक बातों में भिन्न थे। दयानन्द भारतीय परम्परा के उद्‌भट पंडित और ब्रह्म समाजी नेता अङ्गरेजी ढङ्ग के विद्वान् थे। किन्तु रामकृष्ण बहुत कुछ अपढ़ मनुष्य थे। दयानन्द राममोहन और केशव सार्वजनिक जीवन में इसलिए आए कि विधर्मियों की आलोचना से उन्हें चोट लगी थी किंतु रामकृष्ण को किसी भी धर्म्म वालों के प्रति आक्रोश न था। दयानन्द, राममोहन और केशवचन्द्र संस्कृति के आँदोलनकारी नेता थे किंतु रामकृष्ण को आंदोलनों से कोई सरोकार न था। वे अपनी बातें सुनाने को अपने आश्रम से बाहर नहीं गए और न उन्होंने हिन्दुओं से कभी यही कहा कि तुम्हारा धर्म्म खतरे में है।"

सुप्रसिद्ध फ्रेंच लेखक रोमा रोल्या ने राम कृष्ण परम हंस की अंग्रेजी जीवनी में पृ० १५१ पर फुटनोट में एक घटना का वर्णन इस प्रकार किया है :—

"महेन्द्रनाथ गुप्त ने रामकृष्ण और दयानन्द के मध्य हुई भेंटों को लिखने का कार्य किया था। महेन्द्रनाथ द्वारा अङ्कित एक भेंट के विवरण में स्वामी दयानन्द के विषय में रामकृष्ण के नाम से एक विचित्र कथन पाया जाता है और वह यह कि दयानन्द का केशवचन्द्र के साथ वैदिक देवताओं के सम्बध में उग्र विवाद हो रहा था तब रामकृष्ण ने दयानन्द को यह कहते सुना "परमात्मा ने बहुत से काम किए है तब क्या वह देवताओं को नहीं बना सकता था?" यह बात बहुदेवतावाद के परम विरोधी दयानन्द की मान्यता की नितान्त विरोधिनी प्रतीत होती है। हो सकता है कि दयानन्द की गर्जना को रामकृष्ण को ठीक रिपोर्ट न दी गई हो वा दयानन्द का अभिप्राय समझने में भूल हुई हो। यह भी हो सकता है कि दयानन्द वैदिक यज्ञों की चर्चा कर रहे होंगे जिन पर अपौरुषेय वेदों में श्रद्धा रखने के कारण उनकी निष्ठा थी। इस प्रत्यक्ष असगति का समाधान करने में मैं असमर्थ हूँ।"

इस घटना को उद्धृत करने का हमारा अभिप्राय उस घटना की संदिग्धता दर्शाना है जिसका लेखक ने अपने लेख के प्रारम्भ में वर्णन किया है क्योंकि स्वामी जी महाराज ने अपने व्याख्यानों और ग्रन्थों में अनेक बार इस बात को दुहराया है कि उनका उद्देश्य किसी नवीन मत की स्थापना करना नहीं था। महर्षि दयानन्द ने शास्त्रों का अर्थ ठीक-ठीक लगाया जिनकी प्रामाणिकता और उपादेयता का अनुभव और आदर शास्त्र वित्त विद्वानों और निष्पक्ष बुद्धिमान व्यक्तियों के द्वारा ही हो सकता है अपढ़ एवं पक्षपात पूर्ण

लोगों के द्वारा नहीं। उनकी दृष्टि में तो वे व्याख्याएं शास्त्रों में उलट फेर ही जान पड़ेगा। इसमें उनका कोई दोष नहीं। दोष तो उनकी शास्त्र ज्ञान की अनभिज्ञता का ही है।

लेखक के मतानुसार रामकृष्ण परम हंस को दयानन्द में एक कमजोरी यह दिखाई पड़ी कि स्वामी जी में सन्तों जैसी विनम्रता और निरहंकार न था। यदि लेखक महोदय स्वामी जी के जीवन चरित्र के आधार पर वास्तविकता जानने का यत्न करते तो निश्चय ही उन पर परमहंस के आरोप की निस्सारता सुस्पष्ट हो जाती। स्वामी दयानन्द सरस्वती कितने विनम्र, सहनशील, और निरभिमानी थे इस बात का किंचित परिचय निम्न लिखित घटनाओं से सहज ही मिल जायगा :—

(१) बम्बई के जज श्री महादेव गोविन्द रानडे के निमन्त्रण पर स्वामी जी एक जुलाई सन् १८७५ को पूना पधारे। वहां पन्द्रह व्याख्यान दिये। जाते समय एक जलूस निकाला गया। एक पालकी में चारो वेद थे और हाथी पर थे स्वामी जी महाराज। शरारती लोगों ने भी एक अपमान सूचक जलूस निकाला और स्वामी जी वाले जलूस पर कीचड़, पत्थर और ईंटें फेंकी गई। जज महोदय भी साथ ही थे। "पुलिस" का शब्द अभी उन्होंने मुंह से निकाला ही था कि महाराज ने शान्त होने के लिये कहा। ऋषि कमल की तरह खिले रहे। स्वामी जी के भक्त बलदेव जी को भी क्रोध आया। बलवान बलदेव का दण्डा उठते देख कर स्वामी जी ने प्यार से उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुये कहा "बलदेव! क्रोध किन पर जिनका दिन रात भला सोचते हैं। जिनकी हित कामना करते हैं जिनके सुधार के विचार में ही दिन रात बिताते हैं। उन पर इतना क्रोध।"

(२) दानापुर में एक सज्जन ने स्वामी जी से कहा—"महाराज आप तो ऋषि हैं ऋषि।" निरभिमानता की जीवित मूर्ति स्वामी दयानन्द ने कहा—

"आप लोग ऋषियों के अभाव में, जो चाहे मुझे कहलें। यदि मैं कणाद जैसे ऋषियों के समय में पैदा होता तो साधारण विद्वानों में भी मेरी गणना कठिनता से होती।"

स्वामी दयानन्द जिस समय कार्य क्षेत्र में अवतीर्ण हुए थे उस समय उनके चहुंओर धार्मिक अविश्वासों, पाखण्डों, विनाशक रूढ़ियों, कुरीतियों, अनाचारों और अविद्या का वातावरण व्याप्त था। धर्म और समाज सुधार के कार्य में वे अकेले जुटे थे। पग २ पर उनके मार्ग में विरोध के कांटे बिछे हुए थे। झाड़ियों और घास पात के बीहड़ वन से व्याप्त वैदिक धर्म्म की वाटिका को परिष्कृत करने के लिए उन्हें यदि तेज अस्त्र का प्रयोग करना पड़ा तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? जब भूल का सुधार, बुराई का खडन, पाखंड तथा दंभ का प्रकाश करना होता है तब निश्चय ही कुछ व्यक्तियों को सुधारक के प्रति अशिष्टता और अनुदारता का शिकायत हुआ करती है और ऐसे व्यक्ति गला फाड़कर अपनी शिकायत कटुता और निन्दा का प्रकाश किया करते हैं।

यदि परमहंस में महर्षि दयानन्द में अशिष्टता देख पड़ी तो इसे हम महर्षि को ठीक २ न समझने की भूल ही कह सकते हैं।

सन्त और महात्मा वन्दनीय हैं। परन्तु सन्त वह नहीं है जो सांसरिक दायित्वोंसे अलग-थलग रह कर अपने चहुंओर की बुराइयों और अनाचारों का निष्क्रिय दर्शक बना रहे। अपने को परमात्मा की आज्ञा स्वरूप पर-हित एवं अन्धकार और अनाचार के उन्मूलन में मिटा देना ही सच्चे सन्त की पहचान है। अङ्गरेजी के एक लेखक ने

सन्त का बडा अच्छा लक्षण किया है। वे कहते हैं,"जबहम सन्तोंके संबध में सोचने लगते हैं तो हमारे सामने बहुत पतले दुबले एकान्त सेवी शांत व्यक्तियों की मूर्ति उपस्थित हो जाती है जो प्राय: हर समय यह कामना करते रहते हैं कि हम जीवित न रहें तो अच्छा हो, इत्यादि। सन्त का मेरा आदर्श वह स्त्री है जो ब्राह्म मुहूर्त में उठ कर दूसरों के लिए काम करने लग जाती है। जो गृहस्थ की चक्की में पिसी रहती है और अपने साथ उन अनाथ बच्चों को रखती है जो उसके पेट से पैदा नहीं होते। यद्यपि वह बहुत व्यस्त रहती और काम धन्धे में लगी रहती है, परन्तु वह है मेरा 'सन्त'।"

आर्य समाज की योगी, आत्म-ज्ञानी सदाचारी परोपकारी आप्त विद्वानों को जिनका जीवन यज्ञमय रहता है विशेष आदर और मान्यता प्रदान करता है।

भारत वर्ष का वास्तविक शुद्ध सनातन धर्म ती वेद प्रतिपादित वैदिक धर्म्म ही है जो मनुष्यों के दिन प्रतिदिन के जीवन में प्रतिलक्षित हो और जो मनुष्य को सर्वतोमुखी विकास में समर्थ बनाता हो। वेद जिस धर्म्म का प्रतिपादन करता है वह केवल ईश्वर, जीव और प्रकृति के स्वरूप तथा उनके परस्पर सम्बन्ध परलोक और पुनर्जन्मादि कुछ सिद्धान्तों तक ही सीमित नहीं है। उसमें उन सब गुणों और कर्त्तव्यों का भी समावेश हो जाता है जिनसे लौकिक उन्नति तथा आध्यात्मिक शान्ति और मुक्ति की प्राप्ति हो। अर्थात् वैयक्तिक, पारिवारिक, धार्मिक सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक हर प्रकार की उन्नति वैदिक धर्म्म के लक्ष्य में रहती है। मूर्ति पूजा, अवतार वाद, तीर्थ, व्रत और अनुष्ठानों आदि से युक्त अनर्गल विश्वासों मान्यताओं और क्रिया कलाप को हम वैदिक धर्म्म नहीं कह सकते। यह पौराणिक मत है। वैदिक धर्म्म को हिन्दू धर्म्म का एक खंड और पौराणिक मत को भारत का अखंड धर्म्म बताना लेखक महोदय की अपनी कल्पना ही है जिसे भारतीय धर्म्म के इतिहास का जरा भी समर्थन प्राप्त नहीं है।

यही पौराणिक मत था जिसने वैदिक धर्म्म के विशुद्ध स्वरूप को विकृत करके धर्म्म और जाति का महान् अपकार किया; जिसने भारतीय हिन्दू धर्म्म को अनिश्चित रूप दिया, जिसने देश में स्वार्थ, फूट, वैमनस्य, अनाचार, पाखंड, अज्ञान, और अन्ध विश्वास को व्याप्त कर हमें पग २ पर अपमानित कराके मानसिक एवं राजनैतिक हर प्रकार की अवनति और दासता के गर्त में डाले रखा। परमात्मा को धन्यवाद है जिसने अन्धकार की निविड़ रात्रि में धर्म्म के वास्तविक अर्थ और स्वरूप को दर्शाने और प्रजा को कल्याण मार्ग पर डालने का सत्प्रयत्न करने के लिए दयानन्द को पथ प्रदीप बनाकर भेजा। हिन्दू धर्म्म का सुधार करके उसे उस उच्च सिंहासन पर आरूढ़ करने वाले जिससे वह च्युत कर दिया गया था हिन्दू धर्म्म के वास्तविक प्रतिनिधि नहीं हैं और मूर्ति पूजा अवतारवाद आदि के प्रचार द्वारा उस धर्म्म के विकृत रूप को बनाए रखने में योग देकर उसे उच्च सिंहासन पर आरूढ़ होने से वंचित करने वाले उसके वास्तविक प्रतिनिधि हैं। कैसी विडम्बना है?

यदि कोई व्यक्ति इस बात से इन्कार करे कि महर्षि दयानन्द ने भारतीय धर्म्म और समाज में सुधार करके उनकी रक्षा नहीं की तो ऐसा कहना दुस्साहस ही होगा। स्वामी दयानन्द ने भारत की धार्मिक भावना की उस समय रक्षा की जब वह बिल्कुल दुबली हो चुकी थी, जब यूरोपकी उच्चतम धार्मिक भावना उसका (भारतीय भावना) दीपक बुझाने की धमकी दे रही थी और उसका संतोषजनक स्थान लेने के लिए कोई दूसरी भावना विद्यमान न थी। इसे रोम्या रोला ने एक ऐति-

हासिक घटना बता कर दयानन्द को आदर के साथ याद किया है।

लेखक का आक्षेप है कि यद्यपि दयानन्द ने हिन्दू विचारों मे महान् क्रांति उत्पन्न की तथापि हिन्दू जनता का अत्यन्त विशाल भाग उनकी ओर उत्साह से नहीं दौड़ा। महर्षि की ओर भारत के लोग किस उत्साह से दौडे उसका प्रमाण भी रोम्या रोला से लीजिए। वे लिखते हैं "वेदों के उद्धारक, वेद ज्ञान के पंडित, महान् जाति के प्रतिनिधि महर्षि दयानन्द का जो प्राचीन भारत के पवित्र ग्रन्थों में अपनी वीर भावना के साथ प्रविष्ट हुआ था, लोगोंने उत्साह केसाथ स्वागत किया।" जो लोग आर्य समाज वा ऋषि दयानन्द की ओर दौड़ने से पीछे रह गए उसका कारण महर्षि और आर्य समाज के प्रति आकर्षण की कमी नहीं अपितु सहस्रों लाखों वर्षों की मानसिक दासता अन्ध विश्वास रूढ़िवाद वा निहित स्वार्थों के परित्याग की कठिनाइयां रही है।

यदि महर्षि दयानन्द ईसाई और मुसलमानों के साथ शास्त्रार्थ के अमोघ, अस्त्र से काम न लेते, पढ़े लिखे लोगों के सशयवाद को न मिटाते हिन्दू धर्म्म को बेहूदा रूढियों के गर्त से न निकालते, छुआछूत के भूत को मार न भगाते हिन्दू धर्म्म को, चौके चूल्हे, रोटी, पानी तिलक छाप, कठी माला आदि के थोथे लक्षणों से परिष्कृत करके उसके कच्चे धागे को जिस पर वह झूल रहा था पक्का न करते तो परमात्मा ही जानता है हमारी हर प्रकार की कितनी अधोगति और हुई होती और श्री दिनकर जी दिनकर जी रह पाते इसमें हमें सन्देह है। श्री राजगोपालाचार्यके शब्दों मे महर्षि ने हिन्दू समाज की रक्षा करके उसे भले आदमियों के रहने के योग्य बनाया। महर्षि दयानन्द और आर्य समाज को हिन्दू समाज के प्रति उपकारों के लिए इससे बढ़कर और क्या प्रमाण पत्र दिया जा सकता है? यदि महर्षि हिन्दू समाजको न सुधारते और ईसाई मुसलमानों के प्रबल आक्रमणों से उसकी रक्षा न करते तो न मालूम आज हम क्या और कहा होते?

महर्षि दयानन्द के सुधार प्रचार और रक्षण को ही यह श्रेय प्राप्त है कि उन्होंने हिन्दूधर्म्म को वरेण्य बनाया अन्यथा वह निंदनीय बना ही हुआ था और जब तक लेखक महोदय जैसी पक्षपात पूर्ण मनोवृत्ति काम करती रहेगी तब तक उसे निंदनीय रूप प्राप्त भी रहेगा।

यह ठीक है कोरा तर्क ही सब जगह काम नहीं देता परन्तु अन्ध श्रद्धा भी काम नहीं देती श्रद्धा और तर्क का समन्वय होने से ही काम चलता है। पुरातन और नूतन परम्परा और बुद्धि पूर्व और पश्चिम में उचित सामजस्य उत्पन्न होने से ही भारत का वास्तविक सुधार सभव हो सकता था। महर्षि ने इसी मध्यम मार्ग को अपनाया और सफलता प्राप्तकी। महर्षिके उच्च चरित्र तप, त्याग एव धर्म्माचरण का प्रमाण पत्र लेखक महोदय से लेने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उन्हे देश और विदेश के बडे २ महापुरुषों और नेताओं से हिंदू, ईसाई, मुसलमान, पारसी आदि २ सभी अधिकारी जनों से प्राप्त रहा है।

लेखक महोदय ने लिखा है कि "भारत की परम्परा है कि यहा की जनता विद्या से आतंकित नहीं होती हम तर्क से पराजित होने वाली जाति नहीं हैं। हा नम्रता, त्याग और चरित्र से हमे कोई जीत सकता है। हम पंडितों का सत्कार करते है, उनकी पूजा और भक्ति नहीं। यह बात पीरों पैगम्बरों आदि मे विश्वास रखने वालों की मनोवृत्ति की द्योतक है। विशुद्ध भारतीय परम्परा में बुद्धि पर ताला लगाने की कल्पना ही नहीं की जा सकती। जो बात विद्या बुद्धि और तर्क की कसौटी पर खरी और सत्य सिद्ध हो उससे पराजित होने में गौरवही है कोई हेठी नहींहै। भारतीय परम्परा

महर्षि दयानन्द

[संचारमंत्री श्री जगजीवनराम जी का अखिल भारतीय आकाश वाणी नई दिल्ली से प्रकाशित भाषण—१०।३।५६]

भारत आज उत्थान की ओर उन्मुख है। व्यक्ति के स्तर पर पूर्णतर, समृद्धतर जीवन की कामना : समष्टि के स्तर पर यह आकांक्षा कि कि भारत शक्तिशाली राष्ट्र हो और संसार के अन्य देशों के मार्ग दर्शन में योग दें। हमारी यह प्रेरणाएं हैं। यही नहीं हम साधन की शुद्धता पर भी ध्यान देते हैं केवल साध्य की प्राप्ति पर नहीं और आज भारतीय जनतन्त्र अल्पकाल में ही संसार में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त कर चुका है।

हमारी दृष्टि आगे की ओर हो, हमारी गति आगे की ओर हो, इससे मतभेद किसे होगा ? लेकिन लक्ष्य का निरूपण हम तभी कर पायेंगे जब हम अपने बीते इतिहास की ओर देखें, हमारे पग उचित मार्ग में सवेग तभी चालित होंगे जब हम अपने प्रेरणा स्रोतों से केवल मानसिक ही नहीं वरन एक भावनात्मक सम्बन्ध भी जोड़ें।

आज की रात आज से एक सौ अठारह वर्ष

भी यही रही है। नम्रता, त्याग और चरित्र का माप दंड भी तर्क, बुद्धि और विद्या द्वारा परिमार्जित सत्य तथा उसका आचरण ही है और इससे भी बड़ा माप दंड प्रतिदिन का व्यवहार और परीक्षण होता है। इसी परम्परा के परित्याग से भारत में अन्ध परम्परा और अन्ध विश्वास प्रसारित होकर विद्वानों के स्थान में अविद्वानों और अनधिकारियों की पूजा भक्ति का प्राबल्य हुआ जिसने विविध अभिशापों के साथ गुरुडम को विद्या, तप त्याग और चरित्र के साथ खिलवाड़ करने की छुट्टी देकर जाति का अमित अपकार किया। पाखंडी एवं दुराचारी लोग धर्म्म के ठेकेदार बने और अन्ध भक्त लोगों ने उन्हें नम्रता चरित्र और त्याग का प्रमाण पत्र दे डाला।

धर्म्म की साकार प्रतिमा तो परमात्मा ही है और वही हमारा परम आदर्श हो सकता है।

लेखक महोदय कहते हैं कि परम हंस अपने निवास स्थान से बाहर नहीं गए जब कि दयानन्द संस्कृति केआंदोलनकारी नेता थे। इस आक्षेप का उत्तर उस प्रभाव से सम्बद्ध है जो महात्माओं के जीवन तथा कार्य केप्रकार स्थायित्व और व्यापकता की कसौटी पर आंका जाता है। योगी अरविन्द दयानन्द के इस प्रभाव के सम्बन्ध में जिस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं वह उन्हीं के शब्दों मे सुनिए :—

'महर्षि दयानन्द वे महानुभाव थे जिन्होंने वस्तुओं की आत्मा पर अपना अनिश्चित और अनौपचारिक प्रभाव नहीं डाला अपितु जिन्होंने मनुष्यों और वस्तुओं पर अपने व्यक्तित्व की ऐसी छाप डाली जो मिट नहीं सकती।

दयानन्द वे व्यक्ति थे जिन्हें अपने काम का निश्चित ज्ञान था और जिसके लिए वे इस संसार में भेजे गए थे। उन्होंने अपने साधन स्वयं चुने, और प्रबलतम आत्म अनुभूति के साथ अपने वातावरण का निर्माण और जन्मजात नेता के रूप में वीरता के साथ अपनी भावना को क्रियात्मक रूप दिया—उन्होंने मेरे मन पर जो सब से बड़ी छाप डाली वह एक शब्द में यह थी कि महर्षि दयानन्द ने आध्यात्मिकता को मूर्त्त रूप दिया।

पहले सन् १८३८ में मूल जी नाम के तेरह वर्ष के बालक के जीवन में एक घटना घटी, जिसने भारत के इतिहास पर अपनी अमिट छाप छोड़ दी। एक सम्पन्न प्रतिष्ठित शिव भक्त धर्मनिष्ठ गुजराती ब्राह्मण कुल में उत्पन्न इस प्रतिभाशाली बालक को इस घटना ने न केवल मूर्तिपूजा का घोर शत्रु बना दिया वरन हिन्दू धर्म के प्रकृत रूप को जानने की तीव्र आकांक्षा भी उसके हृदय में भर दी। परिणामतः वह बालक इक्कीस वर्ष का होते-होते गृहत्यागी बना, तेरह चौदह वर्षों तक सत्य की खोज में परिभ्रमण करता रहा, वेद शास्त्रों के अध्ययन में वर्षों व्यतीत किया और आगे चल कर आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द के नाम से विख्यात हुआ।

वे दिन थे जब हिन्दुत्व निष्प्राण परिपाटियों और रीतियों का समुच्चय मात्र था। हिन्दुओं में आत्म सम्मान और आत्म विश्वास का ह्रास हो चुका था। छठी शताब्दि से पहले का वह युग जब हिन्दुत्व को उदार और विशालधारा में आक्रामक बाह्य संस्कृतियां भी हिंदुत्व में एकाकार हो जाती थीं, हिंदुओं को विस्मरण हो चुकी थी। शङ्कर का दर्शन कभी का धूमिल और म्लान हो केवल कर्मकांड मात्र बच गया था। बारहवीं तेरहवीं शताब्दि के बाद जब जाति प्रथा अत्यन्त बलवती हो गई तो ह्रास की क्रिया भी वेगवती हुई। हिंदुत्व की भावना के स्थान पर भिन्न २ जातियों की भावना ही शेष रही। संतमत के प्रादुर्भाव से हिंदु समाज को कुछ शक्ति मिली और हिंदुत्व आक्रामक संस्कृतियों के समक्ष रह सका। लेकिन गुरु रामदास और गुरु नानक तथा अन्य गुरुओं के अतिरिक्त संतमत अन्तर्मुखी था, उसका दृष्टिकोण बचाव का था, आक्रमण का नहीं। अतएव हिंदुत्व किसी तरह टिका रहा, पुनर्जागरण की तीव्र भावना से स्पन्दित न हो सका। ईसाई संस्कृति के आगमन के समय तो सिख और मराठे भी तेजहीन हो चुके थे। संतमत की छोटी छोटी शुभ्र सरिताएं जैसे अन्ध परम्परा और जड़रूढ़ियों की अपार बालुकाराशि में खो गई थीं। ईसाई और इस्लाम धर्मावलम्बी हिंदुत्व जैसे क्षमा याचना करता हुआ निश्चेष्ट रहता, या उन धर्मों और संस्कृतियों से मेल की याचना करता। अपने धर्म में, ईश्वर में, हिंदुओं की आस्था केवल औपचारिक थी, भावनात्मक सम्बन्धों का लोप हो गया था इन कारणों से सांस्कृतिक हीनता की, जड़ता की भावना उत्पन्न हुई थी और राजनीतिक आर्थिक कारणों का दबाव इस पृष्ठभूमि में बहुतों को ईसाई या इस्लाम मत की ओर ले जा रहा था। ठीक ऐसे समय में महर्षि दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ।

आदि ग्रन्थ वेदों की अमृतमयी वाणी का शाश्वत आधुनिकत्व महर्षि दयानन्द के मुख से निकल जैसे शक्ति का एक अजस्र स्रोत बना। उन्हें महान आश्चर्य हुआ। दुःख हुआ, आक्रोश जगा, कहां वेदों और उपनिषदों का सच्चिदानंद रूपी मानव का महान् आदर्श। कहाँ रूढ़ियों, अन्धविश्वासों, कुरीतियों, पंडों और धर्म के अन्य तथाकथित ठेकेदारों के पास में बन्दी निरीह हिन्दू नामधारी मानव और उनकी वाणी में एक उद्दीप्त विश्वास भर गया जिसने भारतीय जीवन के विभिन्न अङ्गों को प्रदीप्त कर दिया।

वेदों का अन्तिम और पूर्ण अभिप्राय कुछ भी हो और इस पर मैतक्य सम्भव नहीं है। महर्षि दयानन्द के भाष्य ने उन्हें हिंदू धर्म के प्रधान धर्म ग्रन्थों की वेदी पर सदा के लिए प्रतिष्ठित कर दिया। मरणोन्मुख आर्य जाति की हीन भावना एकाएक जैसे लुप्त हो गई और हमारी दबी, संकुचित, सहमी, संस्कृति नवजीवन और नवस्फूर्ति से भर उठी। संस्कृत और हिंदी का अधिकाधिक प्रचार आरम्भ हुआ। हिंदुओं में

आर्यत्व जगा। प्राचीन संस्कारों के प्रति आस्था जगी और हिंदू संस्कृति शताब्दि बाद गतिशून्य न रह कर प्रगति शील बन गई। महर्षि दयानन्द ने समस्त संसार को वेदानुयायी बनाने का स्वप्न देखा था और उनकी वाणी जहां विदेशीय संस्कृतियों को चुनौती देती हुई कहती वेद आर्य जाति, संस्कृत भाषा और भारत देश अपूर्व है। इनके समान कहीं कोई नहीं है वहां अपने धर्मावलम्बियों को फटकारती हुई उन कुरीतियों की ओर ध्यान दिलाती जिनसे हिंदुत्व जर्जरित हो चुका था। अछूतपन के अन्याय के विरुद्ध उनकी आवाज ऊंची उठी। स्त्रियों की स्थिति को सुधारने के उनके प्रयास अत्यन्त साहसिक और उदार थे। उनकी हिंदुत्व भावना में हमारी राष्ट्रीय जाग्रति के बीज थे। वह हमारे राष्ट्र के पुनर्निर्माण और संगठन के प्रथम और अत्यन्त योग्य सेनानियों में थे।

जिन्हें इतनी निष्ठा हो आर्य संस्कृति की महानता पर, जिन्हें इतना अपार विश्वास हो हिंदुत्व की उच्चता पर, वे विदेशीय शासन या विदेशीय संस्कृति के प्रभाव को कैसे सहन करते। इस्लाम या ईसाई धर्म के खंडन के पीछे मूलतः नकारात्मक खंडन की नहीं, हिंदुत्व के पुनरुत्थान की प्रेरणा थी। हिंदुत्व का पुनरुत्थान राष्ट्र का पुनरुत्थान था। कुछ ऐतिहासिकों का मत है कि महर्षि ने सन् १८५७ के गदर में एक सिपाही के रूप में भाग लिया था तथा प्रसिद्ध क्रांतिकारी नेता श्यामजी कृष्ण वर्मा उन्हीं से प्रेरणा और मार्ग दर्शन पाते रहे थे। पंजाब और उत्तर प्रदेश में जहां आर्य समाज का जोर रहा उस युग के स्वतंत्रता संग्राम के अग्रणी व्यक्तियों में अधिकांशतः आर्य समाजी थे। समाज सुधार के क्षेत्र में तो आर्य समाज की सेवाएं अपूर्व हैं।

कहा जा सकता है कि महर्षि दयानन्द के मुख्य संदेशों को देश ने अन्ततः ग्रहण नहीं किया। मूर्ति पूजा आज भी प्रचलित है, जाति प्रथा आज भी हमारे देश और जनतंत्र की प्रगति में पहले ही की तरह नहीं बल्कि उससे उग्रतर रूप में बाधक है और आर्य समाज भी इतमत की विभिन्न शुभ्र सरिताओं की तरह सनातन धर्म की रूढ़ियों के अपार बालुकाराशि में लुप्त प्रायः सा हो गया है—न उसमें नवीन जीवन है, न नवीन प्रेरणा।

लेकिन इन कारणों की तुला पर महर्षि के जीवन या उनकी उपलब्धियों को नहीं तोला जा सकता। महर्षि उस युग में क्रांति के द्रष्टा नहीं हो सकते थे— उस महान क्रांति के जो मानव इतिहास की महानतम क्रांति होगी जिसकी आज भारत को आवश्यकता है। वेदों में उनकी अपार निष्ठा उन्हें यह देखने नहीं दे सकती थी कि वर्ण व्यवस्था को रखते हुये जाति भावना तथा जाति प्रथा के विभेदों एवं तज्जनित अस्पृश्यता को दूर करने की बात सोचना दिवा स्वप्न है। आक्रामक संस्कृतियों के दम्भ से उत्प्रेरित उनका आर्यत्व यह सहन नहीं कर सकता था कि भारतीय संस्कृति के प्रांगण में अन्य संस्कृतियों का प्रभाव शक्तिशाली बन जाय। लेकिन उस सर्वथा निष्कपट, सरल सत्यान्वेषी द्वेषरहित चट्टान से अटल सन्यासी की स्मृति तो हमें सदैव ही प्रेरणा प्रदान करती रहेगी। हम आज यह मानने मे असमर्थ है कि जिस प्रकार पशु, पक्षी, कीटाणु में जातिभेद स्वाभाविक है, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि वर्ण भेद भी कर्म-गुण स्वभाव के आधार पर वैज्ञानिक है। इसी प्रकार इस सांख्य को ईश्वरवादी माने न माने, अष्टांग साधना में निरत हो या न हों और चैतन्य निराकार ईश्वर की उपासना को एक विधि बनायें या न बनायें महर्षि ने भारत के आध्यात्मिक इतिहास में जिस सत्य और एकता को देखा, आचार सम्बन्धी पुनरुत्थान के जो

* महर्षि दयानन्द जीवन चरित्र *

शंका समाधान

क्या जगत् मिथ्या है ?

राम घाट में स्वामी कृष्णानन्द नामक एक सन्यासी ने स्वामी जी से पूछा क्या जगत ऐसा ही मिथ्या नहीं है जैसे रज्जु का सर्प।

स्वामी जी ने कहा जगत मिथ्या नहीं है। सच्चे सर्प का ज्ञान मनुष्य के अन्त करण में विद्यमान् होता है। केवल भय के कारण रज्जु को तदाकार देख कर सर्प मान लेता है परन्तु ज्यों ही सच्चे सर्प के लक्षणों को रज्जु के साथ मिलाने लगता है उसी समय भय भाग जाता है। आलस्य निमग्न साधु पण्डितों ने धर्म्मकर्म और लोक हित करने से बचने के लिये मायावाद का ढकोसला बना रखा है। ये लोग ब्रह्मसत्ता का अनुभव तो करते ही नहीं उल्टे ब्रह्म ब्रह्म जगन्मिथ्या' कहकर रात दिन मिथ्या वचन बोलने के भागी बनते हैं।

खन्दोर्ट (बुलन्दशहर) गाव का निजामी छत्रसिंह जाट जो स्वामी जी का प्रेमी था परन्तु वसे पक्का नवीन मायावादी था एक दिन स्वामी जी के पास आया और नवीन वेदान्त पर वार्ता लाप करने लगा। उसने कहा 'स्वामी जी आप चाहे जो कहें परन्तु यह दृश्यमान जगत आकाश पुष्प समान मिथ्या है स्वप्न सृष्टि तुल्य भ्रममात्र है वन्ध्या पुत्र समान कल्पित है वास्तव में यह है ही नहीं।"

स्वामी जी ने थोड़ा सा आगे बढकर छत्रसिंह के मुख पर एक हल्का सा थप्पड़ लगाया। चपत खाते ही वह चौंक उठा और कपोल मलता हुआ कहने लगा 'महाराज! सिद्धान्त भेद होने पर हा विचार न मिलने पर ही आप जैसे ज्ञानी जनों को आवेश में आकर थप्पड मार देना शोभा नहीं देता।'

"स्वामी जी ने मन्द मुस्कान सहित कहा चौधरी जी, ! जब आपके निश्चयानुसार ब्रह्म ही

सकेत किए धर्म को थोथे पण्डितों के जाल से मुक्त करने के जो प्रयत्न किए, वे बराबर ही हमारे लिए मार्ग दर्शन का कार्य करेंगे।

हिंदुत्व क विगत इतिहास पर दृष्टिपात करते समय हम वर्तमान को न भूलें। हमारा यह विश्वास है कि हिंदू दर्शन सारी मानवता को उन्नततर और वृहत्तर जीवन को ओर ले जाने की क्षमता रखता है। हमारा यह विश्वास है कि हिंदू दर्शन अपर्व और अद्वितीय है और यह विश्वास भ्रमात्मक हो, ऐसी बात भी नहीं। फिर भी हमारे सामा जिक गठन पर हमारी विचार पद्धति पर हमारे सामाजिक या वैयक्तिक जीवन पर इस महान् दर्शन की कोई छाप नहीं दीखती। हमारे वैयक्तिक, सामाजिक, सास्कृतिक और राजनीतिक जीवन मे क्षुद्रताए, व्यर्थ के विभेद, कलह और ताप इस प्रकार परिव्याप्त हैं कि जीवन से हमारे महान् दर्शन की कल्पना भी नहीं हो सकती। अन्तर्विरोध जैसे एक क्राति का आह्वान है, एक महान् क्राति का जिसमे सभी कृत्रिम विषमतायें और स्वार्थमय मान्यतायें भस्मसात हो जाय। आज भारत को महर्षि जेसे सामाजिक क्रातिकारी की आवश्यकता है।

(अखिल भारतीय आकाश वाणी देहली से साभार)

एक वस्तु है, दूसरी कोई भी नहीं और जो कुछ दिखाई पड़ता है वह सब मिथ्या है तो वह आप से भिन्न दूसरा कौन है जिसने आपके अपर लगाया है ? आपको मिथ्या की प्रतीति कैसे हो गई ?"

छत्रसिंह ने यह सुनकर स्वामी जी के चरण पकड़ लिये और कहा 'महाराज ! आपने मेरी आंखें खोल दीं। वास्तव में हम अनुभव शून्य हैं। केवल बौड़ाहे मनुष्य की भांति वेदान्तवाद की बक बक करने लग जाते हैं।'

(२)

यज्ञोपवीत का किसको अधिकार है ?

छिबाई निवासी श्री शिवदयालजी ने कर्णवास में स्वामी जी से पूछा 'यज्ञोपवीत का किसे अधिकार है ? इसके धारण न करने से क्या दोष है और धारण करने में क्या लाभ है ?'

स्वामी जी ने कहा 'ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के बालकों को जनेऊ लेने का अधिकार है। जिस ने यज्ञोपवीत धारण नहीं किया वह वैदिक कर्म करने का अधिकारी नहीं हो सकता। यह सूत्र आर्यों का धार्मिक और कर्तव्य चिन्ह है। जो जन धर्म, कर्म हीन हो जायें उनके जनेऊ उतार लेने चाहियें ?'

(३)

संस्कारों से क्या लाभ है ?

शिवदयाल जी ने पूछा 'महाराज ! संस्कारों के क्या लाभ हैं ?' महाराज ने उत्तर दिया, 'संस्कारों से जाति प्रबल हो जाती है, जैसे एकीकरण से धागे के तारों में बल आ जाता है, जैसे औषधियों को पुट और भावना देने से उनका प्रभाव बढ़ जाता है, वैसे ही संस्कार मनुष्य के जन्म को प्रबल बना देते हैं।'

(४)

ईश्वर की सत्ता कैसे जानी जाय ?

अनूपशहर में चांदोक निवासी ठा० गिरवर सिंह ने स्वामी जी से कहा, 'महाराज ! ईश्वर की सत्ता कैसे जानी जा सकती है ?' स्वामी जी ने उत्तर दिया 'कारण के बिना कार्य नहीं होता। इस जगत् में जो गति है उसका कोई कारण अवश्य होना चाहिये और वह कारण ईश्वर है। तीनों गुणों (सत्व, रज, तम) की साम्यावस्था में विषमताजनक वस्तु प्रकृति से भिन्न होनी ही चाहिये सो वह परमात्मा ही है। सृष्टि में जो नियम देख पड़ता है उसका नियन्ता सर्वज्ञ परमेश्वर के बिना अन्य कोई भी नहीं हो सकता।'

(५)

शुद्ध शूद्रों का बनाया हुआ भोजन खाने में हानि नहीं ?

अनूपशहर में उमेदा नामक एक नाई रहता था। एक दिन वह प्रेम सहित थाल में भोजन परस कर स्वामी जी की सेवा में लाया। स्वामी जी ने भक्त के भोजन को लेकर भोग लगाना आरम्भ कर दिया। उस समय वहां बीस पच्चीस ब्राह्मण विद्यमान थे। वे कह उठे 'छि: छि: छि ! स्वामी जी क्या करते हो ? यह रोटी तो नाई की है। महाराज ने हंसते हुए कहा नहीं यह रोटी तो गेहूं की है इसलिये मैं इसे अवश्य खाऊंगा।'

(६)

अब उत्तम सन्तान क्यों नहीं होती ?

एक भक्त ने पूछा 'महाराज ! पुराकाल में जैसी उत्तम, मनोवांछित सुपात्र सन्तान हुआ करती थीं वैसी अब क्यों नहीं होतीं ?'

स्वामी जी ने उत्तर दिया—'प्राचीन काल में आर्य जन वैदिक संस्कार किया करते थे, वैदिक आचारयुक्त हुआ करते थे इसलिये उनकी सन्तान में ओज होता था तेज होता था और वीरता होती थी परन्तु इस युग में लोग इन्द्रियाराम और विषयानन्द ही को प्रधानता दिये हुए हैं। वैदिक संस्कारों का त्याग कर बैठे हैं, लोगों के घरों में कुरीतियों की भरमार है इसीलिये उनकी सन्तान भी निस्तेज, दीन दुखिया उत्पन्न होती है।'

(७)

रासलीला निन्दनीय है।

कर्णवास में राव कर्णसिंह ने अपने निवास स्थान पर रासलीला का आयोजन किया। उस समय स्वामी जी भी कर्णवास में विराजमान थे। कुछ पंडित लोग स्वामी जी को भी रासलीला देखने के लिये बुलाने गए। परन्तु स्वामी जी ने कहा—'हम ऐसे निन्दनीय कार्य में कदापि नहीं सम्मिलित हो सकते। तुम लोग जो अपने पुरुषाओं के स्वाँग बना कर देखते हो यह अति लज्जास्पद शोक की वार्ता है। किसी साधारण पुरुष के माता पिता को परिजन का स्वरूप भर कर कोई नचावे तो उसे कितना बुरा लगता है? परंतु मूढ़जन अपने मान्य महापुरुषों के स्वांग बनाकर नचाते और प्रसन्न होते हैं।'

(८)

महात्म्य सब गप्प है

आवेश में भरे राव कर्णसिंह ने स्वामी जी को कहा कि तुम अवतारों और गंगा जी की निंदा करते हो। स्मरण रक्खो यदि मेरे सामने निन्दा की तो मैं बुरी तरह पेश आऊंगा।

महाराज ने कहा—'मैं निन्दा नहीं करता हूँ किन्तु जो वस्तु जैसी है उसे वैसा ही कहता हूँ। गंगा भी जैसी और जितनी है उसे वैसी और उतनी ही वर्णन करता हूँ। सत्य के कथन करने में सर्वथा निर्भय हूं।"

तो फिर गंगा कितनी है?

स्वामी जी अपना कमंडलु उठा कर बोले—'मेरे लिए तो इतना जल उपयुक्त है सो यह इतनी ही है।'

राव कर्णसिंह बोला—'गंगा गंगेति इत्यादि श्लोकों में नाम कीर्तन, दर्शन, स्पर्शन से पाप नाश कहा है।'

स्वामी जी ने कहा—'ये श्लोक साधारण लोगों के कपोल कल्पित हैं। माहात्म्य सब गप्प हैं। पाप नाश और मोक्ष प्राप्ति वेदानुकूल आचरण से होगी अन्यथा नहीं।'

(९)

कल्याणकारी कर्म

कर्णवास में एक धुनिया स्वामी जी के सत्संग में जाया करता था। स्वामी जी ने उस पर दया करके उसे ओ३म् का जप करना सिखाया। एक दिन उस धुनिये ने श्री सेवा में प्रार्थना की कि 'स्वामी जी! जप के अतिरिक्त मुझे और क्या कर्म करना चाहिये जिससे मेरा कल्याण हो?' स्वामी जी ने कहा—'सदाचार पूर्वक जीवन बिताओ। जितनी रूई किसी से लो, धुन कर उतनी ही उसे लौटा दो। यही सद्व्यवहार तुम्हारे लिये एक उत्तम कल्याणकारी कर्म है।'

(१०)

आत्म प्रेम

एक दिन गंगा तट पर एक साधु कमण्डल आदि प्रक्षालन करके वस्त्र धोने में प्रवृत्त था। वह घुटा हुआ मायावादी था। दैवयोग से भ्रमण करते हुए स्वामी जी भी वहाँ जा पहुंचे। उसने स्वामी जी को सम्बोधन करके कहा—"इतने त्यागी परमहंस, अवधूत होकर आप खंडन मंडन रूप प्रवृत्ति के जटिल जाल में क्यों उलझ रहे हो?'

निर्लेप होकर क्यों नहीं विचरते ?' महाराज मुस्करा कर बोले—'हम तो सब कुछ करते हुए भी निर्लेप हैं। रही प्रवृत्ति की बात, सो शास्त्रीय प्रवृत्ति प्रजा प्रेम से प्रेरित होकर सब ही को करनी उचित है।'

साधु जी ने कहा— प्रजा प्रेम का नया बखेड़ा क्यों डालते हो ? आत्मा से प्रेम करो जिसके लिए श्रुति पुकार रही है। उस समय उसने मैत्रेयी और याज्ञवल्क्य के सम्वाद के वाक्य भी बोले।' तब स्वामी जी ने पूछा—'वह प्रेममय आत्मा कहा है ?' साधु ने कहा—'वह राजा से लेकर रङ्क पर्य्यन्त और हस्ती से लेकर कीट तक सर्वत्र ऊंच नीच मे परिपूर्ण है।' स्वामी जी बोले 'जो आत्मा सब मे रमा हुआ है क्या आप सच मुच उससे प्रेम करते हैं ?' साधु ने उत्तर दिया, 'तो क्या हमने मिथ्या वचन बोला है ?' तत्पश्चात् स्वामी जी ने गम्भीरता पूर्वक कहा—'नहीं आप उस महान् आत्मा से प्रेम नहीं करते। आपको अपनी भिक्षा की चिन्ता है, अपने वस्त्र उज्ज्वल करने का ध्यान है। अपने भरण पोषण का विचार है। क्या आपने कभी उन बन्धुओं का भी चिन्तन किया है जो आपके देश में लाखों की संख्या में भूख की चिता पर पड़े हुए रात दिन बारहों महीने भीतर ही भीतर जल कर राख हो रहे हैं ? सहस्रों मनुष्य आपके देश में ऐसे हैं जिन्हें जीवन भर भर पेट अन्न नहीं मिलता। उनके तन पर सड़े गले मैले कुचैले चिथड़े लिपट रहे हैं। लाखों निर्धन दीन ग्रामीण भेड़ों और भैसों की तरह गदे कीचड़ और कूड़े के ढेरों से घिरे हुए सड़े गले झोंपड़ों में लोटते हुए जीवन के दिन काट रहे हैं। ऐसे कितने ही दीन दुखिया भारत वासी हैं जिनकी समार कोई भूले भटके भी नहीं करता। बहुतेरे कुसमय में राज मार्गों में पड़े २ पाव पीट कर मर जाते हैं परन्तु उनकी बात तक पूछने वाला कोई नहीं मिलता। महात्मन्! यदि आत्मा से और विराट आत्मा से प्रेम करना है तो उनकी भी चिन्ता करनी पड़ेगी। सच्चा परमात्म सेवी किसी से घृणा नहीं करता। वह ऊंच नीच की भावना को त्याग देता है उतने ही पुरुषार्थ से दूसरों के दुःख निवारण करता है जितने से वह अपने करता है। ऐसे ज्ञानी जन ही वास्तव में आत्म प्रेमी कहलाने के अधिकारी हैं।' वह साधु यह सुनकर स्वामी जी के चरणों में गिर पड़ा और अपने अपराध को क्षमा कराने लगा।

मणि माला

मय्येवास्तु मयि श्रुतम (अ० १-१ २)

परमात्मन्! ऐसी कृपा करो कि मैंने जो सच्चा ज्ञान प्राप्त किया है वह मुझमें बना रहे। नष्ट न होने पाए। मैं उसे भूल न जाऊं।

उतस्वया तन्वा संवदे तत्कदा वन्तर्वरुणे भुवानि ॥ (ऋ० ७८६।२)

हे अन्तर्यामिन मम स्वामिन! मेरा आधार तू है। मैं अपने शरीर द्वारा तुझसे पूछता हूँ। तू मुझे बता कि मैं कब सब कुछ भुला कर तेरे भरोसे रहने लगूंगा।

त्वे अपि क्रतुर्मम ॥ (ऋ० ७।३१।५)

हे ज्ञान भण्डार! सबसे बड़े कर्मठ भगवन्! ऐसी कृपा कीजिये, कि मेरे ज्ञान तथा कर्मों का तू आधार हो। तेरे लिये जीऊँ, तेरे लिये चलूं फिरूं और तेरे लिये चेष्टा करूं।

स्वाध्याय का पृष्ठ

अध्यात्म और भौतिकवाद

ये दोनों शब्द अङ्गरेज़ी भाषा के Spiritualism और Materialism शब्दों के स्थान पर प्रयुक्त किए जाते हैं और युरोपियन विचारधारा मे इन दोनों वादों को एक दूसरे का विरोधी माना जाता है। भारत वर्ष में भी पाश्चात्य विचारकों के सम्पर्क से अंग्रेजी शिक्षा दीक्षा में दीक्षित विचारक इन दोनोंको एक दूसरेका विरोधी समझते हैं। रोमन कथोलिक सम्प्रदाय के आचार्य्य और नेता भी ईसाइमत को अध्यात्मवाद के प्रतिनिधि के रूप में पेश करते हैं और भौतिक सुखों की वृद्धि करने वाले वैज्ञानिक उत्कर्ष को अध्यात्मवाद का प्रतिपक्षी समझते हैं। परन्तु दोनों वादों को एक दूसरे का परस्पर विरोधी समझना वैदिक व भारतीय विचार धारा के प्रतिकूल है। वर्तमान युग में महर्षि दयानन्द दोनों वादों के समन्वय के समर्थक हैं। मानवता की दृष्टि से भौतिकवाद को सर्वथा तिलांजलि नहीं दी जा सकती। गौतम बुद्ध और आचार्य्य शङ्कर क्रमशः दोनों एकात्मक भौतिक वाद और अध्यात्म वाद के समर्थक थे। गौतम बुद्ध आत्मा परमात्मा की उपेक्षा कर केवल मात्र जड प्रत्यक्ष जगत के कष्टों को दूर करना मनुष्य का मुख्य कर्म समझते थे। आचार्य शङ्कर प्रत्येक प्रत्यक्ष दृश्यमान् वस्तु को माया, मिथ्या कह कर आत्मा, ब्रह्म को ही सब कुछ समझते थे। इन दोनों एकात्म वादों (Extreme) ने वाम मार्ग, भक्ति मार्ग, और विविध पौराणिक वादों को जन्म दिया। इसी प्रकार से वर्तमान युग में भौतिक वाद के अत्यन्त एकात्मकता के समर्थक विकासवादी डार्विन के अनुयायी कम्यूनिज्म, सोशलिज्म, वैज्ञानिक साम्यवाद और जड़वाद की पूजा कर रहे हैं और अपनी बुद्धि वैज्ञानिक समाजोपयोगी शक्ति को प्रकृति विज्ञान द्वारा आत्मा परमात्मा तथा प्राकृतिक विभूतियों के मिटाने में लगा रहे हैं। अणु शक्ति के आविष्कार के बाद तो आत्मा तथा परमात्मा की विचार धाराओं की सर्वथा उपेक्षा की जा रही है। पाश्चात्य जगत् में Spiritualism की समर्थक ईसाइयत रूहों को बुला कर उनके द्वारा मानवीय जिज्ञासा तथा आकांक्षा को पूरा करने में प्रवृत्त हो रही है और आत्मा परमात्मा के विज्ञान को गौण स्थान दे रही है। थियोसोफिस्ट लोग अध्यात्मवाद की चर्चा करते हैं परन्तु उनका अध्यात्म वाद महात्माओं की रूहों को बुलाने तक सीमित रहता है। महर्षि दयानन्द इन दोनों एकात्मक वादों के स्थान पर योगदर्शन के राजयोग और सांख्यदर्शन के प्रकृति योग को मानव के कल्याण के लिए आवश्यक समझते थे और इन दोनों में समन्वय स्थापित करने के पक्षमें थे। —भीमसेन विद्यालकार

(आर्यमित्र उपासना अङ्क से)

शर्मा, वर्मा, गुप्त और दास का वैदिक अर्थ

ब्राह्मण अपने ज्ञान द्वारा तीनों वर्णों को अज्ञान से बचाता है इसलिए वह (शर्म) शरण

देने वाला होने के कारण शर्मा कहलाता है। वर्म के अर्थ है कवच' के क्षत्रिय अपने को कवच द्वारा सुरक्षित रखता और अपने शस्त्रों से राष्ट की रक्षा करता है इसलिए वह अपने नाम के आगे 'वर्मा' लिख सकता है। गुप्त का अर्थ है गोपनीय। वैश्य का सुरक्षित धन धन्य विरत्ति के समय राष्ट्र के काम आता है इसलिए वह गुप्त कहाता है। (दास) सेवा करने के कारण सेवक दास कहलाता है परन्तु ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र का यह विभाजन गुण कर्म पर आश्रित है जन्म पर नहीं।

—किशोरीलाल एम० ए०
(वेद वाणी से)

हिन्दू

'हिन्दू शब्द हमारे देश वासियों का नहीं है। पादरी लोग यह कहते हैं कि 'हिन्दू' शब्द सिंध नदी से बना है क्योंकि बहुधा शब्द सस्कृत से फारसी मे लिए गए हैं वे इसी प्रकार से हैं जैसे सप्ताह से हफ्ता, दशम से दहम, सहस्र से हजार इसी भांति सिंधु से हिन्दू हो गया जान पड़ता है जिसका अभिप्राय सिंध नदी के तटस्थ वासियों का है। इससे इतना तो स्पष्ट ही है कि 'हिन्दू' शब्द फारसी का है। सस्कृतके सिंधू शब्द से हिंदू शब्द का बनना गलत है। यूनानी लोग, रूस, ईरान और अफगानिस्तान के मार्ग से आर्य्यावर्त्त मे आए और मार्ग में जैसा किसी देश का नाम सुना वैसा ही लिखा। फारसी में 'स' का स्थान 'ह' लेता है यह ठीक है। सस्कृत में यह नहीं हो सकता। निघण्टु १ १३ उणादि कोष १ ११ दोनों नाम नदी के है परन्तु सिंधु शब्द कहीं पर भी आर्यावर्त्त के निवासियों के लिए प्रयुक्त नहीं हुआ है। और न ठीक है। कोई २ यह भी कहते है कि 'हिन्दू' नाम 'इन्दू' से बना है। इन्दु चन्द्रमा को कहते हैं। अब यह बताए कि सस्कृत में यह किस प्रकार से बन गया। अत यह भी माननीय नहीं है। वर्तमान समय में हमारे पौराणिक भाई सकल्प पढ़ते हैं। उसमें स्पष्ट रूप से इस देश का नाम आर्यावर्त्त बताया गया है। जैसे—

ओं विष्णुर्विष्णु र्विष्णु अद्येत्यादि परमात्मने श्री पुराण पुरुषोत्तमाय द्वितीय परार्धे श्री श्वेत वाराह कल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलीयुगे कलि प्रथम चरणे जम्बू द्वीपे भरत खण्डे आर्य्यावर्त्ते पुण्यक्षेत्रे वर्तमान नाम सवत्सर प्रवर्त्तते तत्र अमुकायने अमुक ऋतौ मासाना मासोत्तमे मासे अमुक पक्षे अमुक तिथौ अमुक वासरान्वितायाम अमुक गोत्रोत्पन्नोमुक नामा धर्म्मार्थमह करिष्ये।

गयासुल्लुगत के पृष्ठ ५०० पर हिन्दू के अर्थ गुलाम, काफिर चोर लुटेरे के हैं। जब मुसलमानों ने इस देश को विजय किया तो पक्षपात के कारण इस देश का नाम हिन्दुस्तान रख दिया। हिन्दू शब्द वेद शास्त्र पुराण यहा तक कि सत्यनारायण की कथा तक में प्रयुक्त नहीं हुआ है जिसे बने थोड़ा समय हुआ है। प्रतिदिन के लेखे वही तिथि पत्रा और जन्म पत्री आदि में भी हिन्दू, हिन्दी या हिन्दुस्तान नहीं लिखा मिलता। हिन्दुओं की उन पुस्तकों में भी जो मुसलमानी राज्यकाल मे लिखी गई है 'हिन्दू शब्द नहीं मिलता। इसलिए किसी प्रकार भी हमारा नाम 'हिन्दू' नहीं है अपितु 'आर्य्य' है।

आर्यावर्त्त

श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती ने स्वमन्तव्या मन्तव्य में आर्यावर्त्त की परिभाषा इस प्रकार लिखी है —

'आर्यावर्त्त' देश इस भूमि का नाम इस लिए है कि इसमें आदि सृष्टि से आर्य लोग निवास करते हैं परन्तु इसकी अवधि उत्तर में हिमालय दक्षिण में विन्ध्याचल पश्चिममें अटक और पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदी है। इन चारों के बीच में जितना देश है उसको आर्यावर्त्त' कहते हैं और जो

इनमें सदा रहते हैं उनको भी आर्य कहते हैं।

श्री स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश के ८ वें समुल्लास में पृ० २४७ पर (सार्वदेशिक प्रेस संस्करण सं- २०११ वि०) मनुस्मृति में वर्णित आर्यावर्त्त की सीमा इस प्रकार लिखी है :—

उत्तर में हिमालय. दक्षिण में विन्ध्याचल, पूर्व और पश्चिम में समुद्र तथा सरस्वती पश्चिम में अटक नदी. पूर्व में दृषद्वती जो नैपाल के पूर्व भाग पहाड़ से निकल के बंगाल आसाम के पूर्व और ब्रह्म से पश्चिम की ओर होकर दक्षिण के समुद्र में मिली है जिसको ब्रह्मपुत्र कहते हैं और जो उत्तर के पहाड़ों से निकल कर दक्षिण के समुद्र की खाड़ी में अटक में मिली है। हिमालय की मध्य रेखा से दक्षिण और पहाड़ों के भीतर और रामेश्वर पर्यन्त विन्ध्याचल के भीतर जितने देश हैं उन सब को आर्यावर्त्त इसलिये कहते हैं कि यह आर्यावर्त्त देव अर्थात् विद्वानों ने बसाया और आर्यजनों के निवास करने से आर्यावर्त्त कहाया है।"

श्री स्वामी जी के इस लेख का कि आर्य लोग रामेश्वर पर्यन्त बसे थे। श्री ई० बी० हवेल कृत 'Aryan Rule in India' नामक पुस्तक के निम्न लिखित उद्धरण से भले प्रकार समर्थन होता है :—

"Arya Varta at that time (अर्थात गुप्त साम्राज्य के समय) was a term inclu ding all the lands south of the Vindhya Mountains which were the scene of Ramas exploits, as well as the Hindustan, the Arya Varta of the Maha Bharat.

The Gupta Empire पृ० १५२)

उस समय आर्यावर्त्त शब्द के अन्तर्गत विन्ध्याचल पर्वत से दक्षिण की ओर स्थित वे समस्त प्रदेश समझे जाते थे जो राम के शौर्य प्रदर्शन के स्थल थे और जिसके अन्तर्गत समस्त हिन्दुस्तान और महाभारत कालीन आर्यावर्त था।

प्रजातन्त्र का विभिन्न देशों में परीक्षण

पाश्चात्य देशों में जो प्रजातन्त्रवाद चल रहा है उसमें और सब बातें तो अच्छी हैं परन्तु मूल में गड़बड़ है। वहां सत्याचरण का मूल्य अन्य लाभों की अपेक्षा से तोला जाता है। सत्य मौलिक गुण नहीं समझा जाता। यही कारण है कि प्रतिनिधियों के निर्वाचन मे झूठ, मक्कारी और अनेक प्रकार के दोषों को अनुचित नहीं समझा जाता, जहां हैजा, प्लेग आदि रोग हैं वहां निर्वाचन भी एक रोग है। इसमें अनेकों व्यक्तियों में वैमनस्य हो जाता है, धन का अपव्यय होता है और बहुत से सदा के लिये बर्बाद हो जाते हैं। इन प्रजातन्त्र राज्यों को कभी सफलता प्राप्त नहीं हुई। सिवाय स्विटजरलैंड के और कोई प्रजातन्त्र राज्य इतने दिनों सफलीभूत न रह सका। स्विटजर लैंड का उदाहरण हर एक पर लागू भी नहीं हो सकता। क्योंकि वह बहुत छोटा देश है और कई बड़े २ देश उसके चारों ओर हैं। इसलिये वे देश इस पर आक्रमण नहीं होने देते। दूसरे वहां वे पेचीदा प्रश्न पैदा नहीं होने पाते जो बड़े राज्यों मे हो आया करते हैं। फ्रांस तो अनेक बार प्रजातन्त्र राज्य के दोषों से तंग आ चुका है। अमेरिका की संयुक्त रियासतें येन केन लगभग १७५ वर्ष बिता सकी हैं। रूस बेचारा तो कल का बच्चा है। इसकी मिसाल तो मिसाल की कोटि में नहीं आती। अंग्रेजों ने अवश्य कई सौ वर्षों से अद्भुत सफलता प्राप्त की है परन्तु वे पूरे प्रजातन्त्र नहीं हैं, उनमें स्थायी और अस्थायी दोनों प्रकार के अंश सम्मिलित हैं।

उनके प्रजातन्त्र को सीमित प्रजातन्त्र कह

* गुरुकुल महत्त्व *
दीक्षांत भाषण

इस वर्ष गुरुकुल कांगड़ी का वार्षिकोत्सव १२ से १५ अप्रैल तक मनाया गया। १३-४-५६ को भारतीय लोक सभा के अध्यक्ष श्रीयुत अनन्त शयनम आयंगर का दीक्षांत भाषण हुआ। भाषण का सार इस प्रकार है :—

गुरुकुल की स्थापना का उद्देश्य

सन् १९०२ में स्वामी श्रद्धानन्द जी ने एक प्राथमिक शिक्षा-निकेतन के रूप में गुरुकुल की स्थापना की, जो आज एक पूर्ण विकसित आश्रमिक विश्व-विद्यालय के रूप में परिणत हो चुका है। जिसमें संप्रति चार महाविद्यालयों का समावेश है। श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की अन्तरात्मा में एक ऋषि जैसी अन्तर्दृष्टि विद्यमान थी। उन्होंने अनुभव किया कि आत्मसंशोधन और राष्ट्रीय-पुनर्जागरण के आंदोलन केवल शुद्धि की प्रवृत्ति (मतपरिवर्तन = धार्मिक संशोधन) तक ही सीमित नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि व्यक्तियों के चरित्र में जीवन की पवित्रता, न्यायप्रियता और नम्रता प्रस्फुटित हो। चरित्र की ये विशेषताएं साधना और तपस्या के द्वारा ही प्राप्त हो सकती हैं। एक ऋषि के अन्तर्दर्शन के समान उन्होंने अनुभव किया कि इस प्रकार का प्रशिक्षण बालकों के प्रारम्भिक जीवन में ही सम्भव है, जब कि मनुष्य का जीवनक्रम चरित्र-निर्माण के क्षणों में से प्रवाहित हो रहा होता है।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का यह विश्वास था कि शिक्षा ही आत्म संशोधन का एक मात्र आधार है। प्राचीन आर्यावर्त में प्रचलित ब्रह्मचर्य पालन और गुरु के आश्रम में रह कर शिक्षा साधन की पद्धति को पुनर्जीवित करना उनका उद्देश्य था। साथ ही हिन्दी-भाषा के माध्यम द्वारा संस्कृति वाङ्मय के श्रेष्ठ तत्वों के साथ पश्चिम के आधुनिक ज्ञान-विज्ञानों के उदात्ततत्वों की शिक्षा देते हुए देश के बालकों का चरित्र-निर्माण करना और उनमें राष्ट्रप्रेम की भावना को जगाना स्वामी जी का ध्येय था।

गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली के आदर्शों और उद्देश्यों से हम सब अच्छी तरह परिचित हैं। संक्षेप में वे इस प्रकार हैं—

(क) चिरकाल से विस्मृत हुई ब्रह्मचर्य प्रणाली को पुनर्जीवित करना तथा उसे शिक्षा का आधार बनाना।

(ख) नागरिक जीवन के कलुषित प्रभावों से दूर हटाकर छात्रों को नैसर्गिक सौंदर्य

सकते हैं, इनमें जनता की आवाज का भी प्राबल्य है साथ २ विशेषज्ञों का भी बड़ा ही आदर है। दूसरी बात यह है कि प्रत्येक अंग्रेज अपने अधिकारों का उतना ही विचार करता है जितना अपने कर्तव्यों का। इनका संगठन इतना अच्छा है कि व्यक्ति और समष्टि दोनों बराबर चल रहे हैं और किसी की क्षति नहीं हो रही। यह ठीक है कि बहुत से सदाचार सम्बन्धी अवगुण भी उनमें विद्यमान हैं परन्तु उन अवगुणों की हानि को कम करने के लिये अन्य गुण भी हैं। प्रजा तन्त्र तभी सफल होता है जब सब अपने कर्तव्यों और अधिकारों को जानें और सभी पर शासन का उत्तरदायित्व हो।

— गंगाप्रसाद जी उपाध्याय

के स्वस्थ, प्रोत्साहक और प्रेरणाप्रद वातावरण में रखना तथा उनके तन, मन, और आत्मा के सन्तुलित विकास के लिए अवसर प्रदान करना।

ग) छात्रों का चरित्र-निर्माण करते हुए उन में भारतीय संस्कृति के प्रति अनुराग उत्पन्न करना तथा सरल जीवन और उदात्त विचार एवं 'ज्ञान के लिए ज्ञान' की भावना को प्रदीप्त करना।

(घ) गुरु और अन्तेवासी (शिष्य) के बीच में पिता-पुत्र का सा स्नेह-सम्बन्ध स्थापित करना।

(ङ) विश्वविद्यालय के स्तर तक शिक्षा का माध्यम हिन्दीभाषा को रखते हुए अपनी शिक्षा-योजना में वैदिक साहित्य और संस्कृत वाङ्मय के अध्यापन को, उसके गौरव के अनुरूप, समुचित स्थान प्रदान करना।

(च) भारत की प्राचीन विद्याओं के अध्ययन के साथ-साथ आंग्लभाषा और आधुनिक विज्ञानों का अनुशीलन करना।

(छ) देश भर में प्रचलित परीक्षा प्रणाली के दूषणों को दूर करना।

(ज) प्राचीन भारतीय आदर्शों के अनुसार विना शुल्क के शिक्षा प्रदान करना।

(झ) भारतीय इतिहास, भारतीय दर्शन और भारतीय विज्ञानों के विषय में गवेषणा करना।

(ञ) भारतीय राष्ट्रभाषा हिन्दी में आधुनिक ज्ञान-विज्ञानों तथा प्राचीन संस्कृत विद्याओं के विषय में साहित्य निर्माण करना।

इन उद्देश्यों द्वारा हम वैदिक-संस्कृति का पुनरुज्जीवन कर सकते हैं। ये उद्देश्य किसी दल विशेष के नहीं हैं, नाहीं ये किन्हीं राजनीतिक सिद्धान्तों की उपज हैं। इन उद्देश्यों में धर्म के वे शाश्वत और अपरिवर्तनीय तत्व निहित हैं, जो अपने स्वरूप में दैवी हैं और जो मानव के मन से उत्पन्न नहीं हो सकते।

यह अतिशय परितोष का विषय है कि गुरुकुल विश्वविद्यालय शिक्षा के वैदिक आदर्शों को हृदयंगम करता है और समर्पण एवं मानवता की निःस्वार्थ सेवा की भावना को प्रेरित करता है।

विश्व के कुछ चुने हुए उत्तम उपहार प्रकृति की एकान्त गोद में ही मानव के मस्तिष्क से निष्पन्न हुए थे।

गुरुकुल हिमालय की गोद में बसा हुआ है। यहाँ पर यह संसार के कोलाहलों सरगर्मियों और परेशानियों से मुक्त है। मानसिक शक्तियों के विकास के लिए यहां का वातावरण आदर्श है। इस शिक्षा-सदन में अध्ययन करने वाले छात्रों को प्रकृति की मंगलकारी भावनाएं प्रभावित करती हैं।

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली क्यों वांछनीय है ?

स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् अब राष्ट्र का शासन-सूत्र हमारे ही हाथों में आ गया है। इस के साथ ही स्वाभाविक रूप में अनेक समस्याएं भी पैदा हो गई हैं जिनका संतोषजनक समाधान हमे अभी ढूंढना है। हमें अपने देश की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाना है, लोगों के पेट भरने हैं, उन्हें रहने के लिए मकान देने हैं और उनके स्वास्थ्य की भी देखभाल करनी है। परन्तु इस भौतिक-कल्याण के साथ-साथ उनके मस्तिष्क को भी हमें पोषण प्रदान करना है। संसार इस समय चौराहे पर खड़ा है। जाति, रंग तथा धर्म के भेद के कारण राष्ट्रों के पारस्परिक विरोध, संघर्ष और तनाव आदि सामान्य सी बातें हो गई हैं। संसार को इस समय सहिष्णुता और एक

दूसरे को समझने वाली वैदिक भावना की आवश्यकता है। राष्ट्रवासियों को स्वयं ही मोहनिद्रा से जागकर मानवता का नेतृत्व करना है। अब अपने तथा समाज में से बुराइयों को दूर करने का समय आ पहुंचा है। काल की गति के साथ-साथ हमें भी बदलना है तथा अपने दृष्टिकोणों में भी परिवर्तन लाना है। हमें अपने अन्दर सेवा की भावना का विकास करना चाहिए, लेने की प्रवृत्ति ठीक नहीं, हमें तो दान करना चाहिये। इसी प्रकार शासन करने की प्रवृत्ति ठीक नहीं सेवा की वृत्ति सरकार के कन्धे पर एक भारी उत्तरदायित्व है। अतः यह कहने की आवश्यकता नहीं कि समुचित शिक्षा पर ही राष्ट्र की प्रसन्नता तथा शांति निर्भर है। संसार में इस समय बड़ी २ शक्तियां विद्यमान हैं। विनाशके लिए नए २ अस्त्र शस्त्रादिका आविष्कार हमारी कोमल भावनाओं को समाप्त कर देगा और हमारी प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति की जड़ें खोखली हो जायेंगी। इस लिये हमें शीघ्रातिशीघ्र ऐसी शिक्षाकी आवश्यकता है, जो हमारी कोमल भावनाओं का विनाश न करे, प्रत्युत हमारे उदात्त गुणों को जीवित रक्खे तथा हमें मानवता की सेवा करने के योग्य बनाये। प्राचीन और अर्वाचीन का सुभग समन्वय ही हमें वांछित है। नवीन शिक्षा पद्धति के उत्तम तत्वों को वैदिक संस्कृति के अनुकूल बना कर हमें अभीष्ट की सिद्धि करनी होगी।

यह मानने में किसी को भी आपत्ति न होगी कि चरित्र निर्माण ही शिक्षा का सर्वप्रथम उद्देश्य है। चरित्र-हीन बौद्धिक प्रतिभा का कोई मूल्य नहीं। समर्पण, समादर तथा भ्रातृप्रेम की भावनाओं का विकास करके ही मानव की आत्मा तथा चरित्र को उन्नत किया जा सकता है। गुरुकुल शिक्षापद्धति इसी कारण वांछनीय है कि वह युवक विद्यार्थियों के चरित्र-निर्माण पर सर्वाधिक बल देती है। गुरुकुल विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों के लिये चारित्रिक विकास के प्रभूत अवसर हैं क्योंकि वह नगरों की उन शिक्षा-संस्थाओं की भांति नहीं जहां पर समाज का दूषित प्रभाव पड़ने की सम्भावना रहती है।

बड़ी प्रसन्नता का विषय है कि गुरुकुल विश्वविद्यालय की उपाधियों को सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त है और समय समय पर इसे सरकारी आर्थिक सहायता भी मिलती रहती है। हमें आशा करनी चाहिये कि सरकार को देश के विभिन्न भागों में ऐसी संस्थाएं स्थापित करने में कोई आपत्ति न होगी जिन से गुरुकुल का प्रेम तथा सेवा का स्पृहणीय संदेश चहुंदिशि फैल जाय। इस समय हमें अपनी मातृभूमि की सांस्कृतिक परम्परा के प्रति अपने विश्वास को सुदृढ़ करना चाहिये।

अपना यह प्रवचन समाप्त करते हुए मैं कुछ एक वचन अपने तरुण स्नातकों के प्रति निवेदन करना चाहता हूँ। प्रिय स्नातको, आप आर्य संस्कृति के उत्तराधिकारी हैं। अन्धकार में आप को अपनी मशाल बराबर प्रज्ज्वलित रखनी होगी आपको ही जनता को सत्पथ का प्रदर्शन करना होगा। जब वे गिर जायें तो आपको ही उन्हें उठाना होगा। आपका जीवन मानव जाति की सेवा में समर्पित है। इसलिए साहस और धीरता का पाथेय लेकर संसार में आगे बढ़िये। आपकी विद्या-सम्पदा —जो कि ऋषियों की ज्ञान सम्पदा है— आपको शान्ति और समृद्धि प्रदान करेगी।

(हिंदी भाषांतर—शंकरदेव विद्यालंकार)

* आर्य सन्तान *

[श्रीमती शान्ती देवी एम० ए०, फतहगढ़]

आर्य वीर सन्तान, उठो तुम ॥

वही महान दिवस है आया, जिसने सच्चा पथ दिखलाया।
जब स्वामी जी ने समाज का, किया रुचिर निर्माण ॥
उठो तुम, आर्य वीर सन्तान ॥

अब वैदिक धर्म प्रकाश करो, अज्ञान तिमिर का नाश करो।
चकित विश्व देखे भारत में, मधुमय स्वर्ण विहान ॥
उठो तुम, आर्य वीर सन्तान ॥

परम पिता की सब सन्तानें, भेद भाव फिर किससे मानें।
प्रेम ज्योति से ज्योतित कर दो, मानव के अरमान ॥
उठो तुम, आर्य वीर सन्तान ॥

एक ब्रह्ममय सब जड़ चेतन, जग का वैभव सब उसका धन।
जीवन का उद्देश्य तुम्हारा, नित्य नवल उत्थान ॥
उठो तुम, आर्य वीर सन्तान ॥

है विश्व दृष्टि तुम पर अटकी, मग जोह रही भूली भटकी।
सत्य धर्म का पाठ पढ़ा कर, करो विश्व कल्याण ॥
उठो तुम, आर्य वीर सन्तान ॥

कर्म योग का मंत्र सिखादो, पाप अविद्या दूर भगा दो।
दानव को भी मानवता का, दो अक्षय वरदान ॥
उठो तुम, आर्य वीर सन्तान ॥

शस्य श्यामला वसुधा कर दो, घर घर में सुख सम्पत्ति भर दो।
चिर संतापित वसुन्धरा पर, करो स्वर्ग निर्माण ॥
उठो तुम, आर्य वीर सन्तान ॥

(यह कविता आर्य समाज स्थापना दिवस के पुण्य अवसर पर
सार्वजनिक सभा में सुनाई गई थी।)

महिला जगत्

वीर बाला पद्मा

पद्मा का जन्म भोपाल राज्य में एक गरीब कृषक क्षत्रिय के घर हुआ था जब पद्मा केवल ढाई वर्ष की थी उसके माता पिता की मृत्यु हो गई। सोलह वर्ष के भाई जोरावर सिंह ने अपनी छोटी बहिन का पालन-पोषण किया। जोरावर-सिंह बालक होने पर भी वीर पुरुष था। उसने अपनी बहिन को बचपन से ही भाला, तलवार आदि चलाने तथा घुड़ सवारी की शिक्षा देनी प्रारम्भ की। पद्मा ने मन लगा कर युद्ध विद्या सीखी और वह कुशल योद्धा हो गई। घर के प्रबन्ध में भी वह खूब चतुर थी।

धीरे धीरे पिता का धन समाप्त हो गया। जोरावरसिंह पर बहुत सा कर्ज हो गया। जिस महाजन का कर्ज था उसने अनेक बार उलाहने दिये, खरी खोटी सुनाई और अन्त में भोपाल दरबार में नालिश कर दी। कर्ज तो था ही राज्य ने जोरावर सिंह को कैद कर लिया। अब बेचारी पद्मा अकेली रह गई। भाई के कैद हो जाने का उसे बहुत अधिक दुःख था। उसने भाई को छुड़ाने का निश्चय किया। अब उसने स्त्री का वेश छोड़ दिया और एक राजपूत सैनिक का वेश धारण करके वह ग्वालियर पहुंची। उस समय ग्वालियर नरेश थे महाराजा दौलतराव जी सेंधिया। पद्मा ने पद्मसिंह नाम बना कर सेना में नौकर पाने की प्रार्थना की। निशाना लगाना घुड़ सवारी, भाला चलाना आदि कार्यों में उसकी परीक्षा ली गई और उनमें वह सफल रही। उसे सेना में नौकरी मिल गई।

उन दिनों सेंधिया और अंग्रेज सरकार में युद्ध हुआ था। तीन वर्ष तक यह युद्ध चलता रहा। पद्मा ने इस युद्ध में इतनी वीरता दिखाई कि वह साधारण सैनिक से हवलदार बना दी गई। उसकी जांघ तथा भुजा में कई बार गोलियां लगीं किन्तु सदा वह स्थिर रही। शत्रुओं को उसके सामने भागना ही पड़ता था। वह अपने को सावधानी से छिपाये हुए थी। स्नानादि के लिए सब से पृथक चली जाती थी। उसे एक ही चिन्ता थी अपने भाई को कारागार से छुड़ाने की। उसे जो वेतन मिलता था उसमें से बहुत कम खर्च करती अपने लिये, शेष बचा कर रखती जाती थी।

कुछ लोगों को सन्देह हुआ कि यह बिना मूछों का हवलदार उनके साथ कभी स्नानादि क्यों नहीं करता। क्यों वह सदा कपडे पहने रहता है। एक सैनिक ने छिप कर पद्मा का पीछा किया और उसे पता लग गया कि वह स्त्री है। जब यह समाचार सेंधिया दरबार में पहुंचा तब राजा ने बुलाकर पद्मा से पुरुष वेश धारण करने का कारण पूछा। पद्मा रो पड़ी, उसने अपने भाई के बन्दी होने की बात बताई। महाराज सेंधिया उसकी वीरता तथा भ्रातृ भक्ति से बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने सरकारी खजाने से कर्ज का धन भोपाल भिजवा दिया और पत्र लिख दिया कि जोरावर को कैद से छोड़ तुरन्त ग्वालियर भेज दिया जाय।

जोरावर सिंह छूट गये। ग्वालियर आकर अपनी बहिन से मिलकर वे बहुत प्रसन्न हुए। महाराज सेंधिया ने जोरावर सिंह को सेना में एक अच्छा पद दे दिया और पद्मा का विवाह एक सेनापति के साथ कर दिया।

———

बाल जगत्

तरुण तरुणियों की सहशिक्षा और शिक्षा पद्धति

अब से पचास वर्ष पूर्व तरुण तरुणियों की सह शिक्षा के प्रश्न ने इतना उग्र स्वरूप नहीं धारण किया था। इस समय तो देश भर के मनस्वियों के सामने यह विचारणीय प्रश्न हो गया है और बहुत से विचारशील पुरुषों का यह निश्चित मत है कि सह शिक्षा की यह पद्धति सर्वथा अनिष्टकारक है और शीघ्र से शीघ्र इसे तिलाँजलि देने में ही देश का कल्याण है। कारण स्वतःसिद्ध है। जातीय शास्त्र जातीय स्वभाव प्रकृति सभी यही कहते हैं कि इस अवस्था में प्रायः युवक युवतिया, शिक्षित हों या अशिक्षित सयम की रक्षा करने में असमर्थ होते हैं, इसलिए इनका निर्बाध अनियन्त्रित रूप में मिलना जुलना वर्जित है। क्योंकि इनके मिलने का परिणाम बड़ा भयानक होता है। इसलिये इनकी पढ़ाई सर्वथा अलग २ होनी चाहिये। इस समय तो युवतियों के लिये भी पर्याप्त शिक्षण सस्थाए भी स्थापित हो चुकी हैं। कलकत्ते का बेथून कालेज, जालन्धर कन्या महाविद्यालय के अतिरिक्त बड़ौदा पोरबन्दर, वनस्थली, बम्बई, पूना और पिलानी आदि अनेकों नगरों में बड़े २ महाविद्यालय, विद्यालय, और कन्या पाठशालाए हैं। जहां नहीं हैं, वहां बनाई जा सकती हैं परन्तु कन्याओं की पढ़ाई होनी चाहिये पृथक् ही और वह पढ़ाई भी होनी चाहिये कन्याओं के योग्य ही।

बालकों की शिक्षा पद्धति में भी अब परिवर्तन होना चाहिये। ब्रिटिश शासन के समय हेरो और आक्सफोर्ड की पद्धति का अनुसरण करके बहुत सी ऐसी बातें हमारी शिक्षा पद्धति में आ गई थीं जो बिना विवाद के भारत की वस्तुस्थिति के अनुकूल नहीं थीं। पर अब तो अपना स्वशासन है, अतएव अपनी पुरानी गुरुकुल पद्धतियों को ध्यान मे रखते हुए उसमें समयानुसार आवश्यक परिवर्तन करके उसका प्रचलन कर देना चाहिये। आचार्य सांदीपन के आश्रम में गरीब ब्राह्मण कुमार सुदामा और राज्यारूढ़ यादव वंश के यशस्वी कुमार श्रीकृष्ण जैसे विरोधी स्थिति के बालक एक साथ एक सी स्थिति में रह कर पढ़ते थे और शिक्षा प्राप्त करके गृह सेवा, समाज सेवा, भ्रातृत्व, मातृ पितृ भक्ति, आज्ञापालन, नम्रता, धीरता, साधुता आदि गुणों को लेकर कार्यक्षेत्र में आते थे। ये गुरुकुल के विद्यार्थी गुरु पत्नी की आज्ञा को शिरोधार्य कर जगल से समिधा, फल, फूल मूल लाने में, किसी भी प्रकार की सेवा करने में हीनता नहीं समझते थे और भिक्षां देहि से जो अन्न मिलता, उसे गुरु के चरणों में अर्पण करके गुरु जो कुछ भी खाने को देते, उसी में सन्तोष करते थे। इनकी शिक्षा की यही सर्टीफिकेट थी कि ये अमुक आचार्य के आश्रम में भली भांति पढ़े हैं। गुरु का नाम ही उनकी योग्यता का परिचायक था। यदि किसी प्रकार ऐसी पद्धति का प्रचार हो सके तो वर्तमान में जो शिक्षा का बेहद बोझ बढ़ रहा है, उससे समाज की तथा विद्यार्थियों की रक्षा हो सकेगी। उनका स्वास्थ्य भी उन्नत होगा और मन बुद्धि भी। तभी देश का भी सच्चा उद्धार होगा।

———

* विचार-विमर्श *

आर्य नर-नारियों से नम्र निवेदन

जो जाति अपने पुरुषाओं तथा नेताओं का मान करती है वह सदैव मान व प्रतिष्ठा के साथ जीवित रहा करती है। बल्कि उनके जीवन की निशानी ही अपने महापुरुषाओं तथा नेताओं का मान करने से रहती है। वे महापुरुष अथवा नेता गण जीवित हों या स्वर्गवास हो गये हों। हर अवस्था में उनका सम्मान और कीर्ति गानी चाहिये। उनके जन्म दिवस मनाकर उनके जीवन से शिक्षा लेनी चाहिये।

वर्तमान युग में सभी सभ्य संस्थायें अपने अपने महापुरुषों तथा माननीय नेताओं के जन्म दिवस मनाती हैं। यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि हम आर्यों की शिरोमणि सभा श्रीमती सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने आर्य समाज के सच्चे और महान् कर्मवीर नेता स्वर्गीय श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की जन्म शताब्दी मनाने का निश्चय किया है। यह आर्य समाज तथा आर्य समाजियों के लिये बड़े गौरव की बात है। इससे पूर्व जगद्गुरु भगवान् दयानन्द जी महाराज की जन्म शताब्दी मथुरा में मनाई जा चुकी है जिससे आर्य समाज को अत्यन्त लाभ हुआ था।

वर्तमान में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ वालों ने भी अपने संचालक श्री सदाशिव गोलवलकर का जन्म दिन मनाया है। जिससे उनके जीवन में नया उत्साह पैदा हो गया है।

१७-४-५६ को दिल्ली के आर्यों ने भी आर्य युवक संघ की ओर से अपने महान् विद्वान् नेता शास्त्रार्थ महारथी श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी का ७४ वाँ जन्म दिवस बड़े उत्साह तथा समारोह से मना कर आर्य समाज मन्दिर दीवान हाल में उनका बड़ा सम्मान तथा स्वागत किया गया।

अब मेरी आर्य बहन तथा भाइयों से नम्रता पूर्वक प्रार्थना है कि हम को सभी माननीय नेताओं तथा महापुरुषों के जिन्होंने जीवन भर देश तथा वैदिक धर्म की सेवा करते हुए अनेकों बार कष्ट सहते हुए भी आर्य धर्म तथा आर्य जाति का मस्तक ऊंचा किया है उन सभी के जन्म दिवस मनाने चाहियें।

श्री पूज्य पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति का आर्य समाज से केवल कर्म से ही सम्बन्ध नहीं है बल्कि जन्म तथा कुल से भी संबंध है। अर्थात वे कर्म से जन्म से तथा कुल से भी आर्य हैं तथा आर्य समाज के नेता हैं। केवल इसलिये ही नहीं कि वे आर्यों की शिरोमणि सभा सार्वदेशिक सभा के वर्तमान प्रधान हैं अथवा पहले भी प्रधान रह चुके हैं और न केवल इसलिये कि गुरुकुल कांगड़ी के मुख्याधिष्ठाता ही हैं और पहले भी रह चुके हैं। बल्कि वे पीढ़ी के लिहाज से भी हम आर्यों के सब माननीय नेता हैं। क्योंकि:—

श्री स्वामी विरजानन्द जी महाराज के सुयोग्य शिष्य अथवा सुपुत्र श्रीमद्गुरु महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज हुए और श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज के सुयोग्य शिष्य अथवा धर्म पुत्र आर्य समाज के जगत् विख्यात त्याग मूर्ति कर्मवीर नेता श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज हुए। श्री पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के सुयोग्य शिष्य तथा सुपुत्र श्री पूज्य पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति हैं। इन सब कारणों से वे हम सब आर्यों के परम सम्मान के योग्य तथा आदरणीय नेता हैं। अतः हम सब आर्यों का परम कर्तव्य है कि उनका जन्म दिवस बड़ी श्रद्धा प्रेम तथा उत्साह से मनायें। उनका जन्म दिवस ६ सितम्बर सन् १९८६(९-९ १८८९)को हुआ था। इस दिनको पर्व के रूप में मना कर पं० जी का भली भांति सम्मान किया जावे। इसमें आर्य समाज तथा आर्यों का अत्यन्त लाभ तथा शोभा है इसकी तैयारी अभी से आरम्भ कर देनी चाहिये।—चोहकरमल आर्य

स्वास्थ्य-सुधा
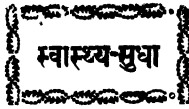
कुछ हानिकारक अनुकरण

[लेखक—श्री विजय कुमार पाठक]

भारत वासियों ने पश्चिम के अन्ध अनुकरण की प्रवृत्ति वश कुछ ऐसी बातें सीखली हैं और सीखते जाते हैं जो स्वास्थ्य और नीति की दृष्टि से न केवल अग्राह्य नहीं है अपितु हानिकारक भी हैं। आनन्द यह है कि उन बातों का स्वयं पाश्चात्य जन खंडन करते और हम अपनाते जाते हैं। दास मनोवृत्ति का इससे बड़ा और क्या प्रमाण हो सकता है? नीचे कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए जाते हैं।

कमोड प्रथा से आंतों को बड़ी क्षति होती है। पाश्चात्य प्रसिद्ध डाक्टरों ने इन हानियों को लक्ष्य में रखकर एक स्वर से इस प्रथा का खंडन किया है। कई वर्ष हुए बम्बई के सरकारी मेडीकल कालेज में स्वास्थ्य सम्बन्धी एक पाठ्य पुस्तक प्रचलित थी। इसमें कमोड प्रथा को त्यागने और 'हिन्दू शौच विधि' को अपनाने का स्पष्ट रूप से सुझाव दिया गया था।

निरामिषाहारी लोग मिट्टी तथा जल से शौच के हाथ धोते हैं और मिट्टी या राख से बर्तन साफ करते हैं। डा० फार्बस लिखते हैं कि मिट्टी तथा राख भारी Disinfectant (शोधक पदार्थ) हैं इसके विरुद्ध साबुन से हाथ मांजने की प्रथा पड़ गई है यह प्रथा त्याज्य है।

प्रातःकाल मीठे तेल तथा नमक को दांतों में सब तरफ मलकर लार निकाल कर पीछे बबूल की नर्म, ताजी दातुन को धीरे २ चबा कर नर्म कूंची बना उससे दांतों को साफ करना और दातुन को बीच से चीरकर जुबान पर फेर कर उसका मैल साफ करना उत्तम भारतीय प्रथा है। डा० फार्बस लिखते हैं कि भारतीयों के दांत अधिक तम आयुतक दृढ, उत्तम तथा सुन्दर रहते हैं। विपरीत इसके विलायती तथा उनका अन्ध अनुकरण करने वाले भारतीय लोगों के दाँत जो ब्रुश चाय. कुलफी, बरफ के पानी, सिगार, बिस्कुट, सोडा, तम्बाकू, शराब अण्डा मांस मछली आदि का सेवन करते हैं उनको थोड़ी आयु में ही दाँतों के रोग हो जाते हैं।

ऋग्वेद के अनेक मंत्रों में कूप जल को पीने का आदर्श जल कहा गया है। कुएं का जल जाड़ों में गरम और गर्मियों में ठंडा होता है। उत्तम स्थल पर बने हुए कुए के जल में अनेक प्रकार के क्षार होते हैं, जिससे उसका बल अधिक पाचक होता है। आजकल नल जल को स्वच्छ और स्वास्थ्यप्रद बताया और माना जाता है। परन्तु डाक्टरी अन्वेषण के आधार पर नल का जल निम्न कोटि का तथा हानिकर पाया गया है। diseases of to day नामक पुस्तक में जो एक अनुभवी डाक्टर के द्वारा लिखी गई है बताया गया है कि नल का जल हाजमे को नष्ट करता है क्योंकि इसमें Lead Poison (जस्त का

* विविध सूचनाएँ तथा वैदिक धर्म प्रसार *

निर्वाचन

नाम समाज	अधिकारी	चुनाव तिथि
आर्य कुमार सभा झज्जर (रोहतक)	प्रधान—श्री वेदव्रत जी सि० वाचस्पति मन्त्री—श्री वेदपाल जी सि० भास्कर	
आर्य समाज ग्वालियर नगर	प्रधान—पं० महेन्द्र प्रताप शास्त्री मंत्री—श्री शंकर लाल आर्य	२८-३-४६
नगर बड़ौदा	प्रधान—श्री पं० प्रताप चन्द जी अमृतसरी मंत्री—श्री मेला राम जी	

नोट—उक्त समाज आगामी वर्ष अपने भवन का निर्माण करेगा और हीरक जयन्ती महोत्सव मनाएगा।

विष) मिलता रहता है।

जहां मिट्टी का तेल का लैंप जलता है वहां Carbondioxide (विषमय धूम) इतना पैदा होता है जितना ११ मनुष्य सांस लेकर पैदा करें। छाती के रोग उक्त धूम से पैदा होते हैं। आंखों की ज्योति भी मन्द हो जाती है। सन् २६ में इंग्लैंड में Photographer's Congress हुई थी उसमें उन्होंने बिजली के लैंपों को भी आंखों के लिए परम हानिकारक सिद्ध किया और अन्तिम निश्चय यह किया था कि Back to Candles अर्थात् मोमबत्ती का युग फिर लाओ। क्या यह सरसों के दीपकों की विजय नहीं है? Guard's Lamp) पगी बत्ती में मीठा तेल बराबर जल सकता है। यह पगी बत्ती हरीकेनों की प्रतिनिधि हो सकती है और खाने, सोने तथा पढ़ने के कमरों में वही सरसों के दीपक जो मोमबत्ती से बढ़कर ठण्डी रोशनी देते हैं काम में आ सकते हैं।

मोटे दलदार लोहे के तवों पर लकड़ी या कंडे चूल्हे में जलाकर मोटी रोटी बनाने की प्रथा थी। विलायती चूल्हों में दुर्गन्ध युक्त तेल जलाकर पतले बरतन में दाल आदि बनाने की प्रथा चल पड़ी है। Physical culture के सम्पादक अमेरिका में जल्दी पकजाने वाले भोजनों को स्वाद तथा सार रहित लिख रहे हैं।

मद्रास के health नामक मासिक पत्र में डाक्टरों ने यह सिद्ध किया था कि high heeled Boots ऊंची एड़ी के जूते पहनने से देवियों को मन्दाग्निनी तथा प्रसव सम्बन्धी रोग होते हैं। हिन्दू चप्पल से यह रोग नहीं होते।

— —

शुद्धि प्रचार

—गुरुकुल कामां जिला भरतपुर के उद्योग से १०० हरिजन परिवारों को ईसाइयों के चंगुल से निकाला गया।

—२६-३-५६ को आर्य समाज लहरिया सराय में जन्म की एक मुस्लिम देवी की उसके बच्चे के सहित शुद्धि की गई।

—भरतपुर अलवर आदि के मेवाती केन्द्रों के हरिजनों में ईसाई लोग साधु का वेश बनाकर प्रवेश कर रहे हैं और उन्हें बहकाते हैं "वेदों में केवल कहानी है। मनु आदि ने ही वर्ण व्यवस्था बनाके तमाम झगड़े शुरू किये हैं। हमारे लिये शुद्धि की कोई आवश्यकता नहीं' क्योंकि हमारा आदि धर्म है। हम सब से पवित्र हैं। खुदा, मसीह और परमात्मा में कोई अन्तर नहीं है।" हरिजनों को इन वेषधारी ईसाइयों की चाल से सावधान रहना चाहिये।

आर्य समाज स्थापना

ग्राम (पोस्ट) महरौली, जि० हमीरपुर (उत्तर-प्रदेश) में १-४-५६ को आर्य समाज की स्थापना हुई। ५० सदस्यों ने प्रवेश पत्र भरे।

अन्तर्जातीय विवाह

आर्य समाज भागलपुर के पुराने कर्मठ कार्य कर्ता श्रीयुत रामेश्वर प्रसाद आर्य की द्वितीय पुत्री विद्यावती आर्य बी० ए० एम० एस० आयुर्वेदाचार्य का विवाह भिवानी जिला हिसार (पंजाब) निवासी श्री स्वामी रघुनाथदास जी के सुपुत्र श्री रामतीर्थ आयुर्वेदाचार्य के साथ १८-४-५६ को सम्पन्न हुआ। यह विवाह आर्य विवाह ऐक्ट के आधीन हुआ। विवाह में श्री रामकुमार शर्मा एम० एस० ए० पंजाब, श्री पं० रामसहाय जी शास्त्री महोपदेशक राजस्थान, श्री पं० रामनारायण जी शास्त्री विद्यारत्न आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार. प्रिंसिपल श्री धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी एम० ए० वेदालंकार प्रभृति गण्य मान्य सज्जनों ने भाग लिया।

सम्मेलन

अखिल बंगाल आसाम आर्य महासम्मेलन का तृतीय अधिवेशन आर्य समाज कौर चंडी (कोलाघाट जिला मेदिनीपुर) में आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान् नेता पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० के प्रधानत्व में २५ से २६ मार्च तक सम्पन्न हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन दैनिक बंगला पत्र लोक सेवक के सम्पादक श्री पंचानन भट्टाचार्य के द्वारा हुआ। सभापति का भाषण हिन्दी और बंगला में छपवाकर बांटा गया। स्वागताध्यक्ष श्री मिहिरचन्द जी धीमान थे। बंगाली विद्वानों में प्रमुख थे श्री नित्यगोपाल भट्टाचार्य, श्री मनोरंजनकर काव्यतीर्थ, भुवनमोहन देव शर्मा, श्री सुरेन्द्रनाथ सिद्धान्त विशारद, श्री शरतचन्द्र सिद्धान्त विशारद, प्रभास चन्द्रपाल. ललित मोहन देव वर्मा आदि २। हिन्दी भाषी वक्ताओं में श्री पं० अयोध्याप्रसाद जी बी० ए०. श्री स्वामी जगदीश्वरानन्द जी प्रो० विंध्यवासिनी प्रसाद, पं० जगदीशचन्द्र हिमकर आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

अवध बिहारीलाल एम० ए०
प्रचार मन्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल आसाम का नया चुनाव

आर्य प्रतिनिधि सभा का त्रैवार्षिक निर्वाचन २६ मार्च ५६ को आर्य समाज कौर चंडी में हुआ। प्रधान श्री मिहिरचन्द्र जी तथा मन्त्री श्री हंसराज जी हांडा निर्वाचित हुए।

शोक प्रस्ताव

गुरुकुल कांगड़ी ने श्री सेठ जुगलकिशोर जी के पिता श्री राजा बलदेवदास जी तथा श्री मदन-

मोहन जी सेठ के निधन पर शोक प्रस्ताव पास किये।

सिनेमा का विरोध

आर्य समाज महरौली ने सफरी सिनेमा की आज्ञा देने विषयक नोटी फाइड एरिया कमेटी के निर्णय का विरोध किया है।

श्री प० रामचन्द्र जी देहलवी का ७४ वां जन्मोत्सव सम्पन्न

श्री रामचन्द्र जी देहलवी का ७४ वां जन्म दिवस १९.४-५६ को आर्य युवक संघ देहली के तत्वावधान में आर्य समाज दीवान हाल में मनाया गया, जिसकी अध्यक्षता श्री प्रो० रामसिंह एम ए. ने की। इस अवसरपर दिल्लीके निकट के नगरों के आर्य लोगों ने देहलवी जी को नोटों के हार पहनाए। आर्य युवक संघ की ओर से श्री रामगोपाल जी शालवाले ने पं० जी की सेवामें मानपत्र अर्पित किया। आपने श्री देहलवी जी की आर्य-समाज के लिये की गई महान् सेवाओं की चर्चा की और यह घोषणा की कि इनके ७५ वें जन्म दिन पर अगले वर्ष इनकी सेवा में अभिनन्दन-ग्रन्थ भेंट किया जायगा।

श्री रामेश्वराचार्य शास्त्रीने भाषण देतेहुए कहा कि पं० जी ने भारत से ईसाई धर्म प्रचार की बढ़ती हुई ताकत को रोकने के लिये शानदार काम किया है। श्री पं० गंगाप्रसाद शास्त्री ने भी पं० जी की सेवाओं की अद्वितीय सराहना की। प्रो० रामसिंह ने अध्यक्ष पद से पं० जी का स्वागत करते हुए आर्य युवक संघ की तरफ से इन्हें नोटों का हार पहनाया और इनकी सेवाओं की सराहना की।

श्री देहलवी ने स्वागत का उत्तर देते हुए कहा कि मैंने अपने जीवन में आर्य समाज का प्रचार करके किसी पर उपकार नहीं किया, अपितु अपने गुरु महर्षि दयानन्द के कार्य को पूरा करने का यत्न किया। आपने स्वागत समिति के लिये आर्य युवक संघ और तमाम आर्य समाजों का और उपस्थित नर नारियों का धन्यवाद किया। प० लोकनाथ तर्क वाचस्पति और श्री धर्मवीर की कविताओं को बहुत पसन्द किया।

चरित्र निर्माणार्थ यत्न

आर्य समाज विनयनगर नई दिल्ली के तत्वावधान में हुए राष्ट्र निर्माण सम्मेलन में एक प्रस्ताव द्वारा राज्य से अनुरोध किया गया कि निम्नलिखित बुराइयों को अविलम्ब दूर करने का उपाय करें।

१—अश्लील सिनेमा चित्रों का प्रदर्शन।
२—स्त्रियों के नग्न अथवा अर्द्ध नग्न चित्रों का प्रदर्शन।
३ कला के नाम पर हो रहे अश्लील नृत्यों का प्रदर्शन।
४—अश्लील साहित्य का प्रदर्शन।

इस सम्मेलन में पत्रों के आर्य सचालकों से भी अनुरोध किया गया कि वे अपने पत्रों में अश्लील विज्ञापनों का छापना बन्द कर दें।

श्री विनायक राव जी को अभिनन्दन-ग्रंथ

हैदराबाद राज्य के प्रमुख जनसेवी तथा हैदराबाद राज्यके अर्थमन्त्री श्री विनायकरावजीविद्यालंकार को विविध संस्थाओं की ओर से अभिनन्दन ग्रन्थ समर्पित किया गया। यह समारोह प० विनायकराव जी के ६०सठवें वर्ष में पदार्पण करने पर आयोजित किया गया। अभिनन्दन-ग्रन्थ ६५० पृष्ठों का है।

स्मरण रहे कि विनायक राव जी आर्य समाज के नेता हैं। उन्होंने हिन्दी प्रचार सभा और शिक्षा के क्षेत्र में विशेष कार्य किया। अभिनन्दन ग्रन्थ राज्य विधान सभा के अध्यक्ष काशीनाथ राव वैद्य ने समर्पित किया। राज्य के मुख्य मन्त्री तथा अन्य नेताओं ने शुभ कामनाएं प्रकट कीं।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

का

वार्षिक अधिवेशन

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का वार्षिक साधारण अधिवेशन २९-४-५६ को दयानन्द वाटिका (रामबाग कोठी) देहली में श्रीयुत प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति एम० पी० की अध्यक्षता में हुआ।

अधिवेशन में उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, बिहार, बङ्गाल, आसाम, मद्रास, मध्य प्रदेश, मध्य भारत, ईस्ट अफ्रीका, बम्बई, सिन्ध आदि २ के ५६ प्रतिनिधियों ने भाग लिया। वार्षिक रिपोर्ट व हिसाब स्वीकृत हुआ। आगामी वर्ष के लिए अधिकारियों और अन्तरग सदस्यों का चुनाव और आगामी वर्ष का बजट स्वीकार किया गया। निर्वाचन इस प्रकार है —

अधिकारी

प्रधान	श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
उप प्रधान	(१) श्री स्वामी आत्मानन्द जी
	(२) श्री बा० पूर्णचन्द जी
	(३) श्रीमती माता लक्ष्मीदेवी जी
मन्त्री	श्री लाला रामगोपाल जी शाल वाले
उप मन्त्री	(१) श्री शिवचन्द्र जी
	(२) श्री देवराज जी
कोषाध्यक्ष	श्री ला० बालमुकन्द जी
पुस्तकाध्यक्ष	श्री प० धर्मवीर जी

अन्तरंग सदस्य

१. श्री प० विजयशंकर जी (बम्बई)
२ ,, प० यशपाल जी } पंजाब
३. ,, ला० चरणदास जी }
४. , मिहिरचन्द्र जी धीमान् (बंगाल)
५ ,, डी० डी० पुरी (ईस्ट अफ्रीका)
६. ,, प्रो० इन्द्रदेव सिंह जी (मध्य प्रदेश)
७. ,, डा० महावीरसिंह जी (मध्य भारत)
८. ,, पं० वेहड़ाराम जी (सिंध)
९. श्री भगवती प्रसाद जी (राजस्थान)
१० ,, पं० वासुदेव जी (बिहार)
११ ,, आचार्य विश्वश्रवा जी } (उत्तर प्रदेश)
१२ , बा० कालीचरण जी }
१३ ,, प्रो० रामसिंह जी (आजीवन)
१४ ,, श्री नारायण जी (मद्रास)
१५ ,, स्वामी ध्रुवानन्द जी (सरस्वती)
१६. ,, प० भीमसेन जी विद्यालंकार

उपयोगी साहित्य

वैदिक साहित्य सदन, आर्य समाज बाजार सीताराम, देहली द्वारा प्रकाशित

साहित्य की उपयोगिता इसी से सिद्ध है कि—

(१) राजस्थान सरकार ने हमारी निम्न पुस्तकों को राजस्थान इन्टर कालिज तक की शिक्षण संस्थाओं और पुस्तकालय के उपयोगार्थ स्वीकृत किया है।

१ मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२॥)	५ विदेशों में एक साल	२)
२ पापों की जड़ अर्थात् शराब ।—) तथा =)॥		६ व्यायाम का महत्व	≡)
३ महर्षि दयानन्द और महात्मा गान्धी	३)	७ ब्रह्मचर्य के साधन (१-२) भाग	।—)
४ हमारा शत्रु तम्बाकू का नशा (।=) तथा =)॥		८ नेत्ररक्षा ≡)	९ दन्तरक्षा ≡)

(२) उत्तरप्रदेशीय सरकार ने पंचायत पुस्तकालयों के उपयोगार्थ निम्नलिखित पुस्तकें स्वीकृत की हैं—

१ नेत्ररक्षा	≡)	३ दन्तरक्षा	≡)
२ हमारा शत्रु तम्बाकू का नशा ।=) तथा =)॥		४ पापों की जड़ अर्थात् शराब ।— तथा =)॥	

(३) निम्न पुस्तकें भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की धार्मिक परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में निर्धारित हैं

१ आदर्श ब्रह्मचारी	१)	५ व्यायाम का महत्व	≡
२ ब्रह्मचर्यामृत बाल सं० ।=) साधारण	=)॥	६ मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२॥
३ वैदिक गीता	३)	७ संस्कृत कथा मंजरी	।—
४ महर्षि दयानन्द और महात्मा गान्धी	३)		

(४) निम्न पुस्तकें विरजानन्द संस्कृत परिषद् की परीक्षाओं में निर्धारित हैं—

१ वैदिक गीता	३)	११ संस्कृत क्यों पढ़ें ?	।=)
२ संस्कृत वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय	१)	१२ छात्रोपयोगी विचारमाला	॥=)
३ संस्कृताङ्कुर	१)	१३ रामराज्य कैसे हो ?	≡)
४ ब्रह्मचर्य के साधन १,२,३,४,५,६,७,८,९ भाग		१४ पंचमहायज्ञविधि	≡)
५ संस्कृत कथा मंजरी	—)	१५ आर्य सिद्धान्त दीप	१।)
६ व्यायाम सन्देश	१)	१६ तम्बाकू का नशा	=)॥
७ ब्रह्मचर्य शतक	।=	१७ ब्रह्मचर्यामृत बाल सं०	।=)
८ श्रुति सूक्ति शती	≡	१८ पापों की जड़ शराब	=॥
९ स्वामी विरजानन्द	१॥)	१९ विदेशों में एक साल	२)
१० वैदिक धर्म परिचय	॥=)	२० व्यायाम का महत्व	≡)

अन्य नगरों में उक्त पुस्तकें मिलने के पते :—

१ गुरुकुल झज्जर झज्जर (रोहतक)
२ पुस्तक भण्डार, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर
३ पुस्तक मन्दिर, मथुरा
४ हिन्दी पुस्तकालय, माता वाली गली, मथुरा
५ विशन बुक डिपो, माता वाली गली, मथुरा
६ भटनागर ब्रादर्स, उदयपुर
७ आर्यवीर पुस्तकालय, अड्डा होशियारपुर, जालन्धर
८ जवाहर बुक डिपो, सुभाष बाजार, मेरठ ९ विद्या भवन, चौड़ा बाजार, जयपुर।

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(१) यमपितृ परिचय (प० प्रियरत्न आर्य) २)
(२) ऋग्वेद में देवृकामा ,, -)
(३) वेद में असित् शब्द पर एक दृष्टि ,, -)।
(४) आर्य डाइरेक्टरी (सार्व० सभा) १।)
(५) सार्वदेशिक सभा का
सत्ताईस वर्षीय कार्य विवरण अ० २)
(६) स्त्रियों का वेदाध्ययन अधिकार
(प० धर्मदेव जी वि० वा०) १।)
(७) आर्य समाज के महाधन
(स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी) २॥)
(८) आर्यपर्व पद्धति (श्री प० भवानीप्रसादजी) १।)
(९) श्री नारायण स्वामी जी की स० जीवनी
(प० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) -)
(१०) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण(पं०इन्द्रजी) ।=)
(११) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या
(अनुवादक प० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) ।)
(१२) आर्य मन्दिर चित्र (सार्व० सभा) ।)
(१३) वैदिक ज्योतिष शास्त्र(प०प्रियरत्नजी आर्य) १॥)
(१४ वैदिक राष्ट्रीयता (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।)
(१५) आर्य समाज के नियमोपनियम(सार्व सभा) -)॥
(१६) हमारी राष्ट्रभाषा (प०धर्मदेवजी वि० वा०) ।-)
(१७) स्वराज्य दर्शन स०(प०लक्ष्मीदत्तजी दीक्षित) १)
(१८) राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती) ॥)
(१९) योग रहस्य (श्री नारायण स्वामी जी) १।)
(२०) मृत्यु और परलोक ,, १।)
(२१) विद्यार्थी जीवन रहस्य , ॥=)
(२२) प्राणायाम विधि ,, =)
(२३) उपनिषदें— ,

ईश	केन	कठ	प्रश्न
।=)	॥)	॥)	।=)
मुण्डक	माण्डूक्य	ऐतरेय	तैत्तिरीय
(छप रहा है)	।)	।)	१)

(२४) बृहदारण्यकोपनिषद् ४)
(२५) आर्यजीवनगृहस्थधर्म(प०रघुनाथप्रसादपाठक)॥=)
(२६) कथामाला ,, ॥)
(२७) सन्तति निग्रह , १।)
(२८) नैतिक जीवन स० ,, २॥)
(२९) नया संसार ,, ≡)
(३०) आर्य शब्द का महत्व ,, -)॥
(३१) मांसाहार घोर पाप और स्वास्थ्य विनाशक -)
(३२) मुर्दे को क्यों जलाना चाहिए -)
(३३) दस नियम व्याख्या -)॥
(३४) हजहारे हकीकत उर्दू
(ला० ज्ञानचन्द जी आर्य) ॥=)
(३५ वर्ण व्यवस्था का वैदिक स्वरूप , १॥)
(३६) धर्म और उसकी आवश्यकता ,, १)
(३७) भूमिका प्रकाश (पं० द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री) १।)
(३८) एशिया का वैनिस (स्वा० सदानन्द जी) ।।।)
(३९) वेदों में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां
(प० प्रियरत्न जी आर्य) १)
(४०) सिंधी सत्यार्थ प्रकाश २)
(४१) सत्यार्थ प्रकाश और उस की रक्षा में -)
(४२) ,, ,, आन्दोलन का इतिहास ।=)
(४३) शांकर भाष्यालोचन (प०गंगाप्रसादजी उ०) ५)
(४४) जीवात्मा ४)
(४५) वैदिक मणिमाला ।|=)
(४६) आस्तिकवाद , ३)
(४७) सर्व दर्शन संग्रह ,, १)
(४८) मनुस्मृति ,, ५)
(४९) आर्य स्मृति , १॥।)
(५०) जीवन चक्र ,, ५)
(५१) आर्योदयकाव्यम पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध, १।।), १॥)
(५२) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौतम) ॥=)
(५३) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर
(श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी) २।) रिया० १॥)
(५४) भजन भास्कर (संग्रहकर्त्ता
श्री प० हरिशंकरजी शर्मा १॥।)
(५५) मुक्ति से पुनरावृत्ति ,, ,, ।=)
(५६) वैदिक ईश वन्दना (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।=)॥
(५७) वैदिक योगामृत ,, ॥=)
(५८) कर्त्तव्य दर्पण सजिल्द (श्री नारायण स्वामी) ।॥)
(५९) आर्यवीरदल शिक्षणशिविर(ओंप्रकाशपुरुषार्थ) ।=)
(६०) ,, ,, ,, लेखमाला ,, १।।)
(६१) ,, ,, गीतांजलि(श्री रुद्रदेव शास्त्री) ।=)
(६२) ,, ,, भूमिका =)
(६३) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी २।)

मिलने का पता:—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, बलिदान भवन, देहली ६

Regd No D 51

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर
श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली–से प्रकाशित।

॥ ओ३म् ॥

ऋग्वेद

यजुर्वेद

सार्वदेशिक

वर्ष ३१

मूल्य स्वदेश ५

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ॥)

अङ्क ४

ज्येष्ठ २०१३

जून १९५६

वार्षिक विवरणाङ्क

सम्पादक—

सभा मन्त्री

सहायक सम्पादक—

श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषय-सूची

१. वैदिक प्रार्थना — १५३
२. सम्पादकीय — १५४
३. सभा का वार्षिक विवरण — १६५
४. महर्षि दयानन्द प्रदर्शित, वेदोत्पत्ति, की भ्रान्त्यालोचना (आचार्य शिवपूजनसिंह बी० ए० — १६५
५. सभा का आय व्यय विवरण — १६७
६. संस्कृति के चार अध्याय — २०५
७. स्वाध्याय का पृष्ठ — २०८
८. शंका समाधान — २१०
९. गोरक्षा आन्दोलन — २१२
१०. ऐ नवयुवको (कविता) (श्री डा० सूर्यदेवजी साहित्यालंकार) — २१४
११. बाल-जगत् — २१५
१२. हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक (श्री रामचन्द्र जी सम्पादक आर्य जगत) — २१६
१३. विविध सूचनाएं — २१७
१४. दान सूची — २२१
१५. साहित्य समीक्षा — २२२

✵ ओ३म् ✵

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३१ | जून १९५६. ज्येष्ठ २०१३ वि०, दयानन्दाब्द १३३ | अङ्क ४

वैदिक प्रार्थना

दृते दृꣳह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् । मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे । मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ॥ यजु० ३६ । १८ ॥

व्याख्यान

हे अनन्तबल महावीर ईश्वर ! "दृते" हे दुष्टस्वभावनाशक विदीर्णकर्म अर्थात् विज्ञानादि शुभ गुणों का नाशकर्म करनेवाला मुझ को मत रक्खो (मत करो) किन्तु उससे मेरे आत्मादि को विद्या सत्य धर्मादि शुभगुणों में सदैव अपनी कृपा सामर्थ्य से स्थिति करो "दृꣳह मा" हे परमैश्वर्यवन् भगवन् ! धर्मार्थकाममोक्षादि तथा विज्ञानादि दान से अत्यन्त मुझ को बढ़ा "अमित्रस्येत्यादि०" हे सर्व-सुहृदीश्वर सर्वान्तर्यामिन् ! सब भूत प्राणीमात्र मित्रदृष्टि से यथावत् मुझको देखें सब मेरे मित्र हो जायें कोई मुझ से किञ्चिन्मात्र भी वैर न करे "मित्रस्याऽहं, चेत्यादि" हे परमात्मन् ! आपकी कृपा से मैं भी निर्वैर हो के सब चराचर जगत् को मित्रदृष्टि से अपने प्राणवत् प्रिय जानूं अर्थात् "मित्रस्य चक्षुषेत्यादि" पक्षपात छोड़ के सब जीव देहधारीमात्र अत्यन्त प्रेम से परस्पर अपना वर्त्ताव करें अन्याय से युक्त होके किसी पर कभी हम लोग न वर्तें यह परमधर्म का सब मनुष्यों के लिये परमात्मा ने उपदेश किया है सबको यही मान्य होने के योग्य है ।

सम्पादकीय

सभा की स्वर्ण जयन्ती का अभिप्राय

आर्य जनता को यह विदित हो चुका है कि सन् १९५८ में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्वर्ण जयन्ती हो रही है। यह स्वर्ण जयन्ती का महोत्सव कोई साधारण रिवाजी महोत्सव न होगा। सार्वदेशिक सभा को स्थापित हुए ५० वर्ष हो जायेंगे, केवल इस खुशी में सारे आर्य समाज में उत्सव मनाये जायें यह तो कोई बड़ा महत्वपूर्ण निश्चय नहीं है। इसका महत्व तो यह है कि इस अवसर को आर्य समाज में नव जीवन उत्पन्न करने का साधन बनाया जाय। ऐसे अवसर कम आते हैं जब हम अपने तब तक के जीवन का निरीक्षण करें और भावी जीवनकी सक्रिय योजना बनायें, वह एक प्रकारसे मनुष्यका तथा संस्थाओंका आध्यात्मिक कायाकल्प होता है, उचित यही है कि हम सभा के स्वर्ण जयन्ती महोत्सव को समाज के कायाकल्प का साधन बनायें।

यह उत्सव १९५८ के अक्टूबर मास में मनाया जायगा। उस समय सार्वदेशिक सभा को स्थापित हुए ५० वर्ष व्यतीत हो जायेंगे, उत्सव की तिथियों का अन्तिम निश्चय तो कुछ समय पश्चात् किया जायगा परन्तु इस समय हम इतना तो अवश्य कह सकते हैं कि उत्सव की मुख्य तिथि दशहरे और दिवाली के मध्य में या आस-पास होगी, इस प्रकार यह उत्सव महर्षि निर्वाणोत्सव के अवसर पर ही मनाया जायगा। वस्तुतः यह उत्सव महर्षि निर्वाण के पश्चात् से लेकर अब तक की आर्यसमाज की प्रगति के सिंहावलोकन का निमित्त बन जायगा, सिंहावलोकन का काम केवल इतने से पूरा न हो जायगा कि समाज के विद्वान् और प्रचारक सभा सम्मेलनों में खड़े होकर यह घोषणा कर दें कि हमने अब तक कुछ नहीं किया और सब आर्य समाजी पतित हैं, सिंहावलोकन का अभिप्राय यह है कि आर्य समाज के विद्वान् और नेता मिलकर अब तक की प्रगति पर गम्भीरता से विचार करें, कि जो कार्य हो चुका है उसे और जो होने को है उसे भी सामने रख कर भावी कार्यक्रम को तैयार करें, महोत्सव पर देश-देशान्तर के आर्यजन एकत्र होंगे उस अवसर से यह लाभ उठाया जा सकेगा कि सब आर्य लोग निश्चित् कार्यक्रम को न केवल समझ लें, उसे पूरा करने के लिये दृढ़ प्रतिज्ञ हो कर भी जायें।

स्वर्ण जयन्ती समिति ने उत्सव का जो संक्षिप्त कार्यक्रम बना कर प्रस्तुत किया है, उसमें सभा की ओर से वैदिक अनुसंधान और प्रकाशन के कार्य को स्थायी रूप में संगठित करना भी रखा गया है, यह विचार कर कि जयन्ती महोत्सव के अवसर तक इस कार्य का एक ऐसा रेखा-चित्र तैयार कर लिया जाये जिसमें रङ्ग भर कर पूरा चित्र अङ्कित करने की योजना उत्सव पर बनाई जा सके। सभा की ओर से अनुसंधान और प्रकाशन विभाग का सूत्रपात कर दिया गया है, वह तो केवल अनुसंधान प्रकाशन विभाग का सूक्ष्म रूप है, अभी अनेक कार्य हैं जिनकी पूर्ति होना आवश्यक है। उनमें से कुछेक निम्नलिखित हैं—

१—चारों वेदों का संसार की सब भाषाओं में सुगम और सुलभ प्रामाणिक अनुवाद।

२—वेद तथा आर्य साहित्य पर पाश्चात्यों तथा उनके अनुयायी पूर्वीय विद्वानों द्वारा किये गये आक्षेपों का निवारण।

३—म० दयानन्द के ग्रन्थों के विशुद्ध संस्करण।

४—सिद्धान्त सम्बन्धी विषयों पर विद्वत्तापूर्ण गवेषणात्मक ग्रन्थों का प्रकाशन।

थे तथा ऐसी ही अन्य साहित्य सम्बन्धी उपयोगी कार्य हमारे ध्यान और यत्न की प्रतीक्षा कर रहे हैं। इनकी पूर्ति के लिये एक साधन संपन्न प्रकाशन विभाग की स्थापना आवश्यक होगी। यह आवश्यकता जयन्ती के समय तक पूरी हो जानी चाहिये।

आर्य समाज का लक्ष्य यह है कि विश्व भर में आर्यत्व का प्रचार किया जाय। लक्ष्य अत्यन्त विशाल और महान् है। उसकी प्राप्ति के लिये अब तक हम जो प्रयत्न कर रहे हैं वह मुख्य रूप से प्रांतिक सभाओं द्वारा होता है। प्रांतिक सभाओं को अपने वेद प्रचार के लिये धन संग्रह करने का काम ही इतना बड़ा है कि निष्काम प्रचार की नौबत ही नहीं आती। निष्काम प्रचार के लिये आवश्यक है कि आर्य समाज के पास कुछ ऐसे उपदेशक हों जिन्हें स्वयं जनता से धन न मांगना पड़े। उनका कार्य केवल देश और विदेश में प्रचार हो। यह कार्य सार्वदेशिक सभा द्वारा ही हो सकता है परन्तु यह तभी सम्भव है यदि सभा के पास प्रचार के लिये इतना स्थिर कोष हो कि उसके सूद से विद्वान् और सदाचारी उपदेशक प्रचार के कार्य के लिये लगाये जा सकें।

इस समय जाति के सामने एक बड़ी समस्या ईसाई प्रचार के विरोध की है। यह तो स्पष्ट है कि केवल व्याख्यानों, शास्त्रार्थों या समाचार पत्रों के लेखों द्वारा ईसाइयों के ठोस कार्यों का उत्तर नहीं दिया जा सकता। उनके आक्रमण से जाति को बचाने के लिये मुख्य रूप से दो वस्तुओं की आवश्यकता है। पहली आवश्यकता है त्याग-वृत्ति से कार्य करने वाले प्रचारकों की और दूसरी आवश्यकता है ग्रामों जंगलों और पहाड़ों में बने हुए ऐसे सेवा केन्द्रों की जिनका उद्देश्य सेवाद्वारा आर्य धर्म के महत्त्व की स्थापना करना हो। ये दोनों कार्य भी अर्थसाध्य हैं। यह जान कर सिर लज्जा से झुक जाता है कि गत तीन वर्षों में बहुत सा शाब्दिक आन्दोलन होते पर भी जो राशि ईसाई प्रचार विरोध के लिये सार्वदेशिक सभा को प्राप्त हुई है वह कुछ सहस्र रुपयों से अधिक नहीं। सोच कर देखिये कि ईसाइयों के करोड़ों रुपयों और सहस्रों मिशनरियों का जवाब कुछ सहस्र रुपयों और एक दर्जन प्रचारकों द्वारा कैसे दे सकते हैं? यदि हमें अपने संकल्प को पूरा करना है तो यह आवश्यक होगा कि जयन्ती के उत्सव तक सब आर्यसमाजें और नरनारी ऐसा प्रयत्न करें कि सभा के पास एक बड़ा प्रचार कोष इकट्ठा हो जाय जो मुख्य रूप से जाति को ईसाईयत की बाढ़ से बचाने का यत्न करे।

सबसे अधिक आवश्यक बात यह है कि आर्यसमाज के संगठन को दृढ़ बनाया जाय। संगठन की दृढ़ता के लिये दो बातें आवश्यक हैं। पहली बात तो यह है कि प्रत्येक आर्य सच्चा आर्य बने। हम केवल नाम के आर्य नहीं अपितु वस्तुतः आर्य पद के अधिकारी बनें। मन, वाणी और कर्म में सत्य हो। ईर्ष्या, द्वेष से रहित हों और चरित्रवान हों। आर्य ग्रंथों का स्वाध्याय हमारी जीवनचर्या का आवश्यक भाग हो। जब हम सच्चे अर्थों में आर्य होंगे तो आर्य समाज का संगठन भी दृढ़ और निर्दोष होगा। इस समय आर्य समाज का वैधानिक शरीर बहुत जर्जरित दशा में है। बहुत कम आर्य समाज ऐसे होंगे जिनमें परस्पर झगड़े न हों। कभी-कभी तो वह झगड़े बहुत उग्र रूप धारण कर लेते हैं, जिससे प्रत्येक आर्य समाजी का सिर लज्जा से झुक जाता है। इसी प्रकार आर्य समाजों के प्रादेशिक सभाओं के सम्बन्ध भी वैसे प्रेमपूर्ण नहीं हैं जैसे होने चाहिये। दलबन्दी के कीटाणु हमारे संगठन के ढांचे को दीमक बन कर खा रहे हैं। इस परिस्थिति का मूल कारण यह है कि हम लोगों में सच्चे आर्यत्व का अभाव है। इस समाज के कार्य को सेवा न समझ कर अधिकार मानते हैं। एक इस अनार्य भावना ने हमारे संगठन की जड़ों तक को हिला दिया है। यदि हम

यह संकल्प कर लें कि सारी शक्ति लगा कर जयन्ती तक आर्यसमाज के सब घरू झगड़ों को निपटाकर संगठन को परिमार्जित कर लेंगे तो काम कुछ कठिन नहीं है । केवल मनोवृत्ति में परिवर्तन की अपेक्षा है । सिद्धान्त रूप में हमारा सविधान इतना अच्छा है कि यदि सद्भावना हो तो वह विशुद्ध जनसत्तात्मक होने के कारण अन्य सामाजिक और राजनैतिक संस्थाओं के लिये आदर्श बन सकता है।

बुद्धिमान् और नासमझ में यही भेद है कि जहां बुद्धिमान पुरुष हरेक सुअवसर से लाभ उठा कर उन्नति का मार्ग ढूंढ़ लेता है वहां नासमझ व्यक्ति जागने के समय भी सोया रहता है और उन्नति के अवसरों को हाथ से खो देता है। मेरा आर्यजगत से यही निवेदन है कि वह इस सुअवसर से लाभ उठा कर दूरदर्शिता और आर्यत्व को प्रमाणित करें। इसी में हम सबका कल्याण है। इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियाँ ❀

धर्म शिक्षा

पिछले दिनों पंजाब विश्व विद्यालय के उप-कुलपति ने स्कूलों और कालेजों में धर्म शिक्षा का सूत्रपात करने की घोषणा की थी जो स्वागत योग्य है।

क्या हम आशा करें कि यह योजना शीघ्र से शीघ्र क्रियात्मक रूप लेगी ?

घरों और स्कूलों में धार्मिक शिक्षा की अव-हेलना और बाहर भीतर विषाक्त वातावरण की व्यापकता इन दोनों के दुष्परिणाम प्रायः सबके सामने हैं उन पर विस्तार से विचार करना आवश्यक है। स्कूलों के लड़कों की उश्रृंखलता से प्रजा परेशान है। उनकी चरित्रहीनता और अपने को कानून से ऊपर समझने की दूषित प्रवृत्ति पर देश के विचारशील व्यक्ति व्यथित और चिन्तित हैं। जो महानुभाव अपने समय के विचारों से आगे बढ़कर देखते और सोचते हैं उन्हें देश का भावी नेतृत्व अरक्षित देख पड़े तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? धर्म शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों और नवयुवकों को इस प्रकार प्रशिक्षित करना है जिससे वे घर की शोभा, विद्यालय का गौरव, समाज के उत्तम नागरिक और राज्य के सुयोग्य कर्णधार बनें। ब्रिटिश राज्य कालीन शिक्षा पद्धति ने जो अभी तक हमारे शिक्षणालयों में प्रतिष्ठित और समा-दृत है जहां अनेक दुष्परिणाम उत्पन्न किए वहां विद्यार्थियों के धार्मिक और चारित्रिक विकास की भी घोर अवहेलना की जिसके फल स्वरूप जीवन के प्रत्येक विभाग में योग्य नेतृत्व की क्षमताओं से परिपूर्ण अच्छे नागरिक और विचार शील नेता प्राप्त न हो सके।

हमारे शिक्षणालय अपने छात्रों के चरित्र के निर्माणार्थ क्या करते हैं ? क्या वे उन्हें ईमानदार, सच्चरित्र और कर्मठ बनाने का प्रयत्न करते हैं ? क्या छात्रों के दिमागों को पुस्तकीय ज्ञान से भर देना और परीक्षा के समय उसे उगलवा देना ही उनका एक मात्र कार्य है ? दुःख के साथ यह स्वीकार करना होगा कि छात्रों के दिमागों को पुस्तकीय ज्ञान देने के साथ ही उनके कर्त्तव्य की इति श्री हो जाती है। शिक्षा का उद्देश्य है मनुष्य का सर्वाङ्गीण विकास और धार्मिक बनाने की अवस्थाएं उत्पन्न करके उसे धार्मिक मनुष्य बनाना। आर्य शिक्षा पद्धति का ध्येय ऐसे विद्या-र्थियों की उत्पत्ति रहा है जो परमात्मा का भय मानते हों अर्थात् बुराई और पाप से पृथक् रहते हों, माता पिता और गुरुजनों का आदर करते हों और शरीर और आत्मा में बलवान हों। जब तक इस पद्धति को अपनाकर वा उसके आदर्शों का अनुसरण करके वर्तमान शिक्षा पद्धति का काया कल्प न किया जायगा तब तक चरित्र निर्माण की इच्छा पवित्र इच्छा मात्र ही रहेगी वह अभीष्ट फल उत्पन्न न कर सकेगी।

धार्मिक शिक्षा का पाठ्य क्रम क्या हो यह वर्तमान में एक जटिल समस्या है। हमारे धर्म्म निरपेक्ष राज्य में किसी धार्मिक सम्प्रदाय की धर्म्म शिक्षा का प्रचलन धर्म्म निरपेक्षता के आदर्श के विरुद्ध होगा अतः उसको प्रश्रय देना संभव प्रतीत नहीं होता। अवश्य ऐसा पाठ्य-क्रम निर्धारित किया जा सकता है जिसमें सच्ची आस्तिकता, उच्च जीवन, सदाचार, निष्काम जन सेवा विषयक सर्वतंत्र, सार्वभौम, सार्वकालिक मौलिक सिद्धान्तों का समावेश हो। वेदादि सत्शास्त्र ही मूर्धन्यस्थान प्राप्त करने योग्य हैं क्योंकि वे साम्प्रदायिकता से परे हैं और उनसे विचारों की पवित्रता भावनाओं के संयम और कर्मों की उच्चता की सर्वोपरि शिक्षा मिलती है।

महान् पुरुषों की जीवनियों का अध्ययन भी बहुत कुछ कार्य कर सकता है। अमेरिका के महापुरुष बैंजमिन फ्रैंकलिन ने सद्गुणों, धार्मिकता, नागरिक स्वतन्त्रता और सदाचार के चार स्तम्भ बताए हैं उनमें से एक स्तम्भ अच्छे समाचार पत्र हैं। हमारे छात्रों के हाथों में अच्छे समाचार पत्रों के रखे जाने की भी सम्यक व्यवस्था होनी चाहिए। हमने वेदादि सत्शास्त्रों के पाठ्य-क्रम की सिफारिश इसलिए की है कि जब तक बुद्धि, हृदय और अन्तरात्मा पर धार्मिक शिक्षण का गहरा प्रभाव नहीं पड़ता तब तक उस शिक्षण का स्थायी प्रभाव नहीं होता और न हो सकता है। वेदादि सत्शास्त्रों में ये सब क्षमताएं विद्यमान हैं।

धार्मिक शिक्षा की योजना की सफलता के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि घरों का और घरों के बाहर का वातावरण ऐसा शुद्ध बनाया जाय जिसमें धार्मिक भावनाओं को प्रेरणा मिले और उनके पनपने की अवस्थाएं उत्पन्न हों। प्रत्येक घर में धार्मिक सत्साहित्य के पठन पाठन की व्यवस्था और पतन कारी दृश्यों और मनो-रंजनों का अन्त होना आवश्यक है।

धार्मिक पाठ्य-क्रम में सर्वाधिक प्रभावों, पाठक अध्यापकों की नियुक्ति और वेतन वृद्धि आदि प्रोत्साहनों में उनका चारित्रिक प्रभाव सर्वोपरि रहना चाहिए। इसी भाँति परीक्षाओं में पुस्तकीय ज्ञान के उपलब्ध नंबरों के साथ छात्रों के चारित्रिक विशेषताओं के नंबर जुड़कर ही उन्हें उत्तीर्ण समझा जाना चाहिए। वहीं अध्यापक विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण में कृतकार्य हो सकता है जो अपने उच्चपद के प्रति सच्चा हो और उस पद को धनोपार्जन का साधन न बनाता हो। उसके चरित्र का विद्यार्थी पर इतना गहरा प्रभाव पड़ना चाहिए कि विद्यार्थी आजन्म उसे श्रद्धा और आदर के साथ याद करता रहे। महर्षि दयानन्द अपने गुरु विरजानन्द जी को सदैव श्रद्धा के साथ याद करते और उनके शरीर पर गुरु की लाठियों की मारके पड़े हुए चिह्न उन्हें परम उपकार के चिन्ह देख पड़ते थे। महान् सिकन्दर कहा करता था कि 'जीवन धारण करने के लिए मैं अपने पिता का और अच्छा जीवन व्यतीत करने के लिए अपने महान् गुरु अरस्तू का कृतज्ञ हूं।"

आज देश को श्रेष्ठ गुरुओं एवं शिष्यों की आवश्यकता है जिनका प्रादुर्भाव बिना धार्मिक शिक्षा के असंभव है।

सदाचार का स्तर क्यों गिर रहा है ?

आर्य समाज का विधान प्रजातन्त्रीय विधान है जो सदाचार के बल पर ही अच्छी गति से चला करता है। हमारे उपनियमों में सदाचार सुनहरे अक्षरों में लिखा गया है परन्तु संख्या के पीछे पड़ कर हम लोगों ने उन नियमों को ढीला कर दिया है। जब तक ये नियम कड़े रहे आर्य समाज का नैतिक स्तर बहुत ऊँचा और स्पर्धा योग्य बना रहा। धन और पद ने सदाचार का स्थान ले लेने से अवस्था और खराब हो गई है। इस खराब अवस्था के फल स्वरूप (मजारिटी और माइनोरिटी) बहुमत और अल्पमत के

झगड़ों ने सिर उठाया हुआ है। आर्य समाज को प्राचीन ऋषियों का प्रजातन्त्र चाहिए जिसमें सदाचारियों एव ब्राह्मणों का प्राधान्य हो। इसी के लिए हमें पूरा २ यत्न करना चाहिये। आर्य समाज में वे ही चुने हुए वीर पुरुष होने चाहियें जो आदर्श के पीछे मरने वाले हों। संसार में हर जगह आर्य हैं और होने चाहिएँ परन्तु चर्च में आर्य समाज का नवनीत होना चाहिये। सदाचार के नियम अन्तरंग सदस्यों पर बहुत कड़े रूप में लगाने चाहिएं अन्यथा संगठन को और भी अधिक क्षति पहुँचेगी। जहां धन धर्म का और पद आत्म संवर्द्धन का रूप ले लेता है वहां विनाश अपना मुंह खोले रखता है। आर्य समाज में धनियों का और पद वालों का बोल बाला है। महर्षि निर्धन थे, पद रहित थे। सच्चे आर्य को ज्ञान पूर्वक निर्धनता को अङ्गीकार करना होगा। त्याग और सन्तोष के स्वर्ण से अपने हृदय को अलंकृत करना होगा। आरम्भ में आर्य समाज में उच्चकोटि के जन आया करते थे। प्रत्येक में प्रचार की धुन थी परन्तु आज समाज शासकों और शासितों की २ श्रेणियों में विभक्त हो गया है। अब लोगों को प्रचार की धुन के स्थान में पद की चिन्ता रहती है। धन और शासन के विषाक्त वातावरण में सत्य एवं सदाचार का गला घुट रहा है। सच्ची बात कहने और सुनने वालों का अभाव हो जाने से उन्नति अवरुद्ध हो गई है। यह अवस्था चिन्तनीय है। सच्चे, त्यागी और चुपचाप काम करने वाले लोगों से ही इस अवस्था में अपेक्षित परिवर्तन हो सकता है अन्यथा नहीं। क्या इसके लिये हम सब यत्न करेंगे ?

पं० विनायकराव जी का सम्मान

गत २३ अप्रैल को हैदराबाद के जननायक प्रसिद्ध आर्य नेता श्रीयुत पं० विनायकराव जी विद्यालंकार वित्त, वाणिज्य एवं उद्योग मन्त्री हैदराबाद राज्य का हीरक जयन्ती समारम्भ श्री काशीनाथ राव जी वैद्य अध्यक्ष विधान सभा हैदराबाद की अध्यक्षता में ससमारोह सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर श्रीयुत पंडित जी को ६५० पृष्ठों का अभिनन्दन ग्रन्थ और ४२७८०) की थैली भेंट की गई। अनेक गण्य मान्य व्यक्तियों, राज्य के मन्त्रियों तथा सभा संस्थाओं की ओर से पंडित जी को उनके उच्च जीवन और उदात्त सेवाओं के आदर स्वरूप हार्दिक श्रद्धांजलियां प्रस्तुत की गईं। उक्त थैली के धन से जो पंडित जी ने आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद को दान दे दिया है, 'विनायक भवन का निर्माण किया जायगा। यदि यह भवन आर्य प्रतिनिधि सभा के स्थायी कार्यालय का रूप ले सके तो आर्य प्रतिनिधि सभा की एक बड़ी आवश्यकता की पूर्ति हो जायगी।

पं० विनायक राव जी अपनी प्रशंसा से दूर भागते हैं और प्रशंसा उनके पीछे भागती है। यह स्थिति बिरले ही जन सेवकों को प्राप्त होती है। उन्होंने अपने भाषण में अपनी स्वाभाविक सरलता और उदारता से आविर्भूत हो यह कह दिया कि मेरे सम्बन्ध में सभी वक्ताओं ने झूठी प्रशंसा की है। उन्होंने जो बात बड़े मार्के की कही वह इस प्रकार है :—

"हैदराबाद की राजनैतिक चेतना का पूर्ण श्रेय आर्य समाज को ही है। आर्य समाज तो केवल मात्र धार्मिक संस्था है परन्तु उसने हैदराबाद में सदैव हिन्दुओं की रक्षा का भार वहन किया और यशस्वी बना।"

अन्त में उन्होंने अपने निम्नलिखित उद्‌गारों से अपने व्यक्तित्व की छाप को जो लोगों के हृदयों पर अंकित है, बहुत गहरा बना दिया :—

"साधारणतया यह कहा जाता है कि आर्य समाज के निर्माण में मेरा बड़ा हाथ रहा। यह बात झूठ है। उसके कार्य को मूर्त्त रूप देनेवाले दूसरे व्यक्ति थे जिन्होंने रात और दिन परिश्रम किया। मैं तो आरम्भ से ही अपने आपको अजन्मा

का सेवक समझता हूं और मेरा परम कर्तव्य हो जाता है कि मैं अन्त तक मानव मात्र की सेवा करता रहूं।"

पं० विनायक राव जी हैदराबाद राज्य के उन विशिष्ट आर्यों में हैं जिनकी ओर आदर और अभिमान के साथ इशारा किया जाता है। आर्य समाज को उन्नत और उसकी रक्षा करने में इनका मूल्यवान योग रहा और रहता है। उनका जैसा निस्पृह, सरल और सेवा को यज्ञ का रूप देने वाला महान जीवन देश और आर्य समाज को चिरकाल तक प्राप्त रहे, इसी मंगल कामना के साथ हम पं० जी को बधाई देते और इस आयोजन के पुरष्कर्त्ताओं को धन्यवाद देते हैं। निश्चय ही श्री पं० नरेन्द्र जी एम० एल० ए० ने इस आयोजन को सफल बनाने में कोई प्रयत्न उठा न रखा था।

हीरक जयन्ती का यह आयोजन साधारणतया कुछ अप्रासंगिक सा प्रतीत होता है परन्तु पं० विनायकराव जी हैदराबाद में एक व्यक्ति न हो कर एक संस्था का रूप रखते हैं अतः उनके सम्मान में इस प्रकार का समारोह सार्थक ही है।

बुद्ध जयन्ती पर आर्य समाज का कार्य

बुद्ध जयन्ती के अवसर पर विदेश से आए हुये विशिष्ट जनों को आर्य समाज से परिचित कराने और अपना साहित्य भेंट करने का सार्वदेशिक सभा ने आयोजन किया था। श्रीयुत् आनन्द स्वामी जी महाराज के नेतृत्व में आर्य समाज का प्रतिनिधि मण्डल सारनाथ और 'गया' गया जिसमें श्रीयुत डा० मंगलदेवजी शास्त्री एम.ए. पी.एच.डी., श्रीयुत शिवचन्द्रजी स० मन्त्री सार्व० सभा श्रीयुत् ओ३म्प्रकाश जी पुरुषार्थी प्रधान सेनापति आर्य वीरदल, तथा श्री पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड सम्मिलित थे। इधर देहली में सभा पुस्तकाध्यक्ष श्रीयुत् पं० धर्मवीर जी वेदालङ्कार और सहायक मन्त्री श्री देवराज जी एम० ए० की अध्यक्षता में एक प्रतिनिधि मण्डल विदेशी राजदूतों, लोक सभा के सदस्यों प्रसिद्ध २ कांग्रेस नेताओं, बौद्ध विद्वानों एवं भिक्षुओं से मिला। उन्हें आर्य समाज का साहित्य, एवं सभा प्रधान द्वारा इस अवसर पर प्रचारित वक्तव्य भेंट किया जिसमें भगवान बुद्ध और दयानन्द सम्बन्धी साहित्य प्रमुख था। अनेक जिज्ञासुजनों को आर्य समाज के सिद्धान्तों मन्तव्यों एवं उसकी सफलताओंसे परिचित कराया गया। ये प्रतिनिधि मण्डल बड़े सफल हुये। अन्यत्र भी आर्य जनों ने अपने कर्त्तव्य का उत्तम रीति से पालन किया है। विस्तृत समाचार 'सार्वदेशिक' के पाठकों के लाभार्थ आगामी अङ्क में प्रस्तुत किये जायेंगे।

नेपाल के महाराजा का राज्याभिषेक—

गत २ मई को नेपाल की राजधानी काठ मांडू में नेपाल नरेश श्री महाराजाधिराज श्री महेन्द्र जी का वैदिक विधि विधान और राजकीय समारोह के साथ राज्याभिषेक सम्पन्न हो गया। यह राज्याभिषेक राजा और प्रजा दोनों के लिये मंगलकारी हो, इस मंगल कामना के साथ हम महाराज को बधाई देते और उनका अभिनन्दन करते हैं। इस समय संसार में नेपाल का ही एक मात्र स्वतंत्र हिन्दू राज्य है जिसमें आर्य परम्पराओं के रक्षण की आशा की जा सकती है। राज्याभिषेक की पद्धति में जिसके द्वारा यह अभिषेक हुआ है वैदिक अनुष्ठानोंकीजो झांकी देख पड़ी है उससे प्रत्येक आर्य सभ्यताभिमानी को हर्ष हुये बिना न रहा होगा। क्या ही अच्छा हो कि राज्याभिषेक की समस्त प्रक्रियाओं का फिल्म तैयार होकर प्रदर्शित किया जाय!

जन सामान्य के राज्य शासन के युग में राजाओं और राजघरानों के प्रति आकर्षण प्रायः समाप्त हो गया है फिर भी राजघराने राज्य और प्रजा के मध्य पारस्परिक प्रेम, सौहार्द और राज्योन्नति के लिये पारस्परिक सहयोग की सुदृढ़ कड़ी का काम कर सकते हैं और सामाजिक शिष्टाचार विशिष्ट उच्च मर्यादाओं एवं जनजीवन के लिये उच्चादर्शों की अनुभूति के प्रतीक हो सकते हैं। आशा है नेपाल के महाराजा और उनकी प्रजा प्रजा वत्सलता और राजनिष्ठा के श्रेष्ठतम आदर्श उपस्थित कर नेपाल के कल्याण में कोई प्रयत्न उठा न रक्खेंगे।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

बुद्ध-जयन्ती पर श्री पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति का सन्देश

विश्वभर के आर्यों की प्रतिनिधि संस्था, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से, बुद्ध-जयन्ती के शुभ अवसर पर देश देशान्तरों से भारत में आये हुए महानुभावों का हृदय से स्वागत करता हूं। भारत के धार्मिक इतिहास में एक ऐसा अन्धकारमय समय आ गया था जब जाति धर्म की सच्ची भावना को खो बैठी थी। धर्म का स्थान रूढ़ियों ने ले लिया था, पशु-हिंसा को मोक्ष की प्राप्ति का साधन माना जाने लगा था, जन्म के कारण ऊंच-नीच की भावना इतनी प्रबल हो गई थी कि कर्मशील तपस्वी ब्राह्मणों का अभाव सा हो गया था। केवल कुछेक रिवाजों को धर्म का नाम देकर धर्म के वास्तविक रूप चरित्र-निर्माण की उपेक्षा की जा रही थी। जाति की ऐसी शोचनीय दशा थी, जब भारत के एक सुन्दर प्रदेश में महात्मा बुद्ध ने जन्म लिया और यथार्थ ज्ञान प्राप्त करके आर्य-धर्म का सन्देश ससार भर को दिया। महात्मा बुद्ध द्वारा उपदिष्ट धर्म का सार आर्य सत्यचतुष्टय में आ जाता है जिसकी धर्म-चक्र-प्रवर्तन सूत्र में विशद् व्याख्या है। धम्मपद के धर्मिष्ठ वर्ग में आर्य की जो विशद व्याख्या की गई है उसने आर्य शब्द के गौरव को बहुत बढ़ा दिया है:-

न तेन अरियो होति येन पाणानि हिंसति।
अहिंसा सब्ब पाणान अरियोति पवुच्चति॥

प्राणियों की हिंसा करने से कोई आर्य नहीं होता। सब प्राणियों की हिंसा न करने वाला मनुष्य ही आर्य कहलाता है।

मनुष्य जाति के कल्याण के लिये महात्मा बुद्ध ने जिस क्रियात्मक धर्म का उपदेश दिया उसे सहस्रों भिक्षुओं ने और महाराज अशोक जैसे धर्मिष्ठ नरपतियों ने ससार के कोने २ में फैला दिया: आज भी पृथ्वी पर बौद्ध धर्म के अनुयायियों की सख्या अन्य सब धर्मों के अनुयायियो की अपेक्षा अधिक है।

समय का चक्र चलता गया। लगभग २५०० वर्षों के पश्चात् फिर देश पर वैसा ही अन्धकार छा गया जैसा बुद्ध के जन्म के समय छाया हुआ था। अब भी धर्म का स्थान रूढ़ि ने, तप का स्थान वेष ने यज्ञ का स्थान पशु बलि ने और गुणों का स्थान जन्मगत जाति भेद ने ले लिया। जिस महापुरुष ने उन्नीसवीं सदी में इन अनार्य प्रवृत्तियों को रोका और सच्चे आर्य धर्म का उद्धार करके फिर से उसी भावना को जागृत किया था जिसे महात्मा बुद्ध ने जागृत किया था तो वह महर्षि दयानन्द सरस्वती थे।

आर्य समाज महर्षि दयानन्द का सन्देश वाहक है। वह रूढ़ियों का शत्रु, आर्य जीवन का समर्थक और जात पात तथा अस्पृश्यता का घोर विरोधी है। वह वेद के 'अहिंसा परमो धर्मः' इस उपदेश वाक्य में अटल विश्वास रखता है। अतः आर्य समाज आर्य-धर्म के बड़े प्रचारक महात्मा बुद्ध की पुण्य जयन्ती के अवसर पर अन्य देशों से भारत की पावनी भूमि में पधारे हुए बन्धुओं का हृदय से स्वागत और अभिनन्दन करता है। हमें आशा रखनी चाहिये कि भूमण्डल के भिन्न २ देशों में रहने वाले परन्तु समान धर्म-बन्धुओं का यह शुभ समागम संसार के लिये कल्याणकारी होगा, मनुष्य जाति महात्मा बुद्ध के बतलाये मौलिक आर्य-सत्यों को अपना मार्ग प्रदर्शक बनायेगी और घोर स्वार्थ तथा परस्पर विरोध की ज्वाला में जलती हुई मनुष्य जाति परस्पर विश्वास तथा शान्ति की स्थापना के स्वप्न को पूरा होता देख सकेगी।

गोहत्या जारी रखने के सरकारी प्रयत्न
राजकुमारी अमृतकौर के रहस्यपूर्ण परिपत्र

(लेखक—श्री लाला रामगोपाल जी, मन्त्री सार्वदेशिक सभा)

खेद है सरकारी स्तर पर इतनी अधिक हिंसा कभी नहीं हुई जितनी आज हो रही है। भोजन के लिये स्थान २ पर मछली, मुर्गी और सूअर पाले जा रहे हैं। द्वितीय सरकारी योजना में मछलियों के लिये ११७५५८००० रुपया रखा गया है। मुर्गी, सूअर इससे अलग हैं।

बन्दरों के निर्यात के तरीकों को देखकर इंगलैण्ड के लोगों ने भी आपत्ति की। भविष्य में हिंसा और अधिक बढ़ाने की कोशिश की जा रही है। भारत सरकार ने मांस को उद्योग बनाने और गोहत्या जारी रखने के लिए मांस बाजार रिपोर्ट १९५५ प्रकाशित की जिसकी सिफारिशों का कुछ अंश नीचे दिया जा रहा है :—

CONCLUSION AND RECOMMENDATIONS

Production.

The annual value of meat along with edible offals produced in India is estimated to be over 100 crores of rupees. The importance of the industry should not, however, be judged merely from this figure. Meat is vitally important to the Indian population because their diet is deficient in first class proteins and these could easily be obtained from meat. Therefore, from economic, nutritional and public health points of view, the meat industry is of considerable importance to the country and deserves a lot more attention than it has received in the past.

There appears to be a considerable agitation, in a section of the population, for complete ban on slaughter of cattle in India. This survey, however, has indicated that such a ban on total slaughter is bound to have serious repercussions on the different branches of live-stock industry of the country. The problem requires to be viewed from a practical economic angle. The correct solution would then seem to be to preserve useful cattle at all costs and so to improve the animals health and breed as to ensure for the country in the course of time to come all the milk it needs and all the efficient animals its agriculture requires and yet, leave an adequate surplus to yield good quality meat, hides, skins, and bones. *It is, therefore, recommended that an Expert Committee consisting of officials and noon-fficials conversant wi h meat and allied livestock industries should*

be appointed to enquire into the possible effects of the total ban on the slaughter of cattle with particular reference to the following :—

(i) *The direct economic loss, present and potential that may be caused to the country as a result of the ban, on the quality, quantity and value of meat and its by-products such as hides, bones, guts horns, hoofs, blood, etc.*

(ii) *The loss that is likely to accrue to the country by the increase in the number of uneconomic or unfit cattle in the coures of the next few years and its effects on the existing livestock fodder supplies.*

(iii) *The effect of such a ban on the health and welfare of that section of the Indian population, particularly the economically backward part of it, who were dependent largely on this cheep source for the supply of animals protein in their diet.*

(from the report on the Marketing of Meat in India 1955 page 166

अनुवाद :—भारत में मांस तथा तत्सम्बन्धी खाद्य पशु-अंगादि के वार्षिक मूल्य का अनुमान लगभग एक सौ करोड़ रुपये से अधिक है। व्यवसाय का महत्व केवल इन्हीं आँकड़ों से नही मान लेना चाहिये। मांस भारतीयों के लिए नितान्त अनिवार्य है क्योंकि इससे भोजन में अत्युत्तम प्रोटीन की कमी मिलती है जो कि मांस द्वारा सरलता से पूरी की जा सकती है अतः आर्थिक, पौष्टिक तथा जनता के स्वास्थ्य की दृष्टि से मांस का व्यवसाय देश के लिए अत्यन्त आवश्यक है और इस दिशा की ओर पहले की अपेक्षा अत्यधिक ध्यान देना चाहिये।

भारत में सम्पूर्ण पशुवध बन्द करने के लिये जनता के कुछ भागों में अधिक मात्रा में आंदोलन है। इस अनुसन्धान से स्वभावतः यह पता चलता है कि गोहत्या बन्द करने से देश के विभिन्न पशु धन व्यवसाय पर गहरा प्रतिघात होना आवश्यक है। अतः इस समस्या को व्यावहारिक और आर्थिक ढांचे से देखना चाहिये अतएव सही हल की दृष्टि से लाभदायक गोधन की संभाल सर्वथा आवश्यक है। इसके साथ ही पशुओं तथा नस्ल की उन्नति की जावे ताकि देश के भविष्य की दृष्टि से दूध खेती-बाड़ी के लिए मजबूत, चुस्त पशु तथा मांस, हड्डियां, चमड़ा खाल आदि के लिये प्रचुर मात्रा में पशु मिल सकें।

अतः यह सिफारिश की जाती है कि सरकारी और गैर सरकारी लोगों की जो मांस और गोधन के विषय में पूरी जानकारी रखते हों, विशेषज्ञ समिति बनाई जावे जो निम्न बातों की ओर ध्यान रखते हुए पूर्ण पशु वध बन्द करने से क्या प्रभाव पड़ता है, के विषय में जॉच करें :—

(१) गोवध बन्द करने पर मांस के परिमाण, मूल्य तथा तत्सम्बन्धी उपज खालें, हड्डियों, आन्तों तथा भविष्य में क्या २ हानि हो सकती है।

५ हाता पृत्त सक...

(२) आगे के कुछ वर्षों में अयोग्य, अपंग पशुओं की भारत में अभिवृद्धि होने पर जो हानि की सम्भावना हो सकती है तथा उस समय पशुओं के लिए चारा सम्बन्धी रसद का अभाव।

(३) आर्थिक दृष्टि से जिन लोगों का स्तर नीचा है और भोजन में प्रोटीन की कमी को पशुओं के मांस द्वारा ही जो पूरा करके स्वस्थ तथा सुखी होते हैं उन पर पूर्ण गोहत्या बन्द होने पर क्या प्रभाव होगा।

पशुओं के भिन्न २ अंगों से दवाई तैयार करने की तजवीज

स्वास्थ्य मंत्राणी राजकुमारी अमृतकौर ने राज्य सरकारों के मिनिस्टरों को कत्ल किये पशुओं के भिन्न २ अंगों से दवाई तैयार करने के लिए जो पत्र लिखा उसकी नकल निम्नलिखित है :—

MINISTER FOR HEALTH INDIA, NEW DELHI.

Dear Minister,

The Pharmaceutical Enquiry Committee in paragraphs 97 99 of their recommendations have stressed the need for setting up modern slaughter houses in big cities for the proper collection and storage of internal organs and glands of animals which are used by the pharmaceutical industry. The recommendations of the Pharmaceutical Enquiry Committee have been carefully examined it is considered that steps should be taken to modernize slaugther houses, especially in those big cities where animals are slaughtered in large numbers, and to provide adequate facilities for the collection and storage of internal organs and glands of animals which are used in the manufacture of biological products such as live extract, insulin and other hormones. Such measures should result not only in the promotion of indigenous manufacture of essential glandular drugs but also in conserving foreign exchange by utilising the indigenous sources of glands etc. which at present go waste. The State Governments were accordingly addressed (in my Ministry's letter No. F. 12 7/55 D, dated the 19th February, 1955), for taking up the programme of modernization, as set out in the Masani Committee's Report, in big cities such as, Bombay, Madras, Calcutta, Delhi, Kanpur and Hyderabad and for discussing this question at a conference with the representatives of the pharmaceutical industry, the Municipal authorities and the State Drug Standard Control Officer. I shall be gratefull if you will kindly give your personal attention to this matter, so that necessary action is taken in your State on the lines indicated in Ministry's letter referred to above.

Yours Sincerely,
Sd/Amrit Kaur.

(अनुवाद)

प्रिय मन्त्री महोदय !

फार्मेस्युटिकल इन्क्वायरी कमेटी ने अपनी सिफारिशों न० ९७९९ में इस बात की आवश्यकता पर जोर दिया है कि पशुओं की गिल्टियों और आन्तरिक अंगों का ठीक प्रकार से इकट्ठा करने और उनको गोदाम में रखने के लिये बड़े शहरों में नये ढंग के बूचड़खाने बनाये जायें जिनका दवाई बनाने के उद्योग में उपयोग किया जाता है। इस इन्क्वायरी कमेटी की सिफारिशों का बड़े ध्यान से निरीक्षण किया गया है और यह समझाया गया है कि उन बड़े शहरों में नये ढग के बूचड़खाने बनाने के लिए प्रबन्ध किया जाये ;विशेष करके जहां पशु बड़ी संख्या में वध किये जाते हैं और पशुओं की गिल्टियों और आन्तरिक अङ्गों को इकट्ठा करने और उनको गोदाम में रखने के लिये पूरी सुविधायें दी जावें। और यह चीजें ऐसी दवाइयाँ बनाने के काम आती हैं जैसे जिगर का सत इनस्यूलीन और दूसरे वैसे ही पदार्थ। ऐसे तरीकों से न केवल गिल्टियों सम्बन्धी आवश्यक दवाइयां देश में बनाई जायें बल्कि इन गिल्टियों आदि को काम में लाकर धन भी प्राप्त किया जावे जो अब वैसे ही बर्बाद हो जाती हैं। इसलिये राज्य सरकारों को इस मन्त्रालय की चिट्ठी न० १०-७ ५५ ड० ता० १९ फरवरी १९५५ द्वारा यह लिखा गया है कि वह इस नये ढंग के कार्यक्रम को जैसा कि मसानी कमेटी की रिपोर्ट मे बताया गया है, बम्बई, मद्रास, कलकत्ता, दिल्ली, कानपुर, हैदराबाद जैसे शहरों में प्रारम्भ करे। और फार्मास्युटिकल दवाई बनाने वाले, उद्योग के प्रतिनिधियों या म्युनिसिपल कर्मचारियों और स्टेट ड्रग स्टैंडर्ड कन्ट्रोल आफिसर, राज्यौषध स्तर नियन्त्रण अधिकारी के साथ एक सम्मेलन में इस प्रश्न पर विचार करें। मै कृतज्ञ हूंगी यदि आप कृपा करके इस विषय की ओर अपना व्यक्तिगत ध्यान देंगे, ताकि आपके प्रान्त में मेरे मन्त्रालय की उपरोक्त चिट्ठी में बताये हुए सुझाव को लेकर आवश्यक कार्य किया जा सके।

आपकी
सच्चे दिल से
अमृतकौर

नये प्रकार के बूचड़खाने बनाने की तजवीज

"१० अप्रैल १९५६ को लोकसभा में डा० रामाराव के एक प्रश्न के उत्तर में श्री नित्यानन्द जी कानूनगो व्यवसाय उपमन्त्री ने यह माना कि दिल्ली और बम्बई की सरकारें नये ढग के बूचड़खाने बनाने की तजवीज कर रही है। पशुओं की हड्डियों के जोड़ और दूसरे अंग जो दवाई बनाने के काम आते हैं उनको रखने पर भी गौर कर रही है। यह चीजें विदेशों से मंगवाई जाती हैं। अप्रैल १९५५ से दिसम्बर १९५५ तक १ लाख १७ हजार रुपए के यह पशुओं के अंग विदेशों से मंगवाये गये।"

यह है मांसाहार की प्रवृत्ति को बढ़ाने का हमारी केन्द्रीय सरकार का आपत्तिजनक प्रयत्न। भारतीय राज्य धर्म निरपेक्ष राज्य है अतः राज्याधिकारियों को किसी खास विचारधारा से अपने को प्रभावित न होने देना चाहिये। भारत की अधिकांश जनता आर्य हिन्दू जनता है। मांसाहार की प्रवृत्ति बढ़ाने का राजकीय यत्न हिन्दुओं के धर्म में नितान्त हस्तक्षेप है जिसे सर्व साधारण जनता बर्दाश्त न कर सकेगी। अतः मै भारत सरकार को परामर्श दूंगा कि वह इस प्रकार का खतरा मोल न ले।

मुझे भय है कि दवाइयों के नाम पर खोले गये बूचड़खाने गोहत्या को खुला प्रोत्साहन देने में सहायक होंगे। एक ओर तो प्रदेशीय राज्य गोहत्या निरोध विधेयक बना रहे हैं दूसरी ओर राजकुमारी अमृतकौर राज्य सरकारों को सरक्यूलर भेज कर गोहत्या को प्रोत्साहित करना व जारी रखना चाहती हैं। किसी भी जनतन्त्रीय सरकार के लिये जनता की भावनाओं की अवहेलना करना उचित नहीं है।

सैद्धान्तिक चर्चा

महर्षि दयानन्दजी प्रदर्शित, वेदोत्पत्ति, की प्रान्त्यालोचना

[लेखक :—वैदिक गवेषक, आचार्य शिव पूजन सिंह, पथिक, बी० ए०, सिद्धान्तवाचस्पति, साहित्यालंकार, कानपुर]

वेदोत्पत्ति के सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द जी लिखते हैं : –

(प्रश्न) किनके आत्मा में कब वेदों का प्रकाश किया।

(उत्तर) अग्नेर्ऋग्वेदो वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः ॥ शत० ११।४।२।३

प्रथम सृष्टि की आदि में परमात्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा इन ऋषियों के आत्मा में एक एक वेद का प्रकाश किया। . १

पुनः...(उत्तर) अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा के।

(प्रश्न) वे तो जड़ पदार्थ हैं ?

(उत्तर) ऐसा मत कहो। वे सृष्टि की आदि में मनुष्य देहधारी हुए थे, क्योंकि जड़ में ज्ञान के कार्य का असंभव है और जहां असंभव होता है वहां २ लक्षणा होती है, जैसे किसी सत्यवादी विद्वान् पुरुष ने किसी से कहा कि खेतों में मचान पुकारते हैं, इस वाक्य में लक्षणा से यह अर्थ होता है कि मचान के ऊपर मनुष्य पुकार रहे हैं, इसी प्रकार से यहां भी जानना कि विद्या के प्रकाश होने का सम्भव मनुष्यों में ही हो सकता है अन्यत्र नहीं : इसमें तेभ्यः० इत्यादि शतपथ ब्राह्मण का प्रमाण लिखा है। उन चार मनुष्यों के ज्ञान के बीच में वेदों का प्रकाश करके उनसे ब्रह्मादि के बीच में वेदों का प्रकाश कराया था।*

यही सिद्धान्त आर्य समाज का है।

आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध विद्वान् पं० सुरेन्द्र शर्मा गौर, काव्य वेदतीर्थ, विद्याभूषण, देहली ने मासिक पत्र "वैदिक धर्म" पारडी, वर्ष ३६, नवम्बर सन् १९५५ ई०, अङ्क ११, पृष्ठ ३३५ से ३४० तक "ईश्वरीय ज्ञान वेदोत्पत्ति, क्यों कब कहां और किसके द्वारा हुई" शीर्षक एक भयङ्कर लेख प्रकाशित कराया है। आपका यही लेख, साप्ताहिक पत्र "श्रीवेंकटेश्वर समाचार" बम्बई के "दीपमालिकांक" वर्ष ६०, शुक्रवार दिनांक ११ नवम्बर सन् १९५५ ई०, संख्या २८ पृष्ठ २४ से २७ तक में प्रकाशित हुआ है।

मैं आपका लेख पढ़कर अवाक् हो गया। यदि कोई साधारण लेखक का लेख होता तो खेद नहीं होता, पर जिस व्यक्ति का जीवन ही आर्य समाज में व्यतीत हुआ, आर्य समाज में पुरोहित रहे, उपदेशक रहे, उसकी लेखनी द्वारा महर्षि दयानन्द जी के सिद्धान्त पर कुठाराघात होते देख कर अत्यन्त खेद हुआ। आप अपने लेख के अन्त में लिखते हैं :—

"वेदज्ञ विद्वानों को शान्त मस्तिष्क से ही इस विषय विशेष की विचार विमर्श करना चाहिए।"

---

१ सत्यार्थ प्रकाश, सप्तम समुल्लास

* ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, वेदोत्पत्ति विषयः।

जब आपको विद्वानों के साथ विचार विमर्श करना था तो आपको उचित था कि यह विषय "धर्मार्य सभा" में उपस्थित करते, परन्तु आपने ऐसा न करके आर्य समाज के साथ एक प्रकार से विश्वासघात किया है। आपने अपने लेख को सनातनी पत्र "श्रीवेंकटेश्वर समाचार" में भी प्रकाशित करवा कर पौराणिकों के हाथ में एक बड़ा अस्त्र दे दिया। आपके लेख से विधर्मी भी लाभ उठायेंगे और शास्त्रार्थों में आपका लेख उपस्थित कर देंगे। ज्ञात होता है कि आपने यह निश्चित मत स्थिर कर लिया है कि अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा ऋषियों पर वेद प्रकट न हुए।

आप अपने लेख में महर्षि दयानन्द जी के सिद्धान्त पर कुठाराघात करते हुए पृष्ठ ३३८-३३९ में लिखते हैं :—

"इस विषय में १९ वें संस्करण स. प्र. समुल्लास ७ पृ० १३० पंक्ति १९ से ३० तक निम्न लेख हैं।

"प्रश्न वेद संस्कृत भाषा में प्रकाशित हुए और वे अग्नि आदि ऋषि लोग उस संस्कृत भाषा को नहीं जानते थे-फिर वेदों का अर्थ उन्होंने कैसे जाना।"

(उत्तर) परमेश्वर ने जनाया और धर्मात्मा योगी महर्षि लोग जब जब जिस जिसके अर्थ के जनाने की इच्छा करके ध्यानाऽवस्थित हो परमेश्वर के स्वरूप में समाधि स्थित हुए तब तब परमात्मा ने अभीष्ट मन्त्रों के अर्थ जनाये।

जब बहुतों के आत्माओं में वेदार्थ प्रकाश हुआ तब ऋषि मुनियों ने वह अर्थ और ऋषि मुनियों के इतिहास पूर्वक ग्रन्थ बनाये। उनका नाम ब्राह्मण.. ग्रन्थ हुआ।"

यह मत भी सुचिन्त्य है क्योंकि इससे यह सिद्ध होता है कि मूल मंत्र तो अग्नि आदि किन्हीं अन्य ऋषियों के द्वारा प्रकट हुए हैं जो कि मन्त्रार्थ को नहीं जानते थे और अर्थ जानने वाले तो वे ही ऋषि थे जिनका नाम वेद मन्त्रों के साथ लिखा जाता है। ऐसा मानने पर यह शंका होगी कि जिस पवित्रतादि उत्तम विशेषता के कारण अग्नि ऋषि के द्वारा १०५५२ मूलमन्त्र सस्वर प्रकट हुए हैं वह उनके अर्थ ज्ञान से शून्य कैसे रह सकता है जब कि शब्द और अर्थ का नित्य सम्बन्ध है और वह ऋषि भी है। ऋषि तो उसे ही कहते हैं जो कि "ऋषियो मन्त्रद्रष्टारः" मन्त्रार्थ तत्त्व को मानने वाले हों। अतएव इस पक्ष की सत्यता भी सुचिन्त्य ही है।

सृष्टि के आदि में अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा नामक चार ऋषि हुए हैं। उन्हीं के आत्माओं में चारों वेदों का प्रकाश हुआ था। यही मत वर्तमान आर्य समाज को भी मान्य है। किन्तु इस मत की पुष्टि के लिए मूल संहिता पाठ का कोई प्रमाण नहीं है। केवल जो प्रमाण दिया जाता है वह शतपथ ब्राह्मण कांड ११। अ. ५। ब्रा २। ५ ११ तथा ऐसा ही पाठ ऐतरेय ब्राह्मण अ. २५। खंड ७॥ तथा

गोपथ ब्राह्मण पूर्व भाग प्रथम प्रपाठक कंडिका ६ में भी लेख है।

इन स्थलों में जो वर्णन है वह भौतिक भूमि, अन्तरिक्ष व द्यु लोक की उत्पत्ति का है। अग्नि, वायु, आदित्य जड़ पदार्थ हैं। जड़ पदार्थ ग्रहण करने में असमर्थ हैं अतः इनके द्वारा ज्ञान का प्रादुर्भाव हो ही नहीं सकता है।

क्योंकि—"कारण गुणपूर्वकः कार्य गुणो दृष्टः" उपादान कारण का गुण उसके कार्य में भी रहता है। पृथिवी आदि लोक जड़ हैं इनसे बना हुआ अग्नि व वायु सूर्यादि भी जड़ ही हैं और जड़ वस्तु ईश्वरीय ज्ञान को ग्रहण करने में सर्वथा ही असमर्थ भी होता है अतः ब्राह्मणों के उक्त प्रमाण से ईश्वरीय ज्ञान वेद का प्रकाश इन अग्नि वायु व सूर्य के द्वारा नहीं हुआ।

दूसरा दोष इस प्रमाणाश्रित मत में यह भी है कि उक्त प्रमाण में अग्नि, वायु, आदित्य, इन तीन के द्वारा केवल तीन ही वेद सिद्ध होते हैं। चौथे अथर्व वेद और अङ्गिरा ऋषि का तो वहां नाम तक भी नहीं हैं। अतएव वेद प्रमाणाभाव तथा सदोष होने से यह चौथा मत भी त्याज्य एवं सुचिन्त्य ही है।"

अब ऊहापोह से पं० सुरेन्द्र शर्मा के आक्षेपों का निराकरण किया जाता है :—

"आप महर्षि दयानन्दजी के वाक्यों को तोड़ मरोड़ कर यह सिद्ध करना चाहते हैं कि मूल मन्त्र तो अग्नि आदि किन्हीं अन्य ऋषियों के द्वारा प्रकट हुए हैं जो कि मन्त्रार्थ नहीं जानते थे। ..

पता नहीं आप, वेदतीर्थ, होते हुए भी इस प्रकार तात्पर्य कैसे निकालते हैं। जब महर्षि जी ने स्पष्ट लिखा है—"फिर वेदों का अर्थ उन्होंने कैसे जाना।

उत्तर—परमेश्वर ने जनाया।"

इससे स्पष्ट प्रकट होता है कि अग्नि आदि ऋषियों को वेदों का अर्थ परमात्मा ने जनाया।

तत्पश्चात् जिन २ अन्य ऋषियों ने समाधि अवस्था में वेदार्थ जाना उनका उन्होंने साधारण मनुष्यों में प्रचार किया। उन्हीं ऋषियों का नाम वेद मंत्रों के साथ आता है।

अतः आपका ही पक्ष असत्य और सुचिन्त्य है।

अग्नि, वायु, आदित्य, अङ्गिरा के द्वारा चारों वेद प्रकट हुए इसके लिए आप संहिता पाठ का प्रमाण चाहते हैं।

आप जीवन पर्यन्त आर्यसमाज के सिद्धान्तों का प्रचार करते रहे पर आपको यह भी पता नहीं है कि वेदों में कोई भी रूढ़ि शब्द नहीं है। वेदों के सभी शब्द यौगिक होते हैं।

"नैगमाश्च रूढ़िभवाश्च सुसाधवो कथा-स्युरिति।" महाभाष्य ३।३।१

यहां वैदिक नामों से भिन्न रूढ़ि नामों को कहा है इससे तो वैदिक नाम रूढ़ नहीं किन्तु यौगिक हैं यही सिद्ध होता है।

फिर अग्नि, वायु, आदित्य, अङ्गिरा तो व्यक्ति वाचक रूढ़ि शब्द हैं, इनका नाम वेदों में कैसे आयेगा।

अपने असत्य पक्ष को सिद्ध करने में आपने "यौगिकवाद" को भी भुला दिया है।

पौराणिक पंडित ज्वाला प्रसाद मिश्र 'विद्यावारिधि' ने, सत्यार्थ प्रकाश का खंडन करते हुए अपनी पुस्तक "दयानन्द तिमिर भास्कर" प्रथम संस्करण पृष्ठ ७५४ में तथा पं० कालूराम शास्त्री ने "आर्य समाज की मौत" प्रथम संस्करण, पृष्ठ २५७ में इसी प्रकार महर्षि दयानन्द जी के सिद्धान्त पर आक्षेप किया है। आपमें और इन पौराणिक पंडितों में क्या अन्तर रहा। आप और पौराणिक पंडित एकही नाव पर हैं।

आपने अग्नि, वायु आदि का अर्थ जड़ पदार्थ किया है पर अपने पक्ष की पुष्टि में कोई प्रमाण नहीं दिया। दूसरों से तो प्रमाण मांगते हैं और आप क्यों नहीं देते। मैं शतपथ ब्रा० का पूरा प्रकरण देकर उसका अर्थ कर देता हूँ।

"प्रजापतिर्वा इदमग्र आसीत्। एक एव सोऽकामयत स्यां प्रजायेयेति सो श्राम्यत्स तपो तप्यत तस्माच्छ्रान्तात्तेपानात् त्रयोलोका असृज्यन्त पृथिव्यन्तरिक्षं द्यौः॥ १॥ स इमांस्त्रींलोकामभितताप तेभ्यस्तप्तेभ्य स्त्रीणि ज्योतींष्य जायन्ताग्निर्यो ऽयंपवते सूर्यः॥ २॥ स इमानि त्रीणि ज्योतींष्यभितताप। तेभ्यस्तप्तेभ्यस्त्रयो वेदो अजायन्ताग्नेर्ऋग्वेदो वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः॥ ३॥ स इमांस्त्रीन् वेदानभितताप। तेभ्यस्तप्तेभ्यस्त्रीणि शुक्राणय जायन्तभूरिंन्यृग्वेदाद्भुवइति यजुर्वेदात

स्वरिति सामवेदात् तदृग्वेदेनैव होत्रमकुर्वन्त यजुर्वेदनाध्वर्यवं सामवेदेनोद्गीथं यदेव त्रय्यै विद्यायै शुक्रं तेन ब्रह्मत्वमथोच्चक्राम ॥ ४ ॥

[शतपथ ब्राह्मण ११।५।८।१ से ४ तक]

अर्थ :—यह एक ही प्रजापति पहले था। उसने सोचा कि मैं प्रजा के साथ हो जाऊँ। उसने ज्ञानपूर्वक प्रयत्न किया। उस ज्ञान तथा यत्न से उसने तीन लोक बनाए पृथ्वी, अन्तरिक्ष, द्यौ ॥ १ ॥ उसने इन तीन लोकों को रचा, इन तीन लोकों के रचने पर उसने संसार को ज्ञान से प्रकाशित करने के लिए तीन देदीप्यमान ऋषियों को उत्पन्न किया अग्नि, वायु, सूर्य ॥ २ ॥ उसने इन तीन ज्योतिमान् ऋषियों को ज्ञान दिया, उनके ज्ञानवान् होने पर तीन वेद प्रकाशित हुए। अग्नि से ऋग्वेद, वायु से यजुर्वेद, सूर्य से सामवेद ॥ ३ ॥ उसने इन तीन वेदों को प्रकाशित किया उनके प्रकाशित होने पर तीन शक्तियां उत्पन्न हुई। भू: ऋग्वेद से, भुवः यजुर्वेद से, स्वः सामवेद से, सो ऋग्वेद से ही होता हवन करता है। यजुर्वेद से अध्वर्यु, घी का हवन करता है, सामवेद से मंगल गाया जाता है और इन तीनों विद्याओं से ज्ञानवान् होकर ब्रह्म को प्राप्त होता है ॥ ४ ॥

अब बतलाइए कि यहाँ तीन ज्योतियां तत्व हैं, जड़ हैं या ऋषि ?

शतपथ ब्राह्मण के इस प्रमाण पर आप कहते हैं कि अग्नि, वायु, आदित्य इन तीनके द्वारा केवल तीन ही वेद सिद्ध होते हैं चौथे अथर्ववेद और अङ्गिरा ऋषि का तो यहाँ नाम तक भी नहीं है। परन्तु शतपथ ब्राह्मण में स्पष्ट लिखा है।

......अथर्वाङ्गिरसः शतपथ ब्रा० १४।५।४।१०

अङ्गिरा से अथर्ववेद का प्रकट होना सिद्ध होता है।

"अङ्गिराश्चतुर्थवेद प्रवर्तकाचार्यः।"

[तैत्तिरीय ब्राह्मण की सायण कृत व्याख्या २।१]

शतपथ ब्रा० में आए हुए अग्नि, वायु आदि का अर्थ किसीभी विद्वान् ने जड़ पदार्थ नहीं किया है, वरन् सभी ने ऋषि ही किया है। पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु वेदाचार्य पं० नरदेव जी शास्त्री, वेदतीर्थ॥, पं० जयदेव शर्मा विद्यालङ्कार, मीमांसा तीर्थ, स्वामी वेदानंद तीर्थ, पं० मनसाराम जी "वैदिकतोप", पं० मदनमोहन जी वेदालङ्कार, प्रभृति ने शतपथ ब्रा० में आए हुए अग्नि आदि का अर्थ ऋषि ही किया है जैसा महर्षि दयानन्द जी ने किया है।

(शेष पृष्ठ २१३ पर)

३. "सत्यार्थ निर्णय" प्रथम खण्ड, प्रथम संस्करण, पृष्ठ १६५ से उद्धृत।
४. "यजुर्वेद भाष्य विवरण की भूमिका, पृष्ठ २०, अक्टूबर १९४५ ई० प्रथम संस्करण, लाहौर
॥ ऋग्वेदालोचन, प्रथम संस्करण, पृष्ठ ३
५. ऋग्वेद संहिता भाषाभाष्य, प्रथम खण्ड, द्वितीयावृत्ति, भूमिका पृष्ठ ५
६. "वेद परिचय" प्रथम संस्करण पृष्ठ ९
७. पौराणिक पोल प्रकाश प्रथम भाग, प्रथम संस्करण, पृष्ठ २६६
८. साप्ताहिक पत्र "दिवाकर" आगरा का "वेदाङ्क" भाग १, ता० १६-१०-३५ ई० अङ्क २८, २९ पृष्ठ ७९ से "वेद विचार में मूलमत नियम" शीर्षक लेख।
९. यजुर्वेद भाष्य विवरण की भूमिका, पृष्ठ २०
१० "सत्यार्थ निर्णय" प्रथम खण्ड, पृष्ठ १६५

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली

का

अड़तालीसवां वार्षिक वृत्तान्त

(१-३-५५ से २८-२-५६ तक)

निर्माण व्यवस्था

इस वर्ष इस सभा में गत वर्ष की नाईं १५ प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभायें सम्मिलित रहीं। इसके अतिरिक्त सभा की नियमावली की धारा न० ६ के अनुसार सीधे प्रतिनिधित्व प्राप्त करने वाली ७ आर्य समाजें १९५५ तक और आर्य समाज मगलौर वर्ष के अन्त तक सभा मे सम्मिलित रही। १-५-५५ की नैमित्तिक साधारण सभा में सशोधित नियम के अनुसार उपर्युक्त ७ आर्य समाजों का प्रवेश समाप्त हुआ। वर्ष के अन्त मे यह सभा प्रदेशीय सभाओं के ५२, भूतपूर्व प्रधान ४, आजीवन सदस्य २६, प्रतिष्ठित ५, कुल ८७ सदस्यों का समुदाय थी।

अधिकारी व अन्तरंग सदस्य

कार्य विवरणान्तर्गत वर्ष में सभा के निम्न लिखित अधिकारी और अन्तरंग सदस्य रहे —

अधिकारी

१—प्रधान	श्रीयुत प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
२—उपप्रधान	,, ,, नरेन्द्र जी एम०एल०ए०
३— ,,	,, घनश्याम सिंह जी गुप्त
४— ,,	,, डा० डी० राम जी
५—मन्त्री	,, बाबू कालीचरण जी
६—उपमन्त्री	,, ला० राम गोपाल जी
७—कोषाध्यक्ष	,, बालमुकन्द जी
८—पुस्तकाध्यक्ष	,, पण्डित नरदेव जी स्नातक

सम्बन्धित प्रदेशीय सभायें

१—आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश
२—आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब
३—आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार
४—आर्य प्रतिनिधि सभा बगाल आसाम
५—आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान
६—आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य भारत
७—आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश
८—आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद
९—आर्य प्रतिनिधि सभा सिन्ध
१०—आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई
११—आर्य प्रतिनिधि सभा पूर्वीय अफ्रीका
१२—आर्य प्रतिनिधि सभा नैटाल
१३—आर्य प्रतिनिधि सभा मौरीशस
१४—आर्य प्रतिनिधि सभा फिजी
१५—आर्य प्रतिनिधि सभा सुरीनाम (डच गायना)

अन्तरंग सदस्य

१—श्रीयुत पण्डित मिहिर चन्द्र जी बंगाल
२— ,, ,, वासु देव शर्मा बिहार
३— ,, ,, रामनारायण जी शास्त्री बिहार
४— ,, ,, विजय शंकर जी बम्बई
५— ,, ,, भगवती प्रसाद जी राजस्थान
६— ,, लाला चरणदास जी ऐडवोकेट पंजाब
७— ,, पण्डित यशःपाल जी सिद्धांतालंकार पंजाब
८— ,, डा० महावीर सिंह जी रिटायर्ड सिविल सर्जन, मध्य भारत
९— ,, चौ० जयदेव सिंह जी ऐडवोकेट उत्तर प्रदेश
१०—,, बा० पूर्णचन्द्र जी ऐडवोकेट ,,
११—,, प्रो० इन्द्र देव सिंह जी मध्यप्रदेश
१२—,, पं० जियालाल जी अजमेर
१३—,, प्रो० रामसिंह जी
१४—,, स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज
१५—श्रीमती माता लक्ष्मीदेवी जी
१६—श्रीयुत पं० शिवशंकर जी
१७— ,, पं० भीमसेन जी विद्यालंकार

टिप्पणी—श्रीयुत घनश्याम सिंह जी द्वारा उपप्रधान पद से त्याग पत्र दे देने पर ६-११-५५ की अन्तरंग सभा के निश्चय सं० २१ के अनुसार श्रीयुत स्वामी आत्मानन्द जी महाराज उपप्रधान निर्वाचित हुए।

सभा के नियमों का संशोधन

१-५-५५ के नैमित्तिक अधिवेशन में सभा की नियमावली की धारा सं० ३ से लेकर १२ तक तथा सं० २० संशोधित हुई।

सभा का सदस्यता शुल्क

२८-८-५५ की अन्तरंग के निश्चयानुसार सोसाइटीज ऐक्ट २१, १८६० की धारा १५ के अनुसार २) सदस्यता शुल्क नियत हुई।

आर्य समाज उपनियम संशोधन

आर्य समाज के उपनियमों के संशोधन का विषय सभा के विचाराधीन है। समस्त सम्बद्ध प्रदेशीय सभाओं की सम्मतियां प्राप्त हो गई हैं। इन पर अन्तरंग सभा विचार करने वाली है। आशा है आगामी वर्ष संशोधनों का प्रारूप साधारण सभा के लिये तैयार हो जायगा।

धर्मार्य सभा के नियम संशोधन

इस सभा की ५-६-५५ की अन्तरंग सभा में धर्मार्य सभा के नियमों के संशोधन के लिए नियुक्त उपसमिति की १३-२-५५ की निम्नलिखित रिपोर्ट प्रस्तुत होकर निम्न प्रकार स्वीकृत हुई :

१ वर्तमान धर्मार्य सभा को निर्वाचक मंडल माना जाय।
२ ७ सदस्यों की धर्मार्य सभा बनाई जाय जिस के निर्णय अन्तिम हुआ करें।
३ इस सभा की बैठकों का मार्ग व्यय सार्वदेशिक सभा दिया करे।

धर्मार्य सभा की २७-८-५५ की अन्तरंग सभा ने सार्वदेशिक अन्तरंग सभा को इस निर्णय पर पुनर्विचार के लिये प्रेरणा की। तदनुसार २८-८-५५ की अन्तरंग सभा ने सम्प्रति उपर्युक्त नये विधान का प्रचलन स्थगित कर दिया।

आर्य समाज का कार्यक्रम

सभा की साधारण सभा ने अपने १-५-५५ के अधिवेशन में आर्य समाज का निम्नलिखित कार्यक्रम निर्धारित करके आर्य समाजों तथा प्रतिनिधि सभाओं में कार्यान्वित किये जाने के लिये प्रचारित किया था।

(१) आन्तरिक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा समस्त प्रदेशीय प्रतिनिधि सभाओं व उनसे सम्बन्धित आर्य समाजों का ध्यान निम्नलिखित बातों की ओर आकर्षित करती हैं और आदेश देती हैं कि अपनी भावी कार्य-प्रणाली में उनका ध्यान रखें।

१—वेदी की पवित्रता आवश्यक है अतः आर्य समाज की वेदी से मुख्यतः महर्षि दयानन्द के सिद्धाँतों का ही प्रचार हो अन्य किसी संस्था का नहीं।

(ख) आर्य समाज की वेदी से सिद्धांत विरोधी बात न कही जाये और सुयोग्य उपदेशकों को ही वेदी पर बैठने की प्रमुखता दी जाये।

(ग) आर्य समाज मन्दिर में वा आर्य समाज की किसी शिक्षा संस्था या इमारत में नाटक आदि खेल तमाशे कदापि न करने दिये जायें।

२—आर्य समाज की वेदी से सत्संगों और सार्वजनिक सभाओं में प्रबन्ध सम्बन्धी आलोचनायें न की जायें। प्रबन्ध सम्बन्धी त्रुटियों पर विचार आवश्यक हो तो त्रुटियाँ अन्तरंग सभा के सम्मुख प्रस्तुत की जाया करें।

३—साप्ताहिक सत्संगों को रोचक बनाने के लिये पूर्व से निश्चित कार्यक्रम के अनुसार कार्य किया जावे।

४—प्रचार की सफलता के लिये आवश्यक है कि आर्य समाज का प्रत्येक सदस्य अपने परिवार में आर्य सामाजिक सिद्धांतों को प्रविष्ट करें और इस प्रयोजन के लिये परिवार सहित साप्ताहिक सत्संगों में सम्मिलित हुआ करें।

५—जन्म की जातपात को समाप्त करने के लिये आर्य समाज की वेदी से तीव्र आंदोलन किया जाये।

(ख) अपना व अपने सन्तान का गुण कर्मानुसार विवाह करने वाले आर्य सदस्यों का प्रत्येक समाज में नियमित लेखा रखा जाये।

(ग) आर्य समाज के अधिकारियों की योग्यता का एक आधार वैदिक वर्ण व्यवस्था का क्रियात्मक किया जाना भी माना जाया करे।

(२) जन सम्पर्क

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा समस्त प्रदेशीय प्रतिनिधि सभाओं व उनसे सम्बन्धित आर्य संस्थाओं का ध्यान निम्नलिखित आवश्यक कार्यक्रम की ओर आकर्षित करती है :—

१—गोरक्षा का आँदोलन तीव्रगति से प्रचलित रखा जाये और गोपालन का क्रियात्मक प्रचार किया जाये।

२—ईसाइयों के अराष्ट्रीय तथा वैदिक संस्कृति विरोधी प्रचार से भारतीय जनों को रक्षार्थ क्रियात्मक उपाय प्रयोग में लाये जाँय।

३—शुद्धि आंदोलन को तीव्र किया जाये।

४—चरित्र निर्माण सम्बन्धी आंदोलन अधिक तीव्रता से संचालित किया जाये जिससे देश में से भ्रष्टाचार व अन्य बुराइयां दूर हो सकें और स्वराज्य प्राप्ति के साथ साथ सुराज भी हो सके। इस आंदोलन को सफल बनाने के लिये आर्य सभासदों व आर्य कार्यकर्ताओं को इस कार्य पर विशेष बल देना चाहिये और आर्य समाजों से यह भी अनुरोध है कि आर्य सभासदों की सूची बनाते समय सदाचार सम्बन्धी नियमों पर विशेष ध्यान रखें।

५—विद्यार्थियों में अनुशासन की भावना उत्पन्न करने पर बल दिया जाये।

६—सह-शिक्षा (बालक बालिकाओं का साथ साथ शिक्षा प्राप्त करना) ऋषि दयानन्द द्वारा प्रदर्शित वैदिक मर्यादाओं की विरोधी है अतः सह

शिक्षा आर्य संस्थाओं में प्रचलित न की जाये। आर्य पुरुषों से अनुरोध है कि वे बालकों को सह शिक्षा वाले विद्यालयों में प्रविष्ट न करें।

७—आर्य शिक्षा संस्थाओं में जो आर्यत्व का अभाव देख पड़ता है उसे दूर करके उन्हें वास्तविक आर्य संस्थाओं का रूप दिया जाये।

८—आर्य समाज की शिक्षा संस्थाओं तथा गुरुकुलों, महाविद्यालयों, स्कूलों और कालेजों आदि में पाठ्यक्रम, परीक्षाशैली आदि की दृष्टि से एकरूपता लाने के लिये पग उठाया जाये और इस कार्य की एक विशेष योजना तैयार की जाये।

(३) प्रचार विधि

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा प्रदेशीय समाओं का ध्यान वैदिक धर्म प्रचार की निम्न बातों की ओर आकर्षित किया जाता है :—

(१) साहित्य निर्माण तथा प्रकाशन

१—वेदों की शिक्षा को अधिक सरल प्रभावोत्पादक और मनोवैज्ञानिक रूप देने वाले वैदिक साहित्य का प्रकाशन किया जाये।

२—आर्य सिद्धांतों की पुष्टि में तुलनात्मक दृष्टि से ग्रन्थ तैयार कराये जायें।

३—वैदिक अनुसंधान विभाग की स्थापना की जाये।

(२ प्रचारकों द्वारा प्रचार

१—प्रचारकों को नियुक्त करते समय उनके सिद्धांत ज्ञान और व्यक्तिगत चरित्र पर विशेष ध्यान रखा जाये।

२—प्रचारकों का ध्यान आकर्षित किया जाये कि वे वेदी से वैदिक सिद्धांतों के विरुद्ध प्रचार न करें।

३—उत्सवों की रूपरेखा इस प्रकार की बनाई जाये कि उनका रूप भीड़ भड़क्कों और मेलों का न रह कर गम्भीर प्रचार का हो।

४—आर्य समाज के संदेश को ग्राम्य जनता तक पहुँचाने के लिये ग्राम प्रचार की ओर विशेष ध्यान दिया जावे।

५—ग्रामों में वैदिक धर्म प्रचार के लिये नियमित योजनानुसार कार्य प्रारम्भ कर दिया जाये।

(३) सम्मेलनों द्वारा

सार्वदेशिक सभा की ओर से वैदिक संस्कृति सम्मेलन किया जाये जिसमें ऋषि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित वैदिक संस्कृति के स्वरूप का निरूपण किया जाये और वर्तमान काल में अनेक विद्वानों द्वारा आर्य समाज सिद्धांत विरोधी वैदिक साहित्य की व्याख्याओं का निराकरण करने की व्यवस्था की जाये।

(४) विदेश प्रचार

विदेश प्रचार का कार्य नियमित रूप से हाथ में लिया जाकर आगे बढ़ाया जाये।

१—निश्चय हुआ कि यह कार्यक्रम भ्रमण पत्रिका द्वारा आर्य समाजों को प्रेषित किया जाये।

२—प्रदेशीय सभाओं आर्य समाजों और उपदेशकों को प्रेरणा की जाये कि इस कार्यक्रम को विशेषरूप से क्रियान्वित करें और इसकी प्रगति का नियमित विवरण प्रदेशीय व सार्वदेशिक सभाओं के कार्यालयों में रखा जाय।

प्रदेशीय सभाओं ने यथा समय अपने उपदेशकों, समाचार पत्रों और समाजों को उक्त कार्यक्रम के लिये भूमि तैयार करने और उसे क्रियान्वित करने के निर्देश दिये तथा समय २ पर प्रेरणा करती रहीं। यत्न करने पर भी कार्य की विस्तृत रिपोर्ट आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई मध्य प्रदेश और अफ्रीका को छोड़कर अन्य सभाओं की सार्वदेशिक सभा में प्राप्त नहीं हुई फिर भी

इतना तो कहा ही सकता है कि कार्यक्रम का समाजों तथा आर्य जनता में स्वागत हुआ और अनेक स्थानो पर वह क्रिया में भी लाया गया।

प्रचार-कार्य

इस वर्ष प० सत्यपाल शर्मा स्नातक एम० ए० ने सभा के दक्षिण भारत ओर्गेनाइजर तथा उपदेशक के रूप में वर्ष पर्यन्त कार्य्य किया। उनका मुख्य स्थान मैसूर रहा। दूसरे उपदेशक श्रीयुत मदन मोहन जी विद्यासागर की सेवायें आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के उपदेशक विद्यालय घटकेश्वर के अर्पण रहीं।

पं० सत्यपाल जी का कार्य

मौखिक प्रचार - इस वर्ष उन्होंने मैसूर, मडया रामनगरम्, बगलूर, गुलबर्गा मरकरा, तिरुपति, तुमकूर, हुन्सी, पोन्नानी, चगन्नूर, पेन्निकरा पेरिगाला, त्रिवेन्द्रम, गदक पिलहल्ली, कनकपुरा, बल्लारी, पेनुकांडा, मडकसिरा, कोयम्बटूर, मदुरा, शिमोगा भद्रावती, तीर्थहल्ली मडगाईं, चित्रदुर्ग, मद्रास, कालीकट, तानूर, मगलूर, कारकल उडपी, हिरियडक, गोरी विदनूर

इन ३६ स्थानों पर प्रचार किया।

२ —गोरी विदनूर, तानूर, चित्रदुर्ग, मडगाईं, भद्रावती, तीर्थहल्ली, मरकरा, तुमकूर, पोन्नानी, पेनिकरा गदग, पिलहल्ली. कनकपुरा, बल्लारी, पेनुगडा, मडकसिरा, कोयम्बटूर, तिरुपति, शिमोगा और मडया।

इन नए २० स्थानों पर प्रचार हुआ।

३ ६१ व्याख्यान दिये।

४ —६८ यज्ञ व संस्कार कराये जो निम्न प्रकार हैं :—

नाम करण ६, अन्नप्राशन १, विवाह १, गृह प्रवेश १, उद्घाटनादि विशेष यज्ञ ५६,

५—पेन्निकरा, शिमोगा तथा तानूर इन ३ नगरों में तथा मैसूर में आर्य स्त्री समाज की स्थापना हुई।

६ कुल १०३४२ मील की यात्रा की।

७—निम्नलिखित पुस्तकें कन्नड़ भाषा मे लिखाई गई :—

(१) विवाह पद्धति	श्री मंजुनाथ जी द्वारा
(२) व्यवहार भानु	" विश्वमित्र जी "
(३) गार्हस्थ धर्म	" प० मंजुनाथजी "
(४) वैदिक यज्ञमाला	" प०विश्वमित्रजी द्वारा
(५) गोकरुणानिधि	" " " "
(६) आर्योद्देश्य रत्नमाला	" प० सुधाकरजी द्वारा
(७) महर्षि जीवन	" " " "

८—निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हुईं :—

(१) सत्यार्थप्रकाश कन्नड़ भाषा में	४०००
(२) वैदिक विवाह पद्धति	१०००
(३) गार्हस्थ धर्म	१०००
(४) वैदिक यज्ञकाल	१०००
(५) आर्य समाज एण्ड क्रिश्चियनटी	१०००

९—गो बैक टू दी वेदाज तथा हू यू नो ऋषि दयानन्द नामक दो ट्रैक्ट छपवा कर मुफ्त बांटे गये।

१०—५१४५) धन एकत्र हुआ जो पुस्तकों के प्रकाशन में व्यय हुआ।

११—५ शुद्धिया हुईं।

श्री स्वामी ध्रुवानन्दजी सरस्वती का दक्षिण भारत में दौरा

३ जनवरी से ७ फरवरी १९५६ तक का श्री स्वामी जी का यह दौरा दक्षिण भारत में आर्य समाज के सिद्धान्तों के प्रचार तथा आर्यों में नूतन उत्साह भरने की दृष्टि से बड़ा ही सफल रहा। इस संक्षिप्त से समय में मद्रास. मदुरा, त्रिवेन्द्रम,

चेंगनूर, पोनानो, कालीकट, मंगलूर, मैसूर, बंगलूर. कारकल, हिरियडक, उडुपी, तीर्थहल्ली, शिमोगा आदि सभी स्थानों की समाजों की स्थिति गति का निरीक्षण श्री पूज्य स्वामी जी ने किया तथा सदस्यों के साथ वार्तालाप एवं विचार विनिमय भी किया। इसके अतिरिक्त मलाबार जिले में तानूर ग्राम में एक आर्यसमाज की स्थापना भी श्री स्वामी जी के कर-कमलों से हुई। इन सभी स्थानों पर आर्य कार्य कर्ताओं ने श्री स्वामी जी का सोत्साह स्वागत किया तथा अधिकाधिक सार्वजनिक भाषणों की योजना की। श्री स्वामी जी के मधुर एवं उत्साहप्रद भाषणों का बहुत ही अच्छा प्रभाव रहा। यद्यपि दक्षिण भारत के लिये हिन्दी काफी अपरिचित है तथापि स्वामी जी की भाषण शैली तथा भाषा इतनी सरल थी कि जनता उनके भावों को समझने में विशेष कठिनाई अनुभव नहीं करती थी। इस प्रकार स्वामी जी के सैद्धान्तिक भाषणों ने न केवल दक्षिण भारत की सामान्य जनता की दृष्टि में आर्य समाज के सिद्धान्तों की विशालता को अंकित किया अपितु आर्य कार्य कर्ताओं को भी नई चेतना व जीवन प्रदान किया। इस दौरे में इस वृद्ध अवस्था में स्वामी जी को अत्यन्त कष्ट हुआ। एक दिन तो पूर्ण उपवास भी रखना पड़ा, परन्तु इन सभी कष्टों को सहकर भी उन्होंने भारत के उस खण्ड को सजग एवं अनुप्राणित कर कृतार्थ किया। उनके प्रति कृतज्ञता का प्रकाशन शब्दों में असम्भव है। जहां उनके भाषणों से इस प्रकार का उत्साह जगा उनके उज्ज्वल व्यक्तित्व ने और भी अधिक प्रभाव डाला।

कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना

मद्रास, मैसूर आदि सब स्थानों पर होते हुए ता० २३ जनवरी की रात्रि को बेंगलूर पहुंचे। अबतक कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की सभी तैयारियां जोर शोर से प्रारम्भ हो गई थीं तथा आर्य सम्मेलन के लिए आर्य समाज के विश्वेश्वरपुरम् स्थित भवन को सजा दिया गया था।

प्रतिनिधियों के ठहरने के लिये श्री मन्ना जी राव जी ने ५ दिन के लिये सज्जनराव छात्र बिना शुल्क दिया था। बंगलूर के उत्साही कार्य कर्ताओं तथा दानदाताओं के अमूल्य सहयोग से यह कार्य अत्यन्त सफल एवं यशस्वी रहा।

आर्य प्रतिनिधि सभा की श्री स्वामी जी द्वारा पुनः स्थापना हुई।

अधिकारी

प्रधान—	श्री जे० नारायनराव बेंगलौर
उपप्रधान—	" बी० मोहनप्पा तिरुलाय बंगलौर
"	" विजय कपूर बंगलौर
मन्त्री —	" आर्य मूर्ति बंगलौर
उपमन्त्री	" एस० मरिमय्या बंगलौर
"	" वेङ्कटरामानुजैया मैसूर
कोषाध्यक्ष—	" बत्तनलाल जी बंगलौर

ये सात पदाधिकारी निर्वाचित हुए तथा कार्यकारिणी समिति भी बनाई गई।

नैपाल प्रचार

गत वर्ष के समान इस वर्ष भी नैपाल में प्रचार कार्य आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार के अधीन रहा। इस सभा से १५०) मासिक की सहायता दी जाती रही। वहाँ प० रामदेव जी शास्त्री प्रचार कार्य करते हैं। प्रचारक का मुख्य स्थान काठमांडू है।

इस समय तक निम्न लिखित २४ स्थानों पर आर्य समाज स्थापित हो चुके हैं :—

१—आर्यसमाज, वीरगंज २—आर्यसमाज भीमफेरी
३— " अमलेखगंज ४— " काठमांडू
५— " भक्तपुर ६— " कीर्तिनगर
७— " मधपुर ८— " बनेपा
९— " पनौती १०— " सुनारटौली

११- " थानपुर १२- " ललितपुर
१३- " भीमढुंगा १४- " देवशाली
१५— " छत्रपाठी १६— " मीरपुर
१७ " जुम्राघोट १८- " त्रिशूल
१९— " आरघाट २०— " ज्ञानचौक
२१— " गोरखा २२— " मनोमाय
२३ - " विराटनगर २४-स्त्री आर्यसमाज काठमांडू

प्रचारक को ४ बार नैपाल रेडियो से (१३ सितम्बर, २० सितम्बर, २७ सितम्बर और ४ अक्तूबर को) बोलने का अवसर मिला।

साहित्य

(१) मानव जातिका आदि निवास आर्यावर्त है

(२) अमर सन्देश

ये दो ट्रैक्ट नैपाली भाषा में प्रकाशित हुए।

प्रचार कार्य के साथ २ आर्य समाज मन्दिरों के निर्माण कार्य की ओर भी विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

आर्यसमाज सेवा केन्द्र विलोनिया (त्रिपुरा) का प्रचार कार्य

शुद्धि प्रचार—

आदि वासी रियाङ स्त्री-पुरुषों की २६१ शुद्धियाँ हुई।

प्रचार —

पतिराय. तना बाजार, दुर्गाबाडी, जुलाई बाडी. अमरपुर कलशी. इच्छाछरा, रकसरी, दोसरी. करभूम आदि के आदिवासी लोगों में प्रचार किया गया।

पाठशालाओं में प्रचार—

पतिराय, जुलाई बाडी, लक्ष्मीचरा आदि के छात्रों में देश भक्ति, आज्ञा पालन, कर्तव्य पालन, सफाई आदि के विषयों को लेकर बातचीत द्वारा प्रचार हुआ।

विद्यालय प्रचार —

आर्यसमाज सेवा केन्द्र विलोनिया में राष्ट्र-भाषा विद्यालय में आर्य भाषा की शिक्षा दी जाती है। अखिल भारतीय राष्ट्र भाषा प्रचार समिति वर्धा की ओर से प्रचलित परीक्षाओं में सितम्बर १९५५ में १२ परीक्षार्थी शामिल हुए थे उनमें से १० उत्तीर्ण हुए। वर्तमान मास में छात्राथियों की संख्या ३० है। परिचय - ३ प्रवेश ८ प्रारम्भिक १९। अप्रैल १९५६ की परीक्षा में २८ शामिल होंगे।

साहित्य प्रचार—

बंगला भाषा में प्रकाशित भारतीय आर्य-समाज, दिग्विजयी दयानन्द, सत्यार्थप्रकाश संध्या विधि, सामाजिक विप्लव, बंगे नारी हरण. गो-करुणानिधि, उपासना विधि, गायत्री मन्त्र अर्थ सहित आर्य समाज के नियम दयानन्देर वाणी. संस्कार विधि आदि पुस्तक पुस्तिकायें वितीर्ण की जाती रही हैं।

औषधि वितरण—

दातव्य औषधालय एक वर्ष से बन्द है। कुछ दवाइयां आगे की बची हुई थीं। आवश्यकता-नुसार कभी २ थोड़ी बहुत खरीद कर गरीब रोगियों को दी जाती हैं। पूर्वाभ्यास वशातः मना करने पर भी रोगी आ ही जाते हैं। विशेषतः स्त्रियां और बच्चे तो सेवा केन्द्र की चिकित्सा पर ही विश्वास करते हैं अत विवश होकर दवाई देनी पड़ती है।

श्री शचीन्द्रनाथ दत्त लक्ष्मी चरा में रहते हैं। आदिवासियों में वे ही कार्य करते हैं। पार्वत्य प्रदेश में यातायात की कोई सुविधा नहीं है। रास्ते में पीने का पानी भी नहीं मिलता। पहाड़ी जब तक बौद्धिक तथा आर्थिक दोनों दृष्टियों से ही उन्नत न हो जायें तब तक उनमें आर्यसमाज

आदि बनाने का कोई अर्थ ही नहीं अतः उनमें आर्यसमाज के मोटे २ सिद्धान्तों और सेवा कार्य केवल प्रचार कराया जा रहा है।

विदेश प्रचार

लन्दन प्रचार

श्रीयुत ब्र० उषर्बुध जी तथा धीरेन्द्र जी शील के उद्योग से ८ ११-५४ को लन्दन में आर्यसमाज की स्थापना हुई थी।

कार्य विवरणान्तर्गत वर्ष में धर्म और फिलासफी के विविध पहलुओं पर व्याख्यान मालाएं प्रारम्भ की गईं। इन मालाओं के अन्तर्गत श्रीयुत ऋषिराम श्री योगाचार्य नन्दी, श्री पं० उषर्बुध आर्य, श्री डा० मोतीलाल दास (सेशन जज बंगाल) श्री ब्र० श्रुतिकान्त एम० ए० आदि २ विद्वानों के व्याख्यान हुए।

मौरीशस आर्य सभा ने प्रचारार्थ एक डुप्लीकेटर उक्त समाज को दान में दिया जिससे बुलेटिन प्रचारित की जाने लगी हैं।

श्रीयुत धीरेन्द्र जी शील ने विविध ईसाई चर्चों और धर्म विहारों से सम्पर्क स्थापित किया और पं० उषर्बुध जी ने विविध कालेजों स्कूलों, ईसाई संगठनों एवं सम्मेलनों में जाकर व्याख्यान एवं उपदेश दिये।

हिन्दू ऐसोसियेशन आव यूरोप ३१ पोलीगन रोड एम० डब्ल्यू० आई० लन्दन के मुख्य स्थान पर साप्ताहिक सत्संग नियम से होते रहे। हिन्दी, संस्कृत भारतीय दर्शन की श्रेणियां भी लगाई जा रही हैं।

समाज को चन्दे इत्यादि से १३६ पौंड ६ शि० ६ पेंस की आय हुई और १३६ पौंड १३ शि० ११॥ पेंस का व्यय हुआ। २२०० कपड़े उड़ीसा बाढ़ पीड़ितों के लिये एकत्र करके भिजवाये गये।

इस सभा ने समाज के कार्यार्थ ५००) सहायतार्थ भेज दिये हैं।

लन्दन में आर्य समाज का सदस्य बनने के लिये मांसाहारकी छूट देनेका प्रश्न सभा के सामने आने पर सभा ने यह छूट देने का सर्वथा निषेध कर दिया। देखें अन्तरंग सभा दिनांक ६-११ ५५ का निश्चय।

अमेरिका प्रचार

आर्य समाज नैनीताल के वयोवृद्ध श्रीयुत के० पी० वर्मा जुलाई १९५४ में अपने निजी कार्यार्थ अमेरिका गये थे। वहां उन्होंने अपने ढंग से आर्य समाज का कार्य करने का निश्चय किया। उन्होंने सर्वप्रथम वहां के कालेजों के विद्यार्थियों में आर्य साहित्य के प्रति आकर्षण उत्पन्न करने के लिये एक अध्ययन वर्ग की स्थापना की योजना बनाई और इस योजना के अन्तर्गत अमेरिकन जनता के हाथों में महर्षि दयानन्द के कुछ ग्रन्थों को अंग्रेजी में अनूदित और वैदिक धर्म पर अनुसन्धान कार्य कराके साहित्य उत्पन्न करने के लिये एक छात्रवृत्ति देने का भी निश्चय किया। इस कार्य के लिये वे आवश्यक साहित्य एकत्र कर रहे हैं। जिस साहित्य की उन्हें आवश्यकता है उसका मूल्य लगभग ५००) था। इस सभा ने २८-८-५५ की अन्तरङ्ग सभा के निश्चयानुसार यह समस्त साहित्य उन्हें देने का निश्चय किया। उन्हें कुछ साहित्य भिजवाया जा चुका है। अवशिष्ट अपेक्षित साहित्य एकत्र करके भेजने का प्रयत्न किया जा रहा है।

जर्मनी में पुनर्जन्म के प्रति आकर्षण

पिछले दिनों जर्मनी के कुछ समाचार पत्रों में शान्ति देवी के पुनर्जन्म की घटना प्रकाशित हुई थी जिससे जर्मन प्रजा में पुनर्जन्म के सम्बन्ध में बड़ा आकर्षण उत्पन्न हुआ और जनता में

अधिकाधिक जानने की उत्कंठा जाग्रत हुई। म्यूनिच की श्रीमती डारडा वेल्थर पी० एच० डी० से जो मनोविज्ञान के अनुसन्धान कार्य में विशेष ख्याति रखती हैं इस घटना की सत्यता और उसके कारणों के विषय में अनेक जिज्ञासुओं ने प्रश्न किये। उन्होंने अपने एक भारतीय परिचित की प्रेरणा पर इस सभा से शान्ति देवी का केस नामक सभा का प्रकाशन तथा अन्य साहित्य मांगा। यह पुस्तक भेज दी गई। इसके आधार पर उन्होंने एक प्रसिद्ध समाचार पत्र की प्रेरणा पर उसमें लेख लिखा है जिसकी १ प्रति सभा कार्यालय में प्राप्त हो गई है। उस जर्मन लेख को अंग्रेजी में अनूदित कराने का यत्न किया जा रहा है। इन्हें फिलासफी आफ दयानन्द, लाइफ आफ्टर डैथ एण्ड ग्लिमसिस आफ दयानन्द ये पुस्तकें भी भेजी गई हैं।

विदेशी राजदूतों से भेंट

विदेशी राजदूतों के साथ सम्पर्क स्थिर करके उन्हें आर्य समाज के सिद्धान्तों और कार्यों से परिचित कराने का कार्य पुनः आरम्भ किया गया और इस कार्य के लिये श्री शिवचन्द्र जी को उपयुक्त समझ कर उन्हें यह कार्य सौंपा गया। कार्य विवरणान्तर्गत वर्ष में उन्होंने निम्नलिखित देशों के राजदूतों से भेंट कर उन्हें आर्यसमाज का साहित्य भी भेंट किया :—

(१) अमेरिका (२) रूस (३) चीन (४) अफगानिस्तान (५) फिनलैण्ड (६) जर्मनी (७) ईरान।

रूसी नेता श्री बुलगानिन तथा श्री ख्रुश्चेव को देहली में साहित्य भेंट किया।

इनके अतिरिक्त अन्य विशिष्ट जनों से उन्होंने भेंट की।

विविध आन्दोलन

गोरक्षा आन्दोलन

१-५-५५ की अन्तरङ्ग सभा ने इस आन्दोलन के संचालनार्थ निम्नलिखित उपसमिति नियुक्त की थी जिसके संयोजक श्रीयुत ला० रामगोपाल जी थे :—

उपसमिति

१—श्रीयुत स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज
२— ,, ला० रामगोपाल जी
३— ,, पं० यशःपाल जी सिद्धान्तालंकार
४— ,, बा० कालीचरण जी आर्य
५— ,, प्रो० रामसिंह जी
६— ,, डा० महावीर सिंह जी
७— ,, पं० नरेन्द्र जी एम० एल० ए०
८— ,, पं० मिहिरचन्द्र जी
९— ,, ला० बालमुकन्द जी
१०— ,, ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी

इस समिति की २ बैठकें एक २७-८-५५ को और दूसरी ६-११-५५ को हुई। २७-८-५५ की बैठक में बिहार राज्य में गोवध निषेध विधेयक को जो चिरकाल से राज्य की विधान सभा के विचाराधीन चला आता था, पारित कराने के लिये आन्दोलन को तीव्र रूप देने का निश्चय हुआ था। ६-११-५५ की बैठक में बंगाल, बम्बई और हैदराबाद राज्यों में विधेयक बनवाने के लिये उक्त राज्यों के शासकों पर जोर डालने का निश्चय हुआ और यह भी कि पहले हैदराबाद राज्य को लिया जाय और उक्त राज्य के अधिकारियों से मिल कर कार्यक्रम निश्चित किया जाय। इसके लिये हैदराबाद नगर में गोरक्षा समिति सार्वदेशिक सभा की तथा आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद की अन्तरंग की बैठकें एक साथ बुलाने और वहीं अधिकारियों से सार्वदेशिक सभा के शिष्ट

मंडल की भेंट कराने का भी निर्णय हुआ था। परन्तु राज्याधिकारियों के राज्य पुनर्संगठन की समस्याओं में उलझे रहने के कारण यह निश्चय कार्यान्वित न हो सका। आशा है आगामी वर्ष इस कार्य के लिये अनुकूल परिस्थितियां उत्पन्न हो जायेंगी।

प्रसन्नता है कि विशेष प्रेरणा तथा आन्दोलन के फल स्वरूप उत्तर प्रदेश और बिहार में गोवध निषेध विधेयक पारित हो चुके हैं और पंजाब राज्य की विधान सभा के विचारार्थ राजकीय बिल गजट द्वारा प्रचारित हो चुका है।

इस समय निम्नलिखित राज्यों में गोवध निषेध विधेयक प्रचलित है :—

(१) उत्तर प्रदेश (२) बिहार (३) राजस्थान (४) मध्य प्रदेश (५) मध्य भारत (६) हिमाचल (७) आसाम (८) अजमेर।

सम्पूर्ण देश में गोवध के विरुद्ध लोकमत इतना प्रबल हो चुका है कि राज्य सरकारें जिनके यहाँ इस प्रकार के कानून नहीं हैं उसकी उपेक्षा न कर सकेंगी और उन्हें इच्छा से वा अनिच्छा से देर सबेर में उसके सामने झुक कर अपने यह कानून बनाने होंगे।

उपदेशक

इस वर्ष श्री मास्टर पोहकरमल तथा श्रीयुत प० रामस्वरूप जी वैतनिक उपदेशकों ने गोरक्षा आन्दोलन का कार्य किया। इनके कार्य क्षेत्र मुख्यतया रोहतक, हिसार और गुड़गांवा के जिले रहे। दोनों में से प्रत्येक को १००) मासिक दक्षिणा दी जाती है। वर्ष के अन्तिम भाग में श्री पोहकरमल जी को ईसाई प्रचार आन्दोलन का भी पुरोगम दिया जाता रहा।

श्री पोहकरमल जी

५००) के गोरक्षा नोट बेचे।
५० गोरक्षा सम्मेलन कराये।
२५० व्याख्यान दिये।
१३५ ईसाइयों की शुद्धि की।

श्री पं० रामस्वरूप जी

३०० गौ कसाइयों के हाथों से गुड़गांवा जिले में बचाई गई।

२०० व्यक्तियों से कसाइयों को गौ न बेचने की प्रतिज्ञा कराई।

१० गोरक्षा सम्मेलन हुये।
१०० हरिजनों को ईसाई होनेसे बचाया गया
६० यज्ञ कराये गये।
५८६) सभा के लिये दानादि में प्राप्त किये।

आय-व्यय

नोटों की बिक्री और दान से गोरक्षा निधि में ७७१=)। आय हुई और ४०६८।≡)। व्यय हुआ। अधिक व्यय गत वर्ष के अवशिष्ट १३३७३।।।≡)।। से पूरा किया। वर्ष के अन्त पर इस निधि में १००७६।।=)।। शेष है।

ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन

साधारण सभा के दिनांक २-५-५५ के अधिवेशन में ईसाई प्रचार निरोध आंदोलन के लिये निम्न लिखित महानुभावों की एक समिति नियुक्त हुई थी जिसके संयोजक श्रीयुत पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति हुये थे :—

१—श्रीयुत पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार
२— „ लाला नारायणदास जी
३— „ ठा० कर्णसिंह जी
४— „ डा० महावीरसिंह जी
५— „ कविराज हरनामदास जी
६— „ पं० यशःपाल जी सिद्धांतालंकार
७— „ स्वामी अभेदानन्द जी
८— „ लाला रामगोपाल जी

६— „ पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति (संयोजक)
१०— „ प्रो० रामसिंह जी एम० ए०
११— „ ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी।

ईसाइयों के देश और धर्म विरोधी आपत्ति जनक प्रचार के विरुद्ध लोक मत को जाग्रत और प्रशिक्षित करने का कार्य समस्त प्रांतों में सफलता एवं द्रुतगति से होता रहा है। इसके साथ ही शुद्धि तथा रचनात्मक कार्य पर भी विशेष प्रयास केन्द्रित रहा।

साहित्य–

इस वर्ष भारत में ईसाई षडयन्त्र पुस्तक का तृतीय संस्करण ५००० की संख्या में प्रकाशित हुआ। इसी पुस्तक के उडिया भाषा में भी अनुवाद की आज्ञा दी गई।

प्रचार –

१८ जून ५५ से पं० रुचिराम जी देहली और उसके निकट वर्ती स्थानों में वर्ष के अन्त तक प्रचार करते रहे। गत जनवरी मास से पं० पोहकर मल जी उपदेशक को ईसाई प्रचार निरोध का पुरोगम दिया जाता रहा। पं० रुचिराम जी के कार्यों की रिपोर्ट इस प्रकार है :—

ईसाई बने हुए हिन्दुओं की शुद्धि

२८-८-५६	मस्जिद मोठ	४१ परिवार	२५० व्यक्ति
१८६-५६	बेगमपुर	३३ „	२०० „
६-२-५६	लाडो सराय	५५ „	३६५ „
			८१५

सहायता—

श्रीयुत सेठ जुगल किशोर जी बिरला से २००) मासिक की सहायता प्राप्त होती रही। इसके लिये सभा श्री बिरला जी को धन्यवाद देती है।

उडीसा में कार्य –

उडीसा उन प्रदेशों में है जहां ईसाइयों का जाल बिछा हुआ है और ईसाई मत का आपत्ति-जनक प्रचार आर्य संस्कृति के लिये खतरा बन गया है सौभाग्य से उडीसा में श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी के व्यक्तित्व में आर्य समाज को एक बहुत अच्छा प्रचारक मिला हुआ है जो रात दिन ईसाई प्रचार निरोध के कार्य में संलग्न रहते हैं। वे वेद व्यास वैदिक आश्रम, पानपोष (सुन्दरगढ़) के केन्द्र से कार्य करते हैं। उनके अधीन निम्न लिखित कार्यकर्ता कार्य करते हैं। उन्हें दिसम्बर ५५ से ५०) मासिक भोजन व्यय सार्वदेशिक सभा की ओर से दिया जाता है।

१—श्री शुकरामुण्डा २—श्री शिवबालक जी भजनोपदेशक ३—श्री विरसा मुण्डा ४—श्री वासुदेव लकरा ५—श्री कालीदास कनौजिया ६—श्री डा० योगेन्द्र नाथ महंति।

शुकरा मुन्डा—

ये पहले सुन्दरगढ़ जिला तुथरम मिशन के समापनि थे। ७ फरवरी १६५४ कोसपरिवार शुद्ध होकर आर्य समाज में प्रविष्ट हुये। सितम्बर १६५४ से कार्य कर रहे हैं। इनका वेतन तथा मार्ग व्यय सार्वदेशिक सभा देती है। इनके द्वारा मार्च १६५५ से वर्ष के अन्त तक सुन्दरगढ़ जिले में २४२, बिहार में १४ और सम्बलपुर जिले में ५ कुल २६१ व्यक्तियों की शुद्धि हुई।

शिवबालक जी –

ये आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार की ओर से प्रचार कार्य करते हैं। इनके भजनों और उपदेशों का बहुत प्रभाव पड़ता है। इन्होंने सुन्दरगढ़ जिले में ३० व्यक्तियों को शुद्ध किया।

श्री विरसा मुन्डा—

ये पहले ईसाई थे। मार्च १६५५ से सितम्बर १६५५ तक श्रद्धानन्द उपदेशक विद्यालय रांची में प्रशिक्षित हुये। अक्तूबर १६५५ से प्रचारक नियुक्त हुये इनके द्वारा ५० शुद्धियां हुई।

श्री वासुदेव जी लकरा—

ये उरोव जाति के है। सुन्दरगढ़ जिले मे उरोवों के अधिक संख्या में ईसाई बन जाने के कारण अक्टूबर १६५५ से आर्य समाज कलकत्ता के व्यय पर सुन्दरगढ़ जिला के वणेई सब डिवीजन क्षेत्र में मुख्यतया उरोव जाति में प्रचार कार्य कर रहे हैं। ये उरावों में बड़े लोकप्रिय हैं।

कालीदास कनौजिया—

ये नवम्बर १६५५ से सालवेशन मिशन होशियारपुर की ओर से प्रचार कार्य कर रहे हैं। ये प्रभावशाली वक्ता है तथा उड़ीसा की प्रायः सब भाषाओं को जानते हैं। इनके द्वारा ६६ व्यक्ति शुद्ध हुये।

डा० योगेन्द्र नाथ—

ये होम्योपेथ डाक्टर है। इनका वेतन तथा औषधियाँ भिवानी निवासी सेठ प्रेमचन्द जी आर्य समाज कलकत्ता के द्वारा देते हैं। ये सप्ताह मे २ दिन हातीवारी केन्द्र को, २ दिन विरमिज पुर केन्द्रको २दिनपानपोष केन्द्र(कार्यालय)को देते हैं। औषधियों के वितरण के साथ साथ चिकित्सा भी करते हैं।

गत १८ जून से ३१ जुलाई तक श्री ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी ने बिहार, बंगाल, उड़ीसा, आसाम और मनीपुर राज्य का भ्रमण किया जिसका उद्देश्य ईसाई प्रचार की वास्तविक स्थिति का परिज्ञान प्राप्त करके अपने सुझावों सहित सभा मे रिपोर्ट देना था जिसका सुनिश्चित कार्यक्रम के निर्धारण में समुचित उपयोग हो सके। श्री पुरुषार्थी जी ने उपयोगी सुझावों के साथ अपनी विस्तृत रिपोर्ट दी। यह रिपोर्ट सभा के विचाराधीन है। उनकी रिपोर्ट के अनुसार ईसाइयों के आपत्तिजनक प्रचार की रोकथाम का कार्य बहुत व्यय साध्य है और हमारा जो कुछ कार्य हो रहा है वह उनके कार्य की तुलना में बहुत परिमित है। फिर भी आसाम और मनीपुर राज्य में तत्काल अपने प्रचार केन्द्र स्थापित किये जाने की परमावश्यकता है। इस आवश्यकता की पूर्ति का शीघ्र से शीघ्र प्रयत्न किया जा रहा है। श्री ओम्प्रकाश पुरुषार्थी जी ने ही अपने दौरे के समय हावड़ा (कलकत्ता) के भिवानी निवासी सेठ श्री सत्यनारायण तथा श्री रतनलाल जी से उड़ीसा में ईसाई निरोध कार्य के निमित्त १०८) मासिक की सहायता का एक वर्ष के लिये प्रबन्ध किया।

बाढ़पीड़ितों की सहायता

गत अक्टूबर मास में उड़ीसा मे भयकर बाढ़ आ जाने और मांग आने पर बाढ़पीड़ितों की सहायता करने तथा भोली भाली जनता को ईसाईयों के जाल से बचाने का आयोजन किया गया। श्री ओम्प्रकाश जी को बाढ़पीड़ितों के क्षेत्रों में भेजा गया और धन की अपील प्रचारित की गई। बाढपीड़ित क्षेत्रों मे विविध सोसाइटियों और राज्य सरकार ने थोडे समय मे ही स्थितिको काबू में कर लिया था। परन्तु वहां पहुंचने पर ज्ञात हुआ कि अमरीका से विदेशी ईसाई मिशनों को २७ वैगन (रेल के डिब्बे) घी और सूखे दूध के डिब्बे और बहुत सी कपड़ों की गांठें वहां बाढ़पीड़ित क्षेत्र में फ्री वितरण के निमित्त प्राप्त हुये थे। इसकी पुष्टि करते हुये वहां के माननीय रिलीफ मिनिस्टर महोदय ने श्री ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी को बतलाया कि दस हजार मन घी तो मिशन वालों ने उड़ीसा सरकार को फ्री वितरण के निमित्त दिया है।

इस सहायता की आड़ में ईसाई पादरी वहा की दु:खी निर्धन जनता में ईसाई धर्म का प्रचार कर रहे थे और उन्हें धर्म परिवर्तन करने को उत्साहित करते थे।

इसलिये आर्य समाज को अपने धन और शक्ति का इस दिशा में अपव्यय करना उचित न जान पड़ा और उसने ईसाइयों से हिन्दुओं की रक्षा करने पर ही अपना ध्यान और अपना यत्न केन्द्रित रखा। इस निमित्त ६ केन्द्रों में घूम कर जो ईसाईयों के अधीन थे स्थिति का निरीक्षण किया। आर्य समाज की इस सतर्कता और यत्न का फल यह हुआ कि स्वयं राज्याधिकारी और ईसाई मिशन विशेष सावधान रहे और किसी हिन्दू का धर्म परिवर्तन न हो सका। ईसाई मिशन ने राज्य के वरिष्ठ अधिकारियों से शिकायत की कि आर्य समाज उड़ीसा में सहायता कार्य के लिये आया है परन्तु उसका प्रधान लक्ष्य ईसाई मिशन का विरोध करना है। प्रसन्नता है उन राज्याधिकारियों ने ईसाई मिशन की भ्रांति का उचित समाधान कर दिया। इतना ही नहीं उन्होंने ईसाई केन्द्रों के निरीक्षण का कार्य भी सुगम बना दिया जिसके लिये वे बधाई के पात्र हैं।

श्री पुरुषार्थी जी तथा उनके साथियों के प्रयत्न के फल स्वरूप कटक में आर्य समाज तथा दलितोद्धार सभा की विधिवत स्थापना हुई। इन्होंने वहां आर्य समाजों के विस्तार का मार्ग भी परिष्कृत किया। ईसाई प्रचार पर क्रियात्मक प्रतिबन्ध लगाने का यह उपाय कितना वास्तविक है इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है। उड़ीसा के सम्भ्रान्त और शिक्षित जनों की आर्य समाज के प्रति सहानुभूति है और इस सहानुभूति को अधिकाधिक जाग्रत करने और क्रियात्मकता में परिणत करने में श्री पुरुषार्थी जी बड़े सफल हुये।

वहां के बड़े-बड़े लोगों ने जो पौराणिक हैं और जिन में कई धारा सभाओं के सदस्य भी हैं आर्य समाज को अपनी पूरी सहायता देने का आश्वासन दिया। यह सौभाग्य की बात है कि आर्य समाज कटक को गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक श्री गणपति जी का क्रियात्मक सहयोग मिल गया है। आर्य समाज के संचालन का दायित्व उन्होंने ही अपने कंधों पर लिया है। वे आर्य समाज के प्रधान हैं। सभा कटक को प्रधान प्रचार केन्द्र बनवा कर वहां किसी सुयोग्य प्रचारक को बैठाने के प्रयत्न में हैं। इसी यात्रा में श्री पुरुषार्थी जी को उड़ीसा के गवर्नर महोदय से भेंट करने का सुअवसर मिला। इस भेंट का आर्य समाज के प्रचार की दृष्टि से अच्छा फल रहा।

सभा की ओर से कटक में प्रचारार्थ ९९) का साहित्य फ्री भेजा गया तथा वेद व्यास आश्रम पानपोष (उड़ीसा) के द्वारा फ्री वितरण के लिये विविध स्थानों से प्राप्त हुये ५५३ वस्त्र भेजे गये। उनका वितरण यथा समय हो गया। अपील पर सभा में २५१३ ≡)। प्राप्त हुआ। व्यय ९९५।≡)। हुआ।

बाघू कांड--

मेरठ जिलान्तर्गत बाघू ग्राम में ७९ घर ईसाइयों के थे जिनमें से ५८ घर शुद्ध होकर आर्य धर्म में दीक्षित हो गये थे। ईसाई पादरियों ने इस सामूहिक धर्म परिवर्तन को रोकने का भरसक प्रयत्न किया, हर प्रकार का भय और प्रलोभन दिया फिर भी वे न तो धर्म परिवर्तन को रोक सके और न शुद्ध हुये भाई पुनः ईसाइयत में लौट सके। इस पर ईसाइयों ने चिढ कर शुद्ध हुये भाइयों को तंग करना प्रारम्भ कर दिया और उन्हें मारपीट आदि के झूठे अभियोगों में फंसाने के कुचक्र रचे गये। एक विशप की कार पर पत्थर फेंकने के तथाकथित आरोप में ८ आर्यों पर १०७। ११७ की दफा में मुकद्दमा चलाया गया। इसी बीच में अर्थात् २७-४-४९ के पादरियों के निमन्त्रण पर स्वास्थ्य मन्त्राणि श्रीमती राज कुमारी अमृतकौर जो बाघू गईं और उन्होंने आर्यों

तथा आर्य समाज के विरुद्ध अनेक अनर्गल बातें कह डालीं। उसका आर्य जगत् द्वारा घोर विरोध हुआ। प्रसन्नता है कि न्यायालय से वे निर्दोष प्रमाणित होकर मुक्त हो गये हैं।

मठगुलनी कांड—

मठगुलनी (बिहार) के आर्यों, आर्य समाज के कार्यकर्ताओं और आर्य समाज से सहानुभूति रखने वाले व्यक्तियों पर वहां (वर्द्धमान नगर) के पादरी तथा ईसाई प्रचारक ने मुकद्दमे में फंसाया है। उन पर चोरी, लूट तथा आक्रमण करने के तो निराधार आरोप लगाये ही गये हैं दफा १०७ में भी उन पर अभियोग चलाया गया है। नवादा के एस० डी० ओ० ने गिरफ्तार व्यक्तियों की जमानत लेना स्वीकार न किया। गया के जिला जज ने ५ व्यक्तियों की जमानत स्वीकार की शेष ५ व्यक्तियों की जमानत पटना हाई कोर्ट से भी स्वीकृत हो गई। आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार अभियुक्तों की सम्यकतया पैरवी और पीड़ितों के परिवारों के भरण पोषण आदि हर प्रकार की सहायता भी कर रही है। इस सभा ने इस अभियोग की सहायतार्थ बिहार सभा को १०००) दिया है।

अनुसन्धान विभाग

२८-८-५५ की अन्तरंग सभा ने वेदों का सरल अनुवाद करने जिसमें केवल मन्त्र और भाषानुवाद रहेगा (और जिसकी प्रामाणिकता सार्वदेशिक सभा द्वारा नियुक्त समिति के द्वारा कराई जायगी) तथा वैदिक सिद्धान्त सम्बन्धी अन्य कार्य करने के लिये अपने अधीन अनुसन्धान विभाग खोलने का निश्चय किया। साथ ही इस विभाग के व्यय के लिये दयानन्द पुरस्कार निधि के ६०००) में से २५०००) की राशि की स्वीकृति दी। ६-११-५५ की अन्तरंग सभा ने उपसमिति द्वारा निर्धारित निम्नलिखित कार्यक्रम स्वीकार किया :—

१—वैदिक अनुसन्धान के नाम से एक त्रैमासिक पत्रिका निकाली जाय जिसमें उच्चकोटि के लेखों और अनुसन्धान सामग्री के अतिरिक्त आर्य समाज के सिद्धान्तों के विरुद्ध साहित्य का निराकरण किया जाया करे।

२—वेद का सरल हिन्दी भाषा में अनुवाद कराया जाय। जिसका आधार स्वामी दयानन्द सरस्वती का संस्कृत भाष्य रहे।

३—कार्यकर्ताओं की तत्काल नियुक्ति करके कार्यारम्भ करने का अधिकार प्रधान जी को दिया जाय।

१६-२-५६ से दयानन्द वाटिका में अनुसन्धान विभाग का कार्य नियमित रूप से प्रारम्भ हो गया है। श्रीयुत पं० विश्वनाथ जी विद्यालंकार की सेवाएं इस कार्य के लिये प्राप्त की गई हैं। वैदिक अनुसन्धान नामक त्रैमासिक पत्रिका का डिक्लेरेशन दिया जा चुका है। प्रथम अङ्क की तैयारी भी प्रारम्भ हो गई है।

दयानन्द वाटिका

श्रीयुत लाला गोविन्दराम जी (गुजरांवाला) ने सब्जी मंडी रेलवे स्टेशन के निकट २॥ लाख रुपये में रामबाग की विशाल कोठी क्रय करके आर्य समाज के कार्यों के लिये अर्पण की हैं। इन्हीं की प्रेरणा से उस कोठी के एक भाग में अनुसन्धान विभाग खोला गया है जिसका ८-१-५६ को विधिवत उद्घाटन कर दिया गया था। यह स्थान धीरे २ आर्य-समाजिक प्रगतियों का विशाल केन्द्र बनता जा रहा है। इस पुण्य कार्य के लिये लाला जी सभा के धन्यवाद के पात्र हैं। स्थान की सफाई, मरम्मत आदि में ६०२०—॥ व्यय हुआ।

साहित्य प्रचार

मराठी सत्यार्थ प्रकाश—

इस सभा की प्रेरणा पर आर्यसमाज कोल्हा-

पुर ने अपने आर्य भानु प्रेस में मराठी सत्यार्थ-प्रकाश का नया संस्करण गत वर्ष छापना आरम्भ किया था। प्रसन्नता है कि छपाई का कार्य समाप्त हो गया है। ५००० प्रतियां छपी हैं। इस सभा ने अपनी ६-३ ५४ की अन्तरङ्ग के निश्चयानुसार १०००) अगाऊ रूप में देकर उसके बदले में लागत मूल्य पर पुस्तकें क्रय करके इस आयोजन में क्रियात्मक सहयोग देने का निश्चय किया हुआ है। इस कार्य के लिये श्रीयुत लक्ष्मणराव जी ओघले के द्वारा ५००) दिया जा चुका है जिनके उद्योग और परिश्रम से यह पुण्य कार्य इतना शीघ्र सम्पन्न हुआ है।

कन्नड़ सत्यार्थप्रकाश—

सभा के विशेष प्रयत्नसे गतवर्ष कन्नड़ भाषा के सत्यार्थप्रकाश का पुनर्मुद्रण प्रारम्भ हुआ था। प्रसन्नता है कि नया संस्करण छप कर बाजार में आ गया है। यह समस्त आयोजन इस सभा के दक्षिण भारत प्रचार के ऑर्गेनाइजर श्री पं० सत्यपाल जी की देख रेख में सम्पन्न हुआ जिसे मूर्तरूपदेनेमें उन्होंने पूराप्रयत्न किया। इस सभा ने १३ २-५५ की अन्तरंग बैठक के निश्चयानुसार १०००) और २५-८-५५ की बैठक के निश्चयानुसार ५ ०) छपाई के कार्य को सुगम बनाने के लिए अगाऊ रूप में दिये जो लागत मूल्य पर पुस्तकों के रूप में वापस होंगे। ४००० प्रतियां छपाई गई हैं। मूल्य ३।) रक्खा गया है।

कुल व्यय ६५००) हुआ जो समाजों के आर्डरों के अग्रिम मूल्य, पुस्तकों की बिक्री तथा सार्वदेशिक सभा की सहायता से पूरा किया गया।

तिलुगू सत्यार्थप्रकाश--

इस वर्ष आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के द्वारा तिलगू सत्यार्थप्रकाश के नये संस्करण की छपाई का कार्य आरम्भ हो गया है। इस ग्रन्थ के प्राप्य न होने से प्रचार कार्य में बड़ी कठिनाई अनुभव की जाती थी। सन् १६५३ में इस सभा ने आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद को प्रबल प्रेरणा की थी कि वह इस कठिनाई को शीघ्र से शीघ्र दूर करने का उपाय करें। उस समय सभा ने कुछ प्रतिबन्धों के अधीन ४ ००) तक इस कार्य के लिये अगाऊ रूप में देना भी निश्चित किया था। हर्ष है आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद ने यह अत्यावश्यक कार्य हाथ में ले लिया। उक्त सभा की मॉग पर ६-११-५५ की अन्तरंग सभा ने २०००) अगाऊ रूप में देना स्वीकार किया था जिसमें से १०००) भेजा जा चुका है। आशा है आगामी वर्ष यह ग्रन्थ छप कर तैयार हो जायगा।

उड़िया सत्यार्थप्रकाश—

उड़िया भाषा में सत्यार्थप्रकाश प्राप्य है। मूल्य २) रखा गया था परन्तु प्रकाशकों ने ५) कर दिया। मूल्य कम करने के लिये प्रकाशकों के साथ पत्र व्यवहार हो रहा है।

तामिल और मलयालम सत्यार्थप्रकाश—

तामिल भाषा में तथा मलयालम सत्यार्थप्रकाश भी प्राप्य है।

गुजराती सत्यार्थप्रकाश —

गुजराती सत्यार्थप्रकाश प्राप्य है। सजिल्द प्रति का मूल्य २।।) है।

सिन्धी सत्यार्थप्रकाश—

यह सत्यार्थप्रकाश इस सभा द्वारा प्रकाशित प्राप्य है।

संस्कृत सत्यार्थप्रकाश--

२८-११-५४ की अन्तरंग के निश्चयानुसार संस्कृत सत्यार्थप्रकाश के निरीक्षण और संशोधन का कार्य हाथ में लिया जाकर वह श्रीयुत आचार्य प्रियव्रत जी के सुपुर्द किया गया था। संशोधन

और निरीक्षण की रिपोर्ट सभा कार्यालय में प्राप्त हो गई है जो अन्तरंग सभामें प्रस्तुत की जायगी। श्रीयुत पंडित जी ने जिस परिश्रम और योग्यता से विस्तृत रिपोर्ट तैयार की है वह प्रशंसनीय है। इसके लिये सभा उन्हें साधुवाद देती है।

अंग्रेजी सत्यार्थप्रकाश--

२८-११-५४ की अन्तरङ्ग सभा ने श्रीयुत डा० चिरंजीव भारद्वाज कृत अंग्रेजी सत्यार्थप्रकाश की अच्छे टाइप में आफसेट प्रेस में १००० प्रतियां छापने और इसपर ६०००) तक व्यय करके प्लेटों को सुरक्षित रख कर बाद में १०००, १००० प्रतियां छपवाने का निश्चय किया था। मदरास संस्करण की प्रतियां भी मंगा ली गई हैं क्योंकि उसी का टाइप पसन्द किया गया है। अनुवाद के पुनर्निरीक्षण और संशोधन की आवश्यकता अनुभव होने पर छपाई का कार्य हाथ में न लिया ज सका।

डेली प्रेयर आफ ऐन आर्य—

२८-११-५४ की अन्तरंग के निश्चयानुसार श्रीयुत स्व० प्रो० सुधाकर जी द्वारा हुए वैदिक सन्ध्या के अंग्रजी अनुवाद के प्रकाशन का स्वत्वाधिकार उनकी धर्मपत्नी जी से प्राप्त किया गया। यह पुस्तक विदेश प्रचारार्थ बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई है। श्रीयुत पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तन्ड से इसका पुनर्निरीक्षण कराया गया है। इस सभा ने निर्धारित दैनिक सन्ध्या और हवन की जो पद्धति प्रचारित की हुई थी उसमें संशोधित पद्धति तैयार कर दी है जो आशा है आगामी वर्ष स्वीकृत होकर प्रचारित हो जायेगी। उक्त पद्धति के अनुसार ही उपर्युक्त अंग्रेजी सन्ध्या का आवश्यक संशोधन होकर प्रकाशित हो सकेगा।

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के अंग्रेजी अनुवाद का पुनर्मुद्रण –

विदेश में प्रचारार्थ उपयुक्त ग्रन्थ की आवश्यकता और मांग को दृष्टि में रखकर आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश को २८-११-५४ की अन्तरंग के निश्चयानुसार नवीन संस्करण निकालने की इस सुविधा के साथ प्रेरणा की गई थी कि पुस्तक छपने पर यह सभा १००० प्रतियों उचित मूल्य पर क्रय कर लेगी। यह पुस्तक अभी तक अप्रकाशित है। विश्वास है कि आगामी वर्ष यह संस्करण छप जायगा।

दयानन्द फिलासफी

इस वर्ष श्रीयुत पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय कृत दयानन्द फिलासफी नामक अंग्रेजी का वृहत् एवं उत्तम ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। सभा ने ३०-४-५५ की अन्तरंग के निश्चयानुसार इस ग्रन्थ के प्रकाशन में १०००) की सहायता दी जो ७०० प्रतियों के रूप में वापस होनी थी। पुस्तकें प्राप्त हो गई हैं। पुस्तक का मूल्य १०) है।

आर्य समाज का इतिहास

७-३-५५ की अन्तरंग के निश्चयानुसार इस इतिहास के सम्पादन और प्रकाशन का दायित्व सभा ने अपने जम्मे लिया हुआ है। श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति इतिहास के लिखने का कार्य कर रहे हैं। इतिहास के निरीक्षण के लिए सभा ने एक उपसमिति नियत की हुई है जिसके सदस्यों के नाम नीचे दिए गए हैं। प्रथम भाग का निरीक्षण होकर प्रेस में दिया जा चुका है जिसकी ५००० प्रतियाँ छप रही हैं। इतिहास के तीन भाग होंगे। दूसरा भाग भी तैयार हो गया है और निरीक्षकों के पास भेजा जा रहा है। आशा है तीसरा भाग आगामी वर्ष तैयार हो जायगा और दूसरा भाग प्रेस को दे दिया जायगा। इस कार्य में वर्ष के अन्त तक ४३००)

व्यय हुआ है और अग्रिम आर्डरों इत्यादि से ४९६) आय हुई है।

इतिहास निरीक्षक समिति—

(१) श्रीयुत डा० गोकल चन्द जी
(२) ,, डा० सूर्य देव जी एम० ए० डी० लिट०
(३) ,, पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय
(४) ,, पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
(५) ,, पण्डित हरिशंकर जी
(६) ,, महाशय कृष्ण जी
(७) ,, सभा मन्त्री (संयोजक)

सभा का इतिहास—

सभा ने अपने २७ वर्षीय इतिहास के आगे अब तक का इतिहास तैयार कराके प्रकाशित कराने का निश्चय किया हुआ है। इसके साथ ही हैदराबाद सत्याग्रह का इतिहास भी छापने का निश्चय हुआ है। सभा का इतिहास लिखा जा रहा है। इस कार्य पर श्री शिवचन्द्र जी को लगाया हुआ है।

राष्ट्रभाषा कोष—

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा ने प्रारम्भिक से लेकर कोविद आदि तक की अपनी परीक्षाओं के लिये संक्षिप्त राष्ट्रभाषा कोष प्रकाशित किया है जिसके सम्पादक महा पंडित श्री राहुल सांस्कृतायन है। इसके पृष्ठ ७८ पर आर्य समाज शब्द का अर्थ निम्न प्रकार लिखा है :—

"आर्य समाज पु० (सं०) ऋषि दयानन्द का चलाया पन्थ। पुन० पृ० २८३ पर पन्थ शब्द का अर्थ दिया है—पन्थ (सं०) (१) आचार व्यवहार का ढङ्ग (२) रास्ता। (३) सम्प्रदाय"

आर्य समाज सेवा केन्द्र विलोनिया के श्रीयुत पं० सदाशिव जी द्वारा इस अनर्थ की ओर सार्वदेशिक सभा कार्यालय का ध्यान आकृष्ट किये जाने पर राष्ट्रभाषा प्रचार मन्त्री समिति को लिखा गया कि यह अर्थ सर्वथा असत्य और निर्मूल है। महर्षि दयानन्द पन्थ के कट्टर विरोधी थे। साथ ही मांग की गई कि वह शीघ्र से शीघ्र इस भूल का परिमार्जन करदें। प्रसन्नता है राष्ट्रभाषा प्रचार समिति ने आगामी संस्करण में इस भूल का संशोधन करना स्वीकार कर लिया है। इतना ही नहीं उन्होंने इस भूल के लिये (जो अनजान में हुई) खेद भी प्रकाशित किया। सभा से उन्हें प्रेरणा की गई की वे इस भूल का समाचार पत्रों में प्रकाशन करके उसका यथेष्ट परिमार्जन करदें और कोष की अवशिष्ट प्रतियां संशोधित रूप में ही प्रचारित करने की व्यवस्था करें। राष्ट्रभाषा समिति ने अपने मुख पत्र में संशोधन प्रचारित करना स्वीकार करके अभीष्ट संशोधन भेजने की कार्यालय को प्रेरणा की, तदनुसार निम्न लिखित संशोधन भेज दिया गया :—

आर्य समाज का अर्थ—महर्षि दयानन्द द्वारा संसार के उपकारार्थ संस्थापित आर्यों का समाज

दयानन्द पुरस्कार

इस वर्ष दयानन्द पुरस्कार समिति का संगठन इस प्रकार रहा :—

१— श्री पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय
२—,, ,, प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति
३—,, ,, इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
४—,, ,, शिव शंकर जी
५—,, ,, बुद्धदेव जी विद्यालंकार
६—,, ,, रामचन्द्र जी देहलवी
७—,, स्वामी आत्मानन्द जी महाराज

९-११-५५ की अन्तरंग सभा ने १५००) के स्थान में १०००) का पुरस्कार नियत कर उसे निम्न प्रकार तीन पुरस्कारों में विभाजित किया :—

प्रथम पुरस्कार	५००)
द्वितीय पुरस्कार	३००)
तृतीय पुरस्कार	२००)

पुरस्कार के लिये ५ पुस्तकें प्राप्त हुई हैं। समिति द्वारा उन पुस्तकों का चुनाव किया जाकर

व निरीक्षण के लिये विद्वत मंडल के सुपुर्द कर दी जायेंगी। आगामी वर्ष पुरस्कार दे दिये जायेंगे।

सार्वदेशिक पत्र

इस वर्ष भी पत्र का सम्पादन सभा मन्त्री के द्वारा हुआ। इस वर्ष चन्दे से ३६१०॥=)॥ की और विज्ञापन से ४७४॥=) की कुल आय ४०८७॥)॥ की हुई। छपाई, कागज, वेतन लेखक और डाक व्ययादिमें ४८७३।=)॥ का व्यय हुआ। घाटा ७८५॥=) रहा। गत वर्ष घाटा ७३७॥≡। था। इस वर्ष पत्र में सफेद कागज लगाने आदि में व्यय कुछ बढ़ा। फरवरी ५६ के अन्त में ग्राहक संख्या ७३९ थी। गत वर्ष ७०७ थी। पत्र की लोक प्रियता में निरन्तर वृद्धि हो रही है।

पुस्तक भण्डार (विक्रय विभाग)

इस वर्ष इस विभाग में निम्न लिखित पुस्तकें उनके सामने दी हुई संख्या में छपी जिन पर ७२॥) लागत आई।

आर्य समाज का मन्तव्य	२०००	७२॥)
बिक्री इस वर्ष		८७७६।≡)१०
व्यय		
उपकरण व डाक व्ययादि		२४८≡)
वेतन लेखक		६००)
विज्ञापन सार्वदेशिक		२०२॥)
		१०५०॥≡)

हानि-लाभ

स्टाक वर्ष के अन्त पर	३६५६३॥=)
बिक्री वर्ष भर की	८७७६।≡)१०
	४५३४०।– १०
प्रारम्भिक स्टाक	४०७७३॥=)
नया स्टाक	३११८।॥)
	४३९६६॥=)
प्राप्त लाभ	१३७०॥≡)१०
व्यय	१०५०॥≡)
विशुद्ध लाभ	३२ ।)१०

स्थिर पुस्तकालय

वर्ष के अन्त में पुस्तकालय में विविध विषयों की ५०४२ पुस्तकें ६२८५।≡) के मूल्य की हैं। गत वर्ष ४८२३ पुस्तकें ६०७०॥≡) की लागत की थी। इस वर्ष ११९ पुस्तकों की वृद्धि हुई जिन में से ११०॥=) की पुस्तकें क्रय की गई तथा शेष भेंट तथा दान रूप में प्राप्त हुईं।

भारत की विभूतियां	६–)
पद्म पुराण	४०)
योगेश्वर कृष्ण	३॥)
ऋग्वेद भाष्य	७॥=)
राष्ट्रभाषा कोश	१०≡)
महर्षि का पत्र व्यवहार	६)
कांग्रेस इतिहास	१७॥)
डिक्शनरी २०थ सेंचुरी	१०॥)
मुगल साम्राज्य का क्षय	५॥))
ऋग्वेद की ऋक् संख्या	॥)
	११०॥=)

आर्य वीर दल

शिविर

इस वर्ष निम्नांकित १३ स्थानों पर शिक्षण शिविर लगाये गये जिन में प्राप्त सूचनाओं के अनुसार आर्य वीरों ने शिक्षण प्राप्त किया :—

शिविर स्थान	समय	दीक्षित वीरों की सं०
१–गाजियाबाद	२७-२६ मई ५५	५५
२–कोटद्वार	१२ २२ जून ५५	६१
३–दारानगर	२६-३० नवम्बर ५५	८०
४–लखनऊ	२२-२६ दिसम्बर ५५	७२
५–काशी	जून ५५	५२
६–हेलवरिया (काशी)	६-१०-५५	२५

७-रोहतक	११-१८ सितम्बर ५५	५८
८-नगीना	४-१० अप्रल ५५	...
९-पलवल	२८-२९ जनवरी ५६	...
१०-पिम्परी (कोलमी,पूना) २०-२६ फरवरी		१६
११-वासौदा (मध्यभारत) १ १० जून ५६		६३
१२-बम्बई	फरवरी ५६	७००
		६८५

इन शिविरों में लगभग तीन चौथाई पौरा णिक तथा विधर्मी बच्चों ने अपनी खुशी से भाग लिया। शिविर के शिक्षण के पश्चात् उन पर आर्य समाज की विचार धारा की छाप पड़ती है। लखनऊ मे शिविर व शाखाओं में भाग लेने वाले बहुत से मुस्लिम बच्चों ने अपने नामों के आगे आर्य लगाया और यज्ञों तथा सन्ध्या में भाग लिया।

सम्मेलन

इस वर्ष १—देहली २—गाजियाबाद ३—मतापुर ४—बिजनौर ५—लखनऊ ६—आजमगढ ७—आगरा ८—गुलावठी ९—गाजियाबाद १०—बनारस ११—श्री नगर (उन्नाव) १२-पलवल १३-नरकटिया गंज १४—रोहतक १५—गुड़गाव और १६—बलरामपुर। कुल १६ स्थानों पर आर्य वीर दल सम्मेलन हुए जिनके कार्यक्रम में शारीरिक और बौद्धिक प्रतियोगिताओं को प्रमुखता प्राप्त रही। साथ ही स्वास्थ्य और चरित्र निर्माण पर प्रवचन और व्याख्यानों की भी आयोजना की गई।

सेवा कार्य—

उत्तर प्रदेश उड़ीसा, पजाब और देहली के बाढ़ पीड़ितों की सेवा, सहायता और रक्षा का कार्य किया गया। उत्तर प्रदेश के पूर्वीय जिलों मे बाढ का प्रकोप रहा। गाजीपुर और बनारस के आर्य वीरों ने प्रशसनीय सहायता कार्य किया। देहली की बाढ़ में गाजियाबाद के आर्य वीरों ने पानी में डूबे हुए घरों से सामान निकलवाने और उनमें रहने वालों के जीवन रक्षण में योग दिया। पजाब के आर्य वीर दल के सेनापति श्री सुरेन्द्रानन्द जी ने अन्न वस्त्र जमा करके आर्य वीरों को साथ ले जाकर बाढ़ पीड़ित क्षेत्रों में वितरण कराया। देहली के आर्य वीर दल ने अपनी ओर से करौल बाग में एक कैम्प खोला और पीड़ितों को वहां आश्रय स्थान देकर अन्न वस्त्र से सहायता की।

बिजनौर मंडल के आर्य वीरों ने गंगा स्नान के अवसर पर सारा नगर में प्रशंसनीय सेवा कार्य किया। ९८६ खोबे हुए बच्चों को उनके अभिभावकों के पास पहुंचाया।

सूर्य ग्रहण के अवसर पर बनारस में वहां के आर्य वीर दल के १०० सैनिकों ने घाटों तथा सड़कों पर भीड़ को व्यवस्थित रखने में पुलिस का हाथ बटाया।

इसी प्रकार लखनऊ और श्रीनगर आदि स्थानों पर आर्य वीरों ने सेवा कार्य के अतिरिक्त बदमाशों को पकड़ कर पुलिस के हवाले किया।

विशेष कार्य —

गोवा स्वतन्त्रता आन्दोलन के अवसर पर सार्वदेशिक आर्य वीर दल के अधिकारियों ने सार्वदेशिक सभा के प्रधान जी से इसमें भाग लेने की अनुमति मांगी परन्तु प्रारम्भ में अनुमति न मिल कर कुछ समय पश्चात् अनुमति मिली। अनुमति मिलने पर सार्वदेशिक आर्य वीर दल की समिति के सदस्यों तथा अन्य प्रमुख कार्यकर्ताओं का एक कन्वेंशन देहली में श्री पं० नरेन्द्र जी की अध्यक्षता में बुलाया गया जिसके निर्णयानुसार सार्वदेशिक आर्य वीर गोवा स्वातन्त्र्य समिति का निर्माण किया गया और वीर सत्याग्रहियों को अपने नाम भेजने की अपील की गई परिणाम स्वरूप हजारों आर्य वीरों तथा वीरांग

नाओं के नाम प्रथम जत्थे मे चलने के लिये हमारे पास आ गये।

गोवा सीमा पर घायल सत्याग्रहियों की सेवार्थ एक चिकित्सा केन्द्र खोलने का भी निर्णय किया गया जिसके लिये बम्बई प्रान्तीय आर्य वीर दल के सेनापति श्री एम० के० अमीन जी ने अपने दल की ओर से इस कार्य के सचालन का पूरा भार अपने ऊपर लेने और इसके लिये अपनी एम्बुलेंस कार भी वहा ले जाने का वचन दिया।

परन्तु जत्थे के प्रस्थान करने के कुछ ही दिन पूर्व सरकार के निर्णयानुसार दल को अपना पुरोगम भी स्थगित करना पड़ा।

यह बात यहाँ उल्लेखनीय है कि स्वतन्त्र रूप से आर्य वीर दल के बहुत से सैनिकों ने हमारे निर्णय से पूर्व ही वहा के सत्याग्रह मे भाग लिया और उनमें से बहुतों को चोटें भी आई। मुख्यत हैदराबाद के आर्य वीरों ने वहा की स्वातन्त्र्य समिति के अध्यक्ष श्री प० नरेन्द्र जी के आदेशानुसार भाग लिया हमारे जत्थे मे भी वहा से सैकड़ों आर्य वीर जाने को उद्यत थे।

धार्मिक ज्ञान-परीक्षा—

देहली आर्य वीर दल ने नवयुवकों में धार्मिक ज्ञान की वृद्धि के निमित्त साधारण ज्ञान परीक्षा के नाम पर एक परीक्षा चालू की है जिसमें मुख्यत वैदिक धर्म तथा आर्य जाति सम्बन्धी प्रश्न पूछे गये। देहली के १६ केन्द्रों पर १५०० छात्र व छात्राओं ने इसमें भाग लिया। उत्तीर्ण विद्यार्थियों को दल की ओर से प्रमाण पत्र दिये गये।

दल की इस ऊपर लिखित प्रगति को चार चान्द लग जाते यदि प्रतिनिधि सभायें और आर्य समाजें आर्य वीर दल को अपना उचित सहयोग तथा सरक्षण प्रदान करतीं। आशा है भविष्य में हम इनका अधिक सहयोग प्राप्त कर सकेंगे।

उपसमितियाँ

१९५५ की अन्तरग सभा ने इस वर्ष का कार्य विभाजन करते समय निम्नलिखित उप समितिया नियुक्त की थीं —

आर्य नगर गाजियाबाद- -

१—श्री बालमुकन्द जी
२ , चौ० जयदेवसिंह जी
३—, बा० कालीचरण जी आर्य (सयोजक)
४— , ला० हरशरणदास जी
५—,, प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
६ , बनवारी लाल जी

आर्यनगर गाजियाबाद भूमि मे सेवा केन्द्र

१९५५ की अन्तरग के निश्चयानुसार आर्य नगर गाजियाबाद को सभा की भूमि मे सेवा केन्द्र खोलने का आयोजन किया जा रहा है। केन्द्र की इमारतों के चित्र स्वीकृति के लिये गाजियाबाद नगरपालिका मे दिये हुए हैं। भूमि मे कुये का निर्माण हो चुका है जिसपर २९६७ ≈ ॥। व्यय हुआ है।

२-उपदेशक विद्यालय उपसमिति--

१—श्रीयुत बा पूर्णचन्द्र जी
२— बा० कालीचरणजी आर्य सयोजक)
३ ,, प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय
४— स्वामी अभेदानन्द जी
५— ,, प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति
६— ,, स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज
७— ,, प० बुद्धदेव जी विद्यालकार
८— ,, आचार्य रामानन्द जी शास्त्री

३ आर्य समाज उपनियम संशोधन--

१—श्रीयुत लाला चरणदास जी
२— ,, प० शिवशकर जी
३-- ,, चौ० जयदेव सिंह जी
४— ,, प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय

५—श्री बा० कालीचरण जी आर्य (संयोजक)
६—,, बा० मुसद्दीलाल जी

४-सार्वदेशिक गो-रक्षा समिति

(१) श्रीयुत स्वामी प्र्वानन्द जी महाराज
(२) ,, लाला रामगोपाल जी (संयोजक)
(३) ,, पं० यश.पाल जी सिद्धान्तालंकार
(४) ,, बा० कालीचरण जी आर्य
(५) ,, प्रो० रामसिंह जी एम० एल० ए०
(६) ,, पं० नरेन्द्र जी एम० एल० ए०
(७) ,, डा महावीरसिंह जी
(८) ,, पं० मिहिरचंद जी
(९) ,, ला० बालमुकन्द जी

२८-८-५५ और ६-११-५५ को इसकी दो बैठकें हुईं।

५ आर्य समाज का इतिहास

(१) श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
(२) ,, प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय
(३) ,, पं० हरिशंकर जी शर्मा
(४) ,, डा० गोकुलचन्द जी
(५) ,, डा० सूर्यदेव जी
(६) ,, बा० कालीचरण जी आर्य (संयोजक
(७) ,, पं० शिवशंकर जी
(८) ,, महाशय कृष्ण जी

६-सार्वदेशिक प्रकाशन

(१) श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
(२) ,, लाला रामगोपाल जी
(३) ,, बा० कालीचरण जी आर्य (संयोजक)
(४) ,, ला० बालमुकन्द जी
(५) ,, कविराज हरनामदास जी

७-आर्य वीर दल उपसमिति

१—श्रीयुत बा० कालीचरणजी आर्य } पदेन
२- ,, लाला बालमुकन्द जी } सदस्य
३- ,, पं० नरेन्द्र जी (रक्षा सचिव)
४- ,, पं० ओम्प्रकाशजी पुरुषार्थी (प्र० सेना०)
५- ,, पं० वासुदेव जी शर्मा
६- ,, पं० मिहिरचन्द्र जी
७- ,, चौ० जयदेवसिंह जी
८- प्रान्तीय दल अधिष्ठाता गण

३०-४-५५ और २८-८-५५ को इसकी दो बैठकें हुईं।

८-धन विनियोग उपसमिति

१—श्रीयुत बालमुकन्द जी
२—,, ला० चरणदास जी
३ ,, पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
४ —,, लाला हरशरणदास जी
५—,, बा० कालीचरण जी आर्य (संयोजक)

दिनांक ४-६-५५ और २७-८-५५ को इस समिति की दो बैठकें हुईं।

विद्यार्य सभा

विद्यार्य सभा के स्वीकृत संगठन के अनुसार ८-११-५५ की अन्तरंग सभा ने अपने ७ प्रतिनिधि सदस्यों का निर्वाचन निम्न प्रकार किया :—

(१) श्रीयुत बाबूलाल जी एम० ए०
(२) ,, प० भीमसेनजी विद्यालंकार संयोजक
(३) ,, आचार्य प्रियव्रत जी
(४) ,, डा० मथुरालाल जी
(५) ,, धर्मपाल जी
(६) ,, बा० कालीचरण जी आर्य
(७) ,, प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति

संगठन के अनुसार अन्य प्रदेशीय सभाओं के प्रतिनिधि सदस्यों के नाम तथा कार्य प्रणाली के सम्बन्ध में निर्देश मंगाये जा रहे हैं। आशा है आगामी वर्ष यह सभा नियमित रूप से कार्य करने लगेगी।

सार्वदेशिक सभा की सम्पत्ति

सार्वदेशिक भवन -

सभा के पास देहली में अपने दो भवन

सार्वदेशिक भवन ऐसप्लेनेड रोड देहली) तथा श्रद्धानन्द बलिदान भवन हैं। सार्वदेशिक भवन १७०) मासिक और बलिदान भवन की दोनों दुकानें ६७॥) मासिक किराये पर चढ़ी हुई हैं। ५०) मासिक सभा कार्यालय से लिया जाता है। सार्वदेशिक भवन का ५६८०) किरायेदार से प्राप्तव्य था जिसकी प्राप्ति के लिये कोर्ट का आश्रय लिया गया। पारस्परिक फैसले के फल स्वरूप समस्त किराया अधिकांश खर्च के साथ प्राप्त हो गया है।

श्रद्धानन्द नगरी—

श्रद्धानन्द नगरी देहली में इस सभाके अधीन श्रद्धानन्द दलितोद्धार सभा द्वारा निर्मित दो भवन आर्य समाज मन्दिर और पाठशाला भवन हैं। इन दोनों की लागत ६६६३) है। इन भवनों की जमीनों के पट्टे सार्वदेशिक सभा के नाम में परिवर्तित कराने का प्रयत्न हो रहा है। गत जनवरी ५६ मास से किरायेदारों से किराया सभा में प्राप्त हो रहा है।

वैदिक आश्रम ऋषिकेश—

इस आश्रम की भूमि तथा उस पर बने मकानों का मूल्य १४०००) है और यह सभा की सम्पत्ति है। यह आश्रम प्रबन्ध के लिये वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर के अधीन किया हुआ है जिसकी ओर से श्री स्वामी देवानन्द जी संन्यासी प्रबन्ध करते हैं। इस आश्रम के मकानों में विशेष नियमों के अनुसार यात्रियों को ठहरने की सुविधा दी जाती है। कार्य विवरणान्तर्गत वर्ष में १२६ यात्री ठहरे जिसमें साधु, संन्यासी, विद्यार्थी तथा गृहस्थ सभी प्रकार के सज्जन सम्मिलित हैं।

आश्रम में प्रति रविवार को सत्संग होता है। ऋषिकेश के विविध स्थानों में भी प्रचार का प्रबन्ध किया जाता रहा।

आश्रम की ओर से १ तख्त १ चारपाई पानी की बाल्टी, भोजन बनाने के बर्तन और २-३ दिन के लिये कम्बल दे दिया जाता है।

विविध दान से १३८।।≈) की आय और १३७॥≋)॥। का व्यय हुआ। इस समय ५५५॥≋)॥। आश्रम के कोष में जमा है।

जोधपुर की सम्पत्ति—

जोधपुर में निम्नलिखित सम्पत्ति सभा के नाम में है :—

(१) ५६५५ वर्गगज भूमि सर प्रताप हाईस्कूल के सामने श्री रणछोड़दास के मन्दिर के पास।

(२) आर्य श्मशान २७१२ वर्गगज भूमि।

(३) गुरुकुल मारवाड़ मंडोर—७ मकान कुल भूमि २५१३६ वर्ग गज।

४—गोशाला मारवाड़ मंडोर—१ कोठरी, चारा डालने को ४ अन्य कोठरियां व दो बरांडे। भूमि ३०००० वर्ग गज।

इस जायदाद के प्रबन्धादि के लिये सभा की ओर से श्री आत्माराम जी परिहार जोधपुर निवासी के नाम मुख्तार नामा दिया हुआ है।

श्रीयुत लाला जगन्नाथ जी का दान—

श्रीयुत लाला जगन्नाथ जी दिल्ली निवासी ने अपनी ५०००) की जीवन बीमा पालिसी इस सभा के नाम में दान दी हुई है। सभा की अन्तरङ्ग सभा ने अपनी २४-६-४८ की बैठक में इस दान को स्वीकार किया था। इस राशि में से दानी की इच्छानुसार २०००) सर्वदानन्द साधु आश्रम को दिये जायेंगे।

विविध निधियां

चन्द्रभानु वेद मित्र स्मारक स्थिर निधि—

यह निधि श्री चन्द्रभानु जी रईस तीतरों (सहारनपुर) निवासी की पुण्य स्मृति में उनके सुपुत्र श्रीयुत म० वेद मित्र जी जिज्ञासु द्वारा प्रदत्त ५०००) के धन से मथुरा शताब्दि के अवसर पर स्थापित हुई थी। दानी की इच्छानुसार इस राशि के ब्याज से आर्य साहित्य प्रकाशित किया जाता

है। अब तक इस निधि से १६ पुस्तकें छप चुकी हैं।

दक्षिण अफ्रीका वेद प्रचार सीरीज—

२०-८-५० की अन्तरङ्ग सभा के निश्चयानुसार यह निधि श्रीयुत पं० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय के १३३१=) के दान से स्थापित हुई जो उन्हें दक्षिण अफ्रीका से वहाँ के आर्य भाइयों की ओर से निजी व्यय के लिये भेंट रूप में मिला था। इस निधि के धन से अब तक सनातन धर्म और आर्य समाज, लाइफ आफ्टर डैथ एण्ड एलीमेंट्री टीचिंग्स आफ हिन्दू धर्म पुस्तकें छपी हैं।

दयानन्द आश्रम—

इस निधि के २२५०) के व्याज से शुद्ध हुये भाइयों की सहायता की जाती है विशेषतः विद्यार्थियों को छात्र वृत्तियां दी जाती हैं। इस वर्ष १ लड़के और १ लड़की को ५) मासिक छात्र वृत्ति दी गई।

श्रीमती चन्दोदेवी का दान -

आर्य समाज मौठ की मस्जिद के उत्साही मन्त्री श्री देवदत्तसिंह के प्रयत्न से श्रीमती चन्दोदेवी ने अपना जङ्गपुरा नई दिल्ली में स्थित मकान जिसका मूल्य लगभग ८०००) है और जिसमें २६५ वर्ग गज भूमि है (६० फीट लम्बाई, ४० फीट चौड़ाई) अपने पति श्री कन्नू सैनी की स्मृति में सभा को दान किया जिसकी नियमित रजिस्ट्री १०-५-५५ को हुई।

सभा की स्वर्ण जयन्ती

२८-८-५५ की अन्तरंग सभा ने श्रीयुत मदन मोहन जी सेठ के प्रस्ताव पर १९५८ में सभा का स्वर्ण जयन्ती महोत्सव मनाने का निश्चय किया और ६-११-५५ की अन्तरंग सभा ने उपसमिति द्वारा प्रस्तुत निम्न लिखित कार्यक्रम को जिसके संयोजक श्रीयुत पं० नरेन्द्र जी एम० एल० ए० थे स्वीकार किया।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्वर्ण जयन्ती योजना

२८-८-५५ की अन्तरंग सभा में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्वर्ण जयन्ती विषयक श्री मदन मोहन जी सेठ का प्रस्ताव पास हुआ था कि जयन्ती मनाई जाय। सभा ने विस्तृत कार्यक्रम बनाने के लिये एक उपसमिति नियुक्त की थी। श्री सेठ जी के सुझावों को दृष्टि में रखते हुये निम्न योजनायें प्रस्तुत की जाती हैं।

१—सभा के लिये भवन

वर्तमान भवन कार्यालय के लिये उपयुक्त नहीं है। दिल्ली के किसी अच्छे स्थान पर एक भवन निर्माण किया जाय या क्रय किया जाय जहां सभा का कार्यालय रह सके। इस भवन पर लगभग दो लाख रुपये व्यय होने का अनुमान है।

२- आर्य समाज हींग की मंडी आगरा में स्मारक बनाया जाय

हींग की मंडी में कोई ऐसा स्थान नहीं है जहाँ कमरा बनाया जा सके। उस जगह के निरीक्षण करने के बाद यह विचार है कि यज्ञकुंड के पास एक कलापूर्ण स्तम्भ स्थापित किया जाय उसमें एक ओर आर्य समाज के दस नियम तथा दूसरी ओर सार्वदेशिक सभा की स्थापना की बैठक में सम्मिलित होने वाले सज्जनों के नाम अंकित कराये जायें। स्तम्भ का नक्शा सुयोग्य व्यक्तियों से बनवाया जाय। इस पर लगभग ३०००) व्यय किया जाय। इसी स्तम्भ के एक भाग पर इस बात को अंकित कर दिया जाय कि महर्षि अमुक अमुक सन में अमुक अमुक तारीख को आगरा पधारे थे। उक्त जयन्ती के कार्यक्रम में इस स्तम्भ के उद्घाटन का समय निश्चित कर दिया जाय।

३—महर्षि का डाक्यूमेन्ट्री फिल्म

महर्षि का डाक्यूमेन्ट्री फिल्म तैयार कराया जाय। उसमें महर्षि के जीवन की विशेष घटनायें और टंकारा तथा मथुरा के गुरु की कुटियों की भी झांकी रहे। इसके साथ साथ आर्य समाज के अन्य कार्यों सम्बंधी फिल्म भी तैयार कराई जाय। गुरुकुल कालेज आदि संस्थायें, आर्य सत्याग्रह हैदराबाद व सिंध के चित्र तथा अब तक के हुतात्माओं के चित्र तथा विशेषतया स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के कार्य के भी चित्र दिखाये जायें। समय समय पर बाढ़ आदि के समय आर्य समाज का जो कार्य हुआ है उनके चित्र भी संग्रह करके दिखाये जायें। इस पर अनुमानतः १ लाख रुपया खर्च किया जाय। डाक्यूमेंट्री फिल्म तैयार करने वाली अच्छी से अच्छी कम्पनियों का सहयोग प्राप्त किया जाय। इस संबंध में श्री पृथ्वीराज या अन्य विशेषज्ञ से विशेष रूप से योग प्राप्त किया जाय।

४—सार्वदेशिक संग्रहालय

(१) श्री सेठ जी का यह प्रस्ताव बड़ा उचित है। परोपकारिणी सभा से महर्षि के हस्त लिखित ग्रन्थ तथा अन्य वस्तुयें प्राप्त करके सार्वदेशिक सभा के वर्तमान भवन को संग्रहालय के प्रयोग में लाया जाय।

(२) स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के कमरे को उनकी स्मृति के योग्य बनाया जाय।

(३) दूसरे कमरे में आर्य समाज के हुतात्माओं के तैल चित्र तैयार कराके लगवाये जायँ।

(४) वर्तमान भवन के सामने के भाग (कोलोनेड) में लायब्रेरी के साथ साथ वाचनालय भी रखा जाय।

(५) ऊपर के भाग में वेद के अनुसंधान के लिये विद्वानों के लिये रहने का प्रबन्ध किया जाय।

(६) संग्रहालय तथा तैल चित्रादि की व्यवस्था में लगभग ६०००) व्यय किया जाय।

५—सार्वदेशिक पत्र

वर्तमान सार्वदेशिक को साप्ताहिक बना दिया जाय और इसका विभाग अलग स्थापित किया जाय। एक उत्तम और श्रेष्ठ साप्ताहिक पत्र की मांग जनता में है। इसके अतिरिक्त एक उत्तम मासिक वैदिक अंग्रेजी मैगजीन के ढंग का पत्र भी निकलवाया जाय। इस कार्य के लिये एक अच्छा योग्य सम्पादक रखा जाय। साप्ताहिक के लिये प्रारम्भ में प्रतिमास १५००) मासिक का व्यय किया जाय। अंग्रेजी पत्र लगभग ५००) मासिक व्यय से प्रारम्भ किया जाय।

६ विदेश प्रचार व्यवस्था

साप्ताहिक पत्र के अतिरिक्त दो उच्च कोटि के संस्कृत-अंग्रेजी के उत्तम वक्ता विद्वान् उपदेशक सभा के आधीन रखे जायें जो समय समय पर भारत का भ्रमण करके प्रचार कार्य करें तथा कालेजों आदि में विद्यार्थियों से सम्पर्क कायम करके वैदिक विचारों को फैलायें। इन्हें प्रत्येक को ३००) मासिक दक्षिणा दी जाय।

सार्वदेशिक सभा में एक विदेश विभाग खोला जाय जो विदेशी दूतावासों तथा अन्य देशों से अपना सम्बन्ध जोड़कर समय समय पर समाज की गतिविधि तथा आर्य सिद्धांतों से उन्हें परिचित करायें।

इस कार्यक्रम के सम्बन्ध में अन्तरग सदस्यों के सुझाव प्राप्त किये जा रहे हैं।

७ आर्य समाज का इतिहास

श्रीयुत प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति लिखित तीनों भाग प्रकाशित करा दिये जायें। इसी अवसर पर इतिहास के तीनों खंडों को संक्षिप्त अंग्रेजी में भी प्रकाशित कराया जाय।

८—अनुसंधान विभाग को विस्तृत किया जाय

सभा के अनुसंधान विभाग को विस्तृत किया

जाय। समय समय पर आर्य समाज व आर्य सिद्धांतों के विरुद्ध लिखे गये साहित्य का उत्तर तथा नवसाहित्य के प्रकाशन की योजना की जाये।

९—सार्वदेशिक सभा का इतिहास

सार्वदेशिक सभा का ५० वर्षीय इतिहास प्रकाशित होना चाहिये जिसमें सम्बन्धित प्रतिनिधि सभाओं के संक्षिप्त इतिहास भी दे दिये जायें।

१०—विविध

इन तमाम कामों के लिये पांच लाख रुपया एकत्र किया जाय। शिष्ट मंडल बनाया जाय जो भारत तथा भारत के बाहर धन संग्रहार्थ भेजा जाय।

(२) इस राशि में से दो लाख रुपया सुरक्षित किया जाय। सभा योग्य व्यक्तियां द्वारा जयन्ती के समय से पूर्व ही विशेष प्रचार का कार्य आरम्भ कर देवे। उपदेशकों को ट्रेनिंग दिलानी हो तो अभी से इस कार्य को आरम्भ कर दिया जाय।

श्रद्धानन्द जयन्ती

श्रीयुत पं० धर्मदेव जी वेदवाचस्पति एम० ए० गुरुकुल कांगड़ी के (२०-६-५५ का पत्र) प्रस्ताव और उस पर प्राप्त हुई प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं की सम्मति के प्रकाश में २८-८-५६ को अन्तरंग सभा ने गुरुकुल कांगड़ी में फाल्गुन कृष्ण १३ सम्वत २०१३ को श्रीयुत स्व० स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का जन्म शताब्दी महोत्सव मनाने का निश्चय किया है। महोत्सव का कार्यक्रम निर्धारित किया जा रहा है।

गुरु विरजानन्द की जन्म तिथि

२७-८-५५ की धर्मार्य सभा की अन्तरंग सभा ने गुरु विरजानन्द जी की जन्म तिथि का निश्चय न होने से प्रति वर्ष आश्विन बदी त्रयोदशी को उनका मृत्यु दिवस मनानेका निश्चय करके सार्वदेशिक सभा को प्रेरणा की कि वह इस पर्व को पर्व पद्धति में सम्मिलित कर लेवे। ६-११-५५ की अन्तरंग सभा ने निश्चय किया कि जन्म तिथि की खोज की जाय और खोज हो जाने पर उपर्युक्त निश्चय पर विचार किया जाय। श्री दंडी जी की वसीयत के कागजों की सरकारी दफ्तर से खोज कराके तिथि ज्ञात करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

पंजाब पीड़ित सहायता निधि

इस वर्ष होनहार पीड़ित विद्यार्थियों की पुस्तकों, छात्रवृत्तियों और सहायता के अधिकारी पीड़ित परिवारों के लिये अन्न वस्त्रादि की व्यवस्था की गई।

आर्य ध्वज गीत संशोधित रूप में

२८-८-५५ की अन्तरंग सभा के निश्चयानुसार आर्य ध्वज गीत का संशोधन हुआ। सशोधित रूप इस प्रकार है :—

जयति ओ३म् ध्वज व्योम विहारी।
विश्व प्रेम सरिता अति प्यारी॥ध्रुव॥
सत्य सुधा बरसाने वाला,
स्नेह लता सरसाने वाला।
सौख्य सुमन बिसाने वाला,
विश्व विमोहक रिपु भयहारी॥
इसके नीचे बढ़ें अभय मन,
सत्पथ पर सब धर्म धुरी जन।
वैदिक रवि का हो शुभ उदयन
आलोकित होवें दिशि सारी॥
इसी ध्वजा के नीचे आकर,
नीच ऊंच का भेद भुला कर।
मिले विश्व मुद मंगल गाकर,
घोर अविद्या तम संहारी॥
इस ध्वज को लेकर हम कर में,
भर दें वेद ज्ञान जग भर में।
सुभग शान्ति फैले घर घर में,
मिटे अविद्या की अंधकारी॥

आर्य जाति का यश अक्षय हो,
आर्य ध्वजा की अविचल जय हो।
आर्य जनों का ध्रुव निश्चय हो,
आर्य बनावें वसुधा सारी॥

आर्य ध्वज का निर्माण

आर्य जनता की मांग को पूरा करने तथा समस्त झंडों में सादृश्य बनाये रखने के लिये सभा स्वयं झंडे तय्यार कराने का आयोजन कर रही है। बम्बई की एक केमीकल कम्पनी (आई० सी० आई०) के द्वारा पक्के रङ्ग (उषा) के नमूने तय्यार करा लिये गये हैं। झंडों के निर्माण का कार्य शीघ्र ही आरम्भ हो जायगा।

परोपकारिणी सभा

५-६-५५ की अन्तरंग के निश्चयानुसार सार्वदेशिक सभा परोपकारिणी सभा के सहयोग से महर्षि कृत ग्रन्थों आदि की हस्तलिपियों और उनके निजी सामान की एक प्रामाणिक सूची (कैटेलाग) बनवाने का यत्न कर रही है। श्री आचार्य विश्वश्रवाः जी ने अजमेर जाकर इस कार्य में सहयोग देने का इस सभा को आश्वासन दिया है। सार्वदेशिक सभा की ओर से परोपकारिणी सभा के मन्त्री जी को इस सम्बन्ध में पत्र लिखा गया था। उन्होंने उत्तर में इस सुझाव पर परोपकारिणी के वार्षिक अधिवेशन के पश्चात् विचार करने का आश्वासन दिया है।

आर्य शब्द का प्रयोग

मई १९५३ में जयपुर में हुये राजस्थान प्रांतीय चतुर्थ आर्य सम्मेलन में निम्नांकित प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ था:—

"राजस्थान प्रांतीय चतुर्थ आर्य महा सम्मेलन सार्वदेशिक सभा से प्रार्थना करता है कि आर्यों में परस्पर प्रीति बढ़ाने एवं एक सूत्रता स्थापित करने के लिये वह भारत के समस्त आर्यों को प्रेरणा करे कि वे अपने नाम के आगे जाति सूचक शब्द के स्थान पर आर्य ही लगावें।"

इस प्रस्ताव पर निम्नलिखित दो संशोधन आये—
(१) आर्य शब्द लगाना अनिवार्य न किया जावे।
(२) शर्मा, वर्मा इत्यादि शब्द न लगा कर आर्य शब्द लगाया जावे।

इन संशोधनों पर विचार और विवाद होने पर इसे सार्वदेशिक सभा में निर्णयार्थ भेजने का निश्चय हुआ।

इस निश्चय के प्राप्त होने पर २०-९-५३ की अन्तरंग सभा में इस पर विचार होकर निश्चय हुआ कि इसके सम्बन्ध में प्रदेशीय सभाओं से सम्मति प्राप्त करने के उपरांत निर्णय किया जाय। तदनुसार प्रदेशीय सभाओं से सम्मति प्राप्त की गई और ३०-४-५५ की अन्तरंग बैठक में यह निर्णय हुआ कि नाम के आगे जाति सूचक शब्द का प्रयोग न किया जाया करे, आर्य लगाया जा सकता है।

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा

इस सभा के प्रधान श्री स्वामी आत्मानन्द जी तथा मन्त्री श्री आचार्य विश्वश्रवाः जी हैं। धर्मार्य सभा के मुख्य २ निश्चयों का रिपोर्ट में समावेश है। विस्तृत रिपोर्ट पृथक् तैयार की जा रही है।

वियोग

कार्य विवरण समाप्त करने से पूर्व बड़े खेद के साथ लिखा जाता है कि इस वर्ष निम्न महानुभाव हम से सदैव के लिये वियुक्त हो गये हैं—

१—श्रीयुत प्रो० घीसू लाल जी
२— ,, चौ० जयदेवसिंह जी
३— ,, पं० रामदत्त जी शुक्ल
४— ,, हरनाम दास जी कपूर (बंगलौर)

इन महानुभावों के निधन से आर्य समाज की विशेष क्षति हुई है। परमात्मा से प्रार्थना है कि समस्त दिवंगत आत्माओं को सद्गति प्राप्त हो।

कालीचरण आर्य
सभा मन्त्री

श्रीयुत स्वामी विद्यानन्दजी विदेह के लिये आर्यसमाज की वेदी का बन्द किया जाना

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की ३०-४-५५ की अन्तरंग सभा ने ऋग्वेद भाष्य के प्रकाशनार्थ प्रचारित विदेह जी की १ लाख रुपये की अपील का इस आधार पर विरोध किया कि विदेह जी की यह अनधिकार चेष्टा है क्योंकि इस कार्य के लिये दार्शनिक और संस्कृत ज्ञान अपेक्षित है उसकी विदेह जी में कमी है और इस कमी को उन्होंने २६-६-५४ के धर्मार्य सभा के अधिवेशन में स्वीकार भी किया था। सार्वदेशिक सभा की १०-४-५५ की अन्तरंग ने इस निश्चय की सम्पुष्टि करके आर्य जनता को आवश्यक निर्देश दे दिये। इन निश्चयों की विदेह जी द्वारा अवहेलना होने पर २८-८-५५ की धमार्य सभा की अन्तरंग सभा ने निश्चय किया कि विद्यानन्द जी के साहित्य और व्यवहार का आर्य जनता पर इस प्रकार का प्रभाव पड़ता है कि जिससे वे अपने को नबी, अवतार, मन्त्रद्रष्टा, ऋषि आदि के रूप में प्रस्तुत करते हैं। इससे आर्यजगत में भ्रम और अविश्वास फैल रहा है अतः सार्वदेशिक सभा को समयोचित कार्यवाही करनी चाहिये। सार्वदेशिक सभा की २८-८-५५ की अन्तरंग सभा ने उपर्युक्त निश्चय को सम्पुष्ट करके आर्य समाजों को आदेश दिया :—

१—आर्य समाज की वेदी पर से उनके व्याख्यान न कराये जाएं।

२—उनके ग्रन्थ आर्य समाज के पुस्तकालयों में न रखे जाएं।

३—उनके ग्रन्थों के प्रकाशन के लिये अथवा अन्य किसी कार्य के लिये आर्थिक सहायता न दी जाय।

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा

इस वर्ष सार्वदेशिक धर्मार्य सभा की अन्तरंग सभा के तीन अधिवेशन और तीन अधिवेशन साधारण सभा के हुए। आर्य जगत के प्रसिद्ध और भिन्न २ विषयों के उच्चकोटि के प्रायः सभी विद्वान् सार्वदेशिक धर्मार्य सभा में हैं और उनकी उपस्थिति भी सब अधिवेशनों में अच्छी रही। अतः इस वष अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर विचार हुए। जिनका विवरण नीचे दिया जाता है :—

१—प्रणव को ॐ के रूप में लिखना अशुद्ध है प्रणव को 'ओ३म्' के रूप में ही लिखना चाहिये।

२—आर्त्विज्य और पौरोहित्य का अधिकार केवल गृहस्थ को है आचार्यादि पदों पर व्यवस्था के अनुसार वानप्रस्थ आदि भी हो सकते हैं।

३—ऋग्वेद की मण्डलाद्यन्तर्गत ऋक्संख्या पर निश्चित निर्णय हुए।

४—ऋषि के वेदभाष्यों के मुद्रण और उसके स्वतन्त्र अनुवादों के सम्बन्ध में भी विचार हुआ।

५ ऋषि निर्मित संस्कार विधि मन्त्र प्रधान ग्रन्थ को स्वररहित छापने का विरोध किया गया।

६—सन्ध्या हवन की पद्धतियों में प्रकाशकों ने बहुत आपा धापी मचाई हुई है अतः सन्ध्या और हवन की निश्चित पद्धतियां तैयार की गई हैं।

७—देश देशान्तर और समस्त भारतवर्ष के साप्ताहिक अधिवेशनों को समान रूप से चलाने के लिये एक परिमार्जित साप्ताहिक सत्संग की पद्धति का निर्माण किया गया।

८—साप्ताहिक सत्संगों में इस बात पर बल दिया गया है कि ऋषि के ग्रन्थों और ऋषि के वेदभाष्य को मुख्यता दी जावे।

९—प्राचीन यज्ञों की पद्धतियों में सर्वप्रथम दर्श पौर्णमास और पुत्रेष्टि की पद्धति तैयार करने का निश्चय हुआ। आर्य जगत् के विद्वानों की

सम्मति है कि प्राचीन यज्ञों की पद्धतियां मन्त्रों के अर्थों को और सृष्टि की स्थिति को समझने में सहायक हैं।

१०—सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के पिछले सब निर्णयों का इतिहास तैयार किया गया है और कुछ निर्णयों का संशोधन भी हुआ है स्पष्टीकरण के रूप में।

११—वृक्षों में जीव है इस विषय पर अन्तिम निर्णय किया गया।

१२—पं० विद्यानन्द जी विदेह अजमेर की सिद्धान्त विरुद्ध गतिविधियों के कारण धर्मार्य सभा को विवश होकर सार्वदेशिक सभा से उनकी आर्य समाज की वेदि बन्द कराने का अनुरोध करना पड़ा।

१३—ऋषि के चल चित्र के सम्बन्ध में धर्मार्य सभा के सम्मुख उपस्थित होने पर सिद्धांत की दृष्टि से धर्मार्य सभा ने निर्णय किया कि 'नाट्यकला वैदिक है।'

१४—ऋषि के मृत्यु दिवस का नाम निर्वाण तथा विरजानन्द पर्व मनाने आदि विषयों पर विचार के साथ आर्य पर्व पद्धति के पुनः संशोधन और परिवर्तन का निश्चय किया गया।

१५—ऋषि के ग्रन्थों के सम्पादन के सम्बन्ध में विशेष निश्चय नीचे लिखे हुए :—

(क) प्रकाशक लोग ऋषि के ग्रन्थों में इच्छानुसार परिवर्तन न करें।

(ख) ऋषि के मूल पुस्तकों में ब्रैकट आदि डालकर ऋषि के ग्रन्थों में मिलावट न करें।

(ग) ऋषि के ग्रन्थों में पुष्टि के लिये टिप्पणियां सम्पादक अपने नाम से दे सकता है समालोचनात्मक नहीं।

(घ) पाठों में सन्देह होने पर सार्वदेशिक सभा से निश्चय कराया जावे।

(ङ) परोपकारिणी सभा से विशेष अनुरोध किया गया कि ऋषि के ग्रन्थों के सम्पादन में एक व्यक्ति पर निर्भर न रहकर एक विशेषज्ञ विद्वत्मण्डल से निश्चय करावें।

उपर्युक्त जो निर्णय इसवर्ष हुए हैं उनके संबंध में विस्तृत विवरण कार्यालय से प्राप्त करें।

आचार्य विश्वश्रवाः
प्रधान मन्त्री, सार्वदेशिक धर्मार्य सभा, दिल्ली

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के इस वर्ष के अन्तरंग सभा के विद्वान्

१—श्री स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती वैदिक आश्रम यमुना नगर प्रधान।

२—श्री पंडित बुद्धदेव जी विद्यालंकार प्रभाताश्रम बरेली उपप्रधान।

३—श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती साधु आश्रम हरदुआगज।

४—श्री स्वामी वेदानन्द तीर्थ जी विरजानन्द वैदिक संस्थान छोटा खेड़ा देहली।

५—श्री पंडित धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड गुरुकुल कांगड़ी।

६—श्री आचार्य प्रियव्रत जी गुरुकुल कांगड़ी।

७—श्री पंडित धर्मपाल जी विद्यालंकार गुरुकुल कांगड़ी।

८—श्री आचार्य रामानन्द जी शास्त्री पटना (बिहार)।

९—श्री आचार्य भद्रसेन जी वैदिक यन्त्रालय अजमेर।

१०—श्री आचार्य हरिदत्तजी शास्त्री एम०ए० एकादशतीर्थ वेदान्त व्याकरणायुर्वेदाचार्य अध्यक्ष संस्कृत विभाग डी० ए० वी० कालिज कानपुर।

११—श्री आचार्य भीमसेनजी शास्त्री एम०ए० अध्यक्ष संस्कृत विभाग लोहिया कालिज चुरू (राजस्थान)।

१२—श्री पंडित युधिष्ठिर जी मीमांसक रामलाल कपूर ट्रस्ट बनारस।

१३—श्री पंडित ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु प्रधान रामलाल कपूर ट्रस्ट अमृतसर।

१४—श्री पं० भगवद्दत्त बी० ए० रिसर्चस्कालर भारतीय अनुसंस्थान संस्था पटेल नगर देहली।

१५—श्री आचार्य विश्वश्रवाः जी रिसर्च स्कालर वेद मन्दिर बरेली—प्रधान मन्त्री।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

आय व्यय १—३—१९५५ से २९—२—१९५६ तक

आय

विवरण		
पञ्चमांश (सम्बद्ध प्रदेशीय सभाओं से)		२९९२ १४ ९
दशांश (सम्बद्ध समाजों से)		४८० १३ ३
दान आर्य समाज स्थापना दिवस		१०८० १ ०
विविध दान		७५२ १३ ०
दान उड़ीसा प्रचारार्थ		७५१ ० ०
आजीवन सदस्यता शुल्क		२५०० ० ०
सभा सदस्यता शुल्क		१८ ० ०
आय लीज आर्य नगर		१७ ० ६
सार्वदेशिक पत्र चन्दा तथा विज्ञापन		४०८७ १२ ६
सदस्यता शुल्क आर्य वीर दल		२३९ ७ ०
सूद व किराया मकान		
किराया बलिदान भवन	१७७३ ० ०	
किराया सार्वदेशिक भवन	२०४० ० ०	
किराया रहन के मकानों से	१५३४९ १ ०	
सूद बैंकों आदि से	६०२० १५ ६	२५१८३ ० ६
प्राप्त लाभ पुस्तक भंडार बिक्री		१३७० १५ १०
योग		३६४१३ १४ ४

इन्द्र विद्यावाचस्पति
सभा प्रधान

नारायणदास कपूर
चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट
नई देहली
१५—४—५६

कालीचरण आर्य
सभा मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

आय-व्यय १—३—१९५५ से २९—२—१९५६ तक

व्यय

विवरण						
वेतन कर्मचारी कार्यालय	९०७६	५	९			
प्रोवीडेंट सभा का भाग	७०१	१०	३	९७७८	०	०
अधिवेशन व्यय	६२१	१५	०			
मार्ग व्यय अन्तरंग सदस्य	५७१	१०	०			
मार्ग व्यय अन्तरंग धर्मार्य सभा	४२५	१	०			
घिसाई फरनीचर	२५०	०	०			
विविध	४९९२	११	३	६८६१	५	३
व्यय बलिदान भवन	६११	१४	०			
व्यय सार्वदेशिक भवन	७३२	१५	०	१३४४	१३	०
व्यय आर्य नगर गाजियाबाद				५२	९	०
सार्वदेशिक पत्र (छपाई, कागज आदि)				४८७३	६	६
व्यय आर्य वीर दल संगठन				३९५४	१४	९
प्रचार व्यय						
दक्षिण भारत	५३६९	९	०			
नैपाल प्रचार	१६८०	०	०			
उड़ीसा प्रचार	१२०८	११	०			
साहित्य प्रचार	९१३	५	६	९१७१	९	६
सूद अन्य निधियों को दिया गया				२०९५	०	०
व्यय पुस्तक भंडार बिक्री				१०५०	११	०
किराया रणजीतसिंह एण्ड सन्स लीगल एक्सपेंसिस				६०८	३	६
व्यय से अधिक आय				३२३	५	१०
(आय व्यय के खाते में शेष पत्र में ले जाई गई)						
योग				३९४१३	१४	४

बालमुकन्द आहूजा	रघुनाथ प्रसाद पाठक	प्रेमचन्द्र शर्मा
सभा कोषाध्यक्ष	कार्यालयाध्यक्ष	एकाउन्टेन्ट

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

शेष पत्र (बेलेंस-शीट) २६—२—१९५६

दातव्य

स्थिर निधियां			
वेद प्रचार		५०००० ० ०	
देश देशान्तर प्रचार		५०००० ० ०	
भारतीय स्टेट फंड		५०००० ० ०	
रक्षा निधि		२५००० ० ०	
सार्वदेशिक भवन		२४५०० ० ०	
ऋषिकेश भवन		१४००० ० ०	
चन्दो देवी भवन		८००० ० ०	
आर्य साहित्य प्रकाशन		११७५० ० ०	
शहीद परिवार सहायता		१५००० ० ०	
चन्द्रभानु वेदमित्र स्मारक		५००० ० ०	
गंगाप्रसाद गढवाल प्रचार ट्रस्ट		२००० ० ०	
शिवलाल वेद प्रचार		६५० ० ०	
ढोढाराम चूडामणि वेद प्रचार		५०१ ० ०	
डोमा महतो सुन्दर देवी वेद प्रचार		१०० ० ०	
			२५६५०१ ० ०
विशेष निधियां			
दलितोद्धार	३००० ० ०		
सूद दलितोद्धार	२८६ १२ ०	३२८६ १२ ०	
दयानन्द आश्रम	२२५० ० ०		
सूद दयानन्द आश्रम	७ ० ०	२२५७ ० ०	
श्रद्धानन्द नगरी		६६६३ ० ०	
सूद शहीद परिवार सहायता		२०७४ ४ ६	
सूद गंगाप्रसाद गढवाल प्रचार		१९६ १२ ०	१४४७७ १० ६
पीड़ित सहायता निधियां			
जनरल		४०६१३ ८ ०	
बंगाल		१०००० ० ०	
पंजाब		४७५ १ ४	५१०८८ ९ ४
दक्षिण भारत प्रचार निधियां			
केशवार्य स्कूल हैदराबाद दक्षिण		२५००० ० ०	
हैदराबाद स्टेट मन्दिर निर्माण		५०५४ ६ ६	

शोलापुर आर्यसमाज मन्दिर		१५००० ० ०	
आर्य समाज कार्कल मन्दिर		१०२५ ० ०	४६०७९ ६ ६
विदेश प्रचार निधियां			
अमेरिका प्रचार		४४२९ ० ०	
सूद		९९ १२ ०	
बिरला		१३००० ० ०	
सूद		१०० ० ०	
बगदाद फंड		१२७२ ० ०	१८९०० १३ ०
प्रकाशन निधियां			
चन्द्रभानु वेदमित्र स्मारक		५०६० १३ ८	
आर्य साहित्य		३८९५ १० ९	
नारायण स्वामी पुस्तक		२७१७ १- ५	
गंगाप्रसाद उपाध्याय पुस्तक		१६९१ ३ १	
दक्षिण अफ्रीका वेद प्रचार		७६४ १· ३	
पुरानी पुस्तकें		५८१ १ ६	
आर्य सिद्धान्त विरोधी		४५१ ३ ०	
आन्ध्र साहित्य		८२९ ० ०	
अन्य		९३८७ १५ ३	७५३७४ ३ ११
सत्यार्थ प्रकाश रक्षा निधियां			
सत्यार्थ प्रकाश रक्षा	११९४७ १ ३		
सत्यार्थप्रकाश प्रकाशन रक्षा	२३१४ ८ ६	२२२६१ ९ ९	
सिन्धी सत्यार्थप्रकाश	५५५६ १० ०		
सिन्धी सत्यार्थप्रकाशन	१५२९ ८ -	७०८६ २ ०	२९३४७ ११ ९
अन्य निधियां			
दयानन्द पुरस्कार	३१००१ ०		
सूद दयानन्द पुरस्कार	१५६८ ७ ६	४०५६८ ७ ६	
अनुसंन्धान निधि		२२९७९ १४ ६	
गोरक्षा आन्दोलन	१००७६ १० ६		
गोरक्षा प्रकाशन	५०६ ५ ०	१०५८२ १५ ६	
ईसाई प्रचार निरोध	१३६८ १ ३		
ईसाई प्रचार निरोधप्रका०	७३१ ८ ०	२०९९ ९ ३	
आर्य संस्कृति रक्षा		३८५१ ० ०	

उपदेशक विद्यालय		१४०० ० ०	
आर्य महा सम्मेलन		२७५ १५ ०	
आर्यसमाज सहायता		५० ० ०	
श्रद्धानन्द नगरी किराया		२५ ० ०	
दयानन्द समयपुर पाठशाला		५४६ १४ ०	
टंकारा आर्यसमाज मन्दिर		३५१ १ ०	
दयानन्द कीर्ति मन्दिर		१७२ ० ०	
आर्यनगर गजियाबाद (सुरक्षित)	२४२ ३ ६		
आर्यनगर गाजियाबाद (सुरक्षित होनेवाला)	१३२१२ ४ ०	६१४५४ ७ ६	
बंगाल प्रचार		६०४५ १३ ६	
महानिधि		११२६२ ४ ०	१६१६६७ ५ ९
स्टाफ प्रोवीडेंट फंड			११४७५ ७ ६
धरोहरें			
आर्य समाज कराची		११७१३ ५ १	
आर्य समाज हैदराबाद सिन्ध		१२६ ८ ०	
आर्य समाज बालनगीर (उड़ीसा)		७५ ० ०	
आर्य समाज येवला (नासिक)		५० ० ०	
आर्य नगर सहयोग समिति		५६ १२ ०	
आर्य समाज मेरठ शहर		२०५ ० ०	
महात्मा आनन्द भिक्षु विदेश		५०० ० ०	
स्वामी ब्रह्ममुनि जी		३९२० ० ०	
स्वामी ध्रुवानन्द जी		५४६ ७ ०	
कर्मचारी सभा		२८०३ ८ ४	
कनाडी सत्यार्थप्रकाश		६०५० ० ०	
विविध		२३९५ १ ०	२८४४१ ९ ५
आय-व्यय खाता			
गत शेष पत्र के अनुसार		२७५८५ १४ ११	
इस वर्ष की अधिक आय		३२३ ५ १०	२७९०९ ४ ९
		योग	६७१२६३ ४ ५

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

शेष-पत्र (बलेंस-शीट) २९—२—१९५६

सम्पत्ति तथा प्राप्तव्य

सम्पत्ति			
श्रद्धानन्द बलिदान भवन		३०५०० ० ०	
सार्वदेशिक भवन		२४५०० ० ०	
केशवार्य हाई स्कूल हैदराबाद दकन		२५००० ० ०	
ऋषिकेश भवन		१४००० ० ०	
गाजियाबाद भूमि	२७०४६ ० ६		
कूप आर्यनगर में	२९६७ ७ ९	३००१३ ८ ३	
शोलापुर आर्यसमाज मन्दिर		१४९७७ १० ०	
चन्दो देवी भवन		८३१७ ५ ०	
श्रद्धानन्द नगरी			
आर्य समाज मन्दिर	३९१६ ० ०		
आर्य समाज पाठशाला	२७४७ ० ०	६६६३ ० ०	१५३९१६ ७ ३
इन्वेस्टमैंट्स			
सेन्ट्रल बैंक देहली ३ वर्षीय कैश सर्टिफिकेट		३४३१७ ८ ०	
सेन्ट्रल बैंक देहली एफ० डी०		६०००१ ० ०	
पंजाब नेशनल बैंक चांदनी चौक एफ० डी०		३०००० ० ०	
पंजाब नेशनल बैंक चांदनी चौक एफ० डी०		९३२१ ८ ०	
बैंक आफ बीकानेर एफ० डी०		१५००० ० ०	
पंजाब नेशनल बैंक नया बाजार देहली		३५०० ० ०	
ट्रेजरी सेविंग सर्टिफिकेट १० वर्षीय		५०००० ० ०	
डेबेंचर्स मोहिनी शूगर मिल्स कलकत्ता		३००० ० ०	
शेयर्स सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड देहली		९९३० ० ०	
शेयर्स आर्य साहित्य मंडल लिमिटेड अजमेर		३० ० ०	२१५१०० ०
सुरक्षित ऋण			
भूमि तथा मकानों पर		१५७९०० ० ०	
(१) सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड देहली		३०८६ १२ ०	
(२) सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड देहली		५००० ० ०	१६५९८६ १२ ९

फर्नीचर

गत शेष पत्र के अनुसार	४०५५ १ ३		
इस वर्ष की वृद्धि	२३५ १० ०	४२६० १३ ३	
घिसाई कम की		२५० ० ०	४०४० १३ ३

स्थिर पुस्तकालय

गत शेष पत्र के अनुसार	८३१६ ५ ६	
इस वर्ष की वृद्धि	११० १४ ०	८४३० ३ ६

पुस्तकों का स्टाक

(लागत कीमत कार्यालयाध्यक्ष द्वारा प्रमाणित) ३६५६३ १४ ०

डिपोजिट

बिजली कम्पनी देहली	६३ ० ०	
नगर पालिका देहली	५० ० ०	११३ ० ०

प्राप्तव्य

सूद बैंकों से	३८६१ १२ ०	
किराया मकानों से	३२००७ ० ०	३५८६८ १२ ०

प्रान्तीय सभाओं से

हैदराबाद स्टेट	१०५६ १३ ०	
बिहार	१७५० ८ ०	
उत्तरप्रदेश	१०१६ ७ ६	
बंगाल	१०००० ० ०	
सिन्ध	७९७५ ० ०	
मध्यप्रदेश	३००० ० ०	२४७६७ १५ ६
श्री प० सत्यपालजी स्ना० कलाडी सत्यार्थप्रकाशादि मद्ध	७७६० ० ०	
प० सत्यपालजी अगाऊ मार्ग व्यय	२०० ० ०	७९६० ० ०
श्री प० मदनमोहन विद्या सागर जी (आन्ध्र साहित्य मद्धे)		८२६ ० ०

अभियोग व्यय

लाला श्रीराम जी	६२३५ ० ६	
कस्टोडियन	२८६ ६ ०	६५२१ ६ ६

आर्यसमाज इतिहास				३८९९	१	०			
श्री प० लक्ष्मणराव जी ओघले				५००	०	०			
पुस्तकों मद्धे (विविध सज्जनों से)				२२३१	१	६			
विविध				१०४७	१	३			
कर्ज प्रोवीडेंट फंड पर				१६४५	०	०	८५३५९	८	९
चलत खाता									
सेन्ट्रल बैंक देहली	१२१	१	९						
प्रताप बैंक चांदनी चौक	९११	१४	७						
पंजाब नेश० बैंक नयाबाजार	३५९	९	४						
,, ,, ,, चांदनीचौक	९	११	०						
होम सेविंग एकाउन्ट	२२७	१५	६						
पंजाब नेशनल बैंक नया बाजार				१६३०	४	२			
नकद कार्यालय में				१२२	४	६	१७५२	८	८
						योग	६७१२६३	४	५

देहली (हमारी आज की रिपोर्ट के अधीन प्रमाणित)

१४-४-१९५६

नारायण दास कपूर

चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट

इन्द्र विद्यावाचस्पति	कालीचरण आर्य	बालमुकन्द आहूजा	रघुनाथप्रसाद पाठक	प्रेमचन्द शर्मा
सभा प्रधान	सभा मन्त्री	सभा कोषाध्यक्ष	कार्यालयाध्यक्ष	एकाउन्टेन्ट

संस्कृति के चार अध्याय

[लेखक—श्री सम्पादक 'सिद्धान्त' बनारस]

दिनकर जी की पुस्तक संस्कृति के चार अध्याय' अब देखने को मिली। प्रकाशक का दावा है कि 'संस्कृति क्या है ?', 'सामासिक संस्कृति किसे कहते हैं ?', 'भारतीय संस्कृति की सामासिकता कहां है?', हिन्दू धर्म और हिन्दू संस्कृति केवल आर्यों की देन है या उनमें आर्येतर जातियों का भी अंशदान है ?—ये और ऐसे सैकड़ों प्रश्नों के उत्तर इस पुस्तक में दिये गये हैं।'

दो वर्षों के अध्ययन के पश्चात विद्वान् लेखक को यह सत्य उद्भासित हो उठा कि 'भारतीय संस्कृतियों में ४ बड़ी क्रान्तियां हुई और हमारी संस्कृति का इतिहास उन्हीं चार क्रान्तियों का इतिहास है पहली क्रान्ति तब हुई, जब आर्य भारतवर्ष में आये अथवा जब भारत वर्ष में उनका आर्येतर जातियों से सम्पर्क हुआ। आर्यों ने आर्येतर जातियों से मिलकर जिस समाज की रचना की; वही आर्यों अथवा हिन्दुओं का बुनियादी समाज हुआ, और आर्य तथा आर्येतर संस्कृतियों के मिलन से जो संस्कृति उत्पन्न हुई, वही भारत की बुनियादी संस्कृति बनी। इस बुनियादी भारतीय संस्कृति के लगभग आधे उपकरण आर्यों के दिए हुए हैं और उस का दूसरा आधा आर्येतर जातियों का अंश-दान है। दूसरी क्रान्ति तब हुई, जब महावीर और गौतम बुद्ध ने इस स्थापित धर्म या संस्कृति के विरुद्ध विद्रोह किया तथा उपनिषदोंकी चिंता-धाराको खींचकर वे अपनी मनोवाञ्छित दिशा की ओर ले गये। तीसरी क्रान्ति उस समय हुई, जब इस्लाम, विजेताओं के धर्मरूप में, भारत पहुँचा और इस देश में हिन्दुत्व के साथ उसका सम्पर्क हुआ। चौथी क्रान्ति हमारे अपने समय में हुई, जब भारत में यूरोप का आगमन हुआ तथा उसके सम्पर्क में आकर हिन्दुत्व एवं इस्लाम दोनों ने नव जीवन का अनुभव किया।'

जिसका आधार ही गलत हो, उसकी और बातों का कहना क्या ! लेखक की राय में 'जिसे हम भारतीय संस्कृति कहते हैं, वह आदि से अन्त तक न तो आर्यों की रचना है और न द्रविड़ों की। प्रत्युत उसके भीतर अनेक जातियोंका अंशदान है। वह संस्कृति रसायन की प्रक्रिया से तैयार हुई है एवं उसके भीतर अनेक औषधियों का रस समाहित है। इसी का नाम 'सामासिक संस्कृति' है अनेक ग्रन्थों के अध्ययन से विद्वान् लेखक को पता लगा है कि 'नीग्रो-जाति के बाद आग्नेय, आग्नेय के बाद द्रविड़ और द्रविड़ के बाद आर्य-जाति के आने के बाद इस देश में सांस्कृतिक समन्वय का काम शुरू होता है।' क्या हम विद्वान् लेखक से पूछ सकते हैं कि नीग्रो-जातिवालों के आने के पहले इस देश में कौन रहते थे या समस्त भारत मानव-जाति से शून्य ही था ? 'आर्य भारत के ही निवासी थे और वहीं से दूसरे देशों को गये', यह बात दिनकरजी को इसलिए नहीं जचती कि 'भारत धन-धान्य से पूरित देश था। ऐसी स्थिति में उन्हें दूसरे देशों में जाने की आवश्यकता ही नहीं हुई।' परन्तु पहले क्या दिनकर जी ने इस पर भी कभी विचार किया कि 'आर्य-जाति का सिद्धान्त कहाँ तक ठीक है ?' उन्होंने वेदों का रचनाकाल ईसापूर्व २५०० वर्ष से ईसापूर्व १८०० वर्ष तक माना है। उनकी पुस्तक पढ़ने से ऐसा जान पड़ता है कि संस्कृति पांच सात

हजार वर्षसे पुरानी नहीं है।' 'ये सब बातें कितनी भ्रामक हैं। उन्होंने स्वयं स्वीकार किया है कि 'इस पुस्तक की अधिकांश सामग्री अंग्रेजी पुस्तकों से ली गई है।' यही कारण है कि 'वे सत्यता से दूर होते गये।' अपने यहां के इतिहास-पुराणों पर उन्होंने एक दृष्टि तक नहीं डाली।

उनका कहना है कि 'इस पुस्तक को मैं इतिहास नहीं, साहित्य का ग्रंथ कहता हूँ। पर साहित्य में ही गलत आधार लेकर चलना साधारण लोगों को कितना भ्रम में डालता है। जैनों के 'अनेकान्त वाद' की चर्चा करते हुए दिनकरजी ने लिखा है कि 'मनुष्य इतना ही कह सकता है कि 'शायद यह ठीक हो', क्योंकि सत्य के सभी पक्ष सभी मनुष्य काएक साथ दिखाई नहींदेते।' पर ऐसा लिखकर भी उन्होंने यह फतवा दे डाला हैं कि 'आरम्भ से ही अनेक जातियां भारत में आकर बसीं और उन सब की संस्कृति ही भारत की सामाजिक संस्कृति है।' अपनी पुस्तक के आरम्भ में उन्होंने यह प्रश्न उठाया अवश्य कि 'मनुष्य पहले-पहल कहां उत्पन्न हुआ ?', पर उसे अनिर्णीत छोड़कर ही वे इस निष्कर्ष पर पहुँच गये कि 'भारत में बाहरी जातियों का आरम्भ से ही तांता लगा रहा।' यदि वे गम्भीरतापूर्वक इस प्रश्न पर विचार करते, तो ठीक रास्ते पर पहुंच जाते; पर ऐसा न कर वे स्वयं भ्रम में पड़ गये और अपनी पुस्तक लिखकर दूसरों को भी भ्रम में डाल दिया।

पिछले ८, १० हजार वर्षों में समस्त इतिहास को ठूँसना बड़ा सङ्कीर्ण दृष्टिकोण है। अपने यहां के शास्त्रों के अनुसार वर्तमान सृष्टि लगभग २ अरब वर्ष पुरानी है। कुछ पाश्चात्य विद्वान भी अब इसे मानने लगे हैं, पर साथ ही उनका मत है कि 'ऐतिहासिक जानकारी ८, १० हजार वर्ष से अधिक की नहीं है।' इसलिए इस के पहले का काल वे 'प्राग्-ऐतिहासिक' मानते हैं। आधुनिक इतिहासकारों का दूसरा भ्रम है 'विकास-सिद्धान्त के अनुसार ऐतिहासिकक्रम मानना।'इसके अनुसार उत्तरोत्तर सर्वत्र क्रमिक विकास हो रहा है। इन धारणाओं के कारण वस्तुस्थिति समझने में बड़ी कठिनाई पड़ती है। दूसरी दृष्टि से देखा जाय, तो वस्तुस्थिति कुछ दूसरी जँचती है। जब जगत् रूप से नित्य है, तब उसका इतिहास भी नित्य ही होना चाहिये। ऐसी दशा में यह कैसे कहा जा सकता है कि 'वह कब से आरम्भ हुआ ?' फिर सृष्टि और प्रलयका क्रम बराबर चलता रहता है। वर्तमान सृष्टि के पहले कभी सृष्टि हुई ही नहीं, क्या यह कहा जा सकता है ? यदि पुनर्जन्म और कर्मफल मानना है, तो फिर विकास सिद्धान्त कहाँ तक ठीक बैठता है, पर आधुनिक विद्वान् इन सब बातों की ओर ध्यानही नहीं देते। फलतः वे उलटे निष्कर्ष पर पहुंचते हैं।

यदि दिनकर जी को 'अनेकान्तवाद' मे विश्वास है, तो उन्हें अपने यहां इतिहास का जो क्रम बतलाया गया है, उस पर भी विचार करना चाहिए। उस के अनुसार सर्वप्रथम मानव-सृष्टि भारत के 'ब्रह्मावर्त प्रदेश' में ही हुई और वहीं से समस्त संसार में उसका विस्तार हुआ। जिन-जिन भूमियों पर भारतीय बसते गये, वहां वहां उन की वैदिक संस्कृति भी पहुंच गई। कालान्तर में विभिन्न प्रदेशों की जलवायु की भिन्नता के कारण वहां जाकर बसने वाले भारतीयों के वर्ण तथा आकृतियों में भी भिन्नता आ गई। जलवायु का आचार-विचार पर भी प्रभाव पड़ा। आने-जाने की असुविधाओं के कारण कई देशों का भारत से सम्पर्क टूट गया, परिणाम यह हुआ कि रूप-रङ्ग, रहन-सहन तथा बोल-चाल में इतना परिवर्तन हुआ कि वहां के प्रवासी भारतीय भारत में विदेशी तथा भिन्न जाति के प्रतीत होने लगे। विदेशों में अनुलोम प्रतिलोम विवाह चल पड़े, और कितनी सङ्कर जातियाँ उत्पन्न हो गईं। मनुने स्पष्ट लिखा है कि 'क्रियालोप हो जाने से पौण्ड्र-चौण्ड, द्रविड़ काम्बोज यवन, शक, पारद, पल्लव, चीन, किरात,

दरद, खस आदि अनेक क्षत्रिय जातियों की गणना शूद्रों में हो गई। इसी तरह अन्य जातियों की क्रियाओं का भी लोप हो गया और उनकी भाषाएँ भी बदल गईं और वे म्लेच्छ कहलाने लगे। इसे समझ लेने पर भारतीय संस्कृति के 'मस्तक रोग' की, जिस पर बड़ा ज़ोर दिया जाता है, कोई बात ही नहीं रह जाती।

दिनकरजी ने बड़े विस्तार के साथ और बड़े रोचक ढंग में दिखलाया है कि इस्लाम और ईसाई धर्मों का हिन्दू धर्म तथा संस्कृति पर क्या-क्या प्रभाव पड़ा ?' उनकी राय में 'यूरोपके आगमन से 'नवजागरण' का आरम्भ हुआ। इससे भारत का कायाकल्प हुआ। धर्म की रूढ़ियां धूलिवत झड़ गयीं, मनुष्य की उदारता में वृद्धि हुई, और हिन्दू धर्म सशोधित होकर इस रूप में खड़ा हुआ, जिसे हम विश्व-धर्म की भूमिका कह सकते हैं।' इस तरह दिनकरजी तथा उनके जैसे विचार वाले लोगों की दृष्टि में भारत अब विकास की चरम सीमा की ओर बढ रहा है।

उनकी पुस्तक के ६६१ पन्ने उलटने-पलटने से तो ऐसा जान पड़ता है कि भारतीय संस्कृति केवल कहीं की ईंट, कहीं का रोड़ा, और भानुमती ने कुनबा जोड़ा है।' उन्होंने यह कहीं नहीं बतल या कि 'उन की इस तथाकथित सामासिक संस्कृति के आधारभूत सिद्धान्त क्या हैं ?' केवल एक स्थान पर उन्होंने यह अवश्य लिखा है कि 'वैदिक काल से लेकर महात्मा गाँधी के समय तक दृष्टि दौड़ा जाइये, भारतीय संस्कृति की जो एक विशेषता हमेशा उसके साथ मिलेगी वह उस की अहिंसा-प्रियता है।' इस तरह उन्होंने 'अहिंसा प्रियता' को ही आधार मान लिया, पर इतने मात्र से समस्या हल नहीं होती। यह मानना पड़ेगा कि 'भावों का आदान-प्रदान हुआ।' पर उस से अच्छाई हुई या बुराई, इस के निर्णय की कसौटी क्या है ? जब तक इस पर विचार नहीं किया जाता, कोई बात हल नहीं होती। पहले तो यही विचार करना होगा कि 'मानव-जीवन' का लक्ष्य क्या है ?' यदि उसकी प्राप्ति में कोई परिवर्तन सहायक होता हो, तो वह अवश्य ग्राह्य है। यदि नहीं, तो वह त्याज्य है। हम दिनकरजी से यही जानना चाहेंगे कि 'क्या उन्हें मानव-जीवन का वह लक्ष्य मान्य है, जो अपने यहां के शास्त्रों में बतलाया गया है ? यदि मान्य है, तो फिर उनमें जो उसकी प्राप्ति के मार्ग बतलाये हैं, उन्हीं पर चलना होगा। यदि वह मान्य नहीं, तो फिर उन्हें यह बतलाना होगा कि 'वह लक्ष्य क्या है और उसकी प्राप्ति में उनकी बतलाई हुई सामासिक संस्कृति कहां तक सहायक हो रही है ?"

पुस्तक बड़ी सरल भाषा में और रोचक ढङ्ग से लिखी गई है। उस पर एक दृष्टि डालने से ऐसा जान पड़ता है कि 'वे जिज्ञासु हैं।' यही अनुभव कर हमने यहां कुछ लिखने की चेष्टा की है। अपने 'निवेदन' में उनका कहना है कि 'अर्ध सत्य और अनुमान चाहे जितने हों, किन्तु जो प्रतिमा इस पुस्तक में खड़ी की गई, वह निर्जीव नहीं है। मेरी आशा है कि पाठक जब इस पुस्तक को हाथ में लेंगे, हमारी समासिक संस्कृति की प्रतिमा उससे अन्त तक बात करती चली जायगी।' पर वह प्रतिमा 'सजीव' होकर यदि उलटी-पुलटी बातें करती चली जायगी, तो पाठकों पर उसका क्या प्रभाव पड़ेगा, यह भी तो विचारणीय है। हमारा कभी ऐसा आग्रह नहीं कि 'हमारी ही बात सब मान लें और न हम दूसरों से ही ऐसा आग्रह पसन्द करते हैं।' हम तो यही चाहते हैं कि 'विचार-विनिमय द्वारा सत्य की खोज हो।' हमारे स्तम्भ सदा इसके लिए खुले हुए हैं। हमारे विचार पढ़कर यदि दिनकरजी अपनी बात कहना चाहेंगे, तो हम उसे सहर्ष प्रकाशित करेंगे।

———

स्वाध्याय का पृष्ठ

अभ्यास की महिमा

आकृति विद्या के पण्डित मनुष्य के हृदय का भेद उसकी आकृति देखकर जान लिया करते हैं। राम को बड़ी उत्सुकता है कि वह भी इस विद्या का जानकार बन जाय। इसी उद्देश्य से राम आकृति विद्या के एक पण्डित 'वरुण' के पास जाता है और इच्छित विद्या की प्राप्ति की दीक्षा लेता है। वरुण ने बतलाया कि मनुष्य के मस्तिष्क से जो उसके भावों और विषयों का केन्द्र होता है रङ्गीन किरणें निकला करती हैं जिन्हें अभ्यास से शक्ति विकसित करके मनुष्य जान लिया करता है। कुछेक किरणों का विवरण इस प्रकार है:–

(क) जो मनुष्य अत्यन्त आवेश वाले होते हैं उनके मस्तिष्क से गहरे लाल रङ्ग की किरणें निकला करती हैं।

(ख) परोपकारी निष्काम सेवा करने वाले महानुभावों के मस्तिष्क से निकलने वाली किरणों का रङ्ग गुलाबी होता है।

(ग) यश की कामना वाले पुरुषों की किरणें नारङ्गी रङ्गकी होती हैं।

(घ) दार्शनिकों और गहरे विचारकों की किरणें गहरी नीली रङ्गत वाली हुआ करती हैं।

(च) कला प्रेमियों की किरणें नीली होती हैं।

(छ) उद्विग्न और उदास पुरुषों की किरणें धवल रङ्ग की होती हैं।

(ज) नीच प्रकृति वालों की मैली बादामी होती हैं।

(झ) भक्ति और सदुद्देश्य वालों की हल्की नीली।

(त) उन्नतशील पुरुषों की हल्की हरी और

(थ) शारीरिक और मानसिक रोगियों की गहरी हरी होती हैं इत्यादि।

(श्री महात्मा नारायण स्वामी जी की डायरी)

गंगा जल की महत्ता

महर्षि चरक ने कहा था कि 'हिमवत्प्रभवाः पथ्या' अर्थात् हिमालय से निकलने वाला जल पथ्य है। महर्षि के ये शब्द गंगा जल के लिए ही है।

'भोजन कुतूहल' का एक हस्त लिखित ग्रन्थ भण्डारकर ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट पूना में है जिसे १८ वीं शती का लिखित माना जाता है। उसमें गंगा जल के सम्बन्ध में लिखा है कि यह जल स्वच्छ, श्वेत, स्वादु, रुचिकर, भोजन पकाने योग्य, पथ्य, पाचन शक्ति बढ़ाने वाला प्यास को शान्त करने तथा बुद्धि एवं क्षुधा वर्द्धक है।

गंगा के जल के सम्बन्ध में आयुर्वेद शास्त्र में लिखा है कि इसके पीने से अजीर्ण, संग्रहणी, ह्मजीर्णज्वर तथा तपेदिकआदि रोग नष्ट हो जाते हैं, यह जल कुष्ठ रोग के निवारण के लिए लाभ दायक है। यह जल चर्म रोगों एवं मस्तक के रोगों की भी महौषधि है। केवल गंगा के पानी में ही यह विशेषता है कि उसमें कोई किसी प्रकार

का भी जल मिलकर गंगा के पानी के गुणों में ही परिणत हो जाता है।

इसके अतिरिक्त यह जल चाहे कितने समय तक रखा जाय वह प्रभावहीन एवं खराब नहीं होता। डा० नेलसन ने लिखा है कि कलकत्ता से हुगली (गंगा) का जल जहाज़ों द्वारा लंदन ले जाने में ४० दिन का समय लगता है परन्तु वह खराब नहीं होता। इसके विपरीत टेम्स नदी का जल जिसे लन्दन से जहाजों में भरते हैं वह बम्बई पहुंचने के पहले ही खराब हो जाता है।

एक बार अमेरिका के प्रसिद्ध लेखक 'मार्क ट्वेन' भारत भ्रमण में आए। उन्होंने लिखा कि आगरा में हमें एक आश्चर्य जनक वैज्ञानिक आविष्कार का पता लगा कि संक्रामक रोगों के कीटाणुओं का नाश करने वाला सबसे बलिष्ठ प्रयोग गंगा जल है। यह चमत्कार उस समय 'वैज्ञानिक आविष्कार के रूप में प्रकाशित हुआ था। उस समय विज्ञान विभाग के कर्मचारी श्रीयुत् 'हेनकेन' आगरा में थे। उन्होंने गंगाजल की परीक्षा की थी।

एक बार उन्होंने परीक्षा के लिए उस स्थान का जल जान बूझकर लिया जहां स्नान घाट के पास काशी भर की गन्दगी गंगा में गिरती है। उस जल के परीक्षण से यह ज्ञात हुआ कि उसमें हैजे के लाखों कृमि मौजूद हैं परन्तु ६ घण्टे बाद जब पुनः जल देखा गया तब उसके सब कीड़े मर गये थे। इतने से ही उन्हें सन्तोष न हुआ। उन्होंने गंगा में बहते हुए शवः को उठाया और उसके पास के जल की परीक्षा की तो उसमें हजारों हैजे के कीड़े पाए गये। किन्तु ६ घण्टे बाद वे सब के सब स्वयं ही मर गये। फिर इतने पर भी उस विज्ञान वेत्ता को सन्तोष तथा विश्वास न हुआ। उसने दूसरे विशुद्ध जल में कुछ हैजे के कीड़ों को डाला। जांच करने पर ज्ञात हुआ कि ६ घंटे में ही उस जल में असंख्य कीड़े बढ़ गए। फिर से वही कीड़े जब शुद्ध गंगाजल में डालकर देखे गये तो ६ घंटे में ही सब के सब मर गए।

सन् १३२५ में 'इब्न बतूता' ने एशिया और अफ्रीका के कई देशों की यात्रा की थी। उसने अपनी भारत-यात्रा वर्णन में लिखा था कि 'सुल्तान मुहम्मद तुगलक के लिए गंगाजल नित्यप्रति दौलता बाद आया करता था। इस जल के वहां पहुँचने में ४० दिन लग जाते थे।

(गिब्स कृत अंग्रेजी अनुवाद पृ० १३८)

'आईने अकबरी' में अब्बुल फज़ल ने लिखा है 'मुगल सम्राट अकबर को गंगाजल अत्यन्त प्रिय था, घर में या यात्रा में वे गंगाजल पीते हैं। कुछ विश्वासपात्र लोग गंगातट पर इसलिए नियुक्त रहते हैं कि वे घड़ों में गंगाजल भरकर और उस पर मुहर लगाकर बाहर भेजते रहें।'

कट्टर मुसलमान औरङ्गजेब भी गङ्गाजल का सेवन करता था। बर्नियर लिखता है "औरङ्गजेब के लिए दिल्ली या आगरा में खाने पीने की सामग्री के साथ गंगाजल भी रहता था।" टैविर्नर ने अपनी यात्रा के वर्णन में लिखा है:—

'इन दिनों विवाह शादी में अतिथियों को गंगाजल पिलाने की प्रथा थी। अमीरों का उच्च आतिथ्य अधिक गंगाजल पीने पर ही निर्भर था। शादियों में कहीं २ दो दो तीन २ हजार रुपये गंगाजल पिलाने और मंगाने में ही खर्च हो जाते थे। पेशावाओं के लिए भी गंगाजल पूना ले जाया जाता था।"

(गीता सन्देश ऋषिकेश)

महर्षि जीवन चरित्र

शंका समाधान

(१)

परमात्मा की प्राप्ति मानव का परमकर्त्तव्य

कायम गंज में लाला जगन्नाथ जी ने स्वामी जी से पूछा "महाराज ! मनुष्य का कर्त्तव्य क्या समझा जाय ?" स्वामी जी ने उत्तर दिया, आदर्श प्राप्ति के लिए कर्त्तव्य कर्म किया जाता है। मनुष्य के आगे आदर्श प्राप्ति 'परमात्मा की प्राप्ति' है इसलिए उसका कर्त्तव्य है कि जैसे दयालु ईश्वर सब पर दया करता है वह भी सब पर दया करे। ईश्वर सत्य स्वरूप है। मनुष्य भी सत्यवादी बने। इस प्रकार ईश्वर के गुणों को अपने में धारण करने का अभ्यास करे और अन्त में परमेश्वर को उपलब्ध करे।"

(२)

अन्न दो प्रकार से दूषित होता है।

फर्रुखाबाद में कुछ लोग ऐसे हैं जिन्हें वहां के रहने वाले 'साधु' कहते हैं। वे सभी काम धन्धा करके निर्वाह करते हैं और घरबारी होते हैं। उनके हाथ का बना हुआ भोजन ब्राह्मण वैश्यादि नहीं खाते। एक दिन एक साधु कढ़ी और भात थाल में परोस कर बड़ी प्रीति से स्वामी जी के लिए लाया। महाराज ने उस अन्न को प्रसन्नता से ग्रहण कर लिया। परन्तु इस पर ब्राह्मण असंतोष प्रकट करते हुए कहने लगे, स्वामी जी आप तो साधु का भोजन पाकर भ्रष्ट हो गए। आपको ऐसा करना उचित न था। स्वामी जी ने हंसते हुए कहा, अन्न दो प्रकार से दूषित होता है। एक तो तब जब दूसरे को दुःख देकर प्राप्त किया जाय और दूसरे जब कोई मलीन वस्तु उस पर अथवा उसमें पड़ जाय। इन लोगों का अन्न परिश्रम के पैसों का है और पवित्र है इसलिए इसके ग्रहण करने में दोष का लेश भी नहीं है।

(३)

दूर का समाचार जानने की विद्या क्या है ?

स्वामी जी के विषय में यह प्रसिद्ध था कि वे पूर्ण योगी हैं और सम्पूर्ण आध्यात्मिक तत्त्वों को जानते हैं। सारी रात समाधि में लीन रहते हैं एक दिन गढ़ी के नवाब ने पूछा, क्या महाराज ! कोई ऐसी विद्या है जिससे दूर स्थान के समाचार का ज्ञान हो सके। "स्वामी जी ने कहा, योगीजन ऐसी गुप्त बातों के जानने की इच्छा नहीं करते। उनका मुख्योद्देश्य तो सर्व वस्तुओं से गुप्त ब्रह्मसत्ता को जानना है।" इस उत्तर से नवाब महोदय को अति सन्तोष हुआ।

(४)

शब्द आकाश में लय हो जाता है।

स्वामी जी एक दिन प्रातःकाल घूमने जा रहे थे। मार्ग में एक मनुष्य ने उन्हें बहुत ही कुवचन

कहे। उसने यह भी कहा कि वह ईसाइयों का नौकर है। हमें क्रस्टान बनाना चाहता है। महाराज उसकी अज्ञान लीला पर मुस्कराते ही रहे और घूमकर अपने आसन पर आ विराजे।

वह गाली देने वाला मनुष्य यह सोचकर कि अब दयानन्द को उसके स्थान पर जाकर चिढ़ायें, महाराज के समीप गया। स्वामी जी ने उसको कहा 'आइए' बैठिए, इत्यादि कहकर उसका स्वागत किया और मधुर वचनों से उसके वहां आने का कारण पूछा। वह मनुष्य यद्यपि पाषाण समान कठोर हृदय रखता था, स्वामी जी को सताने आया था परन्तु उनके कृपा भाव से, और सुजनता के व्यवहार से उसका मन मोम हो गया। पश्चाताप से उसका जी भर आया और क्षमा याचना करने लगा। स्वामी जी ने उसे ढाढस बंधाया और कहा, शब्द आकाश में उत्पन्न होकर वहीं लय हो जाता है, इसलिए तुम्हारे वे वचन मेरे पास नहीं हैं। उन्होंने मुझे स्पर्श नहीं किया। इसी कारण उनसे मुझे यत्किंचित भी दुःख नहीं हुआ।"

(६)

कैसे जानें कि मूर्ति पूजन अच्छा नहीं है?

मिर्जापुर में जगन्नाथ ने हाथ जोड़कर स्वामी जी से विनय की, हम कैसे जानें कि प्रतिमा पूजन अच्छा नहीं?" स्वामी जी ने उत्तर दिया, 'मूर्ति पूजन के लिए' वेद में कोई आज्ञा नहीं है और ईश्वर सर्वत्र है उसे कोई वश में नहीं कर सकता। तुम मूर्तियों को ईश्वर मानते हो और फिर अपने हाथ से ताला लगाकर उन्हें मन्दिर में बन्द कर देते हो। तुम्हीं सोचो इनमें ईश्वरीय शक्ति कहां है? वे न वर दे सकती हैं और न शाप। जड़ रूप हैं। यदि कल्याण चाहते हो तो हृदय में परमात्मा का पूजन किया करो।"

(१०)

जीव मर कर कहां जाता है?

फर्रुखाबाद में छोटेलाल नामक एक व्यक्ति ने स्वामीजीके पास जाकर पूछा, जीव मरकर कहाँ जाता है? "स्वामी जी ने यजुर्वेद के अनुसार उत्तर दिया, जीव देह छोड़ने के अनन्तर वायु रूप होकर आकाश में रहता है। फिर जल में आता है। उसके पश्चात् क्रमशः औषधियों में, अन्न में और पुरुष में होकर गर्भ में स्थान करता है और फिर समय पर जन्मता है।"

(११)

वर्ण जन्म भेद से नहीं है।

कलकत्ता में पण्डित हेमचन्द्र चक्रवर्ती बड़े पक्के ब्रह्म समाजी थे। उन्होंने एक दिन स्वामी जी पूछा, आप जाति भेद स्वीकार करते हैं या नहीं? "स्वामी जी ने कहा, मनुष्य जाति, पशु जाति और पक्षी जाति आदि भेद तो प्रसिद्ध ही हैं परन्तु यदि आपका आशय ४ वर्णों से है तो वर्ण जन्म भेद से नहीं गुण कर्म भेद से है।"

(१२)

बाइबिल, कुरान और वेद में कौन सच्चा है?

एक दिन केशवचन्द्र सेन जी ने स्वामी जी से पूछा, "इस समय हमारे सामने बाइबिल, कुरान और वेद इन पुस्तकों के आधार पर ३ बड़े धर्म्म हैं। सभी अपने को सच्चा कहते हैं। हमें कैसे ज्ञात हो कि इनमें से वास्तव में कौनसा सच्चा है।"

स्वामी जी ने उत्तर में बाइबिल और कुरान में दोष दिखाकर कहा, पक्षपात और इतिहासादि दोषों से विवर्जित केवल वेद ही है। वह केवल उपदेश ही करता है, इसलिए वैदिक धर्म्म ही सच्चा धर्म है।

———

गोरक्षा आन्दोलन

विज्ञान के अप्राकृतिक प्रयोग

(संकलित)

वर्तमान साहित्य के पाठक इस बात से अपरिचित न होंगे कि यूरोप में कई जगह ऐसे प्रयोग हुए हैं कि पुरुष के वीर्य को और स्त्री के रज को उचित मात्रा में ट्यूब में रखा जाय और कृत्रिम साधनों से उसे गर्भस्थ बालक की भाँति बढ़ाया जाय। अभी इन प्रयोगों में पूरी सफलता तो नहीं मिली है, परन्तु प्रयत्न चालू है। उनका कहना है कि इससे स्त्री को न तो गर्भ धारण का लम्बा कष्ट भोगना पड़ेगा और न प्रसव की पीड़ा सहन करनी पड़ेगी। प्रसव का झंझट न रहने से प्रसुति सम्बन्धी रोगों की तो कोई आशंका ही न रहेगी। रही स्त्री-पुरुष के स्वाभाविक विषय सुख की बात। सो कृत्रिम गर्भ निरोधी यन्त्रों के उपयोग से उसमें कोई आपत्ति न आयेगी बल्कि आगे चलकर तो विवाह का झंझट और उत्तरदायित्व भी दूर हो सकता है। ऐसे लोगों का यह भी कथन है कि इस प्रकार जो सन्तान होगी उनके पालन-पोषण का दायित्व सरकार पर रहेगा। इससे माता पिता की हैसियत से सन्तान का लालन-पालन की और पुत्र पौत्र की हैसियत से माता-पिता के भरण पोषण और सेवा शुश्रूसा की कोई जिम्मेदारी न रहेगी। जीवन स्वतंत्र और स्वेच्छा चालित बन जायगा। यह उन लोगों के कथन का सार है, जो सारे दायित्व से छूटकर विषयानन्द का उपभोग करना चाहते हैं।

दीर्घ दृष्टि से विचार करने पर पता लगता है कि ये विचार सर्वथा भ्रामक और अदूर-दर्शिता पूर्ण है और इन विचारों के अनुसार क्रिया होने पर मनुष्य दायित्व ज्ञान शून्य सहानुभूति रहित एक असहाय प्राणी बन जायगा और क्रमशः उसका मनुष्य तत्व ही मर जायगा। स्त्रियों का मातृत्व माता-पिता का सन्तान स्नेह, पुत्र पौत्रों की मातृ-पितृ भक्ति और पति पत्नी का हृदयगत प्रेम पारस्परिक सहृदयता सेवा और सहानुभूति पैदा करने सभी को कठिन समय में सहायता पहुंचाता हैं; जीवन में सरसता पैदा करता है और कर्त्तव्य बोध से उनके मनुष्यत्व को मरने नहीं देता। पर जब तक अमर्यादित विषयानन्द ही जीवन का लक्ष्य है और उसकी पूर्ति के लिए विज्ञान की सहायता प्राप्त है तब तक मनुष्य में ऐसी पतनोन्मुखी और पतन के गहरे गर्त्त में गिरने वाली निरंकुश वासनायें जागती ही रहेगी:—

पशुओं में कृत्रिम सन्तति उत्पादन

मनुष्यों की तरह से पशुओं में भी अप्राकृतिक प्रयोग प्रारम्भ हुए हैं। गाय सांड के सम्भोग बिना बछड़े उत्पन्न करने की पद्धति इसका नमूना है। इससे अवश्य बहुत से सांडों के पालन के बिना ही सन्तति उत्पादन का कार्य हो सकता है और ऊपर से देखने में एक बार लाभ भी दीख

सकता है परन्तु नैसर्गिक प्रक्रिया के स्थान पर इस कृत्रिम प्रक्रिया का प्रचलन होने पर प्राकृत नियमानुसार आगे चलकर इसका बहुत बुरा परिणाम होगा। पशुओं की स्वाभाविक संयोग लालसा नष्ट हो जायगी और वे सन्तानोत्पादन के सर्वथा अनुपयुक्त हो जायेंगे। इस बात पर अभी इन वैज्ञानिकों का ध्यान नहीं गया है। आशा है आयात लाभ के साथ ही भविष्य की इस भीषण बुराई पर भी ध्यान देंगे।

गौ से अलग बछड़े का पालन

यहां पाश्चात्य ढङ्गकी कई गौशालाओं (डेयरी फार्मों) में गायों से अलग रखकर बछड़ों के लालन पालन की व्यवस्था है और उसमें उन्हें सफलता भी मिली है। इससे आर्थिक दृष्टि कोण से वे गाय और बछड़े का आर्थिक उत्पादन ठीक २ रख सकते हैं और उपयोगिता की दृष्टि से उनके पालन-पोषण में यथा योग्य न्यूनाधिकता भी कर सकते हैं। परन्तु विचारणीय प्रश्न तो यह है कि ऐसी गाय के दूध में नैसर्गिक मातृ-स्नेह जो दूध को अमृत बनाता है, कहां से आयेगा?

बछड़े के बिना कृत्रिम साधनों से पिन्हाई हुई गाय दूध की 'मशीन' अवश्य होगी पर वह स्नेहमयी गऊ कदापि न होगी। मशीन के कृत्रिम दूध से माता के स्नेहमय दूध में बड़ा अन्तर होता है। इसको वैज्ञानिक चाहे न मानें पर यह सत्य तो है ही।

बच्चे नियमित दूध तथा उचित आहार को पाकर पुष्ट हो जायेंगे पर बिना मां के बच्चे की तरह वे मातृस्नेह से वंचित रहेंगे ही? जिनके दुष्परिणाम अवश्य होंगे।

(पृष्ठ १६८ का शेष)

अन्य प्रमाण

"ऋग्वेद एवाग्नेरजायत यजुर्वेदोवायोः सामवेद आदित्याद्।"

[ऐतरेय ब्राह्मण ५।३२]

इस प्रमाण को पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु और पं० शिव शर्मा जी दोनों ही विद्वान् महर्षि दयानन्द जी के सिद्धान्त की पुष्टि में प्रस्तुत करते हैं।

"अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।
दुदोह यज्ञ सिद्धयर्थमृग्यजुः साम लक्षणम्।"

[मनुस्मृति १।२३.]

महर्षि दयानन्द जी इसका अर्थ "सत्यार्थ प्रकाश" सप्तम समुल्लास, में करते हैं:—"जिस परमात्मा ने आदि सृष्टि में मनुष्यों को उत्पन्न करके अग्नि आदि चारों महर्षियों के द्वारा चारों वेद ब्रह्मा को प्राप्त कराए और उस ब्रह्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा से ऋग्यजु, साम और अथर्ववेद का ग्रहण किया।"

आपने इस प्रमाण को स्पर्श भी नहीं किया। क्या मनुस्मृति में आए हुए अग्नि, वायु, रवि का अर्थ भी जड़ पदार्थ है।

महर्षि दयानन्द जी के अर्थ की पुष्टि से प्रमाण:—

इस श्लोक पर मनुस्मृति के प्रसिद्ध टीकाकार पं० कुल्लूक भट्ट जी की टीका:—

"वेदा पोरुषेयत्व पक्ष एव मनोरभिमतः। पूर्वकल्पे ये वेदास्त एव परमात्ममूर्त्तं ब्रह्मणः सर्वज्ञस्य स्मृत्याक्टाः। तानेव कल्पादौ अग्नि वायु रविभ्य आचकर्ष ऋग ब्रह्मा यजु साम संज्ञ वेद त्रयं अग्नि वायु रविभ्य आकृष्टवान्।"

* ऐ नव युवको ! *

(ले०-श्री डा० सूर्यदेव शर्मा साहित्यालंकार, एम० ए० डी० लिट्, अजमेर)

(१)

अहो, अरुण के आगम के सम, नव प्रकाश करने हारे।
अविरत अनुपम अमित उषा में भव प्रभा भरने हारे॥
मंजु मरीची से समाज-सर में सुखमा धरने हारे।
मानव हृत् सरसिज विकसित कर, शोक-निशा हरने हारे॥

(२)

अहो, दिव्य स्वर्गीय विटप के कलित कुसुम क्या टूट पड़े ?
अथवा सुधा सिन्धु सीपी से मुक्ता मणिगण फूट पड़े ?
अथवा प्रखर प्रचण्ड प्रभाकर के प्रस्फोटित खण्ड बड़े ?
चारु चान्द्रमस चमत्कार के काम्य कलेवर कान्ति-जड़े ?

(३)

भारत भू भ्रमणार्थ अवतरित, क्या सुरगण के बालक हो ?
या नचिकेता ऋषिकुमार हो, औपनिषद् उद्दालक हो ?
नव स्फूर्ति हो मंजु मूर्ति हो, पुण्य प्रेम-प्रति पालक हो ?
चक्रव्यूह संसार समर के, सौभद्रक संचालक हो॥

(४)

अहो ! अतुल अवतार ओज के, निष्ठा के नट नागर हो।
आशा के आगार आप वा, सत्साहस के सागर हो।
निर्भयता की निश्चल निधि हो, वा उमङ्ग के आकर हो ?
जीवित ज्वालामुखी जोश के, वा प्रस्फूर्ति-प्रभाकर हो ?

(५)

या उत्साह-अनल-भट्टी के, तुम जलते अङ्गारे हो ?
अथवा मृदुता-मन्दाकिनि के, तुम कमनीय कगारे हो ?
अथवा संक्षोभित् सागर की, लहरों के बम्भारे हो ?
या प्रचण्डतम वायु ववण्डर के अखण्ड भण्डारे हो ?

(६)

अथवा आर्य जाति की जर्जर नौका के पतवारे हो ?
अथवा देश-वाटिका के तुम सजग सुभट रखवारे हो ?
आरत भारत माता के वा, दुःखहर दिव्य दुलारे हो ?
तुम्हीं बताओ, ऐ नव युवको ! क्या हो किसके प्यारे हो ?

नकलची की प्रतिज्ञा

[लेखक—श्री स्वामी जयराम देव जी]

एक बार मैं अपने अन्तरंग मित्र से मिलने के लिए गया था। यह बहुत दिनों की बात है। मेरे मित्र जी का नाम था सी० आर० गुप्ता। जिस समय मैं उनके बंगले पर पहुँचा तो दरवाजा खुला हुआ था, सामने कमरे में बैठे हुये मित्र जी अपने प्रिय पुत्र को हिन्दी लिखना पढ़ना सिखा रहे थे। उनका पुत्र इतना सुन्दर और भोला था कि उसे देखते ही मन प्रफुल्लित हो उठता था, उस बालक की आयु थी, केवल पाँच वर्ष की और उसका नाम था 'मुकुन्द'।

मेरे मित्र सी० आर० गुप्ता जी अपने मुकुन्द को पढ़ाने में इतने तन्मय हो गये थे, कि उन्होंने मेरा आना नहीं जाना। मैं जाकर उनके पीछे की ओर रक्खी हुई कुर्सी पर चुपके से बैठ गया। उस समय मित्र जी कह रहे थे देखो मुकुन्द, अब तुम सबके नाम लिखना सीखो। बालक ने भोले स्वर से कहा 'बाबू जी' किनका नाम लिखूँ। बाबू जी ने कहा सबसे पहले मेरा नाम लिखो। 'कैसे लिखूँ।'

बाबू जी ने दुलार करते हुये कहा 'लिखो मेरा नाम सी० आर० गुप्ता।' बालक मुकुन्द ने बड़ी कठिनाई से सोच समझ कर लिखा' 'सियार' और कहा—देखो बाबू जी ठीक है। बाबू जी नाक सिकोड़ कर कहने लगे बच्चे रे की, यह क्या लिख दिया 'सियार'।

ठीक-ठीक क्यों नहीं लिखता। सी० आर० गुप्त। यह सुनते ही मुकुन्द कुछ हिचकिचाहट के साथ बोल उठा—हाँ बाबू जी। मैं भूल गया था, आपको लिख दूँ सियार—कुत्ता।

यह सुनते ही मैं खिलखिला कर हंस पड़ा। चौंक कर आश्चर्य से बाबू जी ने मुख फेर कर मेरी ओर देखा। कुछ लज्जित नेत्रों से देखते हुए कहने लगे—अच्छा आप किस समय आये मुझे तो पता ही नहीं चला।

हंस कर बोले—'आप तो हास्य रस में मेरी बात को घसीट ले गये सच-सच बतलाइये।' मैंने कहा 'आपके यहाँ मेरा इस प्रकार आना आज सफल हुआ—आपके बालक मुकुन्द के मुखारविन्द से आपके अंग्रेजी नाम का हिन्दी अनुवाद सुनकर जो आनन्द मुझे मिला वर्णनातीत है।

बाबू साहब अत्यन्त लज्जित होकर बोले क्या कहें, हमारा नाम ही ऐसा है, कि बोलने में गड़-बड़ हो जाता है।

मैंने कहा—आपका नाम तो बड़ा ही सुन्दर है 'चन्द्र रमण' अहा। ऐसा नाम तो लाखों में खोजने से भी नहीं मिलेगा। किन्तु आपने अंग्रेजी की नकल करके अपने आपको बिगाड़ कर छीछालेदर करा डाली। अपनी ललित मधुर भाषा देववाणी को छोड़ कर परायी भाषा को आपने अपना रक्खा है इस नकलची पन को क्यों नहीं छोड़ते। यह सुनते ही बाबू साहब प्रानी-पानी हो गये। बोले 'बस' आज से मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि इस अंग्रेजी भाषा का नाम के साथ प्रयोग कभी न करूँगा और अपने सभी मित्रों में इस बात का प्रचार करूँगा कि इस प्रकार अंग्रेजी का प्रयोग सदा के लिये समाप्त हो जाये।

———

हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक

(लेखक—श्री रामचन्द्र जी सम्पादक "आर्य जगत्")

भारत की लोक सभा ने हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक की सब धारायें पास करदीं। इस विधेयककी एक महत्वपूर्ण धारा यह थी जिसमें पुत्रीको पिता की सम्पत्ति का उत्तराधिकार दिया गया है। इस धारा का लोक सभा में कड़ा विरोध किया गया। इस पर विरोधी दल एक मत न था। कम्युनिस्ट और सोशलिस्ट सरकार के साथ थे। जनसंघ, हिन्दू सभाई सदस्यों ने इस का विरोध किया। परन्तु इसका सब से बलिष्ठ विरोध कांग्रेस के भूतपूर्व प्रधानश्री पुरुषोत्तमदासटंडनजी ने किया। उनके भाषण का सारांश प्रजा समाचार पत्रों में पढ़ चुकी हैं। इस धाराका हिन्दू समाज पर गहरा असर होगा। हिन्दू कुटुम्ब की स्थिति कमजोर हो जायेगी, और घरेलू झगड़ों में अत्यंत वृद्धि होगी।

स्त्रियों को सम्पत्ति में अधिकार मिले इस सिद्धांत का विरोध तो कोई नहीं करता, परन्तु वह अधिकार पिता की सम्पत्ति पर न हो श्वसुर की सम्पत्ति पर हो, झगड़ा केवल इस बात का था। हिन्दू धर्म के अनुसार विवाह के पश्चात् लड़की का गोत्र भी बदल जाता है। विवाह के पश्चात वह पिता के गोत्र को छोड़ कर पति के गोत्र को ग्रहण करती है। विवाह के पश्चात् वह पितृगृह के समस्त प्रचलन को त्याग कर पति-गृह के प्रचलन को धारण करती है। इस लिए पितृग्रह की सम्पत्ति को पाना उसके लिए स्वाभाविक नही है।

सारी बहस में इस धाराके समर्थकों ने कोई हेतु नहीं दिया कि लड़की को पिता की सम्पत्ति में क्यों भाग दियाजाए और श्वसुरकी सम्पत्तिमें क्यों न दिया जाए। श्रीपाटस्करने एक बच्चोंवाली बात कही। इस धारा के विरोध का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा कि यदि किसी लड़की के पति के पास कोई सम्पत्ति नहीं हो तो वह विधवा हो जाने पर अपना तथा अपने बच्चों का निर्वाह कैसे करेगी यदि उसे पिता की सम्पत्ति में अधिकार न हो। परन्तु श्री पाटस्कर ने यह कैसे मान लिया कि ऐसी विधवा के पिता के पास सम्पत्ति है। यदि पिता भी सम्पत्ति से हीन हो तो वह लड़की क्या करेगी इस बातको सोचने की उन्होंने जरूरत नहीं समझी।

सरकार ने जो निश्चय किया उस पर डटी रही। विरोधियों की न सही अपने प्रसिद्ध नेता टंडन जी को तो सुनते। पर सुनते क्यों? टंडन जी के पीछे कोई दल नहीं। वे दल बना कर गद्दी कायम करने के हक में नहीं।

इसका परिणाम क्या होगा?

इस कानून से हिन्दू परिवार में झगड़े बढ़ेंगे, भाई-बहनका प्रेमस्वार्थमें बदल जायगा, लड़कियों का सम्मान घट जायगा और विवाह की समस्या और भी कठिन हो जायगी। विवाह का आधार लड़की के गुण न होकर पिता की सम्पत्ति रह जायगी। इस सारे सिलसिले में लड़कियों को घाटा रहेगा। यह ठीक है कि सरकार सम्भवत: वह बिल भी प्रस्तुत करने वाली है जिसके आधीन दहेज को बन्द कर दिया जायगा, परन्तु पिता की सम्पत्ति पर से कौन नजर हटायेगा। जिस बुराई का निराकरण करने के लिए इतनी चिल्लाहट थी, जो बुराई समाज को इतना कलुषित कर रही थी, उसे यह कानून और भी जटिल और घातक बना देगा।

विविध सूचनाएं तथा वैदिक धर्म प्रचार

निर्वाचन

	प्रधान	मन्त्री	निर्वाचन तिथि
आर्य समाज लोधी रोड	श्री लाला देवीदास जी	श्री भूपसिंह	१३-५-५६
नगर आर्यसमाज शाहदरा	श्री काशीनाथ जी	श्री हरिदास जी आर्य	,,
आर्य समाज किन्सवे कैम्प	श्री गोपाल दास जी	श्री अश्विनी कुमार	२० ५-५६
आर्यसमाज सरदारपुरा जोधपुर	श्री विशनदासजी भाटिया	श्री भवानीलाल भारतीय	२२-४-५६
आर्य समाज पहाड़गंज देहली	श्री हरिवंश जी	श्री गुमान सिंह	११-५-५६
आर्य समाज शाहदरा	चौ० हुक्मसिंह जी	श्री दौलतराम अरिंदम	,,

क्रान्तिकारी कानून

इसे एक क्रांतिकारी कानून बताया गया है। आज 'क्रान्ति' शब्द में बड़ा आकर्षण है। क्रांति अच्छी है,आवश्यक भी है। पर यहतो ऐसी स्वाभाविक है कि जीवन के क्रम के साथ सम्पन्न होती है। क्रान्ति जीवन की प्रगति के लिए है, विनाश के लिए नहीं। क्रान्ति ऐसे ढङ्ग से आनी चाहिए कि वह जीवन के विकास में सहायक हो। क्या यह क्रान्ति हिन्दू समाज के जीवन के विकास में सहायक होगी अथवा विनाशक इसका निश्चय तो कालक्रम ही करेगा। परन्तु टंडन जी का विचार है कि यह क्रांति न केवल हिन्दू जाति का नाश करेगी वरन् कांग्रेस को भी नष्ट-भ्रष्ट कर देगी। और इसमें संभवतः सचाई है।

मुसलमान वंचित क्यों ?

जो लोग इस कानून को इतना उपयोगी और आवश्यक बताते हैं, वे यह नहीं बता सकते कि इस से भारत के गैर-हिन्दुओं को क्यों वंचित रखा जा रहा है। यह कानून मुसलमानों पर लागू नहीं। पर क्यों ? जब से हिन्दू कोडबिल की बात चली है तभी से यह प्रश्न पूछा जा रहा है कि यदि यह बिल इतना लाभदायक और उपयोगी है तो मुसलमानों को इस से क्यों वंचित रखा जा रहा है। इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलेगा। समस्त भारतीय जनता केलिये एक सिविलकोड न बनाकर केवल हिन्दू कोड बनाना धर्मनिरपेक्ष सरकार के के लिए कितना उचित है, यह प्रश्न ऐसे ही बना रहेगा। एक बात तो स्पष्ट है कि सरकार मुसलमानों की शरियत में दखल देना नहीं चाहती। मुसलमान कभी यह नहीं मानेंगे कि सरकार उन के उत्तराधिकार के कानून में दखल दे यह उनके धर्म का मामला है। परन्तु हिन्दुओं का धर्म तो बड़ा उदार है। ये तो बेपरवाह हैं। दो-चार दिन विरोध हुआ और समाप्त।

विधवा का अधिकार

इस विधेयक में एक और मनोरंजक धारा पास हुई कि यदि कोई विधवा नया विवाह कराले और पुराने पतिकुल को छोड़ जाब तो भी वह अपने पहले पति की सम्पत्ति की अधिकारिणी रहेगी। अब वह तीन सम्पत्तियों का अधिकार पा सकेगी, पिता की, पहले पति की और दूसरे पति की। यदि फिर वह विधवा हो जाए और तीसरा विवाह करले तो एक और सम्पत्ति पर उसका अधिकार हो जायगा। दैव के दुर्योग से ऐसी विधवा जितने अधिक विवाह कर पावेगी उतनी ही और सम्पत्तियों के उत्तराधिकार को पाती जायगी। इस क्रांति-कारी धारा का क्या फल होगा यह तो श्री पाटस्कर महोदय जैसे कानून के प्रकांड पंडित ही जानते हैं।

आर्य कन्या महा विद्यालय बड़ौदा

विद्यालय का नवीन सत्र १६ जून से प्रारम्भ होता है। नया प्रवेश १६ से २० जून तक चालू रहेगा। कन्याओं के प्रवेश के लिए नियत प्रवेश पत्र उपरोक्त पते से मंगाये जा सकते हैं। पाठ विधि ६ आने भेजकर मंगाई जा सकती है। प्रवेश शुल्क ५०) मासिक शुल्क ३५) लिया जाता है। —सुशीला पंडित आचार्या

महर्षि श्रीमद्दयानन्द कृत ग्रंथों की अपूर्व प्रदर्शनी !!

नगर आर्य समाज (गुलाब सागर) जोधपुर में ऋषि बोधोत्सव पर यज्ञ, व्याख्यानों और भजनों के प्रोग्राम के साथ ही इस समाज के स्वाध्याय शील कट्टर सिद्धान्ती, पुराने प्रसिद्ध उत्साही कार्यकर्त्ता श्री भैरवसिंह जी आर्य द्वारा उनके अपने मनीषी पुस्तकालय से, समाज के पुस्तकालय से तथा अन्य सज्जनों से संग्रहीत महर्षि दयानन्द जी लिखित तथा भाष्य ग्रन्थों की भिन्न भिन्न भाषानुवादों भिन्न प्रकाशकोंके भिन्न संस्करणों और उन पर लिखे गये व्याख्या ग्रन्थों व ट्रैक्टों आदि की प्रदर्शनी की गई। इसका उद्घाटन इसी समाज के प्रधान श्री भजनसिंह जी द्वारा किया गया।

नगर में यह प्रथम अवसर था जब कि महर्षि के समस्त ग्रथों, उनके अनुवादों, संस्करणों और व्याख्या ग्रथों के अवलोकन का सुअवसर प्राप्त हुआ। इसका प्रभाव भी स्थायी पड़ा। लोगों को कई ग्रंथों का ज्ञान ही नहीं था और कइयों का केवल नाम मात्र ही सुना था वे सब पुराने अप्राप्य और नए २ भिन्न २ भाषाओं में देखने को मिलने से लोगों में आर्य साहित्य पढ़ने की रुचि बढ़ी है। स्वाध्यायशील लोगों ने तो इसे बड़े ध्यान से देखा और इस प्रशंसनीय और अनुकरणीय नवीन आयोजना की हार्दिक प्रशंसा की।

सुना है यह तो शीघ्रता में किया गया एक साधारण आयोजन था। नगर आर्य समाज के उत्सव पर अधिकृत ग्रन्थों के साथ ही वैदिक आर्य और नवीन आर्य साहित्य का विषयानुसार ग्रथों के परिचयात्मक एवं ऐतिहासिक वाक्यपटों (चार्टों) सहित मौलिक परिचय देने के आयोजन के साथ प्रदर्शन किया जायगा ताकि जनता में आर्य साहित्य का ज्ञान होकर उसे पढ़ने में रुचि बढ़े।

(मोहनलाल दर्शक)

शुद्धि का विशाल आयोजन

जिला निमाड़ तहसील खण्डवा में १०८ ईसाई परिवारों ने जिनकी संख्या ५५२ थी हिंदू धर्म ग्रहण किया

दिनांक २४-३-५६ से २-४-५६ तक आर्य समाज खण्डवा के तत्वावधान मे आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश नागपुर के उपदेशक विभाग एव शुद्धि विभाग के अधिष्ठाता श्री स्वामी दिव्यानन्द जी सरस्वती की अध्यक्षता में १०८ ईसाई परिवारों, ने जिनकी संख्या ५५२ थी अपनी इच्छा से ईसाई धर्म छोड़कर हिन्दू धर्म ग्रहण किया जिनका शास्त्रोक्त विधि से शुद्धिकरण संस्कार करके स्वामी जी महाराज ने उन्हें हिन्दू धर्म में प्रवेश कराया। यज्ञ हवन का कार्य सुखराम जी आर्य द्वारा सम्पन्न हुआ। इन शुद्धियों के प्रोग्रामों में हर जगह स्वामी जी महाराज के सारगर्भित भाषण होते रहे। ग्रामीण जनता पर स्वामी जी के प्रवचनों का अच्छा प्रभाव पड़ा। स्वामी जी महाराज ने देहातों में साईकिलों से एवं पैदल चलकर घोर कठिनाइयों का सामना किया।

शुद्धियों का विवरण निम्न प्रकार है:—
सेगावडा में २५ परिवार संख्या १२४।
बावड़िया में १८ परिवार संख्या ७८।
डोंगरगांव में ३४ परिवार संख्या १९६।
अहमदपुर सेगांव में ३१ परिवार संख्या १५४।

आर्य समाज खण्डवा ने निमाड़ जिले के समस्त ईसाई पादरियों को श्री स्वामी दिव्यानन्द जी सरस्वती से शास्त्रार्थ करने के लिए खुली चुनौती के रूप में निमन्त्रण दिया है। अतएव एक माह के अन्दर ईसाई पदारियों ने मौखिक एवं लिखित उत्तर नहीं दिया तो उनकी पराजय समझी जायगी।

इन्द्रदेवसिंह मन्त्री

शिवगंज आर्य समाज का तृतीय अधिवेशन

दिनांक २८, २९, ३० अप्रैल को शिवगंज आर्य समाज का तृतीय अधिवेशन बड़े ठाट-बाट के साथ श्री मोतीलाल जी परमार प्रधान श्रीराम कृष्ण गोपाल सेवा समिति शिवगंज की अध्यक्षता में मनाया गया।

मुख्य अतिथि गण श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ महारथी तथा श्री इंद्रसेन जी प्रेमी "चिमटा भजन मण्डली' आदि क्रमशः उपरोक्त उपदेशक तथा भजनोपदेशक के रूप में पधारे।

श्री ठाकुर साहब के प्रवचन बड़े ओजस्वी एवं आकर्षक रहे। हजारों की संख्या में जनता ने आपके अपूर्व प्रवचनों का लाभ उठाया। आपने आर्य, हमारा इतिहास और संस्कृति का विद्वता पूर्ण विवेचन कर जनता का सही पथ प्रदर्शन किया।

चिमटा और भजन मण्डली के मीठे भजनों की लय में जनता मुग्ध हो गई।

२८-४-५६ को विशाल जन समुदाय के साथ नगर कीर्तन का कार्यक्रम रहा। जिसमें भजनोपदेशकों के भजन बड़े आकर्षक रहे।

इस अधिवेशन में जनता जनार्दन का तथा प्रसार शिक्षण केन्द्र के ग्राम सेवकों स्थानीय हाई स्कूल के बालचरों तथा कन्या पाठशाला की छात्राओं का पूर्ण रूप से सहयोग रहा।

मन्त्री—आर्य समाज
शिवगंज पो० ऐरनपुरा

मेला में वेद प्रचार

लाडवा (करनाल, से अगाधरी जाने वाली सड़क पर आर्य साधु आश्रम वेद मन्दिर-ब्रह्म विद्यालय का प्रथम धार्मिक मेला १४ बैशाख से १७ बैशाख सं० २०१३ तक सानन्द सम्पन्न हुआ जिसमें प्रतिदिन वेद मन्त्रों द्वारा बृहद् यज्ञ होता रहा। उक्त कार्य-क्रमों के संचालनार्थ श्री स्वामी कृपानन्द जी महाराज पधारे जिनके महत्व पूर्ण प्रवचन हुए।

आर्य प्रचारक चौधरी नथासिंह जी एवं श्री ज्योति स्वरूप जी की दोनों भजन मण्डलियों ने लगातार चार दिन अखण्ड प्रचार किया और इन्होंने अपनी सेवायें आर्य साधुआश्रमको निशुल्क अर्पित की।

जनता पर वेद प्रचार का उत्साह वर्धक प्रभाव पड़ा।

स्वामी अभयानन्द सरस्वती
आर्य साधु आश्रम वेदमन्दिर ब्रह्मविद्यालय
पो० लाडवा, (करनाल)

ईसाई पादरी आर्यसमाज को शास्त्रार्थ का लिखित चैलेञ्ज देकर मैदान छोड़कर भाग गये

आर्य समाज रतलाम को एस० एस० डी० नामक पादरी महोदय ने एक्सप्रेसपत्र द्वारा चैलेंज दिया कि हिन्दू धर्म भयंकर दलदल में फंसा होने पर भी न मालूम क्यों पवित्र योशु धर्म का विरोध करते हैं। यदि इस धर्म में रत्ती भर भी सत्यता हो तो मैं १९ व २० अप्रैल को आर्य समाज से शास्त्रार्थ करने के लिये चैलेंज करता हूँ।

पादरी महोदय ने शास्त्रार्थ करने की तिथि १९ तथा २० अप्रैल रखी और हमें पत्र प्राप्त हुआ २० अप्रैल शाम को ठीक ३ बजे।

वास्तव में इसके तथ्य में बात यह पाई गई कि १५ दिसम्बर से १९ दिसम्बर तक छत्रपुर

(विन्ध्य प्रदेश) में इन लोगों ने ईसाई सम्मेलन किया था जिसमें कलकत्ता, मद्रास आदि प्रांतों के बड़े २ पादरियों ने भाग लिया था। उस सम्मेलन में ईसाइयों ने हिन्दू धर्म पर बड़े स्पष्ट शब्दों में आक्षेप किये थे। वहां की जनता ने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली को इसकी तार द्वारा सूचना दी। तब वहां से आर्य वीर दल के सेनापति श्री पं० ओम्प्रकाशजी तत्काल वहां पहुँच गये और उनके ओजस्वी भाषणों से ईसाइयों के पैर उखड़ गये तथा अपने अपशब्दों के लिये ईसाइयों को क्षमा मांगनी पड़ी थी।

ईसाई सम्मेलन की इस असफलता पर इन्हें ऊपरसे फटकार पड़ी। अब अपनी बनावटी सफलता दिखाने के लिये रतलाम में २३ अप्रैल से एक सप्ताह का ईसाई सम्मेलन रखा है किन्तु इन्हें फिर चिन्ता हुई कि यहां भी कभी कोई आर्य समाजी न आ जावे।

अतः बनावटी शास्त्रार्थ विजय दिखाने के लिये यह रास्ता निकाला था कि दिन के दिन समाज को लिखित चेलेंज दें, ताकि वे इतनी जल्दी प्रबन्ध करने में असमर्थता जाहिर करेंगे और जयमाला हमारे गले में पड़ेगी।

किन्तु पादरीजी को सदा ध्यान रखना चाहिये कि आकाश की बिजली और आर्य समाज का पंडित न जाने कब अचानक आ धमके आखिर वही हुआ, संयोगवश स्वामी वेदानन्द जी के यहां पधारने से ईसाईयों के पैरों के नीचे से धरती खिसक गई।

२१ ता० को शहर के बीच में ही पादरी जी से पूछा गया तो वे शीघ्रता से बिना ही उत्तर दिये भागने की कोशिश करने लगे जिससे उनकी मोटर साईकिल से समाज के एक अधिकारी का पैर भी कुचला गया।

२१ ता० की रात्रि को आर्य समाज की ओर से एक सार्वजनिक सभा की गई जिसमें श्रीवेदानन्द जी ने ईसाइयों की देश घातक करतूतों पर प्रकाश डाला।

भारत स्वतन्त्र होने के बाद खारवा, रसूलपुरा, गोदरा, प्रताप गढ़, उदयपुर, बांसवाड़ा, आवरा, मबुआ, भगोरिया, खंडवा, रतलाम आदि जिलों में लगभग एक लाख भीलों को धन बल पर ईसा की भेड़ों में शामिल किया जा चुका है।

इधर प्रचार की अत्यधिक कमी है। आशा है कि प्रतिनिधि सभायें अवश्य इधर ध्यान देवेंगी।

शिवशंकर शर्मा
मन्त्री आर्य समाज रतलाम
२२-४-५६

आर्य वीर दल ग्रीष्मकालीन सांस्कृतिक शिविर

जनता के शारीरिक, एवं चारित्रिक उत्थान के निमित्त आर्य वीर दल की ओर से दो शिविरों का आयोजन किया जा रहा है। पहला शिविर एक जून से दस जून तक सिहोर (भूपाल) में लग रहा है। इसके संयोजक हैं श्री गौरीशंकर जी कौशिक, सेनापति आर्य वीर दल मध्य भारत भूपाल। दूसरा शिविर ७ जून से १६ जून तक सम्भल (मुरादाबाद) में लग रहा है। इसके संयोजक है श्री चन्द्रपाल जी आर्य मंडलपति, आर्यवीर दल मुरादाबाद मंडल।

इन दोनों शिविरों में सैनिक अनुशासन होगा और व्यायाम, लाठी, खेल, स्वाध्याय, भाषण कला आदि के शिक्षण के साथ साथ विद्वान् लोगों के प्रवचनों का भी प्रबन्ध होगा। जो सज्जन इन शिविरों में भाग लेना चाहें वह तुरन्त ही श्री गौरीशंकर जी से आर्य समाज भूपाल और श्री चन्द्रपालजी से आर्य समाज बहजोई (मुरादाबाद) के पते पर पत्र व्यवहार करलें।

ओमप्रकाश पुरुषार्थी
प्रधान सेनापति
सार्वदेशिक आर्य वीर दल, दिल्ली-६

नैपाल नरेश का राज्याभिषेक

सार्वदेशिक सभा के प्रधान जी की ओर से बधाई का तार यथा समय भेजा गया था।

दान सूची
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली
१-३-१९५६ से २०-५-१९५६ तक

दान आर्य समाज स्थापना दिवस

१५) आर्य समाज गंगापुर सिटी।
५) गौरीशंकर जी आर्य समाज फाजिलका।
४०) आर्य समाज पठानकोट।
१०) ,, खड़गपुर (बंगाल)।
५) ,, टंकारा (सौराष्ट्र)।
३३।≡) ,, रायचूर (हैदराबाद स्टेट)।
१०१) ,, करौल बाग देहली।
११) बोर्डी के आर्य जन द्वारा विश्वनाथराव जी आर्य बोरडेकर कलम्ब।
५ विद्याभूषण, किसन जी भोपाल हिवरखेड़ रूपराव (अकोला)।
१५) ईश्वरदास एण्ड सन्स उज्जैन।
२५) आर्य समाज धारूर (फत्ताबाद) हैदराबाद स्टेट।
१०) आर्य समाज कठुआ (जम्मू)।
२५) ,, फतहपुर (करनाल)।
२०) ,, दीनानगर (गुरुदासपुर)।
९) रामचन्द्र आर्य समाज कायमगंज।
११) आर्य समाज कोटा (राजस्थान)।
२२) ,, गुना।
१५) ,, मोरवी (सौराष्ट्र)।
५०) ,, किशनपोल बाजार जयपुर।

४२७।≡)

विविध-दान

१०) श्री रामदासजी बत्रा पटेलनगर देहली।
१२) जनता स्टोर्स शाहदरा।
१३) आर्य समाज कार्कल।
५) श्री दामोदर जी भंडारी कार्कल।
५) हि० के० अनन्तैयाजी आ०स० हिरियडका
३) श्री निवास राव जी उडपी।

३५)

दान साहित्य प्रचार

१०) श्री शिवदयाल जी पानीपत (करनाल)।

१०) योग

सहायता मठ गुलनी अभियोग व्यय

५) श्री रामचन्द्र सहाय गर्ग एडवोकेट नगीना (बिजनौर)।

नैपाल नरेश का राज्याभिषेक जिस आर्य-पद्धति से हुआ उसका अभिनन्दन करते हुये सार्वदेशिक सभा के उपमन्त्री श्री शिवचन्द्र जी ने एक विशेष पत्र नैपाल नरेश को भेजा।

सार्वदेशिक सभा के काठमाँडू स्थित उपदेशक महोदय के तत्वावधान में बिहार सभा की ओर से 'वेद में राज्याभिषेक' शीर्षक एक छोटा ट्रैक्ट छपवाकर प्रचारित किया गया।

आर्य वीर दल वीरगंज के ५० स्वयं सेवकों ने नैपाल नरेश की शोभा यात्रा में सैनिक वेषभूषा में भाग लिया। ३ मई को स्टेडियम में नैपाल नरेश के निमन्त्रण पर आर्य वीरों ने व्यायाम और लाठी का शानदार प्रदर्शन किया। इस प्रदर्शन से प्रभावित होकर महाराजा नैपाल की ओर से आर्य वीर दल को १५००) का पारितोषिक दिया गया।

श्री वैद्यनाथ शास्त्री ईस्ट अफ्रीका में

श्री आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री वैदिक रिसर्च स्कालर आज कल ३ मास के लिए पूर्वी अफ्रीका गये हैं और वहां के भिन्न २ प्रदेशों का भ्रमण कर अगस्त मास में पुनः भारत वापस आवेंगे। अपने इस भ्रमण में वे आर्य समाजों को भी देखेंगे और ऋषि के सिद्धान्तों का प्रचार भी करेंगे। उनके इस भ्रमण का प्रोग्राम सेठ श्री नानजीभाई कालीदास मेहता ने बनाया है, समाजों के भ्रमण में आर्य प्रतिनिधि सभा इनकी उपस्थिति का लाभ लेकर प्रोग्राम बना रही है।

साहित्य समीक्षा

पूर्व जन्म स्मृति—लेखक श्री राजेन्द्र जी अतरौली (अलीगढ़) प्रकाशक–श्रीमद् दर्शनानन्द ग्रन्थागार, कृष्ण गगा, मथुरा पृष्ठ सं० ७४ मूल्य ।≈)

जैसा कि पुस्तक के नाम से स्पष्ट है कि इसमें पूर्व जन्म के सम्बन्ध में सच्ची घटनाओं के आधार पर यह सिद्ध किया गया है कि कुछ जीवात्मायें ऐसी भी होती हैं जिन्हें अपने पूर्व जन्म की घटनाओं का स्मरण इस जन्म में भी बना रहता है। इन घटनाओं से जहां यह सिद्ध होता है कि जीव पुनर्जन्म लेता है और वह मृत्यु के बाद अनेक योनियों में जाता रहता है वहां उन मतमतान्तरों के उस थोथे विश्वास की कलई खुल जाती है जो पुनर्जन्म में विश्वास नहीं रखते। सम्बन्धित पुस्तक में पुनर्जन्म की ३५ घटनाओं का स्पष्ट दिग्दर्शन कराया गया है। इनमें कई घटनायें तो इतनी प्रसिद्ध हो चुकी हैं कि उनमें किसी प्रकार का सन्देह रह ही नहीं जाता। इन घटनाओं का संग्रह करने में श्री पं०राजेन्द्र जी ने बहुत परिश्रम किया है तदर्थ वे बधाई के पात्र हैं।

पुनर्जन्म की घटनाओं के अतिरिक्त जीव किस प्रकार कितने दिन बाद पुनः शरीर धारण करता है। ईश्वर और आत्मा का अस्तित्व, आत्माओं को बुलाना पुनर्जन्म और मनुष्य आकृति आदि विषयों पर भी विवेचनापूर्ण ढंग से विचार किया है। मनुष्य मनुष्य के रूप में ही जन्म लेता है और स्त्री स्त्री के रूप में ही जन्म लेती है, इस प्रकार के विचार करने के लिये श्री पं० जी ने अपवाद रूप में एक घटना दी है जिससे यह विश्वास ठीक नहीं जचता। श्री पंडित जी ने बहुत प्रभावशाली ढंग पर पुनर्जन्म की मीमांसा की है परन्तु यह विषय अब भी विवादग्रस्त ही है कि जीव मरने के कितने दिन पश्चात् जन्म लेता है?

पुस्तक की छपाई और बाह्य आवरण सन्तोष-जनक हैं।

—निरंजनलाल

---

५) श्री प्रो० भीमसेन जी शास्त्री चुरू (राजस्थान)।
२५) आर्य समाज सोनीपत (रोहतक)।
५) ,, बानाभवन मुजफ्फर नगर।
८।।।–) ,, फुलेरा (राजस्थान)।
१०) श्री गौरीशंकर जी फाजिलका।
१०) श्री स्वामी दुःखरमनानन्द जी लोहरदगा (रांची)।
५) आर्य समाज पलवल (गुड़गांवा)।
२५) ,, मोती कटला जयपुर।
२६) ,, लातूर (हैदराबाद स्टेट)।
५०) ,, किशनपोल बाजार (जयपुर)।
२१४ ।।।–)

दान दाताओं को धन्यवाद। अभी तक भारत-वर्ष तथा विदेश की अनेक छोटी बड़ी समाजों से आर्य समाज स्थापना दिवस के उपलक्ष्य में दान का उनका भाग अप्राप्त है। यह राशि यदि किन्हीं कारणों से इस अवसर पर संग्रहीत न की जा सकी हो तो अब पूर्ण प्रयत्न करके संग्रह करें या अपने कोष से स्वीकार कर अति शीघ्र सभा के कोष में भिजवाने की कृपा करें।

सभा मन्त्री

सार्वदेशिक पत्र (हिन्दी मासिक)

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश] १० शिलिङ्ग। अर्द्ध वार्षिक ३ स्वदेश, ६ शिलिङ्ग विदेश।

२. एक प्रति का मूल्य ।।) स्वदेश, ।।=) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क वा नमूने की प्रति का मूल्य ।।=) स्वदेश, ।।।) विदेश।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये। चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा। पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने वा ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न देने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है कि उनकी इच्छा वी० पी० द्वारा चन्दा देने की है।

४. सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख को प्रकाशित होता है। किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय में अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा। डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं। अतः समस्त ग्राहकों को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये।

५. सार्वदेशिक का वर्ष १ मार्च से प्रारंभ होता है अंक उपलब्ध होने पर बीच वर्ष में भी ग्राहक बनाए जा सकते हैं।

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
६. पूरा पृष्ठ (२०×३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा " ८	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई ,,	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	३०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

७. सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

—व्यवस्थापक

'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार

कतिपय उत्तम ग्रन्थ

भजन भास्कर (तृतीय संस्करण) मू० १।।)

संग्रहकर्ता—श्री पं० हरिशंकर जी शर्मा कविरत्न भूतपूर्व सम्पादक 'आर्य मित्र' हैं।

यह संग्रह मथुरा शताब्दी के अवसर पर सभा द्वारा तय्यार करके प्रकाशित कराया गया था। इसमें प्रायः प्रत्येक अवसर पर गाये जाने योग्य उत्तम और सात्विक भजनों का संग्रह किया गया है।

स्त्रियों का वेदाध्ययन का अधिकार मू० १।)

लेखक—श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति

इस ग्रन्थ में उन आपत्तियों का वेदादि शास्त्रों के प्रमाणों के आधार पर खंडन किया गया है जो स्त्रियों के वेदाध्ययन के अधिकार के विरुद्ध उठाई जाती है।

आर्य पर्व्व पद्धति मू० १।)

(तृतीय संस्करण)

लेखक—श्री स्व० पं० भवानीप्रसाद जी

इसमें आर्य समाज के क्षेत्र में मनाये जाने वाले स्वीकृत पर्वों की विधि और प्रत्येक पर्व के परिचय रूप में निबन्ध दिये गये हैं।

श्री स्वा० ब्रह्ममुनि जी कृत ग्रन्थ

दयानन्द-दिग्दर्शन

दयानन्द के जीवन की ढाई सौ से ऊपर घटनाएं और कार्य वैयक्तिक. सामाजिक, राष्ट्रीय, वेद प्रचार आदि १० प्रकरणों में क्रमबद्ध हैं। २४ भारतीय और पाश्चात्य नेताओं एवं विद्वानों की सम्मतिया हैं। दयानन्द क्या थे और क्या उनसे सीख सकते हैं यह जानने के लिये अनूठी पुस्तक है। छात्र छात्राओं को पुरस्कार में देने योग्य है। कागज छपाई बहुत बढ़िया, पृ० संख्या ८४ मूल्य ।।।)

वेदान्त दर्शनम्	मू० ३)
अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	मू० २)
यम पितृ परिचय	मूल्य २)

पढने योग्य ग्रन्थ

१. वैदिक ज्योतिष शास्त्र (ले० पं० प्रियरत्न जी आर्ष)	" १।।)
२. स्वराज्य दर्शन (श्री पं० लक्ष्मी दत्त जी दीक्षित)	१)
३. आर्य समाज के महाधन (श्री स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी)	२।।)
४. राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती)	।।)
५. एशिया का वैनिस (श्री स्वामी सदानन्द जी)	।।।)
६. दयानन्द सिद्धान्त भास्कर (श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी)	१।।)

मिलने का पता—**सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा**

श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली ६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर
श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली-से प्रकाशित।

अंक

आषाढ़ २०१३

जौलाई १९५६

वर्ष ३१

मूल्य स्वदेश ५)

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ।।)

संध्या—गीत

(फरवरी ५६ के अङ्क से आगे)

(१२)

रवि-रश्मि के रचैया ! पावन प्रभा दिखा दो।
अज्ञान की तमिस्रा भूलोक से मिटा दो॥
देवों के देव ! अनुदिन हो दिव्य दृष्टि प्यारी।
श्रुति-गान को न भूले रसना कभी हमारी॥

(१३)

सुन्दर सुपथ दिखाया, मद-मोह लोभ टारा।
अज्ञान-तम मिटाया वर वेद-ज्ञान द्वारा॥
जीवन में ज्योति प्राणों में प्रेरणा तुम्हीं हो।
मन में मनन, बदन में बल—साधना तुम्ही हो॥

(१४)

आश्चर्यमय अलौकिक अद्भुत अपूर्व करनी।
हैं आप में अवस्थित अधि-अन्तरिक्ष अवनी॥
माया-मृषा मिटा कर मन्तव्य मग दिखाओ।
भव-बन्धनों से भगवन इस भक्त को छुड़ाओ॥

(१५)

विधना ! विनय यही है मैं वीरवर कहाऊं।
होकर शतायु, स्वामिन ! तुमसे लगन लगाऊं॥
सौ साल तक हमारी आँखें हों ज्योति धारी।
हों श्रोत्र श्रव्यशाली सूक्ष्म सदा सुखारी॥

(१६)

वाणी. विराट विभु की, विरदावली सुनावे।
परतन्त्रता है पातक, स्वातन्त्र्य मन्त्र गावे।
सौ वर्ष से अधिक भी जीवित रहें करारी।
सर्वाङ्ग की क्रियाएं स्थिर रहें हमारी॥

सामवेद

सम्पादक—
सभा मन्त्री
सहायक सम्पादक—
श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

अथर्ववेद

विषय-सूची

१. वैदिक प्रार्थना		२२६
२. सम्पादकीय		२३०
३ मृत्यु पर विजय	(श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति)	२४१
४. धर्म के स्तम्भ	(श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक)	२४५
५. ऋषि दयानन्द के पत्रों और विज्ञापनों का महत्त्व	(श्री पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक)	२४७
६. आर्य समाज गति की ओर	(श्री प्रो० रामचन्द्र शर्मा एम• ए०)	२५४
७. जोधपुर के सरकारी कार्यालय में महर्षि दयानन्द विषयक कुछ आवश्यक उल्लेख	(श्री भवानीलाल जी भारतीय एम० ए०)	२५७
८. स्वाध्याय का पृष्ठ		२५८
९. महर्षि जीवन चरित्र शंका समाधान		२६२
१०. सभा मन्त्री का दौरा		२६५
११. उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान मे गोवध अब भी ·· ···		२६६
१२. वेदोत्पत्ति—क्यों ? कब ? कहां ? और किसके द्वारा हुई ?	(श्री पं० सुरेन्द्र शर्मा जी गौर)	२६७
१३. वृक्षों में जीव	(श्री लाखनसिंह जी वैद्य)	२६८
१४. बाल-जगत्	(श्री डा० मुन्शीराम जी शर्मा एम० ए० पी० एच० डी०)	२७०
१५. महिला जगत	(इतिहास का एक विद्यार्थी)	२७१
१६. विविध सूचनाएं		२७३

❀ ओ३म् ❀

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३१ } जौलाई १९५६, आषाढ़ २०१३ वि०, दयानन्दाब्द १३३ { अङ्क ५

वैदिक प्रार्थना

ऋजुनीती नो वरुणो मित्रो नयतु विद्वान् ।
अर्यमा देवैः सजोषाः॥ ऋ० १ । ६ । १७ । १ ॥

व्याख्यान—

हे महाराजाधिराज परमेश्वर ! आप हमको "ऋजु०" सरल (शुद्ध) कोमलत्वादिगुणविशिष्ट चक्रवर्ती राजाओं की नीति को "नयतु" कृपादृष्टि से प्राप्त करो, आप "वरुण" सर्वोत्कृष्ट होने से वरुण हो, सो हमको वरराज्य, वरविद्या, वरनीति देओ तथा सब के मित्र शत्रुता रहित हो हमको भी आप मित्रगुणयुक्त न्यायाधीश कीजिये तथा आप सर्वोत्कृष्ट विद्वान् हो हम को भी सत्य-विद्या से युक्त सुनीति देके साम्राज्याधिकारी सद्यः कीजिये तथा आप "अर्य्यमा" (यमराज) प्रियाप्रिय को छोड़ के न्याय में वर्तमान हो सब संसार के जीवों के पाप और पुण्यों की यथायोग्य व्याख्या करने वाले हो सो हम को भी आप तादृश करें जिससे "देवैः, सजोषाः" आपकी कृपा से विद्वानों वा दिव्यगुणों के साथ उत्तम प्रीतियुक्त आप में रमण और आपका सेवन करने वाले हों, हे कृपासिन्धो भगवन् ! हम पर सहायता करो जिससे सुनीतियुक्त होके हमारा स्वराज्य अत्यन्त बढ़े ।

सम्पादकीय

विश्व साहित्य में सत्यार्थप्रकाश का स्थान

किसी ग्रन्थ के सम्बन्ध में ठीक २ सम्मति बनाने के लिए हमें निम्नलिखित बातों पर विचार करना चाहिये ।

(१) ग्रन्थ कर्त्ता ने उसे किस उद्देश्य से लिखा है ?

(२) क्या ग्रन्थ का विषय प्रतिपादन उस उद्देश्य के अनुकूल ही है ?

(३) क्या ग्रंथ में किसी प्रकार का पक्षपात किया है ? और सबसे अन्तिम विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या उसके प्रभाव से संसार की अशान्ति में वृद्धि हुई है ?

इनमें से सबसे पहले प्रश्न का उत्तर स्वयं सत्यार्थ प्रकाश में विद्यमान है। ग्रथ की भूमिका के निम्नांकित वाक्यों से महर्षि दयानन्द ने जिस उद्देश्य से सत्यार्थप्रकाश को लिखा है वह स्पष्ट हो जाता है ।

"मेरा इस ग्रन्थ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य अर्थ का प्रकाश करना है अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है । वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाय। किन्तु जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा ही कहना लिखना और मानना सत्य कहाता है। जो मनुष्य पक्षपाती होता है वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मत वाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है। इसलिए वह सत्य मत को प्राप्त नहीं हो सकता। .... मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्या आदि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है। परन्तु इस ग्रंथ में ऐसी बात नहीं रक्खी है और न किसी का मन दुखाना वा किसी की हानि पर तात्पर्य है। किन्तु जिस से मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो। सत्यासत्य को मनुष्य लोग जानकर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।"

महर्षि दयानन्द ने ग्रंथ के आरम्भ में जिस प्रयोजन की घोषणा की है संसार के मतमतान्तरों की आलोचना करने से पूर्व ११ वें समुल्लास की अनुभूमिका में भी उसी को दोहराया है। आपने लिखा है—

"पक्षपात छोड़कर इसको देखने से सत्यासत्य मत सबको विदित हो जायगा पश्चात् सब अपनी २ समझ के अनुसार सत्य मत का ग्रहण करना और असत्य मत को छोड़ना सहज होगा । इनमें से जो पुराणादि ग्रन्थों से शाखा शाखान्तर रूप मत आर्यवर्त्त देश में चले हैं उनका संक्षेप से गुण दोष इस ११ वें समुल्लास में दिखाया जाता है। इस मेरे कर्म से यदि उपकार न मानें तो विरोध भी न करें क्योंकि मेरा तात्पर्य किसी की हानि वा विरोध करने में नहीं किन्तु सत्यासत्य का निर्णय करने कराने का है।"

इन दोनों उद्धरणों से वह उद्देश्य सर्वथा स्पष्ट हो जाता है जिसकी पूर्ति के लिए महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश तथा अपने अन्य ग्रंथ लिखे हैं। महर्षि ने अपने इस अभिप्राय को

अपने लेखों और भाषणों में सैकड़ों बार प्रकाशित किया कि "मेरा मुख्य प्रयोजन असत्य का खण्डन और सत्य का मण्डन करना है।" महर्षि सत्य का कितना आदर करते थे यह इससे भी स्पष्ट होता है कि उन्होंने आर्य समाज के दस नियमों में चौथा नियम निम्नलिखित रक्खा है।

"सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।"

हमने यह देख लिया कि ग्रंथकर्त्ता ने सत्यार्थ प्रकाश सत्य के प्रकाशित करने के लिए लिखा है। अब हमारे सामने दूसरा प्रश्न यह आता है कि क्या सत्यार्थ प्रकाश का विषय प्रतिपादन उस प्रयोजन के अनुकूल भी है जिसकी उसके आदि और मध्य में घोषणा की गई है। यह तो सम्भव है कि सत्यार्थप्रकाश का पढ़ने वाला व्यक्ति उसकी कुछ बातों से असहमत हो परन्तु यदि वह पक्षपात की ऐनक को उतार कर सत्यार्थ-प्रकाश के समस्त समुल्लासों को पढ़ेगा तो वह इस परिणाम पर पहुँचे बिना नहीं रह सकता कि ग्रंथकर्त्ता ने युक्ति और प्रमाण की सहायता से सत्य पर पहुंचने का प्रयत्न किया है। वस्तुतः महर्षि का सारा जीवन ही सत्य की तह तक पहुंचने और उसका प्रचार करने में व्यतीत हुआ है। शिवरात्रि के जागरण के समय उनके अन्तःरात्मा में जो जिज्ञासा उत्पन्न हुई वह वस्तुतः ईश्वर के सत्य स्वरूप की जिज्ञासा ही थी। वही जिज्ञासा उन्हें घर के और ससार के बन्धनों से अलग ले गई और उसी सत्य की जिज्ञासा ने उन्हें बरसों तक जंगलों और पहाड़ों में घूमने और अनेक प्रकार के कष्ट सहने के लिए बाधित किया। जब इन सब प्रयत्नों में भी सत्य की प्यास न बुझी तब महर्षि मथुरा जाकर गुरुवर दण्डी विरजा नन्द जी की सेवा में उपस्थित हुए और वेदादि ग्रन्थों का अध्ययन किया अध्ययन समाप्त करके और गुरु से आशीर्वाद प्राप्त करके महर्षि कार्य क्षेत्र में उतर गए और जो ज्ञान प्राप्त किया था उसका प्रचार करने लगे। विशेष स्मरणीय बात यह है कि प्रचार कार्य आरम्भ कर देने पर भी महर्षि ने सत्य की जिज्ञासा का द्वार बन्द नहीं किया और असत्य के त्यागने और सत्य के ग्रहण करने में सदा तत्पर रहे। प्रारम्भ में आप वैष्णव सम्प्रदाय का खण्डन और शैव सम्प्रदाय का मण्डन करते थे। कुछ समय के पश्चात् महर्षि को विश्वास हो गया कि जैसे वैष्णव सम्प्रदाय में अनेक भ्रमात्मक विचार और रूढ़ियों का प्रवेश हो गया है शैव सम्प्रदाय में भी उसी प्रकार अनेक कुविचार और कुरीतियां घुस गई हैं। तब महर्षि सभी प्रकार की मूर्ति पूजा का खडन करने लगे। सत्यार्थ प्रकाश का पहला संस्करण प्रकाशित हो जाने पर जब उन्हें यह विदित हुआ कि उसमें अनेक सत्य विरुद्ध बातें आ गई हैं तो उन्होंने उस संस्करण को रद्द करके दूसरा सस्करण प्रकाशित करने मे विलम्ब नही किया। वे जीवन भर सत्य के जिज्ञासु और जिसे सत्य समझते थे उसके प्रचारक बने रहे।

तीसरा प्रश्न यह है कि सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि दयानन्द ने किसी मत वा सम्प्रदाय का पक्षपात किया है या नहीं? जो लोग सत्यार्थ-प्रकाश को पढ़े विना ही केवल सुनी सुनाई बातों के आधार पर सम्मति बना लें अथवा केवल उसी भाव को पढ़कर सम्मति बनाए जिसमें उनके अपने परम्परागत सम्प्रदाय की आलोचना की गई है, उनकी सम्मतियों को छोड़ दीजिए और पूरे सत्यार्थ प्रकाश को पढ़ जाइये तो फिर आप चाहे किसी मत के अनुयायी हों आपको स्वीकार करना पड़ेगा कि महर्षि ने विविध धर्म और मत मतान्तरों की आलोचना करने में अणुमात्र का भी पक्षपात नहीं किया।

पौराणिक जैन, ईसाई और मुसलमान के माने हुए साम्प्रदायिक विचारों तथा रूढ़ियों की एक ही कसौटी पर कस कर परीक्षा की है। उनके तर्क की कैंची उन सब विचारों पर एक ही रही है जिन्हें वह भ्रमपूर्ण मानते हैं। कुछ लोगों को यह कहने की आदत पड़ गई है कि स्वामी दयानन्द मुसलमानों के शत्रु थे। उन्होंने इतिहास का अध्ययन नहीं किया। यदि वे पक्षपात हीन दृष्टि से गत सौ वर्षों से धार्मिक सुधार का अध्ययन करते तो उन्हें विदित होता कि महर्षि दयानन्द और उन द्वारा स्थापित आर्य समाज को अपना विरोधी और शत्रु समझने वाले सनातन विचारों के हिन्दू तथा कुछ समय के पश्चात् ईसाई पादरी आर्य समाज को अपना मुख्य प्रतिद्वन्द्वी मानने लगे। इसी बीच में कुछ अन्य मतवादियों में भी सत्यार्थ प्रकाश की आलोचनाओं के आधार पर महर्षि दयानन्द और आर्य समाज के प्रति विरोध की भावना उत्पन्न हो गई। आर्य समाज को अपना शत्रु समझने वालों में समय की दृष्टि से सब से अन्तिम नम्बर मुसलमानों का था। मुसलमानों के विरोध में जो तीव्रता उत्पन्न हुई उसका कारण यह था कि अपने विरोध को प्रगट करने के लिए अदूर दर्शी मुसलमानों ने जिन साधनों का प्रयोग किया वे बहुत उग्र थे। उन्होंने तर्क का उत्तर छुरे से और प्रचार का उत्तर गोली से दिया। छुरे और गोली से घबराकर बहुत से राजनैतिक नेता उनके प्रयोग के लिए आर्य समाज को जिम्मेदार ठहराने लगे। परन्तु वे यह भूल गए कि ऐसे सभी कांडों में महर्षि दयानन्द के शिष्य कभी आक्रांता नहीं बने सदा शिकार ही बनते रहे हैं। इतने कांडों के पश्चात् भी महर्षि के शिष्यों ने छुरे का उत्तर तर्क से और गोली का उत्तर प्रचार से ही दिया है, यह सिद्ध करने के लिए कि सत्यार्थ प्रकाश अशान्ति की शिक्षा नहीं देता, अपितु वह अशान्ति का उत्तर शान्ति से देना सिखाता है।

सच्चे सुधारक का काम सदियों से जमी हुई रूढ़ियों और भ्रान्त विचारों को तोड़ना है। यह काम बहुत कठिन और अप्रिय है। सुधारक को बहुत सी ऐसी बातें कहनी पड़ती हैं जिनसे रूढ़ि के भक्तों को चोटें पहुंचती हैं। संसार में सभी सुधारकों को विरोध का सामना करना पड़ा है। रूढ़िवादी लोग बुरा कहते हैं यह युक्ति किसी सुधारक को बुरा समझने के लिए पर्याप्त नहीं है। सुधारक के सम्बन्ध में ठीक सम्मति बनाने के लिए इन प्रश्नों का उत्तर पाना आवश्यक है कि सुधारक का उद्देश्य क्या था, उसने जो कुछ कहा या लिखा उद्देश्य के अनुकूल था या नहीं, सुधारक ने रूढ़ियों की अग्निपरीक्षा करने में पक्षपात से काम तो नहीं लिया और उसके प्रचार से मनुष्य समाज में अशान्ति या अनीति की वृद्धि तो नहीं हुई।

महर्षि दयानन्द और उनके सत्यार्थ प्रकाश के सम्बन्ध में इन चारों प्रश्नों पर गम्भीरता से विचार करें तो हम इस परिणाम पर पहुँचे बिना नहीं रह सकते कि उन पर पक्षपात अथवा अनुदारता के जो आरोप लगाये जाते हैं वे सर्वथा निर्मूल हैं। वस्तुतः सत्यार्थ प्रकाश का स्थान तो विश्व के धार्मिक साहित्य में होना चाहिए क्योंकि वह मनुष्यों को रूढ़ियों के माया जाल को काटने और तर्क द्वारा सत्य तक पहुंचने का रास्ता बतलाता है।

इन्द्र विद्यावाचस्पति

× सम्पादकीय टिप्पणियाँ ×

पंजाब में आर्य समाज का आन्दोलन

पन्त-तारा सिंह फार्मूले का सांस्कृतिक भाग इस प्रकार है जिसका आर्यसमाज विरोध कर रहा है—

१—भाषा के आधार पर पंजाब के दो क्षेत्र

बनाए जायेंगे। एक का नाम पंजाबी क्षेत्र होगा और दूसरे का हिन्दी क्षेत्र।

२—पंजाबी क्षेत्र में जालन्धर डिवीजन और पेप्सू का पंजाबी बोलने वाला भाग सम्मिलित होगा। उसकी राज भाषा पंजाबी होगी और जिला स्तर तक उसका सारा अदालती और सरकारी कार्य पंजाबी में होगा। हाँ, स्कूलों में बच्चों को हिन्दी के माध्यम से भी शिक्षा दिलाई जा सकेगी शर्त यह है कि पहली ४ श्रेणियों में कम से कम ४० विद्यार्थी हिन्दी के माध्यम से पढ़ने की माँग करें और उच्च कक्षाओं में एक तिहाई। परन्तु यह सुविधा पंजाब के लड़कों के लिए होगी पेप्सु के विद्यार्थी इस सुविधा से लाभ न उठा सकेंगे।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब और आर्य प्रादेशिक सभा के १७ जून के जालन्धर के संयुक्त सम्मेलन में दोनों सभाओं की ओर से निम्न लिखित ७ माँगें राज्य से की गई हैं।

१—सम्पूर्ण नए पंजाब में राज्य में एक ही भाषा योजना लागू होनी चाहिये।

२—शिक्षा संस्थाओं में शिक्षा के माध्यम का चुनाव पूरी तरह माता पिता की इच्छा पर छोड़ देना चाहिये।

३—किसी भी विशेष स्तर पर दोनों भाषाओं में से किसी एक का द्वितीय भाषा के रूप में पढ़ाया जाना अनिवार्य न होना चाहिये।

४—शासन के प्रत्येक स्तर पर अंग्रेजी भाषा का स्थान हिन्दी को दिया जाना चाहिये।

५—जिले के स्तर या उससे नीचे की सरकार की सब सूचनायें और निर्देश दोनों भाषाओं में होने चाहिये।

६—जिले स्तर तथा उसके नीचे के सरकारी कागजात दोनों लिपियों में होने चाहियें।

भाषा के आधार पर देश का विभाजन अव्यावहारिक और देश की एकता एवं संगठन के लिए विघातक है। पन्त-तारासिंह फार्मूला में अल्पसंख्यकों के हितों को तुष्टि करण की नीति पर बलि कर दिया गया प्रतीत होता है। पंजाबी क्षेत्र में हिन्दी को माध्यम रखने की सुविधा दी गई है परन्तु वह इतनी कड़ी है कि उससे लाभ उठाना सरल न होगा। पेप्सू के सम्बन्ध में जो शर्तें रखी गई है वह नितान्त हास्यास्पद है। बच्चों के अभिभावकों को अपने बच्चों की पढ़ाई का माध्यम चुनने की स्वतन्त्रता होनी ही चाहिये। आर्य समाज अपने जन्म दिन से हिन्दी का प्रचार करता आ रहा है और वह ऐसा करना सांस्कृतिक कर्तव्यानुष्ठान समझता है। पन्त-तारा सिंह फार्मूला से हिन्दी के अपदस्थ हो जाने की आशंका है।

इसलिये आर्य समाज को आन्दोलन करना पड़ रहा है। आर्य समाज आन्दोलन के लिये आन्दोलन नहीं किया करता। यह आर्य समाज का यश है। आशा है आर्य समाज इस यश की रक्षा करेगा और राज्य आर्य समाज की मांग को स्वीकार करके इस यश का समुचित आदर करेगा जैसा कि वह करता आया है। यह बात राज्य और जनता पर सुस्पष्ट है और यही बात आर्य समाज के आन्दोलन को औचित्य प्रदान करके उसमें बल का संचार करती है। आशा है राज्याधिकारी इस पर विचार करके आर्य समाज की मांग को स्वीकार करने का ईमानदारी से यत्न करेंगे।

हमारा धर्म प्रचार

आर्य समाज धर्म प्रचारक समाज है। इसके प्रत्येक सदस्य से धर्म का प्रचार करने की आशा

की जाती है। इस कार्य के लिये दो प्रकार की योग्यताएँ आवश्यक हैं। एक तो ज्ञान की और दूसरे आचरण की। बिना आचरण के उपदेश नीरस और पाखण्ड जान पड़ता है। स्वाध्याय, श्रवण, मनन और सत्संग के द्वारा उस ज्ञान को क्रिया में लाकर विशुद्ध आर्योचित जीवन बनाने और व्यतीत करने से आचरण की योग्यता आती है।

प्रचार के ३ साधन होते हैं। वाणी, लेखनी और चरित्र। धर्म प्रचार का लक्ष्य धर्म का परिज्ञान कराना धर्म को प्रतिष्ठित करके उसका प्रसार करना तथा लोगों को धार्मिक बनाना होता है। धर्म के प्रचार का क्षेत्र सर्व प्रथम अपना परिवार तथा समाज होता है।

जब तक आर्य समाज के सदस्यों ने अपने को धर्म प्रचारक समझ कर उसके लिये अपने को तय्यार किया और तय्यार रखा तब तक आर्य समाज के प्रचार का न केवल विस्तार ही खूब हुआ वह गहरा भी बना। उसके सामने उपदेशकों एवं साहित्य के अभाव की समस्या भी जटिल रूप में समुपस्थित न हुई और न हमारा प्रचार आर्य समाज की वेदि तक ही सीमित रहा। आज अवस्था यह है कि पग २ पर उपदेशकों की कमी खटकती है। वैतनिक प्रचारकों के कन्धो पर प्रचार का कार्य डालकर आर्य समासद् प्रचार कार्य के प्रति अपने दायित्व से मुक्त हुआ समझ कर निश्चिन्त हो जाते हैं। प्रचारकों की पृथक् श्रेणी का प्रादुर्भाव बहुत अच्छी बात नहीं है। वेतन वा भेंट प्रथा इन दोनों का आश्रय लेने से सच्चे और निर्भीक उपदेशकों में कमी हो जाने यथोचित सम्मान न होने अवांछनीय व्यक्तियों का अनुचित सम्मान होने तथा उनकी संख्या वृद्धि हो जाने का भय रहता है। आर्य समाज वर्तमान में इस आरोप से सर्वथा मुक्त नहीं कहा जा सकता। इस अव्यवस्था का एक परिणाम यह हो रहा है कि आर्य समाज को दोहन करने वाले स्वयंभू उपदेशकों की एक श्रेणी बनती जा रही है जिसके कारण आर्य समाज के व्याख्यान सर्व साधारण की तफरीह के साधन बन जाते हैं और अच्छे श्रोताओं में कमी आ जाती है। दूसरा परिणाम अधिकांश उपदेशकों के वैयक्तिक जीवन को देख कर जब वे वेदी से पृथक् होते हैं निराशा में परिणत हुआ देख पड़ता है। आर्य समाजकी वेदिका दल गत राजनीति के लिये प्रयोग एक दम अवांछनीय है जो हमारे धर्म प्रचार की प्रौढ़ता तथा संगठन को हानि पहुंचा रहा है। महर्षि दयानन्द के श्रोताओं में सुधार की भावना जाग्रत हुआ करती थी। तभी उनका प्रचार सफल होता था। धर्मोपदेश में क्या रखा जाय और क्या न रखा जाय इसका उन्हें बड़ा ज्ञान और ध्यान रहता था। महर्षि के प्रवचनों में उनके ज्ञान विज्ञान की अपेक्षा सिद्धान्तों पर उनकी अटूट दृढ़ता, अधिक कार्य करती थी। जीवन से ही जीवन प्राप्त हुआ करता है। वे श्रोताओं के लिये बोलते और लिखते थे, अपने लिये वा अपने पांडित्य के प्रदर्शन के लिये नहीं। उनका उद्देश्य पाठकों और श्रोताओं का मनोरंजन न होकर असत्य का खण्डन एवं सत्य का मंडन रहता था। उनके उपदेश से कठोर हृदय पिघल जाते, अन्धकार नष्ट हो जाता और घायल हृदय स्वस्थ होकर आध्यात्मिक प्रका। से आलोकित हो जाते थे। उपदेश के लिये उन्हें उपदेश से प्रेम न रहता था अपितु जिन्हें वे उपदेश देते थे उनसे प्रेम रहता था।

यह आदर्श था जो धर्म प्रचार का महर्षि ने हमारे सामने रखा। इसी को अपनाने में हमारा कल्याण है।

महर्षि दयानन्द ने सिद्धान्तों के मौखिक एवं लिखित प्रचार समाज संशोधन और समाज सेवा का क्रम साथ २ रखा। आर्य समाज ने भी इस

क्रम को जारी रखा हुआ है परन्तु अब अवस्थाएँ बहुत बदली हुई हैं। खण्डन के काम को ढील देने से अनार्य सिद्धान्तों का प्रसार और प्रभुत्व बढ़ रहा है। इधर विशेष ध्यान देना होगा। अपने सिद्धान्तों तथा विविध मतों एवं संस्कृतियों के तुलनात्मक अध्ययन के प्रकांड पांडित्य और मधुर तर्क से समन्वित खण्डन ही प्रभाव शाली हो सकता है। अपना ऐसा साहित्य उत्पन्न करना आवश्यक है जो मुख्यतया बुद्धि जीवी लोगों को प्रभावित कर सके। ऐसे उपदेशकों से समाज को अलंकृत करना भी आवश्यक है जिनकी विद्वत्ता और धार्मिकता बड़े से बड़े व्यक्ति से लेकर जन सामान्य तक को प्रभावित कर सके। समाज संशोधन तथा सेवा का आर्य समाज का दायित्व कुछ हलका हो गया है। कुछ कार्य तो विविध सामाजिक संस्थाओं ने और कुछ राज्यों ने संभाल लिया है। इस कार्य को ठीक दिशा में रखने की आवश्यकता है। एक मात्र समस्त शक्ति का इस पर लगाया जाना दूरदर्शिता पूर्ण कार्य न होगा अधिकांश शक्ति मौखिक और लिखित प्रचार एवं चरित्र निर्माण पर लगनी चाहिये।

इतिहास की एक दुःखद घटना

रूस के वर्तमान कर्णधारों के द्वारा रूस के महाप्रभु स्टालिन की स्मृति को मिटाने के साथ २ उसकी क्रूरताओं और मानवता का अपमान करने के अपराधों के लिए उसकी मृत्यु के पश्चात् उस पर अभियोग चलाने की भी चर्चा हो रही है। क्या बदला लेने का यह ढंग सभ्य है? घृणा के इस प्रदर्शन से इतना तो स्पष्ट ही है कि स्टैलिन का केन्द्रीय साम्यवादी समिति के सदस्यों के हृदयों पर प्रेम का नहीं अपितु आतंक का राज्य था। कहा जाता है कि साम्यवादी समिति के अनेक सच्चे और विशिष्ट व्यक्ति स्टैलिन के भय, सनक, आशंका और अविश्वास जनित कल्पित अपराधों पर मौत के घाट उतारे गये अनेकों को भीषण यन्त्रणाएँ सहन करनी पड़ीं, अनेकों को अपमान का जीवन व्यतीत करना पड़ा और अनेकों को निर्वासन की असह्य स्थिति में रहना पड़ा। कहा जा सकता है कि उसने यह सब कुछ रूस की काया पलट करने और उसे शक्तिशाली राष्ट्रों की पंक्ति में ला बिठाने के लिये किया। उसकी ये सफलताएं उसके व्यक्तित्व और मान मर्यादा के लिये मंहगी सिद्ध हुई प्रतीत होती है। वर्तमान रूसी प्रवक्ता उसपर यह आरोप लगा रहे हैं कि उसने तानाशाह बन कर कार्य-कर्त्ताओं की स्वाभाविक सृजना शक्ति का विकास कुण्ठित किया, सामूहिक नेतृत्व के सिद्धान्त का गला घोंट कर और साम्यवादी दल की प्रजातंत्रीय पद्धति की अवहेलना करके व्यक्तिवाद के सिद्धांत को अपनाया। उसने अनुचित उपायों और अत्याचार का आश्रय लेकर अर्थ व्यवस्था में गड़बड़ उत्पन्न की। कृषि और द्वितीय महा समर के प्रारम्भिक संचालन में भयंकर भूलें कीं इत्यादि २। प्रश्न यह है कि क्या स्टालिन के रूस के इतिहास से मिटा दिये जाने से वहां एक नये स्वर्ग की सृष्टि हो जायगी? क्या साम्यवाद की प्रणाली के प्रति लोगों का आकर्षण बढ़ जायगा? क्या रूस के लोग स्वतन्त्र प्रजातन्त्र प्रणाली की मुक्त हवा में श्वास लेने लग जायेंगे? क्या व्यक्तित्व का कुचला जाना बन्द हो जायगा? इन प्रश्नों के सन्तोषजनक समाधानसे ही वर्तमान 'शुद्धि' का औचित्य प्रतिपादित हो सकेगा। अन्यथा यह 'शुद्धि' बदला लिया जाना माना जायगा। रूस के वर्तमान कर्णधारों को अपने को स्टालिन से महान् सिद्ध करना है जो स्टालिन को नहीं वरन् स्टालिनवाद को समाप्त करने और साम्यवाद को पवित्र मानवीय प्रणाली का रूप देने से ही सम्भव हो सकता है।

अपने ही लोगों विशेषतः साथ में काम करने

वाले लोगों के हाथों स्टालिन की यह दुर्गति तानाशाहों के लिए एक कड़ी चेतावनी है। तानाशाही बुरी वस्तु है परन्तु जब यह प्रजातन्त्र व्यवस्था में व्याप्त हो जाती है तब बहुत बुरी बन जाती है। अपने विरोधियों और विरोधी विचारों को सहन न करने में इसका प्रादुर्भाव होता है। अवसर मिलने पर इसका अन्त भी बड़ा निर्दय होता है। भय से आतंकित हृदयों में भी गुप्त आत्म-गौरव होता है और सतत अत्याचार उन्हें भयंकर विद्रोही बना देता है। यदि यह बात न होती तो मुर्दों को कब्रों में से निकाल कर उन्हें फांसी पर चढ़ा कर लोग बदले की आग को शान्त न करते और मरे हुए विरोधियों पर मुकदमा चलाने की बातें सामने न आतीं। परन्तु यह पाप है और कायरता है।

यह सत्य है कि जाति को अकेला एक ही व्यक्ति उतना ऊंचा उठा देता है जितना न सेनाएं उठा सकती हैं और न संगठन। ऐसा व्यक्ति संसार पर अपनी छाया का प्रसार कर देता है परन्तु ऐसे वे ही व्यक्ति होते हैं जो साध्य की उच्चता के साथ साधनों की उच्चता को जोड़ते और लोगों में परमात्मा का भय भरते हैं अपना नहीं। निस्सन्देह स्टालिन महोदय ने अपनी छाया का अमित प्रसार किया परन्तु लोगों के हृदयों में से परमात्मा का भय निकाल कर और अपना भय भर कर। इसी लिए उन्हें इतिहास की एक महान् दुःखद घटना बनना पड़ा।

म० स्टालिन उस ढांचे की उपज थे जो हिंसा, बल प्रयोग और रक्तपात के साधनों में आस्था रखता है। जिसमें मानव की भौतिक उन्नति को तो स्थान प्राप्त है परन्तु उसके समष्टि से पृथक् अस्तित्व और मानव जीवन की पवित्रता में विश्वास नहीं है। उन्होंने पार्टी को बना बना कर रक्त पूर्ण आत्म-संवर्द्धन का मार्ग अपनाया। उन्होंने अपने जीवन में हिंसा और कटुता को व्याप्त किया। वही हिंसा उनके मरने के बाद उनसे खुल कर बदला ले रही है और रूस आत्म-आलोचना की रंग स्थली बना हुआ है।

बिरादरी की सभा की सदस्यता

एक आर्य सज्जन लिखते हैं:— "मैं स्थानीय आर्य समाज का मन्त्री हूं तथा साधारणतया ३० वर्ष से समाज की सेवा करता आरहा हूं। यूं तो मैं वैश्य कुल में पैदा हुआ हूं। हाल में ही मेरे नगर की वैश्य सभा ने अपनी सभा का सदस्य बनने के लिए मुझे कहा है। मुझे समझ में नहीं आता कि एक छोटे दायरे में क्योंकर प्रविष्ट हो जाऊँ। कृपया मुझे सुझाव दीजिए ताकि उसी के मुताबिक कार्य करूं।"

यह उचित और वांछनीय नहीं है कि आर्य समाजस्थ जन जन्म गत बिरादरियों की सभाओं के सदस्य बनें। यदि वे इतने प्रभाव युक्त हों कि अपने प्रभाव से उन सभाओं को आर्य मन्तव्यों की ओर प्रेरित कर सके तो भी परामर्श दाता बन जायें। सम्मति दाता सदस्य न बनें।

दयानन्द पुरस्कार

सार्वदेशिक सभा ने उपर्युक्त पुरस्कार से सम्मानित करने के लिए आर्य ग्रंथकारों के ग्रन्थ मंगाये थे। प्राप्त ग्रन्थों में से निम्न लिखित ३ ग्रन्थ विद्वत मण्डल के सुपुर्द किए जाने का निश्चय हुआ था:—

(१) वैदिक ज्योति
लेखक श्री वैद्यनाथ जी शास्त्री

(२) वेद का राष्ट्रीय गान
ले० श्री आचार्य प्रियव्रत जी

(३) वेदान्त दर्शनम् का भाष्य
ले० श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी

इन तीनो ग्रन्थों पर क्रमशः ५००), ३००) और २००) के पुरस्कार दिये जाने का निश्चय हुआ है।

इन ग्रन्थकारों को हम हार्दिक बधाई देते हैं।

डा० अम्बेदकर और ब्राह्मण

उपर्युक्त शीर्षक से गोधन' लिखता है:—

डाक्टर अम्बेदकर को जब भी समय मिला सवर्ण हिन्दुओं, विशेषत. ब्राह्मणों के विरुद्ध अनुचित विषवमन करना उनका स्वभाव ही बन गया है। इन दिनों डाक्टर साहिब भगवान् बुद्ध के भक्त बने हुए हैं। ४४ जून १६५६ को डाक्टर अम्बेदकर जी ने अखिल भारतीय बौद्ध जन महासभा में भाषण करते हुए कहा कि "ब्राह्मणों ने जितनी गौ वध की हैं उतनी अंग्रेज और मुसलमानों ने भी मिल कर नहीं की होगी।" जेसा कि डाक्टर अम्बेदकर जी ने इसी भाषण में कहा हैं कि ब्राह्मण केवल वेदों को सत्य मानते हैं। वेद मे गऊ को १३३ बार 'अघ्न्या' यानी जिसका कभी वध न हो सके लिखा है। अथर्व वेद ने गो हत्यारे को गोली से मार देने की आज्ञा दी है, अतः वेद के बचनों पर चलने वाला कोई ब्राह्मण गोहत्या नहीं कर सकता। जो लोग वेद मे गोहत्या का समर्थन बतलाते हैं उनका उत्तर देते हुए महात्मा गांधी ने २५ जनवरी १६२५ के नवजीवन पत्र में लिखा है कि वेद के वाक्यों का वह अर्थ न होगा जो हम करते हैं, दूसरा अर्थ होगा। वेदों के कितने ही विद्वान सप्रमाण यह सिद्ध करते हैं कि वेदों में गो हत्या नहीं, गोरक्षा की आज्ञा दी है।

यह ठीक है कि जिस प्रकार महातमा बुद्ध के अनुयाई बौद्ध धर्म के सिद्धान्त को ठुकरा कर मांस मदिरा और व्यभिचार करने लगे, उसी प्रकार 'चारवाक' और 'वाममार्ग' के दुष्प्रभाव से महात्मा बुद्ध के समय कुछ ब्राह्मणभी मांस भक्षण करने लगे। महात्मा बुद्ध ने स्वयं ब्राह्मण धम्मी सुत्त मे लिखा है 'ऋषि संयमी और तपस्वी थे। गऊ को मारते नहीं थे। ब्राह्मण धर्म का ही आचरण करते थे। तब सब प्रजा सुखी थी। स्वय भगवान बुद्ध ने इसी ग्रन्थ में लिखा है कि पहले इच्छा, भूख और जरा तीन ही रोग थे। पशु हिंसा से ६८ रोग हो गये। इससे यह सिद्ध होता है कि पूर्व काल में ब्राह्मण गोमांस नहीं खाते थे। वाममार्गियों के प्रभाव से ही गोहत्या आरम्भ हुई जिसे भगवान बुद्ध ने बन्द कराया। डाक्टर अम्बेदकर जी भगवान् बुद्ध के भक्त हैं, उचित होगा कि वह आज देशमें जो गोहत्या होरही है वह बन्द करावें।

ब्राह्मणों या किसी को बुरा भला कहना और स्वय बुद्ध के बचनों पर अमल न करना डाक्टर अम्बेदकर जैसे व्यक्ति के लिये शोभनीय नहीं।"

एक मौलिक त्रुटि

हमारे भीतर अनेक मौलिक त्रुटियां घर कर गई है। सबसे बड़ी त्रुटि विघातक दृष्टिकोण का बन जाना है जिसके प्रभाव के कारण हम विघातक काम अधिक रचनात्मक काम कम करते हैं। हम स्त्रियों का पर्दा तो हटा देंगे परन्तु इस बात की चिन्ता न करेंगे कि वे फैशनेबिल तितलियां बनती हैं या आर्य देवियां। जात पांत तोड़ने पर तो जोर दिया जाता है परन्तु यह भुला दिया जाता है कि केवल जात पात को तोड़ देना ही पुण्य का काम नहीं है। जात पात इसलिए टूटनी चाहिए कि लोगों के सम्मान का आधार जन्म न होकर चरित्र हो। जात पात टूट जाए चाहे एक ब्राह्मण लड़के को वैश्य लड़की के साथ जोड़ कर दोनों का जीवन कटु बना दिया

जाय। लड़का स्वाध्याय और जन सेवा के काम में निर्धनता और त्याग का जीवन व्यतीत करना चाहे परन्तु उसकी पत्नी हर समय नई से नई साड़ी और नये से नये फैशन के ऊंची एड़ी के बूटों की इच्छुक रहे। परिणाम साधारणतया गृह कलह होता है या ब्राह्मण पति भी वैश्य बन जाता है।

आर्य समाज का मुख्योद्देश्य जात पात का तोड़ना तो नहीं है। उसका उद्देश्य वैदिक वर्ण व्यवस्था को पुनरुज्जीवित करना है। यह ठीक है कि इसे पुनरुज्जीवित करने के लिये जहां कई आवश्यक उपायों को क्रियान्वित करना होगा वहां जात पाँत को उखाड़ना भी होगा परन्तु यह नहीं होना चाहिये कि जात पांत तो टूट जाय और वर्णाश्रम की ओर कदम न उठे।

इसके लिए हमारे गुरुकुलों को क्रियात्मक पग उठाने होंगे। गुरुकुलों की पढ़ाई समाप्त करने वाले लड़कों और लड़कियों को वर्ण दिए जाने की प्रथा को चालू करना होगा और इसके नियमित रजिस्टर रखने होंगे। क्या हमारे गुरुकुल इस मौलिक त्रुटि के सुधार में अपना अपेक्षित योग देंगे?

देहली का नगर

आचार्य विनोबा भावे ने गत २० मई को मद्रास में एक प्रेस कान्फ्रेंस में भारत की राजधानी के सामाजिक जीवन पर कड़ा प्रहार किया। जिस प्रकार प्राचीन काल में लंका भौतिक सुख और आभा की जीवित प्रतीक थी, सोने, सुख, हास विलास और आमोद प्रमोद में लोटती थी, जिस प्रकार आज न्यूयार्क और पेरिस आदि नगर भौतिक सुख और प्रकृत आमोद प्रमोद के क्रीड़ा स्थल बने हुए हैं इसी प्रकार हमारी देहली की राजधानी को रूप दिया जा रहा है। भौतिक सुख और आभा का अपना स्थान है। वे एक दम हेय और त्याज्य नहीं हैं। परन्तु जब वे मनोभावना और संस्कृति को विकृत रूप देने लग जाते हैं तभी हेय और भयंकर बन जाते हैं। इसी खतरे से बचाने के लिए त्यागी और महात्मा लोग विशेष चेतावनी देते हैं। इसी प्रकार की चेतावनी विनोबा जी ने निम्नलिखित शब्दों में दी है:—

"देहली का नगर भारतीय संस्कृति का परिचायक और भारत की महत्ता का प्रतीक होना चाहिये। आज देहली वह स्थान बन गया है जहां पानी की तरह शराब बहती है। देहली में संसार की प्रत्येक प्रकार की सभ्यता प्रचलित है परन्तु भारत की परम्परागत सभ्यता के दर्शन दुर्लभ हो गए हैं। पेरिस और अन्य स्थानों के फैशनों की बाढ़ सी आई दीख पड़ती है। आज नई दिल्ली में जिस सामाजिक जीवन का प्रभुत्व है उससे भारत के भाग्य का निर्माण सभव न होगा। यदि आज भारत की राजधानी महत्ता का केन्द्र है तो वह महत्ता संभवतः अन्य देशों की है। आज तो हमें वहां भारत की महत्ता के चिन्ह नहीं दीख पड़ते। देहली का वर्तमान जीवन बड़ा कृत्रिम और अस्वाभाविक है।"

एक प्रश्न का समाधान

यदि आर्य समाज का कोई अधिकारी किसी राजनैतिक दल का प्रधान चुन लिया जाय तो क्या आर्य समाज की ओर से उसका स्वागत हो सकता है यह प्रश्न है जो समाधान के लिए एक आर्य समाज की ओर से हमें प्राप्त हुआ है। आर्य समाज का किसी राजनैतिक दल से कोई वैधानिक सम्बन्ध न होने के कारण आर्य-समाज उपर्युक्त प्रकार का कोई सामूहिक रूप से समारोह नहीं कर सकता।

मृत्यु दण्ड

अपराधियों को मृत्यु दण्ड दिया जाय या नहीं यह विषय विवादास्पद है। बहुत से देशों ने परीक्षणात्मक रूप में इस दण्ड को उठा लिया है। कुछ देश इसे उठाने के प्रयत्न में हैं और कुछ देश इस विषय में मौन हैं। ग्रेट ब्रिटेन में इन दिनों इस दण्ड को उठाये जाने के पक्ष में प्रबल लोकमत है हाउस आफ कामन्स ने इस दंड को रद्द कर दिया है परन्तु अभी तक कानून की पुस्तकों में से यह हटाया नहीं गया है। न्यूजीलैंड, भारत और लंका में इस दण्ड की समाप्ति की चर्चा चल रही है। संसार में फांसियां यदि कहीं फूली फली हैं तो इंगलैंड वह देश है। एलीजा वेथ के युग का एक लेखक लिखता है कि अष्टमहेनरी के राज्य में ७२ हजार चोर और आवारा व्यक्ति फांसी पर लटकाये गये थे। अबसे कोई १५० वर्ष पूर्व इंगलैंड में इतने कैदी मारे गये थे जितने यूरुप के किसी भी भाग में नहीं मारे गये। इंगलैंड में अब से कुछ समय पूर्व तक कुछ व्यक्ति जीवित थे जिन्होंने अन्धा धुन्ध कतार की कतार फांसियां आँखों से देखी थीं यहां तक कि उत्पात मचाने के अपराध में एक १८ वर्ष के बालक को भी फांसी पर लटकाया गया था। केवल ६० वर्ष पूर्व ही एक ६ वर्ष का बालक २।। आने का रंग चुराने के अपराध में फांसी पर चढ़ाया गया था। भेड़ें और पोस्ट आफिस की चिट्ठियां चुराने के अपराध में भी इंगलैंड में मनुष्य फांसी पर लटकाये जाते थे। दंड का यह दौर बर्बर अवश्य जान पड़ता है परन्तु इसमें समाज की रक्षा और पवित्रता का भाव निहित है।

वेद और स्मृतियों में भी हत्या, राज-द्रोह, चोरी, डाकेजनी, बाल-हत्या, स्त्री हत्या, ब्रह्म हत्यादि, व्यभिचार, बलात्कार, गउओं को मार देने आदि २ अपराधों के लिये मृत्यु दंड तक का विधान पाया जाता है। सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती इस जिज्ञासा का कि जब कि मनुष्य किसी अंग का बनाने वाला व जिताने वाला नहीं है तो ऐसा दंड न देना चाहिये समाधान करते हुये लिखते हैं:—

'जो इसे कड़ा दंड जानते हैं वे राजनीति को नहीं समझते क्योंकि एक पुरुष को इस प्रकार दंड होने से सब लोग बुरे काम करने से अलग रहेंगे और बुरे काम को छोड़ कर धर्म मार्ग में स्थित रहेंगे।'

इसका अभिप्राय यह है कि फांसी के तख्ते पर लटकाये जाने वाले मनुष्य का नहीं अपितु दूसरों का सुधार करना तथा दूसरों को चेतावनी देना ही इस कडे दंड का लक्ष्य है। स्मृतिकारों ने मृत्युदंड के विकल्प के रूप में प्रायश्चित का भी विधान किया है परन्तु अनेक अवस्थाओं में प्राण दंड को बनाये रखा है।

परन्तु मृत्यु दंड पाने वाला व्यक्ति वास्तविक अपराधी होना चाहिये। निर्दोष व्यक्तियों के दंडित हो जाने के कारण उन लोगों का पक्ष सबल हो जाता है जो इस दंड का अन्त करने की माँग करते हैं। समाज की भ्रष्टाचार पूर्ण स्थिति में झूठी गवाहियों, लोभी राज्य कर्मचारियों अन्याय पूर्ण कानूनों आदि के कुचक्रों में निर्दोष फँसा दिये जाते और अपराधी बच जाते हैं। अतः यदि यह दंड वास्तविक अपराधियों को न्याय पूर्वक मिले तो ठीक अन्यथा इस दंड का विरोध होना उचित एवं स्वाभाविक है। ऐसी घटनायें प्रकाश में आई हैं और आती रहती हैं जबकि फांसी पर लटकाये गये व्यक्ति बाद में निरपराधी सिद्ध हुये वा होते हैं और तब सिवा पछताने के और कोई चारा नहीं रहता।

मानवता एवं सुधार के आधार पर मृत्युदंड को आजन्म वा दीर्घ कालीन कारावास दंड में परिवर्तित किये जाने की सिफारिश की जाती है। इस प्रकार की छूट के अच्छे और बुरे दोनों ही तरह के परिणाम होते हैं। 'गेरो फेलों' प्रसिद्ध नेपोलिटन वक्ता और विधान शास्त्री जो प्राण दंड का शायद सबसे बड़ा पक्षपाती रहा है का कथन है कि प्राण दंड ही एक ऐसा दंड है जिस से अपराधी भय

खाता है। उसने ऐसे अपराधियों का उदाहरण दिया है जिन्होंने अपराध इस विचार से किया कि प्राण दंड नष्ट हो चुका है और उन्हें अब जीवन भर जेल में खाना और आश्रय मिल सकता है। सर रार्बट ने कहा था खूनी को आजीवन जेलखाने में रखकर दण्डित करना तुरन्त मार डालने की अपेक्षा कहीं सख्त सजा है लेकिन इतनी घबरा देने वाली नहीं।' एक बार ड्यूक डि· मोन्टो शियर ने एक अपराधी के बारे में जो अन्त में २० हत्याओं के बाद फांसी पर लटका था, १४ वें लुई के समक्ष कहा था 'इसने सिर्फ एक खून किया है। पहली बार उसी की जिम्मेवारी इस पर है। बाकी खून के जिम्मेवार आप हैं जिन्होंने उसे रहने देकर १९ हत्यायें कराई हैं।'

ये बातें सत्य हो सकती हैं। यदि प्राणदंड केवल बिल्कुल उद्दंड, अदम्य और प्रकृति वश नर राक्षस आततायियों के लिये सुरक्षित रहे तो ठीक ही है।

अपराधियों को ५ श्रेणियों में बांटा जा सकता है:—

१—ऐसे मनुष्य जिनमें किसी प्रकृति दोष के कारण उनकी युवावस्था में भी सुधार नहीं किया जा सकता और अन्य निकृष्ट स्वभावों की भांति जिनमें यह भी एक असाध्य रोग है।

२- ऐसे मनुष्य जो बुद्धि में विकार हो जाने के कारण अपने कार्य की जघन्यता को न जानकर अपराध कर बैठते हैं।

३—ऐसे मनुष्य जो जान बूझकर साधारण सी बात पर अपराध कर बैठते हैं।

४—ऐसे मनुष्य जिनसे देश तथा जाति के हित के लिये कोई अपराध हो जाय।

५--ऐसे अपराधी जो अपनी जान इज्जत माल, तथा संपत्ति की रक्षा के लिये आक्रान्ता की हत्या तक कर दें।

प्रथम श्रेणी के अपराधी यदि मनुष्य हत्या जैसा जघन्य पाप करें तो उनका प्राण हरण कर लेना श्रेयस्कर है। उनके सुधार का उद्योग करना उतना ही निरर्थक है जितना कि एक सर्प को दूध पिलाकर उससे भलाई की आशा करना।

दूसरी श्रेणी के अपराधी वस्तुतः अपराधी नहीं है क्योंकि कोई कार्य तब तक अपराध नहीं हो सकता जब तक कि वह किसी बुरे इरादे से न किया जाय।

तृतीय श्रेणी के मनुष्य यद्यपि कानून की दृष्टि में अपराधी हैं तथापि उनके सुधर जाने की सम्भावना है इसलिये उन्हें हत्या के अपराध में भी मृत्यु दंड न दिया जाना चाहिये वरन् अन्य प्रकार के कठोर दंड देकर उनके सुधार का प्रयत्न करना चाहिये।

चौथे प्रकार के अपराधी मृत्यु दंड पाने के सर्वथा अयोग्य हैं। न्यायाधीश का यह प्रधान कर्त्तव्य है कि वह ऐसे अपराधियों को केवल ऐसा दंड दें जिससे वह सन्मार्ग पर आ जायें।

पांचवें प्रकार के अपराधी सर्वथा क्षमा के पात्र हैं। प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है कि वह आततायी से अपनी जान, माल और इज्जत की रक्षा करे और ऐसा करते हुए वह आततायी का वध कर सकता है।

मनुस्मृति के आठवें अध्याय के १२९ वें श्लोक में दंड के प्रकार की सुन्दर रूप रेखा खींचदी गई है। कहा गया है कि अपराधीको वाणी का दंड दिया जाय अर्थात् उसकी निन्दा की जाय। अपराधी का भर्त्सना करके उसे सन्मार्ग पर लाया जाय। आवश्यक होने पर अपराधी से धन लेकर उसे दंडित किया जाय और अनिवार्य हो तो वध दंड भी दिया जाय जिसमें कोड़ों से वा बेंतों से मारना वा सिर का काट देना भी सम्मिलित है।

हमारे ऋषि और महर्षि गण प्रेरणा और भय दोनों के बल पर समाज को स्वस्थ सम्पन्न और सदाचारी बनाना और देखना चाहते थे। यद्यपि उनके दंड कठोर अवश्य प्रतीत होते हैं तथापि उन्होंने जिनदंडों और प्रायश्चितों की कल्पना की और प्रथा में उन्हें लोकोपकार के लिये प्रचलित किया और उनका आदर्श उपयोग करके भी दिखला दिया था।

रघुनाथ प्रसाद पाठक

मृत्यु पर विजय

[लेखक—श्री पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति]

हमने आज जान लिया है कि मनुष्य का ध्येय अमृत की प्राप्ति है और अमृत दुःख से अमिश्रित सुख (आनन्द) का नाम है अब हमें इस प्रश्न पर विचार करना चाहिये कि अमृत की प्राप्ति का क्या उपाय है ?

इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिये हमें उपनिषद् के उन दो मन्त्रार्थों पर विस्तार से विचार करना चाहिये, जिनकी व्याख्या आठवें और नवें अध्याय में की जा चुकी है। वे मन्त्रार्थ ये है—

अविद्यया मृत्युन्तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ।
विनाशेन मृत्युंतीर्त्वा सम्भूत्याऽमृतमश्नुते ॥

मनुष्य कर्मों के ज्ञान से मृत्यु को तर कर विद्या से अमृत प्राप्त करता है। मनुष्य प्राकृतिक जगत् को जान कर मृत्यु को तरता और नित्य आध्यात्मिक तत्वों को जान कर अमृत प्राप्त करता है।

इन दोनों मन्त्रार्थों का सम्बन्ध उपनिषद् के पहले मन्त्र से है।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतंसमाः।

मनुष्य कर्म करता हुआ सौ वर्ष तक जीने का प्रयत्न करे क्योंकि वह कर्तव्य कर्मों के करने से मृत्यु के पार हो सकता है।

कर्तव्य कर्मों का पालन तभी हो सकता है जब मनुष्य इस जगत् को भली प्रकार जान ले।

इस क्रम को उलट कर कहा जाय तो वह सुगमता से समझ में आ जायगा।

मनुष्य के लिये उचित है कि वह पहले स्थूल अनित्य जगत् का ज्ञान प्राप्त करे। तब वह अपने कर्तव्य कर्मों को समझ सकेगा और उन का पालन कर सकेगा। यदि वह अपने जीवन को कर्तव्य कर्मों के भली प्रकार पालन करने में व्यतीत करेगा तो वह मृत्यु के भय से मुक्त हो जायगा। मरना तो प्रत्येक मनुष्य को है, परन्तु सत्कर्म करते हुए जीवन व्यतीत करने वाले मनुष्य को मृत्यु का भय नहीं रहता। जब उस के सामने गहरी और तूफानी नदी की तरह भयानक मौत आती है, तब वह उस से नहीं डरता क्योंकि उस ने सत्कर्मों की नौका तैयार कर ली है। उसे भरोसा रहेगा कि वह उस नौका के प्रताप से परलोकमें सद्गति को प्राप्त करेगा। यही मृत्यु रूपी नदी को तर कर पार करना है।

जिस मनुष्य ने जीवन में अच्छे कर्म नहीं किये, उसके लिये मृत्यु बहुत भयानक होती है। यदि उसे परलोक में या ईश्वर में विश्वास नहीं तो उसे मरने के समय अपने सब दुःखों और मन्सूबों का अन्त दिखाई देता है। यदि वह पुनर्जन्म को मानता है तो उसे दूसरे जन्म में मिलने वाली अन्धकारमय योनियों और यातनाओं की झलक दिखाई देने लगती है। वह मृत्यु को देख कर घबरा जाता है, रोता और चिल्लाता है। परन्तु जिस मनुष्य ने सत्कर्म करने में जीवन व्यतीत किया है. उस के लिये मृत्यु केवल दशा का परिवर्तन है, समाप्ति नहीं।

भगवद्गीता में कहा है—

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।

तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-
न्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥

जैसे मनुष्य पुराने कपड़ों को उतार कर नये कपडे पहिनता है वैसे ही वह पुराने शरीर को छोड़ कर नये शरीर को धारण कर लेता है। मनुष्य जीवन का सूत्र मृत्यु से टूटता नहीं केवल उस का रूप बदल जाता है। जिस मनुष्य को यह विश्वास है कि वह अगले जन्म में कर्मों के अनुसार सद्गति को प्राप्त होगा, वह शान्त हृदय से मृत्यु का सामना करता है। कभी कभी तो वह नये शरीर से नया परोपकारी और सत्य निष्ठ जीवन व्यतीत करने की प्रसन्नता में मृत्यु का स्वागत भी करता है।

भगवद्गीता में उपनिषदों के इसी अभि-प्राय की व्याख्या विस्तार से की गई है। वहां इसे 'कर्मयोग' यह सार्थक और सुन्दर नाम दिया गया है। भगवद्गीता में कहा है—

नहि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः ॥

कोई मनुष्य क्षण भर भी कुछ न कुछ कर्म किये बिना नहीं रह सकता। स्वाभाविक गुण उसे कर्म करने के लिये प्रवृत्त करते हैं। स्पष्ट है कि यदि वह इच्छा-पूर्वक अपने कर्म नहीं करेगा तो विषय-वासना उस से बुरे कर्म करायेंगी। जो लोग दृश्यमान कर्म छोड़ कर केवल मन से विषयों का चिन्तन करते रहते हैं, उन के विषय में भगवद्गीता में कहा है—

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते ॥

जो मनुष्य हाथ पांव आदि कर्मेन्द्रियों को रोक कर, केवल ज्ञानेन्द्रियों से विषयों का चिंतन करता रहता है, वह मिथ्या आचरण वाला कहलाता है।

इस कारण भगवद्गीता का उपदेश है—

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः ॥

हे अर्जुन! तू आसक्तिरहित हो कर निरंतर कर्तव्य कर्मों को करता जा। इस प्रकार आसक्ति रहित कर्म करने से मनुष्य ईश्वर के समीप तक पहुंच जाता है।

अमृत तक पहुंचने के लिये जो यात्रा की जाती है, उस का पहला पड़ाव है मृत्यु को तरना अर्थात् मृत्यु के भय से मुक्त होना। मर्त्य को मरना तो अवश्य ही है परन्तु उस का भय बना रहना बुरा है क्योंकि वह इस बात का सूचक है कि मनुष्य ने जो कर्म किये हैं वे खोटे हैं। वह उन के परिणाम से डरता है।

जिस मनुष्य को यह विश्वास हो जाता है कि मृत्यु से केवल आत्मा का चोला बदलता है, समाप्ति नहीं होती, और जिसे यह भरोसा हो जाता है कि इस जन्म में किये सुकर्मों के कारण चोला बदलने पर भी उसे दुःख नहीं होगा, वह मृत्युंजय हो जाता है। वस्तुतः उस ने मृत्यु की वैतरणी नदी को पार कर लिया।

अपरा से परा की ओर

मुण्डकोपनिषद् में बताया है—

द्वे विद्ये वेदितव्ये इति ह स्म ब्रह्म
विदो वदन्ति परा चैवापरा च।
तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः साम-
वेदोऽथर्ववेदः शिक्षा कल्पो व्याकरणं
निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति।
अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते।

ब्रह्मवेत्ता लोग कहते हैं कि दोनों विद्यायें जाननी चाहियें, एक अपरा, दूसरी परा। ऋग-

वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, शिक्षा, कल्प व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष ये सब अपरा विद्या हैं। परा विद्या वह जिस से वह (अक्षर) अविनाशी ब्रह्म प्राप्त होता है। 'ब्रह्मैवेदममृतम्' यह ब्रह्म ही अमृत है।

अपरा और परा विद्या का भेद उपनिषदों में अन्य स्थानों पर भी बतलाया गया है। शब्द भिन्न हैं परन्तु भाव यही है। यह प्रसग छान्दोग्य के सप्तम अध्याय का है—

नारद मुनि ने भगवान सनत्कुमार के पास जाकर कहा कि हे भगवन्! मुझे उपदेश दीजिए। सनत्कुमार बोले कि हे नारद! जो कुछ आप जानते हो वह बतलाओ, तब मैं आगे कहूँ। नारद ने उत्तर दिया कि हे भगवन्! मैंने ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, ये चार वेद, और वेदों को समझाने वाले इतिहास पुराण पित्र्य, राशि, निधि, वाकोवाक्य, एकायन, देवविद्या, ब्रह्मविद्या, भूतविद्या, क्षत्रविद्या, नक्षत्रविद्या, सर्पदेवजनविद्या आदि सभी कुछ पढ़ा है। परन्तु—

सोऽहं भगवो मन्त्रविदेवास्मि नात्मविच्छ्रुतं ह्येव मे भगवद्दृशेभ्यस्तरति शोकमात्मविदिति, सोऽहं भगवः शोचामि तं मा भगवाञ्छोकस्य पारं तारयत्विति। तथं होवाच यद्वै किंचैतदध्यगीष्ठाः नामैवैतत्।

हे भगवन् मै (यह सब कुछ पढ़ कर) केवल इन मन्त्रों का वेत्ता बना हूं, आत्मा को नहीं जान सका। मैंने सुना है कि जो आत्मवित है वह शोक से छूट जाता है। परन्तु मैं तो भगवन् शोक में फंसा हुआ हूँ। सो भगवन आप मुझे शोक सागर से पार कीजिये।

(यह सुन कर) भगवान् सनत्कुमार ने कहा कि यह जो कुछ तुम ने पढ़ा है, वह तो केवल नाम है। इस का फल भी केवल उतना ही होगा जितना नाममात्र का होता है।

इस प्रकार केवल शाब्दिक ज्ञान की अपूर्णता को बतला कर शोक सागर से पार हो कर अमृत प्राप्त करने के लिये 'आत्मा' के स्वरूप का उपदेश दिया है। अन्त में कहा है—

'यो वै भूमा तदमृतमथ यदल्पं तन्मर्त्यम्'

जब मनुष्य अपने को (सम्पूर्ण ब्रह्मांड के समान) महान् अनुभव करने लगता है, तब यह अमृत हो जाता है, वह मर्त्य तभी तक रहता है, जब तक अपने को अल्प (छोटा क्षुद्र और परिमित) समझता है।

शास्त्रों का और विज्ञान का ज्ञान मनुष्य को नाममात्र का बोध कराता है, संसार के जंजाल से ऊपर नहीं उठता, संसार के जंजाल से ऊपर उठ कर अमृतत्व की प्राप्ति के लिये मनुष्य को आत्मज्ञान की आवश्यकता है। जब वह आत्मा के स्वरूप को जान कर उसे अनुभव करने लगता है तब वह ब्रह्मज्ञान और अमृतत्व का अधिकारी हो जाता है।

जिसे उपनिषत्कार ने नाममात्र का बोध कहा है, वह अपरा विद्या है, और उस के आगे जो आत्मा का बोध और अनुभव होता है, वह परा विद्या है!

उपनिषत्कार ने अपरा और पराविद्या में जो भेद किया है, वह वेद के इस मन्त्र की विशद व्याख्या है—

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्
यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः।
यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति
य इत्तद्विदुस्त इमे समासते॥

ऋ० १. १६४. ३९।

ऋचायें और सब दिव्य पदार्थ और समस्त ब्रह्मांड जिस सब से उत्कृष्ट और सर्व-व्यापक प्रभु में निवास करते हैं जो उसे नहीं जानता वह वेद मन्त्रों से क्या करेगा ? जो उसे जान लेते हैं, वे आनन्दमय ब्रह्म में स्थित हो जाते हैं।

केवल ऋचाओं का या दर्शनों और वास्तु-विज्ञान का ज्ञान अपरा विद्या के अन्तर्गत है, परा विद्या वह है जिस से मनुष्य आत्मा और परमात्मा को जान लेता है।

यही अभिप्राय कठोपनिषद् में प्रकारांतर से कहा गया है।

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो
न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः
तस्यैष आत्मा वृणुते तनूं स्वाम्॥

यह आत्मा न उपदेश सुनने से प्राप्त होता है न बुद्धि या शास्त्रों से। जिस के सम्मुख यह स्वयं प्रकट हो जाता है, उसी को प्राप्त हो जाता है। शास्त्रों का अध्ययन मनुष्य को कर्तव्याकर्तव्य का ज्ञान करा सकता है। उसकी आत्मा को परिष्कृत करा सकता है, परन्तु केवल उनने से अनन्त सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती। अनन्त सुख की प्राप्ति के लिये आवश्यक है कि मनुष्य अपने अन्तरात्मा और परमात्मा को पहचाने। ऐसे आत्मज्ञानी पुरुष को परमात्मा स्वयं वर लेता है—उस के सामने असली रूप में प्रकट हो जाता है।

यही अभिप्राय भगवद्गीता में समझाया गया है—

त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।
निर्द्वन्द्वो नित्यसत्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्

हे अर्जुन। वेद त्रैगुण्यविषयक हैं। तू निस्त्रैगुण्य हो जा। निर्द्वन्द्व, नित्य सत्व में स्थित, त्यागी और आत्मज्ञानी बन जा।

यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके।
तावान् सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः॥

मध्यकालीन भक्त लोग अपनी असंस्कृत भाषा में भी इसी भाव को प्रकट करते रहे हैं।

शास्त्रों का केवल अध्ययन अपरा विद्या तक पहुँचाता है—परा विद्या उस से आगे है।

[सम्वत् २०१३ में श्रद्धानन्द स्मारक निधि के सदस्यों को स्वाध्याय मंजरी में भेंट दी जाने वाली पुस्तक का अंश]।

म —जो बुरे काम में अनुमति देता है, सामने प्रशंसा और पीठ पीछे निन्दा करता है वह मित्र नहीं अमित्र है।

णि —क्षमा के समान इस जगत् में दूसरा तप नहीं है।

मा —अक्रोध से क्रोध को, भलाई से बुराई को, कृपण को दान से और झूठ को सत्य से जीते।

ला —लोभ के फंदे में फंसा हुआ मनुष्य हिंसा भी करता है, चोरी भी करता है, झूठ भी बोलता है और दूसरों को भी वैसा ही करने के लिये प्रेरित करता है।

* धर्म के स्तम्भ *

(५)

शुद्धि (शौच)

(लेखक—रघुनाथ प्रसाद पाठक)

महात्मा सुकरात भद्दी शक्ल के व्यक्ति थे। एक दिन लोगों ने उन्हें प्रभु से यह प्रार्थना करते हुए देखा, "प्रभो ! आप मुझे भीतर से सुन्दर बना दो।" उन्होंने अपने को भीतर से इतना स्वच्छ और सुन्दर बना रखा था कि लोग बरबस उनकी ओर आकृष्ट हो जाया करते थे। बाहर की असुन्दरता अन्दर की सुन्दरता से छिप जाती है। जो व्यक्ति बाहर से स्वच्छ और आकर्षक होते हैं, उनमें प्रकाश होता है, परन्तु जो भीतर से स्वच्छ होते हैं उनका बाह्य प्रकाश भीतर के प्रकाश से चमक कर लोगों के नेत्र और हृदय दोनों को प्रकाशित कर देता है। अतः आवश्यक है कि मनुष्य अपने को बाहर और भीतर दोनों ओर से स्वच्छ और पवित्र रक्खे, जिससे उसके शरीर और आत्मा दोनों में लोगों को देवत्व के दर्शन हों। स्वच्छ रहना धर्म है।

शरीर की, वस्त्रों की, घर की और खान पान आदि की बाहरी शुद्धि मानी जाती है। ये शुद्धियां मन की स्वस्थ अवस्था की द्योतक होती हैं। इसके विपरीत गन्दगी मन की स्वस्थता को प्रकट करती है। शुद्धि रखने से मनुष्य को स्वास्थ्य लाभ होता और गन्दगी रखने से स्वास्थ्य की हानि होती है। इतना ही नहीं, मनुष्य स्वास्थ्य और साफ शरीर के प्रसादों से वंचित हो जाया करता है।

मनुष्य का बाह्य भाग भीतर के भाग का आइना होता है, जिसमें से मनुष्य का आभ्यन्तर दीख पड़ता है। अतः हमारा बाह्य इतना शुद्ध और निर्मल होना चाहिये जिससे हमारे भीतर के छोटे से छोटे और सूक्ष्म से सूक्ष्म धब्बे को भी लोग देख सकें और हमें उस धब्बे को धोने की बाह्य प्रेरणा भी मिल सके। बाहरी गन्दगी गरीबी की उतनी द्योतक नहीं होती जितनी आलस्य और प्रमाद की द्योतक होती है। आलस्य और प्रमाद से उत्पन्न गन्दगी में मनुष्य के गुण छिप जाते या अविकसित रह जाते हैं। गन्दगी में अधिक काल तक गुणों का निवास नहीं हुआ करता, बाह्य पवित्रता और सफाई से मनुष्य के भीतरी गुणों को बल मिलता है और उनमें चमक आ जाती है।

शरीर की शुद्धि स्नान से, दांतों की शुद्धि मंजन और दातुन से, आंखों की शुद्धि अंजन से, हरियाली को देखने, दूसरों के उत्कर्ष को सहन करने और काम्य कुचेष्टा से बचाने से, कान की शुद्धि शास्त्रों को सुनने, तेल डालने तथा उत्तम बातों में लगाने से, जीभ की शुद्धि मांसादि त्याज्य पदार्थों के परित्याग, शुद्ध और सात्विक प्रकृति के अनुकूल पदार्थों के ग्रहण तथा उत्तम मधुर सत्य और कल्याणकारी बातों के कहने से, हाथों पैरों आदि की शुद्धि मिट्टी जल से तथा उन्हें धर्म युक्त परोपकारी कामों में लगाने से होती है। वस्त्रों के पहनने में रक्षा का भाव सर्वोपरि और सजावट का भाव गौण रहना चाहिये।

नित्य झाड़ने बुहारने लीपने और पोतने से घर की शुद्धि होती है। घर में रहने वाले व्यक्ति भीतर से भी शुद्ध होने चाहिएं। यदि घर साफ सुथरा व्यवस्थित और सजा हुआ हो और उसमें रहने वाले व्यक्ति साफ सुथरे और सजे हुए हों और भीतर से अपवित्र एवं गन्दे हों तो वह घर उस सेव के समान घिनौना होता है, जो बाहर से बड़ा आकर्षक होता परन्तु जिसके भीतर कीड़े भरे होते हैं।

भीतर की शुद्धि बनाये रखना बड़ा जटिल परन्तु

परिणाम में अमृत तुल्य होता है। मनु महाराज ने बाह्य और आभ्यन्तर शुद्धि का बड़ा सरल उपाय बताया है। वे कहते हैं :—

अद्भिर्गात्राणि शुद्ध्यन्ति
मनः सत्येन शुद्ध्यति।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा
बुद्धिर्ज्ञानेन शुद्ध्यति॥

मनु० अ० ५ श्लोक १०९

जल से शरीर, सत्य से मन धर्मानुष्ठान, तप और विद्या से आत्मा शुद्ध होता है और बुद्धि ज्ञान से पवित्र होती है।

मन बड़ा चचल होता है, जो इन्द्रियों के वशीभूत हो मनुष्य को राग द्वेषादि कुत्सित प्रवृत्तियों में फंसा कर उसका अनिष्ट करता है। अतः मनकी पवित्रता के लिये ईश्वराराधन, ईश्वर की आज्ञा का पालन, सत्पुरुषों का सग वेदादि सच्छास्त्रों का अध्ययन और राग द्वेषादि विकारों का परित्याग परमावश्यक है। पवित्र शरीर में पवित्र मन के निवास करने से मनुष्य में अनेक गुणों का समावेश रहता है और मनुष्य अपना और दूसरों का कल्याण करने में समर्थ होता है। पवित्र शरीर और मन वाले व्यक्ति ही धर्मात्मा कहलाते हैं। मन की पवित्रता आत्मा को गन्दे से गन्दे स्थान में भी शुद्ध वायु का श्वास लेने में समर्थ बनाती है और सयम से उसमें शक्ति आ जाती है। जब मन की पवित्रता इन्द्रियों पर शासन करती है तब वह अपने प्रकाश से जगमगा जाती है।

योगदर्शन के समाधिपाद के ३३ वें सूत्र में चित्त की निर्मलता के अत्युत्तम उपाय बताये गये हैं। सूत्र इस प्रकार है :—

मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःख पुण्या-पुण्यविषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनम्॥

मित्रता, दया, हर्ष और उदासीनता इन धर्मों की सुखी दुखी पुण्यात्मा और पापियों के विषय में भावना के अनुष्ठान से चित्त की निर्मलता और प्रसन्नता होती है। राग, ईर्ष्या, परोपकार, चिकीर्षा, असूया, द्वेष ये छः बुराइयाँ चित्त को मलिन कर देती है।

श्री भोज महाराज इस सूत्र की व्याख्या मे लिखते हैं:—

मित्रता, दया, हर्ष, उदासीनता इन चारों को क्रम से सुखियों में, दुखियों में, पुण्यवानों मे और पापियों में व्यवहृत करना चाहिये। सुखी मनुष्यों को देखकर ऐसा समझने से कि यह मेरा ही सुख है, राग और ईर्ष्या का विनाश होता है। दुखियों पर दया करने से घृणा और दूसरों का अहित करने का मैल दूर होता है। जैसे हमें अपने प्राण प्रिय हैं वैसे ही अन्य प्राणियों को भी अपने प्राण प्रिय हैं, इस प्रकार से सज्जन पुरुष अपने प्राणों के समान सबके ऊपर दया किया करते हैं। अपने मन में यह विचार करें कि इस दुखिया को बड़ा कष्ट होता होगा, क्योंकि जब हमारे ऊपर कोई संकट आता है, तब हमको कितना कष्ट भोगना पड़ता है और उसके दुःख को दूर करने की चेष्टा करे। ऐसा न समझे कि सुख दुःख से हमें कोई प्रयोजन नहीं है। जो व्यक्ति धर्म मार्ग में चलते रहते हैं; उनके प्रति हर्ष की भावना करने से असूया मल की निवृत्ति होती हैं।

जो व्यक्ति पाप मार्ग में प्रवृत्त हैं, उनके प्रति उपेक्षा का भाव रखने से, घृणा करने तथा बदला लेने का भाव समाप्त हो जाता है अर्थात जब पापी पुरुष कठोर वचन बोले एवं किसी अन्य प्रकार से अपमान करे, तब मन में ऐसा सोचे कि यह पुरुष स्वयं अपनी हानि कर रहा हैं, इसके ऐसे व्यवहार से मेरी कोई हानि नहीं हो रही हैं। मैं इसके प्रति द्वेष करके अपने को क्यों दूषित करूं, इसे स्वयं अपने दुष्कर्म का फल भोगना हैं।

इस प्रकार इन चारों भावनाओं के मन में बद्धमूल हो जाने से मन के दूषण नष्ट हो जाते हैं और मन शुद्ध तथा निर्मल हो जाता है।

———

ऋषि दयानन्द के पत्रों और विज्ञापनों का महत्त्व

[लेखक—श्रीयुत पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक, ४६४३—करोल बाग देहली]

ऋषि दयानन्द इस युग के महा पुरुष, नवीन युग के प्रवर्त्तक, नवभारत के विधाता और नव चेतना के सचारक थे। धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक प्रत्येक क्षेत्र में उनके कार्य इतने महान् थे कि यदि उनके एक एक कार्य का भले प्रकार दिग्दर्शन कराया जाए तो प्रत्येक कार्य के लिए अनेक ग्रन्थों की आवश्यकता होगी। ऋषि दयानन्द का वास्तविक कार्य काल विक्रम स० १६३१—१६४० तक केवल दस वर्ष का है। इस दश वर्ष के अल्प काल मे उन्होंने केवल लेखन कार्य ही इतना महान किया है कि उसे देखकर आश्चर्य चकित होना पड़ता है। ऋषि का ग्रन्थ लेखन काय फुलिसकेप आकार के लगभग २० सहस्र पृष्ठों में परिसमाप्त हुआ है।[1] इस महान लेखन कार्य के अतिरिक्त भ्रमण करते हुए प्रति दिन शतश: अभ्यागतों का शका समाधान, भिन्न मतावलम्बियों से शास्त्रार्थ और समागत पत्रों का उत्तर देना आदि कार्य पृथक् हैं।

पत्र व्यवहार की महत्ता

पत्र व्यवहार व्यक्ति के जीवन चरित्र का महत्त्वपूर्ण अ ग होता है। उससे जहां व्यक्ति के जीवन की अनेक घटनाओं का ज्ञान होता है, वहां वह उस व्यक्ति के विचारों का भी द्योतक होता है इस कारण महापुरुषों का पत्र व्यवहार केवल सामयिक वस्तु नहीं होती अपितु देश के वास्तविक इतिहास के महत्त्वपूर्ण पन्ने होते हैं। महापुरुषों के पत्रों का मूल्य उनके ग्रन्थों से भी अधिक होता है। ग्रन्थ लेखन में लेखक साव-धानता वर्तता है। इसलिए उसमे कृत्रिमता का पुट अवश्य रहता है। पत्र इसके सर्वथा विपरीत होते हैं, वे व्यक्तिगत रूप मे लिखे जाते हैं। उनके जनसाधारण तक पहुँचने की स्थिति नहीं होती इसलिए उनमें कृत्रिमता यत्किंचित नहीं होती, सरलता का ही प्रवाह रहना है। इसलिए किसी भी व्यक्ति की वास्तविक विचार धारा का ज्ञान उसके रचे ग्रन्थों की अपेक्षा पत्रों से अधिक स्पष्टता से हो सकना है।

ऋषि के पत्र व्यवहार की व्यापकता

ऋषि दयानन्द के जितने पत्र इस समय तक उपलब्ध हुए हैं, उनसे उनके पत्र व्यवहार की व्यापकता का स्पष्ट आभास होता है।

देश – ऋषि दयानन्द का पत्र व्यवहार केवल भारत तक ही सीमित न था, अपितु अमे-रिका, इंगलैण्ड स्काटलैण्ड और जर्मनी आदि देशों के विविध विद्वानों तक व्यापक था।

---

१ ऋषि ने जितने ग्रन्थ लिखे उन सब का इतिहास मैं ने 'ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास' नामक ग्रन्थ लिखा है। इस ग्रन्थ मे ऋषि के समस्त ग्रन्थों की मूल हस्तलिखित प्रतियों का पूर्ण विवरण दिया है। बडे दु ख की बात है कि ऋषि का स्वर्गवास हुए लगभग ७३ वर्ष हो गए, परन्तु उन के अनेक ग्रन्थ अभी तक प्रकाशित नहीं हो सके। ऋषि के इन अमुद्रित ग्रन्थों का इतिहास भी उक्त ग्रन्थ में लिखा है। प्रत्येक ग्रन्थ के लेखक, संशोधन और मुद्रण आदि सभी विषयों का विस्तृत विवरण दिया है।

काल—ऋषि के स्वरचित जीवन चरित्र तथा अन्य जीवन चरित्रों से स्पष्ट है कि उनका पत्र व्यवहार वि सं० १६२० से प्रारम्भ हो गया था, परन्तु सं० १६३१—१६४० तक के विशेष कार्य काल में उनका पत्र व्यवहार अत्यधिक मात्रा में विस्तृत हो गया था।

संख्या - ऋषि दयानन्द ने सं० १६२० से १६४० तक २० वर्षों में कितने पत्र लिखे और किस-किस व्यक्ति को लिखे यह अज्ञात है। ऋषि दयानन्द के जो उपलब्ध पत्र रामलाल कपूर ट्रस्ट से मुद्रित हुए हैं, उनमें दो स्थानों पर निर्दिष्ट क्रमिक पत्र संख्या से विदित होता है कि उन्होंने १ वर्ष और १ मास के काल में ११८ पत्र निश्चित रूप से लिखे थे१। इसी संख्या का माध्यम बनाकर यदि उनके अन्तिम १० वर्षों के पत्रों की गणना की जाए तो ऋषि दयानन्द ने लगभग १२५०० साढ़े बारह सहस्र पत्र लिखे होंगे। पहले दस (सं० १६२०—१६३०) वर्षों में लिखे गए पत्रों की संख्या उससे पृथक् है।

पत्रों का संग्रह

ऋषि दयानन्द के पत्रों के संग्रह का सब से प्रथम प्रयास स्वर्गीय श्री पं० लेखराम जी ने किया था। उन्हें ऋषि दयानन्द के जितने पत्र उपलब्ध हुए उनका पूर्ण अथवा अंश रूप से मुद्रण उनके द्वारा लिखे गए ऋषि के उर्दू जीवन चरित्र में हो चुका है। तत्पश्चात् स्वर्गीय श्री महात्मा मुन्शी राम जी (श्री स्वा० श्रद्धानन्द जी) ने ऋषि दयानन्द के कुछ पत्रों का संग्रह प्रकाशित किया। तदन्तर ऋषि के अनन्य भक्त स्वर्गीय श्री बा० देवेन्द्रनाथ जी (ये आर्य समाजी नहीं थे) ने ऋषि का जीवन चरित्र लिखने के लिए अनेक पत्रों का संग्रह किया था। परन्तु उनके अकाल में ही काल कवलित हो जाने के कारण उनके संग्रहीत पत्र मुद्रित न हो सके। इनके पश्चात आर्य जगत के प्रसिद्ध तथा अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त ऐतिहासिक विद्वान् श्री पं० भगवद्दत्त जी ने सर्वाधिक प्रयत्न किया। उनके इस कार्य में ऋषि के अनन्य भक्त श्री मामराज जी ने महान् सहयोग दिया। इसी बीच में स्वर्गीय श्री प० चमूपति जी ने भी ऋषि दयानन्द के कतिपय पत्र प्रकाशित किए।

इस प्रकार अनेक व्यक्तियों के महान् प्रयत्नों से ऋषि दयानन्द के शतशः पत्र और विज्ञापन प्रकाश में आगए। श्री प० भगवद्दत्त जी ने इन उपलब्ध पत्रों और विज्ञापनों का तिथि क्रम से सम्पादन करके सन १९४६ के अन्त में रामलाल कपूर ट्रस्ट द्वारा बृहत्संग्रह प्रकाशित किया२।

पत्रों का महत्व

ऋषि दयानन्द के जितने भी पत्र उपलब्ध हुए हैं, उनका गम्भीरता से मनन करने पर ही उनका ऐतिहासिक मूल्यांकन किया जा सकता है। इन पत्रों में ऋषि के जीवन चरित्र, कार्य क्रम और उनके विचारों पर प्रकाश डालने वाली ऐसी अद्भुत सामग्री विद्यमान है जिनके विषय में उनके चरित्र ग्रन्थ तथा उनके लिखे ग्रन्थ सर्वथा

१. देखो 'ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन' 'द्वितीय संस्करण की विशेषता' पृष्ठ ४ के नीचे की टिप्पणी।

२. ऋषि दयानन्द के पत्रों और विज्ञापनों का उक्त संग्रह देश विभाजन काल से कुछ पूर्व ही प्रकाशित हुआ था अतः उसकी लगभग सभी प्रतियां लाहौर में ही भस्मसात् कर दी गई। इस विपत्ति काल में भी पत्र-संग्रह का कार्य चलता रहा। अब उसका नया परिवर्धित संस्करण उक्त ट्रस्ट द्वारा पुनः प्रकाशित हुआ है। इस संस्करण में पूर्वापेक्षया लगभग ३०० पत्र, पत्रांश पत्र सूचना तथा विज्ञापनादि बढ़े हैं।

मौन हैं अथवा बहुत स्वल्प प्रकाश डालते हैं। श्री प०भगवद्दत्त जी ने इस संग्रह की ३७ पृष्ठ की भूमिका में ऋषि के पत्रों की उपयोगिता तथा पत्रों में व्यक्त किये गए कतिपय महत्त्व पूर्ण विषयों पर अत्यन्त विद्वत्ता पूर्ण प्रकाश डाला है। आर्य समाज के प्रत्येक नेता, अधिकारी, सदस्य, सेवक तथा प्रेमी व्यक्ति को इन पत्रों में प्रदर्शित और भूमिका में पल्लवित ऋषि के विचारों पर गम्भीरता पूर्वक विचार करना चाहिए। इनके मनन से निश्चय ही आर्यसमाज के वर्तमान कार्यक्रम में आई हुई अनेक महत्त्वपूर्ण त्रुटियों का ज्ञान होगा और वे दूर की जा सकेंगी।

ऋषि के जीवन पर प्रकाश

१—इस पत्र संग्रह से ऋषि के जीवन की अनेक ऐसी घटनाओं का वृत्त ज्ञात होता है जो उनके किसी जीवन चरित्र में उल्लिखित नहीं हैं। यथा—

(क) सं० १६३६ के कुम्भ के अवसर पर भयङ्कर अतिसार से पीड़ित हुए। जीवन चरित्रों में इस रुग्णता का साधारण वर्णन मिलता है। परन्तु पत्र व्यवहार पूर्ण संख्या १७३ (पृष्ठ)१ पर छपे मुख्तियार नामे से ज्ञात होता है कि उन्हें यह भयङ्कर कष्ट लगभग तीन मास तक रहा। कष्ट इतना अधिक था कि वे मुख्तियार नामे की रजिस्ट्री के समय कचहरी में उपस्थित नहीं हो सके, विशेष कमीशन ने श्री स्वामी जी के स्थान पर आकर उनका बयान लेख बद्ध किया। देखो पत्र व्यवहार पृष्ठ १४८।

(ख) पूर्ण संख्या ३३४ (पृष्ठ २७६) से विदित होता है कि २२ नवम्बर सन् १८८० को श्री स्वामी जी महाराज कुछ समय के लिए अलीगढ़ भी गए थे और वहां से अपने मुख्तियार मुकुन्दसिंह के द्वारा एक रजिस्टर्ड पत्र मुंशी बख्तावरसिंह के पास भेजा था। ऋषि दयानन्द के किसी भी जीवन चरित्र में २२ नवम्बर १८८० को उनके अलीगढ़ जाने का उल्लेख नहीं है।

(२) ऋषि दयानन्द के कई स्थानों में पहुँचने तथा वहां से प्रस्थान करने की तिथियों का उल्लेख उनके जीवन चरित्रों में नहीं मिलता। उनमें से अनेक स्थानों की तिथियों का ज्ञान इस पत्र संग्रह से हो जाता है। इसके लिए देखो भूमिका पृष्ठ ११, १२।

(३) इस पत्र संग्रह के प्रकाश में आने से ऋषि के जीवन चरित्रों में दी गई कई स्थानों की पहुंचने और प्रस्थान करने की तिथियें अशुद्ध प्रमाणित हुईं। उनका संशोधन करना आवश्यक है।१ देखो भूमिका पृष्ठ ११, १२।

इस दृष्टि से यह पत्र संग्रह ऋषि के जीवन

१. यहाँ तथा आगे भी उल्लिखित पूर्ण संख्या तथा पृष्ठ संख्या रामलाल कपूर ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पत्र व्यवहार के द्वितीय संस्करण के अनुसार है।

१. श्री बा० देवेन्द्रनाथ संकलित जीवन चरित्र (आर्य साहित्य मण्डल अजमेर से प्रकाशित) में तिथियों की जितनी अशुद्धियों का संशोधन इस पत्र व्यवहार (प्रथम संस्करण) से हो सका उसका संशोधन हमने उक्त जीवन चरित्र के द्वितीय संस्करण की पाद टिप्पणियों में कर दिया है। परन्तु प्रबन्धक और मुद्रक की भूल से हमारी अधिकांश टिप्पणियों पर हमारे नाम का संकेत छापना रह गया है।

चरित्रों के लिखने में अपूर्व सहायक है।२ इस विषय में हम यहां विस्तार करना नहीं चाहते। सम्पादक महोदय ने अपनी भूमिका में इस विषय पर विशद प्रकाश डाला है। देखो भूमिका पृष्ठ ११-१३।

ऋषि के कतिपय महत्त्व पूर्ण विचार

ऋषि दयानन्द के इन पत्रों में कई एक ऐसे महत्वपूर्ण विचार व्यक्त किए गए हैं जिन पर आचरण न करने से न केवल आर्य समाज में शिथिलता आई, अपितु देश का भी महान् अकल्याण हुआ, हो रहा है और होगा। यथा—

(१) ऋषि दयानन्द का मन्तव्य था कि मातृ-भाषा संस्कृत है (देखो पृष्ठ २६२) और उसी की उन्नति से भारत का कल्याण हो सकता है अन्य भाषाओं से नहीं (देखो पृष्ठ २()।

(२) ऋषि दयानन्द चाहते थे कि आर्य समाज की पूरी शक्ति संस्कृत भाषा की उन्नति में लगे अरबी फारसी अंग्रजी के लिए स्कूल कालेज खोलने देश के लिए हानिकारक समझते थे। वे आर्य व्यक्तियों को इसके लिए मना करते रहे। देखो पृष्ठ २६१, २६२, ३७१, ४०५।

(३) अंग्रेजी भाषा की वृद्धि से वे बहुत दुःखी थे। पृष्ठ २६०।

(४) ऋषि दयानन्द चाहते थे कि देसी राज्यों में सारा राज्य कार्य आर्य भाषा (हिन्दी) तथा संस्कृत में हो, अंग्रेजी में न हो। इसके लिए महाराजा सज्जनसिंह को विशेष रूप से लिखा था। देखो पृष्ठ ३७१।

इन विषयों पर ग्रन्थ के सम्पादक श्री पं० भगवद्दत्त जी ने अपनी भूमिका में अत्यन्त विशद प्रकाश डाला है। आर्य समाज के नेताओं और अधिकारियों को वे पृष्ठ (१८-३५) अत्यन्त मननपूर्वक पढ़ने चाहिए, और पिछली भूल से देश की कितनी महती हानि समाज के द्वारा हुई इस विषय पर ठण्डे मस्तिष्क से विचार करना चाहिए। भूल का परिमार्जन यदि अब भी कर लिया जाए तो आर्य समाज के द्वारा देश का महान् लाभ हो सकता है। और उसका एक मात्र मार्ग अथवा एक मात्र प्रोग्राम है—

संस्कृत भाषा का अनिवार्य ज्ञान

यदि आर्य समाज संस्कृत भाषा की उन्नति के लिए वास्तविक रूप में कटिबद्ध हो जाए, उसे प्राचीन काल के समान पुनः मातृ भाषा पद पर अलंकृत करने के लिए अपना सब कुछ बलिदान कर दे तो यह अकेला ही एक ऐसा प्रोग्राम है जिससे देश जाति और समाज का महान् कल्याण हो सकता है। इस महान् कार्य के लिए आर्य समाज को देश में एक लहर चलानी होगी कि जो

२. ऋषि दयानन्द किस स्थान पर कब पहुँचे और कब वहां से प्रस्थान किया इस सम्बन्ध की सभी तिथियों का एक संग्रह श्री स्वर्गीय पं० महेश प्रसाद जी मौलवी आलम फाजिल ने 'ऋषि दयानन्द कहां और कब' नाम से प्रकाशित किया था। हमने उसका संशोधन परिवर्धन करके और साथ अंग्रेजी तारीखें देकर बड़े प्रयत्न से संकलन किया था। उसे हम पत्र व्यवहार के द्वि० सं० के अन्त में परिशिष्ट रूप में देना चाहते थे यह कई कारणों से अन्य कई आवश्यक परिशिष्टों के साथ मुद्रित न हो सका। अब हम वे सब अमुद्रित परिशिष्ट वेदवाणी (काशी) में क्रमशः प्रकाशित कर रहे हैं।

संस्कृतज्ञ नहीं वह मूर्ख है।[१] स्वतन्त्र भारत में भारतीय ज्ञान से शून्य व्यक्ति की प्रतिष्ठा करना देश द्रोह है। भगवान् आर्य समाज के नेताओं अधिकारियों को सुमति दें जिससे भगवान् दयानन्द का यह दिव्य स्वप्न पूर्ण हो।

आर्य समाज के अतिरिक्त इसे कोई नहीं कर सकता

ऋषि दयानन्द के इस संकल्प की पूर्ति आर्य समाज के अतिरिक्त और कोई संस्था नहीं कर सकती, यह पूर्ण सत्य है। भारत के स्वतन्त्र होने के अनन्तर अभी तक संस्कृत का गौरव नष्ट हुआ है बढ़ा नहीं। संस्कृत अध्ययन की प्रवृत्ति दिनप्रति दिन भयकर वेग से क्षीण होती जा रही है। यह बात संस्कृत परीक्षाओं में बैठने वाले परीक्षार्थियों की क्षीयमाण संख्या से स्पष्ट है। पुराने ढग के एक-एक विषय के पण्डित उठते चले आ रहे हैं। यदि यही अवस्था रही तो अगली पीढ़ी में धारा प्रवाह संस्कृत भाषण करने वाला तथा किसी ग्रन्थ को आद्यन्त पूर्णतया पढ़ा सकने वाला व्यक्ति देखने को भी न मिलेगा।

ऋषि दयानन्द के कतिपय महत्त्वपूर्ण कार्य

ऋषि दयानन्द ने अपने जीवन में अनेक ऐसे कार्य किये अथवा लोगों को उसके लिये प्रेरित किया जिनसे देश जाति और समाज की उन्नति हो सकती थी। उनमें से निम्नलिखित कार्यों पर उनके पत्र व्यवहार से विशद प्रकाश पड़ता है।

गोरक्षा—ऋषि दयानन्द ने आज से ७५ वर्ष पूर्व जब भारत में गोवध का इतना महान् ह्रास नहीं हुआ था गोरक्षा के लिये महान् आंदोलन उत्पन्न किया था। राजा से रक पर्यन्त दो करोड़ भारतीयों के हस्ताक्षरों से युक्त एक प्रार्थना पत्र साम्राज्ञी विक्टोरिया के पास भेजने का उन का विचार था। उसके लिये उन्होंने महान् प्रयास किया। इस प्रार्थना पत्र पर देश के सभी राजा महाराजाओं के हस्ताक्षर कराने का विचार था। उस काल में साधारण व्यक्ति का तो क्या कहना बड़े-बड़े राजा महाराजा भी अंग्रेजों के कार्य के विरुद्ध सम्मति देने मे घबराते थे। परन्तु उदयपुर के महाराज सज्जनसिंह की प्रेरणा से जोधपुर जयपुर कोटा इन्दौर आदि के अनेक महाराजाओं ने इस प्रार्थना पत्र पर न केवल हस्ताक्षर ही किये अपितु अपने-अपने राज्यों में गोवध निषेध की आज्ञाएँ भी प्रसारित कर दीं। इस आंदोलन के विषय में ऋषि के जीवन चरित्रों से इतना प्रकाश नहीं पड़ता जितना उनके पत्रों से पड़ता है। ऋषि का यह कार्य उनकी असामयिक मृत्यु के कारण पूरा न हो सका। अन्यथा स्वतन्त्रता प्राप्त होने पर आज कांग्रेस राज्य के सन्मुख गोरक्षा के लिये हाथ जोड़ने की और नेताओं को मनाने की आवश्यकता ही न पड़ती।

---

१ ऋषि दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं—"(प्रश्न) संस्कृत विद्या में पूरी-पूरी राजनीति है वा अधूरी? (उत्तर) पूरी है, क्योंकि जो-जो भूगोल में राजनीति चली और चलेगी वह सब संस्कृत विद्या से ली है। (षष्ठ समुल्लास के अन्त में)। इसी प्रकार ऋषि दयानन्द ने अन्य विद्याओं के सम्बन्ध में भी लिखा है। यह सर्वथा सत्य है कि योरोपीय विज्ञान इतनी उन्नति करके भी भारतीय विज्ञान के सामने बालक वत् है। अकेली विमान विद्या को ही लिया जावे तो ज्ञात होगा कि भारद्वाज कृत विमान शास्त्र में विमानों के निर्माण और संचार के विषय में जितना विज्ञान भरा है उस तक पाश्चात्य वैमानिक विशेषज्ञ नहीं पहुँच पाये। भारतवासियों के सौभाग्य से भारद्वाज कृत विमान शास्त्र सम्पूर्ण उपलब्ध हो चुका है उसके दो तीन अध्याय प्रकाशित भी हो चुके हैं। यही अवस्था सभी विद्याओं में है।

ऋषि दयानन्द के गोरक्षा सम्बन्धी महान् कार्य से आर्य समाज के अनेक विद्वान् और नेता भी पूरी तरह परिचित नहीं हैं क्योंकि उन्होंने ऋषि के पत्रों का अध्ययन ही नहीं किया। वे केवल इतना ही जानते हैं कि ऋषि ने गौओं की रक्षा के लिये 'गोकरुणानिधि' नामक एक पुस्तक रची है। जब आर्यों के विद्वानों और नेताओं की यह परिस्थिति हो तब अन्य जनता का तो कहना ही क्या।

ऋषि दयानन्द का गोरक्षा आन्दोलन कितना व्यापक था उसके परिचय के लिये पत्र व्यवहार के पृष्ठ ३११—३१४, ३२१, ३५ —३५४, ३५७, ३८३, ४४६ देखने चाहिएँ।

वस्तुतः ऋषि दयानन्द के गोरक्षा आन्दोलन की व्यापकता तथा उसकी पृष्ठ भूमि को व्यक्त करने के लिये एक स्वतन्त्र पुस्तक की आवश्यकता है।

२ हिन्दी का प्रचार—ऋषि दयानन्द ने हिन्दी को राजभाषा बनाने के लिये भी महान् आन्दोलन किया था। बम्बई समाज के प्रथम नियमों के अनुसार आर्य समाज के सदस्य का आर्य भाषा (हिन्दी) जानना आवश्यक माना गया था। जब सम्   में राज्य ने उत्तर प्रदेश के राजकीय कार्यों में किस भाषा को द्वितीय भाषा के रूप में आश्रय दिया जाये इसके लिये एक कमीशन नियत किया उस समय ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज के अधिकारियों को इस बात के लिये बार २ प्रेरित किया कि वे कमीशन के सन्मुख हिन्दी के लिये साक्ष्य देवें और स्थान-स्थान से हिन्दी के लिये मेमोरियल भिजवायें। यह महान् कार्य उस समय किया गया जब नागरी प्रचारिणी सभा* और हिन्दी साहित्य सम्मेलन आदि संस्थाएं उत्पन्न भी नहीं हुई थीं।

आज भारतवर्ष में हिन्दी का जो इतना प्रचार हुआ है उसमें आर्य समाज के प्रवर्तक तथा आर्य समाज का बड़ा भारी हाथ है। परन्तु हिन्दी भाषा के जो इतिहास लिखे गये हैं उनमें ऋषि दयानन्द और आर्य समाज के हिन्दी प्रसार की कहानी केवल दो तीन पंक्तियों में ही लिखी जाती है। जब कि अन्य संस्थाओं तथा व्यक्तियों की हिन्दी सेवाओं के लिये कितने ही पृष्ठ लिखे जाते हैं। इसका प्रधान कारण आर्य समाज का इस दशा में उदासीन रहना है। किसी भी आर्य विद्वान् ने हिन्दी साहित्य का इतिहास नहीं लिखा। दूसरा व्यक्ति उसकी महत्ता का मूल्यांकन नहीं कर सकता और कई करना भी नहीं चाहते। अस्तु।

३ अंग्रेजी पढ़े लिखों की बेकारी और शिल्प-विद्यालय—आज से ७५ वर्ष पूर्व जब कि अंग्रेजी पढ़े लिखे व्यक्ति बहुत कम मिलते थे, उनकी मांग बहुत अधिक थी, उस समय में ही दूरदर्शी दयानन्द ने अपनी दिव्य दृष्टि से दूर भविष्य में होने वाली अंग्रेजी पढ़े लिखे युवकों की बेकारी को प्रत्यक्षवत् देख लिया था। इसलिये उन्होंने देश में शिल्प विद्यालय खोलने और भारतीय युवकों को शिल्प कला में प्रवीण कराने के लिये दिव्य दृष्टि दयानन्द ने जर्मन विशेषज्ञों से पत्र व्यवहार किया था। जर्मन विशेषज्ञों ने भारतीय छात्रों को शिल्पकला सिखाना स्वीकार कर लिया था। परन्तु यह महत्त्वपूर्ण कार्य भी ऋषि के असामयिक निधन से पूरा न हो सका। ऋषि के इस महत्वपूर्ण कार्य के लिये देखो पत्र-

* नागरी प्रचारिणी सभा काशी के संस्थापकों में श्री पं० रामनारायण जी मिश्र तथा उनके अन्य दो सहयोगी सभी आर्य व्यक्ति ही थे। अतएव नागरी प्रचारिणी सभा के पुस्तकालय का नाम 'आर्य भाषा पुस्तकालय' रक्खा गया जो आज तक चला आता है।

व्यवहार पृष्ठ २१४, २१६, २३१, ३३७, १५१।

४ क्षत्रिय युवकों को अंग्रेजों के माया जाल से बचाने का यत्न—ऋषि दयानन्द ने अनुभव कर लिया था कि यदि भारतीय राजा महाराजा और सामन्त आदिकों के बालक अंग्रेजों द्वारा चलाये गये कालेजों में अथवा विदेशों में शिक्षा ग्रहण करेंगे तो वे विलासी बन जायेंगे। इसलिये उन्होंने उदयपुर के महाराणा को एक राजकुमार छात्रशाला खोलने के लिये तैयार किया था। इस सम्बन्ध में पत्र व्यवहार पृष्ठ ३१६, ४२८, ४५० देखें। यह कार्य भी ऋषि दयानन्द और महाराणा उदयपुर की असामयिक मृत्यु से न हो सका।

५ आर्ष-ग्रन्थों का पठन पाठन—ऋषि दयानन्द आर्यों की उन्नति का यदि किसी को केन्द्र समझते थे तो वह था आर्षग्रन्थोंका पठन-पाठन। ऋषि लोग आर्य जाति के प्राण थे। उनके ग्रन्थों में आर्य जाति की पुरातन विद्याओं की सूक्ष्म विवेचना विद्यमान है। उन्होंने जो भी ग्रन्थ लिखे उनमें शिक्षार्थी की हित बुद्धि का प्राधान्य है, अपनी विद्वत्ता का प्रदर्शन उनका लक्ष्य नहीं। वे लोकैषणा से ऊपर थे। इसी लिए ऋषि दयानन्द ने आर्ष ग्रन्थों के पठन पाठन पर विशेष बल दिया। सत्यार्थप्रकाश ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका और संस्कार विधि के पठन पाठन विधि में आर्ष ग्रन्थों को ही स्थान दिया, उनका आनुपूर्वी पूरा २ पाठ्यक्रम भी लिखा, परन्तु आर्य समाज ने सामूहिक रूप से ऋषि के इस कार्य को नहीं अपनाया। आर्ष ग्रन्थों के मूल्य को नहीं पहचाना। कुछ लोगों ने व्यक्तिगत रूप से ऋषि के इस कार्य को पूरा करने का यत्न किया, उन्हें सफलता भी मिली। परन्तु व्यक्तिगत प्रयत्न पूर्ण सफल नहीं हो सकते। इसके लिये सामूहिक प्रयत्न की आवश्यकता है। आर्य समाज की सब से बड़ी तीन विद्यापीठों (गुरुकुल कांगड़ी, वृन्दावन तथा महाविद्यालय ज्वालापुर) ने ऋषि की पाठविधि की अवहेलना ही की और कर रहे हैं।

ऋषि दयानन्द ने अपने वेदभाष्य को राजकीय सहायता और राजकीय महाविद्यालयों में स्थान देने के लिये प्रयत्न किया। (देखो पृष्ठ ५४-६३)। उनके चिरकाल पश्चात् श्री पूज्य गुरुवर पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु के अनथक प्रयत्न से काशी की राजकीय महाविद्यालय तथा पंजाब विश्वविद्यालय की संस्कृत परीक्षाओं में ऋषि के वेदभाष्य को स्थान मिला, परन्तु उसको लेकर परीक्षा देने वाले विरले ही व्यक्ति होते हैं। वास्तविकता तो यह है कि जब हमारे महाविद्यालयों में ही ऋषि का वेदभाष्य नहीं पढ़ाया जाता, तो राजकीय परीक्षा में कौन पढ़ेगा?

आर्ष ग्रन्थों के पठन पाठन के लिए ऋषि दयानन्द ने अनेक पाठशालाएं स्थापित की थीं उनमें से दो एक के विषय में पत्र व्यवहार के पृष्ठ ४ १८, १९ द्रष्टव्य हैं।

६ आर्ष ग्रन्थों का मुद्रण—आर्ष ग्रन्थों के प्रचार का एक साधन उनका पठन पाठन में उपयोग लेना है और दूसरा साधन उनका स्वच्छ सुन्दर शुद्ध मुद्रण तथा उचित मूल्य पर प्रसार करना है जिससे आर्ष ग्रन्थ सर्व साधारण को सुलभ हो सकें। ऋषि दयानन्द ने जहां आर्ष ग्रन्थों के प्रचार के लिये अनेक संस्कृत पाठशालायें खोलीं तथा खुलवाईं वहां उनके प्रकाशन की भी समुचित व्यवस्था की। ऋषि ने अपनी अन्तिम अवस्था में दो बार परोपकारिणी सभा की स्थापना की और उसके नाम अपनी वसीयत की। इन दोनों वसीयतों—स्वीकार पत्रों में उन्होंने सभा के उद्देश्यों की प्रथम धारा में स्पष्ट लिखा है—

"प्रथम—वेद और वेदाङ्ग वा सत्य शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उनकी व्याख्या करने

आर्य समाज गति की ओर

रूढ़िवाद मनुष्य का सब से बड़ा शत्रु है।

नया प्रधान

(लेखक—श्री प्रो० रामचन्द्र शर्मा एम० ए० जालन्धर।)

कोई सत्तर वर्ष हुये अमेरिका की प्रसिद्ध यूनिवर्सिटी हार्वेड की मैडीकल फैकल्टी का अधिवेशन हो रहा था। इसमें शिक्षाप्रणाली में भारी परिवर्तन करनेके लिये महत्वपूर्ण संशोधन उपस्थित थे इसके प्रधान श्री इलियट थे। एक प्रोफेसर महोदय को इन व्यापक परिवर्तनों के कारण बहुत गुस्सा आया। उन्होंने उठ कर कहा—'मैं जानना चाहता हूं कि इस आमूल चूल परिवर्तन का क्या कारण है। इस अस्सी वर्ष से अधिक काल से इस प्रणाली के अनुसार कार्य करते आये हैं और हमारा कार्य भली भांति सफलता पूर्वक चलता रहा है। परन्तु आज इस व्यापक परिवर्तन का प्रस्ताव किया जा रहा है, यह क्यों?'

प्रधान महोदय श्री इलियट ने इसका उत्तर देते हुये कहा—

"अब एक नया प्रधान है।"

उस समय इलियट महोदय की आयु ३५ वर्ष से अधिक न थी परन्तु वह निर्भीक, उत्साही और आत्मविश्वासी युवक था। उसे रूढ़ियों से घृणा थी। प्रगति की सक्रिय कल्पना से उसका मन ओत प्रोत था। वह लकीर का फकीर बनना नहीं चाहता था। वह प्रगति का नया मार्ग ढूंढ निकालने की क्षमता रखता था।

उसने देखा कि हार्वेड यूनिवर्सिटी रूढ़ियों में फँस कर निर्जीव सी बन गयी है। वह देश की उन्नति को प्रगति प्रदान करने में असमर्थ है। उसने पक्का निश्चय कर लिया कि वह इन रूढ़ियों को तोड़ डालेगा, नये जीवन का संचार करेगा और यूनिवर्सिटी को संसार की प्रगतिशील श्रेष्ठ संस्थाओं में अग्रणी बना देगा। कहना न

कराने, पढ़ने पढ़ाने, सुनने सुनाने, छापने छपवाने आदि में (लगाया करें)।" प्रथम स्वीकारपत्र पृष्ठ २१८, द्वितीय स्वीकार पत्र ३८८।

आज परोपकारिणी सभा को स्थापित हुए लगभग ७४ वर्ष हो गये। इतने सुदीर्घ काल में कितने वेद वेदाङ्गों की व्याख्या करवाई, अथवा उनके पठन पाठन के लिये कितनी पाठशालाएं खुलवाई अथवा कितने आर्ष ग्रन्थ छपवाये? सभा के प्रारम्भिक काल में किसी प्रकार चारों वेद, शतपथ ब्राह्मण, निरुक्त, मूल अष्टाध्यायी और ईशोपनिषद् मूल किसी तरह छप गये थे उनमें से आज केवल मूल वेद और अष्टाध्यायी ही मिलते हैं, शेष ग्रन्थों की प्रायः द्वितीयावृत्ति भी नहीं हुई। प्रायः आये साल आर्ष ग्रन्थों के छपवाने के प्रस्ताव स्वीकृत होते हैं, परन्तु मुद्रण किसी ग्रन्थ का नहीं होता। नये ग्रन्थ की बात तो दूर है पूर्व छपे ग्रन्थों का पुनर्मुद्रण भी नहीं हुआ।

[क्रमशः]

**

होगा कि उसे इसमें पूर्ण सफलता मिली। जिस समय वह प्रधान बना तो वहां ४०० छात्र थे और जिस समय उसने प्रधान पद से अवसर पाया तो उस समय वहां ४०० अध्यापक और ६००० छात्र थे और हार्वेड संसार की प्रसिद्ध यूनिवर्सिटियों में गिना जाता था।

नैपोलियन

नैपोलियन ने जिस समय योरप की विजय प्रारम्भ की तो उसने समस्त सामरिक रूढ़ियों को तिलांजलि दे दी। उसके जनरलों ने उसका विरोध भी किया, पुराने मार्ग को छोड़ने की हानियों को खूब बढ़ा चढ़ा कर उसके सामने पेश किया, पर अपने इरादे का पक्का वीर, प्रगति के मार्ग का बटोही, नये ससार का स्वप्न देखने वाला, अपनी शक्ति और आत्मबल का विश्वासी, कब इन क्षुद्र बातों से विचलित हो सकता था। इन जंजीरों को छिन्न भिन्न करके वह नर सिंह विजय के मार्ग पर अग्रसर हुआ और जीत ही उसके चरण की चेरी हो गयी।

अमेरिका का प्रधान रूजवेल्ट

रूजवेल्ट महोदय जब प्रथम वार अमेरिका के प्रधान चुने गये तो उन्होंने अपने आपको एक विचित्र स्थिति में पाया। उन्होंने देखा कि ह्वाइट हाउस अनेक राजनीतिक रूढ़ियों में जकड़ा हुआ है। वह जीवन की लचक खो कर एक लोह पिंजर का रूप धारण कर गया है। उसकी आत्मा इस वातावरण से विद्रोह कर उठी। उसने इसमें नया जीवन फूंकने का निश्चय कर लिया। उसे डराया गया कि ऐसा करने से राज्य की मशीनरी उसके विरुद्ध हो जायगी। ऐसी अमर्गल बातों में कर्मचारी उसे सहयोग न देंगे और इससे भयानक परिणाम यह होगा कि अमेरिका की जनता उसके विरुद्ध हो जायगी और अपने पद पर बने रहना भी उसके लिये सम्भव न होगा।

परन्तु रूजवेल्ट किसी और ही मिट्टी का बना था जिसे उसका आत्मा सच मानता था, प्रगतिशील समझता था, नये जीवन को देने वाला अनुभव करता था वह इन गीदड़ भभकियों से कब डरने वाला था? उसने व्यर्थ रूढ़ियों और परम्पराओं का एक दम बहिष्कार किया और अमेरिका को उन्नति की ओर अग्रसर किया। आखिरकार अमेरिका की जनता ने रूजवेल्ट के नेतृत्व को इतना पसन्द किया जितना किसी और प्रधान के नेतृत्व को न किया था। रूजवेल्ट को विशेष रूप से चौथी वार अमेरिका का प्रधान चुना गया।

स्वामी दयानन्द सरस्वती

जिस समय स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भारत पर दृष्टि डाली तो उन्होंने चारों ओर रूढ़िवाद और परम्पराओं का साम्राज्य पाया। अनेक कपोल कल्पित रूढ़ियों तथा परम्पराओं ने भारत को निर्जीव सा बना दिया था। सब ओर लकीर के फकीर दिखाई पड़ते थे। क्या विद्वान्, क्या साधारण लोग सभी इन रूढ़ियों के दास थे, वे विचार की स्वतन्त्रता से सर्वथा शून्य थे। सब यही मानते थे कि "जो कुछ हमारे बाप दादा करते आये हैं वही ठीक मार्ग है। क्या वे मूर्ख थे। क्या उन्हें इतनी भी समझ न थी।"

यह बात नहीं थी कि उस समय संस्कृत के विद्वान् न हों, वेद शास्त्रों के पण्डित न हों। वह सब कुछ था और सम्भवतः आजकल से कुछ अधिक मात्रा ही में था, पर था सब कुछ निर्जीव और रूढ़ियों से जकड़ा हुआ, मस्तिष्क की उड़ान से शून्य। सायणाचार्य वेदों और शास्त्रों का पण्डित था। इनके भाष्य भी उसने किये पर वह सब कुछ रूढ़ियों से बंधा हुआ और निष्प्राण। जो कुछ उसने पूर्व सूत्र आदि में ग्रन्थों में पाया उसके आधार पर ही वेद का भाष्य कर डाला।

यदि इन सूत्रों में वेद के कुछ मन्त्रों में गौ-हत्या तक के लिये विनियुक्त किया था तो सायणाचार्य ने भी वैसा ही ठीक मान कर वेद का अर्थ अनर्थ कर दिया। वेद में आये राम, गङ्गा आदि नामों को उसने परम्परा के अनुसार दशरथ के पुत्र राम और भारत की नदी गङ्गा स्वीकार कर लिया। सायण वेद को तो अपौरुषेय मानता था, पर अपौरुषेय वेद में पुरुष विशेष के इतिहास को मानने से इनकार न कर सका, क्योंकि वह रूढ़िवाद और परम्परा से बाहर देखना ही न चाहता था।

जो बात सायणाचार्य के सम्बन्ध में सत्य है वही बात समस्त पौराणिक विद्वानों के सम्बन्ध में ठीक है। ये सभी रूढ़ि के दास थे। नीलकण्ठ बड़ा विद्वान् था। पण्डित उसका लोहा मानते थे। पर था वह भी रूढ़ि का दास। इतनी विद्वत्ता के होते हुये भी वह इसाइयों को निरुत्तर न कर सका। रूढ़िवाद ने उसके मन की उड़ान को नष्ट कर दिया था। वह रूढ़ियों को सत्य ज्ञान मान बैठा था। नतीजा यह हुआ कि पहले ही आक्रमण में परास्त हो गया और उसे ईसाई धर्म स्वीकार करना पड़ा।

यह अवस्था थी रूढ़िग्रस्त भारत की, जब महर्षि दयानन्द ने अपना कार्य आरम्भ किया। वह रूढ़ि का परं शत्रु था, इस कलंकनी को वह हर प्रकार से परास्त करने को तैयार था। जहां-जहां उसने इसका लेषमात्र भी पाया उसका विध्वंस किया। कौन रूढ़ि थी जिसका उसने खण्डन न किया? कौन परम्परा थी जिसे उसने न तोड़ा? ८ वर्ष के थोड़े से समय में उसने भारत की काया पलट डाली; इसके सूखे पिंजरे में नये रक्त का संचार कर दिया। मरे शरीरों में जान फूँक दी; सूखे दिमागों को हरा भरा कर दिया; संकुचित मनों को विशाल बना दिया; दास भावों को स्वतन्त्रता का पाठ पढ़ा दिया। उसने वेदों का सच्चा अर्थ, भारतीय संस्कृति का विशुद्ध स्वरूप जनता के सामने प्रस्तुत किया। रूढ़ियों के आवरण का नाश होने से वेद का सूर्य इतना तेज चमका, भारतीय संस्कृति की आभा इतनी सुचारु हो उठी, कि भारतीयों के भाग्य ने एक दम पलटा खाया और वे प्रगति के राज मार्ग पर आ पहुंचे। ईसाइयों ने समझा था कि कुछ वर्षों में ही सारे भारत को ईसाई बना लेंगे। जैसे सारे अमेरिका को ईसाई बना लिया था वैसे ही वे सारे भारत को ईसाइयत का जाम पिलाने के स्वप्न देख रहे थे। सर ट्रेविलियन ने हाउस आफ कामन्स में घोषणा की थी कि यह केवल चन्द वर्षों की बात है कि सारा भारत ईसा के झण्डे के नीचे आ जायेगा। हमें एक एक दो-दो बपतिस्मा देने की जरूरत न होगी। हजारों और लाखों की संख्या में भारतीय हमारे पास दौडे आयेंगे और बपतिस्मा पाकर अपने आपको कृतकृत्य समझेंगे।

यह बात सर ट्रेविलियन ने १८५३ में कही थी और आज है १९५६ इस सौ वर्ष के इतिहास पर स्वामी दयानन्द की छाप कितनी गहरी और अमिट है। यह एक अलौकिक सिद्धि है, जिससे प्रगतिवाद की श्रेष्ठता और रूढ़िवाद की निकृष्टता भली भान्ति देख पड़ती है।

यह था महर्षि का ८ वर्ष का कार्य, जिसे आर्य समाज ने आगे बढाया। परन्तु देखिये और खूब परखिये कहीं आर्य समाज भी रूढ़िवाद की ओर तो नहीं जा रहा। सोचिये और इसका उत्तर दीजिये।

* *

जोधपुर के सरकारी कार्यालय में
महर्षि दयानन्द विषयक कुछ आवश्यक उल्लेख—

(प्रेषक—श्री पं० भवानीलाल 'भारतीय' एम० ए० सिद्धान्त वाचस्पति, मंत्री, आर्यसमाज, सरदारपुरा, जोधपुर)

जोधपुर के राजकीय कार्यालय के पुराने लेखों में स्वामी दयानन्द विषयक निम्न उल्लेख मिलते हैं जो मारवाड़ी भाषा में हैं। इनका हिंदी अनुवाद साथ में दिया जाता है—

(१) बैशाख सुद १४ सम्वत् १९३१ सोमवार सन्यासी दयानन्द सरस्वती जी अठे आवसी तिणाँ सामां बारठ सांवलदान ने पाली तांई सामा मेलिया। जाब्ता रा घोड़ा ने रथ हाथी वगैरा ने परबारी खुराक रा रु० २००) साथे मेलिया।

अनुवाद—सन्यासी दयानन्द सरस्वती यहां आयेंगे। उनके स्वागत के लिये चारण सांवलदान को पाली तक भेजा है। प्रबन्ध के लिये घोड़े, रथ, हाथी तथा भोजन की व्यवस्था के लिये नकद २००) साथ भेजे हैं।

असाढ़ बद ६ सं० १९३१ रा

श्री जी साहबां री सवारी राइ का बाग सूं बग्घी असवार हुये ने नीमां खाम आसरे खां फैजुल्ला खां रे बाग पं० दयानन्द सरस्वती जी कने पधारिया। सूं बघी उतर मांय पधारिया सूं उठे मांय पण्डित जी रो रहणो है जठे पधारिया सूं पण्डित जी ऊठ ऊभा हुआ। श्री जी साहब नमस्कार करनें हाथ में मोहर १ ने रु० २५) धा सूं उणा कने धर दिया। घड़ीक (तीन घंटे) उठे विराजिया। साथे महाराज श्री परताप सिंह जी ने रावराजा तेजसिंह जी था।

अनुवाद—महाराजा साहब राइ का बाग राजमहल से बग्घी में बैठकर संध्या होने से कुछ पूर्व फैजुल्ला खां के बाग में पण्डित दयानन्द सरस्वती के समीप गये। वहां बग्घी से उतर कर भीतर गये। वहां भीतर पंडित जी का निवास है वहां गये। पंडित जी उठकर खड़े हुये। महाराजा साहब ने नमस्कार करने के अनन्तर १ मोहर व २५) रु० भेंट स्वरूप स्वामी जी के हाथ में रख दिये। लगभग १ घड़ी (तीन घंटे) वहां रहे। उनके साथ में महाराजा श्री० प्रताप सिंह जी तथा रावराजा तेजसिंह जी थे।

नोट—१ यह विवरण मित्रवर श्री भैरवसिंह जी आर्य की कृपा से प्राप्त हुआ है।

नोट—२ राज्य में प्रचलित सम्वत् तथा वास्तविक विक्रम सम्वत् में एक वर्ष का अन्तर है। उस समय १९४० वि० था, जिसे कार्यालय ने १९३९ लिखा है। आशा है यह विवरण इतिहास प्रेमियों के लिये मनोरंजक सिद्ध होगा।

———
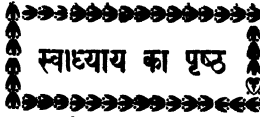
स्वाध्याय का पृष्ठ

महर्षि दयानन्द की क्रान्ति

सर सैयद अहमद खाँ महर्षि दयानन्द के मित्र और प्रशंसक थे। कुरान की व्याख्या करने का उनका प्रकार महर्षि के प्रकार से बिल्कुल मिलता है। दयानन्द कहते हैं कि वेदों के देव वैयक्तिक देव नहीं प्रत्युत प्रकृति की शक्तियां हैं ठीक इसी प्रकार सर सैयद भी अपने तफसीर उल कुरान में देवताओं की प्राकृतिक शक्तियों के रूप में ही व्याख्या करते हैं। महर्षि ने वेद की गाथाओं की अलंकारिक व्याख्या की है ठीक इसी प्रकार सर सैयद ने मुहम्मद पैगम्बर की विद्युतीय अश्व की पीठ पर स्वर्ग में जाने की गाथा की अलंकारिक व्याख्या ही की है। जैसे स्वामी दयानन्द ने स्वर्ग एवं नरक को मानसिक अवस्था में कहा है ठीक इसी प्रकार सर सैयद ने बहिश्त और दोजख का वर्णन किया है। लंडन में आयोजित विश्वधर्म परिषद् में मुसलमान प्रचारक ख्वाजा कमालुद्दीन ने इस्लाम पर निबन्ध पढ़ते हुए नरक की अग्नि की मानसिक चिन्ता नल से और स्वर्ग की अप्सराओं की देवियों बहनों और लड़कियों से तुलना की थी। यही अवस्था ईसाइयत की है। इस पर भी वैदिक धर्म का गहरा असर पड़ा है।

सबसे पहले सन्त ओगस्टाइन ने यह उद्घोषित किया कि ईसाई धर्म सदा से चला आ रहा है परन्तु ईसा मसीह ने जब उस धर्म का प्रचार आरम्भ किया तब से वह क्रिश्चियेनिटी कहाया है। उसने बाइबिल के त्रित्ववाद की Trinity. वैदिक व्याख्या की है। Father son तथा Holy Ghost उसकी दृष्टि में क्रमशः सत चित् और आनन्द है, जोकि वेद में ईश्वर का नाम है। कुछ वर्ष पूर्व डीनोइन्गा ने भी लंडन के सेन्ट पाल के गिर्जाघर में उपदेश देते हुए इसी प्रकार की व्याख्या की थी। सर हर्बट रिस्ले ने १६११ की सन्सस रिपोर्ट में यह भविष्यवाणी की थी कि आर्य धर्म समस्त हिन्दुओं का राष्ट्र धर्म्म होकर रहेगा।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि संसार आज वैदिक धर्म को स्वीकार कर रहा है। लंडन में सनातन धर्म के प्रसिद्ध व्याख्याता पं० श्याम शंकर ने खुले तौर पर यह घोषणा की थी कि हिन्दुओं का वास्तविक नाम आर्य है, धर्म की सबसे सच्ची कसौटी केवल वेद है। उन्होंने कहा था कि सनातनी लोग जन्म की जात पाँत को नहीं मानते बल्कि सच्चे वर्णाश्रम धर्म को स्वीकार करते हैं। उनके सनातन धर्म में छूआछूत को महत्त्व नहीं दिया गया है। इसी प्रकार के विचार बुद्ध गया के महन्त की Universal Religion नामक १६०७ में प्रकाशित पुस्तक में भी पाए जाते हैं। अतः यह कहना अनुचित न होगा कि महर्षि दयानन्द ने संसार के सब धर्मों में क्रान्ति उत्पन्न कर दी है।

भगवान् दयानन्द की यह क्रान्ति यहीं तक

सीमित नहीं है। उन्होंने पाश्चात्य सभ्यता में रंगे हुए नवयुवकों के दिल और दिमागों को बदलने के लिए 'Back to the Vedas' का सुन्दर सन्देश सुनाया है। इस सन्देश ने फ्रांस की महाराज्य क्रान्ति से कुछ कम प्रभाव पैदा नहीं किया है। ऋषि के चरण चिह्न पर चलते हुये महात्मा अरविन्द ने वेदों की मनोवैज्ञानिक व्याख्या की जिसे देखकर पाश्चात्य संसार दङ्ग रह गया। श्री पं० गुरुदत्त जी ने ऋषि की शैली का अनुसरण करते हुये वेदों के कुछ मन्त्रों की वैज्ञानिक व्याख्या की जिसने विज्ञान जगत में हलचल मचा दी। इसी प्रकार डा० रेले ने अपनी Vedic Gods नामक पुस्तक में वेदों के देवताओं की Bialogical व्याख्या करके विद्वानों के लिए एक नया मार्ग खोल दिया है।

आज ऋषि दयानन्द की वेदों के यौगिक अर्थ करने की शैली की सचमुच विजय हुई है। इस विजय का स्वाभाविक परिणाम यह है कि संसार के बडे २ दिमाग हिल गए हैं। संसार के बडे २ विकास वादियों के मुंह बन्द हो गए हैं। वे दबी जुबान में वेदों की प्रशंसा करने लग गए हैं। यह है क्रान्तिकारी दयानन्द की विचार के क्षेत्र में अद्भुत क्रान्ति।

(स्व० आचार्य रामदेव जी के एक अभिभाषण का अंश)

देशों तथा सागरों के संस्कृत नाम

एशिया, यूरोप और अमेरिका के सब ही बड़े २ देशों तथा सागरों के नाम संस्कृत जन्य हैं जो यह बतलाते हैं कि आदि काल में संस्कृत भाषा भाषी आर्य भूलोक के सब देशों के आदि काल में आबाद करने तथा नाम धरने वाले थे। यथा :—

१ Mediteranean	मध्य धारा
२ France	प्रांचका
३ England	अंगल संडका
४ Ireland	आर्य संडका
५ Scotland	शक्ति संडका
६ London	नन्दनका
७ Greece	गिरीशाका
८ Italy	अतुल देशाका
९ Switzerland	पवित्र संडका
१० Rome	रोमक
११ Russia	ऋषिया
१२ Denmark	धेनुमार्ग
१३ Norway	नारावज
१४ Sweden	सुयोधन
१५ Baltic	बालिटक
१६ Caspian sea	काश्यप स्थान
१७ Hungry	हूनगृह
१८ Germany	शर्मन देश
१९ Austria	राष्ट्रीय
२० Egypt	गुप्तदेश
२१ Turkey	तर्क स्थान
२२ Arab	अर्व स्थान (घोड़ों का प्रदेश)
२३ Palestine	पाली स्थान
२४ Aden	उद्यान
२५ Baluchistan	बलि उचित स्थान
२६ Afghanistan	अवगाहन स्थान
२७ Kandhar	गंधार
२८ Iran	आर्य स्थान
२९ Balakh	वाह्लिका
३० Asphan	अश्व स्थान
३१ China	चीन
३२ Japan	जयपाण
३३ Ceylone	सिंहल द्वीप
३४ Alexandria	शकेन्द्रिया

(Asiatic Researches of Calcutta)

पूर्वजों की महिमा की रक्षा करो

पूर्वजों की महिमा तथा गौरव पर अभिमान,

उनकी विशेष बातों का संरक्षण और पूर्वजों का आदर सत्कार प्राय'सर्मा जीवित जातियोंमें अबभी किया जाता है। जापानी अपने पूर्वजों की पूजा करते हैं। लन्दन में राज्याभिषेक की पुरानी कुर्सी अब भी पुराने पत्थर सहित बर्ती जाती है। शेक्सपियर, मिल्टन, स्काट आदि साहित्य-सेवियों के जन्म स्थान हस्तलिखित पत्र, हस्ताक्षर लन्दन और एडिनबरा में बड़े सम्मान से दिखाये जाते हैं। जिस हांडी में शेक्सपियर खाना बनाता था वह Stratford on Avon में उनके सुरक्षित वास स्थान में रखी है। जहां मिल्टन ने पुस्तक लिखवाई वह झोंपड़ी Chalfont St. Peter में अबभी सुरक्षित है। कार्डिनल वूल्जेकी टोपी उनके स्थापित किये हुए एक कालिज में रखी है। फ्रांस में राज्य क्रान्ति तथा नैपोलियन सम्बन्धी वस्तुएं सादर रखीं हैं। इटली का तो कुछ कहना ही नहीं। प्राचीन काल सम्बन्धी फोरम, स्नानागार, मन्दिर, वीथी व्यायामशाला, भवन सब ही पुनर्जीवित किये जा रहे हैं। सेंट पीटर के गिर्जे में द्वार के पास ही वह स्थान बडे गर्व से दिखलाया जाता है जहा सम्राट् शालिमेन ने पोप के समक्ष वन्दना कर ईसाई मत ग्रहण किया। ईसा के क्रास का कांटा और लकड़ी का भाग इटली तथा लन्दन में दिखाया जाता है। फ्लोरेंस में वह स्थान सुरक्षित है जहां सैवेन रोला को अन्य मतावलम्बियों ने जीवित जलाया था। लार्ड कर्जन का वह कथन स्मरणीय है कि यदि ब्रिटिश साम्राज्य और शेक्सपीयर में से मुझे एक लेना पड़े मैं निस्संकोच साम्राज्य को तिलांजलि देने के लिये प्रस्तुत हूंगा। साराश यह कि निज भाषा निज साहित्य, निज सभ्यता तथा निज गौरव की वृद्धि करना प्रत्येक देश वासी का कर्तव्य है।

(श्री डा० सीताराम जी के गुरुकुलीय अभिभाषण का अंश)

प्रभु की उपासना क्यों?

मानव-समाज के आस्तिक पक्ष में यह जिज्ञासा सदैव बनी रहेगी कि ईश्वर की उपासना क्यों करनी चाहिये। प्रत्येक नर नारी को यह भली भांति ज्ञात है कि मनुष्य चाहे कितना ही विद्वान, धनवान् और शक्तिशाली क्यों न हो अन्ततः वह अल्पज्ञ, अल्प सामर्थ्यवान् व मरण धर्मा है। यदि यौवन में उसे अपनी शक्तियों पर घमंड रहा तो घोर आपत्ति वार्धक्य और अन्तावस्था में अपनी बेबसी पर अश्रुपात करते हुए पश्चात्ताप ही किया। चंगेजखां तातारी ने कत्ले आम में, नैपोलियन ने दिग्विजय में और मुहम्मद बिन-कासिम वा महमूद गजनवी ने सोना चांदी वा हीरे जवाहारात लूट कर संग्रह करने में, रोम के बदनाम सम्राट नीरो, लखनऊ के वाजिद अली और अन्य अनेक विषयासक्त नरेशों ने विषय भोग में सुख की खोज की। परन्तु वे सब बुरी तरह असफल हुए। चंगेजखां ने अपने बेटे काजुके तिब्बत के बर्फों में गल कर मर जाने का समाचार सुन कर मरुस्थलों में रोते पीटते जान दे दी। नैपोलियन ने सेंट हेलेना के कारागार में क्षय का रोगी बनकर अपनी विजयों पर असन्तोष प्रकट करते हुए प्राण दे डाले। महमूद ने मरते समय लूट मार का माल चौकियों पर सजा कर उसे दुःखभरी नजरों से देखा और मुहम्मद बिन कासिम ने अपनी आंखों से अपना सिर कटते हुए देखा और उसे बक्स में बन्द करके खलीफा बगदाद के पास भेजे जाने के विषय में सुना। निष्कर्ष यह है कि ये सब वीर अपमान, वेदना वा पश्चात्ताप के भागी बने।

जर्मनी के प्रसिद्ध विद्वान् गोथे ने मरते समय पुकारा था कि मुझे प्रकाश, प्रकाश अथवा ज्ञान चाहिये। इसलिये सब दिव्य शक्तियों के भण्डार परमानन्द के दैवीय स्रोत की अपेक्षा रखता हुआ

खोज करता है। यह सब कुछ उसे भगवान् की उपासना से ही मिलता है। भीषण अन्धकार के समय निर्जन वन के गुह्य से गुह्य स्थान में पड़े पराये धन को अपहरण करने से संकोच पाप या लज्जा की अनुभूति इतनी केवल भौतिक विद्वान को नहीं हो सकती जितनी आध्यात्मिक पुरुष को प्रभु को साक्षात् सर्व व्यापक या कर्मफल दाता मानकर होती है।

आचार्य पं० रामदेव जी भिक्षु
आर्यमित्र उपासना अङ्क

गन्दे खाद के अभिशाप

वर्तमान समय में हमारे देश के खेती करने वाले जन अधिक उपज की आशा पर विष्टा आदि की मलिन खाद डालते चले जाते हैं कि जिनके खान-पानसे भारत में रोगों की प्रबलता होती जाती और बुद्धि प्रतिदिन घटती जाती है। इस विषय में य० अ० १२ मं ६६ में परमात्मा ने आज्ञा दी है कि हे मनुष्यो ! खेती से अत्यन्त सुख प्राप्त होते हैं, खेती में **विष्टा कभी मत डालो**। किन्तु बीज सुगन्धि आदि से युक्त करके ही बोओ कि जिससे अन्न भी रोग रहित उत्पन्न होकर मनुष्यों की बुद्धि को बढ़ावें। जैसा कि :—

शुनर्थं सुफला विकृषन्तु भूमिर्थं
शुनकी अभियन्तु वाहैः।
शुना सीरा हविषा तोशमाना
सुपिप्पला ओषधि कर्ता नास्मै ॥

यजुर्वेद अ० २२ मंत्र २३ में लिखा है कि जो मनुष्य यज्ञ से शुद्ध किये जल, ओषधि, पवन, अन्न, पत्र, पुष्प, फल, रस, कन्द आदि पदार्थों का भोजन करते हैं वे नीरोग होकर बुद्धि, बल, आरोग्य और दीर्घायु वाले होते हैं।

गन्दे खाद से उत्पन्न वस्तुओं को खाने से बीमार होने पर बहुत सा धन वैद्यों को देना होगा। अपने कार्यों को पूर्ण रीति से न कर सकेंगे। नाना प्रकार के कठिन रोग भारत में फैलेंगे जिस प्रकार वर्तमान समय में प्लेग आदि बीमारियों का नाम सुनते हैं जिनका नाम तक हमारे पूर्वज न जानते थे।

(नारायणी शिक्षा पृ० ४१२)

*

चुने हुए फूल

—जो बुद्धिमानों से बुद्धि ही प्राप्त करता है वह पण्डित है।
—पर निन्दा न करने वाला सर्वत्र शोभा पाता है।
—अधर्म द्वारा प्राप्त धन से जो छेद ढाका जाता है वह नंगा हो जाता है, उससे दूसरा छेद फटता है।
—वह सभा नहीं जिसमें वृद्ध नहीं हैं, वे वृद्ध नहीं जो धर्म का कथन नहीं करते, वह धर्म नहीं जिसमें सत्य नहीं है और वह सत्य नहीं है जो छल से रहित नहीं है।
—हिंसा दुष्टों का बल है, पति सेवा स्त्रियों का बल है और क्षमा गुणियों का बल है।

महर्षि जीवन चरित्र

शंका समाधान

क्या जूता पहरे कच्चा भोजन उठाना अच्छा है?

प० ठाकुर दास जी बड़े भक्ति भाव से महाराज का भोजन उनके आसन पर पहुँचाया करते थे। एक दिन दोपहर के समय बडी कडी धूप में वे नगे पांव भोजन का थाल उठाए स्वामी जी के पास पहुँचे। महाराज ने अति दया से ठाकुर दास जी को कहा "ऐसी धूप में आप बिना छाते और नंगे पांव क्यों भोजन लाये हैं ?" ठाकुर दास जी ने विनय की "भगवन ! जूता पहने कच्चा भोजन उठाना अच्छा नहीं है !" स्वामी जी ने कहा "मैं इस छूआछूत के व्यर्थ के बखेडे को नहीं मानता। धर्म शास्त्र में इसका कहीं भी वर्णन नहीं है।"

द्वेष को मिटाने का साधन शान्ति धारण करना है

भरुच में व्याख्यान में एक वक्ता ने स्वामी जी के लिए बड़े अपमान सूचक शब्द कहे। उस समय वहां कुछ पूर्वीय सैनिक भी उपस्थित थे। वे अपने क्रोध को वश में न रख सके। वे वक्ता को पीटना ही चाहते थे कि श्री महाराज ने उनको रोक लिया और कहा 'अपमान कर्त्ता का अपमान करने से उसका सुधार नहीं होता किन्तु सम्मान देने से वह सुधर जाता है। जैसे आग में आग डालने से वह शान्त नहीं होती ऐसे ही द्वेषी की द्वेष बुद्धि उसके साथ द्वेष करने से दूर नहीं हो सकती। अग्नि को शान्त करने का साधन जल है। इसी प्रकार द्वेष को मिटाने का साधन शान्ति धारण करना है।' महाराज के उपदेश को सुनकर सैनिक शान्त हो गये।

आर्य मर्यादा का पालन

भोजन के अनन्तर स्वामी जी अपने कर्मचारियों को भी कुछ काल के लिए विश्राम करने की आज्ञा देते थे। एक दिन एक विद्यार्थी स्वामी जी की ओर पाँव करके सो गया जब सारे कर्मचारी जाग उठे तो महाराज ने उनको अपने पास बुलाकर उपदेश दिया कि प्रत्येक आर्य को आर्य मर्यादा का पालन करना चाहिये। बिना बुलाए बोलना, बड़ों की बातों में आप ही आप बोलने लग जाना आर्य मर्यादा के विरुद्ध है। अपने माननीय व्यक्तियों की ओर पीठ करना और पांव करके सोना भी आर्य मर्यादा के प्रतिकूल है। स्वामी जी के उपदेश को सुनकर अपराधी विद्यार्थी ने उनके चरण पकड़ लिये और आगे के लिए मर्यादा पालन का प्रण किया।

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः का सच्चा अर्थ

एक समय एक पण्डित स्वामी जी के निकट आकर बोला। 'महाराज हम आपके कथन से अपना धर्म क्यों छोड़ें ?' श्री कृष्ण जी ने भी कहा है 'श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः ! अपना धर्म

कुछ स्थूल वाला भी हो तो भी अच्छा है।'

स्वामी जी ने कहा 'आप गीता के तात्पर्य को नहीं समझे। यहां धर्म से तात्पर्य साम्प्रदायिक मतों से नहीं किन्तु इस पद का अर्थ वर्णाश्रम धर्म है।'

पररक्षार्थ शिकार खेलना धर्म है

राजकोट के राजकुमार महाविद्यालय में स्वामी जी महाराज का भाषण हुआ जो बहुत पसन्द किया गया। कालेज के आचार्य महोदय ने वार्तालाप में स्वामी जी को कहा "आप तो अहिंसा धर्म का उपदेश देते हैं और राजकुमार शिकार करते हैं। आपके धर्म में इनको तो कोई स्थान नहीं है।"

स्वामी जी ने उत्तर दिया 'हमारे पूर्वज ऋषि महर्षि बड़े ज्ञानी थे। हिंसक जन्तुओं से प्रजा की रक्षा करना क्षत्रिय का धर्म है। अतः परररक्षार्थ क्षत्रिय का यह कर्म उपकार ही है।'

आदि सृष्टि में ज्ञान क्यों आवश्यक है?

राजकोट में महाराज ने वेदों के ईश्वरीय ज्ञान होने पर एक व्याख्यान दिया। उस में उन्होंने अनेक युक्तियां देते हुए कहा 'जिस परमानन्द देव ने मनुष्यों की आंखें आदि इन्द्रियों के लिए सूर्यादि, सहायक पदार्थ पैदा किए हैं, यह हो नहीं सकता कि उसने मनुष्य के मस्तिष्क को उज्ज्वल और उन्नत करने के लिए ज्ञान न दिया हो। वह ज्ञान सृष्टि के आदि में होना चाहिये।'

देह रक्षा के लिए देह का संवारना धर्मानुकूल है

एक दिन स्वामी जी बैठे हुए क्षौर करा रहे थे। उसी समय एक शास्त्री वहाँ आ गया और कहने लगा 'संन्यासियों का धर्म तो त्याग है। आप इस देह विभूषा में क्यों लगे हुए हैं?'

स्वामी जी ने हँसकर कहा 'यदि बाल बढ़ाने में ही त्याग है तब तो रीछ सबसे बड़ा त्यागी सिद्ध होगा। ऐसी बातों में त्याग और वैराग्य नहीं है। देह की रक्षा के लिए उसे संवारना, सुधारना धर्मानुकूल है। जैसे प्रमादी पुरुष पुष्ट शरीर से पापाचरण करते हैं वैसे ही परोपकारी जन परिपुष्ट और बलिष्ठ काया से अधिक धर्म कर्म करते हैं।'

क्या यतियों को सुवर्ण न दिया जाय?

एक दिन एक पण्डित ने भगवान दयानन्द को कहा 'हमने सुना है कि आप धन ले लेते हैं परन्तु शास्त्र में तो यह लिखा है कि 'न यतीनां कांचनं दद्यात्' यतियों को सुवर्ण न दिया जाय।

महाराज ने उत्तर दिया 'यहां तो केवल सुवर्ण देना वर्जित है तो क्या आपकी मति में यतियों को चांदी, हीरा, मोती आदि देना चाहिए? भाई यदि इस भाव को समझना चाहते हो तो वह अति सरल है। यतियों को संग्रह न करना चाहिए।

परन्तु यदि परोपकार के लिये द्रव्य लेना भी पड़े तो कोई दोष नहीं है। जिन भगवद् भक्तों ने पर हितार्थ अपनी काया को भी अर्पण कर दिया है वे करोड़ों मन कांचन रखते हुये भी अकिंचन (गरीब) हैं। रही मेरी बात। मैं जब गंगा पर पर्यटन करता था तो उन दिनों में केवल कौपीनधारी दिगम्बर था। उस समय मुझे कौड़ी तक छूने की आवश्यकता न थी। परन्तु अब मैंने जन हित के कार्य्यों में अधिक भाग लेना आरम्भ कर दिया है। इसलिये 'कूप मृत्तिका न्याय' से लोगों से धन लेकर उन्हीं के हितकर कार्य में लगा देता हूं। पर यदि आप यह मानते हैं कि द्रव्य का स्वभाव पापमय है—इसको छू लेने से संक्रामक व्याधि की भांति पाप लग जाता है। तो आप भी तो धनवान् प्रतीत होते हैं? क्या ऐसी अवस्था में आप अपने को पापी मानते हैं?

महाराज के कथन के अनन्तर शास्त्री ने उनके चरण छू कर कहा 'आप वास्तव में वीतराग हैं।'

सृष्टि की उत्पत्ति कब हुई ?

मुरादाबाद में ब्रिटिश इण्डियन एसोसियेशन का अधिवेशन उसी बंगले में हो रहा था जिसमें स्वामी जी का निवास था। विवाद के अन्तिम दिन का विषय था 'सृष्टि को उत्पन्न हुये ५ हजार वर्ष बीते हैं। स्वामी जी महाराज उठ कर एक दूसरे कमरे में गये और वहां से एक बिल्लौरी पत्थर लाकर उपर्युक्त एसोसियेशन के सदस्यों से पूछने लगे आप भूगर्भ विद्या वेत्ता हैं। कृपया यह बतायें कि इस पत्थर को इस अवस्था में आने में कितना समय लगा है ? उन्होंने कहा कि कई लाख वर्षों में इसका स्वरूप बना है। तब महाराज ने पादरी महाशय को कहा कि अब आप ही बताइये, जब सृष्टि को बने पांच सहस्र वर्ष हुये तो लाखों वर्षों में यह पत्थर कैसे बन गया ? इस पर पादरी महाशय बहुत कटे और लगे इधर उधर की बातें बनाने।

आर्य्यों में परदा प्रथा कब प्रचलित हुई ?

सहारनपुर में चण्डी प्रसाद नामक एक सज्जन ने स्वामी जी से प्रश्न किया 'भारत के लोग स्त्रियों को इसलिये आवरण में रखते है कि वे धर्म्म से पतित न हो जायँ। ईसाई लोग अपनी स्त्रियों को परदा नहीं कराते और स्वच्छन्दता से भ्रमण के लिये ले जाते हैं। आर्या स्त्रियां परदा होते भी वे आचार में ईसाई स्त्रियों से अधिक गिर जाती हैं, इसका क्या कारण है ? स्वामी जी ने इसके उत्तर में कहा, "आर्य्यों में परदे की रीति पुरातन नहीं है। यह मुसलमानों के राज्य से प्रचलित हुई है। नित्य नये उपद्रवों से अपनी बहू बेटियों को बचाये रखने के लिये, उस अत्याचार के युग में, आर्य्यों ने यह रीति चलाई थी। परन्तु अब मूढ़ लोग इसे धर्म्म मानने लग गये हैं।"

कौन सुखी है और कौन दुःखी है ?

एक जिज्ञासु ने सहारनपुर में महाराज से पूछा, "कौन सुखी है और कौन दुःखी ?" जिसके मन की अवस्था सम वह सुखी और जिसकी विषम वह दुःखी होता है। ऊपर के ठाटबाट और ऋद्धि समृद्धि में सुख नहीं होता। सृष्टि को ईश्वर ने किस वस्तु से, कब और क्यों रचा ? ईश्वर सर्व व्यापक है या नहीं ? वेद बाईबिल और कुरान के ईश्वर वाक्य होने में क्या युक्ति है ? मुक्ति क्या वस्तु है और कैसे प्राप्त हो सकती है ? चांदापुर (शाहजहांपुर) के सुप्रसिद्ध मेले में इन शंकाओं का श्री स्वामी जी महाराज ने निम्न प्रकार समाधान किया :—

"सृष्टि को परमात्मा ने अव्यक्त प्रकृति से बनाया। वह परमाणुरूप प्रकृति जगत् का उपादान कारण है ? और आदि तथा अन्त से रहित है। अभाव से किसी वस्तु का भाव नहीं हो सकता ! जैसे गुण कारक के होते हैं वैसे ही कार्य के भी हुआ करते हैं। इसलिये यदि जगत का कारण नास्ति मानें तो कार्य को भी नास्ति रूप ही मानना पड़ेगा। यदि यह माना जाय कि ईश्वर ने सृष्टि को अपने स्वरूप से रचा है तो जगत् भी ईश्वर रूप ही सिद्ध होगा। जैसे घड़ा मिट्टी से पृथक् नहीं हो सकता, ऐसे ही जगत और ईश्वर भी एक ही ठहरेंगे। फिर तो चोर, हत्यारा और पापात्मा होने का आरोप परमात्मा पर ही हो जायगा। इसलिये जो लोग जगत् के कारण प्रकृति को परमात्मा से पृथक् नहीं मानते उनका मत प्रमाण प्रतिकूल और युक्ति शून्य है।

सभा मन्त्री का दौरा

(विशेष सम्वाददाता द्वारा)

सभा मन्त्री दिनांक ६-६-५६ को गाजियाबाद में आर्य वीर दल के उत्सव में सम्मिलित हुए।

आर्य वीर दल के सैनिकों तथा अधिकारियों ने स्टेशन पर बड़ा भव्य स्वागत किया। रात्रि को एक बृहत् सार्वजनिक सभा में भाषण हुआ जिसमें सार्वदेशिक सभा की पञ्चसूत्रीय योजना जनता के समक्ष रखी :—

१—वैदिक साहित्य का प्रकाशन तथा अनुसन्धान कार्य।

२—राजार्य सभा का निर्माण।

३—आर्य समाज द्वारा महर्षि प्रणीत कार्यक्रम को पुनर्जीवित करना।

४—गोरक्षा।

५—ईसाई प्रचार निरोध।

१०-६-५६ को प्रातःकाल पुनः भाषण दिया और १२ बजे दोपहर को देहली वापस लौटे।

१४-६-५६ को श्रीयुत रामनिवास अग्रवाल, प्रधान देहली नगरपालिका से भेंट की। इस भेंट में उनके साथ देहली नगर के विशिष्ट जैनी सज्जन भी थे। उन्हें बताया गया कि देहली नगर के लाजपतराय मार्केट में खुले बाजार में हिन्दू तथा जैन मन्दिरों के ठीक सामने मांस तथा मांस से बने पदार्थ बिकते हैं। शिष्टमंडल की ओर से मांग की गई कि यह बिक्री तत्काल बन्द की जायें क्योंकि इससे निरामिष भोजी हिन्दुओं की भावनाओं को ठेस पहुंचती है और इसकी विद्यमानता म्युनिसिपल कमेटी के नियमों के विरुद्ध भी है। प्रधान महोदय ने बड़े ध्यान से बात सुनी और मांस की बिक्री को शीघ्र ही बन्द कराने का आश्वासन दिया।

इसी अवसर पर नगर पालिका में दो दुधारू गौ और एक बछड़ा नीलाम के लिये आये जो कसाइयों द्वारा क्रय किये जाने वाले थे। सभा मन्त्री ने प्रधान महोदय का ध्यान इस बात की ओर खींचा कि आर्य समाज के प्रबल आन्दोलन के फल स्वरूप यह नीलामी बन्द कर दी गई थी परन्तु पुनः नीलामी जारी करके नगर पालिका गोवध के जघन्य कार्य में अप्रत्यक्ष रूप से योग दे रही है। प्रधान महोदय ने पहले तो इस आरोप की सत्यता को अस्वीकार किया परन्तु जब उनके कर्मचारियों से इस बात की पुष्टि कराई गई कि नीलामी अब पुनः होने लगी है तो उन्होंने इस सम्बन्ध में कड़ी कार्यवाही करने और बन्द करने का आदेश देने का आश्वासन दिया।

———

विदेशी आक्रान्ता :—

ईसाई पादरियों से प्रश्न

लेखक श्री ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी, प्रधान सेनापति सार्वदेशिक आर्य वीर दल पृष्ठ सं० २४, मूल्य =) प्रति या ६) सैकड़ा।

इस पुस्तक की उपयोगिता का यही प्रमाण है कि इसकी १०००० हजार प्रतियां हाथों हाथ बिक चुकी हैं और मांग पूरी नहीं हुई। दूसरा संस्करण प्रेस में है। आप अपना आर्डर शीघ्र ही भेजिये अन्यथा तीसरे संस्करण की प्रतीक्षा करनी होगी।

आर्य वीर प्रकाशन मण्डल,
१५, दीवान हाल- देहली।

गोरक्षा आन्दोलन—

उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान में गोवध अब भी अबाध गति से जारी है

उत्तर प्रदेश में गोवध निषेध विधेयक ६ १-५६ को गजट होकर प्रचलित हो गया है किन्तु रामपुर, मुरादाबाद बिजनौर तथा मेरठ आदि जिले गोवध के प्रमुख गढ़ हैं। सभा कार्यालय में प्राप्त सूचनाओं के अनुसार मुझे यह कहते हुए दुःख होता है। मुख्यतया इन जिलों में और साधारणतया समस्त उत्तर प्रदेश में गोवध का जघन्य कार्य अबाध गति से जारी है। राज्य सरकार की यह ढील अनुचित है। उसे चाहिये कि वह अपने पुलिस विभाग को कड़े निर्देश दे कि वह इस विधेयक का ईमानदारी से और सख्ती से परिपालन कराये तभी उसके उद्देश्य की पूर्ति होगी।

आर्य हिन्दू जनता को इस दिशा में विशेष सावधान और जागरूक रहना है। जहां २ और जब २ गोवध के मामले हों उनकी पुलिस में रिपोर्ट करनी चाहिये और अपराधियों को दंडित कराने में प्रयत्नशील रहना चाहिये। यदि पुलिस को इस पुण्य कार्य में आर्य समाजों के सहयोग की आवश्यकता हो तो वह दिया जाना चाहिये। गोवध निषेध विषयक कार्यों का ठीक २ लेखा रखा जाकर इसी कार्य में उसका उपयोग भी होना चाहिये।

राजस्थान में भी जहां गोवध कानून से बन्द है प्रतिदिन बहु संख्या में गायें मारी जाती है और जवान तथा दुधारू गायें वध के लिये राजस्थान से बाहर ले जाई जाती हैं। यह राजस्थान सरकार के लिये बहुत बड़ा कलंक है जिसे शीघ्र से शीघ्र मिटा देना चाहिये। इसका एक मात्र उपाय यही है कि राजस्थान से गौओं की निकासी बन्द होनी चाहिये और राजस्थान में गोवध निषेध के कानून का कड़ाई से पालन होना चाहिये।

रामगोपाल

मन्त्री, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

गोवध निषेधवाले राज्योंका सम्मेलन

केन्द्रीय सरकार तज्जन्य समस्याओं से चिन्तित

भारत सरकार का खाद्य व कृषि मन्त्रालय उन सभी राज्यों के अधिकारियों का एक सम्मेलन बुलाने जा रहा है जहां गोवध पर अब तक प्रतिबन्ध लगाया जा चुका है। बताया जाता है कि विभिन्न राज्यों में गोवध पर प्रतिबन्ध लगाये जाने के बाद भारत सरकार उससे उत्पन्न स्थिति का अध्ययन कर रही है गोवध बन्द किये जाने के फल स्वरूप उत्पन्न समस्याओं का समाधान करने के लिए आवश्यक कार्रवाई अविलम्ब करने के सम्बन्ध में भारत सरकार चिन्तित है। इस प्रतिबन्ध से बेकार पशुओं की संख्या बढ़ेगी जिनकी व्यवस्था की शीघ्र आवश्यकता है। सम्मेलनमें अस्वास्थ्यकर और अविकसित पशुओं की व्यवस्था और उनके लिये गो सदनों की स्थापना आदि विषयों पर विचार किया जायगा।

भारत सरकार की यह घोषित नीति है कि वह गोवध पर प्रतिबन्ध लगाने के काय में किसी राज्य के सामने बाधक के रूप में खड़ा नहीं होना चाहती है किन्तु उससे उत्पन्न समस्याओं से वह चिंतित है। सम्मेलन इसी उद्देश्य से बुलाया जा रहा है कि जिन राज्यों ने गोवध पर प्रतिबन्ध लगाया है, उनसे बात चीत कर इस समस्या का निदान निकाला जाये।

सम्मेलन में उन राज्यों से तत्सम्बन्धी विभाग के सचिव, निर्देशक और परामर्श दाता आदि भाग लेंगे। इसके अलावा भारत सरकार के खाद्य व कृषि मन्त्रालय के अधिकारी रहेंगे। उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, अजमेर, भोपाल, पंजाब में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद गोवध पर प्रतिबन्ध लगाया गया है। इसके अतिरिक्त जम्मू व काश्मीर, सौराष्ट्र, कुर्ग, मनीपुर, मैसूर, त्रिपुरा, पटियाला संघ हिमाचल प्रदेश, राजस्थान बिलासपुर, कच्छ और मध्य भारत में अंग्रेजों के शासन काल से गोवध पर प्रतिबन्ध है। आसाम, पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा, आंध्र, मद्रास, हैदराबाद, बम्बई और त्रावनकोर कोचीन में गोवध पर प्रतिबन्ध नहीं है।

———

वेदोत्पत्तिः—क्यों ? कब ? कहां और किसके द्वारा हुई ?

लेख पर

श्री गवेषक जी की भ्रान्ति

[लेखक - श्रीयुत पं० सुरेन्द्र शर्मा गौर]

जून १६५६ के 'सार्वदेशिक' के पृष्ठ ६५ से १६८ तक तथा २१३ पर "महर्षि दयानन्द जी प्रदर्शित वेदोत्पत्ति की भ्रान्त्यालोचना" शीर्षक देकर मेरे अमुद्रित ग्रन्थ "वेदोत्पत्तिः - क्यों ? कब ? कहां ? किस समय ? कितने समय में ? और किसके द्वारा . किस प्रकार हुई ?" में से विद्वज्जनों के द्वारा विशेष विचार विमर्शार्थ एक अपूर्ण लेखांश—लेख द्वारा नवम्बर १६५५ ई० के श्री वैंकटेश्वर समाचार पत्र और पारडी से प्रकाशित "वैदिक धर्म" में छपा था । मुझे प्रसन्नता हुई कि वैदिक सिद्धान्त प्रिय श्री कुंवर शिवपूजनसिंह जी कुशवाहा, बी० ए० वैदिक गवेषक सिद्धान्त वाचस्पति आदि अनेकोपाधि विभूषित कानपुर ने प्रथम तो जालन्धर पंजाब से निकलने वाले हिन्दी के आर्य पत्रों में और अब 'सार्वदेशिक' में भी उक्त शीर्षक से कुछ लिखा है। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने मेरे उस लेख को केवल साधारण दृष्टि से ही पढ कर आवेश में आकर लिख दिया है । लेख पर मनन नहीं किया। गवेषक को आवेश में आकर वैयक्तिक बातों के साथ कुछ लिखने के स्थान में शान्त मस्तिष्क से विचार विमर्श करके बुद्धि पूर्वक ही लिखना चाहिये । आपका उद्देश्य तो यही है न ? कि शतपथ ब्राह्मण के उस प्रमाण से चारों वेद, अग्नि वायु, आदित्य व अंगिरा इन चार ऋषियों के द्वारा ही उत्पन्न हुए हैं ।

इस पक्ष की पुष्टि वेदादि शास्त्रों के प्रमाण तथा तर्क-युक्ति पूवक सिद्ध कीजिये। आपको कौन मना करता है ? हम तो चाहते ही यह हैं कि उक्त पक्ष की पुष्टि के लिये कोई अन्य अकाट्य युक्ति तर्क और संहिता प्रमाण प्रकाशित हों। इसके अतिरिक्त आपने विद्वत्ता पूर्ण "एक भयंकर लेख प्रकाशित किया है" में आपका लेख पढ़कर अवाक् हो गया। "महर्षि दयानन्द जी के सिद्धांत पर कुठाराघात होते देखकर अत्यन्त खेद हुआ।" आपको यह भी पता नहीं है कि वेदों में कोई भी रूढ़ि शब्द नहीं है । "आपमें और इन पौराणिक पंडितों में क्या अन्तर रहा । आप और पौराणिक पंडित एक ही नाव पर हैं।"

आदि लेख का उत्तर देने में तो मेरी लेखनी असमर्थ ही है। हाँ यदि कोई नई युक्ति तर्क अथवा विशेष मान्य वैदिक प्रमाण द्वारा **शतपथ के उसी स्थल से चार ऋषि और चार वेदों की उत्पत्ति आप सिद्ध करने की कृपा कर सकेंगे तो मेरे लेख का उद्देश्य सफल होगा** और आपको धन्यवाद भी सप्रेम समर्पण किया जायेगा अन्यथा केवल पर-प्रत्यय नेव बुद्धि अन्य अस्त व्यवसस्त कोलाहल मात्र करने से कोई लाभ न होगा ।

जब मेरे उस लेख के अन्त में विस्पष्टतया लिखा है कि "**वेदज्ञ विद्वानों को शान्त मस्तिष्क से ही इस विषय पर विशेष विचार विमर्श करना चाहिए** ।" तो मेरा उद्देश्य तो प्रकट ही है । आप तो व्यर्थ में ही सामने आ डटे । अतः आपको भी दुःख होना स्वाभाविक ही था।

और क्या यह सखेद मान लिया जाय कि आर्य समाज में आपके अतिरिक्त कोई वेदज्ञ विद्वान हैं ही नहीं और यदि हैं तो क्या उनके प्रसुप्त **मस्तिष्क को जाग्रत और कुण्ठित लेखनी को तीक्ष्ण न किया जाये** ? "सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।" यही ऋषि दयानन्द जी महाराज प्रदर्शित हमारा मान्य सिद्धान्त है ।

वृक्षों में जीव

[लेखक—श्री लाखनसिंह वैद्य बिसौली (बदायूं)]

शास्त्रों में जीवात्मा का लक्षणः—

"इच्छा द्वेष प्रयत्न सुखदुःख ज्ञानान्यात्मनो लिङ्गमिति" न्या० द० ॥

अर्थात्- इच्छा, द्वेष प्रयत्न, सुख, दुख और ज्ञान यह लक्षण जिस देहधारी में पाये जाते हैं वह देहाभिमानी जीव अवश्य है ऐसा निश्चित नियम है।

अब देखना यह है कि मनुष्य पशु पक्षी आदि की तरह वृक्षादि वनस्पतियों में भी जीवात्मा के उक्त शास्त्रीय लक्षण पाये भी जाते हैं या नहीं ?

इन लक्षणों को समझने से पहले यह जान लेना आवश्यक है कि भगवान की सृष्टि में दो प्रकार के जानदार चेतन पदार्थ पाये जाते हैं एक वह कि जिनमें सुख दुःख प्राप्त करने की अनुभूति बाहर से पाई जाती है जैसे मनुष्यादि। दूसरे वह जिनमें सुख दुःखादि की अनुभूति अन्दर से पाई जाती है जैसे वृक्षादि वनस्पति वर्ग। इसमें प्रमाण :—

अन्तः संज्ञा भवन्त्येते सुख दुःख समन्विता ॥
मनु० १ । ४६ ॥

अर्थात् वृक्षादि को बाह्य बुद्धि तो नहीं होती किन्तु आन्तरिक संज्ञा होती है जिससे कि वे सुख दुःख अनुभव करते हैं। उपरोक्त शास्त्रीय लक्षण वृक्षादि में किस प्रकार से पाये जाते हैं यह लिखते हैं :—

१ — इच्छा

पानी न मिलने पर वृक्षादि वनस्पतियां मुर्झाने लगती हैं जिससे उनकी प्राप्त करने की इच्छा प्रकट होती है।

२ — द्वेष

एक बड़े पेड़ के नीचे किसी छोटे पौधे को लगाइये तो वह उस पौधे को पनपने नहीं देगा।

३ - प्रयत्न

वृक्ष का कुछ भाग काट दीजिये तो वह अपने उस घाव को भरने का प्रयत्न करेगा और उसके प्रयत्न की क्रिया कुछ समय में पूर्ण हो जावेगी और घाव भर जावेगा।

४-५ — सुख दुःख

भोजन पानादि की अनुकूल परिस्थिति में वह सुख अनुभव करते हैं और हरे भरे रहते हैं तथा प्रतिकूल परिस्थिति प्राप्त होने पर वह दुःख अनुभव करते हैं और सूखने और कुम्हलाने लगते हैं।

६—ज्ञान

एक ही स्थान पर भिन्न २ आहारों वाले पेड़ पौधे बो दिये जावें तो आप उनमें अपने भोजन को ग्रहण करने की शक्ति ज्ञान पूर्वक पावेंगे न कि अज्ञान पूर्वक। ऐसा कभी कहीं देखने में नहीं आया है कि वे अपने भोजन के स्थान पर दूसरे के भोजन को ग्रहण करलें अर्थात नींबू नारंगी का और आम नीम का भोजन कभी ग्रहण नहीं करेगा।

प्रसिद्ध भारतीय विज्ञान वेत्ता सर जगदीश चन्द्र बोस का अनुसन्धान भी शास्त्रानुकूल ही है उन्होंने भी वृक्षादि वनस्पतियों का परस्पर वार्तालाप करना और सुख-दुःख अनुभव करना आदि का क्रियात्मक रूप में परीक्षण कर सिद्ध कर दिया है कि वृक्षादि वनस्पतियां जानदार हैं। महर्षि स्वामी दयानन्द जी का विचार भी इस के अनुकूल ही पाया जाता है वह भी इस बात को स्वीकार कर गये हैं कि वृक्षादि वनस्पतियां जानदार हैं और उनमें जीव अपने कर्मानुसार फल भोगार्थ जन्म

ग्रहण करता है और सुखदुःख भोगता है। उन्होंने अपने महान् ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के नवम समुल्लास में दो स्थलों पर मनुस्मृति के दो श्लोक उद्धृत कर अपने विचार की पुष्टि की है :—

शरीरजैः कर्मदोषैर्याति स्थावरतां नरः ॥

मनु० १२ । ९ ॥

अर्थात जो नर शरीर से चोरी, परस्त्री गमन श्रेष्ठों को मारने आदि दुष्ट कर्म करता है उसे वृक्ष आदि स्थावर का जन्म मिलता है।

स्थावराः कृमि कीटाश्च
मत्स्याः सर्पाश्च कच्छपाः।
पशवश्च मृगाश्चैव
जघन्या तामसी गतिः ॥

मनुस्मृति १२ । ४२ ॥

आगे स्वामी दयानन्द जी महाराज सत्यार्थप्रकाश में लिखते हैं कि जो मनुष्य अत्यन्त तमोगुणी होते हैं वे स्थावर वृक्षादि" के जन्म को प्राप्त होते हैं।

महर्षि कपिल सांख्य दर्शन में लिखते हैं कि:-

वीरुधादी नामपि भोक्तृ भोगायतनत्वं पूर्ववत्।

सांख्य० ५ । १२१ ॥

अर्थात वृक्षादि में भी जीव भोक्ता है और उनका देह भोगायतन है। महर्षि कपिल सांख्य में ६ प्रकार की योनियां मानते हैं जिनसे अपने कर्मानुसार जीव का सम्बन्ध होता है उनमें से चौथी उद्भिज योनि है जिसका अर्थ वृक्षादि स्थावर वनस्पतियों से है।

ऊष्मजाण्डज जरायुजोद्भिज्ज सांकल्पिक सांसिद्धिकं चेति न नियमः ॥ सां० ५ । १११॥

महर्षि कपिल के अनुसार भगवान् की सृष्टि में और भी न जाने कितने ही देह है जिनका पता नहीं है। उद्भिज योनि में वृक्षादि के ग्रहण में प्रमाण :—

उद्भिज्जा स्थावरा सर्वे बीज कांड प्ररोहिणः ॥ मनु० १ । ४६ ॥

अर्थात् सब स्थावर शरीर उद्भिज कहलाते हैं और वह दो प्रकार के होते हैं एक बीज से उत्पन्न होने वाले दूसरे शाखा से उत्पन्न होने वाले।

छांदोग्य उपनिषद् में महर्षि आरुणि उद्दालक स्पष्ट ही वृक्षादि में अभिमानी जीव को मानते हैं।

अस्य सोम्य महतो वृक्षस्य यो मूलेऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेद्यो मध्येऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेत्स एष जीवेनात्मनानुप्रभूतः पेपीयमानो मोदमानस्तिष्ठति ॥

छां० उ० ६ठा प्रपा० ११वां खंड ॥

अर्थात हे सोम्य इस महान् वृक्ष की जड़ में चोट मारी जावे तो वह जीवित रहेगा परन्तु रस बहने लगेगा। जो उस वृक्ष के मध्य में चोट मारी जावे तो भी वृक्ष जीवित रहेगा परन्तु रस निकलने लगेगा। सो यह 'वृक्ष जीवात्मा से व्याप्त होकर जड़" से पानी लेता हुआ हरा भरा रहता हुआ खड़ा रहता है।

इन उपरोक्त आर्ष प्रमाणों से सिद्ध होता है कि जीव कर्मानुसार मनुष्यादि की देहों के समान वृक्षादि देहों को भी प्राप्त होता है और सुख दुःखादि भोगता है और यह वृक्षादि वनस्पति वर्ग चेतन है न कि ईंट पत्थरादि समान जड़।

भगवान् की सृष्टि में प्रत्येक योनि के विभिन्न प्रकार के जीवों के अनुकूल उन उनकी परिस्थिति के अनुसार जो भी भोग सामग्री उनके उपभोगार्थ परमपिता परमात्मा ने निश्चित कर दी है वह सृष्टि नियम के अनुकूल होने से उनकी भोग सामग्रियों के उपभोग में कोई पाप पुण्य की समस्या उपस्थित ही नहीं होती—बात विचारणीय है।
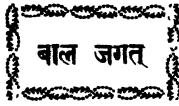
बालोपयोगी शिक्षायें

[लेखक—श्री० डा० मुन्शीराम जी शर्मा एम ए० पी० एच० डी]

बालक का सीधा सम्बन्ध अपने माता पिता से होता है। माता पिता के अतिरिक्त परिवार में भाई बहिन भी होते है। इन सबके साथ बालकों का व्यवहार कैसा रहना चाहिए। इसे हम वेद मन्त्रों के आधार पर नीचे लिखते हैं।

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः
मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसार मुत स्वसा
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।
ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वि यौष्ट
संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः।
अन्यो अन्यस्मै वल्गु वदन्त
एतसध्रीचीनान्वः संमनसस्कृणोमि॥
समानी प्रपा सह वो ऽन्न भागः
समाने योक्ते सह वो युनज्मि।
सम्यञ्चो सपर्यतारा नाभिमिवाभितः।

(अथर्व काण्ड ३ अ ६ सू० ३०–३१ मन्त्र २–३ तथा ५–६)

माता पिता का आदर

परिवार के भीतर पुत्र को पिता के अनुकूल व्रतवाला होना चाहिए। उसका आचरण पिता के समान हो। उसका मन माता के साथ प्रीति युक्त हो। माता के मन को कष्ट पहुंचाना पुत्र के लिए किसी भी प्रकार उचित नहीं है। शास्त्रों में माता का स्थान सौ गुरुओं के समान है। यदि किसी स्थान पर माता पिता तथा अन्य गुरुजन बैठे हों तो सबसे पहले पुत्र को माता के चरण स्पर्श करना चाहिए। प्रत्येक बालक अपनी मां के अङ्ग २ से उत्पन्न होता है। अतः उसका परम पावन कर्त्तव्य माता के साथ 'संमनाः' होकर रहना है। माता के मन के अनुकूल आचरण करना और उसे प्रसन्न रखना पुत्र के लिए परमावश्यक है। जो पुत्र माता के हृदय को प्रसन्न करने वाला है और पिता के अनुकूल अपना आचरण बनाता है अर्थात् सदाचार के सम्बन्ध में पिता का अनुकरण करता है उसकी आयु, विद्या, बल और यश बराबर बढ़ते रहते हैं।

भाई बहनों से प्रेम

बालक को अपने भाई और बहिनों में से किसी के साथ किसी भी अवस्था मे द्वेष न करना चाहिये। उनमें पारस्परिक प्रेम इतनी अधिक मात्रा में होना चाहिये कि कोई भी व्यक्ति उन्हें देखकर उनके गुण शील आदि से प्रभावित हो। सव्रत बनना बालकों के जीवन में समान गुण-कर्म स्वभाव वाला बनना है। ऐसे ही बालकों के मण्डल को देखकर एक अपरिचित व्यक्ति भी उनकीकुलीनतासे स्वतः परिचितहो जाता है। बालक जब एक दूसरे के साथ मिलें, उस समय उन्हे अत्यन्त भद्रता पूवक सुखदायिनी बोली बोलनी चाहिए। वाणी में अमृत और विष दोनों भरे पड़े हैं। हम चाहें तो उससे अमृत की वर्षा कर सकते हैं और यदि इच्छा हो तो वाणी से विष भी उगला जा सकता है। एक अच्छा बालक अमृतमयी वाणी का प्रयोग करता है परन्तु संस्कार और व्रत से विहीन बालक अमृत के स्थान पर अपनी जीभ से विष को उगलता है। अमृत की वर्षा करने वाले बालक का आदर होता है परन्तु जो विशाक्ति कटूक्तियां और गाली गलौज बकता है उसकी ओर कोई भी अच्छी दृष्टि से नहीं देखता।

महिला जगत्

महारानी विक्टोरिया मां के रूप में

[लेखक—इतिहास का एक विद्यार्थी]

यद्यपि महारानी विक्टोरिया का स्वभाव बड़ा कोमल और भावुक था तथापि वह बड़ी कठोर माता थीं। उनके जीवन का निजी माप दण्ड बहुत ऊँचा था अतः वह नहीं चाहती थीं कि उनके बच्चे जीवन के उच्च स्तर से नीचे गिरें। बच्चे कभी भी यह शिकायत न कर सकते थे कि उनकी मां के विचारों का उन्हें पता नहीं रहता क्योंकि महारानी जो कुछ अपने बच्चों को कहती या लिखतीं वह खरा होता था और उसमें लाग लपेट न होती थी। अपने बच्चों की पथ भ्रष्टता-विशेषतः सिगरेट पीने, ताश खेलने, घुड़ दौड़ में भाग लेने और गप्प शप करने को वह जरा भी बर्दाश्त न करती थीं। जब युवराज (स्व एडवर्ड सप्तम) २५ वर्ष के और २ लड़कों के पिता थे, उन्होंने भावी जार के साथ अपनी भांजी का रिश्ता तय करने के लिये सेंट पीटर्स बर्ग (रूस) जाने की इच्छा प्रकट की। महारानी ने उनकी इस यात्रा का विरोध किया और कहा "तुम्हारा घर पर कम रहना और इधर उधर दौड़ते रहना अच्छा नहीं। देश के निवासी और हम सब चाहते हैं कि तुम थोड़े बहुत स्थिर बनो।"

युवराज को घुड़ दौड़ों का बड़ा शौक था जिसे महारानी जरा भी पसन्द न करती थीं। एक बार उन्होंने युवराज को लिखा "अब थोड़े दिनों में एस्कौट घुड़ दौड़ों का क्रम जारी होने वाला है अतः मैं गम्भीरभाव में तुम्हें चेतावनी देती और विश्वास करती हूं कि तुम दो दिन से अधिक उनमें भाग न लोगे !......... तुम्हारे उदाहरण से बहुत लाभ और बहुत हानि हो सकती है।" जब युवराज की आयु ४० वर्ष की थी तब महारानी ने सुना कि युवराज ने ठीक उस दिन जिस दिन वेस्ट मिनिस्टर के गिरजे के अध्यक्ष का अन्त्येष्टि संस्कार होने वाला था, लंडन स्थित अपने प्रासाद में नाच का आयोजन किया है तो उन्होंने अपने महल से तार भेजकर युवराज की कठोर भर्त्सना की। महारानी विक्टोरिया अपने दूसरे बेटे राजकुमार एल फ्रेड की खुलकर आलोचना किया करती थीं जो चिड़चिड़े और विचित्र स्वभाव का व्यक्ति था। वह सिगरेट पीने लगा था। महारानी को इससे घृणा थी। एक बार जब वह महारानी के देहात के राजप्रासाद में जहां उनका वैधव्यका अधिकांश जीवन व्यतीत हुआ था, गया तो महारानी ने 'धूम्र पान' के लिए नियत कमरे को बन्द करके बिजली बुझा देने का आर्डर दे दिया था। जब उनके तीसरे राजकुमार आर्थर ने लम्बे पायजामे का सूट प्राप्त किया तो महारानी ने उसके गवर्नर को लिखा 'पायजामे की जेबें देखकर मुझे अत्यन्त खेद हुआ है। मैं जेबों में हाथों का रखा जाना पसन्द नहीं करती। वह जेबों में हाथ डालकर

खाने की मेज पर बैठता है।" जब इस राजकुमार की आयु २८ वर्ष की थी तो महारानी ने उसके घोड़ों के दरोगा को लिख भेजा 'राजकुमार को अच्छी दवाई दो क्योंकि वह पीला पड़ता आ रहा है।'

महारानी की पुत्रियों ने उन्हें बहुत कम परेशान किया। उनकी शादियों में बड़ी सावधानता वर्त्ती गई। एक राजकुमारी के लिए जब वर तय करने की चर्चा चली तो महारानी ने कहा "प्रस्तावित वर के पास आजीविका का स्वतंत्र साधन होना चाहिये भले ही वह कम क्यों न हो। वह बुद्धिमान और चरित्रवान् होना चाहिए। यह आवश्यक नहीं है कि वह शासक घराने का ही हो।" वह राजकुमारी तथा उसकी दोनों छोटी बहनें अप्रसिद्ध राजघरानों में विवाहीं परन्तु उन का गार्हस्थ जीवन सुखी रहा यद्यपि सबसे बड़ी पुत्री जर्मनी के राज घराने में पहले ही विवाही जा चुकी थी।

विक्टोरिया के काल में बेटों के सम्बन्ध में माताओं का दृष्टिकोण बड़ा अन्ध विश्वास पूर्ण था। वे बेटों को देव पुत्र मानती थीं इसलिए वे उनको खूब खिलातीं, उन्हें प्यार करतीं और उन की कुचेष्टाओं एवं मनमानियों को देव सुलभ स्वाभाविक व्यवहार मानकर प्रसन्न हुआ करती थीं। परन्तु महाराणी विक्टोरिया एक विभिन्न प्रकार की मां थीं। उन्हें भय रहता था कि स्वार्थी चापलूसों के कुचक्र में फँसकर उनके पुत्र बर्बाद न हो जायें। उन्हें यह भी आशंका रहती थी कि कहीं उनमें अभिमान और अहकार न आ जाय। वह स्वयं राजमद से घृणा करती थीं। एक बार महारानी ने अपनी सबसे बड़ी पुत्री पर जो जर्मनी के राजसिंहासन के उत्तराधिकारी को विवाही थी, अपने मनोगत भावों को स्पष्ट किया था। उन दिनों जर्मनी में राजाओं और राजकुमारों को देवोपम स्थान प्राप्त था और वहां ऊंच नीच की भावना बड़ी व्याप्त थी। उन्होंने इस बात पर आंसू बहाए थे कि जर्मनी के राजकुमार एक मात्र सेना के अफसरों के साथ घुलते मिलते हैं और उन क्षेत्रों में चरित्र की स्वतन्त्रता जरा भी नहीं है। उन्होंने लिखा 'मैंने अपने पुत्रों में सदैव यह भाव भरने की चेष्टा की है कि वे भी किसान मजदूरों और नौकरों जैसे हाड़ मांस के बने हैं इसी लिए मै उन लोगों में घुल मिल जाने का प्रयत्न करती रही हूं।'

इन शब्दों को पढ़कर महारानी के महान् उत्तर दायित्व के बोझ को अनुभव करने में देर न लगेगी जिन्हें पति की सहायता के बिना पुत्रों के प्रारम्भिक जीवन का निर्माण करना पड़ा था। उन्होंने यह ठीक ही कहा था 'राजकुमार बनना बड़ी भयकर परीक्षा और कठिनाई है क्यों कि किसी को भी उन्हें सत्य कहने और ऊंच नीच का ज्ञान कराने का साहस नहीं होता जो बच्चों एवं नवयुवकों के सुधार के लिये अनिवार्य होता है।'

विविध सूचनाएं तथा वैदिक धर्म प्रचार

निर्वाचन

समाज	पदाधिकारी	चुनाव की तिथि
१—आर्य समाज शाहपुरा (राजस्थान)	प्रधान—आर्य नरेश श्रीमान् राजाधिराज श्री सुदर्शन देव जी मन्त्री—श्री भँवरलाल जी टॉक (आर्य)	१३-५-५६
२—आर्य उप प्रति निधि सभा हरदोई	प्रधान—श्री सरदारसिंह जी बी० ए० हरदोई मन्त्री—श्री रामस्वरूप जी	३०-४ ५६
३—आर्य समाज विनयनगर देहली	प्रधान—श्री प्रकाशचन्द्र जी शास्त्री मन्त्री श्री मनोहरलाल जी	१३-५-५६
४—आर्य समाज विजयनगर	प्रधान—श्री मा० गंगाराम जी मन्त्री—श्री डा० जयदेव जी	३०-५-५६

गुरुकुल कांगड़ी

दिल्ली विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री गणेश सखाराम महाजनी सपरिवार गुरुकुल में आकर तीन दिन तक रहे। आपने गुरुकुल की कार्य शैली और प्रगति का निरीक्षण करके बहुत संतोष प्रकट किया। गुरुकुल के महाविद्यालय विभाग की शिक्षा विधि के विषय में गुरुकुल के उपाचार्य जी और प्रस्तोता जी से आपने बड़ी दिलचस्पी के साथ चर्चाएं करके अपने अमूल्य सुझाव दिये हैं। आपके साथ ही दिल्ली विश्वविद्यालय के इतिहास शास्त्र के उपाध्याय श्री डा० विश्वेश्वर प्रसाद जी भी पधारे थे। आप गुरुकुल के वातावरण से प्रभावित होकर कहने लगे मैं तो यहां बार बार आना चाहता हूं। आपने इतिहास शास्त्र के अध्ययन के विषय में कई कीमती सुझाव दिये हैं। दोनों महानुभाव कुल के आतिथ्य से विशेष प्रभावित हुये हैं।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के विद्यालय विभाग में बालकों का प्रवेश जुलाई मास में हो रहा है। गुरुकुल की उपाधियां सरकार और विश्वविद्यालयों द्वारा स्वीकृत हैं। प्रवेशार्थ प्रार्थनापत्र आचार्य, गुरुकुल कांगड़ी (सहारनपुर) से मंगाये जा सकते हैं।

आचार्य
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय।

सत्यार्थ प्रकाश का विशिष्ट संस्करण

अनेक सज्जनों के मेरे नाम सत्यार्थ प्रकाश के बृहदाकार स्थूलाक्षर सटिप्पण संस्करण के

सम्बन्ध में पूछताछ के पत्र आते रहते हैं। ऐसे सब सज्जनों की सेवा में निवेदन है कि सत्यार्थ प्रकाश के इस संस्करण के बारह समुल्लास छप चुके हैं। अभी तेरहवां, चौदहवां समुल्लास, नाना परिशिष्ट, भूमिका एवं ग्रन्थकार परिचय छपने शेष हैं।

स्वामी वेदानन्द,
अध्यक्ष,
विरजानन्द वैदिक संस्थान,
पो० खेड़ा खुर्द (दिल्ली)

उत्सव

आर्य कुमार सभा फर्रुखाबाद का पांचवां वार्षिकोत्सव ८, ६, १० जून को ससमारोह मनाया गया। प्रत्येक दिन लगभग ७ हजार जनता एकत्रित होती थी। उत्सव में भाग लेने वाले आर्य विद्वानों में श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालंकार का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

कालीचरण आर्य
मन्त्री

आर्य समाज सरसपुर (अहमदाबाद) के रजत जयन्ती महोत्सव के अवसर पर आर्य सम्मेलन, गोरक्षा सम्मेलन तथा अस्पृश्यता निवारक सम्मेलन हुये जिनका बड़ा प्रभाव पड़ा।

मोती सिंह विजयसिंह
मन्त्री

शोक प्रस्ताव

हरियाना प्रांत और आर्य समाज के नेता हिन्दू जाति के प्राण श्री ला० खेमचन्द जी रईस पानीपत का देहांत ३-६-५६ को हो गया। उनके शोक में नगर के समस्त शिक्षणालय बन्द रहे। ४-६-५६ को एक विराट शोक सभा हुई। शव के साथ हजारों नरनारी थे और जगह २ शव पर पुष्प वर्षा हुई। —योगेश्वर चन्द्र
मन्त्री

गढ़वाल आर्य सम्मेलन

१ जून से ३ जून तक आर्य समाज नौगी परवाल के अधिकारियों के उद्योग से श्री धनीराम जी जोशी की अध्यक्षता में उक्त सम्मेलन नौगी परवाल में हुआ। सम्मेलन में भाग लेने वाले आर्य विद्वानों में श्रीयुत पं० धर्मपाल जी विद्यालंकार का नाम विशेष उल्लेखनीय है। गढ़वाल के प्रमुख २ आर्यों तथा कार्यकर्त्ताओं ने भाग लिया :—सम्मेलन की कार्यवाही बड़ी रोचक और शिक्षाप्रद थी जिसका उत्तम प्रभाव पड़ा।

रुद्रदत्त मन्त्री चौम्बकोट
आर्य समाज

बुद्ध जयन्ती महोत्सव के अवसर पर सारनाथ (काशी) में सभा द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार

सभा के उपमन्त्री श्री शिवचन्द्र जी बुद्ध जयन्ती महोत्सव के अवसर पर सारनाथ (काशी) वैदिक धर्म प्रचारार्थ गये। वहां उन्होंने सभा के प्रधान श्री पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति का सन्देश जो हिन्दी तथा अंग्रेजी में छपा हुआ था, उत्सव में पढ़कर सुनाया। ता० २३, २४ तथा २५ मई को उत्सव में पधारे हुए बौद्ध भिक्षुओं, उत्तरप्रदेश के मंत्रीगण, उच्चाधिकारियों तथा उच्चकोटि के शिक्षित वर्ग को पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय लिखित अंग्रेजी पुस्तक "Social Reconstruction under Buddha and Dayananda" तथा श्री पं० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति लिखित हिन्दी पुस्तक "महर्षि दयानन्द तथा महात्मा बुद्ध" भेंट की। ता० २६, २७ तथा २८ मई को काशी के कई विद्वानों तथा स्थानीय दैनिक पत्रों के सम्पादकों से मिल कर उन्हें उपर्युक्त दोनों पुस्तकें भेंट कीं। बनारस के समस्त दैनिक पत्रों में श्री पं० इन्द्र जी का सन्देश तथा श्री शिवचन्द्र जी द्वारा प्रचार कार्य प्रकाशित हुआ था।

बौद्ध जयन्ती गया में सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रचार

श्री पं० धर्मदेव जी विद्या मार्तण्ड के नेतृत्व

में एक प्रतिनिधि मण्डल बौद्ध जयन्ती पर्व, गया में प्रचारार्थ गया। प्रतिनिधियों में सार्वदेशिक आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति श्री ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी प्रमुख थे। इस प्रतिनिधि मण्डल ने वहां जाकर लंका, तिब्बत ब्रह्मा, स्याम, थाईलैण्ड, आदि देशों से पधारे बौद्ध भिक्षुओं को आर्य समाज का साहित्य भेट किया जिसमें बौद्ध धर्म सम्बन्धी पुस्तकें भी थीं पर्व के अवसर पर सार्वदेशिक सभा के माननीय प्रधान श्री पं० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति का सन्देश श्री पं० धर्मदेव जी ने पढ़ कर सुनाया। बाहर से पधारे बौद्ध भिक्षुओं के साथ विचार विनिमय भी प्रतिनिधि मण्डल ने किया जिसका प्रभाव अच्छा रहा।

आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद प्रदेश का कार्यालय निजी भवन में

श्री सम्माननीय पं० विनायकरावजी विद्यालंकार भूतपूर्व प्रधान सभा के कर कमलों द्वारा उद्घाटन समारोह

हैदराबाद दिनांक १० जून ५६ रविवार को आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद प्रदेश के कार्यालय के निजी भवन का उद्घाटन समारोह श्रीयुत पं० विनायक राव जी द्वारा सम्पन्न हुआ।

१० जून को रविवार की प्रातः इस उद्घाटन समारोह के उपलक्ष में श्री पं० ऋभुदेव जी शर्मा वेद रत्न के पौरोहित्य में वृहद् यज्ञ का आयोजन किया गया था। इस अवसर पर यजुर्वेद के कुछ अध्यायों का पारायण कर यज्ञ सम्पन्न किया गया। यज्ञ के पश्चात् नव निर्मित भवन पर श्री पं० नरेन्द्र जी प्रधान सभा ने ओ३म् ध्वजारोहण किया।

सायंकाल ५ बजे से पुनः यज्ञ और संध्या आदि के पश्चात् श्री पं० नरदेव जी स्नेही भजनोपदेशक सभा ने ईश प्रार्थना सम्बन्धी भजन किये। भजन के उपरान्त श्री पं० बंसी लाल जी व्यास वानप्रस्थी मन्त्री सभा ने भवन निर्माण संबन्धी प्राप्त दान तथा व्यय का परिचयात्मक विवरण पढ़ कर सुनाया।

श्री मन्त्री जी सभा के इस विवरण के पश्चात् श्री पं० नरेन्द्र जी प्रधान सभा ने सम्माननीय श्री पं० विनायक राव जी विद्यालंकार वित्त-वाणिज्य तथा उद्योग मन्त्री हैदराबाद राज्य से प्रार्थना की कि "वे इस भवन का उद्घाटन स्व कर कमलों से करें।" तदनुसार माननीय पं० विनायक राव जी ने उद्घाटन सम्बन्धी विचार प्रकट करते हुए कहा कि "भवनों, कारखानों तथा दुकानों के उद्घाटन करने का कुछेक तांता सा लगा हुआ है किन्तु आज जिस भवन का उद्घाटन करने जा रहा हूँ इसकी बात ही अन्यों से कुछ निराली है। इस भवन का उद्घाटन करते हुए मुझे जो प्रसन्नता हो रही है, उसे व्यक्त करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं, जिनसे कि वर्णन किया जा सके। साथ ही मैं यह भी अनुभव करता हूँ कि आप लोग भी इसी प्रकार प्रसन्नता अनुभव कर रहे होंगे ही। मुझे प्रसन्नता इस लिए है कि मेरे प्रधान काल में जिस कार्य की पूर्ति नहीं हो सकी थी, मेरे बाद के लोगों ने इसे पूर्ण कर दिया है।" उपर्युक्त संक्षिप्त भाषण के पश्चात् श्री सम्माननीय पं० विनायक राव जी ने तीसरी मंजिल पर निर्मित सभा कार्यालय भवन का उद्घाटन किया। उद्घाटन की कार्यवाही वेद मन्त्रों के पाठ से रात्रि के साढ़े सात बजे सम्पन्न हुई। इस समारोह में लगभग डेढ़ दो हजार नगर के प्रतिष्ठित गण्य-मान्य नागरिकों ने भाग लिया।

"आर्य वीर दल शिक्षण शिविर"

सफलता पूर्वक सम्पन्न हुये।

इस मास सीहोर (भूपाल) तथा सम्भल जि० मुरादाबाद में आर्य वीर दल के दो शिक्षण शिविर १ जून तथा ३ जून को क्रमशः प्रारम्भ

होकर १० व १६ जून को सफलता पूर्वक सम्पन्न हुये। दोनों शिविरों में १३२ आर्य वीरों ने शिक्षण प्राप्त किया। शिविरों में व्यायाम, आसन प्राणायाम, सैनिक शिक्षा, प्राथमिक-चिकित्सा आदि के शिक्षण के साथ २ शिक्षार्थियोंको धार्मिक एव सांस्कृतिक शिक्षण भी दिया गया। दोनों समय सन्ध्या व यज्ञ कराया गया।

दोनों शिविरों की विशेषता यह थी कि इन्हें आर्य समाज, सीहोर और आर्य समाज सम्भल ने अपना पूर्ण सहयोग प्रदान किया अर्थात् भोजनादि की पूरी व्यवस्था उन्होंने स्वयं अपनी ओर से की। आर्य समाजों को यह लाभ हुआ कि उन्हें शिविरों के द्वारा बहुत से नवयुवक प्राप्त हो गए जोकि उनके समाजकी प्रगतिमें सहायक होंगे और साथ ही उनके नगरों में प्रचार कार्य खूब हुआ। साधारणतः आर्य समाज अपने उत्सवों पर केवल २ या ३ दिन ही प्रचार करा पाता है; परन्तु इस प्रकार १० या १५ दिन तक लगातार उन्हें प्रचार करने का अवसर प्राप्त हुआ।

सीहोर शिविर का संचालन श्री गौरीशंकर जी कौशल, शिक्षण का कार्य श्री जगदेवजी एम० ए०, श्री पूरनसिंह जी तथा दीक्षान्त श्री ओमप्रकाश जी पुरुषार्थी प्रधान सेनापति सार्वदेशिक आर्य वीर दल ने किया। शिविर की सहायता में मुख्य सहयोग श्री नन्दलाल जी मन्त्री आर्य समाज, सीहोर का था। सम्भल शिविर का संचालन श्री सुखदेव जी शास्त्री, शिक्षक श्री काशीनाथ जी शास्त्री, दीक्षान्त श्री ओमप्रकाश जी पुरुषार्थी तथा उद्घाटन श्री ला० रामगोपाल जी शालवाले मन्त्री सार्व० सभा ने किया। प्रचार के दृष्टिकोण सेदोनों ही शिविर सफल सिद्ध हुये।

आगामी शिविर

आर्य जनता को सूचित किया जाता है कि जौलाई मास में तीन शिविरों का आयोजन रोहतक, जौनपुर तथा इटावा में हो रहा है। रोहतक में आर्य वीराङ्गना दल का शिविर १ जौलाई से १५ जौलाई तक लगेगा। जौनपुर में २६ से ३० , ३१ जौलाई में और इटावा शिविर २५ जून से ५ जौलाई तक लगेगा। इन शिविरों मे जो आर्य वीर भाग लेना चाहें वह यहां के आर्य समाजों के पते पर सचालक आर्य वीर दल शिविर से पत्र व्यवहार करे।

दान सूची

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

२१-५-१९५६ से २०-६-१९५६ तक

दान आर्य समाज स्थापना दिवस

२५) आर्य समाज हिंडौन (जयपुर)
१५) ,, ,, बिहार शरीफ (बिहार
६०) ,, ,, किसूमू (ब्रि० ई० अफ्रीका)
१००) योग
४२७।≡) गत योग
५२७।≡) सर्व योग

विविध दान

११) श्री डा० विद्याभूषण किसन जी भोपले हिवर खेड़ (रूपराव) अकोला
७) ,, ,,
१०) ,, ,,
५) हरिश्चन्द्र रामराव सूर्यवंशी आवराद पो० गुंजोटी (हैद्रा० स्टेट)
१०) गुप्त दान (बालसमन्द जि० हिसार से)
१) अन्य
४४) योग
३५) गत योग
७९) सर्व योग

सहायता मठ गुलनी अभियोग व्यय

५) आर्य समाज कर्णपुर देहरादून
२५) ,, ,, भटिण्डा
२४) ,, ,, नारनौल (पेप्सु)
५४) योग
२१४॥―) गत योग
२६८॥―) सर्व योग

सब दान दाताओं को धन्यवाद। —सभा मन्त्री

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(१) यमपितृ परिचय (पं० प्रियरत्न आर्य) २)
(२) ऋग्वेद में देवृकामा ,, -)
(३) वेद में असित शब्द पर एक दृष्टि ,, -)।
(४) आर्य डाइरेक्टरी (सार्व० सभा) १।)
(५) सार्वदेशिक सभा का सत्ताईस वर्षीय कार्य विवरण ब० २)
(६) स्त्रियों का वेदाध्ययन अधिकार (पं० धर्मदेव जी वि० वा०) १।)
(७) आर्य समाज के महाधन (स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी) २॥)
(८) आर्यपर्व पद्धति (श्री पं० भवानीप्रसादजी) १।)
(९) श्री नारायण स्वामी जी की सं० जीवनी (पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) -)
(१०) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण (पं० इन्द्रजी) ।=)
(११) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या (अनुवादक पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) ।)
(१२) आर्य मन्दिर चित्र (सार्व० सभा) ।)
(१३) वैदिक ज्योतिष शास्त्र (पं० प्रियरत्नजी आर्य) १॥)
(१४) वैदिक राष्ट्रीयता (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।)
(१५) आर्य समाज के नियमोपनियम (सार्व सभा) -)॥
(१६) हमारी राष्ट्रभाषा (पं० धर्मदेवजी वि० वा०) ।-)
(१७) स्वराज्य दर्शन स० (पं० लक्ष्मीदत्तजी दीक्षित) १)
(१८) राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती) ॥)
(१९) योग रहस्य (श्री नारायण स्वामी जी) १।)
(२०) मृत्यु और परलोक ,, १।)
(२१) विद्यार्थी जीवन रहस्य ,, ॥=)
(२२) प्राणायाम विधि ,, =)
(२३) उपनिषदें:— ,,

ईश	केन	कठ	प्रश्न
।=)	॥)	॥)	।=)
मुण्डक	माण्डूक्य	ऐतरेय	तैत्तिरीय
(छप रहा है)	।)	।)	१)

(२४) बृहदारण्यकोपनिषद् ४)
(२५) आर्यजीवनगृहस्थधर्म (पं० रघुनाथप्रसादपाठक) ॥=)
(२६) कथामाला ,, ॥)
(२७) सन्तति निग्रह , १।)
(२८) वैदिक जीवन स० ,, २॥)
(२९) नया संसार ,, =)
(३०) आर्य शब्द का महत्व ,, -)॥
(३१) मांसाहार घोर पाप और स्वास्थ्य विनाशक -)
(३२) मुर्दे को क्यों जलाना चाहिए -)
(३३) दश नियम व्याख्या -)॥
(३४) इज़हारे हकीकत उर्दू (ला० ज्ञानचन्द जी आर्य) ॥=)
(३५) वर्ण व्यवस्था का वैदिक स्वरूप ,, १॥)
(३६) धर्म और उसकी आवश्यकता ,, १)
(३७) भूमिका प्रकाश (पं० द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री) १॥)
(३८) एशिया का वेनिस (स्वा० सदानन्द जी) ॥)
(३९) वेदों में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां (पं० प्रियरत्न जी आर्य) १)
(४०) सिंधी सत्यार्थ प्रकाश २)
(४१) सत्यार्थ प्रकाश और उस की रक्षा में -)
(४२) ,, ,, आन्दोलन का इतिहास ।=)
(४३) शांकर भाष्यालोचन (पं० गंगाप्रसादजी उ०) ५)
(४४) जीवात्मा ४)
(४५) वैदिक मणिमाला , ॥=)
(४६) आस्तिकवाद , ३)
(४७) सर्व दर्शन संग्रह ,, १)
(४८) मनुस्मृति ,, ५)
(४९) आर्य स्मृति ,, १॥।
(५०) जीवन चक्र ,, ५)
(५१) आर्योदयकाव्यम् पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध, १॥), १॥)
(५२) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौतम) ॥=)
(५३) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर (श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी) २।) रिया० १॥)
(५४) भजन भास्कर (संग्रहकर्ता श्री पं० हरिशंकरजी शर्मा १॥।)
(५५) मुक्ति से पुनरावृत्ति ,, ,, ।=)
(५६) वैदिक ईश वन्दना (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।=)॥
(५७) वैदिक योगामृत ,, ॥=)
(५८) कर्त्तव्य दर्पण सजिल्द (श्री नारायण स्वामी) ॥)
(५९) आर्यवीरदल शिक्षणशिविर (ओम्प्रकाश पुरुषार्थी) ।=)
(६०) ,, ,, ,, लेखमाला ,, १।)
(६१) ,, ,, गीताञ्जलि (श्री रुद्रदेव शास्त्री) ।=)
(६२) ,, ,, भूमिका =)
(६३) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी २।)

मिलने का पताः—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, बलिदान भवन, देहली ६

स्वाध्याय योग्य साहित्य

(१) श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की पूर्वीय अफ्रीका तथा मौरीशस यात्रा २)
(२) वेद की इयत्ता (श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी) १॥)
(३) दयानन्द दिग्दर्शन (श्री स्वा० ब्रह्ममुनिजी) ।॥)
(४) ईंजील के परस्पर विरोधी वचन (पं० रामचन्द्र देहलवी) ।=)
(५) भक्ति कुसुमांजलि (पं० धर्मदेव वि० वा० ॥)
(६ वैदिक गीता (श्री स्वा० आत्मानन्द जी) ३)
(७) धर्म का आदि स्रोत (पं० गंगाप्रसाद जी एम. ए.) २)
(८) भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक (श्री राजेन्द्र जी) ॥)
(९) वेदान्त दर्शनम् (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ३)
(१०) संस्कार महत्त्व (पं० मदनमोहन विद्यासागर जी) ॥।)
(११) जनकल्याण का मूल मन्त्र „ ॥)
(१२) वेदों की अन्तः साक्षी का महत्व „ ॥=)
(१३) आर्य घोष ॥)
(१४) आर्य स्तोत्र „ ॥)
(१५) स्वाध्याय संग्रह (स्वा० वेदानन्दजी) २)
(१६) स्वाध्याय संदोह „ ४)
(१७) सत्यार्थ प्रकाश सजिल्द १॥=)
(१८ महर्षि दयानन्द ॥=

English Publications cf Sarvadeshik Sabha

1. Agnihotra (Bound) (Dr. Satya Prakash D. Sc.) 2/8/-
2 Kenopanishat (Translation by Pt. Ganga Prasad ji, M. A.) -/4/
3. Kathopanishat (Pt. Ganga Prasad M A Rtd. Chief Judge) 1/4/-
4. The Principles & Bye-laws of he Aryasamaj -/1/6
5. Aryasamaj & International Aryan League Pt. Ganga Prasad ji Upadhyaya M. A.)-/1/-
6 Voice of Arya Varta (T. L. Vasvani) -/2/-
7 Truth & Vedas (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/6/-
8 Truth Bed Rocks of Aryan Culture (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/8/-
9. Vedic Culture (Pt. Ganga Prasad Upadhyaya M. A) 3/8/-
10. Aryasamaj & Theosophical Society (Shiam Sunber Lal) -/3/-
10. Wisdom of the Rishis (Gurudatta M. A.) 4/ /-
11. The Life of the Spirit (Gurudatta M.A.) 2/ /-
12. A Case of Satyarth Prakash in Sind (S. Chandra) 1/8/-
13. In Defence of Satyarth Prakash (Prof. Sudhakar M A.) -/2/-
14. Universality of Satyarth Prakash /1/
15. Tributes to Rishi Dayanand & Satyarth Prakash (Pt. Dharma Deva ji Vidyavachaspati) -/8/
16 Political Science (Mahrishi Dayanand Saraswati) -/8/-
17. Elementary Teachings of Hindusim -/8/- (Ganga Prasad Upadhyaya M.A.)
18. Life after Death „ 1/4/-

Can be had from:—**SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA, DELHI 6**

नोट– (१) आर्डर के साथ २५ प्रतिशत (चौथाई) धन अगाऊ रूप में भेजें।
(२ थोक ग्राहकों को नियमित कमीशन भी दिया जायगा।
(३) अपना पूरा पता व स्टेशन का नाम साफ २ लिखें।

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार
के
पठनीय ग्रन्थ

संग्रह योग्य ग्रन्थ

वेदों के प्रसिद्ध विद्वान्
श्री स्वा० ब्रह्ममुनि जी कृत ग्रन्थ

१. यमपितृ परिचय	मूल्य	२)
२. वैदिक ज्योतिष शास्त्र	"	१॥)
३. वैदिक राष्ट्रीयता	"	।)
४. वैदिक ईश वन्दना	"	।=)॥
५. वैदिक योगामृत	"	॥=)
६. दयानन्द दिग्दर्शन	"	॥।)
७. वेदों में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां		॥।)

पढ़ने योग्य ग्रन्थ

१. आर्य समाज के महाधन (श्री स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी)	२॥)
२. दयानन्द सिद्धान्त भास्कर (श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी)	१॥)
३. स्वराज्य दर्शन (श्री पं० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित)	१)
४. राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती)	॥)
५. एशिया का वैनिस (श्री स्वामी सदानन्द जी)	॥।)
६. नैतिक जीवन (रघुनाथ प्रसाद पाठक)	२॥)
७. आर्य वीर दल सैनिक शिक्षा (लेखक ओमप्रकाश पुरुषार्थी)	॥)

भजन भास्कर (तृतीय संस्करण) मू० १॥।)

संग्रहकर्ता—श्री पं० हरिशंकर जी शर्मा कविरत्न

यह संग्रह मथुरा शताब्दी के अवसर पर सभा द्वारा तय्यार करके प्रकाशित कराया गया था। इसमें प्रायः प्रत्येक अवसर पर गाये जाने योग्य उत्तम और सात्विक भजनों का संग्रह किया गया है।

स्त्रियों का वेदाध्ययन का अधिकार मू० १।)

लेखक—श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति

इस ग्रन्थ में उन आपत्तियों का वेदादि शास्त्रों के प्रमाणों के आधार पर खंडन किया गया है जो स्त्रियों के वेदाध्ययन के अधिकार के विरुद्ध उठाई जाती है।

आर्य पर्व्व पद्धति मू० १।)

(तृतीय संस्करण)

लेखक—श्री स्व० पं० भवानीप्रसाद जी

इसमें आर्य समाज के क्षेत्र में मनाये जाने वाले स्वीकृत पर्वों की विधि और प्रत्येक पर्व के परिचय रूप में निबन्ध दिये गये हैं।

मिलने का पता—**सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा**

श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली – ६

स्वाध्याय योग्य उत्तम साहित्य

स्व० श्री महात्मा नारायण स्वामी जी कृत कतिपय ग्रन्थ

(१) कर्त्तव्य दर्पण

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज प्रणीत ४०० पृष्ठ, सचित्र और सजिल्द मूल्य प्रचारार्थ केवल ।।।) पच्चीस लेने पर ।।≤) अत्यन्त उपयोगी पुस्तक। अभी अभी नवीन संस्करण प्रकाशित किया है। भारी संख्या में मंगा कर प्रचार करें।

(२) योग रहस्य

इस पुस्तक में अनेक रहस्यों को उद्‌घाटन करते हुए उन विधियों को भी बतलाया गया है जिनसे कोई आदमी जिसे रुचि हो—योग के अभ्यासों को कर सकता है।

पंचम संस्करण — मूल्य १।)

(३) विद्यार्थी जीवन रहस्य

विद्यार्थियों के लिये, उनके मार्ग का सच्चा पथप्रदर्शक उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर श्रृंखलाबद्ध प्रकाश डालने वाले उपदेश,

प्रथम संस्करण — मूल्य ।।≤)

(४) आत्म कथा

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी का स्वलिखित जीवन चरित्र — मूल्य १।)

(५) उपनिषद् रहस्य

ईश, (नवीन संस्करण) केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, बृहदारण्यकोपनिषद् की बहुत सुन्दर खोज पूर्ण और वैज्ञानिक व्याख्याएं। — मूल्य क्रमशः—

।≤, ।।), ।।), ।≤), ।≡), ।), ।), १), ४),

(६) प्राणायाम विधि

इस लघु पुस्तक में ऐसी मोटी और स्थूल बातें अंकित हैं जिनके समझने और जिनके अनुकूल कार्य करने से प्राणायाम की विधियों से अनभिज्ञ किसी भी पुरुष को कठिनता न हो और उन में इन क्रियाओं के करने की रुचि भी पैदा हो जाय।

चतुर्थ संस्करण — मूल्य ≡)

मिलने का पता—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली—६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर
श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली—से प्रकाशित।

ऋग्वेद

पुस्तकालय

गुरुकुल काँगड़ी

॥ ओ३म् ॥

यजुर्वेद

सार्वदेशिक

अंक ६

श्रावण २०१३

अगस्त १९५६

वर्ष ३१

मूल्य स्वदेश ५)

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ।।)
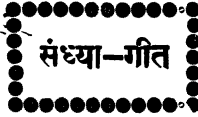
संध्या-गीत

(१७)

ओंकार आद्य अक्षय अद्वैत अज अनूपम् ।
अद्भुत अजर अजन्मा अव्यय अनघ अरूपम् ॥
हो 'सत्य' रूप स्वामी ! 'चित' चारु चेतधारी ।
'आनन्द' ओजमय हो आदर्श आर्तहारी ॥

(१८)

प्राणेश ! प्रार्थना है, पथ पुन्यमय दिखाओ ।
मिथ्या ममत्व मत्सर मद मोह हठ मिटाओ ॥
सेवा-सुमन पिरोकर माला महत् बनाऊँ ।
अनुराग भावना से भगवान पर चढ़ाऊँ ॥

(१९)

शुद्ध माँगलिक मग से मैं मोक्षधाम जाऊँ ।
सर्वोच्च शान्ति सुख कर सात्विक समृद्धि पाऊँ ॥
विश्वात्मा ! विनय है, वर दीजिये विचारी ।
धी धर्ममय धवल हो ध्रुव धैर्य ध्यानधारी ॥

(२०)

हे मंगलेश शंकर ! मंगल करो हमारा ।
पावन प्रकाश पाये परमार्थ पुण्य द्वारा ।
परिज्ञान पय पिलादो अवढर अगाध दानी ।
तेरी शरण में आया है भक्त यह 'भवानी' ॥

सामवेद

सम्पादक—
सभा मन्त्री
सहायक सम्पादक—
श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

अथर्ववेद

विषय-सूची

१. वैदिक प्रार्थना		२८५
२. सम्पादकीय		२८६
३ चरित्र निर्माण	(श्री० बा० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट)	२९७
४. राम और कृष्ण किस सभ्यता की देन थे ?	(स्व० श्री० म० नारायण स्वामी की डायरी से)	३००
५. श्रीकृष्ण जन्माष्टमी	(श्रीमती कृष्णकुमारी जी एम० ए० बी० टी०)	३०१
६. भेद कहां	(श्रीमती पुष्पावती जी बी० ए० प्रभाकर)	३०३
७. गो सेवा परम पवित्र कर्तव्य	(श्री० सेठ जुगलकिशोर जी बिड़ला)	
८. महर्षि जीवन		३०६
९. शंका समाधान	(श्री० कु० सजन सिंह सि० शास्त्री)	३०८
१०. स्वाध्याय का पृष्ठ		३०९
११. साहित्य समीक्षा		३१२
१२. महिला जगत		३१३
१३. ईसाई धर्म प्रचार विरोध आन्दोलन		३१६
१४. बाल-जगत्		३१८
१५. दक्षिण भारत प्रचार		३१९
१६. वाराणसी विश्वविद्यालय	(श्री० प० नरदेव जी शास्त्री वेद तीर्थ एम० एल० ए०)	३२४
१७. राजार्य सभा का विधान		३२६
१८. श्री० प० रामगोपाल जी सभा मन्त्री का भ्रमण		३०८
१९. विद्यार्य सभा		३२९
२० विविध सूचनायें तथा वैदिक धर्म प्रसार		३३०

ॐ ओ३म् ॐ

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३१ { अगस्त १९५६. श्रावण २०१३ वि०, दयानन्दाब्द १३३ } अङ्क ६

वैदिक प्रार्थना

अतो देवा अवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे।
पृथिव्याः सप्त धामभिः॥ ऋ० १।२।७।१६॥

व्याख्यान—हे "देवाः" विद्वानो! "विष्णुः" सर्वत्र व्यापक परमेश्वर ने सब जीवों को पाप तथा पुण्य का फल भोगने और सब पदार्थों के स्थित होने के लिये, पृथिवी से लेके सप्तविध लोक "धामभिः" अर्थात् ऊंचे नीचे स्थानों से संयुक्त बनाये तथा गायत्र्यादि सात छन्दों से विस्तृत विद्यायुक्त वेद को भी बनाया। उन लोकों के साथ वर्त्तमान व्यापक ईश्वर ने "यतः" जिस सामर्थ्य से सब लोकों को रचा है "अतः" (सामर्थ्यात्) उस सामर्थ्य से हम लोगों की रक्षा करे। हे विद्वानो! तुम लोग भी उसी विष्णु के उपदेश से हमारी रक्षा करो। कैसा है वह विष्णु? जिसने इस सब जगत् को "विचक्रमे" विविध प्रकार से रचा है उसकी नित्य भक्ति करो।

सम्पादकीय

भारत में ईसाई पादरियों द्वारा प्रचार अवाँछनीय

मध्य प्रदेश सरकार ने भारत में ईसाई धर्म का प्रचार करने वाले विदेशी पादरियों और उनकी संस्थाओं के कार्य की जांच करके विस्तृत रिपोर्ट करने के लिये जो समिति बनाई थी उसकी रिपोर्ट प्रकाशित हो गई है। समिति के अध्यक्ष नागपुर हाईकोट के भूतपूर्व न्यायाधीश डा० एम० बी० नियोगी थे। समिति ने ईसाई प्रचार के ७७ केन्द्रों का निरीक्षण किया और ११३६० व्यक्तियों से पूछ-ताछ की। ३७५ व्यक्तियों ने समिति के पास अपने लिखित वक्तव्य भेजे। जिन लोगों से समिति ने अपने प्रबन्ध से बयान लिये उनमें से ७०० गांव के लोग थे। समिति लम्बी और विस्तृत जांच के पश्चात् निम्नलिखित परिणाम पर पहुंची है—

"भारत में ईसाई करण उस विश्व व्यापिनी नीति का अंग मालूम होता है कि जिसका प्रयोग पाश्चात्य देशों का प्रभुत्व पृथिवी पर फिर से स्थापित करने के लिये किया जा रहा है उसका उद्देश्य आध्यात्मिक नहीं प्रतीत होता उसका असली उद्देश्य गैर ईसाई समाजों में जहां तहां ऐसे दल पैदा करना है जिससे इन समाजों में फूट पड़ जाये और उनका संगठन छिन्न भिन्न हो जाय। आदि वासियों का बड़े पैमाने पर धर्मपरिवर्तन राज्य की सुरक्षा के लिए निश्चय ही खतरनाक है।"

जिन लोगों को ग्रामों मे जाकर ईसाइयों के प्रचार का युग देखने का अवसर मिला है वे समिति की सम्मति का पूर्णरूप से समर्थन करेंगे, समिति की सम्मति के जिस अंश पर मतभेद हो सकता है वह यह है कि भारत में ईसाई करण मुख्य रूप से आदि वासियों के लिये खतरनाक है। खतरा आदि वासियों तक ही परिमित नहीं है, जहां कहीं भी पिछड़ी हुई या अस्पृश्य कहलाने वाली जातियों में ईसाई पादरियों को अपना जाल फैलाने का अवसर मिला है वहां राष्ट्रीय एकता को धक्का पहुंचा है और राष्ट्रीय सरकार के प्रति विरोध की भावना बढ़ी है।

समिति ने आगे चल कर सम्मति दी है कि ईसाई मिशन कई स्थानों पर धर्म प्रचार के अतिरिक्त अन्य उद्देश्यों से काम करते हुए पाये गये हैं। यद्यपि विदेशी और देशी मिशनरी सोसायटियां बार २ यह आश्वासन देती रही हैं कि वह धर्म प्रचार के अतिरिक्त अन्य कार्य में हस्तक्षेप न करेंगी। समिति के सामने ऐसे दृष्टान्त रक्खे गये हैं जिनमें राजनीतिक मामलों मे हस्तक्षेप किया गया है। ऐसे धर्म-परिवर्तन धर्म बदलने वाले व्यक्ति की बुद्धि को कुण्ठित करके उसकी सामाजिक एकता और दृढ़ता को नष्ट कर देते हैं। यह खतरा बना रहता है कि देश और राज्य के प्रति उसकी वफादारी क्षीण हो जाय। साथ ही ईसाई पादरियों द्वारा देश के बहुमत के धर्म के बारे मे विषैला आन्दोलन सदा शान्ति-भंग की आशंका को बनाये रखता है।

समिति ने उन अतुल धन राशियों की चर्चा की है जो विदेशों से भारत मे चली आ रही है। उस धन राशि का उपयोग करने के लिये प्रति वर्ष सैकड़ों और शायद हजारों विदेशी ईसाई पादरी परिवारों के भारत में आने से जो संकटमय राजनीतिक परिस्थिति उत्पन्न होती है समिति ने उसकी ओर भी ध्यान आकृष्ट किया है। इन सब तथ्यों के आधार पर समिति इस परिणाम पर पहुंची है कि इस प्रकार के धर्म परिवर्तन देश की एकता के लिए खतरनाक है। समिति ने परामर्श दिया है कि जिन विदेशी ईसाई प्रचारकों का मुख्य कार्य अब तक प्रचलित साधनों से धर्म प्रचार करना है उन्हें देश से बाहर कर देना चाहिये और भविष्य में उनके

आने पर रोक लगा देनी चाहिये। जो सम्पत्ति इस समय विदेशी धर्म प्रचारक संस्थाओं के नाम दर्ज है वह या तो देशी गिरजा घरों को दे देनी चाहिये या किसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था के सुपुर्द कर देनी चाहिये।

गत वर्ष जब भारतीय संसद में एक भारतीय सदस्य ने विदेशी ईसाई मिशनरियों की आक्षेप योग्य कार्यवाइयों पर रोक लगाने का प्रस्ताव पेश किया था तब सरकार की ओर से यह समाधान दिया गया था कि ईसाई प्रचारकों पर किये आक्षेप या तो निर्मूल हैं अथवा अत्युक्ति पूर्ण हैं। समिति की रिपोर्ट ने उस समाधान के पांव तोड़ दिये हैं। उसने दो-तीन वर्षों तक गहरी छानबीन करके जो परिणाम निकाले हैं उन्हें चुटकी में उड़ाया नहीं जा सकता। यह कहना कि ईसाई मिशनरियों पर रोक लगाने से अन्तर्राष्ट्रीय उलझनें पैदा हो जायेंगी यह केवल भ्रान्त धारणा है। यह धारणा उस मानसिक दासता का एक बचा हुआ टुकड़ा है जो हम पर लगभग २०० वर्षों तक छाई रही थी। हमारे देश में आकर जो भी व्यक्ति देश की सुरक्षा अथवा शान्ति को संकट में डालेगा उसे देश से निकालने और फिर देश में आने पर रोक लगाने का पूरा अधिकार है। इससे यदि कोई अन्य देश नाराज होता है तो उसकी परवाह नहीं करनी चाहिये। यह स्पष्ट है कि अमेरिका और योरुप के देश भारत को जो धन राशि भेजते हैं उनका उद्देश्य संसार को हजरत ईसा के धर्म का उपहार देना नहीं है अपितु पश्चिम के उस लड़खड़ाते हुए गौरव को सहारा देना है जिसके दिन लगभग पूरे हो चुके हैं। यह अवांछनीय बात है कि भारतवर्ष उन देशों की अनुचित कार्यवाहियों का अखाड़ा बना रहे। अब इस रिपोर्ट के प्रकाशित होने के पश्चात् भारतवासी आशा रखते हैं कि उनकी सरकार भ्रान्त धारणाओंको छोड़कर विदेशी मिशनों के धर्म प्रचार के असली रहस्य को समझ लेगी और उन पर आवश्यक रोक लगाने में देर न लगायेगी।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियां ×

श्रावणी उपाकर्म

श्रावण पूर्णिमा मंगलवार (२१ अगस्त) को उपाकर्म वा श्रावणी का पर्व श्रद्धा और प्रेम पूर्वक मनाते हुए विशेषरूप से वैदिक स्वाध्याय का प्रत्येक आर्य नर नारी को व्रत ग्रहण करना चाहिये। वेद का नियमित स्वाध्याय करना कराना ही इस पर्व का मुख्य सन्देश है।

स्वाध्याय की महिमा और महत्ता वर्णनातीत है। स्वाध्याय का अर्थ है अपना ज्ञान प्राप्त करना। वेदादि सच्छास्त्रों के अध्ययन और मनन के बिना यह सम्भव नहीं होता। वेदों में अनेक स्थलों पर स्वाध्याय की महिमा का वर्णन मिलता है। ऋग्वेद के ९।२।१८ इत्यादि मन्त्रों में स्वाध्याय का महत्व दिखाते हुए कहा गया है:—

यः पावमानी रध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम्।
सर्वं स पूतमश्नाति स्वदितं मातरिश्वना॥
पावमानीः स्वस्त्यनीस्ताभिर्गच्छति नान्दनम्
पुण्याँश्च भक्षान् भक्षयत्यमृतत्वं च गच्छति।

कि स्वाध्याय शील का जीवन पवित्र हो जाता है उसे कल्याण और आनन्द की प्राप्ति होती है तथा उस स्वाध्याय के अनुसार आचरण करने पर अन्त में मोक्ष की प्राप्ति होती है। शतपथ ब्राह्मण ११।५।६।३ में ब्रह्म यज्ञ का एक अर्थ स्वाध्याय करते हुए उसका फल निम्नलिखित आकर्षक शब्दों में बताया गया है:—

स्वाध्यायो वै ब्रह्मयज्ञः प्रिये स्वाध्याय प्रवचने भवतः। युक्त मना भवति अपराधीनः अहरहः अर्थात् साधयते सुखं स्वपिति परम चिकित्सकः आत्मनो भवति इन्द्रिय संयमश्च एकारामता च प्रज्ञा वृद्धिः यशो लोक पक्तिः।

अर्थात् स्वाध्याय निश्चय से ब्रह्म यज्ञ है। स्वाध्याय और प्रवचन (वेदादि का पढ़ाना) ये

दोनों प्रिय अथवा आनन्द देने वाले हैं। इन दोनों से मनुष्य एकाग्र चित्त होता है और स्वतन्त्र हुआ प्रतिदिन अनेक पदार्थों को प्राप्त करता है। सुख से सोता है अथवा उत्तम चिकित्सक (मानसिक, आत्मिक रोगों का निवारण) बनता है। इन्द्रियों का संयम, सदा एकाग्रता वा प्रसन्न चित्तता, बुद्धि की वृद्धि, यश तथा लोगों की अति श्रद्धा स्वाध्याय और प्रवचन से होती है। इसी लिये महर्षि ने (वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना) सब आर्यों का परम धर्म नियत किया है।

वस्तुतः स्वाध्याय की उत्कण्ठा बडी उच्च और पवित्र होती है जो प्रतिदिन और प्रतिक्षण नूतन शक्ति और बौद्धिक आनन्द का अजस्र स्रोत बहाती रहती है। स्वाध्याय से ही मनुष्य शक्तिशाली उच्च और ज्ञान सम्पन्न बनता है। ज्यों २ हम स्वाध्याय करते जायेंगे त्यों २ हमें अपने अज्ञान का ज्ञान होता जायगा। जो व्यक्ति पढ़े हुए पर मनन करके उसे हज्म कर लेता है उसी का अध्ययन सार्थक होता है। यदि स्वाध्याय से हम में विचार करने की शक्ति का उदय नहीं होता तो पढ़ा लिखा सब ही बेकार हो जाया करता है अतः जो कुछ पढ़ा जाय चाहे वह थोड़ा ही क्यों न हो उस पर मनन करके उसे अपने ज्ञान और आचरण का विषय बनाना चाहिये। इसी से स्वाध्याय का लाभ है।

हम आर्य्य नर नारियों में उच्च साहित्य के स्वाध्याय की वह प्रवृत्ति नहीं पाई जाती जो पाई जानी चाहिये। वेदादि सत्साहित्य के अध्ययन और मनन के द्वारा हम जिस अक्षय निधि का निर्माण कर सकते हैं वह नहीं कर पाते। श्रावणी उपाकर्म के पुनीत अवसर पर हम सब को स्वाध्याय करने तथा उसे उत्तरोत्तर बढ़ाने का पावन व्रत लेना चाहिये और इस व्रत का निर्वाह और ज्ञान का प्रसार करके ऋषि ऋण से उऋण होने का उपाय करना चाहिये।

इस पर्व के पुनीत अवसर पर हमें हैदराबाद धर्म युद्ध के हुतात्माओं को श्रद्धांजलि प्रस्तुत करके उनके उत्सर्ग की भावना को अपने में धारण करना चाहिये।

अस्पृश्यता निवारण

२६ जनवरी १९५० को 'अस्पृश्यता' का वैधानिक अन्त हुआ था। गत वर्ष १९५५ में केन्द्रीय शासन ने एक विधेयक के द्वारा अस्पृश्यता को दण्डनीय अपराध ठहराया था। सरकारी रिपोर्ट के अनुसार १ वर्ष में उपर्युक्त विधेयक के अधीन १८६ अभियोग चलाये गये। विधेयक के उल्लंघन के न जाने कितने मामले हुए होंगे जिनकी रिपोर्ट ही अङ्कित न हुई होगी। इस दृष्टि से ये आंकड़े पूर्ण नहीं कहे जा सकते। अनेक स्थानों पर अब भी अस्पृश्य कहे और समझे जाने वालों को सार्वजनिक कुओं पर चढ़ने, शिक्षणालयों में पढ़ने, होटलों में जाने, मन्दिरों में प्रविष्ट होने इत्यादि २ से बलात् रोका जाता है जिनकी रिपोर्ट भय वा लिहाज वश नहीं हो पाती। पिछले दिनों सौराष्ट्र में घटित एक बड़ी अपमान जनक घटना का समाचार प्राप्त हुआ था। कुछ अस्पृश्य भाई एक सार्वजनिक उपहार गृह में गये। उन्होंने जलपान किया परन्तु जब वे लोग वहां से चले गये तो प्रबन्धकों ने सवर्णों को सन्तुष्ट करने के लिये उपहार गृह को दूध से धुलवा कर उसे शुद्ध किया। यदि यह दूध स्कूल के विद्यार्थियों या आवश्यकता से परिपीड़ित व्यक्तियों में वितरण कर दिया जाता तो कितना अच्छा रहता। राजस्थान से देर से यह समाचार प्राप्त हो रहा है कि वहां के नापित अस्पृश्यों की हजामत बनाने से इन्कार कर रहे हैं और वहां संघर्ष छिड़ा हुआ है।

कानून को सक्रिय और प्रभावशाली बनाने के लिये अनेक सुझाव प्रकाश में आये हैं, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं :—

१—कानून का उल्लंघन करने वालों पर सामूहिक जुर्माना किया जाया करे।

२—अपराधियों में से यदि कोई राजकीय सेवा में हो तो उसे सेवा से पृथक् कर दिया जाय।

३—तकावी तथा अन्यान्य राजकीय सुविधाओं से वंचित किया जाय।

४-अस्पृश्यता का प्रश्रय और प्रोत्साहन राजकीय सर्विस के लिये अयोग्यता करार दी जाय।

ये सब रोग के तात्कालिक शमन के उपाय मात्र हैं। फिर भी कानून को अपना कार्य करते रहना चाहिये। परन्तु कानून का आश्रय अनिवार्य होने पर ही लिया जाना चाहिये। यत्न यह होना चाहिये कि अधिकार के संरक्षण के लिये कानून की अपेक्षा प्रेरणा और सद्भाव से अधिकाधिक काम लिया जाय।

कानून के बन जाने मात्र से ही सुधारकों के कर्त्तव्य की इतिश्री नहीं हो जाती। सवर्णो और अस्पृश्यों दोनों की मनोवृत्ति मे उत्तम सुधार लाने की आवश्यकता है। सवर्णो के मन में से अपने को उच्च और असवर्णो मे से अपने को हेय समझने की भावना के निकल जाने से स्थिति में बहुत कुछ सुधार हो सकता है। वास्तविक सुधार तो दोनों के परस्पर में घुल मिल जाने से ही संभव होगा। सब मनुष्य आध्यात्मिक दृष्टि से समान हैं। जन्म से न कोई बड़ा होता है न छोटा, न स्पृश्य और न अस्पृश्य। इस सत्य के बद्ध मूल हो जाने पर यह प्रश्न ही नहीं उठ सकता कि अमुक व्यक्ति वा वर्ग स्पृश्य है और अमुक अस्पृश्य है। अस्पृश्य भी स्पृश्य के समान जन्म लेता और मरता है। वह नंगा ही आता और नंगा ही यहां से जाता है। अछूत का बच्चा हाथ में झाड़ू लेकर और सवर्ण का बच्चा मुंह में सोने का चमचा लेकर पैदा नहीं होता। स्पृश्य और अस्पृश्य की श्रेणियां कृत्रिम हैं जिनसे मानवता का अपमान और समाज का अहित होता है। यदि सवर्णो और अस्पृश्यों का आत्मा और शरीर सज्ज्ञान, सत्क्रिया, सदाचार, सफाई से चमक जाय तो स्वतः ही वे दीवारें धराशायी हो जावे और परस्पर में खान-पान और विवाह का व्यवहार प्रचलित हो जाय।

हमारे देश में अस्पृश्यता आन्दोलन की प्रवृत्ति प्रायः अस्पृश्यों पर उपकार करने की दिशा में प्रेरित रहती है। इसका अस्पृश्यों पर अच्छा मनोवैज्ञानिक प्रभाव नहीं पड़ता और ना ही प्रयत्नों के अनुपात में सफलता ही मिल पाती है। जब सवर्णों में यह भावना घर कर जायगी कि हमें मानवता का अपमान करते रहने का प्रायश्चित्त करना है, प्रत्येक व्यक्ति की उन्नति में योग देना है, सब परमात्मा के बच्चे हैं, परमात्मा के प्रसाद सब के लिये अभिप्रेत हैं। सूर्य सब को रोशनी देता है। वर्षा सब पर होती है इत्यादि २ अस्पृश्यों में भी हम जैसी भावनाएं और आकांक्षाएं हैं, उन्हें भी भली भांति जीवित रहने और सम्मान पूर्ण जीवन व्यतीत करने का वैसा ही अधिकार है जैसा हमें, तब समस्या के हल होने में विलम्ब न होगा।

आर्य समाज ने इसी मनो भावना से काम किया है और करता है। वह अस्पृश्यों के साथ मानवता के स्तर पर व्यवहार करता और उन्हें आर्य बना कर समाज में घुला मिला देता है। दूर न जाकर गुरुकुलों के स्नातकों को ले लीजिये। इनमें से कई ऐसे स्नातक हैं जो जन्मना अस्पृश्य थे परन्तु आज उनमें और सवर्णो में भेद करना कठिन है। इस लक्ष्य की सिद्धि के लिये उसने किसी भी त्याग और बलिदान की परवाह नहीं की है। आर्य समाज के सुधार कार्य से अस्पृश्यों में वह चिढ़ नहीं उत्पन्न होती जो अन्यों के उपकार भाव में किये गये सुधार कार्य से उत्पन्न होती है। यही आर्य समाज के काम की विशेषता और स्थिरता की गारंटी है।

अनुकरणीय परीक्षण

सांभर लेक के श्री सेठ रामप्रताप जी जयपुर नगर में एक आर्य छात्रावास खोलने का आयोजन कर रहे हैं जिसमें मैट्रिक से एम० ए० तक के

छात्र रहेंगे। छात्रावास में रहने वाले को सदाचारी एवं उत्तम नागरिक बनने में सहायता देना ही इस छात्रावास का उद्देश्य है। सेठ जी की इच्छा है कि इस छात्रावास के प्रबन्ध के लिये कोई ऐसा योग्य व्यक्ति मिल जाय जो छात्रों में वैदिक धर्म की विचार धारा प्रसारित करने में कृतकार्य हो सके, जो प्रातः सायं सन्ध्या और यज्ञ कराये और धीरे २ वैदिक सिद्धान्त का शिक्षण दे सके। इन महानुभाव के भोजन, वस्त्र और स्थान का प्रबन्ध सेठजी करेंगे। इस कार्य के लिये सेवा और त्याग भाव से कार्य करने वाले महानुभाव ही उपयुक्त होंगे गृहस्थ नहीं। छात्रावास के संचालन के लिये धन की उत्तरदायित्ा सेठ जी पर होगी और प्रबन्ध की सुचारुता की उत्तरदायित्ा प्रबन्धक महानुभाव पर होगी।

कहने की आवश्यकता नहीं कि इस प्रकार का परीक्षण अनुकरणीय एवं प्रशंसनीय है। वर्तमान विषाक्त वातावरण से छात्रों की रक्षा का जो भी उपाय किया जाय वह प्रोत्साहन का अधिकारी है। इस प्रकार के छात्रावासों में न जाने देश और समाज को कितने उत्तम नागरिक और समाज सेवक प्राप्त हो सकते हैं। हम इस आयोजन की सफलता की कामना करते हुए गृहस्थ के भार से मुक्त आर्य सज्जनों से निवेदन करते हैं कि वे इस प्रकार के आयोजन के लिये अपनी निःशुल्क सेवाये प्रस्तुत करें। जयपुरके प्रस्तावित छात्रावास के लिये तो तत्काल एक आर्य सज्जन की आवश्यकता है। पत्र व्यवहार सार्वदेशिक सभा के साथ किया जाना चाहिये।

इस प्रकार के परीक्षणों के लिये उद्देश्य की पवित्रता और प्रबन्ध की सुचारुता के साथ २ छात्रावास को कम से कम व्यय साध्य बनाना भी आवश्यक होगा जिससे निर्धन से निर्धन छात्र भी उसमें प्रविष्ट हो कर उससे लाभ उठा सकें।

हिन्दी को राष्ट्र भाषा के पद से अपदस्थ करने का व्यर्थ प्रयत्न

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने १७ अगस्त १८८२ ई० को एक पत्र बा० दुर्गाप्रसाद को लिखा था। उसमें अन्यान्य बातों के अतिरिक्त देश की राष्ट्र भाषा हिन्दी बनाई जाने के सम्बन्ध में आर्यों के प्रयत्न की ओर बड़ा उत्तम संकेत किया गया है। वे लिखते हैं :–

"आज कल सर्वत्र अपनी आर्य भाषा के राजकार्य में प्रवृत्ति होने अर्थ भाषा के प्रचारार्थ जो कमीशन हुआ है उसमें पंजाब हाथा आदि से मेमोरियल भेजे गये हैं। परन्तु मध्य प्रान्त फरुखाबाद, कानपुर, बनारस आदि स्थानों से नहीं भेजे गये। आपको उचित है कि मध्यप्रदेश में सर्वत्र पत्र भेज कर बनारस आदि स्थानों और जहां जहां परिचय हो सब नगर व ग्रामों से मेमोरियल भिजवाइए। यह काम एक के करने का नहीं और अवसर चूके यह अवसर आना दुर्लभ है। जो यह कार्य सिद्ध हुआ तो आशा है मुख्य सुधार की एक नींव पड़ जायगी।"

इस उद्धरण से महर्षि दयानन्द के हृदय की उस तड़प का सहज ही परिचय मिल जाता है जो आर्य भाषा के सर्वत्र व्यवहार में देश की एकता और समाज का कल्याण देखता था। महर्षि स्वयं गुजराती थे। उन्होंने संस्कृत के स्थान मे अपने भाषणों और लेखों का आधार संस्कृत निष्ठ आर्यभाषा को बनाया। महात्मा गांधी जी भी गुजराती थे। फिर भी उन्होंने अपनी दूर दृष्टि से हिन्दी को अपनाया। यदि वे गुजराती वा अंग्रेजी को ही अपने कार्य और प्रचार का साधन बनाते तो स्वतन्त्रता प्राप्ति का कार्य बहुत कठिन हो गया होता। स्वतन्त्रता प्राप्ति में जहां हिन्दी ने मुख्यतम पार्ट अदा किया है वहां उसकी रक्षा भी इसी भाषा के सर्वोपरि योग से सम्भव हो सकेगी। इसी लिये भारतीय गणतन्त्र की राज्य भाषा हिन्दी नियत की

गई है क्योंकि एक मात्र यही भाषा इस देश में अधिकाधिक बोली और समझी जाती है। जो लोग जिनमें हमारे सम्मानित नेता श्री राजगोपालाचार्य भी सम्मिलित हैं अब भी केन्द्रीय शासन तथा अन्तः प्रदेशीय व्यवहार की भाषा अंग्रेजी को ही बनाये रखना चाहते हैं वे अपनी संकुचित दृष्टि का ही परिचय देते हैं। वे भूल जाते हैं कि इस समूचे देश क एकता भौगोलिक वा राजनैतिक विभाजनों से स्थिर नहीं रही अपितु वेद शास्त्र आदि सांस्कृतिक एवं धार्मिक एकता के प्रतीकों से स्थिर रही है और इसमें सब से बड़ा योग संस्कृत और आर्य भाषा का रहा है और रहेगा। भारत के प्रायः समस्त तीर्थ स्थानों में हिन्दी भाषा के अतिरिक्त और किसी भाषा से काम चल नहीं सकता। वहां अंग्रेजी वा लोक भाषा से जरा भी सहायता नहीं मिल सकती। वे इस बात को भी भूल जाते हैं कि अंग्रेजी से भारतीयों का स्वाभाविक मनो वांछित विकास नहीं हुआ और न हो सकता है। लगभग १५० वर्षों तक देश में अंग्रेजी का प्रभुत्व रहने पर भी वह जन साधारण के गले न उतर सकी। श्रीयुत डा० केसकर ने बम्बई विद्यापीठ के दीक्षान्त भाषण में ठीक ही कहा है कि कई शताब्दियों तक अंग्रेजी साहित्य से समृद्ध रहने पर भी कोई भारतीय अंग्रेजी साहित्य में चिरस्थायी स्थान न बना सका, यहां तक कि डा० रवीन्द्रनाथ ठाकुर की जो कि अंग्रेजी साहित्य से शिक्षित हुए अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति बंगला भाषा से हुई। विदेशों में भारत का सम्मान अंग्रेजी से नहीं अपितु राष्ट्र भाषा हिन्दी से बढ़ तथा स्थिर रह सकता है। निःसन्देह बहुत दिनों से अंग्रेजी के प्रयोग का अभ्यासी होने के कारण कुछ लोगों को हिन्दी सीखने में कठिनाई हो सकती है पर राष्ट्रीय एकता और सुरक्षा के लिये इस कठिनाई को दूर करना ही होगा। फिर हिन्दी भारत की अन्य भाषाओं से मिलती जुलती है, यह सरल भी इतनी है कि सुगमता से सीखी जा सकती है। इसके लिये एक मात्र मानसिक दासता से मुक्त होना होगा। हिन्दी सीखने की कठिनाइयों का राग अलापने वालों को उन विदेशियों से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये जिन्होंने भारत की राष्ट्र भाषा से सुविज्ञ होने के लिये नियमित रूप से हिन्दी का अध्ययन और अपने ग्रन्थों का अनुवाद करना आरम्भ कर दिया है। इधर हमारे राजनैतिक नेता प्रदेशीय वा स्वार्थ पूर्ण भावनाओं के वशीभूत हो हिन्दी को राष्ट्र भाषा के पद से अपदस्थ करने या कराने के व्यर्थ प्रयास में अपनी शक्ति और समय नष्ट कर रहे हैं। उन्हें हिन्दी को समृद्ध करने और उसे अंग्रेजी का स्थान ग्रहण करने योग्य बनाने में जुट जाना चाहिये। कुछ लोग यह भ्रम उत्पन्न करने का प्रयत्न कर रहे हैं कि हिन्दी के प्रयोग से अन्य प्रादेशिक भाषाओं को धक्का लगेगा। सत्य बात यह है कि प्रादेशिक भाषाओं और आर्य भाषा हिन्दी दोनों का स्रोत संस्कृत भाषा है। हिन्दी द्वारा इन भाषाओं के अपदस्थ होने का प्रश्न ही नहीं उठ सकता। हिन्दी के विकास से इन भाषाओं को बल ही मिलेगा। इस प्रकार के व्यक्तियों को स्काटलैंड वेल्ज और आयर्लैंड इत्यादि-इत्यादि से पाठ ग्रहण करके देश भक्ति का परिचय देना चाहिये। जब ब्रिटिश राज्य के सामने अंग्रेजी को राज्य भाषा बनाने का प्रश्न उपस्थित हुआ तो इन तीनों प्रदेशों ने अपनी २ भाषाओं के दावे वापिस ले लिये यद्यपि वे तीनों ही प्रदेश अपनी २ भाषाओं के दावे जोर-शोर से प्रस्तुत कर रहे थे। हिन्दी भाषा का जबरदस्त विरोध दक्षिण के वे नेता कर रहे हैं जिन्होंने ब्रिटिश काल में गांधी जी के निर्देशन में दक्षिण में हिन्दी भाषा के प्रचार और प्रसार के लिए सराहनीय कार्य किया है। यही नेता भारत की राष्ट्र भाषा के वरिष्ठ पद से हिन्दी को अपदस्थ करने के लिये जमीन आसमान एक कर रहे हैं। स्पष्ट है कि हिन्दी प्रचार के कार्य में उनका मन न था अथवा अब उनकी भावुकता उनके विवेक और निर्णय

शक्ति पर बलवती हो गई है। कुछ लोग यह भी कहने लगे हैं कि विधान सभा ने या उत्तर वालों ने दक्षिण वालों पर हिन्दी बलात् थोपी है यह तानाशाही है जो देर तक न चल सकेगी। यह भयंकर राजनैतिक भूल है इत्यादि २। वे दावा करते हैं कि यदि हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाने के प्रश्न पर जनमत लिया जाय तो निश्चय ही बहुमत हिन्दी के विरुद्ध होगा। दूरदर्शी देश भक्तों को तो भावी सन्तति के मतदान का ध्यान रखना पड़ता है भावी सन्तति का मत हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाये रखने के पक्ष में ही होगा।

आर्य समाज की शोभा बनें

सार्वदेशिक पत्र के जून ५६ के अङ्क में प्रकाशित 'नैतिक स्तर क्यों गिररहा है?' शीर्षक सम्पादकीय टिप्पणी की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करते हुए एक सज्जन लिखते हैं :—

"जिस व्यक्ति का आचरण नियमोपनियम की धारा ४ के अनुकूल न हो याने जिन्हें एक वर्ष पूरा न हुआ हो साप्ताहिक सत्संग की उपस्थिति २५ प्रतिशतक न हो अपनी आय का १ प्रतिशतक या २५०) नहीं दिया गया हो जो मूक पक्षियों का शिकार करते हों, जिन्हें सन्ध्या हवन तो क्या गायत्री मन्त्र भी न आता हो, आर्य समाज के मन्तव्यों से अपरिचित, दश नियमों से अनभिज्ञ व्यक्ति भी क्या आर्य समाज का मन्त्री बन सकता है ?"

ऐसे व्यक्ति आर्य समाज के मन्त्री तो क्या आर्य सभासद् भी नहीं रह सकते। किसी विशेष योग्य आर्य सभासद् को २५ प्रतिशतक उपस्थिति तथा शतांश की शर्त पूर्ति से मुक्त किया जा सकता है परन्तु समाज के मन्त्री जैसे जिम्मेवार अधिकारी को साप्ताहिक सत्संगों की उपस्थिति से मुक्त नहीं किया जा सकता। उसे प्रत्येक सत्संग में उपस्थित रहना अपना कर्तव्य समझना चाहिये। कम से कम वर्ष में १३ बार की उसकी उपस्थिति तो अनिवार्यतः होनी ही चाहिये। आर्य समाज का सदस्य बन जाने पर सदस्य को यह देखना है कि मेरे कारण आर्य समाज का यश होता है या अपयश तथा मैं आर्य समाज की शोभा बन रहा हूँ या नहीं? यदि उत्तर नकार में हो तो आर्य समाज द्वारा निकाले जाने की अपेक्षा यह उत्तम होगा कि वह स्वयं आर्य समाज की सदस्यता से त्याग पत्र दे दे और आर्य समाज से बाहर रहकर उसकी सेवा करते रहें।

आर्य समाज स्थापना दिवस की अपील

यह हर्ष की बात है कि आर्य समाजें 'स्थापना दिवस' को बड़े समारोह से मनाने लगी हैं। इस समय तक हमारे पास जो सूचनाएं प्राप्त हुई हैं वे उत्साह वर्द्धक हैं। आशा है इस दिवस को मनाने की परम्परा उत्तरोत्तर स्वस्थ से स्वस्थतर बनती जायगी।

आर्य समाजों और आर्य जगत् को विदित ही है कि सार्वदेशिक सभा ने प्रदेशीय प्रतिनिधि सभाओं के परामर्श से इस दिवस की आय को अपनी स्थिर आय का साधन बनाया हुआ है। इसी आशय की समाजों को भ्रमण पत्रिकाओं के द्वारा अपील की जाती है। इस अपील के फल स्वरूप समाजे धन भेजती हैं जो लगभग १०००) प्रतिवर्ष होता है। २००० आर्य समाजों से १०००) की प्राप्ति के अनुसार ।।) प्रति समाज औसत रहता है जो न तो उत्साह वर्द्धक है और न आर्य समाज के गौरव के अनुरूप ही है। आर्य समाजों को इस बात को विशेष रूप से अङ्कित करना चाहिये। यदि प्रत्येक समाज अपने सदस्यों से ।) प्रति सदस्य के हिसाब से चन्दा एकत्र करें तो यह राशि सहस्रों तक पहुंच सकती है। क्या हम आशा करें कि इस वर्ष यह राशि कम से कम १० गुनी तो हो ही जायगी ? कहने की आवश्यकता नहीं है कि आर्थिक दृष्टि से सार्वदेशिक सभा के हाथ दृढ़ करने का अर्थ

है आर्य समाज के अपने हाथ दृढ़ करना। जो निश्चय ही प्रत्येक आर्य और आर्य समाज को वांछनीय होगी।

सार्वदेशिक सभा की २९-४-५६ की साधारण सभा का आवश्यक निश्चय

महर्षि दयानन्द के और श्रद्धानन्द जी के पवित्र नामों के दुरुपयोग अनधिकृत एवं संगठन को क्षति पहुंचाने वाले आर्य समाजों की स्थापना को रोकने के सम्बन्ध में आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई का निम्न लिखित प्रस्ताव प्रस्तुत होकर पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ। निश्चय हुआ कि इस प्रस्ताव को क्रियान्वित करने के लिये शीघ्र पग उठाया जाय :—

आर्य समाज, महर्षि दयानन्द और दयानन्द के नाम का दुरुपयोग होने की घटनाओं का समाचार प्राप्त होता रहा है अतः इस सभा की दृष्टि में इस दुरुपयोग को रोकना आवश्यक है इसलिये सार्वदेशिक सभा की ओर से घोषणा की जाय कि :—

१—सार्वदेशिक सभा अथवा इस सभा से सम्बन्धित प्रान्तिक सभा की अनुमति के विना कोई आर्य समाज महर्षि दयानन्द और हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द के नाम का उपयोग न करें और उनके नाम पर संस्थाये न खोलें।

२—यदि कोई व्यक्ति मिल कर आर्य समाज खोलें तो भी सार्वदेशिक सभा द्वारा निमित आर्यसमाज के नियमों उपनियमों को स्वीकार कर तद्नुसार खोलें और एक वर्ष के भीतर इस सभा से सम्बंधित प्रान्तीय सभा के साथ सम्मिलित हो जाये। जो आर्य समाज इस प्रकार संगठित न रहेगा उसको आर्य समाज के नाम का उपयोग करने का अधिकार न होगा। सार्वदेशिक सभा को विदित होने पर सभा उसके प्रति उचित कार्यवाही करेगी।

३—आर्य समाज, महर्षि दयानन्द और हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द के नाम पर कोई व्यक्ति और उसका समूह अनाथालय, विधवा आश्रम, महिला आश्रम आदि संस्थायें सार्वदेशिक सभा या प्रान्तीय प्रतिनिधि सभा को अनुमति के विना न खोले।

आर्य समाज, महर्षि दयानन्द और हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी के नाम का दुरुपयोग न हो उसके लिये लोक सभा आदि में उचित कानून बनवाया जाय और सार्वदेशिक सभा और प्रान्तीय सभायें इसके लिये प्रयत्न करें।

ईसाई मिशनरियों का प्रचार

सहयोगी हिन्दुस्तान यत्र तत्र के शीर्षक में लिखते हैं :—

मध्यप्रदेश की सरकार ने नागपुर उच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश डा० बी० एस० नियोगी की अध्यक्षता में राज्य में ईसाई मिशनरियों की कारवाइयों की जांच के लिये जो समिति नियुक्त की थी उसका विस्फोट अमरीकी या रूसी उद्जन बम (दोनों में से जो अधिक तेज हो) के विस्फोट से किसी कदर भी हल्का नहीं हुआ है। इस बम के रेडियम-धर्मी धूलिकण सैकड़ों मील दूर बम्बई में कार्डिनल ग्रेशियस तक जा पहुंचे हैं और उन्होंने इस विनाशक आयुध के विरुद्ध जोरों की आवाज उठाई है।

कार्डिनल ग्रेशियस का इसके विरुद्ध आवाज उठाना स्वाभाविक ही है क्योंकि हिन्दुओं की यह नमक हराम जाति ईसाई धर्म प्रचारकों की अब तक की सब सेवाओं को भुला कर उन्हीं के पीछे लट्ठ लेकर पड़ गई है। इन ईसाई मिशनरियों ने भारत में स्कूल-कालेज और मिशन अस्पताल कायम कर भारतीयों की लौकिक उन्नति और कल्याण के लिये जो कुछ प्रयत्न किया सो तो किया ही, उनके पारलौकिक कल्याण के लिए उन्हें आध्यात्मिक अज्ञान

के अन्धकार से बाहर निकाल कर प्रभु यीशु द्वारा संसार में फैलाई गई ज्योति की ओर ले जाने का भी उद्योग किया। किन्तु ये हिन्दू लोग इतने कृतघ्न हैं कि उन्होंने उनकी उन सेवाओं की कोई कदर नहीं की।

इन ईसाई धर्म प्रचारकों ने हिन्दुओं के मन में अपने देवी-देवताओं और भगवान् के सम्बन्ध में वेद-शास्त्र और पुराणों से प्राप्त ज्ञान के बद्धमूल कुसंस्कारों की जड़ खोदने के लिये उन्हें किस-किस ज्ञानामृत का पान कराया, उसकी जरा बानगी देखिये :—

मध्य प्रदेश के ग्रामों में, आदि वासियों में ईसाई मिशनरियों द्वारा वितरित किये गये एक पैम्फलेट "गुरु परीक्षा" में लिखा है :—

"राम-कृष्ण...... मुक्ति दाता नहीं हो सकते, क्योंकि सब के सब... बुराइयों के बस में लिप्त थे।" (पृ० ४)

"वह (कृष्ण) चोर. ... था। उसने कंस के निरपराध धोबी का घात किया। ऐसे देवताओं पर आसरा रखना बडी मूर्खता है।" (पृष्ठ ५)

"देवता से लेकर ब्राह्मण तक सब के सब पाप के अधीन हैं।" पृष्ठ ८)

"राम. . ... पापी था.... आप मर गया और फिर नहीं जी उठा . " (पृष्ठ ३४) (रिपोर्ट पृ० ११९ व १२०)

क्यों साहब, अब आप अज्ञान के अन्धकार से निकल कर ज्योति में आये या नहीं, 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' की आपकी कामना पूरी हुई या नहीं?

आप ही बताइये, जो कृष्ण चोर था, जो राम पापी था, वह आपका भला कैसे कर सकता है? ऐसे देवताओं पर आसरा रखना मूर्खता नहीं तो और क्या है?

और देखिये! तुलसीदास जी ने रामायण में गिरिजा पूजन का वर्णन किया है, किन्तु क्या आपको रामायण की कोई भी टीका अथवा कोई भी कथा वाचक यह बता सका है कि यह गिरिजा पूजन क्या है? यदि नहीं तो सुनिये, गिरिजा पूजन के मानी हैं गिर्जे में पूजन। (रिपोर्ट पृष्ठ ११९) आपने कितनी बार ईशावास्योपनिषद् में "ईशा वास्यमिदं सर्वम्" का मन्त्र पढ़ा है किन्तु क्या आप कभी उसके गहरे मर्म तक पहुंच सके? नहीं? तो सुनिये, इसका अर्थ है, "सारा संसार ईसाई बन कर रहेगा।"

और सुनिये! वह बात शायद आपने कभी नहीं सुनी होगी कि कृष्ण, राम, शंकर और विश्वामित्र यीशु महाप्रभु के जन्म दिन पर उन्हें देखने के लिये गये थे। (रिपोर्ट पृ० ११९) लेकिन अब ईसाई मिशनरियों की कृपा से अपने ज्ञान में वह वृद्धि आप और कर सकते हैं।

ईसाई मिशनरियों ने यह सब अज्ञानान्धकार दूर करने के लिए केवल आप्त प्रमाण की ही सहायता नहीं ली, बल्कि प्रत्यक्ष से भी यह सिद्ध करके दिखा दिया है। यह युग वैज्ञानिक युग है, इसलिये जो बात तुरन्त प्रत्यक्ष से सिद्ध हो जाय उस पर किसी को आपत्ति कैसे हो सकती है।

पादरी महोदय गांव के बच्चों को एक मोटर लेकर सैर करने जाते हैं। रास्ते में मोटर का इंजन एकाएक बिगड़ जाता है और वह फुसफुसा कर रुक जाती है। अब पादरी साहब बच्चों से कहते हैं, बच्चो, तुम सब अपने भगवान् कृष्ण और भगवान् राम को पुकारो और उनसे प्रार्थना करो कि वे तुम्हारी मोटर ठीक कर दें। बच्चे आंख मूंद कर प्रार्थना करते हैं, किन्तु गाड़ी टस से मस नहीं होती। सुदर्शन चक्रधारी भगवान् कृष्ण लाख सिर पटकने पर भी मोटर का स्टीयरिंग चक्र धारण

नहीं कर पाते और शिव का धनुष तोड़ने वाले राम से किसी भी तरह मोटर का क्लच, गीयर या ऐक्सीलेटर हिलाये नहीं हिलता। अब पादरी साहब के कहने से बच्चे यीशु महाप्रभु को स्मरण करते हैं और बात की बात में प्रभु यीशु पादरी रूपी ड्राइवर के वेश में आकर स्टीयरिंग संभाल लेते हैं और गाड़ी घरघराती दौड़ने लगती है। हाथ कंगन को आरसी क्या ? अब आप ही कहिये, राम कृष्ण ताक़तवर हैं या यीशु महाप्रभु।

ईसाई मिशनरियों ने इस देश में किस तरह टनों ज्ञान बिखेर कर देश की भोली भाली जनता का उपकार किया है, इसका कुछ हिसाब नहीं। फिर भी कृतघ्न हिन्दू जाति ने उनका उपकार नहीं माना। ऐसी दशा में कार्डिनल ग्रेशियस यदि बिगड़ उठे तो आश्चर्य क्या है। कार्डिनल महोदय से हमारा निवेदन है कि ये भारत के अबोध बच्चे तो भगवान् कृष्ण और राम को बहुत पुकार चुके, हैं, अब यीशु प्रभु को पुकारने की आपकी बारी है। उन्हें पुकार कर कहिये कि प्रभो, एक बार फिर इस देश को गोरों का गुलाम बना दो तभी इसका भला होगा।

शराब खोरी का भयङ्कर व्यापक प्रसार

अमेरिका में इन दिनों ५ करोड़ ६० लाख व्यक्ति शराबी हैं अर्थात् वहां की कुल जन संख्या में प्रति १ लाख पीछे ४३९० व्यक्ति जब कि १९३० में प्रति लाख पीछे शराबियों की संख्या २६८० थी। हाल की एक मत गणना के अनुसार १२ वर्ष पूर्व कनाडा में ४१ प्रतिशत व्यक्ति शराब खोरी से बचे हुये थे जब कि अब केवल २८ प्रतिशत बचे हुये हैं। शराब पीने वाली स्त्रियों की संख्या काफी बढ़ गई है। इंग्लैंड में ७० चीफ कान्स्टेबलों के सर्वेक्षण पर आधारित विवरण में बताया गया है कि ब्रिटेन के नवयुवकों और नवयुवतियों में मद्यपान खतरनाक हालत पर पहुंच गया है। शराब खोरी के अपराधों में सजा पाने वाले २१ वर्ष से कम आयु के लोगों की संख्या एक ही वर्ष में (१९५४ से १९५५ तक) ३२ प्रतिशतक अधिक बढ़ गई है। पेरिस के इंस्टीट्यूट आव् इकनामिक्स के अनुसार फ्रांस में क्षयकी विविध बीमारियों से जितने स्त्री पुरुष मरे हैं उनमें से ४१०० अधिक शराब खोरी से मरे। फ्रेंच एकादमी आव मेडीसन्ज़ को हाल ही में प्रस्तुत एक रिपोर्ट के अनुसार वहां इसे १२ वर्ष के बीच की आयु के बच्चे शराब के नशे के आदी होने के कारण प्रायः बीमार बने रहते हैं। पोलैंड भी शराब खोरी के दुष्परिणाम अनुभव करने लगा है। वहां शराब खोरी के कारण कारखानों और खेतों में काम करने की लोगों की क्षमता कर रही है।

इन सब देशों में शराब खोरी की बुराई से बचने के कुछ उपाय सोचे जाने लगे हैं। उदाहरण के लिए फ्रांस में इसे १२ वर्ष के बीच की आयु वाले बच्चों में व्याप्त शराब के दुष्परिणामों से बचने के लिए सुझाया गया है कि स्कूल की खाने पीने की दूकानों से शराब देना बन्द कर दिया जाय। यही नहीं बल्कि आम शराब खोरी के विरुद्ध भी वहां के स्वास्थ्य मन्त्रालय ने एक आन्दोलन प्रारम्भ किया है। वह यह कि एक डिग्री कम अल्कोहल वाली शराब पीने का प्रचार किया जा रहा है और पेरिस मे भूमि के नीचे चलने वाली रेलवे में चित्रों के द्वारा मनुष्य के जिगर पर पड़ने वाले शराब के दुष्परिणाम दिखलाये जा रहे हैं। इङ्गलैंड मे खाने पीने का सामान बेचने वालों को नवयुवकों के प्रति उनके कर्त्तव्य की फिर से याद दिलाई गई और राष्ट्रीय मद्य निषेध संघ ने ब्रिटिश कूट नीतिज्ञों से अनुरोध किया है कि वे शराब न पीने की प्रतिज्ञा करें। पोलैंड का पग सबसे अधिक सक्रिय है। वहां १८ वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों

को शराब या शराब मिले पेय पदार्थ बेचना वर्जित कर दिया गया है इसके साथ ही शराब की आय बिक्री पर प्रतिबन्ध लगा दिए गए हैं।

यह सन्तोष की बात है कि शराब खोरी की बढ़ती हुई बुराई के खतरे के प्रति इन देशों की आंखें खुलती जा रही हैं। जब कोई बुराई व्यापक एवं घातक रूप ले लेती है प्रायः तब ही राष्ट्रों के कर्णधारों की आंखे खुलती हैं। यदि समय रहते इसकी रोक थाम करने के ही नहीं अपितु इसके सर्व विनाश के उपाय कर लिए जाए तो बहुत सा विनाश और संहार रुक जाय। अमेरिका के एक प्रभावशाली नेता ने बहुत समय हुआ कहा था कि यदि हम एक पीढ़ी को शराब खोरी से बचा कर संयमी बना सके तो अनेक पीढ़ियों की रक्षा कर सकते हैं। सम्भवतः इस चेतावनी की सत्यता और उपादेयता अमेरिका को आज अनुभव हो। अमेरिका ने कुछ समय पूर्व सम्पूर्ण शराब बन्दी का पग उठाया था। परन्तु उसका नैतिक साहस इस उत्तम सुधार का साथ न दे सकने के कारण, यह पग पीछे हटा लिया गया था जिससे समस्त संसार के समाज संशोधकों को निराशा हुई थी।

यदि अमेरिका आदि देशों ने अब भी इस बुराई के अन्त के लिए कड़ा पग न उठाया तो इन देशों की ईश्वर ही रक्षा करे तो करे अन्यथा उनका सर्वनाश सुनिश्चित है।

भारतवर्ष में किसी काल में शराब खोरी को नैतिक और सामाजिक समर्थन प्राप्त नहीं रहा है। इतना ही नहीं चोरी चुपके से भी शराब का सेवन करने वाला व्यक्ति समाज में बुरी दृष्टि से देखा जाता रहा है। इसीलिये यह कुटेव सामाजिक बुराई का रूप नहीं ले सकी। भवनों और अंग्रेजों के संसर्ग से विलासियों और शराब को सभ्यता का चिन्ह मानने वालों के द्वारा शराब को प्रश्रय अवश्य दिया गया। औद्योगिक केन्द्रों में मजदूरों ने अपनी चिन्ताओं और शारीरिक श्रम को दूर करने की भ्रान्तिवश इसका सेवन किया। परिणाम जो होना था वही हुआ। अर्थात् शारीरिक, आर्थिक, मानसिक और चारित्रिक हर प्रकार का पतन और ह्रास। आर्य समाज ने अपने जन्मकाल से ही देश और समाज को इस खतरे से बचाने का भगीरथ प्रयत्न किया है। महात्मा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस ने शराब बंदी को अपने प्रोग्राम का एक भाग बनाया और वह अब तक इस पर आरूढ़ है। आर्थिक कठिनाइयों और कठोर आलोचनाओं से ऊपर उठ कर भी कांग्रेस शासन राजकीय उपायों के द्वारा पूर्ण शराबबन्दी के लक्ष्य की ओर धीरे २ अग्रसर हो रहा है।

सरकारी समारोहों मे शराब का उपयोग वर्जित किया जा रहा है। किन्हीं क्षेत्रों मे शराब बन्दी पूरी है, किन्हीं क्षेत्रो में क्रमशः बढ़ाई जा रही है। देहली में सप्ताह में २ दिन सूखे घोषित किये जा चुके है अर्थात् उन दिनों शराब नहीं बिकती। आगामी स्वतन्त्रता दिवस अर्थात् १५ अगस्त से सार्वजनिक स्थानों पर मद्य पान बन्द कर दिये जाने की सम्भावना है। यह पर्याप्त तो नहीं है फिर भी सही दिशा में एक सही कदम अवश्य है। निश्चय ही भारत का पूर्ण शराब बन्दी का सफल परीक्षण संसार के इतर जनों और राष्ट्र के लिये मार्ग दर्शक का काम करेगा। इस परीक्षण की सफलता के लिये प्रत्येक देशवासी को अपना योग देना चाहिये। यह मानव की और देश की बहुत बड़ी सेवा है।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

चरित्र-निर्माण

लेखक श्रीयुत बा० पूर्णचन्द्र एडवोकेट, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा उ० प्र०।

मानव निर्माण के लिये चरित्र निर्माण की समस्या एक आधार भूत समस्या है। प्रत्येक व्यक्ति के चरित्र निर्माण के लिये उसके मानसिक जगत् की व्यवस्था अनिवार्य है।

प्रत्येक व्यक्ति, एक साम्राज्य

मानसिक जगत् की व्यवस्था के समझने के लिये यह आवश्यक है कि हम इस बात को ध्यान में रखें, कि प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर एक साम्राज्य है। ईश्वर का राज्य आत्मा पर आत्माका मन पर, मनका ज्ञानेन्द्रियों पर, और ज्ञानेन्द्रियों का कर्मेन्द्रियों पर।

पाप और पुण्य की समस्या

ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों से ही पाप और पुण्य होते हैं और इन्द्रियों पर शासन मन का होना अनिवार्य है। इन्द्रिय शब्दमें एक महत्व है। इन्द्रिय का अर्थ है इन्द्रकी। इसका अभिप्रायः यह हुआ कि इन्द्रिय शब्द का प्रयोग करते ही, इन्द्र अर्थात् आत्मा का ध्यान आना चाहिये। मन का शासन इन्द्रियों पर है और आत्मा का मन पर। इस प्रकार एक शासन व्यवस्था प्रत्येक व्यक्ति में प्रचलित है। आत्मा पर आधिपत्य अथवा शासन परमात्मा का है और इस प्रकार यह बात समझ में आ सकती है कि मन आत्मा और परमात्मा के अनुशासनों में रहे और इन्द्रियां मन के अनुशासन में। अनुशासन का अर्थ है शासन के अनुकूल, और इस विधि से यह स्पष्ट है कि मन की व्यवस्था तब हो सकती है कि जब आत्मा और परमात्मा की सत्ता उनके गुण कर्म और स्वभाव, उनकी आज्ञा और अनुशासन सर्वैव मन के सन्मुख रहे और स्वय अनुशासन में रहता हुआ ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों की किया को अपने शासन मे रखे।

चंचल मन

मन का चचल होना ईश्वर की एक देन है। चचल मन का अभिप्राय यह है कि उसकी आकांक्षायें बहुत ऊंची विशाल, विस्तृत और सार्वजनिक हैं। जितना लक्ष्य ऊंचा, उतना ही साहस बड़ा और विशाल होना चाहिये। जितना साहस विशाल उतनी ही सामर्थ्य विशाल होनी आवश्यक है।

शिखा और सूत्र

शिखा और सूत्र की प्रथा एक प्राचीन प्रथा है। इसका अभिप्राय है महान् ऊंचा आदर्श और उस आदर्श की प्राप्ति के लिये सूत्र का बन्धन अर्थात अनुशासन और मर्यादा। जिस प्रकार एक उद्यान में नये उगते हुए वृक्ष को सुतली से बांध देते हैं कि वह आंधी के झोकों से न झुक जाये और न टूटे इसी प्रकार उप नयन का अभिप्राय है कि जब बालक कर्म के जगत मे प्रवेश करे तो कर्म और भोग के प्रभाव से सुरक्षित रहने के लिये वह अपने को दिव्य शक्ति के समीप समझे और मोक्ष प्राप्ति का ऊंचा आदर्श उसके सन्मुख रहे।

तीन प्रकार के नियम

तीन प्रकार के नियम संसार में प्रचलित हैं। राज नियम, लोक नियम और दैवीय नियम। लोक नियम और राज नियम का सीधा सम्बन्ध

मानसिक जगत् की व्यवस्था से नहीं हो सकता। उनकी पहुंच किये हुए काम और कही हुई बात तक है। परन्तु जो बात कही जाती है और जो कार्य किया जाता है उनका आरम्भ व आदि स्रोत मानसिक संकल्प और विकल्प के अर्थात् मन की दुनिया से है। मानसिक जगत की व्यवस्था के लिये दैवीय नियम को जानना, मानना, और पालन करना आवश्यक है।

दवीय नियम

दैवीय नियमों को जानना, मानना और पालन करना आर्य बनना है। आर्य को ईश्वर पुत्र कहते हैं। जो अपने को ईश्वर से सम्बन्धित और आत्मिक दृष्टिकोण से अपने को समझता है अर्थात् अपने को शरीर, रंग, भेष, भूषा, भाषा, देश, लिंग, प्रान्त, आदि के बन्धनों से ऊपर मानता है वह आर्य है। आर्य श्रेष्ठ सज्जन चरित्रवान, सदाचारी, और ईश्वर भक्त को कहते हैं।

ब्रह्मचारी

जिसका आचार और चरित्र ब्रह्म के अनुकूल अर्थात् ईश्वर की व्यवस्था और ईश्वर की वाणी वेद के अनुकूल है वह ब्रह्मचारी है। जो व्यक्ति को इस प्रकार के आचार में प्रोत्साहित करता है वह आचार्य है। ईश्वर और आत्मा को सन्मुख रखकर ही आर्य श्रेष्ठ और ब्रह्मचारी बन सकता है।

आर्य और वीरता

आर्य बनना ही सच्चा वीर बनना है। वीरता और निर्भीकता का घनिष्ठ सम्बन्ध है। सच्चा वीर वह है जिस के अन्दर किसी प्रकार का भय नहीं है और संसार में सब से बड़ा और भयंकर भय मृत्यु का भय है। संसार के अन्य सब भय और क्लेश उस समय तक ही भय हैं जब उनके सम्पर्क में आने से मृत्यु का भाव सन्मुख आता है। रोग शारीरिक कष्ट, चोट सब प्रकार की वेदनायें उसी समय तक कष्ट दायक और दुखदायक प्रतीत होती हैं जब उनको सन्मुख रख कर मृत्यु का ध्यान आता है इस लिये सच्चे वीर होने के लिये मृत्यु के भय से बचने के लिये आध्यात्मिक दृष्टिकोण अथवा आत्मिक बल की आवश्यकता है। आत्मिक बल का अभिप्राय यह है कि अपने को आत्मिक दृष्टिकोण से देखना अर्थात् अपने को अजर, अमर, अनादि, अनन्त अनुभव करना। जहां व्यक्ति ने अपने को आत्मिक दृष्टिकोण से देखा और अपने को ईश्वर की छत्र छाया में अनुभव किया, ईश्वर के अनुशासन में अपने को माना वह न केवल आर्य बना बल्कि आर्य और वीर दोनों बन जाता है।

व्यक्ति और समाज

प्रत्येक व्यक्ति का आर्य और वीर बनना ही पर्याप्त नहीं है। व्यक्ति और समाज का घनिष्ठ सम्बन्ध है। कोई व्यक्ति जन्म से मृत्यु तक देश और काल दानों की दृष्टि से अकेला जीवन निर्वाह नहीं कर सकता। न अपनी आवश्यकताओं को पूरी कर सकता है और न अपने क्लेशों का निराकरण कर सकता है और न अकेला रह कर जीवन का आनन्द अनुभव कर सकता है। उसका दूसरों के साथ रहना उनके सम्पर्क में आना अनिवार्य है। सम्पर्क में आने से संघर्ष की सम्भावना भी स्वाभाविक सी है। ससार के भोग्य पदार्थों की प्राप्ति की इच्छा एक में अनेक व्यक्तियों को उत्पन्न होती है और उस प्रकार की इच्छाओं की पूर्ति का नाम प्रयत्न है और प्रयत्न में सम्पर्क और संघर्ष दोनों सम्मिलित हैं। सम्पर्क और संघर्ष मर्यादित रहें इसका नाम संगठन है।

दल बन्दी

आर्य वीरों के संगठन का नाम आर्य समाज

आर्य राष्ट्र और आर्य वीर दल है। दल बन्दी का अर्थ गुट बदी, पार्टी बाजी, नहीं है।

सच्चा संगठन व संगति करण उसी समय संभव है जब उसका आधार देव पूजा हो और उसका व्यवहारिक रूप दान हो। देव पूजा का आधार आर्य में, ईश्वर की सत्ता में विश्वास करने वालों में ही हो सकता है। दान और परोपकार की भावना आर्य वीरों में ही हो सकती है और यदि संगति करण उपरोक्त देव पूजा और दान के रूप में मर्यादित हो जाये तो आज संसार में राजनैतिक दलदल अर्थात् दल बन्दी से जो हानि हो रही है वह हानि रुक जाये, मिट जाये और सारी जाति एक प्रेम मय सूत्र में बन्ध कर लक्ष्य की ओर अग्रसर हो जाये।

आर्य वीरों का दल

आर्य वीरों के दल की स्थापना से विचार पवित्र, आचार मर्यादित और व्यवहार धार्मिक बन जायेंगे। यदि विचार, आचार और व्यवहार ठीक होगा तो सम्प्रति जो हानि संसार को अधिकारों की आंधी साम्यवाद के तूफान, राजनीति का दलदल, विज्ञान के चकाचौंध और सम्प्रदायवाद के अधिकार से पहुंच रही है उन सब प्रकार की हानियों का निराकरण हो जायेगा। आर्य और वीर बनने के लिये किसी विशेष आयु की आवश्यकता नहीं। यह बात निस्सन्देह है कि बालक और नवयुवक सुगमता और सुविधा से आर्य और वीर बनाये जा सकते हैं। उनका संगठन भी आर्य वीरों का सा हो सकता है परन्तु आर्य और वीर बनने की भावना प्रत्येक वृद्ध. युवक और बालक में होना आवश्यक है और आर्य और वीरों के संगठन का नाम आर्य समाज है। आर्य वीर दल आर्य समाज का रचनात्मक दृष्टिकोण का प्रत्यक्ष स्वरूप और मूर्तिमान प्रदर्शन है। आर्य वीर जब प्रबन्ध और प्रचार के क्षेत्र में पग रक्खेंगे तो उनके आर्य होने, वीर होने और निरपेक्ष भाव से संगठित होने की भावना सुरक्षित रहेगी। आज संसार ईश्वर और आत्मा को भूल कर गृह कलह, द्वेष और विद्रोह के झंझट में फँसा हुआ है। सार्वजनिक प्रेम विश्व बन्धु होने की भावना वसुधैव को कुटुम्ब मानने की भावना आर्य वीर बनने से ही आ सकती है। यही चरित्र निर्माण का सबसे सफल और रचनात्मक कार्य-क्रम है।

चुने हुए फूल

मनुष्य भावी सन्तान के लिए जो बहुमूल्य वस्तु छोड़ सकता है वह श्रेष्ठ चरित्र है।

समाज की महान् आशा व्यक्तियों के उच्च चरित्र में निहित होती है।

मनुष्य का चरित्र ही उसकी वास्तविकता होती है। उसकी कीर्ति दूसरों की सम्मति मात्र होती है। चरित्र भीतर की ओर कीर्ति बाहर की वस्तु होती है। चरित्र सार होता और कीर्ति छाया होती है।

राम और कृष्ण किस सभ्यता की देन थे ?

श्रीयुत स्व० महात्मा नारायण स्वामी जी की डायरी से

संस्कृति और सभ्यता प्रायः पर्याय वाचक के तौर पर प्रयुक्त हुआ करते हैं परन्तु वास्तव में इनमें कारण और कार्य्य का सम्बन्ध होता है अर्थात् संस्कृति का कार्य्य या फल सभ्यता है।

'संस्कृति' शब्द वर्तमान काल की रचना है और अंग्रेजी के कल्चर शब्द की जगह संस्कार शब्द बनाया गया है। संस्कृत वस्तु संस्कार (शुद्ध) की हुई चीजको कहते हैं उसीसे संस्कृति शब्द बना लिया गया है। संस्कार हृदय पर पड़े हुए उन छापों को कहते हैं जो मन, वाणी आदि की शुद्धता के बार २ अभ्यास से उत्पन्न हुआ करते हैं जिससे मनुष्य की मानसिक और नैतिक बुद्धि का विकास हुआ करता है और इस प्रकार उन्नत हुई मानसिक और नैतिक बुद्धि, जब अन्य प्राणियों के सम्पर्क से व्यवहार में आया करती है तब इसी व्यावहारिक मर्य्यादा का नाम सभ्यता होता है।

इस प्रकार सभ्यता संस्कृति का फल या उसकी सन्तति ही कही जा सकती है। संस्कृति और सभ्यता का यह रूप होते हुए भी भिन्न २ देशों में वहां की परिस्थिति के अनुकूल इसके पृथक् २ गलत अर्थ कर लिए जाते हैं। पश्चिमी देशों में मशीनों से कार्य लेना सभ्यता का मुख्य अङ्ग माना जाता है। कुछ वर्ष हुए एक चीनी विद्वान् ने कहा था कि 'जब लायड जार्ज संस्कृति का संकेत करते हैं तो उससे उनका अभिप्राय सस्ता साबुन और बेतार की तार बर्की होता है । परन्तु जब मैं संस्कृति का नाम लेता हूँ तो मेरा तात्पर्य्य उससे उस योग्यता का होता है जिससे मैं फलों की सुन्दरता और उनके हल्के एवं गहरे विभिन्न रंगों को देख कर उत्साह से भर उठता हूं।"

सभ्यता और संस्कृति के उपर्युक्त प्रकार के अनेक भेद होते हुए भी, हम सभ्यता को मुख्य रीति से दो भागों में बटा हुआ पाते हैं। एक भाग वह है जिसमें आत्मा का स्थान प्रकृति से ऊँचा उठा हुआ करता है। दूसरा भाग वह है जिसमें प्रकृति आत्मा से ऊँची क्या अपितु सब कुछ वही मानी जाती है। पहला भाग आत्मा की मुख्यता वाला होने से आस्तिकता के भाव से पूर्ण होता है और इसी लिए उसके दृष्टिकोण में विश्व भावना निहित होती है परन्तु दूसरा भाग प्रकृति की मुख्यता वाला होने से जगत के ऐश्वर्य्य (सोना चांदी) की ओर मुँह रखता है इसी लिए संकुचित जाति भावनाओं से पूर्ण हुआ करता है। पहले भाग के लक्ष्य में विश्व बन्धुत्व होने से वह समस्त ब्रह्मांड को ईश्वर की रचना और समस्त प्राणियों को उसका पुत्र समझते हुए संसार के सामने आदर्श उपस्थित करता है कि ईश्वर को समस्त प्राणियों का पिता समझें और समस्त प्राणियों में भ्रातृ भाव देखें। दूसरा भाग धन दौलत का इच्छुक होने से अपने देश की चार दिवारी से बाहर की दुनिया को नहीं देखता अपितु अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए अपनी चार दिवारी से बाहर वालों का कभी २ जहरीली गैसों, घातक गोले बरसाने वाली तोपों और बम के गोलों से स्वागत किया करता है।

आत्मा को प्रमुखता देने वाली सभ्यता ने राम और कृष्ण को और प्रकृति को प्रमुखता देने वाली सभ्यता ने चंगेज खां, और हिरोशिमा पर अणु बम बरसाने वालों आदि २ को पैदा किया।

श्री कृष्ण जन्माष्टमी

लेखिका : श्रीमती कृष्णाकुमारी बी एम० ए० बी० टी०

प्रत्येक देश में विशेष तिथियों पर पर्वों को मनाने की प्रथा प्रचलित है। इन पर्वों में महापुरुषों के सम्मान में मनाए जाने वाले पर्व अधिक महत्व पूर्ण माने गये हैं। किसी जाति की सभ्यता और सस्कृति के विकास का अनुमान उसकी पूर्व महान् विभूतियों से लगाया जाता है। जापान में मुख्य ११ पर्व मनाये जाते हैं जिनमें ६ पूर्व पुरुषों के स्मारक दिवस हैं। अमरीका में वाशिंगटन के स्मारक दिवस पर आबाल वृद्ध नर नारी तन मन की सुधि भूल कर आनन्द विभोर हो जाते हैं। हमारे यहां मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र, योगीराज श्री कृष्ण, महात्मा बुद्ध, ऋषि दयानन्द, रवीन्द्रनाथ ठाकुर और महात्मा गांधी के दिवस मनाये जाते हैं। वस्तुत: ये पर्व जाति में जान फूंकने वाले, उसमें उत्साह भरने वाले तथा भावी सन्तान को अपने ? पूर्व पुरुषों के समान महान् बनने को प्रेरणा देने वाले हैं। जितनी उत्तम रीति से इन पर्वों को मनाया जाये देश के लिए ये उतने की उपयोगी सिद्ध होते हैं।

जिन महान् पुरुषों की जयन्तियां मनाई जाती हैं योगीराज श्री कृष्ण उनमें शिरोमणि हैं। पं० रामचन्द्र के शब्दों में "जीवन की पूर्णता कर्म, ज्ञान और भक्ति के समन्वय में है। साधना किसी प्रकार की हो साधक की पूर्ण सत्ता के साथ होनी चाहिये। ऐसी अवस्था में मनुष्य के जीवन में लेश मात्र भी अहंकार नहीं रहता।" श्री कृष्ण का सम्पूर्ण जीवन कर्म, ज्ञान और भक्ति का समन्वय है। निष्काम कर्म योगी बनने का जो उपदेश युद्ध क्षेत्र में उन्होंने अपने सखा अर्जुन को दिया है उसी को उन्होंने अपने जीवन में घटाया है, उनका जीवन गीता ज्ञान का जीता जागता स्वरूप है। उन्होंने इस लोक में १२५ वष दीन दु:खियों की सेवा की। जीवन में कभी विश्राम नहीं किया। जिधर उनकी पुकार होती उधर ही चल पड़ते। उनके समय में चहुं ओर अत्याचार फैला हुआ था। अनेकों राजा प्रजा के साथ अमानुषिक व्यवहार कर रहे थे। प्रजा त्राहि त्राहि कर रही थी। धर्म के संस्थापक श्री कृष्ण अपने नेत्रों के सम्मुख ऐसा अधर्म होते कब सहन कर सकते थे। उन्होंने प्रजा के कष्ट निवारण के लिए अत्याचारियों को दण्ड देकर धर्म राज्य की स्थापना की। अपने माता पिता, वसुदेव देवकी को कैद करने वाले और सात भाइयों के हत्यारे पापी कंस को मार कर नाना उग्रसेन को मथुरा का राजा बनाया। मथुरा पर १७ बार चढ़ाई करने वाले दुष्ट जरासन्ध को मृत्यु के घाट उतार कर उसके पुत्र को राज्य शासन का भार सौंपा। करवीर नरेश शृगाल को युद्ध में मार कर उसके पुत्र को राज सिंहासन पर बिठाया। द्वारिका नगरी पर वायुयानों से आक्रमण करने वाले शाल्व का पीछा करके उसका वध किया। शिशुपाल और कालयवन के कुकर्मों को निरन्तर बढ़ते हुए देख कर उनका सिर काट लिया। समस्त कार्यों को उन्होंने निज बुद्धि पराक्रम के द्वारा धैर्य पूर्वक संभाला। सदैव कार्य व्यस्त रहने पर भी उनका मुख मण्डल कभी चिन्ता ग्रस्त नहीं हुआ।

श्रीकृष्ण सर्वात्म भावापन्न पुरुष थे। निर्धन, धनी, छोटे बड़े सभी के साथ वह प्रीतिका व्यवहार करते थे। बचपन में उन्होंने गोकुल वासियों के साथ गौए चराई और वन में पशु पक्षियों से क्रीडाएँ करके सब की एकता का भाव दिखाया। निर्धन मित्र सुदामा के आने की जब उन्हें सूचना

मिली तो उससे मिलने के लिए सिंहासन छोड़ नंगे पैर दौड़े। उस समयके दृश्यका कवि नरोत्तम दास हृदयग्राही चित्रण करते हैं।

हाय महा दुःख पाये सखा,
तुम आये इते न किते दिन खोये॥
पानी परात को हाथ छुओ नहीं,
नैनन के जल सों पग धोये॥

उसके कच्चे चावलों का प्रेम से भोग लगाया। अनेक दास दासियों के होते हुए भी उन्होंने स्वयं मित्र का स्वागत किया, उसको उत्कृष्ट भोजन कराया और चलते समय अनेक प्रकार का बहु मूल्य द्रव्य देकर उसे सन्तुष्ट किया।

श्री कृष्ण ने अपने जीवन में जो कार्य किये उनमें उनका व्यक्तिगत स्वार्थ न था, अपितु कल्याणार्थ किये गये थे। कार्य करते हुए उन्होंने कभी प्रशंसा की अभिलाषा नहीं की। जरासन्ध, शिशुपाल, रुक्मी आदि प्रायः उनकी निन्दा किया करते थे किन्तु उन्होंने इस ओर ध्यान नहीं दिया। उनको किसी में आसक्ति नहीं थी केवल कर्त्तव्य भावना से कर्म करते थे और विकट से विकट परिस्थितियों का सामना करने में भी घबराते न थे। महाभारत के युद्ध से पूर्व पांडवों की अभिलाषा थी कि एक बार कौरवों से समझौता करने में पूर्ण शक्ति लगा दी जाय जिससे असंख्य वीरों को जीवन से हाथ न धोना पड़े। श्री कृष्ण स्वयं सन्धि के पक्ष में थे। दुर्योधन जैसे स्वार्थान्ध, कपट कुशल के दरबार में जाना मृत्यु के मुख में कूदना था। यद्यपि श्री कृष्ण के दूत बन कर जाने के प्रस्ताव पर कोई सहमत नहीं हुआ किन्तु पांडव जानते थे कि श्री कृष्ण के अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति इस काम को करने में समर्थ नहीं। वाद विवाद के उपरान्त श्री कृष्ण तैयार हुए। एक ओर प्राण संकट की संभावना थी दूसरी ओर यात्रा आपत्ति जनक थी, पर कर्तव्य समझ कर श्री कृष्ण ने जाना ही उचित समझा। उनकी सर्वतोमुखी उन्नति हुई। वे वीर योद्धा, कुशल सेनापति, दीनों के उद्धारक, सकल संसारादर्श, पूर्ण राजनीतिज्ञ, धर्म के उपदेष्टा, और परम तत्वदर्शी थे।

अब तनिक इन महान् विभूति के जन्मोत्सव पर विचार कीजिये। कई दिन पूर्व तैयारियां आरम्भ हो जाती हैं। भांति २ के बहु मूल्य वस्त्राभूषण एकत्रित किये जाते हैं। घरों तथा मन्दिरों में नेत्रों में चकाचौंध करने वाले वस्त्रालंकारों से भी इनकी मूर्तियां सजाई जाती हैं हिंडोले बनाये जाते हैं, झांकियां निकाली जाती हैं और मूर्ति के सौंदर्य को दुगना करने के लिए रंग बिरंगे बिजली के बल्बों और मोम बत्तियों से इनके मुख मण्डल को प्रदीप्त किया जाता है। जन्माष्टमी के दिन स्थान २ पर रास लीला ड्रामे होते हैं। यहाँ पर भी सजावट में किसी प्रकार की कमी नहीं की जाती है। कोई राधा बनता है तो कोई कृष्ण। पहले से ड्रामे और नाच का अभ्यास किया जाता है। मन भर कर रंगरलियाँ मनाई जाती हैं व्रत रखे जाते हैं।

जन्माष्टमी की चहल पहल को जनता के मनोरंजन का साधन अवश्य कहा जा सकता है। परन्तु यह उत्सव जनता के हृदय को नहीं छूता। इस उत्सव पर योगीराज कृष्ण का वास्तविक उच्च जीवन जनता के समक्ष आना चाहिये धार्मिक संस्थाओं और शिक्षणालयों को इसका विशेष यत्न करना चाहिये। इस अवसर पर लोग श्री कृष्ण के उच्च जीवन से प्रेरणा लें और उनके जीवन के कलुषित चित्रण की भ्रान्तियें दूर की जाय। श्री कृष्ण जी को गउओं से अति प्रेम था। इस दिन गोरक्षा का व्रत लिया जाय। गोवध निषेध कार्य क्रम के साथ उनके पालने आदि का भी व्रत लिया जाना चाहिये। योगीराज कृष्ण को अपना आदर्श मान कर यदि प्रजा अपने चरित्र का निर्माण करे तो देश और जाति का महान् उपकार हो सकता है।

भेद कहां ?

(लेखिका—श्रीमती पुष्पावती बी० ए०, प्रभाकर, साहित्य रत्न, शास्त्री)

इस व्यष्टि के पीछे एक समष्ट्यात्मक सत्ता विराज रही है, यह तो सर्वमान्य है। विभिन्न अरों को संगठित व सन्तुलित रखने के लिए बीच में एक केन्द्र बिन्दु की आवश्यकता रहती है। जगत् में भी देखने में आ रहा है कि सर्वत्र विभिन्नता में अभिन्नता विद्यमान है, विघटन में संगठन है और विभिन्नता की स्थिरता के लिए किसी एक अभिन्न शक्ति का होना परम आवश्यक है, अन्यथा विभिन्नता अपना आधार खो बैठेगी।

जीवन व्यापार में भी यह तथ्य स्पष्ट है। समान कार्य का प्रभाव भिन्न होता है दृष्टिकोण के भेद के कारण। मजदूर के भार वहन व एक समाज सेवक के भार वहन में अन्तर है। कार्य वही है, शारीरिक परिश्रम भी वही है, पर प्रभाव में भेद है कार्य के मूल्य में अन्तर है। मां भी बालक को चपत लगाती है और एक पड़ौसी भी, पर मां के द्वारा पीटे जाने पर कोई आक्षेप नहीं उठता परन्तु पड़ौसी के मारने पर तूफान खड़ा हो जाता है। यह क्यों ? केवल दृष्टिकोण का भेद है—भावना की विलक्षणता है।

इससे स्पष्ट है कि जीवन के मूल्यांकन अथवा इसकी लघुता व महत्ता का मापदण्ड क्या है ? महर्षि दयानन्द कहा करते थे पण्डे पुजारियों को "जो तुम्हारे भाग्यका भोग है,वह तो मिल कर ही रहेगा। तुम काहे को छल प्रपञ्च रचते हो।" इसके मूल में भाव यही था कि जीवन में भोग तो भोगना है ही, पर शुद्ध भाव रखते हुए क्यों न चला जाय जिससे जीवन का मूल्य निखर आए।

सृष्टि उत्पत्ति का उद्देश्य बताया गया है कि प्राणी कर्मों का भोग भोग सके तथा मुक्ति के लिए पुरुषार्थ कर सके। पर कौन से कर्म हैं जिनके करने से मुक्ति होगी और किनके करने से नहीं ? यदि नितान्ततः कर्म व्यापार के आधार पर ही यह निर्णीत किया जायगा तो कभी निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा जा सकेगा, पर इसके लिए एक छोटा सा सूत्र भी भगवान् ने सुझा दिया है, अतः अब मानव को मुक्ति पथ निर्धारित करने में कुछ भी कठिनाई नहीं है। वह सूत्र है भावना रूप में। बस जिस भावना से कर्म किया जाय, वैसा ही कर्म का फल होगा। गीता भी इसी तथ्य को स्पष्ट करती है। निष्काम कर्म करने का विचार भी एक विशेष प्रकार का दृष्टिकोण है जिसके द्वारा कर्म करने से कर्म बन्धन को काटने वाला हो जाता है। अतः भावना का ही मूल्य है। अब स्पष्ट है कि मुक्तिपथ कोई दूर नहीं, वह वन व पर्वतों को चीर कर लाने की भी वस्तु नहीं। यह खुला है, नितान्त उन्मुक्त है, लम्बे से लम्बा है व छोटे से छोटा है। भावना जितनी भी शुद्ध होगी, उतना ही यह छोटा अर्थात् शीघ्र भगवान् के द्वार तक ले जाने वाला होगा।

अतः कोरे कर्म की व्याख्या करने के स्थान पर कर्म की प्रेरक शक्ति भावना की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। भावना के ही कारण कर्म लघु व महान् है, अच्छा वा बुरा है।

इसी कारण यज्ञ के साथ यज्ञ भावना की इतनी महत्ता है। यज्ञ भावना के बिना यज्ञ यज्ञ नहीं रहता, वह अयज्ञ या कुयज्ञ हो जाता है। गीता में अकर्म, विकर्म व सत्कर्म के रूप में कर्म का कोटि निर्धारण भी इसी आधार पर है। 'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म' जब ऋषि हृदय ने यह सन्देश दिया था तब उसका भाव अग्नि में आहुति छोड़ने मात्र का नहीं था अपितु यह था कि वही यज्ञ है जो श्रेष्ठतम है और श्रेष्ठतम वह है जो ईश्वर सृष्टि के उद्देश्य पूर्ति में सहायक हो और सृष्टि का उद्देश्य है जीवात्मा के बन्धनों का नाश, शाश्वत स्वातन्त्र्य तथा परम प्रियतम से मेल। और कर्मों की श्रेष्ठता की आधार भूत है कर्म की प्रेरक शक्ति भावना। अब स्पष्ट है कि यहां धोखे, छल, प्रपन्च व मिथ्या प्रदर्शन के लिए स्थान ही नहीं है। विख्यात नामा समाज सेवी भी ससार से विदा होते हुए उसी प्रकार बद्ध रूप में जा सकता है, जिस प्रकार एक साधारण व्यापारी। संन्यासी व गृहस्थी में भेद करने वाला उनका बाह्य क्रिया कलाप व रहन सहन में वैशिष्ट्य नहीं है, अपितु भेद कारक है वही भावना।

अब किसी की भी महत्ता व लघुता को मापने के लिए कर्म के बाह्य आकार को न देख कर उसके आन्तर रूप जो भावना रूप में है को परखना चाहिए। तभी ठीक निर्णय हो सकेगा। क्या कारण है कि संप्रति समाजोत्थान तथा विश्व शान्ति स्थापना के इतने बड़े २ प्रयत्न होने पर भी परिणाम विपरीत दिखाई दे रहा है। कारण है केवलमात्र शुद्ध भावना का अभाव। अथवा उचित दृष्टिकोण की अनुपस्थिति। इसी भावना का नाम "दृष्टिकोण" व "विशेष मनोवृत्ति" है। जीवन गति की प्रेरिका भावना ही है, यह भी निर्विवाद है। अतः कर्म शुद्धि के स्थान पर यदि भाव शुद्धि पर बल दे दिया जाय तो सब समस्याएं सुलझ जायगीं।

वैदिक जीवन व्यवस्था में इस तथ्य पर पूरा ध्यान है। यज्ञोपवीत के समय से ही भाव शुद्धि का कार्य प्रारम्भ होकर शिक्षा के द्वारा गुरु की समीपता में उसका परिवर्धन होते हुए जीवन में एक विशेष दृष्टिकोण व लक्ष्य की स्थापना होती. है, जिससे जीवन में कर्म बन्धन से मुक्ति के साथ २ स्थिरता भी आती है। धर्म का लक्षण है अभ्युदय और निःश्रेयस्। वह भी इसी दृष्टि से है। जीवन में जब एक लक्ष्य स्थिर हो गया तो अस्थिरता हट गई जिससे स्थिरता आई और यही स्थिरता अभ्युदय लाने वाली है। जीवन लक्ष्य का बाह्य स्वरूप है विशेष कर्म पर आन्तरिक स्वरूप वही है कोई विशेष शुभ भावना। शुभ भावना ने कर्म के संस्कार का परिहार कर दिया। इस प्रकार जीवात्मा का शरीर धारण सार्थक हुआ।

चुने हुए मोती

अच्छी भावनाएं बड़ी जल्दी नष्ट होने वाली वस्तुएं हैं। उत्कृष्ट फल के समान उनको सुरक्षित रखना कठिन होता है।

भावनाएं कितनी ही शुद्ध और ऊंची क्यों न हों वे जब तक बुद्धिमत्ता पूर्ण कार्य्यों में परिणत नहीं होती तब तक व्यर्थ हैं।

शुभ भावना और शुभ कर्म का वही सम्बन्ध है जो आत्मा और शरीर का तथा मूल और वृक्ष का होता है।

गो सेवा परम पवित्र कर्त्तव्य

श्री सेठ जुगलकिशोर जी बिड़ला

गो रक्षा को आर्य्य (हिन्दू) धर्म्म पवित्र कर्त्तव्य मानता है। आर्य्य धर्म्म के अन्तर्गत जितने भी सम्प्रदाय सनातनी, सिक्ख, बौद्ध, जैन आदि हैं इस सम्बन्ध में एक मत हैं। उनके प्रवर्त्तक आचार्य गुरुओं ने गोरक्षा के लिए विशेष आदेश दिये हैं। भगवान बुद्ध ने तो गौ को माता की उपमा दी थी। यद्यपि भारत के बाहर चीन, जापान आदि बौद्ध देशों के अधिकांश लोगों में समय के प्रभाव से आजकल जैसी भावना नहीं पाई जाती, तथापि धार्मिक आदश तो उनका भी यही है। यही कारण था कि सन् १८७४ तक जापान में गोवध को बड़ा अपराध माना जाता था और राजकीय कानून से गो हिंसा करने वालों को कड़ी सजा मिलती थी। चीन के बौद्ध मन्दिरों के पुजारी तथा साधु लोग अब भी किसी पशु पक्षी का मांस नहीं खाते। भारत के हिन्दुओं की गो रक्षा की भावना तो अब भी वैसी ही प्रबल है किन्तु पराधीनता और कुछ अन्य कारणों से गो रक्षा करने में वे समर्थ नहीं रहे। इसलिए जब तक हिन्दुओं की शक्ति, संख्या बल और योग्यता न बढ़े तब तक सच्ची गो रक्षा यहां भी असंभव है। यह राज्य का कर्तव्य है।

तथापि गो रक्षा के लिए यत्नशील रहना मनुष्य मात्र का परम कर्त्तव्य है। आर्य्य धर्म के उच्च सिद्धान्त जो सत्य की पराकाष्ठा को प्रकट करते हैं सद्‌गुण और सदाचार के अचल और दृढ़ पायों पर खड़े हैं किसी एक देश वा जाति की सम्पत्ति नहीं हैं। मनुष्य मात्र के लिए ही वे धारण करने योग्य हैं। वे मनुष्यता का आदर्श दिखा रहे हैं। किन्तु खेद की बात है कि वर्तमान समय का संसार केवल भौतिक वाद के ही पीछे पागल हो रहा है। यूरोप अमेरिका के विद्वान् इस बात को मानते और जानते हुए भी कि गाय का दूध मक्खन आदि ही शारीरिक और मानसिक उन्नति के लिए उत्तम वस्तु है, गो मॉस बड़े चाव से खाते हैं। माना कि वे गो पालन भी करते हैं परन्तु वहां गोवध की भी कोई सीमा नहीं। वहां अन्न का भी बाहुल्य है। अन्न की उपज तो अमेरिका में इतनी अधिक होती है कि कभी २ वे मकई तथा जौ आदि को ईंधन के काम में भी लेने लगते हैं। वर्तमान समय के विज्ञान के द्वारा वहां के विद्वान् वनस्पति जातीय वस्तुओ से भी मांस जैसी वस्तु बना लेते हैं।

कोयला, घास या लकड़ी के बुरादे आदि से भी बनावटी अन्न, वस्त्र, चमड़ा, चीनी आदि जैसी अनेक वस्तुएं वहां बनाई गई हैं। फिर भी उनके लिए यह कितनी कृतघ्नता खेद और लज्जा की बात है कि वे गौ जैसे उपकारी पशु को मारते और खाते हैं। यद्यपि वे आर्थिक स्वार्थवश गोवध का समर्थन भी करते हैं। यों तो अफ्रीका की एक जंगली जाति के लोग आर्थिक स्वार्थों की आड़ में अपने बूढ़े मां बाप तक को मारकर खा जाते हैं। पर क्या यह मनुष्यत्व है? अमेरिका एक सम्पन्न देश है। वह अपनी सभ्यता पर विशेष अभिमान करता है। न्याय की बड़ी २ डींगें भी हांकता है। वह धन सम्पत्ति विद्या बुद्धि और सामर्थ्य शक्ति किस काम की जिसका संसार की भलाई के बदले बुराई में उपयोग हो।

(कल्याण)

महर्षि जीवन

शंका समाधान

मुक्ति क्या है ?

एक जिज्ञासु ने महाराज से पूछा, 'मुक्ति का क्या अभिप्राय है और वह कैसे प्राप्त होती है ?' महाराज ने उत्तर दिया, 'मुक्ति छूट जाने का नाम है। जितने भी दुःख हैं उनसे छूटकर सच्चिदानन्द परमात्मा की प्राप्ति से सदा आनन्द में रहना मुक्ति है।'

मुक्ति का पहला साधन सत्याचरण है। दूसरा वेद विद्या का ठीक रीति से लाभ करना और सत्य का पालन करना है। तीसरा सत्पुरुषों और ज्ञानी जनों का सत्संग करना। चौथा योगाभ्यास द्वारा अपनी इन्द्रियों और आत्मा को असत्य से निकाल कर सत्य में स्थापन करना। पाँचवां ईश्वर की स्तुति करना उसकी कृपाका यश वर्णन करना और परमात्मकथा को मन लगाकर सुनना। छठा साधन है प्रार्थना। प्रार्थना इस प्रकार करनी चाहिये 'हे जगदीश्वर कृपा निधे ! हमारे पिता ! मुझे असत् से निकाल कर सत् में स्थिर करो। अविद्यान्धकार और अधर्म्माचरण से पृथक् करके ज्ञान और धर्म्माचरण में सदा के लिए स्थापना करो। जन्म मरण रूप संसार से मुक्त कर अपनी अपार दया से मोक्ष प्रदान करो।' प्रार्थना का फल यह है कि जब कोई जन अपने सच्चे मन से, अपनी आत्मा से, अपने प्राण से अपने सारे सामर्थ्य से परमेश्वर का भजन करता है तब वह कृपामय परमेश्वर उसको अपने आनन्द में निमग्न कर देता है।"

क्या ईसाई आर्य्य हैं ?

चांदापुर के मेले की समाप्ति पर एक पादरी ने मनोरंजन की रीति में. स्वामी जी से कहा, 'पंडित जी ! हम भी आर्य हैं। स्वामीजीनेमुस्कराकर उत्तर दिया, "महाशय ! आप सभ्य तो अवश्य हैं परन्तु आर्य नहीं हैं" कारण पूछने पर कहा, 'आर्य कहते हैं श्रेष्ठ धर्म्मात्मा को। आपकी मान्य पुस्तक आपको श्रेष्ठ धर्म्मात्मा नहीं बताती। एक बार ईसा के शिष्यों ने उनसे पूछा था कि आप अन्धों और कोढ़ियोंको चङ्गा कर देते हैं। परन्तु हम को क्यों नहीं कर सकते ? उत्तर में ईसा ने कहा कि तुम में राई जितना भी विश्वास नहीं है। जब गुरु के सामने ही शिष्यों में राई जितना विश्वास न था तो आज आपमें कैसे हो सकता है ? हमने बाईबिल का आद्योपान्त पाठ किया है। उसमें ईसा ने कहीं भी नहीं कहा कि यदि मुझ पर विश्वास लाओगे तो तुम्हारी मुक्ति होगी। यह केवल पादरियों की ही कल्पना है।

अश्वमेध और गोमेध यज्ञों का सच्चा अर्थ ?

लाहौर में एक दिन स्वामी जी के पास पादरी हूपर महाशय आए और पूछने लगे कि वेद में जो अश्वमेध और गोमेध यज्ञ का वर्णन है आप उसका क्या समाधान करते हैं ? स्वामी जी ने उत्तर दिया, वेदों में पशु बलि का वर्णन कहीं भी नहीं है। अश्वमेध का अर्थ न्याय पूर्वक प्रजा पालन है और गोमेध का अर्थ है अन्न का उपार्जन करना, इन्द्रियों को पवित्र बनाना, भूमि को शुद्ध रखना और मृतक का दाह कर्म करना।

मुक्ति से पुनरावृत्ति

एक भद्र पुरुष ने स्वामी जी से कहा कि आप जो मुक्ति से पुनरावृत्ति मानते हो, यह मन्तव्य कोई चिरकाल के विचार का परिणाम प्रतीत नहीं होता।

उन्होंने उत्तर दिया कि आपका यह भारी भ्रम है। पुनरावृत्ति पर तो मैं कई मास तक विचार

करता रहा हूँ। अन्त में मैंने यही परिणाम निकाला है कि सांत कर्म का अनन्त फल नहीं हो सकता इसलिए मुक्ति से पुनरागमन ही मानना समीचीन (उचित) है।

क्या हिन्दू धर्म कच्चा है ?

लाहौर कमिश्नर की प्रार्थना पर, एक दिन स्वामी जी उनके बंगले पर पधारे। वार्तालाप में कमिश्नर महाशय ने कहा, स्वामी जी ! यह तो बताइये, हिन्दू धर्म को, सूत के तार के सदृश, कच्चा क्यों कहते हैं ?

स्वामी जी ने उत्तर दिया, 'यह कच्चा नहीं किन्तु लोहे से भी पक्का है। लोहा भले ही टूट जाय परन्तु यह कभी भी टूटने का नहीं।' कमिश्नर महाशय ने पूछा, 'यह इतना दृढ़ क्यों कर है ?'

महाराज ने कहा, 'हिन्दू धर्म समुद्र के समान है। इसमें अनेक अच्छे और बुरे मतों के तरङ्ग विद्यमान हैं। इस धर्म में ऐसे भी लोग हैं जो अत्यन्त दयावान् हैं सदाचारी हैं, परोपकार परायण रहते हैं और एक निराकार परमेश्वर को अपने मन मन्दिर में पूजते हैं। इसके विपरीत वे लोग भी हिन्दू धर्म में पाये जाते हैं जो महाक्रूर, अनाचारी और वामी हैं। कोरे नास्तिक अवतारों के मानने वाले हैं। यहां योगी, ध्यानी, तपस्वी और आजीवन ब्रह्मचारी रहने वाले, भी विद्यमान हैं और ऐसे भी अनेक हैं जिनका उद्देश्य आमोद-प्रमोद और संसार का सुख है। हिन्दू धर्म में जहां छूआ छूत करने वाले सहस्रों हैं वहां सब के साथ खा लेने वाले भी सैंकड़ों हैं। परमार्थ दर्शी और तत्त्व ज्ञानी लोग इस धर्म में उच्चकोटि के पाये जाते हैं और ऐसे भी मिल जाते हैं जो ज्ञान के पीछे डण्डा लिए फिरते हैं।

उत्तम, मध्यम और निकृष्ट विचारों और आचारों के सभी मत और उनको मानने वाले मनुष्य इस मार्ग में मिलते हैं। वे सभी हिन्दू हैं। कोई उन्हें हिन्दूपन से निकाल नहीं सकता। इस लिए मैं कहता हूँ कि हिन्दू धर्म निर्बल नहीं किंतु परम सबल है।"

फिर कमिश्नर महोदय ने पूछा, 'आप कैसे धर्म को फैलाना चाहते हैं ?' स्वामी जी ने कहा, 'मैं केवल यह चाहता हूं कि लोग वेद की पवित्र आज्ञाओं को मानें। एक निराकार परमात्मा की उपासना करें और दुर्गुणों को छोड़ कर सद्गुणों को ग्रहण करें।'

परोपकार से धर्म्मात्मा बन सकते हो

स्वामी जी के पास एक साधारण स्थिति का मनुष्य आया करता था और अति श्रद्धा से सत्संग का लाभ उठाया करता था। एक दिन उसने हाथ जोड़कर विनयकी 'भगवन् ! धनी लोग तो अन्नादि के दान और परोपकार से संसार सागर पार कर जायेंगे परन्तु मेरे जैसे निर्धन का निस्तार कैसे होगा ? मैं दान पुण्य तो कुछ नहीं कर सकता ?'

महाराज ने कहा, 'सौम्य ! आप भी बड़े उपकारी और पुण्यात्मा बन सकते हो। एक मनुष्य तो परोपकार और पुण्य करने से पवित्र हो जाता है और दूसरा पर अपकार और पाप कर्म न करने से भी अपना मङ्गल सिद्ध कर लेता है। आप अपने हृदय में पर अपकार और अनिष्ट का भाव कदापि न लाइये। इससे आप बड़े धर्मात्मा बन जायेंगे। अपकार न करना भी संसार का उपकार है।'

वेद में मृत देह को जलाने का विधान है गाड़ने का नहीं

एक दिन बुकैनयन महाशय ने स्वामी जी के पास आकर कहा, 'आप मृत देह का दाह कर्म करना कहते हैं, परन्तु वेद में तो भूमि में गाड़ना लिखा है।' प्रमाण में उसने मोक्षमूलर का अनुवाद सुनाया कि 'हे भूमि ! तू अपनी भुजा पसार, जिसमें मृतक की देह रखी जाय।'

स्वामी जी ने मोक्षमूलर के अनुवाद का भली भांति खण्डन किया फिर उसी मन्त्र से जलाना सिद्ध कर दिया। उन्होंने कहा, 'यहाँ यह वर्णन है कि भूमि को खोद कर वेदी बनाई जाय और फिर उसमें मृत देह को जलाया जाय।'

शंका समाधान

(ले० श्री कुं० सजन सि० शास्त्री रिवाली (अलवर)

शंका—श्री माता सीता जी के जन्म के सम्बन्ध में कई धारणायें हैं कृपया बताइये कि जन्म कैसे हुआ, उनकी मां का नाम क्या है ?

उत्तर—अवश्य ही मिथ्या धारणायें बन रही है, यह पौराणिक स्वार्थियों की चालबाजी है, रही बात जन्म सो जैसे आपका व जगत की उत्पत्ति है वैसे ही सीता जी की है। मां का नाम रामायण में तो साफ२ आता नहीं हाँ शिव पुराण में कुछ मिलता है वह इस प्रकार है:—जनक की दूसरी स्त्री का नाम योगनी था उसके गर्भ से महान् सीता का जन्म हुआ। इत्यादि, शिव पुराण, पार्वती खण्ड, अ० ३ श्लोक १९, में है।

शंका—श्री रामचन्द्र जी व माता सीता जी की आयु विवाह समय क्या थी प्रमाण सहित कहें ?

उत्तर—देखिये वेद, शास्त्र, मनु, चरक, सुश्रुत, आदि में सर्व प्रकार से जैसे आयुर्वेद से, धर्म नीति में, सर्व प्रकार से पुरुष की आयु २५ वर्ष होनी चाहिये. लड़की की १८ वर्ष होनी चाहिये श्रीराम आय थे वेद को मानने वाले थे उन्होने सारे संस्कार वैदिक किये अपितु वेद विरुद्ध नहीं किये। प्रमाणार्थ सीता जी कहती हैं:—

"मेरा तेजस्वी पति विवाह समय २५ वर्ष का था। उस समय मेरे जन्म को १८ वर्ष बीते थे।" वा० आरण्यक काण्ड, सर्ग ४७। १०, ११,

शंका—श्री राधाजी कृष्णजी के नाते में क्या लगती थीं ?

उत्तर—श्री राधा जी कृष्ण जी की नाते में "मामी" लगती थी। देखो ब्रह्म वैवर्त पुराण ब्रह्म-खण्ड अ० ५ श्लोक २५। प्र० ख० ४ श्लोक ४१ तक।

प्रश्न—हनुमान किसका पुत्र था ?

उत्तर—श्री महावीर हनुमान जी मानव की सन्तान मानव ही था। जैसे:-पवन ने केशरी की स्त्री अंजना से नियोग करके हनुमान नामक वीर पैदा किया; जो आगे चलकर श्री रामचन्द्र जी के सेवक हुये।

शंका—क्या वास्तव में वह जानवर लंगूर था ?

उत्तर—नहीं वह मनुष्य था वह पढ़ा लिखा था, संस्कृत, व्याकरण खूब जानता था। देखिये:-राम कहता है:—जो ऋग्वेद न जानता हो जिसने यजुर्वेद को धारण नहीं किया हो; और जो सामवेद का ज्ञाता नहीं हो वह इस प्रकार का भाषण नहीं करता। निस्संदेह इन्होंने व्याकरण सम्पूर्ण बार २ सुना है। बाल्मीकि किष्किन्धा का० सर्ग ३।

शंका श्रीराम ने मांस, शराब का सेवन किया क्या यह सच है ?

उत्तर— आर्य्यों ने मांस, शराब का कभी प्रयोग नहीं किया वर्जित है:-"यथा मास तथा सुरा" अथर्व० ६। ६०। १ के प्रतिकूल हैं; यद्यपि हनुमान जी ने सीता जी से स्पष्ट कहा है "नमांसं राघवोभुक्ते न चैव मधु सेवते" (वा० सुन्दरकाण्ड ३६।११। तथापि वा० रामायण के प्रक्षिप्त भाग में श्री राम, लक्ष्मण तथा सीता जी के मांस सुरा के आदि के वर्णन कहीं २ पाये जाते हैं, जो सर्वथा अमान्य हैं। एक धोबी के कहने पर सीता जी का परित्याग और शम्बूक नामक शूद्र कुलोत्पन्न तपस्वी के बध की बात जो भी उत्तर काण्ड में पाई जाती है; हम कपोल कल्पित तथा अप्रमाणिक समझते हैं। वस्तुतः समस्त उत्तर काण्ड ऐसी ऊटपटांग बातों से भरा हुआ है और वह स्पष्टतया रामायण में पीछे से मिलाया गया; जब कि असली रामायण की समाप्ति युद्धकाण्ड पर हो जाती है।

शंका- कौशल्या का अश्व मैथुन भी प्रक्षिप्त है क्या ?

उत्तर- आर्यों के लिये यह नितान्त अनुचित; स्त्रियों का पशु मैथुन "रेतो मूत्रं विज हाती" यजु० १६। ७६ के विरुद्ध है; यह नितान्त प्रक्षिप्त है।

स्वाध्याय का पृष्ठ

मुसलमान और संस्कृत साहित्य

महान् अकबर ने राजनीतिक विचारों और अपनी व्यक्तिगत रुचि की प्रेरणा पर मुसलमानों के लिए संस्कृत के खास २ ग्रन्थों को सुलभ बनाने का संकल्प किया और अनुवाद विभाग की आयोजना की। फतहपुरी के दीवान खाने में इस विभाग का कार्यालय स्थापित हुआ। महाभारत को फारसी में अनूदित कराना शुरू किया। इस महाकाव्य के अनुवादक नाकिब खां नियत हुए और उनकी सहायता के लिए बहुत से पंडितों को लगाया गया। इस प्रकार इस महाकाव्य का फारसी अनुवाद समाप्त हुआ और इसका नाम 'राजमनामा' रखा गया।

इसके बाद अबुल फजल, फैजी, नाकिब खा प्रभृति योग्य विद्वानों ने सम्राट् के प्रतिभा पूर्ण अनुशासन और राज्य के अन्य पण्डितों के तत्वावधान में रामायण, गीता, अथर्ववेद और योग वसिष्ठ आदि ग्रन्थों का फारसी अनुवाद किया।

संस्कृत और फारसी में व्युत्पन्न हिन्दुओं ने पुराने अनुवादों को दुहराकर नए अनुवाद किए। सन् १६२६ में गिरधरदास ने 'रामायण' का नए सिरे से अनुवाद किया। दाराशिकोहके एक हिन्दू मित्र ने योग वसिष्ठ का भी नया अनुवाद किया था।

१७वीं शति के मध्य के पूर्व वेदों का फारसी अनुवाद प्राप्त न होता था। अकबर के शासन काल में अथर्ववेद का जो फारसी अनुवाद हुआ था वह इतना खराब था कि लोग उसकी समाप्ति के कुछ समयबाद ही उसे पूर्णतया भूल गए थे।

राजकुमार दारा शिकोह ने संस्कृत के ग्रन्थों का फारसी में अनुवाद कराया। उसने काशी के पण्डितों को इकट्ठा कर के उनकी सहायता से १६५७ में वेदों के फारसी अनुवाद का काम समाप्त कराया। संस्कृत ग्रन्थों के फारसी अनुवाद के साथ २ हिन्दू विचारों को मुस्लिम साहित्य में समाविष्ट करने का कार्य्य भी जारी रहा। फैजी का 'नलदमन' मसीह वेग की 'रामसीता की कहानी' अब्दुल रहमान चिश्ती की 'मिरातुल मखलूकात' और मिर्जा फखरुद्दीन की 'तोफेतुलहिन्दू' इस प्रकार के कुछ ग्रन्थ हैं।

संस्कृत ग्रन्थों के इन अरबी फारसी अनुवादों से भारतीय विज्ञान और शास्त्रों के सम्बन्ध में न केवल मुसलमान लोग ही ज्ञान प्राप्त करते थे वरन् पूर्वीय ज्ञान विज्ञान के यूरोपियन विद्वान भी इन ग्रन्थों में दिलचस्पी लेते थे। इन अनुवादों के अथवा यूरोपीय भाषान्तरों के अध्ययन के साथ २ वे लोग संस्कृत साहित्य का ज्ञान प्राप्त कर उसके सौंदर्य का अनुभव करने लगे।

यूरोप के एक बड़े तत्त्व वेत्ता द्वारा भारतीय तत्व ज्ञान का गुणानुवाद भी संस्कृत ग्रन्थों के अनुवादों में से किसी एक के लैटिन भाषान्तर के अध्ययन पर आश्रित था। शापनहार ने जिसने कहा था, समस्त संसार में उपनिषदों के अध्ययन से बढ़ कर अन्य कोई अध्ययन उपयोगी और उन्नत नहीं है, न उनके मूल संस्कृत और न मूल

संस्कृत पर आश्रित अनुवाद ही को वरन् उनके लैटिन अनुवाद को पढ़ा था और यह अनुवाद उपनिषदों के उस फारसी अनुवाद से किया गया था जिस के साथ आलमगीर के भाई दारा शिकोह का नाम जुड़ा हुआ है।

क्या बिहार का भूकम्प और पाकिस्तान का रक्तपात लोगों के कर्मों का फल था ?

कुछ लोग कहते हैं कि बिहार का भूकम्प और पाकिस्तान का रक्तपात लोगों के कर्म्मों का फल था। परन्तु ऐसा मानने वाले यह नहीं देखते कि वे कर्म फल के सिद्धान्त के कितने विपरीत जा रहे हैं। क्या भूकम्प का जिन पर बुरा प्रभाव पड़ा सब के कर्म एक ही से थे और सब को बिहार में ही निवास मिला था। पाकिस्तान की स्थापना से जिन लोगों को धन, जन की हानि उठानी पड़ी क्या वे सब एक ही समान कर्म वाले थे, उनमें धर्म्मात्मा कोई था ही नहीं ? क्या सब का भाग्य एक ही लेखनी से एक ही समय मे लिखा गया था ? यदि वस्तुतः यह सब पाप कर्मों का फल है तो फिर उनको सहायता पहुँचाना ही व्यर्थ है। क्या कर्म फल की व्यवस्था को भी अपने कार्य से कोई हटा सकता है ? यदि हटा सकता है तो यह कहना गलत है कि कर्म के फल के बिना कुछ नहीं होता और यदि नहीं हटा सकता तो फिर सहायता आदि कर्म किए ही क्यों जावें ? इसका तो तात्पर्य एक तरह से पाप को बढ़ाना होगा। परन्तु परमात्मा की व्यवस्था को टालने से वह भी अप्रसन्न होगा। परन्तु ऐसे अवसरों पर सहायता करने को वे ही लोग धर्म और परोपकार का नाम देते हैं। तत्वक दृष्ट्या ये भूकम्प आदि घटनाएं हैं। लोगों के कर्मों के फल नहीं।

(कर्म मीमांसा पृ० १८५-१८६)

अनशन और वैज्ञानिक स्थापनाएं

शिकागो यूनिवर्सिटी के जीवन शास्त्र के प्रोफेसर ए० जी० केरीसन के मतानुसार एक स्वस्थ व्यक्ति जिसकी भली भांति सेवा परिचर्या की जाय बिना खाये ५० से ७५ दिन तक जीवित रह सकता है परन्तु तब जबकि वह सर्दी से बचा रहे, शारीरिक कार्य न करे और उसकी आत्मा शान्त रहे। जवान आदमी बिना पानी पिये १५ से २० दिन तक जीवित रह सकता है। यदि खाना खाया जाय और पानी न पिया जाय तो शीघ्र मृत्यु हो जाती है। यदि शरीर में ज्वर हो या बाहरी सख्त गर्मी हो और पसीना आता हो तो पानीके अभावसे भी मृत्यु निकट होती है। दूषित पदार्थों को नष्ट करने के लिए भोजन के लिए पानी की आवश्यकता होती है। उपवास में शारीरिक काम, बाहरी सर्दी, ज्वर, चिन्ता और उत्तेजना मृत्यु का शीघ्र आह्वान करते हैं।

प्रसिद्ध जर्मन डाक्टर श्री डा० ए० प्रटर की स्थापना के अनुसार उपवास करने वाले व्यक्ति को पानी देदो उसके जीवन की घड़ियां बढ़ जायंगी।

जीवन शास्त्रज्ञों ने इस बात का निरूपण करने के लिए कि मनुष्य बिना खाये कितने दिन तक जीवित रह सकता है पशुओं पर प्रयोग किये हैं। उन प्रयोगों से प्रकट हुआ है कि शरीर के वजन के अनुपात से मृत्यु का प्रारम्भ होता है। यदि किसी चूहे का वजन १८५ ग्राम हो और वह ५ या ६ दिन में मर जाय तो मनुष्य ९३ या १०९ दिन में मरता है। जिस कुत्ते का वजन २० किलो ग्राम हो तो वह ६ दिन में मरता है और मनुष्य इस अनुपात से ८९ दिन में मरेगा। जिस बिल्ली का वजन २१ किलोग्राम हो तो वह बिना खाये १८ दिन तक जिन्दा रह सकती है और मनुष्य ५५ दिन तक। इन अंकों से जर्मन डाक्टर इस परिणाम पर पहुँचता है कि मनुष्य ६० से १०० दिन तक बिना खाये जीवित रह सकता है सर्त यह है कि वह वैज्ञानिकों के तत्वाव-

धान में वैज्ञानिक रीति से भूखा रखा जाय।

डाक्टर वैनीडिक्ट के प्रयोगों से यह सिद्ध होता है कि समय की लम्बाई जिसमें कोई भी व्यक्ति बिना खाये जीवित रह सकता है उसकी ऊंचाई वजन, उम्र और वर्ग पर आश्रित है। दो मनुष्यों मे से जो भारी होगा उसके भीतर से अधिक गर्मी निकलेगी और अधिक देर तक जीवित रहेगा शर्त यह कि दूसरी चीजें समान हों। इसी प्रकार नाटे व्यक्ति की अपेक्षा लम्बा व्यक्ति अधिक दिन तक जीवित रहेगा यदि वह नाटा व्यक्ति अपने आकार के अनुसार साधारण व्यक्ति से अधिक वजनी हो।

विकासवाद और उसका भयंकर रूप

मनुष्य की उत्पत्ति और विकास का प्रश्न एक मात्र सैद्धान्तिक या वैज्ञानिक मनोरंजन का विषय नहीं है। इसमें ऐसी पेचीदगिया निहित हैं जिनके परिणाम दूर वर्त्ती हो सकते हैं। डार्विन के समय से ही विकासवाद का यह सिद्धान्त कि मनुष्य प्रारम्भ मे पशु था विद्वानों के ही विवाद का विषय नहीं रहा अपितु जीवन के प्रत्येक विभाग मे इस पर विचार विमर्श होता रहा है, क्योंकि इस प्रश्न का जनता की सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक भावनाओं पर प्रभाव पडता था। पूंजी वादियों और उच्च वर्गों को विकासवाद के इस सिद्धान्त में कि योग्यतम को जीवित रहने का अधिकार है प्रकृति का ऐसा नियम मिल गया जिसे वे अपने दूषित व्यापार को बढाने और समाज के प्रति अन्याय और अपराधों को ढकने के लिए भली भाति प्रयुक्त कर सकते थे।

इस औद्यौगिक अत्याचार की प्रतिक्रिया ने मार्क्स वाद द्वारा पोषित साम्यवाद को जन्म दिया। मार्क्स पर डार्विन के लेखों का गहरा प्रभाव पड़ा उसने प्रकृति के जीवन सघर्ष का नाम समाज में वर्ग सघर्ष रखा।

इस प्रकार उसने विज्ञान के नाम पर विद्रोह करने के लिए मजदूरों को अपील की। जब मार्क्स ने डार्विन की ओरिजिन origin नामक पुस्तक पढी तो उसने लिखा, डार्विन की पुस्तक बड़ी महत्व पूर्ण है, और इससे मुझे यह आधार मिल गया है कि इतिहास भौतिक सघर्ष का विवरण मात्र है। मार्क्स ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक दास कैपीटल Das Kapital चार्ल्स डार्विन को समर्पित करनी चाही परन्तु डार्विन इस बात से सहमत न हुये। मार्क्स को विकास वादीय शिक्षाओं ने मजदूरों को क्रान्ति के लिये उकसाया क्योंकि गरीब आदमी को सदैव विकास के निम्न स्तर पर रहना चाहिये यह प्रकृति के नियम के विरुद्ध था। जीवन सघर्ष और योग्यतम के जीवित रहने के सिद्धान्त की यह माग रहती है कि वे लोग (मजदूर) ऊंचे उठे और शासन सत्ता हथियाने के अधिकारों के लिये लडें या उस सघर्ष मे अपने को नष्ट करदें। इस प्रकार के वर्ग सघर्ष से समस्त ससार में अविश्वास और घृणा व्याप्त हो गये। मार्क्स ने कहा कि मनुष्य का व्यवहार किसी उच्च प्रेरणा से प्रेरित नहीं होता। उच्च वर्ग स्वार्थ और अहकार के वशीभूत होकर ही प्रत्येक काम करता है और अपनी दुष्टता और निर्दयता पर परदा डालने के लिये धर्म्म तक को आवरण के रूप में प्रयुक्त कर लेता है। 'धर्म्म जनता की अफीम है'। यह प्रसिद्ध नारा अस्तित्व मे आया।

लेनिन, ट्राटस्की और स्टैलिन डार्विन और मार्क्स के उत्साही अनुयायी थे और रूस की साम्यवादी सरकार विकासवाद के अनुसधान कार्य और शिक्षण को सरक्षण देती है। साम्य वादियों के जगत सम्बन्धी दृष्टिकोण की पृष्ठ भूमि विकासवाद ही है। साम्यवादियों का दावा है कि वे उस वर्ग से सम्बद्ध हैं जिसका भविष्य बड़ा शानदार है। वर्ग सघर्ष के द्वारा उन्हें ससार पर प्रभुत्व कायम करना है। हिटलर और मुसो-

साहित्य समीक्षा

आर्य सिद्धान्त मुक्तावली

लेखक श्री पं० मदन मोहन विद्यासागर
प्रकाशक—आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद
पृष्ठ सं० ११२ मूल्य १)

प्रस्तुत पुस्तक लेखक के लम्बे प्रचार अनुभव का परिणाम है। इस पुस्तक को पढ़ने से प्रतीत होता है कि लेखक को गत वर्ष गुरुकुल घटकेश्वर में आचार्य पद पर रहने के कारण छात्रों को वैदिक सिद्धान्तों के अध्यापन के लिये आर्य सिद्धान्तों को एक स्थान पर चयन करने की आवश्यकता हुई प्रतीत होती है। ऐसा सुन्दर सुबोध संकलन, जिसमें लेखक की अपनी विद्वत्ता स्थान स्थान पर प्रकट होती है, आर्य छात्रों के लिये बहुत उपयोगी है। प्रत्येक विषय को उसी ढंग से प्रतिपादित किया गया है मानो एक आचार्य अपने गुरुकुल में बैठ कर छात्रों को सिद्धान्त की शिक्षा दे रहा हो।

ऐसे सुन्दर और सुबोध प्रकाशन के लिये लेखक और प्रकाशक धन्यवाद के पात्र हैं। पुस्तक की छपाई आकर्षक है।

दयानन्द वाणी—

संकलयिता श्री पं० वेदव्याख्याता आचार्य रमेशचन्द्र शास्त्री विद्याभास्कर, प्रकाशक आर्य साहित्य मडल लि० अजमेर पृ० सं० मूल्य १॥)

प्रस्तुत पुस्तक महर्षि दयानन्द के समस्त साहित्य सागर का मन्थन करके गागर में सागर भर दिया है। इस पुस्तक में लगभग ६०० ऋषि वचनों का संग्रह है। प्रत्येक वचन का शीर्षक देकर वचन का भाव स्पष्ट कर दिया है। जिन लोगों के पास ऋषि ग्रन्थों को पढ़ने का समय नहीं है या कम है उनके लिये यह पुस्तक बहुत उपयोगी है और समय-समय पर ऋषि के वचनों को उद्धृत करने वाले लेखकों के लिये भी यह पुस्तक सहायक सिद्ध होगी।

पुस्तक की छपाई तथा वाह्यावरण अच्छे हैं।

—निरञ्जनलाल गौतम

लिनी भी इस वाद के माया जाल में फंसकर अपने को महा मानव मानने लगे थे। उनकी मान्यता बन गई थी कि मानव इतिहास एक मात्र योग्यतम के जीवित रहने का संघर्ष है। इसी लिये महा मानव वाद की विजय को सुगम बनाने के लिये कोई भी प्रपन्च, छल, कपट, बल प्रयोग और जुर्म वैध है! इस प्रकार यह मान्यता बनी कि जीवन बुराई भलाई से परे एक कला है और निर्दयता! बर्बरता, दुराचार और अपराधों को गुणों के रूप में गौरवान्वित किया गया।

इस प्रकार की दूषित मनो भावना के जन्म और पालित पोषित होने के लिये हमारे कतिपय तत्व वेत्ता उत्तरदाता हैं। आदर्शवाद हमें शिक्षा देता है मनुष्य परमपिता के पास पहुंचनेकी यात्राकर रहा है और यह जगत् क्षणिक पड़ाव है। मानव का अन्तिम ध्येय परमात्मा का साक्षातकार करना है। डा० राधा कृष्णन् ने इसी प्रकार के एक सिद्धांत का निर्देश किया 'उपनिषद् कहते हैं कि विकास प्रकृति से आरम्भ होकर जीवन में प्रकट होता है, जीवन से चेतना में, चेतना से ज्ञान सम्पन्न मनुष्य में परिणत होता है जिसे आध्यात्मिक मनुष्य का रूप देना होता है।

(बम्बई का अभिभाषण
जनवरी १२, १६५४)
(इवाल्यूशन आव मैन)
पृ० १३४, १३५

लज्जा नारी का भूषण है

[लेखक—इतिहास का एक विद्यार्थी]

असन्तुष्टा द्विजा नष्टाः सन्तुष्टा एव पार्थिवाः ।
सलज्जा गणिका नष्टा लज्जहीनां कुलस्त्रियः ॥

सन्तोष हीन ब्राह्मण, सन्तोषी राजा, लज्जावंती वेश्या और लज्जाहीन कुलवधू का नाश निश्चित है।

जिस प्रकार स्त्रियों का जेल की काल कोठरी की तरह बन्द रहना उनके लिये हानिकारक है उसी प्रकार वरं उससे भी कहीं बढ़कर हानिकारक उनका स्त्रियोचित लज्जा को छोड़कर पुरुषों के साथ निरंकुश घूमना फिरना, पार्टियों में शामिल होना, पर-पुरुषों से नि.सकोच मिलना, गन्दे खेल तमाशों में जाना, पर-पुरुषों के साथ खान पान तथा नृत्य गीतादि करना आदि हैं। नारी के पास सबसे मूल्यवान तथा आदरणीय सम्पति है उसका सतीत्व । सतीत्व रक्षा ही उसके जीवन का सर्वोच्च ध्येय है। इसलिए वह बाहर न घूम कर घर की रानी बनी घर में रहती है। इसीलिए उनके लिए अवरोध प्रथा का विधान है। जो लोग स्त्री जाति पर सहानुभूति एवं दया करने के भाव से उनको घर से निकालकर बाहर खड़ी करना अपना कर्तव्य समझते हैं वे या तो नियत शुद्ध होने पर भी भ्रम में हैं, उन्होंने इसके तत्व को समझा नहीं है, या वे अपनी उच्छृंखलवासना के अनुसार ही दया तथा सहानुभूति के नाम पर यह पाप कर रहे हैं।

लज्जाशीलता से सतीत्व और पातिव्रत्य का पोषण और संरक्षण होता है। इसीलिए लज्जा को स्त्री का भूषण बतलाया गया है। पुरुष में पुरुष भाव तथा नारी में स्त्री भाव की प्रधानता स्वाभाविक होती है। लज्जा दैवी भाव है। इसी नैसर्गिक कारण से नारी प्रकृति में लज्जा नैसर्गिक होती है। पुरुष प्रकृति के साथ नारी प्रकृति का यह भेद स्वभाव सिद्ध है। यों तो मनुष्य मात्र में उसके विवेक सम्पन्न प्राणी होने के कारण पशु प्राणी की भांति आहार निद्रा और खास करके स्त्री पुरुषों की कामचेष्टा और मैथुन आदि में निर्लज्ज भाव नहीं होता फिर मनुष्यों में नारी तो विशेष रूप से लज्जाशीला होती है। नारी की शोभा इसी में है । लज्जा का परित्याग करना नारी के लिए गुण गौरव की बात नहीं बल्कि इस से उसके गौरव के सतीत्व की, मानस स्वास्थ्य की, दैवी भाव की तथा स्वाभाविक पवित्रता की हानि होती है। इसीसे वेदों में भी नारी के लिए लज्जा का विधान मिलता है। ऋग्वेद ८।४।२६ में है।

यो वां यज्ञेभिरावृतोऽधिवस्त्रा वधूरिव ।

वस्त्र द्वारा आवृत वधू की भांति जो यज्ञ के द्वारा आवृत है। इसमें नारी के लिए अपने अङ्गों को ढके रखने का स्पष्ट निर्देश है। इसके अतिरिक्त अन्यान्य स्थलों में भी तथा रामायण, महा-

भारत एवं पुराणादि ग्रन्थों में इसके प्रचुर प्रमाण आदि मिलते हैं। सीता, सावित्री, दमयन्ती आदि सतियों का जो घरों से बाहर निकलने का इतिहास मिलता है वह विशेष परिस्थितियों में हिन्दू शास्त्र भी बाहर निकलने की आज्ञा देते हैं।

स्त्रियों का गौरव लज्जा शीलता में है इसके विषय में कुछ दूरदर्शी पाश्चात्य विद्वानों के मत को देखिये।

The reputation of a woman is a Crystal mirror, shining and bright but liable to be sullied by every breath that comes near it

(Cervantes)

नारी की कीर्ति स्फटिक दर्पण के सदृश है, जो अत्यन्त उज्ज्वल एवं चमकीला होने पर भी दूसरे के एक श्वास से भी मलिन होने लगती है

She is not made to be the admiration of every body but the happiness of one. (Burke)

नारी की सृष्टि हरेक को मुग्ध करने के लिए नहीं है, वह तो एक मात्र (अपने पति देवता) को सुख देने के लिए ही हुई है। (बर्क)

A woman smells sweetest, when she smells not at all. (Plantus)

सबसे अधिक सुगन्धवाली स्त्री वही है जिस की गन्ध किसी को नहीं मिलती।

Woman is a flower that breathes its perfume in the shade only.

(Lamennois)

नारी एक ऐसा पुष्प है, जो छाया (घर) में ही अपनी सुगन्ध फैलाती है।

The flower is sweetest smell is shy and lovely. (Wordsworth)

श्रेष्ठ गन्धवाला पुष्प लजीला और चित्ताकर्षक होता है।

जो वस्तु जितनी मूल्यवान् तथा प्रिय होती है, वह उतनी ही अधिक सावधानी, सम्मान तथा संरक्षण के साथ रक्खी जाती है। धन रत्नादि अमूल्य पदार्थों को लोग इसीलिए छिपाकर रखते हैं। हमारे यहां स्त्री पुरुष के विषय-विलास की सामग्री नहीं है। वह सम्पूर्ण गार्हस्थ धर्म में सहधर्मिणी है। उसका शरीर काम का यन्त्र नहीं है, वरं वह पूजनीय है। कन्या रूप में तथा पति पुत्र वती सती के रूप में वन्दनीय है। इसलिये ससम्मान स्त्री-संरक्षण का विधान है। वह उसके साथ निर्दय व्यवहार नहीं, बल्कि उसके प्रति महान् सम्मान का निदर्शन है, साथ ही उसके सतीत्व धर्म की रक्षा का मंगल साधन भी।

लज्जा छोड़कर पुरुषालयों में निःसंकोच घूमने फिरने से पवित्र पातिव्रत्य मे क्षति पहुँचती है, क्योंकि इस स्थिति में नारी को हजारों पुरुषों की विकृत दूषित दृष्टि का शिकार होना पड़ता है। एक कथा आती है कि शशिकला नाम की एक राज्य कन्या ने स्वयंवर मे जाने से इसलिये इन्कार किया था। कि वहां अनेक राजाओं की कामदृष्टि मुझ पर पड़ेगी और इससे मेरे पातिव्रत्य पर आघात लगेगा। यह एक वैज्ञानिक रहस्य है कि जिस नारी को बहुत पुरुष कामदृष्टि से देखते हैं और खास करके जिसके नेत्रों पर दृष्टि पड़ती है एवं परस्पर नेत्र मिलते हैं।(इसीलिए लज्जाशीलास्त्रियां स्वाभाविक रूप में आंखों को नीचे की ओर रखती हैं) उसके पातिव्रत्य में निश्चित हानि होती है। मनुष्य के मानसिक भावों का विद्युत प्रवाह उसके शरीर से निरन्तर निकलता रहता है और वह शब्द, स्पर्श एवं दृष्टिपात आदि के द्वारा (किसी अंश में तो बिना किसी बाहरी साधन के अपने आप ही) दूसरे के मन और साथ ही शरीर पर असर करता है। जहां उसके अनुकूल सजातीय

भाव पहिले से होते हैं वहां विशेष असर होता है पर जहां वैसा सजातीय भाव नहीं होता, वहां भी कुछ न कुछ प्रभाव तो पड़ता ही है। और यदि बार २ ऐसा होता रहे तो क्रमशः भाव भी सजातीय बन जाते हैं इससे यह सिद्ध है कि जिस स्त्री के प्रति कामुक पुरुषों की काम शक्ति के द्वारा प्रेरित काम-भाव पूर्ण काम दृष्टि बार २ पड़ती रहेगी, यदि घन घोर पातिव्रत्य का प्रबल भाव उक्त काम दृष्टि के विकारी भाव को नष्ट या परास्त करने में समर्थ नहीं होगा तो उस नारी के मन में निश्चय ही चंचलता होगी। काम विकार उत्पन्न होगा और यदि उस विकार की स्थिति में अवसर प्राप्त हुआ तो पतन भी हो जायगा।

जिन स्त्रियों ने घर छोड़कर स्वच्छन्द विचरण किया है वे अन्याय बाहरी कार्यों में चाहे कितनी ही सुख्याति प्राप्त क्यों न कर लें; पर यदि वे अन्तर्मुखी होकर अपने चरित्र पर दृष्टिपात करेगीं तो उनमें से अधिकांश को यह अनुभव होगा कि उनके मन में बहुत बार विकार आया है और किसी २ का तो पतन भी हो गया है बताइये पतिव्रता स्त्री के लिये यह कितनी बड़ी हानि है।

कुसंग के कारण कदाचित पुरुषों की भांति नारी भी कामदृष्टि से पुरुषों को देखने लगे, तब तो पुरुष के मनोभाव बहुत ही जल्दी बदलते हैं और दोनों का पतन निश्चित सा होता है। इस विज्ञान के अनुभवी पाश्चात विद्वान स्टेनली रेड महोदय कहते हैं।

It was discovered that certain subjects more especially women, could produce, changes in the aura by an effort of will causing rays to issue from the body or the colour of the aura to alter, (Stanley Red.)

यह पाया गया है कि कई वस्तुयें खास करके स्त्रियां, अपनी इच्छा शक्तिसे पुरुष के 'औरा' को बदल देती हैं। पुरुष के शरीर से उसके मनोभावों की जो विद्युत लहरियां निकलती हैं उन के बदल जाने से 'औरा' के वर्ण में भी परिवर्तन हो जाता है।

मनुष्य के शरीर से उसके मानसिक काम क्रोधादि दुर्भावों के तथा त्याग समाधि सद्भावों के विद्युत कण निरन्तर निकलते रहते हैं और उसके शरीर के चारों ओर विविध रंगों की लहरियों के रूप में प्रकट होते हैं। सूक्ष्म दृष्टि से इनको देखा भी जा सकता है। इन्हीं को 'औरा' (Aura) कहते हैं।

विभिन्न पुरुषों की दृष्टि स्त्रियों पर न पड़े और उससे विकृत होने पर स्त्रियों की दृष्टि पुरुषों पर न पड़े। क्योंकि ऐसा होने पर स्त्रियोंके पवित्र पातिव्रत्य का नाश होता है, इसीसे स्त्रियों के लिए पुरुषालयों में बाजारों में न घूम कर अलग घर में रहने का विधान है। यहां तक कहा गया है कि आहार, निन्द्रा के समय में भी पुरुष स्त्रियों को न देखें। आज कल जो स्त्रियों को साथ लेकर घूमने फिरने तथा एक ही टेबल पर एक साथ खाने पीने की प्रथा बढ़ रही है। यह वस्तुतः दोष युक्त न दीखने पर महान् दोष उत्पन्न करने वाली है। ऐसा करने वाले स्त्री पुरुषों को ईमानदारी के साथ अपनी मनोदशा का चित्र देखना चाहिये और भली भांति सोच समझ कर सबको ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये जिसमें नारी के भूषण लज्जा की रक्षा हो और पातिव्रत्य धर्म अक्षुण्ण बना रहे।

---

* ईसाई धर्म प्रचार निरोध आन्दोलन *

धर्म बुद्धि की कसौटी पर

गत कई वर्ष से मेरा विचार था कि मैं अपने धार्मिक विचारों को प्रकाशित करूँ। इस कार्य की गुरुता को भी मैं भली भांति अनुभव करता था। अतः मैंने बड़ा होने पर इस काम में हाथ डालने का इरादा किया। इस ग्रन्थ को लिखने का मेरा एक भाव और था और वह यह कि मैं अपने जीवन की अन्तिम भेंट के रूप में इस ग्रन्थ को संसार के लोगों के अर्पण करूं और उस समय करूँ जब कि इस पुस्तक का विरोध करने वालों को मेरे इरादे की पवित्रता पर संदेह करने की गुन्जाइश न रहे।

इस समय फ्रांस (१७६५ ई०) जिन परिस्थितियों में से गुजर रहा है उन्होंने न केवल मुझे अपने विचारों को मूर्त्त रूप देने के लिए ही बाध्य किया अपितु इस प्रकार के ग्रन्थ का प्रकाशन अनिवार्य भी कर दिया है। फ्रांस में पुरोहित वर्ग नष्ट हो गया है और विशेष मजहबी असूलों पर ईमान लाने की विवशता समाप्त हो गई है। मुझे भय है कि कहीं अन्ध विश्वासों कुत्सित शासन पद्धति और गर्हित ब्रह्म विद्या के मूलोच्छेदन की प्रक्रिया में हम सदाचार और सच्ची ब्रह्म विद्या से हाथ न धो बैठें।

मेरे कई मित्रों और फ्रांस के सम्मानित नागरिकों ने स्वेच्छया अपने धर्म्म विश्वास की घोषणा कर दी है अतः मैं भी अपने धर्म विश्वास की घोषणा कर देना उचित समझता हूं।

मेरा एक मात्र परमेश्वर में विश्वास है अन्य किसी में नहीं। इस जीवन के पश्चात् भी मुझे सुख प्राप्ति की आशा है।

मैं मनुष्यों की समानता में विश्वास करता हूँ। मेरी दृष्टि में न्यायाचरण, दया, भाव और प्राणी मात्र का सुख-संपादन ही धार्मिक कर्तव्य है। इनके अतिरिक्त अन्य कई मान्यतायें हैं जिनमें मेरा विश्वास नहीं है। उन मान्यताओं और उनपर अविश्वास के कारणों पर भी मैं प्रकाश डालूंगा।

यहूदी, यूनानी, मुसलमानी आदि २ मानव कृत मतों पर जिनका मुझे ज्ञान है मेरा विश्वास नहीं है। **मेरा अपना मन ही मेरा धर्म्म मन्दिर है।** इन सब मजहबों का मेरी दृष्टि में मानवीय अविष्कारोंसे अधिक और कोई मूल्य नहीं है जो मानव-समाज को दास बनाने आतंकित करने तथा शक्ति और सम्पदा पर एकाधिकार स्थापित करने के लिये खड़े किये गये हैं।

इस घोषणा का अभिप्राय उन लोगों का खण्डन करना नहीं है जिनकी धारणा मेरी धारणा से विपरीत है।

उन्हें अधिकार है कि जिस प्रकार मैं अपनी धर्म निष्ठा पर आरूढ़ हूं वे अपनी निष्ठा पर आरूढ़ रहें परन्तु मनुष्य के सुख के लिये आवश्यक है कि वह अपने प्रति सच्चा रहे। विश्वास वा अविश्वास के साथ नास्तिकता का कोई सम्बन्ध नहीं है। जिस बात पर किसी व्यक्ति का विश्वास न हो उस पर विश्वास का ढोंग रचना ही वास्तविक नास्तिकता है। मानसिक प्रवंचना से समाज में व्याप्त अशान्ति का ठीक २ अनुमान लगाना असंभव है। मानसिक पवित्रता के साथ व्यभिचार करके अर्थात् जिन वस्तुओं में मनुष्य का विश्वास नहीं होता उनमें विश्वास का प्रपञ्च रच कर मनुष्य ने अपने को प्रत्येक प्रकार के अपराध के लिये तय्यार कर लिया है। प्रायः टके के लिये ही मनुष्य पौरोहित्य का व्यवसाय करता है। क्या नैतिकता के लिये इससे अधिक घातक और कोई वस्तु हो सकती है?

अमेरिका में जब मेरा सामान्य बुद्धि (कामन सेंस) नामक ट्रैक्ट छपा तो मुझे आशा थी कि वहां राज्य क्रान्ति के साथ २ धार्मिक क्रान्ति भी

---

१ प्रथम बार अठारवीं शती में प्रकाशित थोमस पेन की संसार प्रसिद्ध Age of Reason नामक पुस्तक का एक अंश।

होगी। धर्म और राज्य के कुत्सित गठबन्धन से चाहे वह ईसाई राज्य हो वा मुस्लिम राज्य हो, धर्म के मौलिक सत्य सिद्धान्तों और मानवीय मतों के मजहबी असूलों पर वाद विवाद करना वर्जित हो जाता है और राज्य प्रणाली में परिवर्तन हुए बिना उन पर खुल कर निष्पक्ष रूप से विचार करना असंभव हो जाता है। परन्तु जहां राज्य प्रणाली के परिवर्तन के साथ २ खुलकर विचार करना सम्भव होता है वहाँ धार्मिक प्रणाली में क्रान्ति उत्पन्न हो जाती है। मानवीय अविष्कारों और पुरोहित वर्ग की कलई खुल जाती है और मनुष्य विशुद्ध परमात्मा पर विश्वास करने लग जाता है।

प्रत्येक मजहब ने इस बहाने से अपने पैर पसारे हुए है कि उसे परमात्मा के एक विशेष मिशन की पूर्ति करनी है और परमात्मा की यह आज्ञा खास व्यक्ति पर नाजिल हुई है। यहूदियों का यह खास व्यक्ति मूसा। ईसाइयों का ईसा और मुसलमानों का मुहम्मद था। यह भावना इस बात की द्योतक है कि परमात्मा तक पहुंचने का रास्ता प्रत्येक व्यक्ति के लिये समान रूप से खुला हुआ नहीं है।

प्रत्येक मजहब की अपनी खास पुस्तकें मिलती हैं जिन्हें वे ईश्वरीय ज्ञान कहते हैं। यहूदियों का दावा है कि परमात्मा ने मूसा को अपना उपदेश स्वय लिखाया। ईसाई लोग कहते हैं कि ईश्वरीय प्रेरणा से उन्हें दिव्य ज्ञान प्राप्त हुआ। मुसलमान लोग कहते हैं कि एक फरिश्ता कुरान को आसमान से लाया। मजा यह है कि प्रत्येक मजहब एक दूसरे को झूठा बताता है और मैं इन सब को झूठा समझता हूं।

'इलहाम' के सम्बन्ध में भी मुझे कुछ विचार करना है। निःसंन्देह परमात्मा शुद्ध आत्माओं में अपने ज्ञान की ज्योति का प्रकाश कर सकता है। जब मूसा ने इजराइल के बच्चों को यह कहा कि परमात्मा ने स्वयं अपनी आज्ञाओं की दो सूचियां प्रदान कीं तो कोई वजह नहीं है कि वे उस पर विश्वास करें क्योंकि मूसा के कथन के अतिरिक्त इसका कोई प्रमाण नहीं है। उन आदेशों में दिव्यता की झांकी नहीं है। उनमें सदाचार विषयक कुछ शिक्षाएं हैं जिन्हें कोई भी विधान शास्त्री बिना दिव्य ज्ञान के तय्यार कर सकता है।

इन शिक्षाओं की अनर्गलता दिखाने के लिये एक शिक्षा का उल्लेख कर देना प्रासंगिक होगा। शिक्षा यह है कि परमात्मा माता पिताओं के पापों को उनके बच्चों पर थोपता है। यह बात धर्म्म और न्याय के सर्वथा विपरीत है।

जब मुझ से यह कहा जाता है कि बहिश्त में कुरान लिखा गया और उसे एक फरिश्ता मुहम्मद के पास लाया तो यह विवरण भी कपोल कल्पना जान पड़ती है। मैंने फरिश्ते को स्वयं नहीं देखा इस लिए इस पर विश्वास न करने का मुझे अधिकार है।

जब मुझ से यह कहा जाता है कि कुमारी मरियम नामक एक स्त्री ने लोगों को यह बताया था कि बिना पुरुष के संसर्ग के वह गर्भवती हो गई थी और उसके मंगेतर पति जोजफ को एक देवदूत ने यह बात बताई थी तो मुझे अधिकार है कि मैं इस बात पर विश्वास न करूं। इस बात की प्रबल साक्षी होनी चाहिये जो अप्राप्त है। जोसफ और मैरी ने स्वयं इस विषय में कुछ नहीं लिखा है। यह बहुत बड़ी गप्प है। ईसा खुदा का बेटा था इस की सत्यता भी नितान्त संदिग्ध है। यह यहूदी मजहब की एक मनघड़न्त देन है। उस समय असाधारण पुरुषों को देव सन्तान मान लेने की प्रथा प्रचलित थी। देवताओं का स्त्रियों के साथ समागम होता है यह धारणा सर्वत्र व्याप्त थी। जिन यहूदियों का केवल एक ईश्वर में विश्वास था और जो सदैव झूठी धार्मिक गाथाओं को त्याज्य समझते थे उन्होंने कभी भी इस कथा को सत्य अङ्गीकार नहीं किया।

वीर-बालिका जेन

[लेखक—श्री मुबारक अली]

अमेरिका के मूल निवासी बिगड़ उठे थे। मरने मारने पर तुल गए थे। गोरे संख्या में कम थे बहुत कम इसलिये वे उनको दबा तो न सके थे स्वयं ही भागकर किले में जा छुपे थे। परन्तु मूल निवासी भला कब मानने वाले थे? वे किले को घेरे थे, झाड़ियों और खाइयों में छिपे बैठे थे। इस आशा से कि कब मौका मिले और कब हम इन गोरों को भूनकर रख दें।

गोरे अब क्या करते—कैसे धीरज धरते उन्होंने अपने भाइयों को खबर भेज दी थी तथा आशा बांध रखी थी कि वे कल सवेरे तक जरूर आजायेंगे और उन्हें इस विपत्ति से बचालेंगे। परन्तु रात कैसे कटेगी? जब रातको मूल निवासी धावा बोलेंगे तब उनसे अपना बचाव कैसे करेंगे? उनके पास बन्दूकें जरूर हैं, परन्तु बंदूकें बारूद के सहारे आग उगलती हैं। वह बारूद कहां है? वह बारूद तो वे प्राण बचाने की घबराहट में किले के बाहर लकड़ियों वाले झोंपड़े में ही भूल आये हैं।

अब कौन किले के बाहर जाय और झोंपड़े से निकालकर बारूद लाये? जो जायगा, भला वह जीवित लौटेगा? मूल निवासी उसे अपने तीरों और भालों से छेद देंगे। फिर भी किसी न किसी को तो जाना ही पड़ेगा—पचास की रक्षा के लिये किसी न किसी को तो अपने प्राणों का मोह त्यागना ही पड़ेगा। तीन चार युवक आगे बढ़े और सेनापति से बोले 'इसकी चिन्ता करने की क्या आवश्यकता। हम लोग तैयार हैं। आप जिसे आज्ञा दें, वही चला जाय।'

सेनापति ने कहा—'नहीं', यह नहीं हो सकता। किले की रक्षा करने के लिये एक २ जवान का प्राण बड़ा मूल्य रखता है। मैं तुम लोगों में से किसी को भी मौत के मुँह में जाने की आज्ञा नहीं देता।'

इस पर कुछ आवाजें उठीं 'परन्तु यह तो बताइए, रात को बारूद के अभाव में क्या होगा? भला मूल निवासी बिना हमला किए मानेंगे?'

सेनापति इन प्रश्नों का क्या उत्तर देता? वह ठण्डी सांसें भरने लगा।

'कोई जाय, चाहे न जाय, मैं तो जाती हूं—प्राण हथेली पर रखकर। बस किले की रक्षा का यही एक उपाय है।' यह एक चौदह वर्ष की बालिका थी—सेनापति की प्यारी बेटी जेन।

'नहीं, नहीं, इतने जवानों के रहते एक बालिका मौत के मुँह में नहीं जा सकती' कई युवक एक साथ बोल उठे।

'क्यों नहीं जा सकती? क्या किले की रक्षा का ठेका जवानोंने ही ले रखा है? क्या बालिकाओं को किले की रक्षा में हाथ बँटाने का कोई अधिकार नहीं है?' जेन ने भी जोरों से आवाज़ लगाई। "ठीक कहती है, बेटी! तू ही जायगी।" सेनापति ने अपना निर्णय सुनाया।

दक्षिण भारत प्रचार

श्री० स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती के कर कमलों से स्थापित कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा को एक निश्चित स्वरूप में लाने के प्रयत्न इन पिछले महीनों में किये जा रहे थे। प्रसन्नता की बात है कि स्थापित होने के ५ मास के अन्दर ही सभी वैधानिक रीतियों को काम में लाते हुये कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा का आदर्श विधान तैयार कर लिया गया तथा उसके आधार पर कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की रजिस्ट्री भी करादी गई। गत मास की दस तारीख को कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की साधारण सभा का असाधारण अधिवेशन हुआ जिसमें उत्साही प्रतिनिधियों ने प्रातः ६ बजे से सायं ४ बजे तक बिना मध्यावकाश के बैठकर समस्त कार्यविधि को पूर्ण किया तथा १ जौलाई १९५६ से कार्यारम्भ की विधिवत् घोषणा की। प्रान्त में आर्य समाजों का आर्थिक वर्ष जनवरी से दिसम्बर तक तथा सभा का आर्थिक वर्ष मार्च से फरवरी तक रखा गया है।

कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा का विधान उत्तर प्रदेश की मान्य प्रतिनिधि सभा के विधान के आधार पर बनाया गया है परन्तु कुछ विशेष

लोग आश्चर्य में डूब गये। आंखें फाड़२ कर कभी जेन का, और कभी सेनापति का मुँह ताकने लगे। और जेन सचमुच प्राण हथेली पर रखकर चल पड़ी और किले के फाटक पर पहुंची। सतरी ने बड़ी सावधानी से धीरे २ फाटक खोल दिया।

जेन बाहर निकली और बात की बात में झोंपड़े के द्वार आ पहुँची। धीरे से किवाड़ खोल कर भीतर घुसी, बारूद की बड़ी से बड़ी गठरी बाँधकर बाहर निकली और जल्दी २ भाग चली। उधर मूल निवासियों को आहट मिल गई और उनके तीर चारों ओर से हवा में सांय २ करने लगे।

जेन के पैरों में जैसे बिजली चमक उठी और वह और भी वेग से भागी। शिकार हाथ से निकलता देख मूल निवासी झल्ला उठे और उसके पीछे दौड़ पड़े। परन्तु जेन तितली के समान बरा बर उड़ी आ रही थी। कभी नीचे झुकती, कभी ऊपर तनती, कभी इधर मुड़ती, कभी उधर बल खाती, गोरे किले की दीवार से दुबके २ यह अनोखी दौड़ देख रहे थे। एक उसी के जीवन से सबका जीवन था, इसलिए जब वह शत्रुओं के चगुल से निकलती दिखाई देती थी, तब वे हर्ष से चीख उठते थे और जब वह शत्रुओं के चंगुल में फँसी जान पड़ती थी तब वे अपनी छाती में घूँसा मारकर रह जाते थे। आखिर साहस का रंग चोखा रहा। जेन फाटक पर पहुँच गई और संतरी ने उसे पलक मारते भीतर खींच लिया।

इतने में मूल निवासी भी आ पहुंचे और लगे फाटक पर तीरों, भालों तथा कंकड़ पत्थरों की वर्षा करने परन्तु अब इस ऊधम से क्या होने वाला था? अब तो गोरों के हाथ में मूल निवासियों को भूनने लायक आग पहुंच ही चुकी थी।

भी उसमें परिवर्धित कर दिया गया है। इस आदर्श विधान की विशेषताओं का उल्लेख शीघ्र ही एक लेखमाला में मैं करूँगा।

कर्नाटक प्रान्त में आर्यसमाजों के संघटनार्थ इस केन्द्र की स्थापना व संघटन की प्रथम योजना को क्रियान्वित करने के पश्चात् अब पूरा ध्यान प्रान्त की आर्यसमाजों को सुव्यवस्थित करने, नई आर्यसमाजों की स्थापना द्वारा समाजों की संख्या बढ़ाने, आर्य सभासदों की संख्या अधिक करने तथा सहकारी आर्य सभाओं के अधिकाधिक बनाने में दिया जा रहा है। एतदर्थ कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की ही ओर से आर्य सभासद् आवेदन पत्र, उपस्थिति पञ्जिका, सदस्य शुल्क पञ्जिका आदि छपवा दी गई हैं। सभा की ओर से ही छपवाकर इनको प्रत्येक आर्य समाज को दिया जायगा ताकि समस्त प्रान्त में एक सी रूप रेखा तथा व्यवस्था रहे। अन्य भी फार्म छपवाये जा रहे हैं। "आर्य समाज" (लक्ष्य, मन्तव्य तथा नियम) शीर्षक से कन्नड़ भाषा में एक छोटी सी पुस्तिका भी छपवाई गई है जिसमें श्री० महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती लिखित स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश के आधार पर ११ मन्तव्यों का उल्लेख है। आर्य सभासद् तथा सहकारी सदस्य बनाने से पूर्व यह पुस्तिका प्रत्येक व्यक्ति को दी जावेगी तथा जो जन पूरे मन्तव्यों तथा नियमों को स्वीकार करेंगे उन्हें आर्य सभासद्, तथा जो कुछ मन्तव्यों को स्वीकार करने वाले होंगे उनको सहकारी सदस्य बनाया जावेगा। (मान्य शिरोमणि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से इसकी स्वीकृति मिल चुकी है)।

इसके अतिरिक्त कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की आर्थिक स्थिति को दृढ़ बनाने के लिये एक स्थायी आय-स्रोत बनाने पर बल दिया जा रहा है। १००) वर्ष में देने वाले प्रतिष्ठित सदस्यों को अधिकाधिक बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है तथा हमें पर्याप्त सफलता भी मिल चुकी है। इन सभी कार्यों को करने के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री० नारायण रावजी, मन्त्री श्री० आर्य मूर्ति जी तथा अन्य भी उत्साही कार्यकर्त्ता पूर्ण रूपेण जुट गये हैं। आशा है निकट भविष्य में ही इस प्रान्त में एक प्रकाश उदित होता हुआ दिखाई देने लगेगा।

आर्य प्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत एक धर्मार्य सभा भी स्थापित करदी गई है जिसमें प्रान्त के अच्छे २ आर्य विद्वानों को रखा गया है प्रचार विभाग पूर्ण रूपेण इसी को सौंपा गया है प्रयत्न यह हो रहा है कि आर्य प्रतिनिधि सभा के द्वारा स्थान २ पर सभायें की जावें तथा प्रचार कार्य बढ़ाया जावे।

शीघ्र ही प्रान्त में एक आर्यकार्यकर्त्ता सम्मेलन करने की योजना बन रही है। श्री० पूज्य स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती से इनकी अध्यक्षता करने की प्रार्थना की गई थी प्रसन्नता है कि उन्होंने स्वास्थ्य की अनुकूलता होने पर इस कार्य के लिये दक्षिण भारत आना स्वीकार कर लिया है।

प्रचार को बढ़ाने के लिए आर्यकुमार परिषद् की परीक्षाओं के समान ही कन्नड़ भाषा में प्रारम्भिक परीक्षाओं को धर्मार्य सभा के आधीन चालू करने का भी प्रयत्न हो रहा है।

एक विशेष योजना जो धर्मार्य सभा के तत्त्वावधान में होने जा रही है वह है वेद के मन्त्रों को वीणा और ताल पर गाने का अनुसन्धान। यह कार्य प्रारम्भ हो चुका है। तथा गायत्री मन्त्र को श्री रंजिनी राग में, "अग्न आयाहि वीतये" इस मन्त्र को आनन्द भैरवी में "संगच्छध्वं संवदध्वं" इस मन्त्र को मोहन राग में तथा "तमु त्वमभजसो मानुमन्विहि" इस मन्त्र को कीर्तिप्रिया

में गाने का प्रयत्न चल रहा है। इसके अतिरिक्त "वामदेव्यगान" को संगीत के तालमय सप्तस्वरों में गाकर आर्य समाज में श्री० महर्षि दयानन्द जी के द्वारा अत्यन्त अभिलषित कार्य को पूर्ण करने का श्रेय "कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा" शीघ्र ही निकटतम भविष्य में लेने जा रही है। यदि यह अनुसन्धान सफल रहा (जैसा कि मुझे पूर्ण आशा है) तो १६५७ के फरवरी मास में होने वाले श्रद्धानन्द जन्म शताब्दी महोत्सव पर आर्य समाज को एक नई चीज समर्पित की जावेगी जो न केवल धार्मिक क्षेत्र में अपितु संगीत के क्षेत्र में भी एक नूतन मार्ग प्रदर्शक होगी।

इस वर्ष मान्य शिरोमणि सभा के प्रधान श्री इन्द्र जी विद्यावाचस्पति के दक्षिण भारत में भ्रमण का कार्यक्रम बनने की सम्भावना है तथा हमारा संकल्प है कि उनके भ्रमणावसर पर हम उनके हाथों कर्नाटक प्रान्त में एक ऐसी आर्य प्रतिनिधि सभा सौंपेंगे जिसके अन्तर्गत समाजें सुसंघटित, सुव्यवस्थित तथा एक रूप होंगी और वह प्रतिनिधि सभा धर्मार्य सभा प्रकाशन समिति, विक्रय समिति आदि विभिन्न विभागों से पूर्णतः—सुशोभित व अलंकृत होगी। बस इस वर्ष सार्वदेशिक सभा के लिए हमारी यही सबसे बड़ी दक्षिणा होगी।

उदार-दान

कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा के लिए श्री० नारायण राव जी प्रधान, श्री० रामकृष्णप्पा जी मैसूर ने १०००)–१०००) देने का संकल्प किया है। श्रीमान् कृष्णलाल जी पोद्दार ने सहर्ष ५००) का दान दिया तथा हमारे उत्साह को बढ़ाते हुये कहा कि मुझसे जितना भी हो सकेगा मैं कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा की सहायता करता रहूंगा। हमने उनसे प्रार्थना की कि वे कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा का मार्ग निर्देश करने तथा प्रशान्त पथ पर बढाने की कृपा करें इन्होंने उसको पूर्णतः स्वीकार किया। गौरीबिदनूर में एक अन्तर्जातीय विवाह सम्पन्न हुआ जिसमें मैसूर निवासी कन्या पक्ष के प्रमुख कार्यकर्ता कन्या के मामा श्री० लक्ष्मण जी ने मैसूर आर्य समाज के लिये नगर में एक Site भूमि खण्ड दिलवाने का वचन दिया। इनके अतिरिक्त कई प्रतिष्ठित सदस्य भी बन चुके हैं इनका पूर्ण विवरण शीघ्र ही दिया जावेगा। हम इन सब उदार दानी महानुभावों के अत्यन्त कृतज्ञ हैं।

मैसूर में प्रदर्शनी

इस वर्ष भी मैसूर में विजयादशमी के अवसर पर ५ अक्टूबर से १८ अक्टूबर तक बहुत बड़ी प्रदर्शनी होने जा रही है। इस बार और भी बडे पैमाने पर पुस्तक विक्रय करने तथा प्रदर्शन की योजना बन रही है।

सत्यपाल शर्मा
दक्षिण भारत आर्यसमाज
आर्गेनाइजर

———

—छोटी २ बातों में भले ही सहमत न होने परन्तु बड़ी २ बातों में सहमत होने से संगठन की प्रगति अच्छी रहती है। इससे बुद्धिमान् व्यक्तियों में मित्रता बनी रहती है।

—समाज के लोगों के साथ दो प्रकार से पट सकती है। एक तो उनके विचारों के साथ चलने की इच्छा से और दूसरे अपने विचारों पर संयम रखने से।

॥ ओ३म् ॥

कार्यालय—
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
श्रद्धानन्द बलिदान भवन, दिल्ली
दिनाँक ३१—७—५६

सत्याग्रह बलिदान स्मारक दिवस

मंगलवार २१ अगस्त १९५६ को मनाइये

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली के दिनाँक १३-१०-४० के स्थायी निश्चयानुसार हैदराबाद सत्याग्रह में अपने प्राणों की आहुति देने वाले आर्य वीरों की पुण्य-स्मृति में श्रावण शुक्ला पूर्णिमा तदनुसार २१ अगस्त १९५६ को आर्यसमाज मन्दिरों में सत्याग्रह बलिदान स्मारक दिवस मनाया जायेगा। इसी दिन श्रावणी का पुण्य पर्व है। इसका कार्य क्रम आर्य पर्व पद्धति के अनुसार श्रावणी उपाकर्म के साथ मिलाकर निम्न प्रकार किया जाय :—

प्रातः ८॥ बजे आर्य समाज मन्दिरों में सभायें की जाँय जिनमें उपाकर्म कार्यवाही के पश्चात् सब उपस्थित भद्र पुरुष तथा देवियां मिलकर निम्न प्रकार पाठ करें :—

(१) ओ३म् ऋतावान ऋतजाता ऋतावृधो घोरासो अनृतद्विषः।
तेषां वः सुम्ने सुच्छर्दिष्टमे वयं स्याम ये च सूरयः॥ ऋग्वेद ७।६६।१३

(२) ओ३म् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि॥ यजुर्वेद १।५

(३) ओ३म् इन्द्रं वर्धन्तोऽप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।
अपघ्नन्तो अराव्णः॥ सामवेद

(४ ओ३म् उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः।
दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृतःस्याम्॥ अथर्ववेद १२।१।६२

आर्य समाजों के पुरोहित अथवा अन्य कोई वेदज्ञ विद्वान उपर्युक्त मन्त्रों का तात्पर्य इन शब्दों में पढ़ कर प्रार्थना करायें :—

(१) जो विद्वान् सदा सत्य के मार्ग पर चलते हुए सत्य की निरन्तर वृद्धि और असत्य के विरोध में तत्पर रहते हैं, उनके सुखदायक उत्तम आश्रय में हम सब सदा रहें तथा हम भी उनकी तरह मन, वचन और कर्म से पूर्ण सत्यनिष्ठ बनें।

(२) हे ज्ञान स्वरूप ! सब उत्तम संकल्पों और कर्मों के स्वामी परमेश्वर ! हम भी आज से एक उत्तम व्रत ग्रहण करते हैं जिसके पूर्ण करने की शक्ति आप हमें प्रदान करें ताकि उस व्रत के ग्रहण से हमारी सब तरह से उन्नति हो। वह व्रत यह है कि असत्य का सर्वथा परित्याग करके हम सत्य की ही शरण में आते हैं। आप हमें शक्ति दें कि हम अपने जीवनों को पूर्ण सत्यमय बना सकें।

(३) हे मनुष्यो ! तुम सब आत्मिक शक्ति तथा उत्तम ऐश्वर्य को बढ़ाते हुए कर्मशील बन कर उन्नति में बाधक आलस्य प्रमादादि दुर्गुणों का परित्याग करते हुये सारे संसार को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ सदाचारी, धर्मात्मा बनाओ।

(४) हे प्रिय मातृ-भूमे ! हम सब तेरे पुत्र और पुत्रियें तेरी सेवा में उपस्थित होते हैं। सर्वथा नीरोग, स्वस्थ तथा ज्ञान सम्पन्न होते हुए हम दीर्घ आयु को प्राप्त हों और तेरी तथा धर्म की रक्षा के लिये आवश्यकता पड़ने पर अपने प्राणों की बलि देने को भी तैयार रहें।

इसके पश्चात् मिलकर निम्नलिखित कविता का गान किया जावे :—

धर्मवीरों के प्रति श्रद्धांजलि

श्रद्धांजलि अर्पण करते हम, करके उन वीरों का मान।
धार्मिक स्वतन्त्रता पाने को, किया जिन्होंने निज बलिदान॥
परिवारों के सुख को त्यागा, युवक अनेकों वीरों ने।
कष्ट अनेकों सहन किये पर, धर्म न छोड़ा वीरों ने॥
ऐसे सभी धर्मवीरों के आगे सीस झुकाते हैं।
उनके उत्तम गुण गण को हम, निज जीवन में लाते हैं॥
अमर रहेगा नाम जगत में, इन वीरों का निश्चय से।
उनका स्मरण बनायेगा फिर, वीर जाति को निश्चय से॥
करे कृपा प्रभु आर्य जाति में, कोटि कोटि हों ऐसे वीर।
धर्म देशहित जोकि खुशी से, प्राणों की आहुति दें वीर॥
जगदीश को साक्षि जान कर, यही प्रतिज्ञा करते हैं।
इन वीरों के चरण चिन्ह पर, चलने का व्रत धरते हैं॥
सर्व शक्तिमय दें बल ऐसा, धीर वीर सब आर्य बनें।
पर उपकार परायण निशि दिन, शुभ गुण धारी आर्य बनें॥

(ध० दे०)

धर्मवीर नामावली

श्यामलाल जी, महादेव जी राम जी श्री परमानन्द।
माधव राव विष्णु भगवन्ता, श्री स्वामी कल्याणानन्द॥
स्वामी सत्यानन्द महाशय मलखाना श्री वेद प्रकाश।
धर्म प्रकाश रामनाथ जी, पाण्डुरङ्ग श्री शान्ति प्रकाश॥
पुरुषोत्तम जी ज्ञानी लक्ष्मण-राव सुनहरा वेंकट राव।
भक्त अरूड़ा मातुराम जी नन्हूसिंह श्री गोविन्द राव।
बदनसिंह जी रतीराम जी, मान्य सदाशिव ताराचन्द।
श्रीयुत छोटेलाल अशर्फीलाल तथा श्री फकीरचन्द॥
माणिकराव भीमराव जी महादेव जी अर्जुनसिंह।
सत्यनारायण बैजनाथ ब्रह्मचारी दयानन्द नरसिंह॥
राधाकृष्ण सरीखे निर्भय अमर हुए इन वीरों का।
स्मरण करें विजयोत्सव के दिन, सब ही वीरों धीरों का॥

रामगोपाल
मन्त्री
सार्वदेशिक आ० प्र० सभा

वाराणसी संस्कृत विश्व विद्यालय विधेयक

इस सम्बन्ध में उत्तर प्रदेश की विधान सभा में जो विधेयक उपस्थित हुआ उस पर बोलते हुए श्री आचार्य नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ ने जो भाषण दिया उसका सारांश—

अध्यक्ष महोदय, आजकल विश्व विद्यालय शब्द नवीन युग के अनुरूप नवीन अर्थ रखता है। प्रचीन समय के विद्यापीठ व्यापक अर्थ रखते थे और धर्म और संस्कृति के आधार पर चलते रहते थे। आजकल के विश्व विद्यालय स्वधर्म निरपेक्ष हैं और संस्कृति के आधार पर व्यवस्थित नहीं है। मैं वाराणसी संस्कृत विश्व विद्यालय की पुष्टि करने के लिए खड़ा हूं और शिक्षा मन्त्री को इस विधेयक पर बधाई देता हूं। मैंने तक्षशिला विद्यापीठ की वह भूमि देखी है जो कि कभी १४ मील में फैला हुआ था और जहां कभी २०००० छात्र अध्ययन करते रहते थे और २००० प्राध्यापक थे। जहां कभी चाणक्य और चन्द्रगुप्त ने विद्याध्ययन किया था। विद्यापीठ की बड़ी भारी ख्याति थी। इसी प्रकार नालन्दा की भी ख्याति थी जहां दस सहस्र छात्र पढ़ते थे और १ सहस्र प्राध्यापक थे। नोटो विच कहता है कि ईसामसीह ने इसी नालन्दा में कुछ काल निवास किया था, शिक्षा प्राप्त की थी। वर्तमान संस्कृत कालेज बनारस के पीछे भी १७५ वर्ष का इतिहास है। वैसे तो काशी सदा से भारतवर्ष का संस्कृत विद्या का केन्द्र रहा है जहां संसार भर के विद्या-प्रेमी आते रहे। जहां बैलन्टाइन, विसेन्ट जैसे जर्मन देशीय प्रिन्सिपल और महा महोपाध्याय गंगाधर शास्त्री, दामोदर शास्त्री, हरनाथ शास्त्री और बालकृष्ण शास्त्री जैसे प्रकाण्ड विद्यागुरु विद्यादान करते थे। जिस कालेज के "पण्डित" नामक संस्कृत मासिक पत्र की बड़ी ख्याति थी। पाश्चात्य संस्कृत के विद्वान् भी उस पत्रिका से स्फूर्ति पाते रहे। ऐसा वह संस्कृत कालेज अब विश्व विद्यालय बनने जा रहा है। मैं जब काशी में अध्ययन करता था (१९०२) तब वहां सत्ताईस सहस्र छात्र विद्याध्ययन करते। इनके लिए सैकड़ों अन्न क्षेत्रों का प्रबन्ध था और सभी निःशुल्क शिक्षा प्राप्त करते रहते थे। इन्हीं छात्रों में से प्रति वर्ष व्याकरण, साहित्य, षड् दर्शन, पुराण, धर्म शास्त्र, मीमांसा, वेद आदि विषयों के सैंकड़ों विद्वान् बन जाते थे और भारत भर में फैल कर विद्यादान करते थे। आजकल समय की गति से उस समय की वे अवस्थायें और व्यवस्थायें नहीं रहीं। जिन संस्कृत के विद्वानों और परम्परा ने यवनकाल और गौरांग महा प्रभुओं के काल में भी, केवल कर्तव्य बुद्धि से संस्कृत विद्या की रक्षा की, वे ही इस स्वराज्य काल में हीन दशा को प्राप्त हुए और पेट का जटिल प्रश्न सम्मुख आया। विद्या और धर्म में ह्रास होने लगा। अब तो वाराणसी में क्या सर्वत्र संस्कृति का मूल संस्कृत विद्या का ह्रास हो गया है। परम्परायें ढीली पड़ रही हैं। ऐसे समय में वाराणसी संस्कृत विश्व विद्यालय विधेयक संस्कृत विद्या की रक्षा और दीक्षा में सहायक होगा। इन साढ़े चार वर्षों में यही एक विधेयक आया है जो मेरे काम का है। इस विधेयक में दो बातें विशेष हैं। एक तो समस्त भारतीय प्रदेशों के छात्र इस विश्व विद्यालय की परीक्षा दे सकते हैं।

दूसरी बात यह कि विदेशी छात्र भी इस विश्व विद्यालय की परीक्षाओं में सम्मिलित हो सकेंगे। इस प्रकार काशी की महत्ता अक्षुण्ण बनी रहेगी। काशी केवल उत्तर-प्रदेश का ही

संस्कृत का केन्द्र न रह कर, संसार भर का केन्द्र बना रहेगा।

यह सत्य है कि यह विधेयक प्रान्त के अन्य आधुनिक विश्व विद्यालयों के विधेयकों के ढंग का बन गया है। अच्छा होता कि यह विधेयक संस्कृत के ढंग का, अपने अनोखे ढंग का बनाया गया होता, किन्तु हम भी क्या करें वर्तमान समय की गति विधि, अवस्था-व्यवस्था, राज्य शासन को देखते हुए—

"सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्द्धं त्यजति पण्डितः"

इस न्याय से वर्तमान संस्कृत विश्व विद्यालय के ढांचे को स्वीकृत कर रहे हैं। आशा रखते हैं आगे आकर ढांचा ठीक हो सकेगा—

भारत में ज्ञान विक्रय सर्वथा निंद्य समझा जाता रहा है, इस लिए यहां की विद्याध्ययन परम्परा सदा, सर्वदा निःशुल्क ही रही है। आशा है यह संस्कृत विश्व विद्यालय इस विशेषता की रक्षा करेगा और विश्व विद्यालय के छात्र निःशुल्क शिक्षा प्राप्त करते रहेंगे। लोग कहते हैं कि संस्कृत विद्या मर चुकी, पर यह उनका मिथ्या भ्रम है। संस्कृत विद्या अपने वैदिक तथा अन्य प्राचीन साहित्य, दर्शन, पुराण इतिहास आदि के कारण अमर है और इस स्वराज्यकाल में तो वह पुनः बल पकड़ जायगी। क्योंकि राष्ट्र-भाषा हिन्दी संस्कृत के बिना सच्चे अर्थों में राष्ट्रभाषा न बन सकती है और न पनप सकती है। यदि भारतवर्ष कोरे पाश्चात्य ढंग के स्वराज्य का अनुभव करता रहेगा और अपनी स्वीकृति का स्रोत संस्कृत को खो बैठेगा तो भारतवर्ष अपने स्वत्व को ही खो बैठेगा। कोरी सत्ता उसको बचा न सकेगी। इस लिए इस संस्कृत विश्व विद्यालय के विधेयक का मैं समर्थन करता हूँ। हमारे शिक्षा मन्त्री ने प्रवर समिति में सभी प्रकार के संस्कृत प्रेमी सदस्य और विद्वान् शास्त्रियों को रक्खा था और प्रायः सर्व सम्मति से ही यह विधेयक तैयार हुआ है और इस विधेयक के विषय में संशोधन भी बहुत थोड़े और साधारण से आये हैं। मैं इस विधेयक का समर्थन करता हूं। जब भारत में हमारा ही सब कुछ था तब भारत में बड़े-बड़े विद्यापीठ थे ही किन्तु सहस्रों गुरुगृहों में भी विद्याध्ययन परम्परा चलती रहती थी जहां से छात्र तैयार होकर बड़े-बड़े विद्यापीठों में आते थे और उसकी शोभा को द्विगुणित करते थे। वर्तमान समय में सोमनाथ उद्धार के साथ ही संस्कृत विश्व विद्यालय की स्थापना की बात चल पड़ी अब तो कुरुक्षेत्र में भी एक संस्कृत विश्व विद्यालय बनने जा रहा है। पंजाब सरकार भी इस विषय में चेत गई है। दिल्ली भी एक संस्कृत विश्व विद्यालय चलाने की चिन्ता में है। इसी प्रकार भारत के सभी प्रदेशों में संस्कृत विश्वविद्यालय बनेंगे, तो संस्कृत विद्या पुनः जागृत होकर अपना चमत्कार दिखला सकेगी। इस संस्कृत विश्व विद्यालय में नये युग के अनुरूप नये ज्ञान-विज्ञान का चञ्चू प्रवेश भले ही हो जाय किन्तु अपनी प्राचीनता की विशेषताओं की रक्षा और दीक्षा का ध्यान रखना ही होगा। केवल संस्कृत के उपाधिधारी छात्रों की सख्या बढ़ाना मात्र इसका उद्देश्य न होकर इसका संस्कृत विद्या की प्राचीन रीति नीति, परम्परा की रक्षा करना भी होगा। उत्तर प्रदेश में लगभग १७०० संस्कृत पाठशालाएं हैं पर सहायता के अभाव में मुरझा गई हैं। इन १७०० संस्कृत पाठशालाओं में से केवल १०० विद्यालय आदर्श माने गये हैं उन्हीं को सहायता मिलती है। सरकार को इन मुमूर्षु विद्यालयों और पाठशालाओं की मुक्त हस्त से सहायता करनी पड़ेगी, तभी यह संस्कृत विश्व विद्यालय हरा भरा होकर फलेगा, फूलेगा।

(२) लेख द्वारा व प्रति पुरुष (प्राक्सी) से सम्मति स्वीकार नहीं की जायेगी।

(३) सम्पूर्ण विषय बहु सम्मति से निश्चित होंगे किन्तु किसी विषय में समान सम्मति होने पर सभापति की एक और सम्मति द्वारा निर्णय होगा।

साधारण नियम

१—सार्वदेशिक राजार्य सभा सार्वदेशिक सभा की अनुमति से आवश्यकतानुसार प्रान्तीय मांडलिक तथा स्थानीय राजार्य सभाओं की स्थापना करेगी।

२—किसी पदाधिकारी या कार्यकारिणी समिति के सदस्य का स्थान निम्नलिखित अवस्था में रिक्त समझा जायेगा:—

(१) मृत्यु (२) विक्षिप्त दशा (३) पद त्याग (४) ऐसे अपराध के लिये दण्डित होना जो सभा की सम्मति में उसे सदस्यता के अयोग्य सिद्ध करे। सभा के नियमों का उल्लंघन करने पर सभा द्वारा सदस्यताके अयोग्य ठहराया जाना (७ निर्वाचक संस्था से निर्वाचित न होना अथवा पृथक् किया जाना।

३—वर्ष के मध्य में पदाधिकारी या कार्यकारिणी के सदस्य का स्थान रिक्त होने पर उसकी पूर्ति करने का अधिकार कार्यकारिणी सम्मति को होगा।

४—सभा के किसी अधिवेशन में सदस्य के अतिरिक्त अन्य कोई व्यक्ति सम्मति न दे सकेगा।

५—साधारण सभा के अधिवेशन को बुलाने के विज्ञापन का समय २१ दिन, कार्यकारिणी समिति के अधिवेशन के लिये ७ दिन और निजी संशोधन नैमित्तिक अधिवेशन का समय १० दिन, होगा।

६—साधारणतया सभा मन्त्री अधिवेशनों के लिये विज्ञापन निकालेंगे किन्तु विशेष अवस्था में सभा प्रधान भी अधिवेशन का विज्ञापन निकाल सकेंगे।

७—सार्वदेशिक सभा के अनुसार राजार्य सभा का वर्ष आरम्भ हुआ करेगा।

८—राजार्य सभा की कार्यकारिणी के समस्त प्रस्ताव सार्वदेशिक सभा के कार्यालय को तत्काल भेजे जायेंगे। यदि सार्वदेशिक सभा का प्रधान किसी प्रस्तावको विवादास्पद समझे अथवा प्रस्तावित विषय सम्बन्धी नीति स्पष्ट करना आवश्यक समझे तो उस प्रस्ताव को कार्यान्वित करना स्थगित कर सकता है। परन्तु स्थगित करने की सूचना २१ दिन के भीतर प्राप्त होना आवश्यक है। इस अवधि के समाप्त होने पर प्रस्ताव नियमित और स्वीकृत समझा जायेगा। जो प्रस्ताव स्थगित किये जायेंगे उनके सम्बन्ध में सार्वदेशिक सभा की पहली अन्तरङ्ग सभा में विचार करना आवश्यक होगा और अन्तरङ्ग का निर्णय अन्तिम होगा।

९—राजार्य सभा के प्रस्तुत विधान एवं नियमों का संशोधन, परिवर्तन, परिवर्द्धन करने आदि का अधिकार सार्वदेशिक सभा को होगा।

(क) राजार्य सभा के अधिवेशनों की कार्यवाहक संख्या एक चौथाई होगी।

(ख) कार्यकारिणी समिति कार्य संचालनार्थ अपने नियम स्वयं बना सकती है।

* *

सार्वदेशिक सभा के मन्त्री

श्री लाला रामगोपाल जी का भ्रमण विवरण

(विशेष सम्वाददाता द्वारा)

सभा मन्त्री ने ३० जून को सायङ्काल आर्य समाज मन्दिर दीवान हाल में एक सुशिक्षिता ईसाई महिला के शुद्धि सस्कार में भाग लिया।

रविवार प्रातः १ जुलाई को आर्य समाज बाजार सीताराम में एक विशेष व्याख्यान में सार्वदेशिक सभा के पच सूत्रीय कार्यक्रम की व्याख्या की।

उसी दिन सायङ्काल ५ बजे आर्य समाज दीवान हाल में शुद्ध हुई ईसाई महिला के एक प्रतिष्ठित डाक्टर के साथ हुए विवाह संस्कार में भाग लिया।

रात्रि के ७॥ बजे आर्य समाज मन्दिर दीवान हाल में आयोजित सार्वजनिक सभा में पजाब के हिन्दी विरोधी पन्त तारासिंह फार्मूले का एक भाषण में विरोध किया। उसी दिन रात्रि को ६॥ बजे आर्य समाज विनय नगर द्वारा आयोजित सार्वजनिक सभा में उपर्युक्त विषय पर भाषण दिया। रात्रि को ११ बजे घर लौटे।

३ जुलाई मंगलवार को प्रात. पजाब मेल से मथुरा गए। मथुरा से ६ मील राया तक पक्की सड़क पर राया से ७ मील दूर कच्ची सड़क पर स्थित नगला चन्दू (अनौड़ा) ग्राम में मॉडलिक आर्य प्रतिनिधि सभा मथुरा द्वारा बुलाए गये सम्मेलन में भाग लिया।

यह वही क्षेत्र है जिसमें अधिकाँश ईसाई ग्राम शुद्ध हो चुके हैं। इस ग्राम में गत वर्ष ईसाइयों ने एक बड़े हस्पताल की स्थापना की थी जिसमें रोगियों की चिकित्सा के अतिरिक्त अमरीका से आया हुआ घृत बड़े परिमाण में बांटा जाता है और ग्रामीण जनता की गरीबी से लाभ उठाकर उन्हें ईसाइयत की ओर प्रेरित किया जाता है। विदेशी मिशनरी पूरी शक्ति के साथ इस कार्य में लगे हुये हैं। ईसाई मिशनरियों के इस अस्पताल के ठीक सामने ग्राम के बाहर आर्य समाज के कर्मठ कार्यकर्त्ताओं ने श्रीमद्दयानन्द सेवाश्रम की स्थापना कर दी है। कुछ दानी महानुभावों ने इस आश्रम को भूमि दान दे दी है किन्तु श्रीयुत वैद्यराज तेजपाल सिंह जी बड़ी तत्परता और त्याग भाव से कच्ची झोपड़ियों में ही सेवा कार्य कर रहे हैं। सभा मन्त्री द्वारा औषधालय के कार्य का निरीक्षण किया गया। गत वर्ष लगभग ७००० रोगियों की चिकित्सा की गई। आर्य समाज के इस सेवा केन्द्र का ग्रामीण जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ रहा है और ईसाइयों के हस्पताल के रोगियों की सख्या दिन पर दिन घटती जा रही है। श्री स्वामी प्रेमानन्द जी श्री ईश्वरी प्रसाद जी प्रेम तथा उनके अन्य कई योग्य साथी मांडलिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से प्रशसनीय कार्य कर रहे हैं जिसे देखकर सभा मन्त्री जी को बड़ी प्रसन्नता हुई।

सायङ्काल ६ बजे सभा मन्त्री का सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया जिसके उत्तर में उन्होंने आर्य समाज के सेवा कार्य को आगे बढ़ाने की जनता से अपील की और आशा व्यक्त की कि जनता की सहायता से ये झोपड़ियां शीघ्र ही पक्के स्थान में परिवर्तित हो जायेंगी।

रात को ८ बजे चल कर मन्त्री जी ६॥ बजे राया पहुँचे। वहां से छोटी लाइन से हाथरस। हाथरस से गाड़ी बदल कर अलीगढ़ गये और वहां भी गाड़ी बदल कर ४ ता० के प्रातः ६॥ बजे देहली लौटे।

———

२८-४-५६ की विद्यार्य सभा की कार्यकारिणी की बैठक द्वारा प्रसारित

आर्य शिक्षा संस्थाओं के लिये पालनीय आवश्यक निर्देश

(१) छात्र तथा छात्राओं की सहशिक्षा न होवे ।

(२) छात्रों तथा छात्राओं के प्रवेश के समय सरक्षकों की सहमति से उपनयन संस्कार हुआ करे । महाविद्यालयों में विद्याध्ययन की समाप्ति पर दीक्षान्त कार्य प्राचीन पद्धति से किया जावे । (पद्धति विद्यार्य सभा द्वारा प्रस्तुत की जावेगी) ।

(३) आर्य कुमार सभा का सचालन आवश्यक रूप से करके आर्य वातावरण उत्पन्न किया जावे ।

(४) पुस्तकालयों में चारों वेद तथा महर्षि दयानन्द, प० लेखराम, प० गुरुदत्त जी की सब पुस्तकें अवश्य रहें ।

(५) छात्रावासों में वैदिक सन्ध्या हवन का अनिवार्य प्रबन्ध हो और आर्य पर्व अवश्य मनाये जावें । प्रशसनीय श्रेष्ठ जीवन चर्या रखने वाले छात्रों को पुरस्कार दिये जावें ।

६) पाठविधि में धार्मिक नैतिक शिक्षा तथा सस्कृत का विषय अनिवार्य रूप से रखा जावे । इनका अध्यापन आकर्षक सरल नवीन शैली से किया जावे । धर्म शिक्षा में योग्य छात्रों को पुरस्कार दिये जावें ।

(७) धार्मिक शिक्षा, पुरस्कार, हवन तथा धर्म शिक्षक वेतन आदि के लिये धार्मिक निधि तथा बजट रखा जाव ।

(८) स्कूल तथा कालेज अपने छात्रों को सत्यार्थप्रकाश, सस्कार विधि ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका आदि ऋषिकृत ग्रन्थों को वैदिक साहित्य विषयक, सार्वदेशिक विद्यार्य सभा द्वारा सचालित परीक्षाओं में सम्मिलित करें ।

(६ अ—धर्म शिक्षा के लिये एक विशेष अध्यापक नियुक्त किया जावे । प्रधानाचाय स्वय भी इस कार्य में विशेष भाग लिया करें ।

ब—वर्ष भर में कम से कम ६ व्याख्यान वैदिक सिद्धान्तों पर अवश्य कराये जावें ।

(१०) स्कूल तथा कालेज की पत्रिकाओं में वेदमन्त्रों की व्याख्या भी रहा करे ।

(११) समस्त कार्य हिन्दी में किया जावे ।

(१२) छात्रों तथा अध्यापकों में व्यायाम द्वारा शारीरिक उन्नति तथा स्वदेशी वस्त्र और भारतीय वेश-भूषा परिधान के लिये प्रेरणा की जावे ।

(१३) छात्र २४ वर्ष तक तथा छात्रायें १६ वर्ष तक अविवाहित रह कर विद्यार्थी जीवन का पालन करें ।

(१४) अपना वार्षिक विवरण (जिसमें छात्र, अध्यापक सख्या आय व्यय, सम्पत्ति का तथा सम्पादित धार्मिक सामाजिक प्रगतियों का वर्णन हो) सभा को अप्रैल के मध्य तक अवश्य भेज दें ।

भीमसेन विद्यालंकार — आचार्य वीरेन्द्र शास्त्री, एम० ए०

कार्यकर्त्ता प्रधान — मन्त्री

विविध सूचनाएँ तथा वैदिक धर्म प्रसार

निर्वाचन

आर्य समाज सिरसा	प्रधान म० श्रीराम जी	
	मन्त्री श्री नित्यानन्द जी एम० ए० बी० टी०	१-७-५६
आर्य समाज डीडवाना	प्रधान श्री आसाराम जी माथुर	
	मन्त्री श्री किशनलाल जी गहलौत	२७-६-५६

आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल आसाम

राम विलासिंह नामक किसी व्यक्ति ने वग उड़िया आ० भा० सभा के नाम पर आर्य जनता से धन की अपील की है। इस नाम की कोई सभा नहीं है। बङ्गाल आसाम के लिए आर्य प्र० सभा बङ्गाल है। मुख्य स्थान २४/२ कार्नवालीस स्ट्रीट कलकत्ता में है और जो नियमित रूप से सार्वदेशिक सभा के साथ सम्बद्ध है। केन्द्रीय तमलक आर्य समाज कोई आर्य संस्था नहीं है। रिलीफ आदि का कार्य आर्य प्रति सभा बङ्गाल करती है। आर्य जनता को सावधान रहना चाहिये।

हंसराज हांडा
मन्त्री

ईसाई मत पोल प्रकाश पुस्तक के विरुद्ध सरकारी पग

पञ्जाब सरकार ने श्रीयश के विरुद्ध एक अभियोग दायर कर दिया है जिसकी सुनवाई शीघ्र ही सेशन जज, जालन्धर की अदालत में होगी। ज्ञात हुआ है कि राज्य के गृह मन्त्री की आज्ञा से जालन्धर के जिलाधीश ने श्री यश एम० एल-सी कीपर वीर मिलाप प्रेस, श्री पं० शान्ति प्रकाश महोपदेशक शास्त्रार्थ महारथी १६१-४ पानीपत और पं० मेहरचन्द जी पब्लिशर आर्य वीर पुस्तकालय जालन्धर के विरुद्ध दो वर्गों में घृणा फैलाने के आरोप में डिस्ट्रि० ऐण्ड सेशन जज की अदालत में दफा २६ (अ) ताजीरात हिन्द जारी कर दिया है।

गंगापुर में बन्दूक द्वारा गाय के ऊपर भीषण आक्रमण

१८ जून की शाम को रेल्वे कम्पाउन्डर श्री सत्य नारायण जी की एक गाय घास चरती हुई रेल्वे वर्क शाप के लोको चार्ज मैन श्री शेरवुड नामक एक ऐंग्लो इण्डियन के बङ्गलेके अहातेमें चली गई, उसने गाय पर बन्दूक से फायर कर दिया। बन्दूक की गोली गाय के भीतर रह गई है जिससे गाय के मरने का भय है। २० जून को गंगापुर पुलीस ने अपराधी को गिरफ्तार करके कोटा भेज दिया है जहां वह जमानत पर छोड़ दिया गया है।

वेदानन्द सरस्वती
आ० स० जयपुर

६-५-५६ से ६-७-५६ तक

सार्व० सभा के कार्य-कर्त्ताओं का कार्य

श्री मा० पोहकरमल जी

१५ ईसाइयों की शुद्धि, १नवयुवती कुमारी की ईसाइयों से रक्षा की गई।

सोनीपत, छोटा खेड़ा, रोहतक, बहादुर गढ़ आदि में २०० विद्यार्थियों को ईसाई स्कूलों से उठवाया गया तथा आर्य स्कूलों में भरती कराया गया।

ग्राम अघचीनी सूबा देहली में जमींदारों और हरिजनों में कुओं पर चढ़ने के विषय में कुछ समयसे झगड़ा चला आरहा था। उस झगड़े को शान्ति पूर्वक मिटाया गया। हरिजन स्वतन्त्रता पूर्वक कुओं पर चढ़ते हैं।

उपयोगी साहित्य

वैदिक साहित्य सदन, आर्य समाज बाजार सीताराम, देहली द्वारा प्रकाशित

साहित्य की उपयोगिता इसी से सिद्ध है कि—

(१) राजस्थान सरकार ने हमारी निम्न पुस्तकों को राजस्थान इन्टर कालिज तक की शिक्षण संस्थाओं और पुस्तकालयों के उपयोगार्थ स्वीकृत किया है।

१ मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२॥)	५ विदेशों में एक साल	२।)
२ पापों की जड़ अर्थात् शराब ।-) तथा =)॥		६ व्यायाम का महत्व	≡)
३ महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी	२)	७ ब्रह्मचर्य के साधन (१ २) भाग	।-)
४ हमारा शत्रु तम्बाकू का नशा ।=) तथा =)॥		८ नेत्ररक्षा ≡)	९ दन्तरक्षा ≡)

(२) उत्तरप्रदेशीय सरकार ने पंचायत पुस्तकालयों के उपयोगार्थ निम्नलिखित पुस्तकें स्वीकृत की हैं—

१ नेत्ररक्षा	≡)	३ दन्तरक्षा	≡)
२ हमारा शत्रु तम्बाकू का नशा ।=) तथा =)॥		४ पापों की जड़ अर्थात् शराब ।-) तथा =)॥	

(३) निम्न पुस्तकें भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की धार्मिक परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में निर्धारित है।

आदर्श ब्रह्मचारी	।)	५ व्यायाम का महत्व	≡)
२ ब्रह्मचर्यामृत बाल सं० ।=) साधारण	=)।	६ मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	२॥)
३ वैदिक गीता	३)	७ संस्कृत कथा मंजरी	।-)
४ महर्षि दयानन्द और महात्मा गांधी	२)		

(४) निम्न पुस्तकें विरजानन्द संस्कृत परिषद् की परीक्षाओं में निर्धारित हैं—

१ वैदिक गीता	३)	११ संस्कृत क्यों पढ़े ?	।=)
२ संस्कृत वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय	॥)	१२ छात्रोपयोगी विचारमाला	।=)
३ संस्कृतांकुर	१)	१३ रामराज्य कैसे हो ?	≡)
४ ब्रह्मचर्य के साधन १,२ ३,४ ५ ,,७ - ९भाग		१४ पंचमहायज्ञविधि	≡)
५ संस्कृत कथा मंजरी	-	१५ आर्य सिद्धान्त दीप	१।)
६ व्यायाम सन्देश	१)	१६ तम्बाकू का नशा	=)॥
७ ब्रह्मचर्य शतकम्	=)	१७ ब्रह्मचर्यामृत बाल सं०	।=)
८ श्रुति सूक्ति शती	≡)	१८ पापों की जड़ शराब	=)॥
९ स्वामी विरजानन्द	१॥)	१९ विदेशों में एक साल	२।)
१० वैदिक धर्म परिचय	॥=)	२० व्यायाम का महत्व	≡)

अन्य नगरों में उक्त पुस्तकें मिलने के पते :—

१ गुरुकुल झज्जर झज्जर (रोहतक)
२ पुस्तक भण्डार, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर
३ पुस्तक मन्दिर, मथुरा
४ हिन्दी पुस्तकालय, माता वाली गली, मथुरा
५ विशन बुक डिपो, माता वाली गली, मथुरा
६ भटनागर ब्रादर्स, उदयपुर
७ आर्यवीर पुस्तकालय, अड्डा होशियारपुर, जालन्धर
८ जवाहर बुक डिपो, सुभाष बाजार, मेरठ ९ विद्या भवन, चौड़ा बाजार, जयपुर।

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(१) यमपितृ परिचय (पं० प्रियरत्न आर्य) २)
(२) ऋग्वेद में देवृकामा ,, -)
(३) वेद में असित् शब्द पर एक दृष्टि ,, -)।
(४) आर्य डाइरेक्टरी (सार्व० सभा) १।)
(५) सार्वदेशिक सभा का
सत्ताईस वर्षीय कार्य विवरण अ० २)
(६) स्त्रियों का वेदाध्ययन अधिकार
(प० धर्मदेव जी वि० वा०) १।)
(७) आर्य समाज के महाधन
(स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी) २॥)
(८) आर्यपर्व पद्धति (श्री पं० भवानीप्रसादजी) १।)
(९) श्री नारायण स्वामी जी की स० जीवनी
(प० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) -)
(१०) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण(पं०इन्द्रजी) ।=)
(११) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या
(अनुवादक प० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक) ।)
(१२) आर्य मन्दिर चित्र (सार्व० सभा) ।)
(१३) वैदिक ज्योतिष शास्त्र(प०प्रियरत्नजी आर्य)१॥)
(१४) वैदिक राष्ट्रीयता (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।)
(१५) आर्य समाज के नियमोपनियम(सार्व सभा)-)॥
(१६) हमारी राष्ट्रभाषा (प०धर्मदेवजी वि० वा०) ।-)
(१७) स्वराज्य दर्शन स०(प०लक्ष्मीदत्तजी दीक्षित)१)
(१८) राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती) ॥)
(१९) योग रहस्य (श्री नारायण स्वामी जी) १।)
(२०) मृत्यु और परलोक ,, १।)
(२१) विद्यार्थी जीवन रहस्य ,, ॥=)
(२२) प्राणायाम विधि ,, =)
(२३) उपनिषदें— ,

ईश	केन	कठ	प्रश्न
।=)	॥)	॥)	।=)
मुण्डक	माण्डूक्य	ऐतरेय	तैत्तिरीय
(छप रहा है)	।)	।)	१)

(२४) बृहदारण्यकोपनिषद् ४)
(२५) आर्यजीवनगृहस्थधर्म(प०रघुनाथप्रसादपाठक)॥=)
(२६) कथामाला ,, ॥)
(२७) सन्तति निग्रह , १।)
(२८) नैतिक जीवन स० ,, २॥)
(२९) नया संसार ,, =)
(३०) आर्य शब्द का महत्व ,, -)॥
(३१) मांसाहार घोर पाप और स्वास्थ्य विनाशक -)
(३२) मुर्दे को क्यों जलाना चाहिए -)
(३३) इस विषय व्याख्या -)॥
(३४) हमारे हकीकत राय
(ला० ज्ञानचन्द जी आर्य) ॥=)
(३५ वर्ण व्यवस्था का वैदिक स्वरूप , १॥)
(३६) धर्म और उसकी आवश्यकता ,, १)
(३७) भूमिका प्रकाश (पं० द्विजेन्द्रनाथजी शास्त्री)१।)
(३८) इञ्जिल का वैभिल (स्वा० सदानन्द जी) ।।।)
(३९) वेदों में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां
(प० प्रियरत्न जी आर्य) १)
(४०) सिंधी सत्यार्थ प्रकाश २)
(४१) सत्यार्थ प्रकाश और उस की रक्षा में -)
(४२) , ,, आन्दोलन का इतिहास ।=)
(४३) शांकर भाष्यालोचन (प०गंगाप्रसादजी उ०)५)
(४४) जीवात्मा ४)
(४५) वैदिक मणिमाला ।=)
(४६) आस्तिकवाद , ३)
(४७) सर्व दर्शन संग्रह ,, १)
(४८) मनुस्मृति ,, ५)
(४९) आर्य स्मृति , १॥।)
(५०) जीवन चक्र ,, ५)
(५१) आर्योदयकाव्यम् पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध, १।।), १॥)
(५२) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौतम)॥=)
(५३) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर
(श्री कृष्णचन्द्र जी विरमानी) २।) रिया० १॥)
(५४) भजन भास्कर (संग्रहकर्ता
श्री प० हरिशंकरजी शर्मा १॥।)
(५५) मुक्ति से पुनरावृत्ति ,, ,, =)
(५६) वैदिक ईश वन्दना (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ।=)॥
(५७) वैदिक योगामृत ,, ॥=)
(५८) कर्तव्य दर्पण सजिल्द (श्री नारायण स्वामी) ।॥)
(५९) आर्यवीरदल शिक्षणशिविर(ओमप्रकाशपुरुषार्थी।=)
(६०) ,, ,, ,, गीतमाला ,, १।।)
(६१) ,, ,, गीतांजलि(श्री रुद्रदेव शास्त्री)।=)
(६२) ,, ,, भूमिका =)
(६३) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी २।)

मिलने का पता—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, बलिदान भवन, देहली ६ ।

स्वाध्याय योग्य साहित्य

(१) श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की पूर्वीय अफ्रीका तथा मौरीशस यात्रा — २।)
(२) वेद की इयत्ता (श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी) — १।।)
(३) दयानन्द दिग्दर्शन(श्री स्वा० ब्रह्ममुनिजी) ।।)
(४) ईंजील के परस्पर विरोधी वचन (पं० रामचन्द्र देहलवी) — ।=)
(५) भक्ति कुसुमाञ्जलि (पं० धर्मदेव वि० वा० — ।।)
(६ वैदिक गीता (श्री स्वा० आत्मानन्द जी) — ३)
(७) धर्म का आदि स्रोत (पं० गंगाप्रसाद जी एम. ए.) — २)
(८) भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक (श्री राजेन्द्र जी) — ।।)
(९) वेदान्त दर्शनम् (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) — ३)
(१०) संस्कार महत्व (पं० मदनमोहन विद्यासागर जी) — ।।।)
(११) जनकल्याण का मूल मन्त्र „ — ।।)
(१२) वेदों की अन्तः साक्षी का महत्व „ — ।।=)
(१३) आर्य घोष — ।।)
(१४) आर्य स्तोत्र „ — ।।)
(१५) स्वाध्याय संग्रह (स्वा० वेदानन्दजी) — २)
(१६) स्वाध्याय संदोह „ — ४)
(१७) सत्यार्थ प्रकाश सजिल्द — १।।=)
(१८ महर्षि दयानन्द — ।,=

English Publications cf Sarvadeshik Sabha

1. Agnihotra (Bound) (Dr. Satya Prakash D. Sc.) 2/8/-
2 Kenopanishat (Translation by Pt. Ganga Prasad ji, M. A.) -/4/
3. Kathopanishat (Pt. Ganga Prasad M A Rtd. Chief Judge) 1/4/-
4. The Principles & Bye-laws of he Aryasamaj -/1/6
5. Aryasamaj & International Aryan League Pt. Ganga Prasad ji Upadhyaya M. A.)-/1/-
6. Voice of Arya Varta (T. L. Vasvani) -/2/-
7. Truth & Vedas (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/6/-
8. Truth Bed Rocks of Aryan Culture (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/8/-
9. Vedic Culture (Pt. Ganga Prasad Upadhyaya M. A) 3/8/-
10. Aryasamaj & Theosophical Society (Shiam Sunber Lal) -/3/-
10. Wisdom of the Rishis (Gurudatta M. A.) 4/ /-
11. The Life of the Spirit (Gurudatta M.A.) 2/ /-
12. A Case of Satyarth Prakash in Sind (S. Chandra) 1/8/-
13. In Defence of Satyarth Prakash (Prof. Sudhakar M A) -/2/-
14. Universality of Satyarth Prakash /1/
15. Tributes to Rishi Dayanand & Satyarth Prakash (Pt. Dharma Deva ji Vidyavachaspati) -/8/
16 Political Science (Mahrishi Dayanand Saraswati) -/8/-
17. Elementary Teachings of Hindusim -/8/- (Ganga Prasad Upadhyaya M.A.)
18. Life after Death „ 1/4/-

Can be had from:—**SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA, DELHI 6**

नोट—(१) आर्डर के साथ २५ प्रतिशत (चौथाई) धन अगाऊ रूप में भेजें

सार्वदेशिक पत्र (हिन्दी मासिक)

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश १० शिलिंग। अर्द्ध वार्षिक ३ स्वदेश, ६ शिलिंग विदेश।

२. एक प्रति का मूल्य ।।) स्वदेश, ।।=) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क वा नमूने की प्रति का मूल्य ।।=) स्वदेश, ।।।) विदेश।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये। चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा। पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने वा ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न देने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है कि उनकी इच्छा वी० पी० द्वारा चन्दा देने की है।

४. सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख को प्रकाशित होता है। किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय में अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा। डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं। अत समस्त ग्राहकों को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये।

५ सार्वदेशिक का वर्ष १ मार्च से प्रारंभ होता है अंक उपलब्ध होने पर बीच वर्ष में भी ग्राहक बनाए जा सकते हैं।

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
६. पूरा पृष्ठ (२०×३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा " "	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई ,,	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	२०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

७. सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

—व्यवस्थापक

'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर
श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली-से प्रकाशित।

ऋगवेद

यजुर्वेद

सार्वदेशिक

अंक ८
ाश्विन २०१३
नक्टूबर १६५६

वर्ष ३१
मूल्य स्वदेश ५)
विदेश १० शिलिङ्ग
एक प्रति ।।)

१-६-५६ को हैद्राबाद राज्य की भयंकर ट्रेन दुर्घटना में हत हुए
स्व० श्री वंशीलाल जी व्यास

सम्पादक—सभा मन्त्री
सहायक सम्पादक—
श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषय-सूची

१. वैदिक प्रार्थना ३६३
२. सम्पादकीय ३६४
३. आर्यवीर दल ४०४
४. सत्यं ब्रवीमि वध इत स तस्य (आचार्य श्री पं० नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ एम०एल०ए०) ४०५
५. स्वामी दयानन्द और आर्य समाज ४०७
६. मानव धर्म की रूपरेखा (श्री सत्यव्रत जी शास्त्री) ४०६
७. शंका समाधान ४१२
८. आर्य समाज तथा पंजाब की भाषा योजना (प्रिं० भगवानदास जी) ४१५
६. गोरक्षा आन्दोलन (श्री जयप्रकाश नारायण जी के विचार) ४१७
१०. स्वाध्याय का पृष्ठ ४१६
११. ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन (नियोगी कमेटी की जाँच पड़ताल के महत्वपूर्ण निष्कर्ष) ४२२
१२. आर्य जगत् ईसाई प्रचार निरोध दिवस मनायें (सभा मन्त्री द्वारा) ४२५
१३. सर्वदल हिन्दी सम्मेलन अम्बाला (श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज का भाषण) ४२७
१४. बाल-जगत् ४३०
१५. महिला जगत ४३१
१६. श्री दयानन्द-सेवा-सदन की प्रस्तावित योजना (श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति) ४३४
१७. धार्मिक नेता पुस्तक कांड (सभामन्त्री ला० रामगोपाल जी के वक्तव्य) ४३६
१८ विविध सूचनाएं ४३८

॥ ओ३म् ॥

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३१ | अक्टूबर १९५६ आश्विन २०१३ वि०, दयानन्दाब्द १३२ | अङ्क ८

वैदिक प्रार्थना

तमीडत प्रथमं यज्ञसाधं विश आरीराहुतमृञ्जसानम्।
ऊर्जः पुत्रं भरतं सृप्रदानुं देवा अग्निं धारयन्द्रविणोदाम् ॥ ऋ० १।७।३।३॥

व्याख्यान—हे मनुष्यो ! 'तमीडत" उस अग्नि की स्तुति करो कि जो "प्रथमम्" सब कार्यों से पहिले वर्त्तमान और सब का मुख्य कारण है तथा "यज्ञसाधम्" सब संसार और विज्ञानादि यज्ञ का साधक (सिद्ध करने वाला) सब का जनक है, हे "विशः" मनुष्यो ! उसी को स्वामी मानकर "आरीः" प्राप्त होओ जिसको अपने दीनता से कहते हैं, विज्ञानादि से विद्वान् लोग सिद्ध करते और जानते हैं "ऊर्जः, पुत्र, भरतम्" पृथिव्यादि जगत् रूप अन्न का पुत्र अर्थात् पालन करने वाला तथा भरत अर्थात् उसी अन्न का पोषण और धारण करने वाला है "सृप्रदानुम्" सब जगत को चलने की शक्ति देने वाला और ज्ञान का दाता है, उसी को "देवा अग्निं, धारयन्द्रविणोदाम्" देव (विद्वान् लोग) अग्नि कहते और धारण करते हैं वही सब जगत् को द्रविण अर्थात् निर्वाह के सब अन्न जलादि पदार्थ और विद्यादि पदार्थों का देने वाला है उस अग्नि परमात्मा को छोड़ के अन्य किसी की भक्ति याचना कभी किसी को न करनी चाहिये।

सम्पादकीय

वैदिक-धर्मी का राजनीतिक दृष्टिकोण

आर्य समाज एक संस्था है जिसका उद्देश्य वैदिक धर्म की सचाइयों का संसार में प्रचार करना है। इस कारण प्रत्येक आर्य समाजी वैदिक धर्म का अनुयायी और प्रचारक समझा जा सकता है।

वैदिक धर्म का दायरा बहुत विस्तृत है। जीवन का कोई अंग नहीं जो उस दायरे के बाहर हो। आजकल के रिलीजन, मजहब, पंथ आदि शब्द धर्म शब्द की व्यापकता तक नहीं पहुंच सकते। 'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयस सिद्धि: स धर्मः, इस लोक में अभ्युदय और परलोक में मोक्ष—दोनों का साधन धर्म है। कर्त्तव्य शास्त्र, समाज शास्त्र, राजनीति, शिल्प, कला, व्यापार आदि व्यावहारिक प्रवृत्तियों को बतलाने वाले शास्त्र वैदिक धर्म के उतने ही आवश्यक अंग हैं जितना आवश्यक आध्यात्मिक ज्ञान है। प्रत्येक वैदिक धर्मी का कर्त्तव्य है कि वह जीवन के प्रत्येक पहलू के सम्बन्ध में वैदिक मूल-सिद्धान्तों का ज्ञान प्राप्त करे और उन्हें अपना मार्ग दर्शक बनाये।

इस लेख में मैं वेदों के कुछ मूल-सिद्धान्तों का दिग्दर्शन कराऊंगा। इस कार्य में वैदिक धर्मियों का सब से अच्छा मार्गदर्शक सत्यार्थ प्रकाश का षष्ठ समुल्लास है। उस समुल्लास में महर्षि ने वेद मन्त्रों और स्मृतियों के आधार पर राजधर्मों की बहुत विस्तृत और स्पष्ट व्याख्या की है। यदि हम उस समुल्लास का सावधानता से अध्ययन करें तो हमें राजनीति के क्षेत्र में बहुत से सन्देह रहित निर्देश मिल सकते हैं।

(१) सत्यार्थ प्रकाश के पढ़ने से जो सबसे प्रथम और मौलिकविचार मनुष्यके हृदयपर अङ्कित होता है, वह है कि महर्षि दयानन्द प्रत्येक राष्ट्रकी राजनीतिक स्वाधीनता को सर्वथा अनिवार्य मानते थे। आठवें समुल्लासमें महर्षि जी ने लिखा है 'कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है अथवा मत मतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात-शून्य प्रजा पर माता पिता के समान कृपा न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।" प्रत्येक वैदिक धर्मी को यह बात अपने हृदय पर वज्रलेप की तरह अङ्कित कर लेनी चाहिये कि चाहे कुछ हो अपने देश पर किसी अन्य देशी का शासन न होने देना चाहिये। उसे ऐसा कोई कार्य न करना चाहिये जिससे स्वराज्य संकट में पड़ जाये।

(२) महर्षि जी ने राजधर्म का दूसरा मूल सिद्धान्त यह प्रतिपादित किया है कि किसी भी एक व्यक्ति को राज्य का स्वतन्त्र अधिकार न होना चाहिये। जिसका अभिप्राय यह है कि वैदिक धर्म एक सत्तात्मक राज्य का समर्थक नहीं है। छठे समुल्लास में महर्षि जी ने लिखा है—"इसका अभिप्राय यह है कि एक को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिये, किन्तु राजा जो सभापति तदाधीन सभा, सभाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के आधीन और प्रजा राजसभा के आधीन रहे।" प्रजा सत्तात्मक राज्य का इससे अधिक स्पष्ट शब्दों में प्रतिपादन नहीं हो सकता। अन्यत्र कहा है—"प्रजा को सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि उनके देश का शासन किसी सभा के आधीन हो, न कि किसी एक व्यक्ति के। राज्य के लिये एक को राजा कभी न मानना चाहिये क्योंकि जहां एक को राजा मानते हैं वहां सब प्रजा दुःखी और उसके उत्तम पदार्थों का अभाव हो जाता है।" स्पष्ट है कि एक वैदिक धर्मी के लिये प्रजा सत्तात्मक राज्य के सिद्धान्त

को मानना अनिवार्य है। आर्य समाज का संगठन इसी सिद्धान्त के आधार पर हुआ है।

(३) प्रजा सत्तात्मक राज्य में सबसे मुख्य प्रश्न यह उपस्थित होता है कि मुख्य शासक, जिसे स्मृतियों ने राजा के नाम से निर्दिष्ट किया है किस प्रकार नियुक्त किया जाय इसका वेद के प्रमाण से महर्षि जी ने निम्न लिखित उत्तर दिया है। "हे विद्वानों, राज प्रजाजनो तुम इस प्रकार के पुरुष को बड़े चक्रवर्ती राज्य, सबसे बड़े होने, बड़े-बड़े विद्वानों से युक्त राज्य पालने और परम ऐश्वर्य युक्त और धन के पालने (पालन करने) के लिये सम्मति करके, सर्वत्र पक्षपात रहित पूर्ण विद्या विनययुक्त सभापति राजा को सर्वाधीश मान के सब भूगोल शत्रु-रहित करो।"

दूसरे मन्त्र की व्याख्या महर्षि ने निम्न लिखित की है :- "हे मनुष्यो ! जो इस मनुष्य के समुदाय में परम ऐश्वर्य का कर्ता शत्रुओं को जीत सके, जो शत्रुओं से पराजित न हो, राजाओं से सर्वोपरि विराजमान प्रकाशमान हो, सभापति होने से अत्यन्त योग्य प्रशंसनीय गुण, कर्म, स्वभाव युक्त, सत्करणीय; समीप जाने और शरण लेने योग्य सबका माननीय हो, उसी को सभापति (राजा) करो।"

इन मन्त्रार्थों को पढ़ते हुए यह ध्यान रखना चाहिये कि इनमें राजा शब्द का अर्थ है शासक, सभापति का अर्थ है राष्ट्रपति और चक्रवर्ती राज्य का अभिप्राय है अनेक प्रदेशों और जातियों से पूर्ण विशाल राज्य। सम्पूर्ण देश द्वारा आवश्यक गुणों से युक्त व्यक्ति को सभापति चुनने को आजकल की भाषा में गणराज्य पद्धति कहा जाता है।

(४) जिस व्यक्ति को राष्ट्रपति चुना जाय उसके दो विशेषण ध्यान देने योग्य हैं। एक विशेषण है 'जो शत्रुओं को जीत सके और दूसरा है 'विद्या विनय युक्त और सब का मित्र।' इन विशेषणों का महत्व यह है कि राष्ट्रपति बनने के योग्य वह व्यक्ति है जो शत्रुओं को जीतने की शक्ति रखता हो और इतना विनय युक्त भी हो कि अपने देश और विदेश के निवासियों को मित्र बना सके। अर्थात् उसमें शक्ति भी हो और शान्ति भी। राजनीति और इतिहास का यह सम्मिलित सिद्धान्त सदा स्मरण रखना चाहिये कि जो देश अथवा शासक इतनी शक्ति सन्नद्ध नहीं करता कि कोई शत्रु उसकी ओर आंख न उठा सके वह अशान्ति और पराजय को स्वयं निमन्त्रण देता है। शान्ति की रक्षा के लिये राष्ट्र को शक्तिशाली बनाना अत्यन्त आवश्यक है। साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिये कि उस शक्ति का उद्देश्य अपनी सुरक्षा द्वारा शान्ति को स्थापित करना है, स्वार्थ सिद्धि के लिये दूसरों पर आक्रमण करना नहीं।

(५) राष्ट्रपति को यह आदेश दिया गया है कि वह स्वच्छन्दता से शासन करे। उस पर सभा का नियन्त्रण होना चाहिये। इसकी विशेष व्याख्या ऋषि ने अथर्ववेद के त सभा च समितिश्च सेना च" इस मन्त्रांश की व्याख्या में की है। उस में बतलाया है कि राष्ट्रपति की सहायता के लिये शासन के ये तीन अङ्ग होने आवश्यक हैं। (१) सभा, (२) समिति, (३) सेना। जनता के प्रतिनिधियों के मण्डल का नाम समिति और देश की रक्षार्थ संगठन का नाम सेना समझना चाहिये। शासन के ये सब अङ्ग जहां एक दूसरे पर इतना नियन्त्रण रखे कि उनमें से कोई देश हित के विरुद्ध न जा सके वहां साथ ही उनका यह भी कर्त्तव्य है कि तीनों मिलकर देश की रक्षा, उन्नति और समृद्धि में राष्ट्रपति के सहायक हों।

(६) मुख्य शासक को परामर्श देने के लिये मन्त्रियों की समिति का विधान है। उसका वर्त-

मान नाम मन्त्री मण्डल है। मन्त्री कैसे हों इस प्रश्न का उत्तर मनुस्मृति के आधार पर निम्न लिखित दिया है—'सब सेना और सेनापतियों के ऊपर राज्याधिकार, दण्ड देने की व्यवस्था के सब कार्यों का आधिपत्य और सबके ऊपर वर्तमान सर्वाधीश राज्याधिकार इन चारों अधिकारों में वेद शास्त्रों में प्रवीण, पूर्ण विद्या वाले, धर्मात्मा, जितेन्द्रिय सुशीलजनों को स्थापित करना चाहिये।" इस प्रकरण पर महर्षि ने जितना लिखा है उसका सारांश यह है कि राष्ट्रपति और उसके मन्त्रियों में जिन गुणों की अनिवार्य आवश्यकता है, वे हैं :—(१) विद्वत्ता, (२) धर्म परायणता, (३) जितेन्द्रियता, (४) सुशीलता। जिन व्यक्तियों में ये चारों गुण न हों वे किसी दशा में भी मन्त्री-पद के योग्य नहीं हैं। यदि ऐसे मन्त्री बनाये जायेंगे जिनमें ये गुण न हों तो देश का कल्याण नहीं हो सकता और न ही सुरक्षा हो सकती है। विद्या, सदाचार, संयम और विनय से रहित मन्त्री न राज्य का भला कर सकते हैं और न प्रजा का। आजकल के प्रजा तन्त्र राज्यों की यह प्रथा समझी जाती है कि कोई मन्त्री मण्डल सात वर्ष से अधिक अधिकार सम्पन्न नहीं रह सकता। इसका कारण यह है कि मन्त्री पद पर जो नियुक्तियाँ होती हैं उनका आधार देश-भक्ति, देश-सेवा, विद्वत्ता विशुद्धा-चरण और सुशीलता को नहीं माना जाता अपितु वह नियुक्तियां दल बन्दी, चालाकी और मुख्य पुरुषों के प्रति भक्ति-भावों के आधार पर की जाती हैं।

(७) मुख्य शासक और मन्त्रियों का चुनाव करना "सभा" का काम है। सभा बहुमत से जिन्हें शासन के अधिकार देगी वे ही राष्ट्रपति या मन्त्री बन सकेंगे। इस कारण यह आवश्यक है कि सभा के सभासदों का चुनाव बहुत विचार पूर्वक करना चाहिये। सभासदों में किन गुणों की आवश्यकता है इस विषय में महर्षि ने लिखा है— "सब सभासद् और सभापति इन्द्रियों को जीत अपने वश में रख के सदा धर्म में वर्तें और अधर्म से हटे हटाये रहें। इस लिये रात दिन नियत समय में योगाभ्यास भी करते रहें। क्योंकि जो जितेन्द्रिय हो, अपनी इन्द्रियों (जो मन प्राण और शरीर प्रजा है इस) को न जीत लें तो बाहर की प्रजा को अपने वश में स्थापित करने को समर्थ कभी नहीं हो सकता।" तथा षष्ठ समुल्लास के अन्य अंशों में महर्षि ने जो कुछ लिखा है उस का सारांश यह है कि सभा (लोक सभा तथा राज्य सभा) के लिये उन्हीं व्यक्तियों को चुना जाय जिनमें निम्न लिखित गुण विद्यमान हों (१) वे जितेन्द्रिय हों (२) कर्त्तव्या कर्त्तव्य को समझते हों (३) सब प्रकार के व्यसनों से बचे हुए हों और (४) केवल धर्म समझ कर प्रजा की सेवा के लिये सभासद बनें।

यह हैं राजनीति के कुछ मौलिक सिद्धान्त जिन्हें प्रत्येक वैदिक धर्मी को अपना मार्गदर्शक बनाना चाहिये। ये सिद्धान्त त्रिकालाबाधित हैं। समय अथवा देश के भेद के कारण इनमें भेद नहीं आ सकता।

इन्द्र विद्यावाचस्पति

श्री महाराणा प्रताप स्मारक

किसी भी जाति के विद्या और आचरण का स्तर पहचानना हो तो यह देखना पर्याप्त है कि उस जाति के सर्व सम्मान्य और सुशिक्षित लोग किन व्यक्तियों का आदर करते हैं। एक आदर्श-प्रेमी जाति में सन्तों और वीरों का आदर किया जायेगा। परन्तु जो जाति आदर्शों की अपेक्षा वासनाओं को अधिक महत्त्व देती है उसमें चित्र निर्माताओं और एक्टरों की पूजा होगी। यह आश्चर्य की बात है कि अपने को आदर्श प्रेमी समझने वाले भारत निवासियों ने आजतक भी

अपने देश के अनेक महात्माओं और वीरों की स्मृतियों को उचित सम्मान नहीं दिया। आज तक झांसी की महारानी लक्ष्मीबाई और चित्तौड़ केसरी महाराणा प्रताप सिंह के समुचित स्मारकों का न बनना हम लोगों की निर्बलता और क्षुद्र प्रवृत्तियों का प्रमाण है। सन्तोष की बात है कि उदयपुर की श्री प्रताप सभा ने महाराणा का विशाल स्मारक स्थापित करने का निश्चय किया है श्री प्रताप सभा ने स्मारक की जो महत्त्वपूर्ण योजना बनाई है उसका प्रत्येक देशवासी को स्वागत करना चाहिए। उस योजना की पूर्ति में लगभग ५० लाख रुपया व्यय होने का अनुमान है। यदि राज्य और प्रजा मिलकर इस कार्य मे सहयोग दें तो ५० लाख की राशि कुछ अधिक नहीं है। आशा रखनी चाहिए कि जो योजना प० जवाहर लाल नेहरू जी के आशीर्वाद से और उदयपुर नरेश के नेतृत्व में निर्मित हुई है वह अवश्य पूर्ण होगी। यदि पण्डित जवाहर लाल जो अपने आशीर्वाद को कार्य रूप में परिणत कराने का यत्न जारी रखेंगे तो उसकी सफलता असंदिग्ध है।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियां ❀

भगवान् राम के प्रति श्रद्धाँजलि !

आज लाखों वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी मर्यादा पुरुषोत्तम राम अनेक बातों में भारत-वासियों और जिज्ञासु विदेशियों के मार्ग-दर्शक बने हुए हैं। उन्होंने विविध कार्यों द्वारा भिन्न २ क्षेत्रों में गार्हस्थ जीवन में, सार्वजनिक कार्यों में, राज-काज और दुष्ट-दल-दलन में अनेक आपत्तियां सहन करके भी शिक्षाप्रद आदर्श उपस्थित किये हैं।

भगवान् राम ने बाल्यावस्था में ही उत्तमोत्तम गुण ग्रहण कर लिये थे। माता कौशल्या के संरक्षण में उन्होंने मृदु-भाषण, आज्ञा-पालन, स्वच्छता आदि का अभ्यास किया था, तो गुरु वसिष्ठ जी से न्याय, नीति, धर्म और धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त करली थी। उन्होंने सदैव सदाचारी और विद्वान् लोगों का सत्संग किया। तभी तो वे अपने भावी जीवन में अपनी शारीरिक, मानसिक और नैतिक योग्यता का सम्यक् परिचय दे सके थे। उनमें विनय और विवेक की मात्रा भी कम न थी।

राम ने कुल-मर्यादा को जिस भांति निभाया उसकी कहाँ तक प्रशंसा की जाय। राज्याभिषेक के समय उन्हें सूचना मिलती है कि पिता के वचन की रक्षा के लिये आवश्यक है कि वे १४ वर्ष तक वन में निवास करें। साधारण मनुष्य के लिये यह सूचना वज्रपात के समान होती। उसका हृदय विदीर्ण हो जाता। वह राज-विद्रोह की पताका फहराकर भयंकर रक्तपात का भयावना दृश्य उपस्थित करने में आगा पीछा न देखता। उन्होंने ऐसी बात न की। उन्होंने अपने त्याग से संसार को चकित कर दिया। मन में तनिक भी मैल न लाकर वे वन के लिये उसी हर्ष के साथ रवाना हुए जैसे कोई राजतिलक के लिये जाता हो। उनकी यह अद्भुत कर्तव्य-परायणता युग-युगान्तर तक सत्प्रेरणा प्रदान करती रहेगी।

राम के भाई बन्धुओं और सहधर्मिणी सभी के चरित्र विलक्षण और स्फूर्तिदायक हैं। लक्ष्मण ने उनसे अलग रहना ही न चाहा। उनकी सेवा के लिये उन्होंने स्वयं वनवास की याचना की। तपस्वी और निर्लोभ भरत ने मिले हुए राज्य को ठुकरा दिया और राम के सेवक और प्रतिनिधि के रूप में उनकी अनुपस्थिति में राज्य संभाला। क्या भ्रातृ प्रेम के ऐसे उत्कृष्ट उदाहरण ढूंढे से भी कहीं अन्यत्र मिल सकते हैं? भारत वर्ष ने

अपनी गोद में सीता देवी को भी धारण किया जिसने पति-भक्ति की पराकाष्ठा ही दिखा दी। उस देवी के लिए राजमहल के सभी सुख विद्यमान् थे, वे उन सब को ठुकरा कर राम का साथ देने के लिए व्याकुल हो गईं। किसी के समझाने बुझाने का भी कोई प्रभाव न हुआ। उनकी दृढ़ता साधारण जनों की कल्पना से परे थी। वे स्वयं अपनी उपमा आप थीं। राम को हनुमान् जैसे गुणवान् जितेन्द्रिय बलवान् और कर्त्तव्य-परायण सेवक भी प्राप्त रहे।

महाराज राम का हृदय बड़ा विशाल था। ऊँच-नीच छुआछूत की भावना से शून्य था। निषाद का आतिथ्य स्वीकार करना, शबरी के बेरों को प्रसन्नता पूर्वक खा लेना आदि उनके जीवन की घटनायें विचारणीय हैं। यदि हिन्दू जाति वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था को अपनाए तो संगठन और राष्ट्र-निर्माण का मार्ग प्रशस्त हो जाय। सुग्रीव और विभीषण से मित्रता की, तो उसे ईमानदारी के साथ निबाहा।

वनवास के समय भी जब जैसा कर्तव्य उपस्थित हुआ उसके लिये सदैव उद्यत पाये गये। ऋषि मुनियों की रक्षा करना, साधु महात्माओं की सेवा करना, दीनों का दुःख दूर करना उनका स्वाभाविक नित्य का कार्य था। वे स्त्री जाति का अनादर सहन करना पाप समझते थे। सीता का बलात् हरण करने वाले रावण को दण्ड देकर अन्य आततायियों को पाठ पढ़ाना उनके लिये अनिवार्य था। वह लंकापति और बहुत पराक्रमी था तो क्या ? उन्हों ने वहां अपने राज्य से वंचित होने पर भी कुछ थोड़े वानर जाति के लोगों की सहायता से उस पर धावा बोला। भरत वा जनक से सहायता की याचना करना उनके आत्मावलम्बन और स्वाभिमान् की भावनाके विरुद्ध थी। उन्होंने स्वयं ही रावण आदि को समाप्त कर समाज में आतंक व्याप्त करके लोगों को त्रस्त एवं पीड़ित करने वाले दुष्टों का दमन करके अपने क्षत्रित्व की रक्षा की।

राम आदर्श शासक थे। लोकमत के अनुसार किया हुआ उनका शासन इतना उत्तम रहा कि अच्छा राज्य अब भी राम राज्य कहा जाता है। उन्होंने निष्पक्ष भाव से न्याय किया। उन्होंने प्राप्त धन को प्रजा की सुख समृद्धि में व्यय किया अपने स्वार्थ वा ऐश्वर्य के लिए नहीं। उन्होंने प्रत्येक पद पर सुयोग्य कर्मचारियों को नियुक्त किया। उन्होंने कायदे कानूनों से नहीं स्वयं अपने उदाहरण से प्रजाको सदाचारी, संयमी और गुण ग्राही बनाने का यत्न किया। जुए मद्यपान, परस्त्री प्रसंग और विलासिता आदि विषयों से उन्होंने जनता को खूब सावधान किया उनका शासन इतना विशद था कि प्रजा में चोरी ठगी, बदमाशी, छल-कपट आदि के अपराधी न थे। किसी को रोग शोक न था। खाने पीने की कमी न थी। वे प्रजा को पुत्र समान स्नेह करते थे और सदैव उसकी उन्नति में दत्तचित्त रहते थे। फिर प्रजा में राज-भक्ति प्रसन्नता और सन्तोष की कमी क्यों रहती ? तभी तो वे आज भी श्रद्धा और भक्ति से याद किये जाते हैं। राम धन्य थे ! उन्हें सादर प्रणाम है।

आज हम उनके उत्तराधिकारी स्वांग रच कर उनका अपमान करते और अपने पतन का ढोल पीटते हैं। निश्चय ही हमारे इस अज्ञान से उनकी आत्मा को ठेस पहुँचती होगी। परमात्मा हमें सद्बुद्धि प्रदान करें जिससे हम उनके उदात्त चरित्र को जीवन में धारण करके उनके सच्चे उत्तराधिकारी सिद्ध हो सकें।

आर्यसमाज के इतिहास की प्रगति

प्रथम भाग

श्रीयुत पण्डित इन्द्र विद्यावाचस्पति कृत इति-

हास का प्रथम भाग छप रहा है। परिशिष्टों को मिलाकर कोई चार साढ़े चार सौ पृष्ठ होंगे। दो दर्जन के लगभग विषय से सम्बन्ध रखने वाले लाइन ब्लॉक के चित्र दिये गये हैं। परिशिष्टों मे महर्षि की जन्मतिथि, आर्य समाज का स्थापना-दिवस, महर्षि की मृत्यु कैसे हुई ? इत्यादि विवादास्पद विषयों पर विचार किया गया है। आशा है प्रथम भाग दो-तीन मास में छपकर तैयार हो जायेगा।

दूसरा भाग

दूसरा भाग लिखा जा चुका है। पाण्डुलिपि की टाइप की हुई कापी सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में पहुंच चुकी है। वह इतिहास समिति के सदस्यों को सम्मति के लिये भेजी जा रही है। पहला भाग छपकर पूरा होने पर दूसरे भाग की छपाई आरम्भ हो जायेगी। उसमें भी चित्र रहेंगे और आवश्यक विषयों पर विचारात्मक परिशिष्ट भी रहेंगे। उसकी पृष्ठ संख्या भी पहले भाग के बराबर ही होगी।

तीसरा भाग

तीसरा भाग लिखा जा रहा है। दूसरा भाग हैदराबाद के आर्य-सत्याग्रह पर पूरा हो गया है। इससे आगे के वर्षों का वृतान्त तीसरे भाग का पूर्वार्द्ध होगा। उत्तरार्द्ध में आर्य समाज के सम्बध में विविध प्रकार की पूरी जानकारी देने का यत्न किया जायेगा। उस भाग के कुछ शीर्षक निम्न-लिखित होंगे।

१—आर्य समाज का विस्तृत संगठन।

२—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं के संक्षिप्त विवरण।

३—आर्य समाजों के प्रान्तवार संक्षिप्त विवरण।

४—आर्य समाज के साहित्य का परिचय।

५—आर्य समाज के प्रचारक, लेखक, कवि तथा पत्रकारों का परिचय।

६—आर्य संस्थाओं का विवरण हुतात्मा आर्य जनों का परिचय।

७—आर्य पुरुषों तथा आर्य महिलाओं का परिचय। (Who's-Who)

यह स्पष्ट है कि तीसरे भाग के उत्तरार्ध की पूर्ति आर्यजनों के तुरन्त और पूरे सहयोग के बिना असम्भव है। परिश्रम से क्रम-बद्ध और सम्पादन करना ग्रन्थकार का काम है, परन्तु सामग्री उपस्थित करना आर्य जनता का काम है। जिनके पास जो सामग्री हो वह भेजने की कृपा करें। सबके संक्षिप्त परिचय तभी दिए जा सकेंगे यदि प्राप्त होंगे। जिनके पास आर्य समाज का साहित्य है वह उनके नमूने भेजें। जिनके पास विशिष्ट आर्य नर-नारियों के चित्र या वृत्तान्त हैं वह उनके भेजने में विलम्ब न करें। श्री पण्डित जी की इच्छा है कि तीसरा भाग आर्य्य समाज का विश्व-कोष हो। इस इच्छा की पूर्ति ईश्वर की कृपा और आर्य जनता के पूर्ण सहयोग पर ही अवलम्बित है।

दूसरे भाग के अन्त में उन सब आर्य समाजियों का परिचय देने का विचार है जिन्होंने भारत की स्वाधीनता की प्राप्ति में सक्रिय सहयोग दिया है। जिन स्थानों से देश की स्वाधीनता के लिए सक्रिय कार्य करने वाले आर्यजनों के परिचय अभी तक न भेजे गये हों वे भेजने में जल्दी करें। यदि पूरी सामग्री के अभाव के कारण वह अंश दूसरे भाग में न आ सका तो जहां दूसरा भाग अधूरा रह जायगा वहां तीसरा भाग सीमा से अधिक बढ़ जायेगा।

इतिहास तीन भागों में रहेगा। प्रत्येक भाग

का मूल्य लगभग ६) होगा । उसकी बिक्री के धन से कम से कम दश सहस्र को स्थिर निधि सुगमता से बन सकती है अतः प्रत्येक आर्य समाज को इस कार्य में अधिक से अधिक सहयोग देना आवश्यक कर्त्तव्य समझना चाहिये। आशा है कि आर्य समाजें और आर्य जनता सार्वदेशिक सभा को शीघ्र से शीघ्र इस दस हजार रुपये की राशि के पूर्ण हो जाने की सुखद घोषणा करने में समर्थ बनायेंगे।

दस हजार की इस राशि को पूरा करने का सुगम उपाय यह है कि जो लोग व्यक्तिगत रूप से उस इतिहास को खरीदना चाहते हैं वे पहले भाग के लिये ५) रुपया पेशगी के तौर पर भेज दें। पहले भाग का मूल्य ६) रुपये होगा। जिनका मूल्य ३० नवम्बर १९५६ से पहले पहुंच जायेगा उन्हें पहला भाग ५) रुपये में मिलेगा। केवल रजिस्ट्री से भेजने का डाक व्यय अधिक लगेगा। अन्यों को पहला भाग ६) में प्राप्त होगा। जो आर्य समाजें एक से अधिक प्रतियां खरीदना चाहें वे भी ५) प्रति कापी के हिसाब से अगाऊ मूल्य भेज दें। ऐसे दो हजार ग्राहक आ जाने से इतिहास की छपाई का कोई बोझ सार्वदेशिक सभा पर नहीं पड़ेगा। पहला भाग तैयार होने में अब अधिक विलम्ब नहीं है। आर्यजनों और आर्य समाजों को रियायती मूल्य अगाऊ भेजकर इतिहास के ग्राहक बन जाना चाहिये। इससे एक रुपये की रियायत तो मिलेगी ही, सार्वदेशिक सभा के शुभ प्रयत्न में सहायक होने का श्रेय भी प्राप्त होगा।

अण्डमान में आर्यसमाज

अण्डमान द्वीप काला पानी कहा जाता है जहां भारत के आजन्म कैदी रखे जाते रहे हैं। इन द्वीपों की कुल जनसंख्या लगभग ३०००० है। द्वीप की राजधानी पोर्ट ब्लेअर की जनसंख्या लगभग १०००० है जो इन द्वीपों का सब से बड़ा स्थान है।

वहां गिरजे और मस्जिद तो पर्याप्त हैं किन्तु हिन्दुओं की जनसंख्या अधिक होते हुए भी अभी तक वहां आर्यसमाज न था। वहां ईसाइयों का बड़ा प्रचार है और प्रायः प्रत्येक जहाज से पादरी लोग आते जाते रहते हैं। वहां के कुछ उत्साही सज्जनों ने २७ जुलाई ५६ को आर्यसमाज की स्थापना कर दी है। वहां के उत्साही नवयुवकों से आर्यसमाज का अच्छा कार्य चलाने की आशा की जा रही है जिनमें से अधिकांश सरकारी कार्यालयों में काम करते हैं।

अंडमान में 'ऐन्ड्रा मैनियन एसोसियेशन' नामक एक राजनीतिक संस्था काम करती है जो कहा जाता है किसी दूसरी संस्था को चाहे वह धार्मिक ही क्यों न हो, फलने फूलने नहीं देना चाहती। इसी लिये उसने उस द्वीप में आर्यसमाज की स्थापना का स्वागत नहीं किया। इस संस्था का 'हमारी आवाज' नामक एक पाक्षिक पत्र निकलता है। इस पत्र ने अपने १५-८-५६ के अंक में आर्य समाज के विरुद्ध विष उगला है। इतना ही नहीं, यह संस्था और इसके कार्यकर्त्ता जनता में भ्रम फैला रहे हैं जिससे आर्यसमाज के सरकारी कर्मचारियों की स्थिति के खराब हो जाने की आशंका है। वह पत्र लिखता है :—

"हमें सूचना मिली है कि पोर्ट ब्लेअर में अभी हाल में 'आर्यसमाज' नामक एक नई संस्था की स्थापना हुई है। इस समाज का संगठन कतिपय सरकारी कर्मचारियों विशेषतः गजटेड अफसरों के द्वारा हुआ है जो पंजाब वा उत्तर भारत से कुछ समय के लिए सरकारी सेवा के लिये आये हुए हैं।

अंडमान द्वीप इस समय तक साम्प्रदायिक आन्दोलन से नितान्त मुक्त रहा है। धर्म, विशुद्ध वैयक्तिक विषय समझा जाता था और कोई भी उसमें हस्तक्षेप न करता था। इस समाज

(आर्य समाज) के संगठन ने बहुत से हिन्दुओं के मस्तिष्क में खलबली मचा दी है क्योंकि इस समाज का मुख्य सिद्धान्त मूलतः हिन्दू धर्म के विरुद्ध है। हिन्दू लोग मूर्ति की पूजा करते हैं परन्तु आर्य समाज की शिक्षा मूर्ति पूजा के सर्वथा विरुद्ध है। अतःइन दोनों में मौलिक विरोध है।

धर्म प्रचार के अधिकार को हमारे विधान ने स्वीकार किया है परन्तु धार्मिक स्वतन्त्रता और उस स्वतन्त्रता के दुरुपयोग के मध्य विभाजक रेखा खिंच जानी चाहिये।

राज्य कर्मचारियों का राजनीति में भाग लेना वर्जित है परन्तु यह भुला न देना चाहिये कि साम्प्रदायिक प्रगतियां राजनीतिक प्रगतियों से अधिक निकृष्ट होती हैं। शासन का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया जाता है कि वह इस बात को देखे कि उसके अफसर जो जनता की सेवा के लिये नियत किये गये हैं ऐसे कार्यों से पृथक रहें, जिनसे जनता में अनैक्य, घृणा और गड़बड़ उत्पन्न हो।"

सार्वदेशिक सभा की ओर से इस समाचार का प्रबल प्रतिवाद करते हुए एक विस्तृत पत्र अंडमान के चीफ कमिश्नर महोदय तथा केन्द्रीय सरकार को भेजा गया है। यह पत्र आगामी अंक में प्रकाशित किया जायगा। आशा है यह शरारत प्रारम्भ में ही कुचल दी जायगी।

निस्सन्देह आर्य समाज और पौराणिकों में प्रारम्भ से ही अनेक सैद्धान्तिक मतभेद रहे हैं जिनमें मूर्ति पूजा भी सम्मिलित है, और आपस में शास्त्रार्थ भी होते रहते हैं। इस पर भी दोनों एक दूसरे के बहुत निकट आये हुए हैं। हिन्दू जाति, विशुद्ध धर्म का दिग्दर्शन कराने और बड़े से बड़ा त्याग करके और जोखिम उठा कर भी हिन्दू धर्म और जाति की रक्षा करने के लिये आर्य समाज की ऋणी है और रहेगी। हिन्दू जाति की चिन्ता और अचिन्त्य सेवा के कारण हिन्दू लोग शत्रु और मित्र में पहचान करना जान गये हैं और वे आर्य समाज को अपना सच्चा हितू समझते हैं। वे अब बहकाये नहीं जा सकते।

भारतीय विद्या भवन बम्बई द्वारा प्रकाशित Hinduism through the Ages पुस्तक के पृ० १०४ पर हिन्दू धर्म के पुनरुद्धार के लिए आर्य समाज का किस प्रकार गुणगान किया गया है :—

"The Arya samaj has played and is playing a glorious part in the regeneration of Hinduism in modern times."

अर्थात् आर्य समाज ने वर्तमान काल में हिन्दू धर्म के पुनरुज्जीवन के लिए बड़ा शानदार कार्य किया है और कर रहा है।

आर्य समाज साम्प्रदायिक संस्था न थी और न है। जिन्होंने इसे साम्प्रदायिक संस्था कह कर बदनाम करने की चेष्टा की उन्हें अनेक बार मुंह की खानी पड़ी है। जिस समाज के लक्ष्य में जाति वर्ग रंग और नस्ल के भेद भाव से शून्य प्राणी मात्र का हित हो, जिसके सत्य सिद्धान्त देश, काल के प्रतिबन्ध से मुक्त हों जिसका आधार वेद हो उसे साम्प्रदायिक कहना अपनी मूर्खता का ही परिचय देना है। ब्रिटिश शासन तक ने आर्य समाज को साम्प्रदायिक संस्था मानने या उद्घोषित करने की अदूरदर्शिता नहीं दिखलाई। अपनी गवर्नमेंट तो यह अदूरदर्शिता दिखाने ही क्यों लगी है!

कोई समय था जब कि झूठी रिपोर्ट के आधार पर ब्रिटिश गवर्नमेंट को राज्य कर्मचारियों का आर्य समाज के साथ सम्पर्क अखरता था। परन्तु आर्य समाज के सिद्धान्तों सदस्यों की भावनाओं और कार्यों से राज्याधिकारियों पर सही स्थिति प्रकट होते देर न लगी और वे राज्य के परम विश्वस्त और उपयोगी कार्यकर्त्ताओं के रूप में ऊँची से ऊँची जगहों पर पहुंचे और

काम करते रहे हैं। अब तो आर्य समाज के सम्बन्ध में न तो इस प्रकार की भ्रान्ति है, और न पैदा की जा सकती है।

बाघू के आर्य अभियोग से मुक्त

आर्य जनता और सार्वदेशिक के पाठकों को बाघू (मेरठ) का विशेष परिचय देने की आवश्यकता नहीं है। यह वही स्थान है जहां गत वर्ष आर्य समाज ने ईसाइयों के कुचक्र से जोरदार टक्कर लेकर सहस्रों हरिजनों की रक्षा की थी और ईसाई पादरियों ने चिढ़कर आर्य समाज को बदनाम करने और उन्हें झूठे फौजदारी के मुकद्मों में फंसाकर निरुत्साहित करने का असफल प्रयत्न किया था। स्वयं श्रीमती राजकुमारी अमृतकौर ने बाघू पहुंचकर आर्य समाज के विरुद्ध पर्याप्त विष उगला था जिसका आर्य जगत् ने तीव्र प्रतिवाद किया था।

ईसाई पादरी ने बाघू थाना बागपत के लेखा आदि ३ हरिजनों और आर्य समाज अग्रवाल मण्डी के दो कार्य कर्त्ताओं श्री ज्योति प्रसाद तथा श्री कर्मवीर आर्य के विरुद्ध धारा १०७ भा० द० वि० के अधीन १ वर्ष तक शान्ति बनाए रखने के निमित्त ५००, ५००) की २-२ जमानतें और मुचलके लेने की दर्खास्त दी थी। बागपत के उपविभागाधिकारी ने यह मानते हुए कि वास्तविक आक्रान्ता ईसाई लोग हैं दर्खास्त अस्वीकृत करदी।

हिन्दुस्तान नईदेहली के २७ अगस्त५६ के अङ्क में प्रकाशित पूर्ण विवरण इस प्रकार है :—

इन व्यक्तियों में से लेखा आदि तीन हरिजन पहले ईसाई थे और फिर हिन्दू धर्म में दीक्षित हो गए थे। यह मामला बाघू के गिरजे के पादरी फादर लुई पीटर की रिपोर्ट पर आरम्भ हुआ था जिसमें तीन घटनाओं का उल्लेख किया गया था। पहली घटना १० मार्च की बताई जाती थी जिसके विषय में कहा गया था कि कर्मवीर ने सिवाल के गिरजे के पादरी को जो बाघू आया था, तङ्ग किया। दूसरी घटना ११ मार्च की बताई गई थी जिसमें कहा गया था कि इन लोगों ने इमरत नाम के एक ईसाई को तङ्ग किया। तीसरी घटना १३ मार्च की बताई गई थी जिसमें कहा गया था कि बाघू के गिरजे के मुन्शी एंटोनी को तङ्ग किया गया तथा उसे गाली दी गई। इनमें से सिवाल के पादरी गवाही देने के लिये बिल्कुल नहीं आए, एंटोनी ने शपथ पर बयान देने से इन्कार कर दिया तथा इमरत वाली घटना का समर्थन किसी ने नहीं किया। पुलिस के थानेदार ने यह स्वीकार किया कि बाघू के एक-दो घरों को छोड़कर शेष सब ईसाई तहसील गाजियाबाद के अन्तर्गत ग्राम मर्वी में चले गये हैं जहां कि उनको काम मिल गया है। स्वयं लुई पीटर ने स्वीकार किया कि लगभग एक मास से बिल्कुल शान्ति है।

मजिस्ट्रेट महोदय ने अपने निर्णय में प्रकट किया है कि लुई पीटर स्वयं तो हिन्दुओं और मुसलमानों को ईसाई बनाना चाहते हैं और यदि कोई हिन्दू हिन्दुओं से ईसाई धर्म ग्रहण न करने के लिये कहता है तो बुरा लगता है। ऐसी अवस्था में यह निश्चय है कि वर्तमान अभियोग लुई पीटर ने इस लिये आरम्भ कराया कि उसे यह बुरा लगा कि लेखा आदि तीन व्यक्ति पुनः हिन्दू क्यों हो गये। उन्होंने यह अभियोग इस लिये भी चलवाया कि रिंडकू ने राज्य सरकार के एक उपमन्त्री से यह शिकायत की थी कि लुई पीटर ने उसके साथ मारपीट की। इस घटना की रिपोर्ट थाने में भी लिखाई गई। इसी कारण रिंडकू तथा उसके पुत्रों के विरुद्ध लुई पीटर को शत्रुता है। पहले लुई पीटर की रिपोर्ट में रिंडकू के एक पुत्र लेखा का नाम अभियुक्तों में दर्ज किया गया था। कई दिन बाद उस रिपोर्ट में लेखा का नाम काट कर रिंडकू के दूसरे पुत्र रतीराम का नाम लिख

दिया गया जिससे रिंकू तथा उसके दोनों पुत्रों को फंसाया जा सके। आपने यह भी प्रकट किया कि लेखा के मकान में आग लगाने के आरोप में तीन ईसाई सैशन सुपुर्द है और दो गूजर युवकों के साथ मारपीट करने में नौ ईसाइयों को दो-दो वर्ष का दण्ड हो चुका हैं, जिससे प्रकट होता है कि आक्रान्ता ईसाई लोग ही है।

मजिस्ट्रेट महोदय का फैसला अपने में स्वयं स्पष्ट है। इस पर किसी विशेष टिप्पणी की आवश्यकता नहीं है।

श्री वन्शीलाल जी व्यास

यह लिखते हुये अत्यन्त दुःख होता है कि आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के मन्त्री श्रीयुत पण्डित वंशीलाल जी व्यास वानप्रस्थी हमसे सदैव के लिये वियुक्त हो गये हैं। वेद प्रचारार्थ करनूल जाते समय अपने अन्य ५ साथियों के साथ वे ३ सितम्बर १६५६ को जडचला महबूब नगर की भयङ्कर रेल दुर्घटना की बलि चढ़ गये जिससे उनका अन्त बड़ा दुःखद बन गया।

श्री व्यास जी अपनी अनथक और निस्पृह सेवाओं से मुख्यतया हैदराबाद के आर्य सामाजिक तथा सार्वजनिक क्षेत्रों में बहुत चमके। उन्होंने अपनी सेवाओं से, सदाचार और व्यवहार से अपने को सर्व साधारण में बहुत लोक प्रिय बना लिया था। आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद को तथा राज्यमें आर्यसमाज को शक्ति बनाने में उनका प्रशसनीय योग रहा। गत कई वर्षों से वे आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री पद पर कार्य कर रहे थे। गुरुकुल घटकेश्वर की स्थापना और उसका सफल संचालन उनकी अनथक लगन और आर्य समाज के प्रति उनकी निष्ठा का ज्वलन्त प्रमाण है। यदि गुरुकुल को उनका मानसिक उत्तराधिकारी कह दिया जाय तो इसमें अत्युक्ति न होगी।

श्री व्यास जी का व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक था। हैदराबाद आर्य महा सम्मेलन के अवसर पर सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों तथा कार्य कर्त्ताओं को उन्हें बहुत निकट से देखने का अवसर मिला था। उनकी भव्य मूर्ति प्राचीन काल के ऋषियों का स्मरण कराये बिना न रहती थी। उनका यन्त्रवत् काम में जुटे रहना और वह भी ढलती आयु में देखते ही बनता था। रात्रि को २-२ बजे तक प्रबन्ध की सुचारुता तथा अन्यान्य व्यवस्थाओं में प्रसित रहना उनके लिये साधारण बात थी। उनके इसी प्रकार के गुणों ने आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद तथा राज्य की आर्य जनता के हृदयों में उनके लिये विशिष्ट स्थान बना दिया था। आज हैदराबाद राज्य के आर्य जन उनके निधन पर अपने को उचित रीति से अकिंचन अनुभव कर रहे हैं।

आर्य सत्याग्रह को सफल बनाने के लिये उन्होंने पर्याप्त काम किया था। रजाकारों के अत्याचारों से हिन्दुओं की रक्षा तथा पीड़ितों की सेवा सहायता के कार्यों ने उनकी लोकप्रियता का दायरा बहुत विस्तृत कर दिया था और सभी सम्प्रदायों तथा पार्टियों के लोग उन्हें एक सम्मानित कार्यकर्त्ता और अग्रणी के रूप में देखते थे। उनकी शव यात्रा में हैदराबाद नगर तथा आस पास के लगभग २० हजार व्यक्ति सम्मिलित थे।

श्री व्यास जी तथा उनके ६ सहयोगियों के इस दुःखद निधन पर हम समस्त आर्य जगत् और सार्वदेशिक परिवार की समवेदना प्रगट करते और दिवंगत आत्माओं की सद्गति के लिये परमात्मा से प्रार्थना करते हैं।

श्री व्यास जी अपने पीछे उदात्त चरित्र और निस्पृह उल्लेखनीय सेवाओं से बना हुआ जो वातावरण अपने लिये छोड़कर गये हैं उससे उनकी कीर्ति की मधुर सुगन्ध निकलती रहेगी और उनका उदाहरण अनेक जनों को सेवा की प्रेरणा देता हुआ प्रकाश स्तम्भ का काम करता रहेगा।

—रघुनाथप्रसाद पाठक

आर्य वीर दल शाखाओं के नाम परिपत्र
आर्य वीर दल सहायता पर्व
(विजय दशमी)

प्रिय आर्य वीर बन्धु, सप्रेम नमस्ते।

सदैव की भांति विजय दशमी पर्व निकट आ रहा है परन्तु इस वर्ष हमें नई उमंग, उत्साह एवं योजनाओं के साथ इस उत्सव को मनाना है। इस अवसर पर दल के प्रति अपनी प्रतिज्ञा को पुन: स्मरण करते हुए हमें आगामी वर्ष में दल को विद्युत गति प्रदान करने का दृढ़ निश्चय करना है।

देश के नव-निर्माण में नदियों के बांधों, नहरों, कल कारखानों की अपेक्षा लाखों गुना अधिक महत्व है। देश के युवकों का शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक एवं सामाजिक उत्थान। यही वह महत्वपूर्ण कार्य है कि जिसके बनने बिगड़ने में राष्ट्र का बनना बिगड़ना निहित है। अतः 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' ही वह लक्ष्य है कि जिसकी ओर हमें आगे बढ़ना है अर्थात् स्वयं आर्य बनते हुये दूसरों को हमें आर्य बनाना है।

इस परम कल्याणकारी शुभ कार्य को हम तभी कर सकेंगे कि जब हमारे हृदयों में इसके प्रति श्रद्धा, आस्था व विश्वास हो और हम इसे राष्ट्रीय यज्ञ समझ इसमें अपने तन, मन, धन की आहुति अर्पित करें। आहुति पड़ने पर ही यज्ञ अपना चमत्कार दिखाता है। इसलिये यदि हम चाहते हैं कि दल रूपी यज्ञ की कल्याणकारी सुगन्धि देश के कोने कोने में फैले तो हमें इस पवित्र पर्व पर किसी न किसी रूप में यथाशक्ति दल की सहायता करनी ही चाहिये।

दीक्षित आर्य वीरों से—

प्रत्येक दीक्षित आर्य वीर से निवेदन है कि वह अपनी प्रतिज्ञानुसार कम से कम एक रुपया सीधा प्रधान केन्द्रीय कार्यालय, देहली को भेजना अपना परम कर्तव्य समझे। मेरा दृढ़ विश्वास है कि दीक्षित आर्य वीर मेरी इस प्रार्थना को महत्वपूर्ण समझते हुए इसके अनुकूल अवश्य आचरण करेंगे। यदि भारत के प्रत्येक दीक्षित आर्य वीर ने अपने कर्तव्य का पालन किया तो दल के इतिहास में यह एक क्रांतिकारी कदम समझा जायगा कि जिसके द्वारा दल अपने सभी स्वप्नों को क्रियात्मक रूप देने में समर्थ हो सकेगा।

कार्यक्रम—

विजय दशमी के दिन प्रातः व सायंकाल अपनी सुविधानुसार प्रत्येक नागरिक दल राष्ट्र-गान के पश्चात् ध्वजारोहण, सामूहिक गान, प्रतिज्ञा पाठ, दल सहायता भाषण, ध्वज गान आदि का कार्यक्रम क्रमशः रखेगा। यह सम्पूर्ण कार्य नगर के किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति या दल के किसी अधिकारी की अध्यक्षता में होगा। शाखाओं की दल सहायता विजय दशमी से पूर्व अपनी सुविधानुसार नगर नायक करा लेंगे, परन्तु समस्त शाखाओं की सम्मिलित दल सहायता उसी दिन होगी।

नोट—इस प्रकार संग्रहीत धन का चौथाई भाग स्थानीय, चौथाई मांडलिक, चौथाई प्रान्तीय तथा शेष चौथाई भाग सार्वदेशिक आर्य वीर दल को जायगा जो कि पर्व के पश्चात् एक सप्ताह के अन्दर अपने गन्तव्य स्थान पर नगर नायकों को अनिवार्य रूप से भेजना होगा। दीक्षित आर्य वीरों की सहायता सम्पूर्ण रूपेण प्रधान केन्द्र देहली को ही होगी।

ओम्प्रकाश पुरुषार्थी
प्रधान सेनापति
सार्वदेशिक आर्य वीर दल, दिल्ली।

सत्यं ब्रवीमि वध इत् स तस्य ॥

(ऋग्वेद)

(लेखक—आचार्य पं० नरदेव शास्त्री, वेदतीर्थ, एम० एल० ए०, ज्वालापुर)

मैं सत्य कहता हूं वह तो उसके मरने के तुल्य ही है अथवा यह तो उस का मारना ही है।

यह क्या ?

सुनिए। ऋग्वेद कहता है—

> मोघमन्नं विन्दते अप्रचेता ।
> सत्यं ब्रवीमि वध इत् स तस्य ॥
> नार्यमणं पुष्यति नो सखायम् ।
> केवलाघो भवति केवलादी ॥

उस बेसमझ के पास वह अन्न, वह धन, वह ऐश्वर्य व्यर्थ ही है—व्यर्थ क्या है वह तो उसका मरना ही है। किसका ? जिसके पास अन्न, धन, ऐश्वर्य सामग्री सब कुछ है, पर वह (नार्यमणं) जो विद्वानों के काम नहीं आती (नो सखायम्) जो मित्रों, इष्ट-मित्र, बन्धु बान्धवों के काम नहीं आती, जो कि दूसरे अन्य लोगों के काम नहीं आती जिनको उस अन्न, धन अथवा ऐश्वर्य सामग्री की आवश्यकता रहती है, अथवा पड़ती है। अन्न धन ऐश्वर्य केवल उपभोक्ता के पास पड़ा रहता है अथवा जो उपभोक्ता उस अन्नादि को केवल अपने ही काम में लाता है, बांट के उपभोग नहीं करता है।

जो केवल अपने लिये पकाता है, इतना स्वार्थी है तो केवल स्वयं ही उपभोग का पाप स्वयं अकेला भोगता है।

इसीलिए—

हमारी वैदिक प्रथा में घर में भोजन तैयार होने के पश्चात् रसोई में बनी हुई वस्तुओं में से छह भाग पृथक् भूमि पर रक्खे जाते हैं। जैसे लूले, लगड़े, अन्धों का भाग, कृमिकीटादि का भाग गौ आदि पशुओं का भाग इत्यादि।

यह माना कि भगवान् प्रत्येक के कर्मफलानुसार सबको उपभोग की सामग्री देता है तो क्या इसका अर्थ यह थोड़े ही है कि वही केवल उपभोक्ता बना रहे जिनके पास नहीं है उनको उन में से कुछ न मिले। जो निर्घृण केवल अपना ही ध्यान रखते हैं वे पापी होते हैं। केवल अपने ही उपभोक्ता बनने से वह उस भोग के कारण स्वयं ही पापी बन जायगा। इस लिए संसार में आकर प्रत्येक व्यक्ति, गृहस्थी इस बात का ध्यान रक्खे कि अपने पास जो वस्तु है, उसका उपभोग लेकर शेष अन्यों को दे देवें। इस प्रकार उस देने वाले का भी अधिकार हो जाता है, जो वस्तु अपने पास नहीं उसको अन्यों से ले सके। इस प्रकार उपभोग्य वस्तुओं का स्वार्थ त्याग पूर्वक उपभोग करने से संसार में वैयक्तिक, कौटुम्बिक सामुदायिक विपत्तियां नहीं आतीं। हमारे वैदिक साम्यवाद में केवल ऊपरी साम्यवाद, ऊपरी समता का कोई मूल्य नहीं। मूल्य है सम-बुद्धि का जिसमें सब व्यक्ति अन्यों के सुख दुःखों को भी अपने सुख दुःखों के समान समझते हैं, इस लिए दान, आदान प्रदान की सुन्दर व्यवस्था हमारे समाज का मुख्य अङ्ग माना जाता रहा है। यह आर्य जाति सहस्रों वर्ष की विपत्ति परम्परा में से जो बची रही इसका मुख्य कारण हमारी स्वा

हैं। परमात्मा प्रकृति से जगत् की रचना करता है। सृष्टि रचने का उद्देश्य परमात्मा के सृष्टि कर्तृत्व की सार्थकता । अविद्या के कारण जीव बद्ध रहता है जो पाप का स्रोत होती है। अविद्या के कारण लोग परमात्मा से भिन्न पदार्थों की उपासना करते हैं। अविद्या के कारण ही लोगों का बौद्धिक विकास कुण्ठित होकर उन्हें दुःख मिलता है। जीव की दुःखों से निवृत्ति और नियत समय तक परमात्मा का साक्षात्कार और उसके आनन्द में निमग्न रह चुकने के बाद जीव पुनः जन्म लेता है। जीव कर्म करने में स्वतन्त्र परन्तु फल भोगने में परमात्मा की व्यवस्था से परतन्त्र रहता है। सुख विशेष का नाम स्वर्ग और दुःख विशेष का नाम नर्क है।

(३) पक्षपात रहित न्याय और सत्य का (मन, वचन और कर्म से) आचरण धर्म है। अर्थात् वेद में निहित परमात्मा की आज्ञा का पालन करना। धर्म से प्राप्त धन अर्थ और अधर्म से प्राप्त धन अनर्थ कहलाता है। धर्म से उपार्जित धन से मर्यादित सुख भोग काम कहलाता है। व्यक्ति के गुण कर्म के अनुसार वर्णाश्रम का निश्चय होता है। बुद्धिमान विद्वान देव कहाते हैं। विद्वानों और बुद्धिमानों, पिता, माता, आचार्य, न्यायकारी शासक, धर्मात्माओं पतिव्रता स्त्रियों तथा पत्नीव्रत पुरुषों का आदर होना चाहिये। मूर्खों और अज्ञानियों को असुर दुष्टों एव पापियों को राक्षस और महापापियों को पिशाच कहते हैं। वेद और शास्त्रों के विधान के अनुसार पारस्परिक स्वीकृति से पुरुष और स्त्री का मिलन विवाह कहलाता है। प्राचीन पद्धति के अनुसार सन्तानोत्पत्ति के लिये स्त्री पुरुष का अस्थायी सयोग नियोग कहलाता है जिसका अत्यन्त असाधारण अवस्थाओं में आश्रय लिया जाता है।

परमात्मा की स्तुति, प्रार्थना और उपासना, शुभ कर्मों का अनुष्ठान, ब्रह्मचर्य से सत्ज्ञान की प्राप्ति, विद्वानों और धर्मात्माओं का सत्संग, मन, वचन और कर्म की पवित्रता इत्यादि २ मोक्ष प्राप्ति के साधन हैं।

परमात्मा की उपासना के तीन अंग हैं—स्तुति प्रार्थना और उपासना। परमात्मा के गुणों को अपने जीवन में धारण करने और परमात्मा के प्रति प्रेम उत्पन्न करने के लिये स्तुति की जाती है। उच्चतम ज्ञान और प्रसादों के लिये परमात्मा से प्रार्थना करना 'प्रार्थना' कहलाती है। योग के द्वारा परमात्मा का सान्निध्य प्राप्त करना, अपने जीवन को पवित्र बनाना—उपासना कहलाती है। परमात्मा की प्रार्थना सगुण और निर्गुण दो प्रकार की होती है। सगुण उपासना में मनुष्य को अपने को परमात्मा और उसकी इच्छा पर छोड़ देना होता है और परमात्मा के उन गुणों को धारण करना होता है जो उसके स्वरूप से मेल खाते हैं। निर्गुण उपासना में अपने को परमात्मा के अर्पण किया जाता है और वे दोष छोड़ने पड़ते हैं जो उसके स्वरूप से मेल नहीं खाते।

(५) जिन अनुष्ठानों से मनुष्य का शारीरिक मानसिक और आध्यात्मिक उत्थान होता है वे सस्कार कहलाते हैं। गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि तक १६ संस्कार होते हैं। उनका अनुष्ठान सब के लिये अनिवार्य है। परन्तु अन्त्येष्टि संस्कार के पश्चात् और कुछ नहीं किया जाना चाहिये।

मानव धर्म की रूप-रेखा

[लेखक—श्रीयुत प० सत्यव्रत जी शास्त्री]

(२)

धर्म शब्द की दार्शनिकता

१—महादार्शनिक कणाद मुनि ने कितने थोडे संक्षिप्त एवं गम्भीर शब्दों में धर्म की व्याख्या की है—

"यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धि स धर्मः"

वैशेषिक १ २

दो शब्दों मे ही सारे विश्व का धर्म आ गया कुछ कर्त्तव्य ही शेष नहीं रहा दो टूक निर्णय कर दिया। यह है वैज्ञानिक चमत्कार और मस्तिष्क का विकास बस जिन साधनों से कर्त्तव्यों से लोक और परलोक की समुन्नति हो वही धर्म है। लोकोन्नति में चक्रवर्ती राज्य तक आ जाता है उसकी प्राप्ति भी धर्म है। पारलौकिक उन्नति में मोक्ष की प्राप्ति जो मनुष्य जीवन का परम पुरुषार्थ है—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष मे से अन्तिम लक्ष्य है वह भी सम्मिलित है।

२—"योग्यता वच्छिन्ना धर्मिणः शक्ति रेव धर्मः"

योग सूत्र ३-१४

योग्यता युक्त शक्ति ही धर्म है—अर्थात् जिस पदार्थ में वह शक्ति रहती है जिसके कारण वह सत्ता है—जिसके न होने से पदार्थ की वह सत्ता ही नहीं रहती। इस शक्ति का नाम ही धर्म है।

"चोदना लक्षणोऽर्थो धर्मः" (जैमिनि)

जिसके द्वारा लोक और परलोक की अभ्युन्नति के साधक शुभ कर्मों के अनुष्ठान की प्रवृत्ति में प्रेरणा प्राप्त हो वह धर्म है। धर्म वस्तु के स्वाभाविक गुण तथा कर्त्तव्य के अर्थों में भी प्रयुक्त होता है। जैसे अग्नि का धर्म—प्रकाश करना और किसी वस्तु को जलाना है।

बिना इन गुण धर्मों के अग्नि अग्निही नहीं रह सकती। राजाका धर्म प्रजा का पालन, पोषण करना है। "राजा प्रकृति रञ्जनात्॥ बिना इस कर्त्तव्य पालन रूप धर्मके राजा राजा नहीं कहाजा सकता। जगत् प्रसिद्ध मानव धर्म शास्त्र मनुस्मृति मे धर्म के दश लक्षण कर्त्तव्य रूप से प्रसिद्ध हैं।

"धृतिः क्षमा दमोऽस्तेय शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशक धर्मलक्षणम्॥"

मनु अ० ६ ९२

१ धृति धैर्य रखना आपत्ति मे न घबराना दृढ़ रहना सहनशील होना स्थिर रहना है।

२ क्षमा—शक्ति होने पर अपराध को सहना उसके बदले की भावना न रखना, प्रत्युत अपकार को प्रसन्नता से सहन करना।

३ दम —मन को प्राकृतिक प्रलोभनों से रोकना उनमें आसक्त न होने देना।

४ अस्तेय—मन, वचन, कर्म से किसी भी पराई वस्तु को लेने की इच्छा न करना दूसरे के सत्व का ग्रहण न करना अस्तेय कहाता है।

५ शौच—अन्त और बाह्य शुद्धि, स्वच्छता पवित्रता अर्थात् शारीरिक पवित्रता और मानसिक पवित्रता रखना। मन, वचन, कर्म की पवित्रता।

६ इन्द्रिय निग्रह —इन्द्रिय को वश में रखना,

वासनाओं को वृत्ति से हटाना, किसी भी बुरे हानिकारक विषय की ओर न जाने देना किन्तु सदैव कल्याणकारी विषयों में [illegible] इन्द्रिय-निग्रह कहाता है।

७-धी—बुद्धि-ज्ञान की वृद्धि करना मनुष्य में बुद्धि ही एक ऐसी वस्तु है जिसके द्वारा उसका उत्थान और पतन सम्भव है। मनुष्य का बुद्धिमान होना आवश्यक है।

८-विद्या—किसी भी वस्तु के यथार्थ ज्ञान को विद्या कहते हैं। विद्या वह है जो धर्म और सदाचार में श्रद्धा उत्पन्न करे वास्तव में अध्यात्म विद्या ही वास्तविक विद्या है।

९-सत्य—सदा सत्य का व्यवहार करना। सत्य मानव जीवन का एक विशेष अङ्ग है। सत्य से बढ़कर या उसके समान अन्य कोई धर्म ही नहीं है। सत्य ही सनातन धर्म है। हृदय की सरलता से यथा सम्भव यथार्थ भाषण करना ही सत्य समझा गया है।

१०-अक्रोध—किसी पर कभी भी क्रोध न करना "मन के विरुद्ध कार्य होने पर जो एक ज्वाला-मयी मनोवृत्ति उत्पन्न होती है उसे क्रोध कहते हैं।" क्रोध से मनुष्य की बुद्धि नष्ट हो जाती है। ये दश मनुष्य मात्र के कर्त्तव्य हैं।

आत्म ज्ञानं तितिक्षा च धर्मः साधारणो नृपः।

यहां आत्म ज्ञान और तितिक्षा को साधारण धर्म कहा गया है। याज्ञवल्क्य ने भी अपनी स्मृति में—

इज्याचार दमा हिंसा दानं स्वाध्याय कर्म च।
अयं तु परमो धर्मो यद्योगेनात्म दर्शनम्॥

यज्ञ, आचार, व्यवहार, दम, अहिंसा, दान, स्वाध्याय कर्म को धर्म और आत्म दर्शन को परम धर्म कहा है।

यदि इन समस्त लक्षणों को, कर्त्तव्यों को धर्म नाम से व्यवहृत किया जाय तो क्या आपत्ति है क्या अनर्थ हो सकता है? इनके पालन करने से, इनका अनुसरण करने से मनुष्य समाज ही नहीं किन्तु समस्त राष्ट्र समुन्नत हो सकता है। उसकी लौकिक और पारलौकिक उन्नति हो सकती है। जो मानव जीवन का ध्येय है। परम लक्ष्य है। परम पुरुषार्थ है। इसके पालन से न देश द्रोह है न जाति द्रोह। इसी प्रसङ्ग में भगवान् मनु धर्म का और भी संक्षिप्त स्वरूप बताते हैं—

श्रुतिः, स्मृतिः,सदाचारःस्वस्य च प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधंप्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्॥

मनु: २—१२॥

श्रुति के अनुकूल होने पर स्मृति प्रतिपादित सदाचार पूर्वक जो शिष्ट परम्परा से आचार प्रचलित हैं उनके आधार पर अपने आत्मा को जो प्रिय हो वही धर्म है।

"आचारः परमो धर्मः" सदाचार को ही परम धर्म कहा है। पुनः तीसरे स्थान पर दशम् अध्याय में—

अहिंसा सत्य मस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
एतत्सामासिकं धर्मं चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन् मनुः॥

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, चोरी न करना—शौच इन्द्रिय निग्रह जितेन्द्रिय होना यह संक्षेप से चारों वर्णों का धर्म है। इस धर्म के ही—

धर्मःश्रेयः समुद्दिष्टं श्रेयोऽभ्युदय लक्षणम्।
सतुपञ्चविधः प्रोक्तो वेदमूलः सनातनः॥१॥
वर्णधर्मः स्मृतस्त्वेक, आश्रमाणामतः परम्।
वर्णाश्रम स्तृतीयस्तु गौणो नैमित्तिक स्तथा॥२

अर्थात् शास्त्र विहित धर्म श्रेय रूप कहा गया है और श्रेय अभ्युदय स्वरूप है इस प्रकार वेद मूलक होने से धर्म ५ पांच प्रकार का है—
१. वर्ण धर्म, २.आश्रम धर्म, ३.वर्णाश्रमधर्म,गुण-

धर्म, (गौण धर्म) ५ नैमित्तिक धर्म अर्थात् प्रायश्चित्त धर्म ये पांच भेद किये गये हैं।

"धर्म पञ्चक विवेचन"

१-वर्णत्वमेक माश्रित्य यो धर्मः संप्रवर्तते।
वर्णधर्मः स उक्तस्तु यथोपनयनं नृप ॥१॥

अर्थात् केवल वर्ण मात्र को आश्रय करके जो धर्म प्रवृत्त होता है वह वर्ण धर्म है। जैसे उपनयन (यज्ञोपवीत संस्कार आदि)।

२-यस्त्वाश्रमं समाश्रित्य अधिकारः प्रवर्तते।
स खल्वाश्रम धर्मःस्याद् भिक्षादण्डादिको यथा

अर्थात् जो धर्म केवल आश्रम का आश्रय करके अधिकार रूप से प्रवर्तित होता है वह आश्रम धर्म कहलाता है। जैसे भिक्षा करना और दण्ड धारण करना।

३-वर्णत्वमाश्रमत्वंच योऽधिकृत्यप्रवर्तते।
स वर्णाश्रम धर्मस्तु मौंज्याद्या मेखलायथा॥३

जो धर्म वर्ण तथा आश्रम दोनों का आश्रय करके प्रवर्तित होता है वह वर्णाश्रम धर्म कहलाता है। जैसे मौञ्जीबन्धन आदि, मेखला रूप धर्म।

४-यो गुणेन प्रवर्तते गुण धर्मः स उच्यते।
यथा मूर्द्धाभिषिक्तस्य प्रजानां परिपालनम् ॥४

जो धर्म किसी गुण के आश्रय से प्रवर्तित होता है वह गुण धर्म कहाता है। जैसे राज्याभिषेक, क्षत्रिय का प्रजा पालन करना।

५-निमित्तमेक माश्रित्य यो धर्मः संप्रवर्तते।
नैमित्तिकः स विज्ञेयः प्रायश्चित्त विधिर्यथा

जो धर्म केवल निमित्त के आश्रय से प्रवर्तित होता है उसको नैमित्तिक जानना चाहिए। जैसे पाप निवृत्ति के लिए प्रायश्चित्त रूप धर्म। यही धर्म पंचक है।

इस प्रकार गीता, महाभारत में और मन्वादि अन्य स्मृति शास्त्रों में आपस्तम्बादि धर्म सूत्रों में धर्म शब्द के द्वारा अनेक कर्तव्यों का बहुत विस्तार से विशद वर्णन किया गया है। जैसे आध्यात्मिकता, अहिंसा, भूत दया, दान सन्तोष, प्रेम, सहानुभूति, सहन शीलता, उदारता सभ्यता सरलता, नम्रता, सज्जनता, स्वतन्त्रता, शमदम, तितिक्षा, तप, त्याग, परोपकार आदि अनेक विधि कर्त्तव्यों को धर्म नाम से व्यवहृत किया है। यही धर्म की विशालता है।

चुने हुए फूल

—जो बात न्यायानुकूल हो वह धर्म के विरुद्ध नहीं हो सकती।

—बुद्धि के लिये धर्म उतना ही आवश्यक होता है जितनी बुद्धि धर्म के लिये।

—धर्म का मुख्य काम है प्रेम प्रेरणा, आदर्श और महत्त्वाकांक्षा को विकसित करना।

—संसार में धर्म सर्वोत्तम कवच और निकृष्टतम लबादा होता है।

—हृदय में धर्म के बिना बुद्धि का संस्कार सभ्य बर्बरता होती है।

— जो जीवन परमात्मा और मनुष्य के निरीक्षण को सहन कर सके वह धर्म का सच्चा प्रमाण पत्र होता है।

महर्षि—जीवन

शंका समाधान

आर्य भाषा से प्रेम

हरिद्वार में एक दिन महाराज अपने आसन पर बैठे सत्संगियों को समझा रहे थे। बीच में एक सज्जन ने निवेदन किया "यदि आप अपनी पुस्तकों का अनुवाद कराके फारसी अक्षरों में छपवा दें तो पंजाब आदि प्रान्तों में जो लोग नागरी अक्षर नहीं जानते उनको आर्य धर्म के जानने में बड़ी सुविधा हो जाय।"

महाराज ने उत्तर दिया "अनुवाद विदेशियों के लिये हुआ करता है। नागरी के अक्षर थोड़े दिनों में सीखे जा सकते हैं। आर्य भाषा का सीखना भी कोई कठिन काम नहीं है। फारसी और अरबी के शब्दों को छोड़कर ब्रह्मावर्त्त की सभ्य भाषा ही आर्य भाषा है। यह अति कोमल और सुगम है। जो इस देश में उत्पन्न होकर अपनी भाषा के सीखने में कुछ भी परिश्रम नहीं करता उससे और क्या आशा की जा सकती है? उसमें धर्म लग्न है इसका भी क्या प्रमाण है? आप तो अनुवाद की सम्मति देते हैं परन्तु दया-नन्द के नेत्र तो वह दिन देखना चाहते हैं जब काश्मीर से कन्या कुमारी तक और अटक सेकटक तक नागरी अक्षरों का ही प्रचार होगा। मैंने आर्यावर्त्त भर में भाषा का ऐक्य सम्पादन करने के लिये ही? अपने सकल ग्रन्थ आर्य भाषा में लिखे और प्रकाशित किये हैं।

आर्यजनों में नमस्ते का प्रचार होना चाहिए

श्री इन्द्रमन जी ने स्वामी जी से निवेदन किया 'आप परस्पर 'नमस्ते' कहने का आदेश करते हैं परन्तु हमने पहले जय गोपाल' शब्द चलाया था और फिर 'परमात्मा जीते' कहना आरम्भ कर दिया। पहले शब्दों पर ही लोगों ने बहुतेरे कटाक्ष किये थे। अब यदि 'नमस्ते' शब्द चलाया तो लोग हमारी खिल्ली उड़ाने लग जायेंगे। वैसे भी देखें तो मेल मिलाप में 'परमात्मा जीते' ऐसा कहना बहुत ही उचित है। छोटा तो बड़े को 'नमस्ते' कहता अच्छा लगता है परन्तु पिता पुत्र को, स्वामी नौकर को और राजा अपने चपरासी को 'नमस्ते' कहे यह बात शोभा नहीं देती।'

स्वामी जी ने कहा—'इन्द्रमन जी। अभिमानी पुरुष बड़ा नहीं होता बड़ा वही है जिसने अपने अहंकार को जीता। जो वास्तव में बड़े हैं वे अपने बड़प्पन को आप प्रकट नहीं किया करते। हमारे पूर्वजों में जितने भी ऋषि महर्षि और राजे महा-राजे हुए हैं उनमें से एक ने भी अपने मुख से अपनी बड़ाई नहीं बताई। 'नमस्ते' का अर्थ पांव पकड़ना नहीं है। इसका अर्थ है सम्मान-सत्कार। सभी ऊँच नीच और छोटे-बड़े मेल मिलाप में सम्मान-सत्कार के भागी हैं। जब कोई मनुष्य आपके आवास पर आता है तब उस समय आपके हृदय में क्या भाव उत्पन्न होता है?

इन्द्रमन जी इस पर मौन साधे रहे। तब स्वामी जी ने फिर कहा ' महाशय। इस बात को सभी जान जाते हैं कि जब कोई पूज्य और प्रतिष्ठित मनुष्य घर पर आता है तो उसे देख कर झुककर सम्मान देने को जी चाहता है। पुत्र से प्यार करने का भाव उत्पन्न होता है। नौकर चाकरों को अन्न जल और आइये, बैठिये आदि शब्दों से सत्कृत करने की हृदय प्रेरणा करता है। ऊपर कहे सारे भावों का प्रकाश 'नमस्ते' से तो हो जाता है परन्तु उस समय परमात्मा का नाम लेना असगत है। आत्मगत भावों के विपरीत है। जो भाव भीतर हो उसी को बाहर प्रकाशित करना शोभा देता है।

पुरातन काल मे आर्य लोग नमस्ते' ही कहा करते थे। यह शब्द वेदों में भी अनेक बार आया है। आर्य जनों मे इसी का प्रचार होना चाहिये।

रक्षाबन्धन

रक्षा बन्धन के दिन बहुत से तरुण और वृद्ध राखी बाधने क लिये स्वामी जी के निकट आये। महाराज ने मुस्कराकर कहा कि 'आप लोग अपनी देश रीति तक भूल गये हैं। पूर्व काल मे बूढे रक्षा बाधे नहीं फिरते थे। उस समय इस पर्व के दिन राजा की ओर से सब विद्यार्थियों के हाथ मे राखी बाधी जाती थी। उससे यह सूचित किया जाता था कि इनकी रक्षा करना राजा प्रजा दोनों का कर्तव्य है।"

पुनर्जन्म

भादों सुदी स० १६३६ को बरेली मे ईसाइयों की पुनर्जन्म की शकाओं का समाधान करते हुए स्वामी जी ने कहा 'जीव और जीव के स्वाभाविक गुण कर्म और स्वभाव अनादि हैं। न्यायादि परमेश्वर के गुण भी अनादि हैं। जो मनुष्य जीव के गुणों की उत्पत्ति मानता उसे उसका नाश भी मानना पड़ेगा। कारण के बिना कार्य का होना असम्भव है इसलिये उसे सिद्ध करना होगा कि सत्य का कारण क्या है? जीव के शुभाशुभ कर्म प्रवाह से अनादि हैं उनका यथावत् फल देना ईश्वराधीन है। स्थूल और कारण शरीर के बिना जीव सुख दु ख का भोग नहीं कर सकता। इसलिये उसका बार २ देह धारण करना आवश्यक है। प्रत्येक शरीर में क्रियावान होने के कारण जीव नये २ क्रियमाण सचित और प्रारब्ध कर्म उत्पन्न करता रहता है। दिन और तिथि के बार २ लौट आने से भी प्रत्यक्ष सिद्ध है कि सृष्टि में फिर २ आने का नियम विद्यमान है।

इस पर एक पादरी महाशय ने कहा पुनजन्म का सिद्धान्त है तो पुरातन परन्तु अब पढी लिखी जातिया इसे छोडती चली जाती हैं। यह विचार अब मिट रहा है। मैं स्वामी जी से पूछता हू क्या ईश्वरीय आत्मा के बिना अन्य आत्माए भी अनादि हैं? वे आत्माए कभी जन्म के चक्र से पार भी होंगी? क्या पुनर्जन्म दण्ड भोग के लिए ही है? परमात्मा सदा सगुण ही रहता है अथवा कभी निर्गुण भी होता है? पुनजन्म उसी के नियम पर निर्भर करता है अथवा किसी अन्य नियम पर?'

स्वामी जी ने उत्तर दिया 'जीव ईश्वर और प्रकृति ये तीन अनादि पदार्थ हैं। जीव पुनर्जन्म से कभी निवृत्त न होंगे। जन्म का होना सुख दु ख दोनों के लिये है। ईश्वर सदा ही सगुण और निर्गुण है। कोई जीव जैसा पुण्य पाप करता है उसे वैसा ही अपने अटल न्याय से फल प्रदान करता है।' पादरी महाशय ने कहा ' इस पुरानी शिक्षा को सुधरी हुई जातिया छोडती जाती हैं।" स्वामी जी ने कहा "मैं आपसे पूछता हू कि क्या नवीन शिक्षा सर्वांश मे सत्य है? क्या पुरानी शिक्षा मानने के योग्य नहीं है? यदि ऐसा है तो बाईबिल की शिक्षा भी तो आज की अपेक्षा

पुरानी है तब तो यह भी आपको छोड़नी होगी।"
पादरी महाशय निरुत्तर हो गये।

क्या ईश्वर देह धारण कर सकता है ?

एक पादरी ने स्वामी जी महाराज से प्रश्न किया 'मनुष्य और परमात्मा के आत्मा में बहुत से गुणों में समानता है। इनके दयादि गुण आपस में मिलते हैं इस अवस्था में जब हम देह धारण करते हैं तो ईश्वर क्यों न देह धारण करेगा ?" स्वामी जी ने 'समालोचना की कि पादरी महाशय ने कहा है कि ईश्वर देह धारण कर सकता है। मैं पूछता हूँ, उसे ऐसा करने की क्या आवश्यकता है ? दूसरे उसकी इच्छा का कोई नियम है वा नहीं ? तीसरे वह निराकार है अथवा साकार ? चौथे वह सर्वव्यापी है वा एकदेशी ? जीव और ईश्वरके दयादि गुण क्या पूर्णता से मिलते हैं ? यदि गुण में दोनों बराबर हैं तो दोनों परमेश्वर सिद्ध हुए। ईश्वर जब देह धारण करता है तो वह अखिल स्वरूप से देह में आता है अथवा अंश २ होकर ? यदि अंश का आना मानते हो तो परमात्मा नाशवान सिद्ध हो जायगा, यदि यह मानो कि परमात्मा अपने सकल स्वरूप से शरीर में प्रवेश करता है तो वह शरीर से छोटा सिद्ध हुआ। अल्प महान् का ईश्वर नहीं हो सकता। देह धारी हो जाने से ईश्वर और जीव दोनों समान हो जाते हैं। दोनों में कुछ भी भिन्न भेद न रहने से उनमें से एक को ईश्वर मान लेना सर्वथा अयुक्त है। यदि ईश्वर एक देशी है तो वह एक स्थान में रहता है अथवा सर्वत्र घूमता फिरता है। यदि उसे एक स्थान में माना जाय तो उसे सर्वत्र का ज्ञान नहीं हो सकता। उसका घूमते रहना मानना भी दोष युक्त है। फिर उसका अटक जाना और दूसरे पदार्थों से टकरा कर आघात प्रत्याघात का सहन करना भी मानना पड़ेगा।

परमात्मा सृष्टि की रचना निराकार स्वरूप से करता है अथवा साकार से ? निराकार स्वरूप से रचना मानना तो ठीक है परन्तु यदि साकार स्वरूप से सृष्टि की रचना मानी जाय तो युक्तिसंगत नहीं है। साकार ईश्वर से सृष्टि का रचा जाना सर्वथा असम्भव है। जब त्रसरेणु ही साकार की पकड़ में नहीं आवे तो वह साकार ईश्वर, सृष्टि के कारण रूप परमाणुओं को कैसे वशीभूत कर सकेगा।"

क्या ईश्वर पाप क्षमा करता है ?

श्री महाराज से एक पादरी महोदय ने पूछा 'ईश्वर दयालु है फिरक्या पाप क्षमा नहीं करता?' स्वामी जी ने उत्तर दिया 'मैं यह मानता हू कि ईश्वर के साथ हमारा सम्बन्ध राजा और पिता के समान है परन्तु वह अन्याय के लिये नहीं है। ईश्वर में अन्याय नहीं है, इसलिये वेदादि शास्त्रों में पाप का क्षमा करना नहीं कहा। ईश्वर पाप क्षमा कर देता है यह मानने से वह पाप का बढ़ाने वाला सिद्ध हो जाता है। क्षमा की आड़ में पापी जन पाप कर्म करने में उत्साहित हो जाते हैं। परमात्मा सर्वज्ञ है। इसी लिये उसके कर्मों में भूल और भ्रांति नहीं होती। वह अपने स्वभाव से उल्टा कार्य नहीं करता। न्याय उसका स्वभाविक गुण है। इससे उल्टा कर्म क्षमा कर देना, भला वह कब करने लगा है ? परमात्मा दयालु ठीक है परन्तु उसका न्याय और दया एक ही प्रयोजन को सिद्ध करते हैं, यदि एक डाकू को क्षमा कर दिया जाय तो वह कर्म दया में न गिना जायगा। वह सहस्रों मनुष्यों की हत्या करने वाला दस्यु क्षमा के अनन्तर चौगुने साहस से भ्रूण हत्या तक करने लगेगा। ईश्वर की दया का अर्थ जो आपने समझा है वह यथार्थ नहीं।"

———

आर्यसमाज तथा पंजाब की भाषा योजना

(प्रिंसिपल श्रीयुत भगवानदास जी, डी० ए० वी० कालिज अम्बाला)

आर्यसमाज के प्रवर्त्तक ऋषि दयानन्द गुजराती थे अथवा उन्होंने हिंन्दी न जानने वाले प्रदेश में जन्म लिया। उनको हिन्दी सीखने में बहुत कठिनाइयां हुई पर इस बात से वे डरे नहीं और उन्होंने राष्ट्र भाषा के लिए बहुत पुरुषार्थ किया। उनका यह पुरुषार्थ इस बात का प्रमाण है कि ऋषि दयानन्द सच्चे राष्ट्र पुरुष थे और वे देश-प्रेम तथा राष्ट्रभाषा प्रेम के लिए अपनी मातृभाषा को भी त्याग सकते थे। एक दूरदर्शी नेता के नाते वे यह भली भांति समझते थे कि कभी न कभी भारत स्वतन्त्र होगा और तब हिन्दी ही राष्ट्र भाषा होगी। उन्होने फिरंगी सरकार को कई बार हिन्दी भाषा तथा देवनागरी लिपि को प्रोत्साहन देने के लिए कहा तथा जनसमूह से भी मांगें करवाई। वे भारत को स्वतन्त्र देखना चाहते थे इसी लिये उन्होंने आयसमाज की नींव तथा कार्यक्रम में राष्ट्रोत्थान तथा स्वच्छ और निर्मल राष्ट्रीय विचारों को भी स्थान दिया। जो भी अनर्गल विदेशो बात इस देश में होती थी उसका उन्होंने घोर विरोध किया और वे समूचे देश को एक मान कर इसको एक सूत्र में सगठित देखना चाहते थे और यही बातें उन्होंने अपने पद चिन्हों पर चलने वालों को बारम्बार कहीं।

ऊपर से यह स्पष्ट है कि आर्य समाज के लिये देशकीएकता तथा निस्वार्थ भावनायुक्त राष्ट्रीयता एक गौरव की बात है। आर्यसमाज का सारा कार्यक्रम इस बात का द्योतक है कि उसने देश के कौने २ को अपनाया है और इस अपनाने में सदैव निस्स्वार्थ भाव को मुख्य रखा है। आर्य समाज का प्रचार पूर्ण स्वदेशी है तथा देशभक्ति की गंगा है। यह उन देश प्रेमियों को जो इस समूचे देश को अपनी मातृभूमि समझते हैं बहुत स्नेह की दृष्टि से देखता है। अटूट धार्मिक दृष्टिकोण होते हुए भी यह सरकारकी साम्प्रदायिकतानिरपेक्ष नीति को अच्छा समझता है। आर्य समाज सब देशवासियों को समान दृष्टि से देखता है तथा सब को समान अधिकार देने का पक्षपाती है। न केवल यह लिखने तथा प्रचार करने की स्वतन्त्रता में विश्वास करता है अपितु अपनी वेदी पर से भी विपक्षियों की बात शान्ति से सुनता है। एक भी उदाहरण ऐसा नहीं दिया जा सकता जिससे कि किसी कट्टर पंथी आर्यसमाजी ने किसी विपक्षी को कष्ट दिया हो यह आर्य समाज ही है जो अपनी वेदी कई बार अन्य मतों के प्रचारकों को दे चुका है। आर्य समाज केवल मात्र तर्क शक्ति का शस्त्र ही रखता है और इसकी विचार धारा साम्प्रदायिकता तथा सकीर्ण भावनाओं से ऊपर है। इसका प्रमाण है इसका विधान जो पूर्णरूपेण गणतन्त्रीय है। इसका दृष्टिकोण वैदिक समाजवाद है। जब भी देश के किसी कोने मे भी कोई पीड़ा या आपत्ति हुई तो आर्यसमाज का धन तथा पुरुषार्थ हिन्दू सिक्ख, मुसलमान ईसाई सब के लिये समान था। एक भी उदाहरण नहीं दिया जा सकता कि जिसमे किसी आर्य समाजी दानी ने केवल आर्यसमाजो भूखों तथा नंगों को दान दिया हो। इन सब बातों के होते हुए भी आर्यसमाज ने अपने आप को आज के राजनैतिक क्षेत्र से दूर रखा। अपनी देश सेवाओं को करते हुए जो हानि इसको पहुँची है उसके लिए इसने न कभी पुरस्कार तथा न ही किसी और प्रलोभन की आशा की। न यह अपने लिए कोई अलग स्थान मांगता है

और न ही अन्य देशवासियों से अधिक अधिकार। हाँ, यह बात अवश्य है कि इसने देश वासियों को जगाया और उनके निराशावाद को मिटा कर उनको आशावादी बनाया। इसलिये जब भी यह देश का अहित होते देखता है तो उन संस्थाओं का, जो कि देश को हानि पहुँचाना चाहती हैं: विरोध करता है। इस विरोध कार्य के अन्दर वह पूर्ण सहनशीलता तथा अहिंसात्मक विचार ही देता है क्या यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि पिछले सात आठ वर्षों से आर्य समाज पर कई प्रकार के प्रहार होने पर भी यह शान्त तथा गम्भीर रहा पर जब सर्व साधारण से चुने हुए डिप्टी स्पीकर ही इस संस्था के विरोध में भाषण करें तो आत्म रक्षा के लिए उत्तर देना ही पड़ता है।

आर्य समाज ने १९३१ की जनगणना में अपनी मातृभाषा हिन्दी लिखाई थी। उस समय तो आज के पंजाबी के नाम लेवाओं ने गालियां नहीं दी। १९५१ में कोई नई बात नहीं की गई तो फिर आर्य समाज पर यह आरोप क्यों लगाया जा रहा है कि उसने पंजाबी मातृभाषा को क्यों छोड़ा। मेरे विचार में आर्य समाजियों को यह आरोप मान लेना चाहिये क्योंकि एक प्रादेशिक भाषा को छोड़कर राष्ट्रीय भाषा को अपनाना पाप नहीं हो सकता। जब एक बंगाली अपनी भाषा छोड़कर हिन्दी अपनाता है या एक दक्षिण भारत वासी तामिल, तेलगू तथा मलयालम आदि छोड़कर हिन्दी पढ़ता है तो उसका मान होता है भला फिर पंजाब में गुरुमुखी छोड़ कर हिन्दी पढ़ने वाला पापी कैसे हो सकता है। निम्न-लिखित मांगों को पढ़ने से क्या यह स्पष्ट नहीं होता कि आर्यसमाज की मांगें सारे देशवासियों की मांगें हैं।

(१) सम्पूर्ण नये पञ्जाब राज्य में एक ही भाषा योजना लागू होनी चाहिए।

(२) शिक्षा संस्थाओं में शिक्षण के माध्यम का चुनाव पूरी तरह माता पिताकी इच्छा पर छोड़ देना चाहिये।

(३) किसी भी विशेष स्तर पर दोनों भाषाओं में से किसी एक भाषा का द्वितीय भाषा के रूप में पढ़ाया जाना अनिवार्य नहीं होना चाहिये।

(४) शासन के प्रत्येक स्तर पर अंग्रेजी भाषा का स्थान हिन्दी को दिया जाना चाहिये।

(५) जिले के स्तर या उससे नीचे की सरकार की सब सूचनाएं और निर्देश दोनों भाषाओं में होने चाहियें।

(६) किसी भी भाषा में प्रार्थना पत्र देने की आज्ञा होनी चाहिये। उनके उत्तर भी उसी भाषा में होने चाहियें।

(७) जिले स्तर तथा उसके नीचे के सरकारी कागजात दोनों लिपियों में होने चाहियें।

अगर ऊपरि लिखित म रने वाले साम्प्रदायिकता के दोषी हैं तथा गुरुमुखी के विरोधी हैं तो इस बिना पाप के पापी उन्हें बनना पड़ेगा। हमें ऐसे दोषी बनाने वालों को भगवान् सुमति दें।

—भाषा पवित्र वस्तु होती है। संस्कृत हिन्दी भाषावह मन्दिर है जिसमें हमारे देश की आत्मा निवास करती है। इसका हमारे जीवन से, हमारे कष्टों से, हमारे सुखों से, हमारे अभावों से और हमारी थकावटों से विकास हुआ है।

गोरक्षा आन्दोलन

गोरक्षा पर श्री जयप्रकाश नारायण के विचार

प० बंगालमें गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगाने तथा गोरक्षा के प्रश्न पर विचार करने के लिए पिछले दिनों प०बंगाल गोरक्षा समिति की ओरसे सेठ सोहनलाल जी दुग्गड़ और लाला हरदेव सहाय के नेतृत्वमें एक शिष्ट मण्डल मुझसे मिला और उसने एक स्मृतिपत्र भेंट किया।

इस अवसर से लाभ उठाकर मैं प० बंगाल की जनता और सरकार के समक्ष गोरक्षा के प्रश्न पर अपना विनम्र सुझाव उपस्थित करना चाहता हूं।

गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगाने या गोरक्षा करने के प्रश्न को आम तौर से धार्मिक दृष्टिकोण से उपस्थित किया जाता है। नतीजा यह होता है जो लोग इस विचार से सहमत नहीं होते वे इस प्रश्न को वर्तमान बुद्धिवादी युग के लिए संकीर्ण तथा अविचारणीय बता कर टाल देते हैं।

मेरे ख्याल से किसी भी सभ्यता की दृष्टि से यह उचित नहीं है कि धार्मिक भावनाओं तथा जनता की रुचि को पूर्णतः अमान्य कर दिया जाय यदि ये भावनायें गलत ढंग पर आधारित हैं तो शिक्षा और विवेक के द्वारा इनका सुधार किया जाना चाहिए, किन्तु जब तक ऐसी भावनायें मौजूद हैं तब तक अन्य धर्मावलम्बियों द्वारा ही नहीं बल्कि देश के कानून के द्वारा भी इनका सम्मान होना चाहिये। धार्मिक भावनाओं के संघर्ष से समस्या जटिल हो सकती है किन्तु मेरा ख्याल है कि इस विशेष प्रश्न पर कोई भी धर्म अपनी सहमति नहीं देगा कि पूजा और धार्मिक समारोह के लिए गाय की हत्या होनी चाहिए ऐसी परिस्थिति में यदि कानून द्वारा गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगा ही दिया जाता है तो इससे किसी भी धर्म के लोगों की धार्मिक भावना और विश्वास को किसी प्रकार आघात नहीं पहुंचना चाहिये।

यह पूछा जा सकता है कि क्या कानून के द्वारा प्रत्येक धर्म की भावनाओं का सम्मान होना चाहिये? उदाहरण के लिये यदि भारत में लाखों व्यक्ति अस्पृश्यता में विश्वास करते हैं और उसी के अनुकूल आचरण करते हैं तो क्या कानून उनकी भावना का आदर करना चाहिये?

मेरा जोरदार उत्तर स्वभावतःनकारात्मक है। यदि कोई धार्मिक कृत्य एव परम्परा मौलिक मानवीय मूल्य, मानवीय समता के विपरीत हो, जैसा कि इसमें हैं, तो किसी बुद्ध समाज में कानून को प्रभाव पूर्ण एवं लोकतंत्रिक बनाने के लिये, शैक्षणिक विधि का उसके साथ होना आवश्यक है। अन्यथा ऐसी सम्भावना है कि कानून मृत शब्दावली मात्र रह जाय।

पर क्या यह कहा जा सकता है कि गोवध पर प्रतिबन्ध से किसी मानवीय मूल्य पर आघात पहुंचता है? वस्तुतः स्थिति ठीक इसके विपरीत है; यानी गोवध पर प्रतिबन्ध स्वयं एक महान्

मानवीय मूल्य का अनुमोदन है।

गाय के सम्बन्ध में हिन्दुओं के विचार मिथ्या विश्वास, अन्ध विश्वास अथवा प्राचीन निषेधों के परिणाम नहीं हैं।

मानवीय भावना एव मानव सस्कृतिके क्रमिक विकास की विधि से होकर हमारे पूर्वज अहिंसा के उच्च विचार तक पहुँचे जो सिर्फ मानव जाति के लिये ही नहीं बल्कि समस्त जीवों के लिए लागू था। सभी जीवों के साथ क्रमिक तादात्म्य स्थान का यह महान् क्रम था। मेरी समझ से ऐसे पशु के रूप में जिसे चोट नहीं पहुचाई जानी चाहिये, गाय का चुनाव मानवीय भावना के विकास एव सभी जीवों के साथ आत्मा के तादात्म्य का प्रतीक था। हमारे जीवन का यह उच्च दर्शन सर्व साधारण द्वारा उपयोग एव हमारे पतन काल में, सम्भव है अन्ध विश्वास बन गया हो, पर कोई कारण नहीं कि प्रबुद्ध जन भी इस उच्च विचार को तिलाजलि दे दें।

इस मानवीय एव नैतिक पहलू के अतिरिक्त गोसरक्षणका आर्थिक पहलूभी खासएव आवश्यक महत्व रखता है। यहा यह भी, मैं पूर्ण विनम्रता पूर्वक कहूँगा कि हमारे देश का तथा कथित जाग्रत या आधुनिक जनसमुदाय गौ तथा गोवश उसका मल मूत्र, उसकी मृत्यु के उपरान्त उसका अवि शिष्ट अ श हमारी कृषि प्रधान एव ग्रामीण आर्थिक व्यवस्था के अभिन्न अङ्ग स्वरूप हैं।

जो मशीन एव तथा कथित वैज्ञानिक तरीकों से खेती का स्वप्न देखते हैं वे पूर्णत अवास्तविक ससारमें रहते हैं जिसका इस दे ाकी परिस्थितियों से कोई ताल्लुक नहीं है। हमारी कृषि तथा ग्रामीण आर्थिक व्यवस्था का भविष्य गाय और बैल पर मुख्यत निर्भर है। इन आर्थिक पहलुओं के कारण गोसरक्षण तथा पशुओं का नस्ल सुधार सर्वोच्च कोटि के राष्ट्रीय दायित्व का रूप ग्रहण कर लेता है। अत यह बडे खेद की बात है कि पश्चिम बगाल सरकार गोवध की समस्या के प्रति इतनी उदासीन रही है।

यह सत्य है कि गो रक्षण तथा पशुओं के नस्ल सुधार का प्रश्न गो हत्या पर प्रतिबन्ध से ही प्रारम्भ और समाप्त नहीं होता। पर इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि गोवध पर प्रति बन्ध सम्पूर्ण समस्या के समाधान के लिये अत्य धिक महत्वपूर्ण है और गोवध के इस सीधे सवाल को समस्या से सम्बन्धित अन्य प्रश्न उठाकर टालना ठीक नहीं है।

पश्चिम बग गोरक्षा परिषद् के स्मृति पत्र मे यह भी कहा गया है कि पश्चिम बगाल मे इस प्रश्न पर वाम पन्थी जनमत कांग्रेसी जनमत से अधिक उदासीन है। दु ख की बात है कि वाम पन्थी विचारधारा सहानुभूति प्रदर्शन में बहुधा अ चल विशेष तक सीमित नहीं रहती, पर इसके सोचने के ढग म कीर्ण हैं। देश की जनता जिसका ८ प्रतिशत ग्रामीण अ चल में निवास करता है के जीवन एव समस्याओं के अधिक सम्पर्क में आने से वाम पन्थी विचारधारा अपनी सकी र्णता से मुक्त हो सकेगी। वाम पन्थियों को अपनी विवेकशीलता तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का भी गौरव है। मुझे लगता है कि भारत की जैसी स्थिति है उसमें गोवध पर प्रतिबन्ध से बढकर कोई अन्य चीज अधिक वैज्ञानिक एव विवेकपूर्ण नहीं हो सकती।

अपना वक्तव्य समाप्त करने के पूर्व मैं अवश्य कहूँगा कि गोवध के प्रश्न को राजनीति से पृथक रखा जाये।

—गऊ भारतीय संस्कृति की प्रतीक है।

—गोरक्षा राष्ट्र रक्षा है।

स्वाध्याय का पृष्ठ

पुनर्जन्म का मानना क्यों आवश्यक है ?

पुनर्जन्म के सिद्धान्त का इतिहास बड़ा लम्बा और पुराना है जो भारत के बाहर तक विस्तृत है। यूनानियों के or! hio मत मे इसने स्थान पाया। पैथा गोरस, प्लेटो ऐम्पेडोक्लिज और बाद मे प्लोटिनस एव नव प्लेटोनिस्टस की इस सिद्धान्त मे आस्था थी। यहूदियों में भी यह विश्वास प्रचलित था। मुसलमानों के सूफी लेखकों ने भी इस सिद्धान्त को स्वीकार किया है। प्राचीन ब्रिटेनके पुरोहित लोग इसी की शिक्षा देते थे इस बात की पुष्टि सीजर द्वारा लिखित उनके जीवन चरित्रों से होती है। ईसाइयों के नौस्टिक और मैनीचियन सम्प्रदाय के लोग इस सिद्धान्त को मानते थे। जो लेखक इस सिद्धान्त को स्वीकार करते थे उनमें ओरीजन (origen) ब्रूनो (Bruno), वान हेलमान्ट Von Helmont, स्वीडन वर्ग swpden berg, लैसिंग lessing, हर्डर Herder और मैग टैगर्ट Mac ta ggart के नामों का उल्लेख किया जा सकता है। थियोसोफिस्ट अब भी इस सिद्धान्त का प्रचार करते हैं। पुनर्जन्म के सिद्धान्त का मानना उसे न मानने की अपेक्षा अधिक युक्ति युक्त है। प्रकृति अनादि है। आन्तरिक जीवन, आचरण और व्यक्तित्व मे सब मनुष्य भिन्न २ होते हैं। इस प्रकार के विचित्र व्यक्तित्वके पूर्ण विकासके लिए एक जीवन बिल्कुल अपर्य्याप्त होता है। एक जीवन में आत्मा के पूर्ण विकास का लक्ष्य सिद्ध नहीं हो सकता। आत्मा में असीम सुधार और विकास की क्षमता होती है। यह बात अविच्छिन्न भविष्य की सूचक है। आत्मा का शरीर धारण करना आत्मा के विशाल जीवन क्रम की एक साधारण घटना होती है। जीवन की असमानताए विचित्र बच्चों का अस्तित्व और अनुपम वैयक्तिक विशेषताए जिनका समाधान न तो वंश परम्परा से हो सकता है और न शिक्षा से, पुनर्जन्म के सिद्धान्त के अकाट्य प्रमाण हैं। इन प्रमाणों में उपर्युक्त युक्ति जोड़ी जाती है।

पुनर्जन्म के सिद्धान्त पर सबसे मुख्य आपत्ति यह की जाती है कि हमें पूर्व जन्मों की याद नहीं होती इसलिए हम इसे स्वीकार नहीं कर सकते। यह आपत्ति विशेष महत्व नहीं रखती। हमें अपने बचपन की बहुत सी बातें याद नहीं रहतीं यहा तक कि हम माता के गर्भ में रहे हमे यह भी याद नहीं रहता। इस पर भी हम इस बात से इन्कार नहीं कर सकते। सृष्टि के प्रतिकारी सिद्धान्त के लिए स्मृति आवश्यक हो सकती है परन्तु नैतिक क्रम के लिये आवश्यक नहीं होती। मृत्यु कर्मों की स्मृति का विनाश कर सकती है परन्तु उनके हम पर पड़ने वाले प्रभाव को नष्ट नहीं कर सकती

विस्मृति से आत्मा के नित्यत्व के अभौतिक प्रश्न पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

(डा० राधाकृष्णन्
का ज वन का आदश दृष्टिकोण
[Ideal View of Life] नामक ग्रन्थ
पृ० २९९)

निकट विवाह क्यों वर्जित है ?

कुछ लोगों की धारणा है कि निकट विवाहों को बचाने का नियम भौतिक आधार पर अवलम्बित है और इसका उद्देश्य निकट सम्बन्धियों के पारस्परिक विवाहों से उत्पन्न होने वाले जाति के शारीरिक पतन को रोकना है। यह बात सत्य हो सकती है परन्तु इस नियम का आधार और भी अधिक प्रबल है। इसका उद्देश्य नैतिक ह्रास और तज्जनित सामाजिक बुराइयों को रोकना है। वेन्थम ने इसका बड़ा उत्तम विवेचन किया है:—

"यदि उन निकट सम्बन्धियों के मध्य जिन्हें अत्यधिक घनिष्ठता के साथ रहना होता है अनिवार्य रोक न हो तो उन्हें पथ-भ्रष्ट होने की खुली छुट्टी मिल सकती है। घनिष्ठता, मित्रता और निर्दोष प्रेम से भयङ्कर विकारों की उत्पत्ति हो सकती है। परिवार वह स्थान होता है जहां व्यवस्था के द्वारा सुख मिलना चाहिये और सांसारिक परिश्रान्ति से आत्मा को शान्ति प्राप्त होनी चाहिये। उन विकारों पर अंकुश न रहने से परिवार प्रतिस्पर्धा और अशान्ति का केन्द्र बन सकता है। ईर्ष्या द्वेष विकारों की आंधी तथा सन्देह से विश्वास उठ सकता है। ऐसा हो जाने से हृदय की कोमल भावनाएं नष्ट हो जायेगी और घर में बदले की वह आग जल जायगी जिसकी कल्पना से ही हृदय कांप उठता है। नवयुवती कन्याओं की पवित्रता में आस्था और विवाह के प्रति प्रबल आकर्षण इन दोनों का कोई आधार न होगा। नवयुवकों और नवयुवतियों के लिये नियत सुरक्षा गृह में ही भयानक जाल बिछ जायेंगे।"

(जी० डी० बनर्जी के
सिविल कोड के सिद्धांत पुस्तक
का भाग ३ अध्याय ५ सेक्शन १
पृ० ६८-६९)

एक अद्भुत पुस्तक

आर्य इतिहास और संस्कृति आर्य जीवन के साथ समता रखते हुए शक्ति और प्रगति से सम्पन्न हैं और वह देश, काल, सिद्धान्त, मत, जाति और सम्प्रदाय की सब सीमाओं का उलंघन करते हुए बढ़ती चली जाती है। यह सबको अपनाने वाली, विश्व व्याप्त और गहराई तक पहुंचने वाली संस्कृति है जो एशिया ही नहीं अपितु समस्त संसार की भिन्न २ जातियों भाषाओं और संस्कृतियों पर अपना प्रभाव डालती रही है। लगभग १००वर्ष हुए जबकि इस महान् संस्कृति के भवनका शब्दाडम्बर प्रिय मैकाले ने हसने वाले और मूर्खता पूर्ण तानों से उपहास किया और इसे फिजूल इतिहास, फिजूल फिलासफी, फिजूल विज्ञान और फिजूल धर्म कहके उड़ा दिया उस निश्चिन्तता के साथ जो सरल हृदय बालकों में पाई जाती है। मैकालेने कहा 'जो कुछ हम अरबी और संस्कृत के महा विद्यालयों पर खर्च करते हैं वह न केवल सत्य के पक्ष के लिये सर्वथा हानिकारक है बल्कि असत्य के पोषकों को उत्पन्न करने के लिये दान है। (सन् १८३५ के Education Despatch से उद्धृत।)

मुझे इस बात की कल्पना भी न थी कि मुझे पेरिस विश्व विद्यालय के अपने एक मान्य मित्र एम० लुई रेनो की एक कमाल की पुस्तक को हाथ में लेकर एक अंग्रेज ऐतिहासिक की ऐतिहासिक दृष्टि से सर्वथा निकृष्ट भविष्य वाणी की शताब्दी मनानी पड़ेगी। गजब के भक्ति भाव और फ्रेंच स्पष्टता के साथ एक उपयोगी और परिपूर्ण वेद विषयक पुस्तक सूची को संगृहीत किया है जिसके लिए भारतीय विज्ञान के सब विद्यार्थी उनके प्रति कृतज्ञ होंगे।

लगभग ३५० पृष्ठोंकी इस पुस्तकमें प्रो० रेनो ने पैरिस के प्रो० वेन विनेस्टि और म्यूनिच के

डा० वुल्ट के सहयोग से वैदिक और उसके उत्तर वर्ती साहित्य पर लिखे गये सब आवश्यक लेखों टिप्पणियों, निबन्धों और पुस्तकोंकी एक बहुमूल्य सूची तैयार की है। इस सूची के प्रथम भाग में चारों वेदों, ब्राह्मणों, सूत्रों, आरण्यकों, वेदाङ्गों, उपनिषदों तथा वेद और अवस्ता पर लिखे गए दो बहुमूल्य परिशिष्टों का उल्लेख है। दूसरे भाग में लेखक महोदय ने बहुत सूक्ष्म और परिश्रम खोज के पश्चात् वैदिक और उसके उत्तर वर्त्ती, साहित्य तथा सभ्यता विषयक ग्रन्थों का निर्देश किया है जिनमें हरप्पा और मोहेन जेदारों की अत्यधिक प्राचीन खोजों, आर्यकाल के पूर्व और द्रविड़ जाति विषयक समस्याओं, मानव विज्ञान, जाति विज्ञान, सामाजिक और राजनैतिक अवस्थाओं, शिक्षा, भूगोल, काल-क्रम विज्ञान आदि का समावेश है। उसके पश्चात् धर्म, दर्शन, संगीत विज्ञान और भाषा विषयक विशेष अङ्गों का निरूपण है। इस अमूल्य ग्रन्थ के अन्त में प्रो० रेनों ने निम्न विषयों पर ४ परिशिष्ट दिए हैं।

(१) वैदिक और वेदोत्तर कालीन भारत का परस्पर सम्बन्ध।

(२) पाश्चात्य देशों के शिल्प और विचारों पर वैदिक प्रभाव।

(३) सन् १८०४ से पूर्व वेदों के परिचय सूचक ग्रंथ।

(४) सन् १८०४ के पश्चात् लिखे ग्रंथ जिनमें वेदों का उल्लेख है।

जब हम फ्रेंच विद्वान की विद्वत्ता पूर्ण इस ग्रंथ सूची को मैकाले की उक्तियों के साथ रखते हैं तो यह कहे बिना नहीं रह सकते कि गम्भीर इतिहास ने मनमानी बाग डोरी का खूब बदला लिया है।

(डा० कालीदास नाग गुरुकुल कांगड़ी का १९३४ का दीक्षांत भाषण)

क्या धर्म की आवश्यकता नहीं है ?

हमारे देश में कुछ ऐसे व्यक्ति भी हैं जो धर्म की आवश्यकता नहीं मानते। वे धर्म को मजहब या रिलीजन के अर्थों में लेकर रूसके बोलशिविकों का अनुसरण करते हुए उसकी आवश्यकता से इन्कार करते है। 'धारणाद्धर्मम्' अर्थात जो धारण किये जाने योग्य है उसे धर्म कहते हैं। एक युरोपियन विद्वान का उल्लेख एक स्थल पर साधु वास्वानी ने किया है :—

Asked if this meant that India must like some Western countries discard religion, he said—'far from it, India must not imitate the west. Imitation is a mark of the feeble minded—India's life is rooted in religion. But Dharma or religion is not creed; Religion is fellowship. Religion is life; Dharma is the inner 'Shakti' of the soul and needs to be drawn out to make a nation strong and young again. The death of spiritual life will be the funeral pyre of India.

(Leader 7-3 30).

अर्थात यूरोप के इस विद्वान् ने पश्चिमी देशों की नकल करके धर्म के छोड़ने को भारत की मृत्यु बताया है।

सफलता का रहस्य

सभी प्रकार की सफलता के लिये आवश्यक है कि मनुष्य का मस्तिष्क अच्छा हो। संसार का सार्वत्रिक नियम है कि शरीर के जिस अवयवों से भी मनुष्य अधिक काम लेगा वही पुष्ट और विकसित होगा जिससे काम न लेगा वह दुर्बल और

ईसाई प्रचार निरोध आंदोलन

नियोगी कमेटी की जांच पड़ताल के महत्वपूर्ण निष्कर्ष

१—जब से भारत में गणतन्त्रीय विधान लागू हुआ है तब से भारत में काम करने वाले ईसाई मिशन के संगठनों में अमेरिकन मिशनरियों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हो गई है। यह वृद्धि प्रत्यक्षतः इंटरनेशनल मिशनरी कौंसिल की सुविचारित नीति का परिणाम है जिसके अनुसार कतिपय नवीन स्वतन्त्र देशों में धार्मिक स्वतन्त्रता की वैधानिक व्यवस्था हो जाने के कारण ईसाई-मत के प्रचार की अनुकूलता का अवसर उपस्थित हो गया है और जहां सामूहिक धर्म परिवर्तन के लिये प्रेस, रेडियो, फिल्म और टेलीविजन के जरूरी साधनों से सुसज्जित करके प्रचारकों की टोलियां भेजी जा रही हैं।

२—ईसाई मत के प्रसार कार्य के लिये जिस में शिक्षा चिकित्सा, धर्म परिवर्तन आदि की प्रगतियां सम्मिलित हैं विदेश से बड़ी-बड़ी धन राशियां भेजी जा रही हैं।

३—अधिकांश में अनुचित प्रभाव और असत्य प्रचार इत्यादि के द्वारा धर्मपरिवर्तन किया जाता है। दूसरे शब्दों में हृदय परिवर्तन के द्वारा नहीं अपितु धर्म परिवर्तन के लिये नाना प्रकार के प्रलोभनों द्वारा मिशनों द्वारा संचालित

अविकसित रहेगा। मस्तिष्क के लिये भी यही नियम लागू होता है। वाशिंगटन में एक प्रोफेसर ने एक कुत्ते को रंग का ज्ञान कराने का यत्न किया जिससे कोई भी रङ्ग कुत्ते को बतलाया जाय वह उसे पहचान लिया करे। किसी जगह कुछ गेंदें अनेक रङ्ग की रख दी जाती थीं और कुत्ते को कहा जाता था कि हरी गेंद उठा लाये। वह वही गेंद उठा लाता था। इस परीक्षण के लिये उसने ६ मास तक ५ घंटे प्रतिदिन के हिसाब से कुत्ते को रङ्गों के पहचानने की शिक्षा दी। इसमें सफलता हुई। कुत्ता रङ्ग को पहचानने लगा। अब इस बात की जांच के लिये कि कुत्ते को जो यह अधिक ज्ञान रङ्ग पहचानने का हो गया, इससे उसके मस्तिष्क पर क्या प्रभाव पड़ा कुत्ते को मारकर उसके मस्तिष्क के निर्माता प्राकृतिक कणों (cells) की गणना की गई तो इस रङ्ग का ज्ञान रखने वाले कुत्ते के मस्तिष्क की सेलों की मात्रा, साधारण कुत्तों के मस्तिष्क की सेलोंकी अपेक्षा अधिक बढ़ गई। प्रोफेसर इलमर ग्रेटस (Professor Elmer Grates) ने परीक्षण का फल अपने शब्दों में इस प्रकार वर्णन किया :—

The result was that I found a far greater number of brain cells than in any animal of like breed.

परीक्षण से स्पष्ट है कि जब कुत्ते के मस्तिष्क पर जोर पड़ा और उसने उससे कुछ अधिक काम लिया तो उसका मस्तिष्क अधिक विकसित हो गया।

(श्री महात्मा नारायण स्वामी जी की डायरी)

❀

प्राइमरी और माध्यमिक स्कूलों में पढ़नेवाले नाबालिग बच्चों को ईसाई बनाने के लिये मुफ्त पुस्तकों और शिक्षण आदि की सुविधायें दी जाती हैं।

४—कुछ स्थानों में धर्म प्रचार से बहिर उद्देश्य की पूर्ति के लिये मिशनों का प्रयोग किया जा रहा है। विदेशीय और राष्ट्रीय मिशनरियों के द्वारा राज्याधिकारियों को आश्वासन दे दिये जाने पर भी अप्रत्यक्ष राजनैतिक प्रगतियों के उदाहरण प्रकाश में लाये गये हैं।

५—ईसाई बना लिये जाने पर नव दीक्षितों की देश और राज्य के प्रति निष्ठा के कम हो जाने का भय रहता है।

६—हिन्दू जाति के विरुद्ध जानबूझ कर सुव्यवस्थित रूप से गन्दा प्रचार किया जा रहा है जिससे सार्वजनिक शान्ति भङ्ग हो जाने का खतरा उत्पन्न हो रहा है।

७—भारत में लोगों को ईसाई बनाने का कार्य पाश्चात्य प्रभुत्व के पुनर्स्थापन के निमित्त ईसाईमत के प्रभाव को पुनर्जीवित करने की संसार व्यापिनी नीति का अंश प्रतीत होता है और यह कार्य आध्यात्मिक भावनाओं से प्रेरित हुआ नहीं जान पड़ता। गैर ईसाई सोसाइटियों की एकता और दृढ़ता को भंग करने के लिये ईसाई अल्प संख्यकोंके छोटे-छोटे भूखण्ड बनानेका ही उद्देश्य प्रतीत होता है।

८—धर्म परिवर्तन के कार्य को सुगम बनाने के लिये स्कूलों हस्पतालों और अनाथालयों का प्रयोग किया जाता है।

९—आपत्तिजनक धर्म परिवर्तन का शिकार मुख्यतया जन जातियाँ और हरिजन होते हैं इसका कारण यह है कि उन जातियों वा उनके क्षेत्रों में हस्पतालों, स्कूलों, अनाथालयों तथा अन्यान्य समाज कल्याण की सुविधाओं की उचित व्यवस्था नहीं होती।

१०—मध्य प्रदेश की राज्य सरकार ने धार्मिक मामलों में नितान्त निष्पक्षता की नीति का अवलम्बन किया है। फिर भी ईसाई मिशनरियों के द्वारा राज्याधिकारियों पर निरन्तर यह आरोप लगाया जाता रहा था कि वे ईसाइयों के साथ अन्याय करते और उन्हें परेशान करते हैं। इसकी जांच के परिणाम स्वरूप ये आरोप सत्य सिद्ध नहीं हुये। इस प्रकार के आरोप ईसाई मिशनों की पुरानी सुनिश्चित नीति का ही परिणाम है जिससे स्थानीय अधिकारियों को भयभीत और विदेश में उनके विरुद्ध प्रचार किया जा सके।

नियोगी कमेटी के सुझाव

१—जिन मिशनरियों का मुख्योद्देश्य धर्म परिवर्तन हो उन्हें देश छोड़ने का आदेश दिया जाय।

२—भारतीय ईसाई चर्च के लिये सर्वोत्तम मार्ग यह है कि वह विदेशीय सहायता पर निर्भर किये बिना संयुक्त स्वतन्त्र ईसाई चर्च की स्थापना करे।

३—धर्मपरिवर्तन के लिये चिकित्सा या अन्य व्यावसायिक सेवाओं का उपयोग कानूनन बन्द कर दिया जाय।

४—संविधान की इस व्यवस्था को कार्यान्वित किया जाय कि स्कूलों में विद्यार्थियों के माता पिता की अनुमति लिये बिना उन्हें मजहबी शिक्षा न दी जाय। शिक्षा विभाग उचित फार्म बना कर स्कूलों में प्रचारित करदें।

५—बल—प्रयोग वा छल—कपट से, अवैध साधनों की धमकी वा आर्थिक वा अन्य सहायता के प्रलोभनों से, वा कपट पूर्ण साधनों वा प्रतिज्ञाओं से, वा किसी व्यक्ति की अनुभवहीनता वा विश्वास का अनुचित लाभ उठाने से वा किसी व्यक्ति के अभाव, वा मानसिक दुर्बलता वा

अज्ञान का दोहन करने से वा साधारणतया प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अन्य धर्मावलम्बी की धार्मिक चेतना में प्रविष्ट होकर उसे झूठे धर्म परिवर्तन के लिये बहकाने के प्रयत्नों का निषेध होना चाहिये।

६—धार्मिक संस्थाओं को चाय के उद्योगों के लिये मजदूरों की भर्ती जैसे कार्य नहीं करने दिये जायें।

७—अनाथालय चलाने का प्रमुख कर्तव्य सरकार का है क्योंकि जिन का कोई अभिभावक नहीं है उनकी अभिभावक सरकार है।

८—राज्य ईसाई मिशन के संगठनों को प्रेरणा करे कि वे अपना एक प्रामाणिक संगठन बना कर धर्म प्रचार की नीति का निर्धारण करके उससे तथा प्रचार शैली से राज्य को सूचित करदें।

९—भारतीय संविधान को इस प्रकार संशोधित कर दिया जाय कि जिससे यह सुस्पष्ट हो जाय कि धर्म प्रचार का अधिकार केवल भारत के नागरिकों को है और छल कपट, बल प्रयोग और प्रलोभनों के द्वारा किया गया धर्म परिवर्तन वैध न माना जायगा।

१०—अवैध साधनों से होने वाले धर्म परिवर्तन पर उचित नियन्त्रण रखा जाय। आवश्यकतानुसार इस सम्बन्ध में कानून भी बना देना चाहिये।

११—राज्य, प्रदेश और जिला स्तरों पर गैर सरकारी व्यक्तियों के बोर्ड बनाये जायें जिनमें बहुमत आदिम जातियों और हरिजनों का हो।

१२—अस्पतालों में काम करने वाले डाक्टरों नर्सों व अन्य व्यक्तियों के पञ्जीकरण में यह शर्त लगा देनी चाहिये कि वे अपने व्यावसायिक सेवा कालमें धर्म प्रचार का काम नहीं करेंगे।

१३—राज्य सरकार से अनुमति लिये बिना धर्म प्रचार सम्बन्धी साहित्य के वितरण पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाय।

१४—जिन संस्थाओं को सरकारी अनुदान मिलते हैं वा सरकारी मान्यता प्राप्त है उनका सरकारी अधिकारियों को तिमाही में एक बार अवश्य निरीक्षण करना चाहिये।

१५—सरकार को यह नीति निर्धारित करनी चाहिये कि अनुसूचित जातियों, आदिम जातियों और पिछड़ी जातियों की शिक्षा, स्वास्थ्य व चिकित्सा जैसी सामाजिक सेवायें प्रदान करना एक मात्र राज्य सरकार की जिम्मेवारी है और इन सेवाओं का शीघ्र इन्तज़ाम करना चाहिये। गैर सरकारी संस्थाओं को ये सेवायें सिर्फ अपने धर्म के लोगों में करने की इजाजत दी जाय।

१६—राज्य स्तर पर सांस्कृतिक और धार्मिक मामलों के लिये एक पृथक विभाग बनाया जाना चाहिये जो किसी अनुसूचित जन जाति व पिछड़ी जाति के मन्त्री के अधीन रहे।

१७—किसी भी गैर सरकारी एजेन्सी को विदेशी सहायता सिर्फ सरकार के माध्यम से ही मिलने दी जाय।

१८—किसी भी विदेशी को किसी भी अनुसूचित या विशिष्ट क्षेत्र में स्वतन्त्र रूप से वा किसी धार्मिक संगठन के सदस्य होने के नाते काम करने की इजाजत तब तक न दी जाय जब तक वह यह लिखित वचन न दे दे कि वह राजनीति में भाग नहीं लेगा।

१९—सामाजिक और आर्थिक उत्थान के लिये तैयार किये गये गैर सरकारी या धार्मिक संस्थाओं के कार्यक्रम सरकार द्वारा पूर्व स्वीकृत होने चाहिये।

आर्यजगत् ७-१०-५६ को ईसाई प्रचार निरोध दिवस मनाए।
सार्वदेशिक सभा का समाजों के नाम परिपत्र

सेवा में

श्रीयुत मन्त्री जी,
आर्य समाज,...... ....

श्रीमन्नमस्ते !

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने निश्चय किया है कि विदेशी ईसाई प्रचारकों के कुचक्र को सक्रिय रोकने के लिए ७ अक्तूबर रविवार को समस्त देश में 'अखिल भारतीय ईसाई प्रचार निरोध दिवस' मनाया जाय। इससे एक सप्ताह पूर्व आर्य समाजों तथा हिन्दू संस्थाओं के कार्यकर्त्ता हरिजन एवं पिछड़ी जातियों में जाकर ईसाई प्रचारकों के देश द्रोहात्मक एवं धर्म विघातक कार्यों का रहस्योद्घाटन करें तथा प्रबल प्रचार द्वारा हिन्दू जनता को सावधान करने के साथ-साथ इस महान् कार्य का सञ्चालन करने के निमित्त सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रचारित आर्य धर्म रक्षा निधि के लिए एक करोड़ रुपयों की अपील की पूर्त्यर्थ धन एकत्र करें। इस सम्बन्ध में जनता को यह बताने का यत्न किया जाय कि ईसाई प्रचारकों को करोड़ों रुपयों की सहायता अमेरिका, इङ्गलैंड, न्यूजीलैंड, कनाडा आदि देशों से आती है। धर्म और सेवा के नाम पर चलाये जा रहे इस राजनैतिक कुचक्र का प्रतिवाद करने के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने दयानन्द सेवाश्रमों की स्थापना की आयोजना बनाई है। इस महान् कार्य की पूर्ति के लिए सर्व साधारण भारतीय हिन्दू मात्र की सहायता अपेक्षित है।

अतः इस सप्ताह में प्रचार कार्य के साथ-साथ धन एकत्र करने का काम भी आपकी समाज समुचित रूप से करेगी ऐसा हमें पूर्ण विश्वास है।

७-१०-५६ को प्रातः आर्य समाज मन्दिरों में तथा सायंकाल समस्त संस्थाओं की ओर से सम्मिलित रूप से सार्वजनिक मैदानों में विशाल सभायें करके परिपत्र के दूसरी ओर अङ्कित प्रस्ताव को स्वीकार कर एवं अपने नगरके प्रतिष्ठित व्यक्तियों को मिलाकर ईसाई प्रचार निरोध समिति का निर्माण कर इसकी सूचना समाचार पत्रों एवं सभा कार्यालय में भेजी जाय। प्रस्ताव की प्रतिलिपि निम्नांकित स्थानों पर भेजी जायः—

१—गृह मन्त्री-भारत सरकार, नई देहली।
२—प्रधान मन्त्री-भारत सरकार, नई देहली।
३—राष्ट्रपति, भारत सरकार, नई देहली।
४—समस्त समाचार पत्रों को।
५—प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा,
६—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

नियोगी कमेटी जिन परिणामों पर पहुँची है तथा उसने सरकार को जो सुझाव दिये हैं वे साथ भेजे जाते हैं।

भवदीय
रामगोपाल
मन्त्री

प्रस्ताव की रूपरेखा—

....के आर्यों और हिन्दुओं की यह विराट सभा ईसाई मिशन की गतिविधियों की जांच के लिए मध्यप्रदेश सरकार द्वारा नियुक्त नियोगी कमेटी की रिपोर्ट का हार्दिक स्वागत करती और मध्यप्रदेश की सरकार को इस उत्तम सामयिक पग के उठाने और नियोगी कमेटी को एक ऐतिहासिक एवं निष्पक्ष रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिये हार्दिक बधाई देती है।

इस सभा का दृढ़ मत है कि नियोगी कमेटी जिन परिणामों पर पहुँची है उन्होंने भारत में ईसाई मिशन के द्रुतगति से बढ़ते हुये खतरे की गुरुता के प्रति देशवासियों की आंखे खोल दी हैं। ईसाई मिशन का लक्ष्य विदेशी राजनैतिक षड्यन्त्र की पूर्ति के निमित्त समस्त भारत को ईसाई बनाना है और इस लक्ष्यकी पूर्ति केलिये विदेशी ईसाईमिशनने विदेशी सरकारों द्वारा प्रदत्त धन,जन और प्रचार के विविध उपकरणों से सुसज्जित होकर भारत पर प्रबल धावा बोल दिया है जो आर्य संस्कृति,देश की शान्ति और राजनैतिक स्वतन्त्रता केलिये एक गम्भीर चेतावनी है। अतः यह सभा प्रत्येक आर्य हिन्दू संस्कृतिके प्रेमी देशभक्त नागरिक से इस विदेशी षड्यन्त्र को विफल बनाने का अनुरोध करती है।

यह सभा केन्द्रीय शासन को चेतावनी देती है कि वह अपनी नीति में अपेक्षित परिवर्तन करके ईसाई मिशन की आपत्तिजनक प्रगतियों पर अंकुश लगाये, देश की स्वतन्त्रता के लिये उत्पन्न इस खतरे की भीषणता को अनुभव करे और नियोगी कमेटी की सिफारिशों को क्रियान्वित करने के लिये समय रहते उचित पग उठाये।

यह सभा ईसाई मिशन को सावधान कर देना चाहती है कि देशवासी उनके अवांछनीय प्रचार के हथकण्डों से पर्याप्त सावधान हो चुके हैं और आर्य समाज के रहते हुये उसका समस्त देश को ईसाई बनाने का स्वप्न कभी पूर्ण न हो सकेगा। यदि उसने धर्म की आड़ में देशवासियों पर उनके अज्ञान और निर्धनता का अनुचित लाभ उठाते हुये पाश्चात्य सांस्कृतिक एवं राजनैतिक प्रभाव बलात् लादने के अपने कुत्सित प्रयत्नों का परित्याग न किया तो उसका भारत में भविष्य अन्धकार पूर्ण बन जाना सुनिश्चित है। भय वा प्रलोभनों के बल पर भेड़ें मूंडना एक बात है और हृदय-परिवर्तन के द्वारा धर्म-परिवर्तन दूसरी बात है। अब वह समय आगया है जबकि ईसाईमिशनको इन दोनोंमें से एक का चुनाव करना होगा। पहले मार्ग की प्रतिक्रिया पूर्व से ही भयङ्कर हो रही है और यदि यही क्रम जारी रहा तो वह समय दूर नहीं जब कि विदेशी ईसाई मिशन को भारत वर्ष से उसी प्रकार अपना बोरिया बिस्तर बांध कर चला जाना होगा जिस प्रकार रूस और चीन इत्यादि देशों से चला जाना पड़ा है।

ईसाई मिशन के इस धावे को विफल करने के लिये यह अनिवार्य है कि:—

१—प्रत्येक ग्राम और नगर में आर्यसमाज के तत्वावधान में आर्यो और हिन्दुओं की सम्मिलित समिति बनाई जाय जो ईसाइयों की अवांछनीय प्रगतियों की देख-भाल और उनके निराकरण का उपाय करने के अतिरिक्त सेवा केन्द्रों के द्वारा सेवा सहायता और रक्षा का कार्य भी करें।

२—ईसाई प्रचार निरोध के लिए देश भर में उत्तम से उत्तम आर्य प्रचारकों का जाल बिछ जाय, और ईसाई प्रचार निरोध सम्बन्धी साहित्य प्रत्येक देश-भक्त भारतवासी के पास पहुंच जाय।

३—हिन्दूधर्मके प्रति ईसाइयोंके अनर्गल प्रचारका निराकरण और अस्पृश्यताका निवारण कियाजाय।

४—मुख्यतया आदिवासियों, पर्वतों एवं जंगलों में निवास करने वाली पिछड़ी जातियों में समाज सुधार, शिक्षा प्रसार, सेवा सहायता का कार्य व्यवस्थित रूप से बड़े पैमाने पर आरम्भ

(शेष पृष्ठ ४९० पर)

सर्वदल हिन्दी सम्मेलन अम्बाला

६-६-५६

[श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज का अध्यक्षीय भाषण]

"हम यह ऊँचे स्वर से कहते हैं कि भाषा हिन्दी और देवनागरी लिपि का प्रत्येक वर्ण हमारी संस्कृति का प्रतीक है हमारी संस्कृति वैदिक संस्कृति है।

गुरुमुखी लिपि के अक्षर पचास हैं और इस लिपि द्वारा अन्य भाषाओं के शब्द न पूरे लिखे जाते हैं और न पूरे बोले जाते हैं। अतः विज्ञान के पूर्ण विद्वान होने के लिये हमें पूर्ण और अपौरुषेय देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी भाषा की ही शरण लेनी पड़ेगी। किसी कल्पित भाषा की शरण लेने से काम न चलेगा।

पंजाब के अम्बाला डिवीजन, हिसार हरियाना प्रान्त की तो मातृ भाषा है ही हिन्दी। जालन्धर डिवीजन में भी हिन्दुओं की सब कन्या पाठशालाओं में शिक्षा का माध्यम हिन्दी है। इस के अतिरिक्त जो लोग पंजाबी पढ़ना या बोलना चाहें वे प्रसन्नता से पढ़ें और बोलें, हमें इसमें कोई आपत्ति नहीं है। हां सम्मति के रूप में हम इतना अवश्य कहेंगे कि पंजाबी को भी पूर्ण भाषा बनाने केलिए वे उसे देवनागरी लिपिमें ही पढ़ें और बोलें। हम पहिले कह आये हैं कि देश की लिपियों में देवनागरी ही पूर्ण लिपि है। गुरुमुखी आदि सब अपूर्ण लिपियें हैं।

इस प्रसंग से हमने यह प्रकट करने का यत्न किया है कि हिन्दी भाषा हमारी सांस्कृतिक भाषा है। अपनी संस्कृति को कोई भी वीर पुरुष भयंकर आपत्ति आने पर भी छोड़ नहीं सकता।

हिन्दी हमारी धर्म भाषा भी है—

हमारे धर्म के जितने ग्रन्थ हैं, प्रायः सबका अनुवाद हिन्दी भाषा में किया गया है। ऋषि दयानन्द ने तो अपने कितने ही मौलिक ग्रन्थ भी हिन्दी में ही लिखे हैं। यदि हम हिन्दी को छोड़ कर किसी और भाषा को पढ़ने लग जावें तो हमारा सब धार्मिक साहित्यभी हमसे छूट जाएगा। आर्य जाति ने धर्म के लिए अनेक बलिदान किए हैं। इस थोड़े से अपने इतिहासके काल में आर्य वीरों ने भी धर्म के लिये सैकड़ों ही बलिदान किये हैं। यदि हम धर्म की रक्षा के लिये बलिदानों की झड़ी लगा सकते हैं तो धर्म का प्रकाश देने वाली अपनी मातृ भाषा हिन्दी के लिए तो हम अपना सर्वस्व उसके ऊपर वार सकते हैं।

हिन्दी हमारी साहित्यिक भाषा भी है। आज सभी प्रकार का साहित्य चाहे वह धार्मिक, वैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक अथवा राजनीतिक किसी प्रकार का भी हो, सबके अनुवाद हिन्दी में मिलते हैं और इसके अतिरिक्त और भी विभिन्न साहित्य से हिन्दी का भण्डार पूर्ण किया जा रहा है इस प्रकार की विज्ञान की महा भांडार मातृभाषा को कोई हमसे कैसे छुड़ा सकता है। और फिर उसको छुड़ाकर हमारे हाथमें खिलौना क्या दियाजाता है। अपूर्ण विज्ञान शून्य, साहित्य विहीन गुरुमुखी। इन दृष्टियों से पंजाबी भाषा की स्थिति भी ऐसी ही है।

हिन्दी हमारी आर्थिक भाषा भी है—

अर्थ की प्राप्ति का साधन योग्यता है। जो

मनुष्य उत्तम विज्ञान और अच्छी योग्यता का धनी होगा वह ही कुशलता से अर्थ को प्राप्त कर सकेगा। आज भारत की राजसभामें जिनका मान है, वे सब वे ही लोग हैं, जो उच्च शिक्षा से सम्पन्न हैं। आगामी काल में देश की राष्ट्र भाषा हिन्दी होगी। योग्य बनने के लिये उस समय मनुष्य को हिन्दी की ही विशेष योग्यता को प्राप्त करना होगा। उस समय सब विषयों के विज्ञान का माध्यम हिन्दी भाषा होगी। उस समय की हिन्दी हमारी इस समय की हिन्दी से भी परिमार्जित एवम् विशिष्ट होगी। आज हिंदी के विभिन्न विषयों के कोष लिखे जा रहे हैं। भाषा के अध्ययन काल में ही एक विद्यार्थी को हिन्दी में लिखे गये सब विषयोंके कोष पर अधिकार कर लेना होगा। तभी वह आगे चल कर सब विद्याओं के क्षेत्र में सुगमता से गति कर सकेगा। इस प्रकार यदि पंजाबी लोग अपनी भावी सन्तान का भला चाहते हैं तो स्कूल के काल में ही उन्हें हिन्दी में विज्ञान की सब शाखाओं के कोष का संग्रहकरना होगा। मैं यहशब्द हिन्दू और सिक्ख सभी विद्यार्थियों के लिये कह रहा हूँ। जिस विद्यार्थी ने स्कूल के काल में हिन्दी की सभी शाखाओं का भलीभांति अनुशीलन न किया होगा तो महाविद्यालय में आकर उसे दूसरों के मुख की ओर ही देखना होगा। क्या गुरुमुखी मात्र स्कूल में पढ़ कर वह कालिज में विज्ञान की सब शाखाओं को सीखने में सफल हो सकेगा?

कृपया हृदय पर हथेली रख कर अपनी भावी सन्तान के भावी भविष्य की ओर आंखें खोलकर देखो। गुरुमुखी मात्र पढ़ा कर और हिन्दी तथा हिन्दी कोष को सर्वथा स्मरण न करा कर कहीं अपने सन्तान रूपी तरुवर की जड़ें तो नहीं काट रहे हो। भावुकता के प्रवाह में बह कर कोई चाहे अपने शिक्षा क्षेत्र का कैसा ही रूप बनावे, पर आर्य जाति तो अपने युवकोंके भविष्य को सतर्क होकर आंखें खोलकर भलीभांति देख रही है। हम किसी प्रकार भी अपनी भावी संतान को अज्ञान का ग्रास होने न देंगे और राष्ट्र-भाषा की सब शाखाओं का अध्ययन करा उन्हें एक ऊँची योग्यता के धनी बना कर रहेंगे।

हमारे विद्यार्थी वृन्द की शिक्षा के ऊपर माता और पिता के नाते हमारा अधिकार है। किसी और को हम अपना यह अधिकार सौंप नहीं सकते। हमें अपने इस अधिकार से वञ्चित करने वाले को इसका मूल्य देना होगा। हम किसी से झगड़ना नहीं चाहते, परन्तु अपनी न्यायोचित मांग को मनवाने के लिये हम सर्वथा कटिबद्ध हैं। प्रजा की भावनाओं का अध्ययन राजसभा का मुख्य कर्तव्य है। जो सत्ता प्रजाकी भावनाओं के विरुद्ध चलना आरम्भ कर देती है, वह निश्चय ही अपने लक्ष्य से भ्रष्ट हो जाती है और लक्ष्य से भ्रष्ट होने के साथ ही उसे यह भी निश्चय कर लेना चाहिये कि अब वह अपने आसन से भी भ्रष्ट होने के दिन गिन रही है।

जरा ध्यान से सुनिये। डिस्ट्रिक्ट लेवल से ऊपर इंगलिश के स्थान पर भारत जननी राष्ट्र-भाषा का आसन होना चाहिये था। परन्तु अभी तक उसके आसन पर विदेशी भाषा आंगल भाषा विराज रही है। डिस्ट्रिक्ट लेवल से नीचे हिन्दी में आये हुए प्रार्थना पत्रों का उत्तर न्यायानुसार हिन्दी में ही मिलना चाहिये था और हिन्दी में मांगे रिकार्डों की कापी हिन्दी में मिलनी चाहिये थी परन्तु इस पर आचरण नहीं किया जा रहा।

शिक्षा की कठिनाई को दूर करने के लिये पैप्सू और पञ्जाब दोनों में शिक्षा का फार्मूला एक ही चलना चाहिये था परन्तु इस पर कोई ध्यान नहीं दिया गया।

द्वितीय भाषा के एक पत्र की परीक्षा के लिये कुछ श्रेणियों का बन्धन लगा किसी श्रेणी

में पढ़कर परीक्षा पास करने का अवकाश मिल जाना चहिये था परन्तु ये सब प्रार्थनाएं अरण्य रोदन के समान बहरे कानों पर ही पड़ी। बालकों की शिक्षा का माध्यम चुनने का अधिकर माता पिता का ही होना चाहिये। परन्तु इसका भी कोई उचित उत्तर नहीं दिया गया। आर्यसमाज के नेता अपनी उचित मांगों को अधिकारियों के सामने रखने के लिये कई बार गये। अधिकारी यह मानते भी रहे कि आपकी मांगें उचित हैं। परन्तु ऊट अभी उसी करवट बैठा हुआ है।

मुख्यमन्त्री श्री प्रतापसिह कैरो का द्वार खट खटाया गृहमन्त्री श्री गोविन्दवल्लभ पन्त जी को अपनी मांगें सुनाईं। श्री प्रधान मन्त्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू जी के नियुक्त किये हुए श्री मन्नारायण जी से भी मिले। फिर दूसरी बार श्री प्रतापसिह जी कैरों से भी भेंट हुई। जितनी बार मिले एक को छोड़ कर सब ने ही हमारी मांगों के औचित्य को स्वीकार किया परन्तु परिणाम अब तक नकार के और कुछ नहीं निकला।

मिलने मिलाने का अवसर मांगने का समय अब समाप्त हुआ। अब हम वैधानिक रूप से ही किसी और दूसरे पग को आगे बढ़ाने की बात सोच रहे हैं। वह पग क्या होगा, इसका दिग्दर्शन आपके सामने यथासम्भव शीघ्र ही करा दिया जावेगा।

इस कार्य के लिये अब हमें पहले परमपिता भगवान् का, फिर अपनी साधारण सभा का आदेश लेना होगा और फिर वास्तविक कार्यक्रम का निर्देश कर पग बढ़ा दिया जावेगा। जब पग आगे बढ़ा दिया तो फिर उसे पीछे हटाना आर्य-समाज ने सीखा ही नहीं।

अब मैं अपने सहयोगी बन्धुओं से कुछ निवेदन करूंगा। किसी भी बड़े अभियान के प्रस्थान करने के लिये सामग्री की आवश्यकता होती है। इस प्रसग में वह आवश्यकता है, धन की और जन की। जब तक आपको कोई दूसरा आदेश नहीं मिलता तब तक इस सामग्री के सग्रह करने में जुट जाइये, इस काम को अभी पूरा कर लीजिये। फिर कार्य में जुट जाने पर इसके लिये अवसर मिलेगा या नहीं इसका कुछ पता नहीं।

मैं राज सम्बन्धित सस्था सचालन-महानुभावों से भी निवेदन करना चाहता हू। वह निवेदन यह है कि आप अपने स्कूलों में आदेश मिलने पर अपनी अभीष्ट भाषा ही पढाइये, अन्य अनिश्चित भाषाओं का पढ़ाना बन्द कर दीजिये। ऐसा करने पर आपको आने वाले किसी भी परिणाम के लिए तैयार रहना चाहिये। परन्तु पग आगे ही बढ़ाते चले जाइये।

❀

—थोड़ी सी भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करना कुछ वर्षों का काम होता है परन्तु एक भाषा में निष्णात होने में जीवन व्यतीत हो जाता है।

—मातृभाषा में सत्य का ग्रहण करना और प्रकाश करना सुगम होता है।

—परमात्मा ने समस्त विश्व को भाषा की देन दी है। वे लोग बड़े सौभाग्य-शाली होते हैं जिनके लिये वह विदेशी नहीं होती जो माता के होठों से ही अनजाने में सीख ली जाती है।

—हमारी प्राचीन सम्पत्ति के साथ हमारा सम्बन्ध बानये रखने वाली भाषा ही होती है। भाषा ही वास्तविक पूर्वज होती है।

बाल-जगत्

असहाय के आश्रय

यूनान के बादशाह रोगी हो गये थे। हकीमों की चिकित्सा कोई लाभ नहीं कर रही थी। अन्त में हकीमों ने मिलकर सलाह की। उन्होंने कुछ लक्षण बताये और कहा जिस मनुष्य के ये लक्षण हों, उसका पित्ताशय मिले बिना बादशाह के रोग को दूर करने वाली दवा नहीं बन सकती।

राजसेवक इधर-उधर दौड़े और एक बालक को वे पकड़ ही लाये। बालक एक निर्धन परिवार का था। उसके और भी भाई थे। उसके माता पिता ने पर्याप्त धन लेकर अपने पुत्र को वध के लिये दे दिया था। बादशाह ने काजी से पुछवाया कि क्या करना चाहिए तो उसने फतवा दे दिया-मुल्क के शाहशाह की जान बचाने के लिये रिआया में किन्हीं एक दो की जान लेनी हो तो वह गुनाह नहीं है।

हकीमों की व्यवस्था के अनुसार लड़के को बादशाह के सामने खड़ा किया गया। हकीम अपनी तैयारी करके बैठ गये। अब जल्लाद ने तलवार उठाई। इसी समय लड़के ने आकाश की ओर देखा और हंस पड़ा। बादशाह ने संकेत से जल्लाद को रोक कर पूछा—लड़के तू हंसा क्यों?

लड़का बोला—मां-बाप जिस सन्तान की रक्षा के लिये प्राण देते थे, उसी सन्तान को उन्होंने मारने के लिये बेच दिया। काजी जो न्यायमूर्ति कहा जाता है, उसने एक निरपराध की हत्या का फतवा दे दिया। बादशाह जो मुल्क का रक्षक है, अपनी निर्दोष प्रजा के एक बालक की हत्या करवा रहा है। ऐसी दशा में असहाय मनुष्य किसका आश्रय ले? मैं इस असहाय अवस्था में पहुंच गया हूँ। अब मैं दीन दुनिया के मालिक की ओर देखकर हसा कि परमात्मा! संसार की लीला तो देख ली, अब तेरी लीला देखनी है। जल्लाद की उठी तलवार तू क्या करेगा?

मुझे माफ कर बेटा! वह तलवार अब फिर नहीं उठेगी। बादशाह ने उस दरिद्र बालक से क्षमा माँगी।

किया जाय, निर्धन बच्चों को शिक्षा कार्य में मुफ्त पुस्तकें, फीस की छूट इत्यादि की सहायता दी जाय, स्थान-स्थान पर स्कूलों, अस्पतालों, अनाथालयों, वनिता आश्रमों आदि की व्यवस्था की जाय।

यह सभा आर्य समाज से अनुरोध करती है कि वह हिन्दू जाति की शक्ति और साधनों का केन्द्रीयकरण करके इस भीषण काल में जाति की रक्षा के उपायों को बढ़ाये। यह सभा प्रत्येक आर्य हिन्दू एवं भारतीय संस्कृति के प्रेमी को प्रेरणा करती है कि वह बड़ी से बड़ी धन और जनकी कुर्बानी करके इस पुनीत कार्य में आर्य समाज का हाथ दृढ़ करना अपना कर्तव्य समझे।

नारी और नौकरी

(लेखक – श्री गंगाशंकर एम० ए०)

आज कल अपने यहां शिक्षित स्त्रियों को नौकरियों का बड़ा चस्का लग रहा है। इस सम्बन्ध में पाश्चात्यों का क्या अनुभव है, इसे भी देख लेना चाहिये। प्रथम महायुद्ध के पहले पाश्चात्य देशों में भी बड़े घरों की स्त्रियों के लिये नौकरी करके रुपया कमाना अपमान समझा जाता था। केवल गरीब स्त्रियां घरों तथा कारखानों में काम करके अपना पेट पालती थीं। युद्ध के दिनों में पुरुषों के लड़ाई पर चले जाने के कारण प्रायः सभी कामों में स्त्रियों को लगाना आवश्यक हो गया। इस तरह उन्हें आर्थिक स्वतन्त्रता का मज़ा आ गया, परन्तु जब युद्ध समाप्त हुआ तब एक विकट प्रश्न उपस्थित हो गया। स्त्री पुरुष दोनोंको काम देना कठिन होगया और बेकारों की संख्या बढ़ने लगी। आवर फ्रीडम एन्ड इट्स रिजल्ट्स (हमारी स्वतन्त्रता और उसके परिणाम। नामक पुस्तक में ब्रिटेन के नारी आन्दोलन की एक 'प्रधान नेत्री रे इस्ट्रेची लिखती है कि "स्त्रियों की आर्थिक स्वतन्त्रता के मार्ग में कितनी ही रुकावटें हैं। इनमें कुछ तो प्राकृतिक हैं जिनमें परिवर्तन की सम्भावना नहीं और कुछ परम्परागत सामाजिक वहमों के कारण हैं, जिनके दूर होने में बहुत समय लगेगा। गर्भ धारण करके जनना स्त्रियों का प्रकृति सिद्ध कार्य है जो कभी पुरुषों के मत्थे नहीं पड़ सकता। यद्यपि इसमें अधिक समय नहीं लगता तथापि इसकी सम्भावना के कारण स्त्रियों को काम मिलने में बाधा अवश्य पड़ती है लड़कों को सीना पिरोना, खाना पकाना भले ही सिखाया जाय, पर इन कामों के लिये वे घरों में नहीं बैठ सकते। घरका बहुत कुछ काम स्त्रियोंको ही करना पड़ता है। इसका फल यह होता है कि बाहर काम करने वाली स्त्रियों पर दोहरा बोझ पड़ता है। जिसमें वे अपना स्वास्थ्य गंवा बैठती हैं। स्त्रियों की शारीरिक शक्ति पुरुषों से कम होती है यह मानना ही पड़ेगा। एक बात यह भी है कि चालीस वर्ष की आयु हो जाने पर स्त्रियों में शक्ति का ह्रास आरम्भ हो जाता है। इतनी आयु होने पर जिसे हटाने की आवश्यकता हो ऐसे व्यक्ति को काम देने में लोगों को आगा पीछा होता ही है। स्त्रियों में एक दोष यह भी है कि वे जो काम लेती हैं उसके पीछे पड़ जाती हैं। मनोनुकूल काम मिलने पर तो यह गुण है, किन्तु जब ऐसा नहीं होता तब इसका स्वास्थ्य पर बड़ा बुरा असर पड़ता है। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में ममता भी अधिक होती है। घर बार, बाल बच्चों, वृद्ध तथा रोगी आश्रित जनों को छोड़ कर जहां चाहे चले जाना इनके लिए सहज नहीं होता। स्त्रियों की आर्थिक स्वतन्त्रता का प्रश्न बड़ा जटिल है। अभी तो इसके प्रयोग का

आरम्भ ही हुआ है। इनके तथा समाज के जीवन पर इनका क्या प्रभाव पड़ेगा, यह तो समय ही बतायेगा।

स्त्रियाँ जब नौकरियों के पीछे पड़ती हैं तब घर बिगड़ जाता है। इसका अनुभव पाश्चात्य देशों में ही हो रहा है। इंग्लैण्ड में विवाहिता स्त्रियाँ शिक्षा तथा अन्य कई विभागों में काम नहीं कर सकतीं। कई नगरों की म्युनिस्पलिटियों में यह नियम है कि विवाह हो जाने के पश्चात स्त्रियां काम पर से हटा दी जाती हैं। सोवियत रूस में स्त्रियों को पूर्ण स्वतन्त्रता है। लेनिन की राय थी कि स्त्रियों को गृहस्थी के कार्य तथा बच्चों की परवरिश से मुक्त कर देना चाहिये जिससे वे देश की सेवा कर सकें। इस लिये बच्चों के पालन पोषण और शिक्षा का भार राष्ट्र ने लिया। बच्चा जनने के लिये सरकारी सूतिका गृह खोले गये। शिशु शालाओं में उनका पालन पोषण होने लगा और बड़े होने पर स्कूलों में उनकी शिक्षा का प्रबन्ध किया गया।

इन संस्थाओं में उन्हें सब तरह की सुविधा दी गई और इसका संचालन विशेषज्ञों के हाथ में सौंपा गया। पर बाद में देखा गया कि इनमें पले हुए बच्चों में वह बात नहीं आती जो घर के पले बच्चों में होती है। इसका अनुभव स्वयं लेनिन की पत्नी क्रुसकाया ने किया, जिनके हाथ में बहुत दिनों तक शिशु पालन विभाग का निरीक्षण रहा।

प्रथम महायुद्ध के बाद जैसी स्थिति उत्पन्न हुई थी, वैसी ही गत महायुद्ध के बाद देखने में आ रही है। पाश्चात्य देशों में स्त्रियों को काम मिलना कठिन हो रहा है। कितनी ही स्त्रियां रोजगार की तलाश में भटक रही हैं। स्त्रियाँ पुरुषों की समानता की हामी भरने वाले पाश्चात्य देशों में अभी तक एक ही प्रकार के काम के लिये स्त्री पुरुषों के समान वेतन नहीं है। ब्रिटेन की पार्लियामेंट में थोड़े ही दिन पहले यह प्रस्ताव लाया गया था कि दोनों का वेतन समान कर दिया जाय। पर इसका सरकार की ओर से विरोध किया गया। उसका कहना था कि यह सिद्धान्त उसे मान्य है परन्तु इसे व्यवहार में लाने से खर्च बहुत बढ़ जायगा, अतः यह अभी सम्भव नहीं। यह समझना भूल है कि घर का काम राष्ट्र का काम नहीं। गत महायुद्ध के समय ब्रिटेन के युद्ध मन्त्री ने स्त्रियों से अपील करते हुए कहा था कि स्त्रियां समझती हैं कि साधारण काम करने में उनका समय नष्ट होता है पर यह बात नहीं। किसी न किसी को राष्ट्र के लिये आलू बनाना और थालियां साफ करनी पड़ेंगी। बिना छोटे २ काम सीखे बड़े काम की योग्यता नहीं आती।"

कहा जा सकता है कि यह स्वतन्त्रता या समानता का शौक नहीं जिसके कारण स्त्रिया नौकरी के पीछे दौड़ती हैं वास्तव में यह उनकी आर्थिक विवशता है परन्तु आर्थिक दृष्टि से भी नौकरियो से क्या लाभ होता है? घर पर रह कर स्त्री कितना काम कर सकती है? यदि वह नौकरी पर चली जावे तो वही काम मजदूरी देकर दूसरों से कराना होगा। तब भी क्या सब काम अपने मन के अनुसार होगा? और स्त्री अपनी कमाई से सब को मजदूरी देकर अपने लिये कुछ बचा लेगी?

भारत की स्त्रियों में नौकरी का शौक बढ़ने से विकट समस्याएं उपस्थित होने लगी हैं। स्कूलों की इन्सपेक्टरानियां बड़े चक्कर में हैं। दौरे पर बच्चों को हर समय अपने साथ कहां तक रक्खें और घर पर नौकरों के मत्थे छोड़ें तो उनकी दुर्दशा। कुछ दिन पहले पंजाब सरकार इस पर गौर कर रही थी कि विवाहिता स्त्रियों को यह पद न देने के लिये नियम बना देना चाहिये। ट्रावनकोर राज्य की कौंसिल में यह बहस छिड़ने

पर कि नर्सों (धाय) को विवाहिता होना चाहिये या नहीं उस विभाग के अध्यक्ष ने स्पष्ट शब्दों में कहा या तो पत्नी बन कर रहना पड़ेगा या धाय। दोनों के काम एक साथ नहीं हो सकते। हां यह बात अवश्य है कि गृहस्थी को सुचारू रूप से चलाते हुए तथा अपनी मान मर्यादा की रक्षा करते हुए किसी उद्योग के द्वारा चार पैसे कमाये जा सकते हों तो अच्छा ही है। घर में यदि कोई सहायता करने वाला न हो तो घरेलू उद्योग धन्धे करने में कोई हानि नहीं। इसे मनु ने भी माना है। वे लिखते हैं कि यदि पति जीवन निर्वाह का प्रबन्ध बिना किये विदेश चला जाय तो स्त्री सीना पिरोना आदि अनिन्दित शिल्पों से अपना निर्वाह करे।

प्रोषिते त्वनिधायैव जीवेच्छिल्पैरगर्हितैः।

कहा जा सकता है जब गरीब घरों की या नीची कही जाने वाली जातियों की स्त्रियां घर के बाहर मेहनत मजदूरी कर सकती हैं तब फिर अमीर या बड़े घरों की स्त्रियों के मार्ग में क्यों रुकावटें डाली जाय। यहां दो बातों का ध्यान रखना पड़ेगा। इनमें एक तो सम्मिलित कुटुम्ब की प्रथा है। इसमें कुछ दोष भी है। प्रायः एक व्यक्ति कमाते-कमाते पिसता है और कई निठल्ले लोग बैठे बैठे खाते और मौज उड़ाते हैं। इसके अतिरिक्त जहां चार बर्तन एक साथ होते हैं वहां कुछ खुटपुट चलती ही है। पर इन सबके होते हुए भी इनमें एक लाभ मानना ही पड़ेगा और वह यह है कि कुटुम्ब का कोई सदस्य निःसहाय नहीं रहता। किसी न किसी तरह सभी का निर्वाह हो जाता है। घर का कुछ न कुछ काम सबको करना ही पड़ता है। बच्चों की देख रेख का भार प्रायः घर की बूढ़ी स्त्रियों पर होता है उन्हें अपने बच्चे सौंपकर काम करने योग्य स्त्रियां निश्चिन्तता के साथ बाहर मेहनत मजदूरी करती हैं। दूसरी बात यह है कि प्रायः स्त्रियां अपने घर के पुरुषों के काम में ही उनका हाथ बंटाती हैं। किसान की स्त्रियां खेती बारी में अपने यहां के पुरुषों के साथ पूरी मेहनत करती हैं। व्यवसायियों के सम्बन्ध में भी यही बात है। बढ़ई, दर्जी, लुहार, की स्त्रियां अपने पतियों के काम में इतनी दक्ष हो जाती हैं कि आवश्यकता पड़ने पर बिना पुरुषों की सहायता के भी वे अपना काम चला लेती हैं। इसमें एक और सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि बच्चों को छुटपन से ही अपने माता पिता के काम की शिक्षा मिलने लग जाती है। प्रत्येक घर बेसिक ट्रेनिंग सेन्टर बन जाता है। बच्चों को जीविकोपार्जन योग्य बनाने में एक पैसा खर्च नहीं होता है। क्या यह बात बनावटी वातावरण वाली संस्थाओं में आ सकती है जिन पर आजकल इतना रुपया फूंका जा रहा है? यदि बड़े घराने की स्त्रियां भी कोई ऐसा काम सीखें जिसमें घर में ही रहकर वे अपने पति का बोझ हलका कर सकें तो अच्छा ही है। दफ्तरों के अफसरों की घुड़की धमकी सहने की अपेक्षा अपने पति की सेवा कहीं अच्छी। दूसरों के बच्चों को शिक्षा देने के लिए स्कूलों में नौकरी करने के पहले अपने बच्चों की शिक्षा की चिन्ता करनी चाहिये।

घर यदि पति पत्नी की साझेदारी है तो उस में पति बाहर मेहनत करके पैसा लाता है और पत्नी घर में मेहनत करके अपना हिस्सा पूरा करती है इसमें अन्याय कहां। केवल पति पत्नी का कुटुम्ब और दोनों के विभिन्न व्यवसाय ये सर्वथा आधुनिक भाव है। बच्चों को किसी कुटुम्बीजन के घर में रखने से स्वतन्त्रता में बाधा पड़ती है। ऐसी दशा में यदि पति पत्नी का कार्य क्षेत्र अलग हुआ तो फिर न बच्चों की देख-रेख हो सकती है और न घर की ही। व्यवहारिक अड़चनों के अतिरिक्त इस प्रकार की आर्थिक स्वतन्त्रता में केवल घर के ही नहीं समाज के विघटन के बीज अन्तर्हित हैं। अपने यहाँ का यह प्राचीन आदर्श है कि स्त्री अपना देह और

श्री दयानन्द-सेवा-सदन की प्रस्तावित योजना

(लेखक—श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति, प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली)

कारण—

शास्त्र में धर्म के तीन स्कन्ध बतलाये हैं। "त्रयोधर्मस्कन्धाः, यज्ञोऽध्ययनं दानमिति ।" सब से पहला धर्म-स्कन्ध यज्ञ है। दूसरों को सुख देने के लिए जो कार्य किये जाते हैं वे यज्ञ कहलाते हैं। गीता में उसकी महिमा विशेष रूप से बतलाई गई है। कहा है—

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्व किल्विषैः।
भुञ्जते तेत्वघं पापा ये पचन्त्योत्मकारणात् ॥

(अ० ३ श्लोक १३

जो लोग अपनी कमाई का बहुत सा अंश अन्यों को अर्पण करके यज्ञ शेष का भोग करते हैं वे पाप से छूट जाते हैं, परन्तु जो लोग केवल अपने लिए पकाते और स्वय खाकर सन्तुष्ट हो जाते हैं वे पाप के भागी बने रहते हैं। यही कारण है कि सब धर्मों और शास्त्रों में सेवा को उत्तम धर्म कहा है। सेवा में यह गुण है कि उससे जिसकी सेवा की जाती है उसकी संतुष्टि तो होती ही है, जो सेवा करता है उसकी आत्मा को भी बहुत सन्तोष पहुंचता है।

जो व्यक्ति अथवा समाज अपने विचारों का प्रचार करना चाहते हैं उनके लिए तो सब से उत्कृष्ट उपाय सेवा ही है। यदि हम किसी भूखे को अन्न देते है, प्यासे को पानी देते हैं या रोगी को औषधि देते हैं तो वह न केवल हम से प्यार करने लगता है, उसके मन में हमारे विचारों के लिए भी आदर का भाव उत्पन्न होता है। जो लोग केवल दलीलों से दूसरे को चुप कराने का यत्न करते हैं वे उसके मन को परास्त कर सकते हैं परन्तु हृदय को नहीं जीत सकते और आत्मा को नहीं छू सकते। हृदय तो प्रेम और सेवा से ही जीता जाता है। यह अनुभव सिद्ध बात है कि

सन्तान ये तीनों मिलकर पुरुष होता है। जो भर्त्ता है वही भार्या है। इन दोनों में कोई विरोध नही है।

एतावानेव पुरुषो यज्जायाऽऽत्मा प्रजेति ह।
विप्राः प्राहुस्तथा चैतद्यो भर्त्ता सा स्मृतागंना॥

(मनु० ६।४५)

इसलिये जीवन पर्यन्त स्त्री पुरुष धर्म अर्थ काम आदि में पृथक् न हों। आपस में यही उनका धर्म बतलाया गया है।

अन्योन्यस्याव्यभिचारो भवेदामरणान्तिकः।
एष धर्मः समासेन ज्ञेयः स्त्री पुंसयोः परः॥

(मनु० ६।१०१)

किसी समय पश्चिम भी यही आदेश मानता था। प्राचीन यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो का जिन पर बहुत कुछ भारतीय प्रभाव था, कहना था कि वह बड़ा ही सौभाग्यशाली तथा सुखी राष्ट्र है जहां 'मेरा' और 'तेरा' ये शब्द बहुत कम सुनाई देते हैं क्यों कि वहां के नागरिकों का सभी प्रधान बातों में सम्मिलित स्वार्थ होता है। इसी तरह विवाहित स्त्री पुरुषों की पूंजी एक होनी चाहिये जिससे कि उनमे भी मेरे और तेरे का भाव न हो। अपने यहां अब भी पुराने चाल के घरों की यही रीति है कि पति जो कुछ कमाकर लाया अपनी पत्नी के हाथ मे रख दिया वह चाहे जैसे खर्च करे वह घर की रानी है। बैंकों में दोनों के अलग-अलग खाते, अलग हिसाब-किताब, अलग अलग खर्च ये नये भाव हैं, जिनका परिणाम यह हो रहा है कि संगठन-संगठन चिल्लाते हुए भी सर्वत्र विघटन-विघटन ही देख पड रहा है। विश्व में शान्ति स्थापित करने के लिये जिन विद्वानों का दिमाग किसी नई व्यवस्था की खोज में है उनमे बहुतों की यही राय है कि इसकी कुंजी देश या व्यक्ति की आत्म-निर्भरता में नहीं बल्कि परस्पर निर्भरता में है। आर्थिक ही क्यो, यदि देखा जाय तो जीवन के सभी विभागों में परस्पर निर्भरता से ही सहयोग की प्रवृत्ति आ सकती है। पर जब उसका घर में ही अन्त कर दिया जायगा तो क्या वह राष्ट या विश्व के सम्बन्ध में आ सकती है?

केवल हेतुवाद पर आश्रित धार्मिक सिद्धांत समाज की ऊपर की सतह पर ही रहते हैं,गहराई में नहीं जा सकते। उनका प्रभाव शहरों के पढ़े लिखे लोगों में हो सकता है, अन्तःपुरों में, ग्रामों में और अकेली पड़ी हुई अशिक्षित बस्तियों में नहीं हो सकता। यह स्पष्ट है कि यदि कोई प्रचारक अपने विचारों का विस्तृत प्रचार चाहता है तो उसे जनता की सेवा करके यह सिद्ध कर देना चाहिये कि उसका धर्म सेवा द्वारा मनुष्यों के दुःखों को दूर करना सिखाता है।

आर्य समाज प्रारम्भ काल से ही कष्ट पीड़ितों दलितों और पिछड़े हुए वर्गों की सेवा का कार्य करता रहा है। परन्तु उसमें एक कमी रही है कि वह कार्य संगठित और व्यवस्थित रूप से नहीं हुआ। इस समय इस कमी की ओर विशेष रूप से ध्यान आकृष्ट होने का एक कारण यह भी हुआ है कि गत दो सौ वर्षों में ईसाई पादरियों ने भारत में अपना जो विस्तृत जाल फैलाया है उस का वास्तविक रूप प्रकट हो गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं रहा कि जो करोड़ों भारतवासी अपने धर्म को छोड़ने के लिए उद्यत हैं उन्हें उस पर स्थिर करने का एक यही उपाय है कि आर्यधर्म के प्रचारक सेवा की झोली लेकर उनके पास पहुँचें, उनके बन कर उन में रहें और उनके कष्टों का निवारण करें। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने देश भर में श्री दयानन्द-सेवा-सदनों की स्थापना का जो निर्णय किया है उसका यही उद्देश्य है।

रूपरेखाः —

श्री दयानन्द सेवा-सदन निम्नलिखित दो श्रेणियों के होंगे—

(१) सार्वदेशिक-सेवा सदन — सार्वदेशिक सभा एक केन्द्रीय सेवाश्रम स्थापित करेगी जिसमें सेवाकार्य के अतिरिक्त सेवकों को तैयार करने की व्यवस्था भी होगी। इसके अतिरिक्त उन प्रदेशों में जिनमें या तो प्रान्तीय प्रतिनिधि सभायें नहीं हैं अथवा उन में स्वतन्त्र रूप से सेवाश्रम चलाने की शक्ति नहीं है आवश्यक होने पर भी सार्वदेशिक सभा सेवा के केन्द्र खोल सकती है।

(२) प्रादेशिक सेवा-सदन—आर्यसमाज के प्रत्येक प्रदेश की प्रतिनिधि सभा का कर्त्तव्य होगा कि वह अपने अधिकार क्षेत्र में न्यून से न्यून एक और आवश्यकतानुसार अधिक सेवा-केन्द्र खोले। सेवासदन उन्हीं स्थानों में स्थापित किये जायेंगे जहाँ सेवा कार्य की आवश्यकता होगी। सामान्य रूप से ऐसे स्थान चुने जायेंगे जिनमें रेल तथा पक्की सड़कों से दूर होने के कारण शिक्षा और चिकित्सा की सुविधायें नहीं हैं, या जिनमें अस्पृश्य कहलाने वाले पिछड़े हुए अथवा आदिवासी लोग रहते हैं। उन्हें सेवा और सहायता की बहुत अधिक आवश्यकता है। अतः सेवा-कार्य के केन्द्र उन्हीं में होने चाहियें।

सामान्य रूप से हरेक आश्रम में तीन विभाग होंगे। (१) सेवा विभाग (२) शिक्षा विभाग (३) चिकित्सा विभाग। इन तीनों प्रकार के कार्यों के लिए आवश्यकता के अनुसार एक अथवा उससे अधिक कार्यकर्ता नियुक्त किये जायेंगे।

प्रदेश की जो प्रतिनिधि सभा सेवाश्रम खोलना चाहेगी वह अपनी योजना बना कर सार्वदेशिक सभा से अनुमति ले लेगी। योजना में प्रदेश की सभा को कार्यक्षेत्र का निर्देश करने के अतिरिक्त यह भी बताना चाहिये कि सभा के पास कितने कार्यकर्ता और कितनी आर्थिक सहायता है।

धर्म-रक्षा कोष—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने निश्चय किया है कि एक विराट धर्म-रक्षा कोष संगृहीत किया जाय जिसकी ओर से धर्म प्रचार के अन्य कार्यों के अतिरिक्त श्री दयानन्द सेवा सदनों का संचालन भी किया जाय। सम्प्रति इस कोष के लिये १० लाख रुपये की अपील की गई है। यह राशि सभा की स्वर्ण जयन्ती से पूर्व एकत्र हो जानी चाहिये। स्वर्ण जयन्ती का महोत्सव १९५८ के मध्य में होगा। आर्य जगत् का कर्त्तव्य है कि वह इस यज्ञ में अपनी आहुतिका भाग डालकर श्रेयके भागीबनें।

धार्मिक नेता पुस्तक कांड

देश द्रोह को दृढ़ता से दबाया जाय

आर्य समाजें शान्ति बनाये रखने में सरकार के हाथ दृढ करें। सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा, देहली के मन्त्री श्री लाला रामगोपाल जी के वक्तव्य

(१)

मुझे यह देख कर महान् आश्चर्य होता है कि एक ओर तो किताब काड की आड़ मे खडे किये मुस्लिम साम्प्रदायिक आन्दोलन के द्वारा शान्ति प्रिय प्रजा की जान माल और इज्जत के लिये खुला खतरा बना कर भारत को बदनाम करने का कुचक्र चल रहा है और दूसरी ओर हमारे कांग्रेस शासक और उच्चतम नेता इस काड के प्रति मौन बैठे हैं। हमारे प्रधान मन्त्री प० जवाहरलाल नेहरू और मौलाना आजाद इस काड पर क्यों मौन हैं मौलाना साहब का मौन समझ में आ सकता है परन्तु नेहरू जी और गृह मन्त्री प० पन्त का मौन समझ में आने वाली बात नहीं है। इस काड के सम्बन्ध में इस समय तक पडित जी का जो एक पत्र समाचार पत्रों में छपा है जो उन्होंने मुस्लिम लीग मद्रास के एक पदाधिकारी को भेजा था और जिससे इस काड को अप्रत्यक्ष प्रोत्साहन ही मिला है इस काड के खडन मे अब तक उनका कोई वक्तव्य जनता के समक्ष न आने से बडी भ्रान्ति फैल रही है। लोगों को इस भावना से बल मिल रहा है कि हमारा शासन इतना नपुसक बन गया है कि वह अपने एक गवर्नर के अपमान को ही बरदाश्त नहीं कर रहा अपितु साम्प्रदायिकता की आड़ मे राजनीतिक कुचक्र के सामने घुटने टेक रहा है जिससे देश की शान्ति और सुरक्षा के खतरे में पडने की आशका हो सकती है।

धार्मिक नेता पुस्तक की प्रकाशक एक अमेरिकन कम्पनी है जिसने १५ वर्ष पूर्व रिलीजस लीडर के नाम से यह पुस्तक अग्रजी मे छपाई थी। तब से अब तक इस पुस्तक का यूरोप अमेरिका एशिया तथा भारत और पाकिस्तान में प्रचार होता रहा है। विद्या भवन ने प्रकाशकों से आज्ञा लेकर भारत मे गत वष इस पुस्तक का पुनर्मुद्रण किया है इसके लेखक भी विदेशी हैं, श्री के० एम० मुन्शी नहीं।

इस पुस्तक मे यदि कोई बात मुसलमानों के लिये आपत्तिजनक थी तो वे अदालत का आश्रय ले सकते थे परन्तु जब विद्या भवन के सचालकों तथा इस पुस्तक के जनरल सम्पादक श्री मुन्शी महोदय ने स्वय ही उन पक्तियों के प्रकाशन पर खेद ही प्रकट नहीं किया अपितु पुस्तक का शेष स्टाक भी प्रचारित होने से रोक दिया तब भी इस आन्दोलन का जारी रहना यही अर्थ रखता है कि यह आन्दोलन एक भयकर राजनीतिक कुचक्र का परिणाम है जिसके सूत्र सचालन में अनुमानत विदेशियो का हाथ है और मुस्लिम विश्व विद्यालय अलीगढ़ उसका प्रधान केन्द्र है जैसा कि समाचार पत्रों मे प्रकाशित रिपोर्ट से भी सिद्ध हो रहा है। क्या भारत सरकार देश की सुरक्षा के साथ खिलवाड़ करने वाले इस

शिक्षा केन्द्र को सबक पढ़ावेगी ? याद रहे इसी संस्था ने भूतकाल में पाकिस्तान की स्थापना में महत्वपूर्ण सहयोग दिया था और इसके विद्यार्थी भारत में सवत्र प्रचारार्थ गये थे। इस आन्दोलन के प्रति यदि सरकार का रवैया अल्प सख्यकों की सन्तुष्टि की भावना से शासित रहा और इसे समय पर दबाया न गया तो साम्प्रदायिक अशान्ति बढ़ जाने का खतरा है। उस अवस्था में यदि जनता अपनी रक्षा का काम हाथ में ले लेगी तो कानून एवं व्यवस्था को बड़ा धक्का लगेगा। अत: समय रहते उत्तर प्रदेश के जिन नगरों में इस पुस्तक की आड़ लेकर साम्प्रदायिकता मुस्लिम लीगी बेकसूर हिन्दुओं मे भय उत्पन्न करके, उनकी इज्जत को मिट्टी में मिलाकर और उनकी धार्मिक पुस्तक का अपमान करके, उनके शान्त प्रिय नवयुवकों को मौत के घाट सरे आम उतार कर, पाकिस्तान जिन्दाबाद और हिन्दुस्तान मुर्दाबाद के नारे लगा रहे हैं शासन का कर्तव्य है कि प्रजा के जान माल की रक्षा का प्रबन्ध करे। अल्प सख्यक की तुष्टि की दुहाई देकर सरकार की ढीली नीति से लाभ उठाने वाले विदेशी एजेन्टों को भी विचार कर लेना चाहिये कि उनकी यह चालें बहुत समय तक नहीं चल सकतीं।

मैं गुमराह मुस्लिम बन्धुओं से कहूंगा कि वे शत्रु और मित्र में भेद करें। नारों और षड्यन्त्र का शिकार न बनें। इसी में उनका और देश का हित है। हिन्दुस्तान में रहकर हिन्दुस्तान मुर्दाबाद का नारा लगाना स्पष्ट रूप से देश द्रोह है।

मैं प्रत्येक आर्य से अपील करूँगा कि वह शान्ति पूर्ण ढंग से लोगों को समझाने बुझाने से साम्प्रदायिक शान्ति बनाये रखने में और सरकार के हाथ दृढ़ करने में योग दें।

---

(२)

पुस्तक कांड को लेकर अलीगढ़ विश्वविद्यालय के छात्रों ने जिस देशद्रोहात्मक वातावरण का निर्माण किया उसके लिये अब किसी जांच की आवश्यकता नहीं। विश्वविद्यालय के उपकुलपति डा० जाकर हुसैन ने अपने विदाई भाषण में जिस स्पष्टवादिता से मुस्लिम छात्रोंके मजहबी दीवानेपन की भर्त्सना की है। उसके प्रकाश में भारत सरकार का कर्तव्य हो जाता है कि इस राष्ट्र-विद्रोही अड्डे को तुरन्त बन्द कर दे। शिक्षा के नाम पर हमारे ही पैसे से यदि इसी प्रकार की विषैली भावनाओं को प्रोत्साहन मिलता हो तो देश की जनता शिक्षा मन्त्रालय से जवाब तलबी करने का अधिकार रखती है। निरन्तर नौ वर्षों तक लगभग १२ लाख वार्षिक के हिसाब से इतना धन व्यय करने के अनन्तर यदि इस प्रकार का विषैला परिणाम निकल सकता है जिससे देश की स्वतन्त्रता खतरे में पड़ जाय तो जनता की इस उचित मांग को स्वीकार करना ही चाहिये कि यह विश्व विद्यालय सरकारी सहायता का अधिकारी नहीं। आज जनता आश्चर्यचकित है कि लोक सभा में श्री माली ने कुछ दिन पूर्व किस प्रकार इसी विश्वविद्यालय की वकालत करते हुये, असत्यता से पूर्ण वक्तव्य दिया था। डा० जाकर हुसैन के भाषण ने श्री माली के ढोल की पोल खोल दी है। जागरूक जनता की मांग है कि इतनी सहायता देने के पश्चात् यदि सरकार इस का राष्ट्रीय स्वरूप निर्माण करने में असफल रही है तो इसे तुरन्त बन्दकर देना ही उचित है।

विविध सूचनाएं तथा वैदिक धर्म प्रसार

निर्वाचन

नाम समाज	अधिकारी		निर्वाचन तिथि
आर्य समाज नैरोबी (पूर्वी अफ्रीका)	प्रधान	श्री लाहोरीराम कोहली	२६–८–५६
	मन्त्री	,, वी० यन शर्मा	
आर्य युवक संघ चन्दोसी	प्रधान	,, वीरेन्द्र कुमार जी आर्य	
	मन्त्री	,, रामावतार जी	
दयानन्द परिव्राजक मण्डल ट्रस्ट खेड़ा खुर्द	६ नवीन ट्रस्टियों का निर्वाचन हुआ	को बैठक देहली में हुई।	२६–८–५६

गुरुकुल कांगड़ी

बम्बई की महिला मेयर श्रीमती सुलोचना देवी मोदी एम० ए० जे० पी० तथा श्रीयुत डा० मोदी ५-६-५६ को गुरुकुल को देखने के लिये पधारे। दोनों ने लगभग ३ घण्टे तक गुरुकुल की समस्त प्रवृत्तियों तथा विभागों का बड़ी रुचि के साथ अवलोकन किया। गुरुकुल के रमणीय वातावरण और कार्य शैली पर दोनों ने बड़ी प्रसन्नता प्रगट की।

थाईलैंड के नेवल अटैची श्री यू० सुदेर सीमा ट्रेड कमिश्नर श्री नोवा और थाई दूतावास के अधिकारी पी० फांकी आदि मान्य अधिकारियों ने १५-६-५६ को गुरुकुल का अवलोकन किया। उनकी मण्डली में वहां के भिक्षु सोम यशोधर तथा भिक्षुणी ननू माला भी थी। गुरुकुल की अतिथि पंजिका में उन्होंने अंकित किया है कि गुरुकुल भारत वर्ष का श्रेष्ठ विद्या केन्द्र है। थाई देश के भिक्षु श्रीयुत थाटा थामा पिछले २ मास से गुरुकुल में रह कर संस्कृत और हिन्दी का अध्ययन कर रहे हैं। गुरुकुल के विद्यार्थी उनसे पाली भाषा पढ़ते हैं।

१३-८-५६ को केन्द्रीय सरकार के शिक्षा मन्त्रालय के प्रधान सचिव श्रीयुत सैमरेन महोदय गुरुकुल पधारे। श्रद्धानन्द अतिथि मन्दिर पर कुलपति श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति तथा अन्य गुरुजनों ने उनका स्वागत किया। उन्होंने लगभग ३ घंटे तक गुरुकुल का अवलोकन किया।

गुरुकुल में श्रावणी रक्षा बन्धन का पर्व समारोह पूर्वक मनाया गया। सब कुल वासियों ने मिल कर प्रार्थना भवन में वृहद् यज्ञ किया और नवीन यज्ञोपवीत धारण किये। आचार्य श्री प्रियव्रतजी वेद वाचस्पति ने उपाकर्म के प्राचीन इतिहास का दिग्दर्शन कराया और वेदों और शास्त्रों के स्वाध्याय पर बल दिया।

आर्य वीर दल

जिला आर्य वीर दल मुजफ्फरपुर के कार्यकर्ताओं की एक विशेष बैठक २६-८-५६ को आर्य समाज में हुई। उक्त बैठक में जिला आर्य वीर दल समिति का संगठन हुआ। श्री बालेश्वरसिंह (बैरगनिया) मण्डलपति। श्री तपेश्वर आजाद शिक्षा नायक श्री पन्नालाल (मुजफ्फरपुर) कार्यालय मन्त्री सर्व सम्मति से निर्वाचित हुए। दशहरा की छुट्टियों में एक शिक्षण शिविर लगाने

का भी निश्चय हुआ।

आर्य प्रतिनिधि सभा ईस्ट अफ्रीका

आर्य प्रतिनिधि सभा पूर्वीय अफ्रीका का ३५ वां वार्षिक अधिवेशन ५-८-५६ को नैरोबी नगर में संगठित हुआ। इस अधिवेशन में पूर्वीय अफ्रीका की आर्यसमाजों के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज तथा वैद्य श्री नाथू जी शास्त्री भी उपस्थित थे। प्रधान व ट्रस्टी श्री गुरुदास राम भंडारी तथा मन्त्री श्री सुखदेव मल्होत्रा निर्वाचित हुए।

आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार

१९-८-५६ को पटना में उक्त सभा का वार्षिक बृहदधिवेशन श्री डा० डी० राम की अध्यक्षता में हुआ। लगभग ३०० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। आगामी वर्ष के लिये श्री डा० डी० राम प्रधान और श्री पं०रामनारायण शास्त्री मन्त्री निर्वाचित हुए। २१ अन्तरंग सदस्य चुने गये। आचार्य रामानन्द शास्त्रीजी की अपील पर सभा के भोजन विभाग के लिये १२००) प्राप्त हुए। मोतीहारी नगरपालिका के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री जगन्नाथ प्रसाद चौधरी ने अपनी ओर से प्रतिनिधियों को प्रीति भोज दिया।

आर्य प्रतिनिधि सभा सिन्ध

वेद प्रचार सप्ताह के सम्बन्ध में प्रो० ताराचन्द जी ने २ व्याख्यान नानापेठ आर्यसमाज पूना में २ आ० स० खिड़की में २ आर्य समाज पिम्परी में दिये। एक व्याख्यान चौपाटी (बम्बई) पर तथा १ कल्याण शहर में दिया। २१ से २६ अगस्त तक कल्याण कैम्प नं० २ में वेद की कथा की। २८ की शाम को ऋषि दयानन्द विद्या केन्द्र में जन्माष्टमी का पर्व मनाया गया। आर्य विद्यालय कैम्प ३ में हरयाली तृतीया का उत्सव मनाया गया। श्री वेदहाराम, श्री नारायणदेव, श्री चन्द्रमल तथा श्री जीवतराम ने उत्सवों में भाग लिया।

समाजों की प्रगतियां

इन्दौर छावनी—२१-८-५६ को श्रावणी उपाकर्म पं० वीर सेन जी वेदश्रमी के आचार्यत्व में मनाया गया। श्री वीरसेन ने यजुर्वेद के ४० वें अध्याय का सस्वर संहिता पाठ सुनाया। इसके अतिरिक्त पद और क्रम पाठ भी सुनाए। विश्वानि देव मन्त्र का घन पाठ एवं गायत्री मन्त्र का पंचसंधि भी सस्वर सुनाये। वेद मन्त्रों के प्रकृति एवं विकृति पाठों को सस्वर सुनने सुनाने का यह अभूत पूर्व अवसर आर्य जनता को प्राप्त हुआ।

मेरठ शहर—ने रविवारीय अधिवेशन दिनांक २६-८-५६ में एक विशेष प्रस्ताव करके उत्तर प्रदेश राज्य सरकार को प्रेरणा की कि वह गोवध निषेध विधेयक को कठोरता से परिपालित कराए तथा १९५६ के अधिवेशन में नियोगी कमेटी की रिपोर्ट का समर्थन किया।

बाढ़ (बिहार)—वेद प्रचार सप्ताह ससमारोह मनाया गया। प्रतिदिन प्रातः पारिवारिक सम्मिलित उपासना, हवन यज्ञ, वेद कथा उपनिषद् कथा का क्रम चलता रहा। श्री कृष्ण महोपदेशक आदि उपदेशकों के व्याख्यानों का उत्तम प्रभाव रहा। उपस्थिति १००० तक रहती थी।

खंडवा (निमाड़)—वेद प्रचार सप्ताह बड़े समारोह के साथ मनाया गया। प्रतिदिन प्रत्येक मुहल्ले में यज्ञ, हवन, भजन तथा आर्य विद्वानों के भाषण हुए। २८-८-५६ को जन्माष्टमी पर्व भी मनाया गया।

बैरगनियां (मुजफ्फरपुर)—२१-८-५६ को श्रावणी उपाकर्म पर्व धूमधाम से मनाया गया।

सार्वजनिक सभा में गुरुकुल के आचार्य श्री पं० वासुदेव जी शास्त्री का प्रभाव शाली व्याख्यान हुआ। उत्सव के बाद लगभग २०० व्यक्तियों को भोजन कराया गया।

नगर (बम्बई)—२१-८-५६ को श्रावणी व वेद सप्ताह का आयोजन श्री कृष्ण जन्माष्टमी तक आचार्य मेधाव्रत जी महाराज के द्वारा हुआ। ३० अगस्त को श्री पं० मंगलदेव जी शास्त्री पधारे उनका एक सार गर्भित व्याख्यान नव भारत हाई स्कूल में विद्यार्थी जीवन पर हुआ। आचार्य मेधाव्रत जी महाराज के गीता पर प्रभाव शाली उपदेश हुए।

खुरजा—आर्य समाज खुर्जा ने अलीगढ़ में मुस्लिम उपद्रवियों द्वारा गीता के अपमान पर रोष प्रकट करते हुए एक प्रस्ताव पास किया है जिसकी सूचना भारत सरकार तथा उत्तर प्रदेश की सरकार को दी गई है।

गुरुकुल मटिंडू—इस गुरुकुल में प्राज्ञ, विशारद, शास्त्री, रत्न, भूषण, प्रभाकर छात्रों के पढ़ाने के लिए बड़े सुयोग्य, अनुभवी, अनेक विषयों के आचार्य बी० ए० साहित्य रत्न अध्यापक आ गए हैं। निवास, दूध इत्यादि निःशुल्क दिया जाता है। भोजन भी अल्पव्यय में उपलब्ध होता है।

सौराष्ट्र प्रचार—बम्बई प्रदेश आर्य प्रति० सभा के भजनोपदेशक वैद्यराज पं० मोहन लाल शर्मा सौराष्ट्र के ग्राम्य प्रदेश में सफलता पूर्वक प्रचार कार्य कर रहे हैं। १ वर्ष में ५२ ग्रामों में भ्रमण किया। ३२ बृहद् यज्ञ कराए। ३ नये समाज स्थापित किए। ३ विवाह संस्कार और ३ यज्ञोपवीत कराए। १२४७ व्यक्तियों से चाय का व्यसन छुड़वाया ४२६ व्यक्तियों से बीड़ी-सिग्रेट छुड़वाई। ३७ व्यक्तियों से मांस खाना छुड़वाया।

शोक प्रस्ताव

निम्नांकित आर्य समाजों व संस्थाओं ने श्री वंशीलाल जी व्यास के निधन पर शोक प्रस्ताव पास करके भेजे:—

महेन्द्र गढ़, लोअर परेल बम्बई, गुलबर्गा, उदगीर, मुरखेड़, रायचूर, जालना, कमाठी पुरा, बम्बई, आर्यवीर दल गुलबर्गा, आर्य समाज लशकर ने २-६-५६ को सार्वजनिक सभा में श्री सुदर्शन शास्त्री आयुर्वेदाचार्य के अचानक निधन पर शोक प्रस्ताव पास किया। शास्त्री जी ने ग्वालियर और लश्कर में लगभग १८ वर्ष तक आर्य पुरोहित और शिक्षक के रूप में सफलता पूर्वक काम किया। वे आर्य प्रति० सभा मध्य भारत के अवैतनिक उपमन्त्री भी थे।

चरित्र निर्माण आन्दोलन

सार्व० सभा ने अपने उपप्रधान श्री बा० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट के अधीन यह कार्य किया हुआ है। वे इस कार्यार्थ भिन्न २ प्रान्तों का भ्रमण करते रहते हैं। १ से ६ अगस्त तक बिहार का दौरा किया गया। आरा, बिहार शरीफ, पटना आदि कई स्थानों पर व्याख्यान हुए। आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार और आर्य समाज आरा ने अभिनन्दन पत्र भेंट किये। २१ से २६ अगस्त तक बम्बई में प्रचार हुआ। आर्य समाज कमाठीपुरा, माटुंगा, फोर्ट, काकड़वाड़ी तथा आर्य संस्थाओं में व्याख्यान हुए। देहली में ८-६-५६ से १६-६-५६ तक केन्द्रीय आर्य सभा के तत्वावधान में प्रचार हुआ। आ० स० हनुमान रोड, सीताराम बाजार, नया बांस, हनुमान रोड, आर्यपुरा, हंसराज कालेज, डी० ए० वी० हायर सेकेण्डरी स्कूल चित्रगुप्त रोड, बेयर्ड रोड, दरियागंज आर्य कन्या पाठशाला राजा बाजार, चावड़ी बाजार, सत्यभामा आर्य कन्या हाई स्कूल करौल

बाग, आर्य कन्या विद्यापीठ हनुमान रोड में व्याख्यान हुए। व्याख्यानों का उत्तम प्रभाव पड़ा। चरित्र निर्माण सम्बन्धी प्रतिज्ञा पत्र भी भरे गये। देहली की समाओं के आयोजन में सार्वदेशिक सभा के उपमन्त्री श्री देवराज जी एम० ए० का प्रयत्न सराहनीय रहा।

गोरक्षा कार्य

ग्राम असती आजमपुर (हरदोई) पशु वध का अड्डा रहा है। नित्य ही गऊ कटती हैं। भय के कारण अभी तक कोई भी इन हत्यारों को पकड़ने का साहस न कर सका। थाना कासिमपुर के छोटे पुलिस इन्सपेक्टर श्री बजरङ्ग बहादुर ने गोवध करने वालों को जिस समय हत्यारे दो काटे हुए पशुओं की खालें निकाल रहे थे और दो जवान गऊएं पास में बन्धी हुई थीं, साहस पूर्वक गिरफ्तार कर लिया।

हरियाना में ईसाई प्रचार निरोध कार्य

नियोगी कमेटी की रिपोर्ट के प्रकाशन के बाद ईसाई पादरियों ने हरिजनों को ईसाई बनाने के निमित्त हरियाना प्रान्त के कुछ भागों पर धावा बोला। सार्वदेशिक सभा ने सूचना पाते ही अपने कार्यकर्ता श्री पीहकरमल जी को वहां भेजा। मास्टर जी ने स्थान २ पर जाकर ईसाइयों का सामना किया। उनके प्रचार के फल स्वरूप ईसाई पादरी वहां से चले गये। अगस्त मास में श्री मास्टर जी ने ५ ईसाई प्रचार निरोध तथा गोरक्षा सम्मेलन कराये। २० स्थानों पर व्याख्यान दिये। व्याख्यानों से लगभग १५००० व्यक्तियों ने लाभ उठाया।

गोरक्षाश्रम तनारडा जिला गंजाम (उड़ीसा)

इस स्थानपर सार्वदेशिक सभा तथा गोरक्षाश्रम की ओर से श्री रंगाधर जी उपदेशक पद पर कार्य कर रहे हैं। वहां आर्य समाज स्थापित हो गया है। उड़िया भाषा में सत्यार्थ प्रकाश वहां से मिलता है। मूल्य ५) के स्थान में ३) किया गया है। संस्कारविधि को उड़िया मे छपवाने का प्रबन्ध हो रहा है।

आर्य समाज को दान

श्रीयुत हरगोविन्द जी सरदाना एडवोकेट महोदय ने लगभग ७००० के मूल्य की भूमि जो हरसौली भुवाली नैनीताल) में है तथा १ मकान अपनी धर्म पत्नी श्रीमती भागीरथी देवी के नाम में आर्य समाज भुवाली को दान में देने का वचन दिया है।

शम्भूदयाल दयानन्द वैदिक संन्यासाश्रम

२६-७-५६ को प्रातः ८॥ बजे शम्भूदयाल वैदिक सन्यास आश्रम गाजियाबाद में एक विशेष समारोह हुआ जिसमें एक विशेष यज्ञ के पश्चात् श्री लाला पूर्णचन्द्र जी सत्यार्थी ने आश्रम के आचार्य श्री स्वामी विज्ञानानन्द जी से वानप्रस्थ की दीक्षा ली। इनका नाम सत्यार्थी वानप्रस्थी रखा गया। जनार्दन आर्य

मन्त्री आर्य समाज, भारतनगर

आर्य वीर दल

दयानन्द मठ रोहतक में १५ अगस्त को स्वतन्त्रता दिवस ससमारोह मनाया गया।

१८ श्रावण दयानन्दाब्द १३२ वि० सं० २०१३ बृहस्पति वार दयानन्द मठ के तत्वावधान मे चेतावनी दिवस बड़े समारोह से मनाया गया। इस अवसर पर सार्वदेशिक आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति श्री ओ३म्प्रकाश जी पुरुषार्थी पधारे। उन्होंने ईसाई मिशनरियों के चगुल से छुड़ाये जाने वाले हरिजन मुहल्ले का निरीक्षण किया। रात्रि के ६। बजे उनका सारगर्भित व्याख्यान हुआ।

सार्वदेशिक पत्र (हिन्दी मासिक)

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश १० शिलिङ्ग। अर्द्ध वार्षिक ३ स्वदेश, ६ शिलिङ्ग विदेश।

२. एक प्रति का मूल्य ।।) स्वदेश, ।।=) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क वा नमूने की प्रति का मूल्य ।।=) स्वदेश, ।।।) विदेश।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये। चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा। पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने वा ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न देने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है कि उनकी इच्छा वी० पी० द्वारा चन्दा देने की है।

४. सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख को प्रकाशित होता है। किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय मे अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा। डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं। अत समस्त ग्राहकों को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये।

५ सार्वदेशिक का वर्ष १ मार्च से प्रारम्भ होता है अंक उपलब्ध होने पर बीच वर्ष में भी ग्राहक बनाए जा सकते हैं।

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
६. पूरा पृष्ठ (२०×१०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा " "	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई ,,	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	२०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

७ सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

—व्यवस्थापक

'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

स्वाध्याय योग्य साहित्य

(१) श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की पूर्वीय अफ्रीका तथा मौरीशस यात्रा २।)
(२) वेद की इयत्ता (श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी) १।।)
(३) दयानन्द दिग्दर्शन(श्री स्वा० ब्रह्ममुनिजी) ।=)
(४) ईंजील के परस्पर विरोधी वचन ।=)
(पं० रामचन्द्र देहलवी)
(५) भक्ति कुसुमांजलि (पं० धर्मदेव वि० वा० ।।)
(६ वैदिक गीता
(श्री स्वा० आत्मानन्द जी) ३)
(७) धर्म का आदि स्रोत
(पं० गंगाप्रसाद जी एम. ए.) २)
(८) भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक
(श्री राजेन्द्र जी) ।।)
(९) वेदान्त दर्शनम् (स्वा० ब्रह्ममुनि जी) ३)
(१०) संस्कार महत्व
(पं० मदनमोहन विद्यासागर जी) ।।।)
(११) जनकल्याण का मूल मन्त्र „ ।।)
(१२) वेदों की अन्त: साक्षी का „
महत्व ।।=)
(१३) आर्य घोष ।।)
(१४) आर्य स्तोत्र „ ।।)
(१५) स्वाध्याय संग्रह (स्वा० वेदानन्दजी) २)
(१६) स्वाध्याय संदोह „ ४)
(१७) सत्यार्थ प्रकाश सजिल्द १।।=)
(१८ महर्षि दयानन्द ।।=

English Publications of Sarvadeshik Sabha.

1. Agnihotra (Bound) (Dr. Satya Prakash D. Sc.) 2/8/-
2. Kenopanishat (Translation by Pt. Ganga Prasad ji, M. A.) -/4/
3. Kathopanishat (Pt. Ganga Prasad M A. Rtd. Chief Judge , 1/4/-
4. The Principles & Bye-laws of he Aryasamaj -/1/6
5. Aryasamaj & International Aryan League Pt. Ganga Prasad ji Upadhyaya M. A.)-/1/-
6. Voice of Arya Varta (T. L. Vasvani) -/2/-
7. Truth & Vedas (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/6/-
8. Truth Bed Rocks of Aryan Culture (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/8/-
9. Vedic Culture (Pt. Ganga Prasad Upadhyaya M. A) 3/8/-
10. Aryasamaj & Theosophical Society (Shiam Sunber Lal) -/3/-
10. Wisdom of the Rishis (Gurudatta M. A.) 4/ /-
11. The Life of the Spirit (Gurudatta M.A.) 2/-/-
12. A Case of Satyarth Prakash in Sind (S. Chandra) 1/8/-
13. In Defence of Satyarth Prakash (Prof. Sudhakar M A.) -/12/-
14. Universality of Satyarth Prakash /1/
15. Tributes to Rishi Dayanand & Satyarth Prakash (Pt. Dharma Deva ji Vidyavachaspati) -/8/
16. Political Science (Mahrishi Dayanand Saraswati) -/8/-
17. Elementary Teachings of Hindusim -/8/- (Ganga Prasad Upadhyaya M.A.)
18. Life after Death „ 1/4/-

Can be had from:—**SARVADESHIK ARYA PRATINIDHI SABHA, DELHI 6**

नोट—(१) आर्डर के साथ २५ प्रतिशत (चौथाई) धन अगाऊ रूप में भेजें।
(२) थोक ग्राहकों को नियमित कमीशन भी दिया जायगा।

आर्य समाजों और आर्य जनता के लिये

विशेष रियायतें

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली ने विजय दशमी और महर्षि निर्वाणोत्सव के उपलक्ष्य में सभा द्वारा प्रकाशित साहित्य पर निम्न प्रकार रियायत देने का निश्चय किया है :—

१—कर्तव्य दर्पण (श्री महात्मा नारायण स्वामी जी कृत) मूल्य ।।।) रियायती मूल्य ।।=)

२—अन्य साहित्य पर २५ से अधिक के आर्डर पर ३३⅓ प्रतिशत कमीशन मिलेगा। १०) से अधिक २५) तक की पुस्तकों पर २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायगा। १०) की पुस्तकों पर डाक व्यय सभा देगी।

३—ट्रैक्टों के मूल्य में १) प्रति सैकड़ा की रियायत दी जायगी।

४—अभी अभी सभा ने 'पूजा किसकी' ? नया ट्रैक्ट छपाया है। मूल्य ५) सैकड़ा है। उसका रियायती मूल्य ३।।) सैकड़ा कर दिया है। सहस्त्रों की संख्या मे मगाकर जनता में वितरण कीजिये।

५—ईसाइयों के कुचक्र से सावधान करने और ईसाइयत का भडाफोड़ करने के लिये सभा ने अभी हाल ही में एक नया ट्रैक्ट निकाला है। उसका नाम है 'स्वतन्त्रता खतरे में ?' इसका रियायती मूल्य २०) हजार अर्थात् २।।) सैकड़ा रखा है जिससे आर्य जनता उसे हजारों की संख्या में मगा कर इस कुचक्र का भडाफोड़ कर सके।

आर्य जनता से निवेदन है कि इन पर्वों के उपलक्ष्य में इस सभा से प्रचुर मात्रा मे साहित्य मगाकर जनता में प्रचार करें और ईसाई प्रचार के निराकरण के लिये निम्नाकित ट्रैक्ट मगाकर अपने हाथ दृढ़ करें।

१—भारत में भयकर ईसाई षडयन्त्र का भडाफोड़। — मूल्य २०) सैकड़ा।

२—स्वतन्त्रता खतरे मे ? — २०) हजार या २।।) सैकड़ा।

३—इञ्जील के परस्पर विरोधी वचन — मूल्य ।=) प्रति या ३०) सैकड़ा।
(शास्त्रार्थ महारथी प० रामचन्द्र जी देहलवी कृत)

४—ईसाई मिशनरियों से दो प्रश्न — =) प्रति या १०) सैकड़ा।

नोट:—यह रियायत नवम्बर १६५६ तक ही दी जायेगी। अतः आर्डर भेजने में शीघ्रता करें।

मिलने का पताः :—

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली-६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली-से प्रकाशित।

विषय-सूची

१	वैदिक प्रार्थना		४४५
२	सम्पादकीय		४४६
३	कविता	(हरिशंकर शर्मा)	४५४
४	विदेश के पत्र		४५६
५	परोपकारिणी सभा और उसका प्रकाशन कार्य	(श्री प० गंगाप्रसादजी रिटायर्ड चीफ जज)	४५७
६	महर्षि दयानन्द और शिक्षा सूत्र	(श्री प० लोकनाथ जी तर्क वाचस्पति)	४६
७	दीपावली का शुभ सन्देश		४६२
८	ऋषि दयानन्द के पत्रों और विज्ञापनों का महत्व	(श्री प युधिष्ठिर जी मीमांसक)	४६७
९	स्वामी दयानन्द और आर्य समाज अन्यों की दृष्टि में		४७१
१०	महर्षि दयानन्द	शंका समाधान)	४७२
११	धर्मार्य सभा		४७५
१२	स्वाध्याय का पृष्ठ		४७६
१३	बाल जगत्		४७८
१४	शंका समाधान	(श्री प० रामचन्द्र जी देहलवी)	३८
१६	ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन		४८९
१७	महिला जगत		४९
१८	गोरक्षा आन्दोलन		४९१
१९	विविध सूचनाएं		४९३
२०	दान सूची		४९५

सार्वदेशिक आर्य वीर दल के सेनापति श्री ओम्प्रकाश जी पुरुषार्थी तथा आर्य समाज दीवान हाल के मन्त्रीगण सर्व श्री राजसिंह जी, वेदीराम जी लक्ष्मीदास जी आदि अनेक आर्य सज्जनों के साथ सभा के उपप्रधान पूज्य **श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज** बाढ़ पीड़ित शिविर का निरीक्षण कर रहे हैं।

॥ ओ३म् ॥

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३१ | नवम्बर १९५६. कार्तिक २०१३ वि०, दयानन्दाब्द १३३ | अङ्क ९

वैदिक प्रार्थना

त्वमस्य पारे रजसो व्योमनः स्वभूत्योजा अवसे धृषन्मनः ।
चकृषे भूमिं प्रतिमानमोजसोपः स्वः परिभूरेष्या दिवम् ॥ ऋ० १ । ४ । १४ । १२ ।

व्याख्यान – हे परमैश्वर्यवन् परमात्मन् ! आकाश लोक के पार में तथा भीतर अपने ऐश्वर्य और बल से विराजमान होके दुष्टों के मन को धर्षण तिरस्कार करतेहुए सब जगत् तथा विशेष हम लोगों के "अवसे" सम्यक रक्षण के लिये "त्वं" आप सावधान हो रहे हो, इससे हम निर्भय होके आनन्द कर रहे हैं किञ्च "दिवम्" परमाकाश "भूमिम्" भूमि तथा "स्वः" सुख विशेष मध्यस्थ लोक इन सबों को अपने सामर्थ्य से ही रच के यथावत् धारण कर रहे हो "परिभूः एषि" सब पर वर्त्तमान और सब को प्राप्त हो रहे हो "आदिवम्" द्योतनात्मक सूर्यादि लोक "आपः" अन्तरिक्ष लोक और जल इन सब के प्रतिमान (परिमाण) कर्त्ता आप ही हो, तथा आप अपरिमेय हो, कृपा करके हम को अपना तथा सृष्टि का विज्ञान दीजिये ।

सम्पादकीय

गृह कलह कैसे दूर हो ?

आर्य समाज के सामने जो अनेक समस्याये हैं उन सब मे से मुख्य गृह-कलह की है। देश का शायद ही कोई प्रदेश हो और प्रदेश मे शायद ही कोई जिला हो जिसमे घर का झगडा नही दिखाई देता। इस प्रकार के झगड़े प्राय वार्षिक चुनाव के समय तीव्र होते हैं। परन्तु चुनाव के साथ समाप्त नहीं होते। किसी न किसी रूप मे वर्ष भर सुलगते रहते हैं। कुछ महीने चुनाव के सघर्ष की चर्चा मे व्यतीत हो जाते है, दो चार मास तक कुछ कार्य करने की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है और अन्तिम महीने अगले चुनाव की धुन के अर्पण हो जाते है। परिणाम यह होता है कि दूसरे वर्ष का चुनाव पहले वर्ष के चुनाव से भी अधिक सघर्षमय हो जाता है।

गृह कलह चुनाव के समय उग्र रूप मे प्रकट होता है इसका यह अभिप्राय नही कि घर की लडाई का कारण केवल चुनाव है। चुनाव का अवसर तो उसके प्रत्यक्ष होने का निमित्त बन जाता है असली कारण तो दूसरा ही है। असली कारण यह है कि हम लोग आर्य समाज और उसकी चल अचल सम्पत्ति को एक जायदाद या रियासत के रूप मे देखते है और उसके अधिकारी चुने जाने मे उस प्रकार का गौरव अनुभव करते हैं जैसा राज्य की सस्थाओ मे चुने जाने पर अनुभव किया जाता है। सम्भवत प्रधान मन्त्री आदि का 'अधिकारी' इस विशेषण से निर्दिष्ट किया जाना भी भ्रम को उत्पन्न करने वाला है। जैसे म्युनिसिपैलिटी के तथा धारा सभाओं के चुनाव के लिये लोग लालायित रहते है, दुर्भाग्य की बात है कि हम लोग उसी प्रकार आर्य समाज के अधिकारी बनने के लिये भी लालायित रहने लगे है।

वार्षिक चुनाव की प्रथा ने इस रोग को और अधिक तीव्र बना दिया है। नगर पालिकाओं और विधान सभाओ के निर्वाचन तीसरे या पाचवे साल होते हैं। इतने समय मे गर्द को बैठने का अवसर मिल जाता है। परन्तु हर वर्ष के चुनाव में गर्द निरन्तर उडती रहती है।

इन कारणो से आर्य समाज की आन्तरिक स्थिति बहुत विक्षुब्ध हो गई है। दीवार मे कई जगह दरारें पड गई हैं। केन्द्र मे बैठ कर सारे चित्र पर दृष्टि डालने से कभी २ समाज के भविष्य के सम्बन्ध मे चिन्ता उत्पन्न हो जाती है कि क्या यह अपने सुन्दर सगठन और उसके कारण प्राप्त होने वाले गौरव की रक्षा कर सकेगा।

विचारणीय प्रश्न यह है कि इस परिस्थिति का उपाय क्या है ? यों, इन नित्य उत्पन्न होने वाले झगडो को निबटाने के वैधानिक उपाय अनेक हैं। स्थानीय आर्य समाजो के झगड़े प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओ के पास जाते है और प्रान्तीय सभाओ से आगे अपील करने के लिये सार्वदेशिक सभा है। प्रत्यक प्रान्त मे और केन्द्र मे न्याय सभाये भी बनी हुई हैं। परन्तु इस सब को रोग उत्पन्न हो जाने पर उनकी दवाई कह सकते है, रोग को रोकने के साधन नहीं हैं। ऐसे साधन आघात पर मरहम का काम दे सकते हैं, आघात से बचने के लिये कवच का काम नहीं। चिकित्सकाचार्यो का सिद्धान्त है कि परहेज दवा की अपेक्षा अधिक उपयोगी है। हमे विचार इस प्रश्न पर करना चाहिये कि समाज के अन्त.कलह को रोकने का मौलिक उपाय क्या है ?

समाजों मे घर के झगडों को रोकने का मौलिक और असली उपाय यह है कि आर्य जनों की मनोवृत्ति मे परिवर्तन हो जाय। इस समय यह भावना

बनी हुई है कि आर्य समाज के प्रधान मन्त्री आदि पद शासन के कोई बड़े अधिकार हैं, जिन्हें प्राप्त करने से गौरव में वृद्धि होती है। इस भावना का स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि सभासदों मे पदाधिकारी के लिये प्रतिस्पर्धा उत्पन्न हो जाती है। वास्तविक बात यह है कि आर्यसमाजका पदाधिकारी चुना जाना एक भारी बोझ हैं,और उत्तरदायित्व का काम है। प्रधान या मन्त्री समाज का सब से बडा सेवक है, हाकिम नहीं। हमारी भावना यह होनी चाहिये कि यदि हम पर सेवा का बोझ डाला जायगा तो हम उसे उठाने को उद्यत हो जायेंगे। परन्तु उसे प्राप्त करने के लिय लिये भाग दौड नहीं करेंगे। वेद क 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा" इस उपदेश का यही अभिप्राय है। कर्त्तव्य को कर्त्तव्य समझ कर पालन करना धम है, उसका मान अथवा फल की प्राप्ति के लिय पालन करना साधारण कर्म है और पद अथवा आर्थिक लाभ की दृष्टि से पालन करना अधर्म है। आर्यसमाज धार्मिक सस्था है। उसमे काम करने वालों मे कर्तव्य की भावना मुख्य होनी चाहिये। कर्त्तव्य समझ कर आर्य समाज का कार्य करने का स्थूल रूप यह होना चाहिये कि पदाधिकारियो के चुनाव के समय स्वार्थ और स्व की भावना किसी मे न हो। झगडा तभी उत्पन्न होता है जब चुनाव का लक्ष्य स्वय मतदाता हो। झगडो को शान्त करने का मूल भूत उपाय यह है कि चुनाव के समय कोई सभासद् स्वय पद लेने का उत्सुक न हो। यदि उसका चुनाव किसी पद के लिये किया जाय तो उसे सिर झुका कर सेवा भाव से स्वीकार करे और यदि किसी अन्य का चुनाव किया जाय तो उसे भी प्रसन्न मन से उसी प्रकार सिर झुका कर अंगीकार करे। इस अनासक्ति योग के बिना आर्य समाज के आन्तरिक झगडे समाप्त नहीं हो सकते।

यदि हम इस दृष्टि कोण को स्वीकार कर ले तो आपसी सघर्ष की सम्भावना होने पर भी उसे टाला जा सकता है। मान लीजिये, आपका नाम प्रधान पद के लिये उपस्थित हुआ। दूसरा नाम भी पेश हो गया और आपने यह अनुभव किया कि जिस दूसरे सभासद् का नाम प्रस्तुत किया गया है वह प्रधान बनने को विशेष उत्सुक है आप अपना नाम वापिस ले लीजिये और दूसरे भाई को प्रधान बन जाने दीजिये। इतना और कीजिये कि अपना नाम वापिस लेकर भी उदास न हो जाइये, अपितु पहिले से भी अधिक उत्साह के साथ समाज का काम कीजिये। आप देखेंगे कि इस छोटे से त्याग से आपके हृदय को अपूर्व शान्ति मिलेगी और आपकी सस्था गृह कलह से बच जायेगी। घर की लड़ाई में जो पहले हथियार रख देता है वही समझदार होता है। आर्य जनों मे यदि चुनाव आदि के सम्बन्ध मे थोडी सी अनासक्ति की भावना उत्पन्न हो जाय तो बहुत से झगडे दूर हो सकते है।

प्रति वर्ष होने वाले चुनाव के कारण जो असुविधा उत्पन्न होती है वह वैधानिक तो है परन्तु उसका विधान मे परिवर्तन किये बिना हल करना असम्भव नहीं है। समाज के सब प्रबन्ध सम्बन्धी कार्यो मे यह अलिखित नियम स्वीकार कर लिया जाय कि जो पदाधिकारी चुने जायें, यदि कोई विशेष कारण ही न हो तो उन्हें तीन वर्ष तक कार्य करने का अवसर अवश्य दिया जाय। विशेष कारण से परिवर्तन भी किया जा सकता है परन्तु उसका व्यक्तिगत विरोध न होना चाहिये। सामान्य रूप से यही नियम प्रयोग में लाया जाय कि जो पदाधिकारी चुने जायें वे तीन वर्ष तक सेवा करके समाज के कार्य को आगे बढा सकें।

यदि इन भावनाओं से आर्य नर नारी आर्य समाज की सेवा करें तो घर के झगडों से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है। यह बात मैं अपने अनुभव से कहता हू कि स्वय प्रयत्न करके किसी पद

पर निर्वाचित होने की अपेक्षा अपनी इच्छा से निर्वाचन के समय अपने को पीछे हटा लेने में अधिक मानसिक सन्तोष प्राप्त होता है। काम करने का आनन्द भी बढ़ जाता है। जिन आर्य समाजों, प्रान्तीय सभाओं तथा संस्थाओं में संघर्ष विद्यमान है यदि उनके सदस्य अनासक्ति योग का परीक्षण करें तो आर्य समाज में तुरन्त ही शान्ति हो सकती है।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियां ❀

महर्षि निर्वाण दिवस

इस वर्ष २ नवम्बर को हम सब महर्षि निर्वाण दिवस मनायेंगे। इस पुण्य पर्व को मनाते हुए हम जहां उनके प्रति अपनी श्रद्धांजलि प्रस्तुत करेंगे वहां उनके जीवन और मृत्यु से मिलने वाली अनेक शिक्षाओं को अपने जीवन का अंग बनाने की भी चेष्टा करेंगे। इसी प्रकार से हम सच्चे अर्थों में महर्षि निर्वाण दिवस मना सकते हैं।

मनुष्य का विकास शारीरिक, मानसिक और आत्मिक स्वस्थता अथवा बल से हुआ करता है। जब इन्द्रियों और मन में, मन और आत्मा में और आत्मा तथा परमात्मा में सामंजस्य (मेल) उत्पन्न हो जाता है तभी उपर्युक्त विकास की प्रक्रिया पूरी होती है।

महर्षि दयानन्द ने अपनी आयु का बड़ा भाग इसी सामंजस्य के प्राप्त करने में लगाया था। उनमें आत्मिक बल बहुत था जिसके द्वारा उन्होंने मृत्यु से निर्भीकता प्राप्त की थी और इसी लिये मृत्यु शय्या पर मुस्कराते, गुरुदत्त जैसे नास्तिक को आस्तिक बनाते और यह कहते हुए कि 'प्रभो! आपने अच्छी लीला की। आपकी इच्छा पूर्ण हो।' दुनिया से कूच किया। उनमें मानसिक बल भी प्रचुर मात्रा में था जिसके बल पर उन्होंने समाज और देश का सफल नेतृत्व किया। उनका शारीरिक बल अथाह था जिससे जहां उनके हाथों से राव कर्णसिंह की तलवार के टुकड़े हो गये वहां दूसरी ओर घोर जंगलों में उनकी हुंकार मात्र से रीछ आदि भयभीत होकर इधर-उधर हो जाया करते थे।

शरीर, मन और आत्मा का सामंजस्य ब्रह्मचर्य, बोध प्रतिबोध और अन्तर्मुखी होने से सिद्ध हुआ करता है।

ब्रह्मचर्य का अभिप्राय है मन, और इन्द्रियों आदि का संयम। नेत्रों का संयम 'मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे' की शिक्षा को चरितार्थ करने से सिद्ध होता है। मन का संयम काम, क्रोधादि के दमन से पूर्ण होता है। ब्रह्मचर्य का मुख्यतम आदर्श उत्पादन शक्ति के प्रति सम्मान का भाव उत्पन्न होने और शरीर ईश्वर का मन्दिर है ऐसी विशद प्रेम की भावना बन जाने पर देदीप्यमान हो जाता है। इन्द्रियों से प्राप्त ज्ञान से बुद्धि आदि भीतरी इन्द्रियों की शुद्धि हुआ करती है और आत्मा के द्वारा प्राप्त ज्ञान से आत्म-शुद्धि होती है। इन दोनों शुद्धियों से चित्त एकाग्र और उसका निरोध सहज हो जाता है। चित्त की वृत्तियों के निरोध से मनुष्य आत्मस्थ होने लगता है। इन प्रक्रियाओं की पूर्ति हो जाने पर मनुष्य वास्तविक अर्थ में मनुष्य बन जाता है। उसके शरीर में बल और कान्ति होती तथा मन एवं आत्मा में दिव्य ज्योति का प्रकाश होता है। वह समझने लगता है कि संसार में जन्म लेना पतन नहीं अपितु ऊपर उठने का साधन है। इसीलिये उसे प्रत्येक जीव के भीतर दिव्य प्रकाश दिखाई देने लगता है।

इस सामंजस्य का अभिप्राय निटशे का कल्पित अहंकार पूर्ण एवं मदोन्मत्त अत्याचारी पुरुष बनाना नहीं है और न सिकन्दर, जूलियस, सीजर, नैपोलियन वा हिटलर की कोटि का ही मनुष्य बनाना है। उसका काम राम, कृष्ण, गौतम बुद्ध और दयानन्द जैसे दिव्य महाभागों का निर्माण करना है।

महर्षि दयानन्द इन्हीं विभूतियों से युक्त होकर आर्य समाज जैसा विश्व-भावना-मय समाज बनाने में सफल हुए जिसका मुख्य उद्देश्य संसार का उपकार करना है।

महर्षि दयानन्द आजन्म प्रकाश और आनन्द का अजस्र स्रोत बहाते रहे और मरते समय भी जलन कटुता वा बदले का भाव उत्पन्न किये बिना महान् प्रकाश में विलीन हो गये। ऐसा सौभाग्य विरले ही जनों और समाजों को प्राप्त होता है।

सह अस्तित्व

जर्मनी के लोग नगर में गत ९ सितम्बर को कथोलिक कांग्रेस में भाषण करते हुए होली फादर ने लोगों को नास्तिक और ईश्वर विरोधिनी प्रणाली के साथ सह अस्तित्व की मृग मरीचिका से सावधान रहने की चेतावनी दी। हिस होलीनेस ने कम्यूनिज्मका उल्लेख तो न किया परन्तु यह कहा जाता है कि वे रूसी कूटनीतिज्ञ की रोम यात्रा के ११ दिन बाद बोल रहे थे। इस कूटनीतिज्ञ ने महान् पोप के सम्मुख निःशस्त्रीकरण की योजना प्रस्तुत की थी। होली फादर ने रूस की निरंकुश राज्य प्रणाली पर भी अनेक प्रहार किये और कहा कि ईसाई चर्च बड़े संकट के काल में से गुजर रहा है। 'सह अस्तित्व' सत्य के साथ सम्भव हो सकता है, इत्यादि २।

पिछले दिनों इंग्लैण्ड के मजदूर दलीय नेता श्री बेवन ने उद्जन बमों के परीक्षणों का उल्लेख करते हुए अपने एक भाषण में कहा था "मैं बहुत गम्भीरता से यह प्रश्न करता हूं कि राष्ट्रपति आइजन हावर जो कि प्रायः अमरीकी राष्ट्र पर भगवान की अनुकम्पा का आह्वान करते रहते हैं अपने को या संयुक्त राज्य अमरीका को किस प्रकार ईसाई बता सकते हैं जब कि वे इन भयंकर अस्त्रों के परीक्षण के प्रयोग तथा अपने पड़ोसियों को विष देने के अपने अधिकार का दावा करते हैं। क्या ईसाई धर्म में इसके लिये कोई औचित्य ढूंढ सकता है? साथियो! अपने दिमागों से सब भ्रम दूर कर दो। देखो तो सही कि ईश्वर से घृणा करने वालों ने ही उद्जन बम पर प्रतिबन्ध लगाने का प्रस्ताव रखा है और ईश्वर प्रेमियों ने ही उस प्रस्ताव को ठुकराया है।"

निश्चय ही हिरोशिमा और नागा साकी की निर्दोष प्रजा को अणु बम से भूनने वाले आस्तिक अमेरिकनों तथा होली फादर के पास बेविन महोदय जैसे स्पष्ट वक्ताओं का समाधान करने के लिये कोई उत्तर न होगा। जब गत द्वितीय महासमर में आस्तिक अमरीकनों इत्यादि मित्रराष्ट्रों का नास्तिक रूसियों के साथ गठ-बन्धन उचित और सम्भव हो सकता था तब अब सह अस्तित्व सम्भव क्यों नहीं हो सकता? अब आस्तिक नास्तिक की भूल भुलैयों में सह अस्तित्व के प्रश्न को क्यों उलझाया जाता है? अब धर्म की आड़ लेकर वास्तविक इरादों को छिपाने और धर्म को कलुषित करने का प्रयास क्यों किया जाता है? परमात्मा की वर्दी पहन कर शैतान की सेवा का यत्न क्यों किया जाता है? आज का सब से बड़ा रोग यह है कि लोग विपरीत ज्ञान को वास्तविक ज्ञान मानने की भूल कर बैठते हैं और जब बुराई का भलाई के रूप में जान-बूझ कर प्रचार किया जाता है तो दम्भ और पाखंड बन जाता है। इससे दम्भियों का अधिक अपकार होता है। धर्म और दूषित राजनीति के गठ-बन्धन से यह दम्भ बड़ा वीभत्स नाच नचाता है।

ईसाइयत पर अत्याचार करने वाले स्वयं वे लोग हैं जो उसकी आड़ में अधर्म का खेल खेलते हैं। और उसे कलुषित रूप देने का कारण बनते हैं ईसाइयत का यह उपद्रवकारी कलुषित रूप ही है जो राज्यों को इसके बहिष्कार के लिये बाध्य करता है। 'सह अस्तित्व' की मूलभूत भावना यह है कि 'स्वयं जिओ और दूसरों को जीने दो।' इस समय अमेरिका और रूस में आदर्शों का

संघर्ष व्याप्त है। दोनों एक दूसरे की जीवन और शासन प्रणाली को संसार की शान्ति के लिये खतरा बताकर अपनी प्रणाली को बनाये रखना और बलात् दूसरों पर लादना चाहते हैं और इसके लिये बल प्रयोग तक का आश्रय लेने के लिये उद्यत हैं। किसी प्रणाली को बनाये रखने का ढंग बल प्रयोग नहीं और न प्रतियोगिता ही है। यदि उसमें अच्छाई है तो वह स्वयं जीवित रहेगी और यदि नहीं है तो वह अपने आप समाप्त हो जायगी। हम न तो पूंजीवादी प्रणाली को आदर्श प्रणाली मानते हैं और न साम्यवादी प्रणाली को। क्योंकि इन दोनों की प्रवृत्ति जड़वादी है। अतः इनके चिर जीवन की आशा नही की जा सकती। परन्तु यदि रूस सह अस्तित्व के लिये यत्न करता है तो उसके यत्नों का स्वागत होना चाहिये। संसार की शान्ति जब तक और जिस ढंग से कायम रह सके उतना ही अच्छा और श्रेयस्कर है। बौद्ध मत ने वैदिक धर्म के मन्तव्यानुसार सह अस्तित्व का प्रचार किया और बौद्ध मतावलम्बी राज्यों ने चिर काल तक अन्य राज्यों के साथ सह अस्तित्व का उत्तम उदाहरण भी प्रस्तुत किया परन्तु इस सह अस्तित्व के भंग होनेके जहां अन्यान्य अनेक कारण थे वहां मुख्यतम कारण यह था कि यद्यपि वह राजाश्रय मे पालित पोषित हुआ तथापि वह लोगों की भौतिक प्यास के साथ २ आध्यात्मिक प्यास न बुझा सका। आज के राज्यों के सह अस्तित्व के चिर स्थायी होने में यही खतरा देख पड़ता है क्योंकि उसमें लोगों की आध्यात्मिक प्यास बुझाने और आध्यात्मिक प्रेरणा देने की क्षमता नहीं है।

आर्य समाज का सहायता कार्य—

इस वर्ष अक्टूबर मास में यदि यमुना की बाढ़ के पानी ने देहली में रिकार्ड तोड़ा तो बाढ़ पीड़ितों की सेवा सहायता और रक्षा के कार्य की विशालता और उत्तमता ने भी रिकार्ड बनाया यदि यह कहदिया जाय तो इसमें अत्युक्ति नहोगी।

सार्वदेशिक सभा के तत्त्वावधान में आर्य समाज दीवान हालमें दो विशाल सहायता शिविर खोले गये। इन दोनों शिविरों में सार्वदेशिक आर्य वीर दल के प्रधान सेनापति श्री ओ३म् प्रकाश जी पुरुषार्थी की अध्यक्षता तथा सभा प्रधान श्री पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति जी, सभा मन्त्री श्री लाला रामगोपाल जी सभा कोषाध्यक्ष श्री ला० बालमुकुन्द जी आहूजा तथा अन्तरंग सदस्य श्री प्रो० रामसिह जी के मार्ग प्रदर्शन में सहायता का शानदार कार्य हुआ। श्री पुरुषार्थी जी को श्री लाला चतुरसेन जीगुप्त, श्री ओ३म् प्रकाश जी. श्री वेदीराम जी, श्री लक्ष्मी दास जी, श्री राजसिह जी, श्री पं० सेवाराम जी, श्रीमती सावित्री देवी जी, सभा के कार्यकर्त्ता श्रीयुत प० रामस्वरूप जी, श्री पोकरमल जी आदि आदि सज्जनों का मूल्यवान सक्रिय योग प्राप्त रहा। आर्यवीर दल के कर्मठ और उत्साही कार्यकर्त्ताओं और स्वय सेवकों ने तो सर्वात्मना अपने को सेवा के अर्पण कर रखा था। इस समस्त उत्तम व्यवस्था और सहयोग के बल पर ही कार्य सफलता पूर्वक सम्पादित हो सका जिसकी प्रशंसा न केवल जनता के माने हुये नेताओं और राज्याधिकारियोंने ही की अपितुजिन्हे प्रधानमंत्री माननीय पं० जवाहरलाल नेहरू ने भी आदर की दृष्टि से देखा। दोनों शिविरों मे आश्रय पाने वाले नरनारियों की संख्या १५००० तक पहुँच गई थी। औषधि, दूध, आदि के अतिरिक्त भोजन का प्रबन्ध भी आर्य समाज की ओर से मुफ्त था। एक समय में ५००० से लेकर १५००० तक व्यक्तियों के भोजन का सुप्रबन्ध कितना परिश्रम तथा व्यय साध्य था इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। देहली की आर्य हिन्दू जनता ने सहायता के लिये अपने हृदयों को खोल देने के साथ २ अपने साधनों को भी खिल खोल

कर सहायता कार्य के अर्पण कर दिया था।

आर्य समाज के सेवा केन्द्रों ने अधिकांश आश्रितों को अपने व्यय पर ही उनके घर पर पहुँचाया जिसके लिये कई ट्रक काम करते रहे। सार्वदेशिक सभा ने कार्य आरम्भ करने के लिये अपने कोष से ५००) दिया था। सभा के उप प्रधान श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज ने भी समय २ पर केन्द्रो का निरीक्षण करके पीड़ितों को आश्वासन तथा कार्य कर्त्ताओं को प्रोत्साहन प्रदान किया। इन केन्द्रों के अतिरिक्त अलीपुर, यमुना बाजार और लाजपतराय मार्केट के केन्द्रों को भी संभाला। सभाके समक्ष इस समय पशुओं के जीवन रक्षा की गम्भीर समस्या है जो बिना चारेके बाढ़के समय तथा बाढ के बाद मरणासन्न अवस्था को पहुंचे हुये है। आर्य समाज केन्द्र भूसे और चारे के संग्रह और वितरण में व्यस्त है। सैकड़ों मन चारा एकत्र किया जाकर बांटा जा चुका है। दयाभाव रखने वाले सम्पन्न जनो को पशुओं की रक्षा के लिये आगे आना चाहिये। चारे की सहायता अलीपुर केन्द्र में, और चारे के लिये धन की सहायना सार्वदेशिक सभा में पहुंचनी चाहिये।

सार्वदेशिक सभाके केन्द्रों के अतिरिक्त आर्य समाज करौल बाग, बिरला लाइन्स आदि ? समाजों ने भी सराहनीय सहायता कार्य किया।

समाज विरोधी प्रगतियाँ

समय समय पर होने वाली विशेषतः रेलवे, डाकखाने आदि की सामुदायिक हड़तालों से नागरिक प्रजा को बहुत कष्ट होता है। अपनी उचित वा अनुचित मांगों को मनवाने के लिए हड़तालों के द्वारा शासन को विवश करने का प्रयत्न करना जहाँ हमारी नागरिक भावना और देश निष्ठा की कमी का द्योतक है वहां समाज विरोधी कार्य भी है। बार २ की हड़तालों से शासन को कठोर बनाने का निमन्त्रण देना है। अब वह समय आ गया है जब कि शासन को इस प्रकार के समाज विरोधी कार्यों को रोकने का सक्रिय उपाय करना चाहिये। एक ओर तो संविधान ने अपरिमित वैयक्तिक स्वतन्त्रता दी हुई है और दूसरी ओर शासन की मैशनरी भ्रष्ट है जिससे कानून का प्रचलन प्रभावोत्पादक बनने से रह जाता है। इसीलिये समाज विरोधी तत्वों को सिर उठाने का खुला मौका मिल रहा है। वैयक्तिक स्वतन्त्रता लिखने बोलने की स्वाधीनता उत्तम वस्तुएं हैं परन्तु जब इनका दुरुपयोग इस सीमा पर पहुंच जाय जहां नागरिक प्रजा का सुख और देश की आन्तरिक शान्ति और सुरक्षा खतरे में पड़ जाय तब कठोरतम कार्यवाही का न किया जाना शासन के लिये महंगा सौदा सिद्ध होता है। सन्तोष इतना ही है कि केन्द्रीय शासन इस दिशामें असावधान नहीं है। धार्मिक नेता पुस्तक कांड, देहली बम कांड, हाल में हुई विविध हड़तालों, अहमदाबाद कांड, फायल चोरी कांड आदि आदि ने शासन की आंखें पर्याप्त रूप से खोल दी हैं।

परमाणु बमों का मौसम पर प्रभाव

इस वर्ष भारतवर्ष में मुख्यतया बंगाल बिहार पश्चिमी उत्तर प्रदेश और पञ्जाब में जो अतिवृष्टि हुई, बाढ़ें आईं और असीम हानि हुई है उसके कई कारण बताए जा रहे हैं। कोई तो इसे पापों का फल बताता है, कोई कांग्रेस शासन का अभिशाप प्रकट करता है और अधिक समझदार जन इसका कारण उद्जन बमों के परीक्षणों से उत्पन्न मौसम की विविधता और विचित्रता बताते हैं। पहली कोटि के कारण अन्ध विश्वास और दूषित मनोवृत्ति के सूचक होने से गणनीय नहीं हैं। अन्तिम कारण अवश्य विचारणीय है। इसका आंशिक संकेत गत वर्ष उत्तर प्रदेश की विधान सभा में राज्याधिकारियों ने भी किया था।

१९४५ के बाद से अमेरिका, रूस और ब्रिटेन ने परमाणु बमों के अनेक परीक्षण किए हैं। अमेरिका के प्रसिद्ध रसायन शास्त्री डा० इर्विंग बेंगल्स फ्रोर्ड का कथन है कि इन परीक्षणों के कारण न्यू इंग्लैंड की ओर तूफानों का जोर बढ़ गया। जर्मनी में जून का महीना असाधारण रूप से ठंडा और नम रहा। वहां की संसद के कुछ सदस्यों ने इसकी जांच करने की मांग की थी। फ्रांस और इटली में भी लोगों का यह विश्वास है कि इन परीक्षणों के कारण ही गत मई जून में मौसम बड़ा विचित्र रहा। समुद्र तटवर्ती तूफानों की संख्या १९५१ में ३०० से बढ़ कर १९५३ में ५३२ हो गई। १९५४ में ७९९ बार तूफान आए और १९५५में ९०० बार। युरोप में गत सौ वर्ष में ऐसी सर्दी नहीं पड़ी जैसी कि इस बार पड़ी। स्पेन में एक स्थान पर ७० वर्ष बाद बर्फ पड़ी। हालैंड में इतनी भीषण बाढ आई जैसी गत ५०० वर्ष में कभी नहीं आई थी। डा० महोदय ने अपने कथन की पुष्टि मे उन घटनाओं की चर्चा की जो १० नवम्बर १९५५ को सोवियत संघ द्वारा एक विशाल परमाणु बम के विस्फोट के बाद घटित हुई। इस बम का विस्फोट रैंगल द्वीप समूह और बेकाल झील के मध्य किया गया था। विस्फोट के १ दिन बाद ११ नवम्बर को ही अमरीका के मोटाना प्रदेश पर ठंड का भीषण प्रकोप हुआ। यह ठंड पश्चिम और दक्षिण की ओर अमरीकी पठार तक फैल गई थी। लोग एक सप्ताह तक इस ठंड से ठिठुरते रहे और लाखों एकड़ खड़ी फसल को पाला मार गया। मोटाना राज्य के हैलन नामक स्थान में ६ दिन तक लगातार तापमान शून्य से नीचे रहा। इस प्रदेश में अन्य स्थानों पर तो तापमान इतना नीचे गिर गया था कि इनके इतिहास में कभी नहीं गिरा।

यद्यपि विश्व की मौसम विशेषज्ञ संस्था का कहना है कि इस बात का कोई कारण नहीं दिखाई देता कि इन बमों के परीक्षणों से मौसम पर कोई प्रभाव पड़ा है तथापि उपरोक्त घटनाओं के प्रकाश में यह तर्क समाप्त हो जाता है कि ये परिवर्तन प्राकृतिक हैं। कार्य्य कारण सम्बन्ध से यही निष्कर्ष निकलता है कि यह असामान्य परिवर्तन इन प्रयोगों का ही परिणाम है। वैज्ञानिकों को उचित है कि वे इन परीक्षणों के मौसम पर पड़ने वाले अनिष्ट वा लाभप्रद प्रभावों की ऊहा पोह करके सुनिश्चित परिणामों पर पहुँचने का शीघ्र से शीघ्र प्रयत्न करें।

धर्म और मतान्धता

अक्टोबर ५६ के 'माडर्न रिव्यू' में उपर्युक्त शीर्षक से 'किताब कांड' पर विचार किया गया है। सम्पादक महोदय ने इस कांड के तथ्यों पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाल कर यह शिकायत की है कि जिम्मेवार मुसलमानों ने अपने मतान्ध मतावलम्बियों के आपत्तिजनक एवं अपराध पूर्ण रवैये के प्रति मौन रक्खा और अपना मुंह उस समय खोला जब कि वह कांड लगभग अपना घातक कार्य कर चुका था। उन्होंने देश के शासन के उच्च कर्णधारों की निरपेक्षता और तटस्थता को अत्यन्त अदूरदर्शिता पूर्ण बताते हुए अत्यन्त भयानक खतरों से भरा हुआ बताया। उनकी सब से बड़ी शिकायत यह है कि उन उपद्रवों में सब से प्रमुख हाथ मुसलमानों के एक वर्ग का था परन्तु किसी भी जिम्मेवार राजनैतिक नेता ने (हिन्दू महा सभा के प्रधान को छोड़ कर) मुसलमानों के उस वर्ग का दोष बताने का साहस न किया। इसका कारण आने वाले बड़े चुनाव या अन्य कोई क्यों न हो, परन्तु यह रवैया निंदनीय है। कम्यूनिस्टों के रवैये पर तो घृणा ही प्रकट की जा सकती है। अन्त में वह श्रीयुत के० एम० मुंशी के रवैये के खंडन में लिखता है :—

"अन्त में हमें श्रीयुत मुंशी के विषय में कुछ

करनाल पुलिस की अनधिकार चेष्टा

कमला देवी को पाकिस्तान भेजने की धमकियां

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली के मन्त्री श्री लाला रामगोपाल जी का वक्तव्यः—

सार्वदेशिक सभा के मन्त्री श्री राम गोपाल जी ने एक प्रेस वक्तव्य देते हुए बताया कि सभा कार्यालय में १५-६-५६ को इस प्रकार की शिकायत पहुँची कि कमला नामक एक १६ वर्ष पूर्व शुद्ध हुई देवी को करनाल की पुलिस पाकिस्तान भेजने की फिकर में है। कारण यह बताया गया कि कमला के पति राम स्वरूप से उसकी अनबन चल रही है जिसके कारण राम स्वरूप कमला से बदला लेने के लिये पुलिस से मिल कर उसे उसकी पालित पुत्री शीला सहित नरेले से गिरफ्तार कराके करनाल ले गया है और बदला लेने की भावना से अब उसे पाकिस्तान भिजवाने की चिन्ता में है। यह भी सूचना मिली थी कि पुलिस ने कमला की पालित १६ वर्षीय पुत्री शीला को उससे अलग करके कहीं रख दिया है जिसका पता नहीं लग रहा।

इस आधार पर करनाल के डिप्टी कमिश्नर को सभा से १७-६-५६ को एक रजिस्टर्ड पत्र भेज कर कमला को बिना जांच पूरी किये पाकिस्तान न भेजने की प्रार्थना की गई और उन्हें आर्य समाज और आर्य जनता की भावनाओं से भी अवगत कराया गया। हो सकता है कि उन्होंने अपने ढंग से जांच की हो परन्तु ताजे समाचारों से विदित हुआ है कि कमला के साथ करनाल पुलिस की धांधली पूर्ववत् चल रही है और उसे पाकिस्तान भेजने के लिये बार बार धमकाया डराया जा रहा है। अतः सन्देह होना स्वाभाविक है कि डिप्टी कमिश्नर महोदय सभा के पत्र की पहुंच देने के शिष्टाचार से भी क्यों मौन हैं और सभा को पता नहीं कि उसके पत्र पर क्या कार्यवाही हुई है?

दिनांक १६-१०-५६ को कमला देवी स्वयं

कहना है जिनके एक उत्तरदायित्वपूर्ण प्रकाशनगृह (भारतीय विद्या भवन बम्बई जिसने 'धार्मिक नेता' पुस्तक को पुनर्मुद्रित किया था) के योग्य और जागरूक सम्पादकत्व ने हमें आपत्ति मे डाला। यदि नर्म से नर्म शब्दों का प्रयोग किया जाय तो पुस्तक के प्रकाशन और उसके लिये क्षमा याचना करने के प्रकार की दृष्टि से उनका व्यवहार नितान्त अनुत्तरदायित्वपूर्ण था। उन्होंने स्वयं यह स्वीकार किया कि उन्होंने पुस्तक को नही पढ़ा था। इस पर भी वे पुस्तक के भारतीय संस्करण के लिये भूमिका लिखने और भारतीय प्रजा को पुस्तक का अवलोकन करने की सिफारिश करने से न रुके। फिर इस पर भी विरोध की पहली चिनगारी के निकलते ही वे पुस्तक का खण्डन करने में न झिझके और इस बार भी उन्होंने आलोचना और विरोध के औचित्य का ठीक २ निरूपण करने का कष्ट न किया। इस प्रकार श्रीयुत मुंशी महोदय ने जिनकी इतिहासज्ञ के रूप में प्रसिद्धि है, पुस्तक के मंडन और खण्डन के द्वारा अनुत्तरदायित्वपूर्ण रवैये का वह उदाहरण प्रस्तुत किया है जिसका अन्य किसी उदाहरण के द्वारा अतिक्रमण होना कठिन होगा।

—रघुनाथप्रसाद पाठक

सभा कार्यालय में आई और अब तक की सब घटनाओं से सभा को अवगत कराया और वह बयान भी दिखाये जो कि उसकी पालित पुत्री शीला ने अदालत में दिये हैं कमला और शीला के बयानों और आर्य समाज सदर बाजार के पुराने कागजात को देख कर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि करनाल की पुलिस ने १४ दिन तक बिना अदालत की आज्ञा लिये कमला को एक पुलिसमैन के घर में रोके रखकर असम्य अपराध किया है और कानून की अवहेलना की है। अब चूंकि अदालत में भी बयान दे चुकी है कि उसे १४ दिन तक एक पुलिसमैन के घर पर पुलिस ने रोक रखा और नाना प्रकार से उसे डराया धमकाया गया और शीला के बयान से भी जो उसने ९-१०-५६ को अदालत में दिये हैं इस वक्तव्य की पुष्टि होती है अतः यह समझ में आने वाली बात है कि पुलिस इस भय से कि १४ दिन तक बिना अदालत की आज्ञा लिये कमला को रोके रहने की बात आगे न बढ़े उसे शीघ्र से शीघ्र रिकवरी कैम्प में भेज देना चाहती है।

एक बात और भी आश्चर्यजनक है कि शीला कमला की पालित पुत्री है। रामस्वरूप उसे बेचना चाहता है जैसा कि उसने अदालत में बयान किया है और वह कमला के साथ रहना चाहती है राम स्वरूप के साथ नहीं। ऐसी अवस्था में पुलिस ने किस कारण शीला को राम स्वरूप के हवाले किया हुआ है? शीला और राम स्वरूप के अदालत में दिये गये बयानों से यह भी विदित होता है कि शीला राम स्वरूप की पुत्री नहीं है कमला ने उसे पाला है। राम स्वरूप ने ३॥ मास हुये अपना दूसरा विवाह किया है जिसे वह पहला विवाह कहता है और कमला को अपनी रखेल बताता है। ऐसी अवस्था में भी शीला के ऊपर उसका क्या अधिकार हो सकता है? अतः यह हो सकता है कि पुलिस अपने अपराध को छिपाने के लिये कमला और शीला का सम्बन्ध विच्छेद कराने के लिये ही कमला को रिकवरी कैम्प में भेजने का प्रयत्न कर रही प्रतीत होती है।

कमला को शुद्ध हुये लगभग १६ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं इस लिये उसका मामला पार्टीशन के समय के बने अपहृत देवियों की मुक्ति के कानून के अन्तर्गत न आ सकता है और न लाया जा सकता है। प्रधान मन्त्री प० जवाहर लाल नेहरू की लोक सभा में की गई घोषणा के अनुसार उपर्युक्त कानून के अन्तर्गत कोई महिला बिना उसकी राजी के पाकिस्तान नहीं भेजी जा सकती। कमला देवी को पाकिस्तान भेजे जाने का प्रश्न तो किसी भी प्रकार नहीं उठता। मुझे भय है कि करनाल की पुलिस जिस कानून का जाल कमला के लिये बिछाना चाहती है वह स्वयं उसी में न फंस जाय। इस मामले को आर्य समाज ने हाथ में ले लिया है अतः वह न्याय प्राप्ति के लिये कोई प्रयत्न उठा न रखेगा क्योंकि यह विषय प्रमुख नीति और मौलिक अधिकारों के रक्षण से सम्बद्ध है। शुद्धि आर्य समाज का मौलिक सिद्धान्त और उसके पुरोगम का एक मुख्य अंग है। इस प्रकार का प्रयत्न जिसकी ऊपर चर्चा की गई है निश्चय ही आर्य समाज के पुरोगम और नीति पर भारी आघात है जिसे बर्दाश्त नहीं किया जा सकता और न किया जायगा।

मुझे पूर्ण आशा है कि पंजाब सरकार के उच्च अधिकारी, करनाल के डिप्टी कमिश्नर जो इस मामले में मौन मालूम होते हैं और भारत सरकार का गृह मन्त्रालय एक असहाय देवी की रक्षा करेगा और इस बात के लिये तत्काल सचेत होगा कि करनाल पुलिस की अनधिकार चेष्टा की समुचित जांच की जाये तथा सम्बन्धित अधिकारियों को समुचित दण्ड दिया जाये।

दयानन्द की ज्योति जगत् में—
जगी, जग रही और जगेगी।

(१)

अभिनव भारत का निर्माता,
जाति-जननि का भाग्य विधाता,
प्राणि मात्र का संकट त्राता,
फहरी धवल ध्वजा फहरेगी—
जगी, जग रही और जगेगी।

(२)

ऋषि-वचनामृत-पान करेंगे,
सच्चरित्र-निर्माण करेंगे,
सब सब का कल्याण करेंगे,
वसुधा बृहत कुटुम्ब बनेगी—
जगी, जग रही और जगेगी।

(३)

सत्ता का स्वरूप निखरेगा,
समता-स्नेह-वारि बरसेगा
धर्म्म, कर्म्म के साथ रहेगा,
सदा ज्ञान गंगा उमडेगी—
जगी, जग रही और जगेगी।

(४)

सुखी, स्वस्थ सम्पन्न रहेंगे,
सब सुभद्र सद्भाव गहेंगे,
आधि-व्याधि संकट न सहेंगे,
वाणी से रस धार बहेगी—
जगी, जग रही और जगेगी।

(५)

सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य्य व्रत,
अपरिग्रह, अस्तेय, भावरत,
जीवन बने सभी विधि संयत,
सद्गुण-स्नेह-लता उलहेगी—
जगी, जग रही और जगेगी।

दयानन्दोदय

(ले०—श्री हरिशङ्कर शर्मा)

(६)

शुचिता, तप, सन्तोष धरेंगे,
सत्संगति, प्रभु भक्ति करेंगे,
धर्म्म-हेतु ही जियें—मरेंगे,
धरणी स्वर्ग समान सजेगी—
जगी, जग रही और जगेगी।

विदेश से प्राप्त पत्र

श्रीयुत ब्रह्मचारी उषर्बुध जी

श्रीयुत ब्र० उषर्बुध जी २-६-५६ को जलपोत द्वारा लन्दन से ट्रीनीडाड पहुँच गये हैं। इस द्वीप में २ लाख भारतीय रहते हैं। १४ आर्य समाजें व ८ प्राइमरी स्कूल हैं। यहाँ की स्थिति अन्य भारतीय प्रवासियों से भिन्न है। भारतीय स्त्रियां पाश्चात्य वस्त्र पहनती हैं। सब का मातृभाषा अंग्रेजी। वहा से कनाडा, अमेरिका, ब्राजील और अर्जेन्टाइना आदि २ पुरोगम बनेगा। ब्रह्मचारी जी २ दिन ट्रीनीडाड ठहर कर ब्रिटिश गायना चले गये हैं। वहां ४२ आर्य समाजें हैं। वहां अनुमानतः १० हजार आर्य जन हैं। वहां भी स्त्रियां पाश्चात्य वेष भूषा धारण करती है। आर्य समाज के स्कूल गायना ओरियण्टल कालेज की श्री पं० श्रुतिकान्त विद्यालंकार के आने से विशेष उन्नति हुई है। वहां अमेरिकन एर्यन लीग का एक सामाजिक संगठन है। वहा आर्यसमाज को Vedic cathedral कहते हैं। उसमें ब्रह्मचारी जी के सम्मान में एक स्वागत सभा हुई जिसमें नगर के गण्यमान्य लोग कैबिनट मिनिस्टरों आदि ने भाग लिया। बहुत से लोग १००-१०० मील से सभा में आये थे। वहां भारत के प्रति बड़ा मान है। स्थान २ पर ब्रह्मचारी जी का स्वागत सत्कार हो रहा है। २३-६-५६ से वरबीस में वेद कथा आरम्भ होगी। ब्रह्मचारी जी के आगमन से आर्य समाज के कार्य को बड़ी प्रेरणा मिली है।

श्रीयुत ब्र० धीरेन्द्र जी शील लंदन

ब्रह्मचारी धीरेन्द्र जी शील युरोप के भ्रमण से लौट कर लंडन पहुंच गए हैं। एमस्टर्डम (हालैंड) और क्लोन (जमनी) मे उनके आर्यसमाज विषय पर डच तथा जर्मन भाषाओं में तीन लेख छपे हैं। भारत के सांस्कृतिक प्रतिनिधि के रूप में बेलजियम, हालैंड व जर्मनी के पत्रकारों, प्राध्यापकों और विभिन्न संस्थाओं से सम्पर्क स्थापित किया। वहां भारत के प्रति सम्मान हैं।

२५ सितम्बर को लंडन से ६० मील दूर के एक स्थान के ऐतिहासिक चर्च में विश्व धर्म सम्मेलन में आर्य धर्म के प्रतिनिधि के रूप में उन्होंने भाग लिया। उन्होंने गीता, उपनिषद् तथा वेद के स्थलों का पाठ तथा व्याख्या प्रस्तुत की।

श्रीयुत पूज्यस्वामी ध्रुवानन्द जी

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज ४-६-५६ को प्रात ६ बजे एलडोरेट पू.अफ्रीका से श्रीहंसराजजी अग्रवाल की कार में टोटोरो के लिये रवाना हुए जो एलडोरेट से ६० मील दूर है। एलडोरेट से १० मील चलकर कार ने स्लिप किया। उन्हें वहा आधा घण्टा रुकना पड़ा। ८-१० नेटिवों (अफ्रीकनों) की सहायता से मोटर गड्ढे से निकाली गई पुनः २५-३० मील चलने पर ऐसा मार्ग मिला कि ट्रैक्टर के एंजिन की सहायता से कीचड़ से मोटर निकाली गई। २॥ घंटे रुकना पड़ा। ५ ता० को २ बजे दिन में टोरोरो पहुंचे। वहां कभी आर्य समाज था परन्तु अब कुछ वर्षों से वहां आर्यसमाज नही है अबतो केवल पवित्र आचरण का दृढ़ आर्य समाजी एक ही परिवार है। मांस मछली अन्डा और शराब कुछ भी नही खाते पीते। हवन और सन्ध्या प्रतिदिन होता है। ४ और ५ सितम्बर को श्री हेमराज मिठ्ठा भाई मेत्री इण्डियन एसोसियेशन के प्रधानत्व में २ सार्वजनिक भाषण हुए। ५ सितम्बर को दिन में गवर्नमेन्ट कन्ट्रोला इंग्लश स्कूल में भी व्याख्यान हुआ। श्री स्वामी जी ८ सितम्बर को कम्पाला पहुँचे।

जिस घर में मांस, मछली, अंडा और शराब का प्रयोग होता है स्वामी जी उस घर में भोजन नहीं करते। गवर्नमेंट इंग्लिश स्कूल के हैडमास्टर मांस मछली तो न खाते थे परन्तु अण्डा खाते थे। जब उन्होंने स्वामी जी को भोजन का निमन्त्रण दिया तो उन्होंने पूछा 'आप अन्डा खाना छोड़ दें तो मैं आपके यहां भोजन कर सकता हूं। उन्होंने अन्डा न खाने की प्रतिज्ञा की तो स्वामी जी ने उनके घर पर भोजन कर लिया।

परोपकारिणी सभा और उसका प्रकाशन कार्य

(लेखक—श्रीयुत पं० गंगाप्रसाद जी रिटायर्ड चीफ जज, भूतपूर्व प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा समासद् परोपकारिणी सभा)

(१)

(१) सभा की स्थापना व पूर्व अवस्था

कुछ दिन हुए मेरे पास श्री ताराचन्द जी गाजरा प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा सिन्ध का एक पोस्ट कार्ड बम्बई से आया जिसकी पूरी नकल नीचे दी जाती है :—

'पता नहीं चलता कि वैदिक यन्त्रालय व परोपकारिणी सभा का इस समय क्या हाल है, आज से कुछ वर्षों पूर्व आपने आन्दोलन किया था कि परोपकारिणी सभा का निर्माण बदला जाय, उसमें भिन्न २ सभाओं के प्रतिनिधियों को स्थान दिये जायें। मेरा विचार है कि पुनः आप इस प्रश्न को उठावें, और उसमें कोई कानूनी अड़चन हो तो उनके हटाने का यत्न करें।"

यदि यह पत्र किसी साधारण आर्य समाजी का होता तो मै संक्षेप से उसका उत्तर दे देता। पर श्री ताराचन्द गाजरा एक वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध व अनुभव वृद्ध आर्य नेता हैं, वे बहुत वर्षों से सिन्ध आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान रहे हैं। परोपकारिणी सभा के सगठन में संशोधन करने के लिये जो आन्दोलन मेरे द्वारा सन् १९४१ व ४२ में हुआ था, (जिसकी ओर पूर्वोक्त पत्र में संकेत है) उसकी कथा कुछ लम्बी है। उसका तथा परोपकारिणी सभा का अन्य वर्णन लिखने में विषय बढ़ना ही था। इसलिये मैंने यह उचित समझा कि श्री ताराचन्द जी को पत्र का उत्तर भेजने के स्थान में यह लेख 'सार्वदेशिक' पत्र मे भेजूं जिसको सभा के सब सदस्य तथा अन्य आर्य नेता भी देख सकें।

श्री परोपकारिणी सभा की स्थापना सन् १८८३ मे उदयपुर में ता० २७-२-८३ को श्री स्वा० दयानन्द जी सरस्वती के स्वीकार पत्र Will द्वारा हुई थी। महाराणा सज्जनसिंह जी उसके सभापति व प्रधान नियत हुए थे, और २२ अन्य सदस्य थे।

३०-१०-८३ को अजमेर में स्वामी जी ने निर्वाण प्राप्त किया।

२८-१२-८३ को अजमेर ही में परोपकारिणी सभा का पहला अधिवेशन हुआ जिसमें सभा के प्रमुख सदस्य उपस्थित हुए थे। श्रीमहादेव गोविंद रानडे जज पूना भी आये थे। उनकी ओरसे सभा में यह प्रस्ताव रखा गया कि आर्यसमाजों के शासन के लिये प्रान्तीय सभा बनेंगी, जब तक वे सभा न बनें, तब तक परोपकारिणी सभा ही उनकी शिरोमणि सभा रहेगी परोपकारिणी सभा को चाहिये ऐसी व्यवस्था करे कि जो सभासदों के स्थान रिक्त होंगे, उनकी पूर्ति समाजों के अथवा प्रान्तीय सभाओं के प्रतिनिधि नियत करके करे—जब तक कि इस सभा के आधे सभासद इस प्रकार नियत किये हुए न हो जावें। सभा ने इस उत्तम प्रस्ताव को स्वीकार किया। परन्तु इसके अनुसार कोई कार्रवाई न हुई। -

सन् १८८६ में पंजाब में एक आर्य प्रतिनिधि

सभा बन गई। उसीके कुछ पीछे संयुक्त प्रान्त में आर्य प्रतिनिधि सभा स्थापित हुई। पीछे और २ प्रान्तों में भी बनती रही।

यह पहला अवसर था कि परोपकारिणी सभा ने अपने एक प्रतिष्ठित समासद (श्री महादेव गोविन्द रानडे) के बतलाये हुए मार्ग का अवलम्बन न करके आर्यसमाजों पर अपना प्रभाव व सम्बन्ध बढ़ाने का जो अवसर था उसको खो दिया।

(२) सन् १९०६ का सभा का विशेष अधिवेशन

आर्य समाजों मे अपनी एक शिरोमणि सभा प्रान्तीय सभाओं के ऊपर बनाने के विचार चलते रहते थे। इस समस्या को हल करने के अभिप्राय से श्री राजाधिराज नाहरसिंह जी ने (जो सभा के मन्त्री थे), परोपकारिणी सभा का एक विशेष अधिवेशन २७-१२-६ को बुलाया। उसमें देश भर की प्रमुख समाजों के नेता आये थे। उनमें इस विषय पर विचार हुआ। पंजाब के कई बड़े नेता श्री महात्मा मुन्शीराम, ला० रामकृष्ण, चौ० रामभजदत्त आदि आये थे। अन्य प्रान्तों के नेता भी उपस्थित हुए थे। विचार होते समय म० मुन्शी राम जी ने कहा था—"यदि बनी बनाई सभा मिल जाय, जिसके पास धन भी सब से धिक है, गौरव भी सब से बड़ा है, उद्देश्य भी सब से उत्तम है, तो फिर क्यों अन्य सभाओं के बनाने का यत्न किया जाय ?" इस पर सदस्यों की एक उपसमिति बनाई गई कि वह विचार करके अपनी रिपोर्ट दूसरे दिन दे देवें। उसके संयोजक श्री नारायण प्रसाद जी नियत हुए (जो पीछे संन्यास धारण करने पर श्री नारायण स्वामी हुए) अन्य ६ सदस्य इस प्रकार थे—(१) डा० चिरंजीलाल लाहौर, (२) मुन्शी चन्दूलाल गुड़गांवा. (३) मुन्शी शिवप्रसाद अजमेर, (४) ला० रामकृष्ण जी जालन्धर, (५) सेठ मांगीलाल अजमेर (७) प० भक्तराम शाहपुरा। इस उपसमिति ने सर्वसम्मति से यह रिपोर्ट दी कि यदि परोपकारिणी इन सुझावों को स्वीकार कर लेवें तो सब समाजे उसके साथ युक्त सम्बन्ध कर लेंगे। सुझाव ये थे :—

(क) सभा में ⅔ समासद प्रान्तीय सभाओं के प्रतिनिधि रक्खे जायें, ⅓ पुराने प्रतिष्ठित सभासद रहें। (ख) नये समासद तीसरे वर्ष बदले जाया करें।

२९-१२-०६ की बैठक में परोपकारिणी सभा ने इस रिपोर्ट को स्वीकार किया। सभा की कार्यवाही में उसका "सर्वसम्मति से स्वीकृत होना" लिखा है। पर उस पर कारवाई करने बाबत कुछ निश्चय किसी प्रकार का नहीं हुआ।

(३) सार्वदेशिक सभा की स्थापना

परोपकारिणी सभा के सन् १९०७ के अधिवेशन में पिछले वर्ष की कार्रवाई का पढ़ा जाना व सर्व सम्मति से स्वीकृत होना लिखा है, पर पूर्वोक्त उपसमिति की रिपोर्ट का कोई जिकर नहीं और न उसके सम्बन्ध में कोई कार्रवाई हुई। परोपकारिणी सभा के लिये सब आर्य समाजों के साथ अपना सम्बन्ध दृढ़ व स्थायी करने का यह दूसरा बड़ा अवसर था जो खो दिया गया।

सार्वदेशिक सभा की स्थापना के लिये आर्यनेताओं में विचार परिपक्व होते रहे थे। परोपकारिणी सभा की ओर से उदासीनता देखकर वे दृढ़ हो गये, २५-६-०८ को आगरे में कुछ नेताओंकी एक साधारण Informal meeting हुई जिसमें सार्वदेशिक सभा स्थापित करने का

निश्चय हो गया, और तदनुसार ३-८-०६ को देहली में सभा की स्थापना हो गई। आरम्भ में ६ प्रान्तीय सभा प्रविष्ट हुईं, और २० सभासद् थे।

(४) सन् १६४१-४२ के आंदोलन का सारांश

श्री परोपकारिणी सभा के संगठन में सशोधन करने का जो प्रस्ताव मैंने सभा में रखा था वह २४ ३-४१ के मेरे पत्र में है। प्रस्ताव लम्बा था और उसकी व्याख्या रूप में, मैंने एक विस्तृत लेख आर्य मित्र मे प्रकाशित किया था। प्रस्ताव का सारांश यह था कि सभा में जो स्थान रिक्त हों उनकी पूर्ति इस प्रकार की जाय कि दो तिहाई सभासद् सार्वदेशिक सभा द्वारा भेजे हुए प्रान्तीय सभाओं के प्रतिनिधि आ जायें, और शेष एक तिहाई स्थानों पर सभा जिनको योग्य समझे नियत करे।

दूसरा अभिप्राय सभा के कार्य में सुधार करने का था। श्री स्वामी जी के स्वीकार पत्र में सभा के लिये तीन उद्देश्य रखे गये थे, उनमें से दूसरा उद्देश्य 'देश देशान्तरों में वैदिक धर्म का प्रचार करना था। देशान्तरों में (नियमित) प्रचार का प्रबन्ध तो अभी तक सार्वदेशिक सभा भी नहीं कर सकी। पर देश के भीतर वैदिक धर्म का प्रचार अपनी २ सामर्थ्य के अनुसार प्रान्तीय सभायें सार्वदेशिक सभा की अध्यक्षता में करती है, और उसके लिये उनके पास कुछ धन भी संग्रह होकर आ जाता है।

स्वीकार पत्र का तीसरा उद्देश्य अनाथ और दीनों का रक्षण, पोषण व शिक्षण था। उसके लिये युक्त प्रान्त में बरेली व आगरे में दो अच्छे अनाथालय है जिनको आर्य समाजें चला रही हैं, पंजाब में भी एक या दो अनाथालय आर्य समाजों द्वारा चलते हैं*। ये अनाथालय सार्वदेशिक सभा की अध्यक्षता में काम कर सकते हैं ऋषि दयानन्द के स्वीकार पत्र का प्रथम उद्देश्य "वेद और वेदांगादि शास्त्रों का प्रचार, अर्थात उनकी व्याख्या करना कराना, छापना छपवाना आदि था। यह उद्देश्य ऐसा है जिसको परोपकारिणी सभा ही अच्छी तरह कर सकती है। इसके लिये सभा के पास एक अच्छा यन्त्रालय भी है अर्थात् 'वैदिक यन्त्रालय'।

मेरा प्रस्ताव परोपकारिणी सभा के १६४१ के अधिवेशन में पेश हुआ। पर कुछ विवाद के बाद वह आगामी वर्ष के लिये स्थगित हो गया। सभा के उपस्थित सदस्यों में अधिक अजमेर निवासी थे जो मेरे प्रस्ताव के समर्थक न थे। मैंने अपने मित्र स्व० राजा ज्वालाप्रसाद के सहयोग से यह यत्न किया कि आगामी अधिवेशन अजमेर में न होकर, देहली या लाहौर में होवे, जहां बाहर के अधिक सदस्यों के उपस्थित होने की आशा हो सकती थी। पर इस यत्न में सफलता न हुई। सन १६४२ का अधिवेशन अजमेर ही में हुआ और मेरा प्रस्ताव विवाद होकर बहुमत से अस्वीकार हो गया।

(शेष अगले अंक में)

---

* देहली में आर्य समाज दीवान हाल के आधीन अच्छा अनाथालय चल रहा है।
—(सम्पादक)

महर्षि दयानन्द और शिखा-सूत्र

[लेखक—श्रीयुत पं० लोकनाथ जी तर्क वाचस्पति]

संसार में प्राय: देखा जाता है कि मनुष्य जिसे सर्व श्रेष्ठ प्राणी कहा जाता है अपनी कुभावनाओं को सत्य सिद्ध करने के लिये वेदादि प्रामाणिक ग्रन्थों तथा इतिहास से अपनी कुभावना के शब्द मात्र को ही लेकर वास्तविकता तथा प्रस्तुत प्रकरण को समझे बिना ही अपनी कुभावनाओं को सत्य सिद्ध करने की चेष्टा करता रहता है जिसका उल्लेख मुझे इस लेख मे करना है। युरोपीय ढंग से रहने वाले धर्म तत्वावलोपी शिखा सूत्र विहीन बाबू लोग अपने शिखा सूत्र लोपी कुकृत्य को महर्षि दयानन्द जी की आज्ञा पालने के साथ सम्बद्ध कर देते हैं। जिन बाबुओं के सम्बन्धमें मैंने कभी अपनी एक संस्कृत कविता मे लिखा था कि "बाबूभ्यो धर्म हीनेभ्य: स्थित्वा मूत्र विसर्जिभ्य:। भीत सूत्र गंत भूमौ शिखाभीता दिवगता" अर्थात धर्म-कर्म विहीन बाबुओं से भयभीत होकर यज्ञोपवीत पाताल में और शिखा आकाश मे भाग गये। अस्तु! इसी प्रकार के बाबू लोग शिखा कटवा देने पर अपने आपको महर्षि दयानन्द जी का आज्ञानुयायी सिद्ध करने की कुचेष्टा करते हैं। क्योंकि महर्षि ने स्वनिर्मित सत्यार्थ प्रकाश के दशम समुल्लास में मनु महाराज के द्वितीयाध्यायस्थ ६५ वें श्लोक 'केशान्त: षोडशे वर्षे-ब्राह्मणस्य विधीयते। राजन्य बन्धोर्द्वाविंशे-वैश्यस्य द्व्यधिके तत: म० अ० २-श्लोक ६५ को देकर अर्थ किया है कि ब्राह्मण के सोलहवें-क्षत्रिय के बाईसवें और वैश्य के चौबीसवें वर्ष में केशान्त कर्म और क्षौर मुंडन हो जाना चाहिये। अर्थात् इस विधि के पश्चात् केवल शिखा को रखके अन्य दाढ़ी मूछ और सिर के बाल सदा मुंडवाते रहना चाहिये। शीत प्रधान देश हो तो सब रखले। और यदि अति ऊष्ण देश हो तो सब शिखा सहित छेदन करा देना चाहिये। इस पर बाबू लोग कहते हैं कि महर्षि की आज्ञा है कि शिखा सहित छेदन करा देना चाहिये। इसीलिये हम शिखा कटाने में दोषी नहीं हैं अपितु महर्षि दयानन्द जी के आज्ञाकारी हैं। आर्यजन विचार करें कि उनका यह कथन निम्नलिखित हेतुओं से कितना निस्सार है? (१) यह कि मनु अथवा दयानन्द जी की यह आज्ञा जन साधारण के लिए नही है अपितु केशान्त सस्कार के पश्चात गुरुकुलों में पढ़ने वाले ब्रह्मचारियों के लिये है क्योंकि मनु महाराज ने स्व कहा है। "मुंडोवा जटिलो वा अथवा स्याच्छिखा जट:" अर्थात् केशान्त के पश्चात ब्रह्मचारी मुंडी जटी अथवा शिखा रूपी जटी होकर रहे। (२) यह कि महर्षि के पाठ में शिखा को रखकर शेष बाल मुंडवाते रहना चाहिये ऐसा वर्णन है। और यह कि अति ऊष्ण देश में शिखा सहित छेदन करा देने का ब्रह्मचारियों को अधिकार दिया गया है न कि सबको। क्यों कि जिस श्लोक की यह व्याख्या है वह ब्रह्मचारियों के सम्बन्ध में है न कि सबके लिए। (३)यह कि क्या भारत अति उष्ण देश है? और कि यदि बाल बच्चों वाले बाबुओं को केशान्त संस्कार के पश्चात् का ब्रह्मचारी भी मान लिया जाय तो प्रश्न होगा यदि भारत अति उष्ण देश नहीं तो शिखा कटवाने का क्या प्रयोजन? भारत की अनुष्णता को तो बाबू लोग स्वय सिद्ध कर रहे है। शीतकाल में शरीर पर कमीज, कमीज

पर गर्म स्वेटर-उस पर गर्म कोट फिर उस पर गर्म ओवर कोट और मफलर आदि पहन कर समय बिताते हैं तो अति उष्णता कैसी ? और यदि उनके सन्तोषार्थ भारत को अति उष्ण देश मान भी लिया जाय तो पुनः बाबू जी साहब महर्षि दयानन्द जी के कथनानुसार अपना सारा का सारा सिर क्यों नहीं मुंडवाते ? भेड़ कतर के समान कहीं छोटे कहीं बड़े बाल बनवा कर सिर में क्यारियां क्यों बनवाते हैं ? इसलिये यह धर्म तत्व विहीनता और मनमानी के अतिरिक्त और कुछ नहीं (४) यदि महर्षि दयानन्द जी का उपर्युक्त व्याख्यान सबके लिये होता तो पंच महायज्ञविधि में ब्रह्मयज्ञ के सम्बन्ध में लिखते हुये क्यों आज्ञा देते कि पूर्वाभिमुख आसन पर बैठे और इसके अनन्तर गायत्री मन्त्र से शिखा को बांध करके रक्षा करें। यदि उपर्युक्त बाबू लोग महर्षि दयानन्दानुकारी हैं तो संध्या के समय शिखा को गांठ कैसे लगायेंगे ? शिखा तो उन्होंने नापित को सौंपदी हुई है। इसलिये वर्णित ब्रह्मचारियों की विशेषावस्था के अतिरिक्त सर्व साधारण को शिखा रखने के लिये महर्षि की भावना प्रेरित करती है कि सब शिखा रखें (५) महर्षि दयानन्द जी ने मुंडन संस्कार में भी शिखा रखने का आदेश दिया है। इसके अतिरिक्त महर्षि जी ने यज्ञोपवीत संस्कार में भी "प्रातः काल बालक का क्षौर करा ······ ···वेदी के पश्चिम भाग में सुन्दर आसन पर पूर्वाभि मुख बैठावे" क्षौर मुंडन शब्द का व्यावहारिक अभिप्राय प्रायः शिखा के अतिरिक्त सिर के शेष बालों को कटवा देना ही होता है जो कि उस्तरे से काटे जाते हैं। शिखा सहित बालों का कटवा देना रुंडन कहलाता है इसके स्थान पर रुंड मुंड शब्द प्रयुक्त होता है रुंड नाम खोपड़ी का है जो सर्व प्रकार के बालों से रहित होती है। इस उपनयन संस्कार में बालक का क्षौर करा कर लाना सिद्ध करता है कि शिखा के अतिरिक्त शेष केश कटवा कर बालक को लाना चाहिये ऐसा ही व्यवहार मन्त्र में देखा जाता है।

(६) महर्षि दयानन्द जी संस्कार-विधि के संन्यास प्रकरण में लिखते हैं कि "जो सन्यास लेने वाला है वह (शिखा के) पांच छः केशों को छोड़कर डाढ़ी मूंछ केश लोमों का छेदन अर्थात् क्षौर करा के यथावत् स्नान करे" और इसके आगे महर्षि जी ने फिर लिखा है कि "इसके पश्चात् मौन करके शिखा के लिये जो पांच सात केश रखे थे उनको एक एक उखाड़ और यज्ञोपवीत उतार कर हाथ में ले जल की अंजलि भर (ओ मां पो वैसर्वा देवताः स्वाहा ओम्भूः स्वाहा) इन मन्त्रों से शिखा के बाल और यज्ञोपवीत सहित जलांजलि को जल में होम कर देवे" इन उद्धरणों से सिद्ध होता है कि महर्षि दयानन्द जी शिखा कटवाने और यज्ञोपवीत उतरवाने के समर्थक न थे अपितु शिखा और यज्ञोपवीत को विद्या का चिन्ह मानते थे।

महर्षि जी सत्यार्थ प्रकाश के एकादशवें समुल्लास में ब्रह्म समाजियों के अनौचित्य पर विचार करते हुए १४ वीं संख्या में लिखते हैं "और जो विद्या के चिन्ह यज्ञोपवीत शिखा को छोड़ मुसलमान ईसाइयों के सदृश बन बैठना व्यर्थ है जब पतलून आदि वस्त्र पहनते हो और तमगों की इच्छा करते हो तो क्या यज्ञोपवीत आदि का कुछ बड़ा भार हो गया था ?" इन कारणों के आधार पर विचारिये कि महर्षि दयानन्द जी शिखा और यज्ञोपवीत रखने के पक्षपाती थे या नहीं ? मैं शिखा सूत्र विहीन बाबुओं से पूछता हूँ कि शिखा कटवाने सम्बन्धी महर्षि जी के विचारों को तोड़ मरोड़ कर शिखा कटवाने की अपनी कुभावना को आप भले ही सिद्ध करने का यत्न करें परन्तु यज्ञोपवीत उतारने के सम्बन्ध में तो उन्होंने कहीं भी कुछ नहीं लिखा तब आप यज्ञोपवीत क्यों उतारे फिरते हैं सत्य है "स्वार्थी दोषान्न पश्यति"।

दीपावली का शुभ सन्देश

पश्चिम के वैज्ञानिक महर्षि दयानन्द की कृपा से वेदों की ओर आ रहे हैं।

अध्यात्मवाद से ही संसार में सुख-शान्ति फैलेगी

[लेखक—महात्मा चन्द्रानन्द वानप्रस्थी पूर्व चांदकरण शारदा अजमेर]

आज दीपावली का पवित्र पर्व है। हमारे लिये दीपावली महान प्रेरणा और उमंग का दिन है। दयानन्द ने निर्वाणपद प्राप्त किया था और ऐहिक लीला समाप्त करतेसमय येशब्द कहेथे कि "ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो।" वे हंसते हुए इस लोक से सिधार गये थे। उन्होंने मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी। उन्होंने सारी आयु ब्रह्मचर्य व्रत रक्खा व हमको यही बतलाया कि प्रकृति वाद Materialism से ससार सुखी नहीं हो सकता। इसी प्रकार बिना कर्म के कोरे ज्ञान से ससार में सुख शान्ति नहीं फैल सकती। यदि संसार में सुखी रहना चाहते हो तो ज्ञान मार्ग और कर्म मार्ग दोनों को साथ लेकर चलो। आज कल जो कोरी द्वितीय पंच वर्षीय योजना की ओर लोगों का ध्यान खींचा जा रहा है, कोरे आर्थिक विकास से सुख माना जा रहा है, यह अशुद्ध विचार है। हमें प्रकृति वाद के साथ २ अध्यात्मवाद को भी साथ लेना पड़ेगा। कोरे प्रकृतिवादी पुरुष गगन

सूत्र

इसी प्रकार महर्षि दयानन्द जी के विचार अर्थात् यज्ञोपवीत धारण करने के सम्बन्ध में भी वैसे ही परिपक्व हैं जैसेकि शिखा के सम्बन्ध में हैं। महर्षि जी ने अपने बनाये ग्रन्थों में तथा भाषणों में यज्ञोपवीत का धारण करना प्रमाणित किया है। शिखा के सम्बन्ध में वर्णित लेख में भी सूत्र धारण करने की पुष्टि होती है और इसके अतिरिक्त अपने संस्कार विधि ग्रन्थ में १६ संस्कारों का विधान किया है। उनमें एक उपनयन संस्कार भी सविस्तार रूप से लिखा है जिसमें यज्ञोपवीत धारण करने का पूर्ण विधान है। उसमें वेद वेदांगो के प्रमाणों से यज्ञ करने यज्ञोपवीत पहनने-भिन्न २ वर्णों के बालकों के लिये भिन्न २ प्रकार के व्रत-आदि लिखे हैं। और उसकी रक्षा का विधान किया है। विवाह संस्कार में भी वधू को यज्ञोपवीत वत् उपवस्त्र धारण करने को लिखा है। भिन्न २ वर्णों के लिये भिन्न २ समय का भी वर्णन किया है और व्रतों के पश्चात् भिन्न२ प्रकार के भोजन करने की आज्ञा दी है। वेदों में तथा अन्यान्य प्रामाणिक ग्रन्थों में यज्ञोपवीत धारण करने का विधान मिलता है। इत्यादि। अतः मैं शिखा सूत्र विहीन लोगों से प्रार्थना करता हूँ कि अपनी दूषित वृत्ति को महर्षि दयानन्द जी की भावना के साथ संबद्ध करने की प्रवृत्ति को छोड़कर सन्मार्ग पर चलिये और महर्षि जी की आज्ञाओं का पालन करते हुये आर्य बनकर शिखा और यज्ञोपवीत को धारण कीजिये। तभी आप महर्षिजी के अनुयायी कहला सकेंगे अन्यथा नहीं।

लुम्बी अट्टालिकाओं और मणिमाणिक्यों से भरे हुए महलों में रहते हुए भी दुःखी हैं और बनों में कन्द, मूल, फल खाकर अकेले रहने वाले सन्यासी, योगी सुखी हैं। कोरे प्रकृति वादियों की कोर भोग और आनन्द. धन और ऐश्वर्य के पीछे दौड़ने वालों को, लख लख योनियों में भटकना पड़ता है। इसी वास्ते "ईशोपनिषद्" में उपदेश दिया है कि तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः तुम त्याग पूर्वक जीवन भोगो। इसी में सुख है। यही उपदेश "गीता" में दिया है। सुख की खोज में भटकने वाले पश्चिमी वैज्ञानिक बड़े २ आविष्कार कर रहे हैं। मनुष्य ने ऐसी २ कलाई पर बांधी जाने वाली घड़ियाँ निकालीं जिससे आप अपना सन्देश अपने दूर बैठे हुए मित्रों को दे सकते हैं। और टेलीविजन द्वारा उनके चित्र भी देख सकते हैं। रेडियो निकाला, जिससे तुम अपने विचार तुरन्त रेडियो प्रसारक को दे सकते हो। इस विजली विज्ञान के युग में मनुष्य नित्य नये साधन जुटा रहा है और नई नई ईजादें "Magnetic tape recorder" "Air conditioner" "Light amplifier" कर रहा है। चुम्बकिय "टेप रिकार्डर" "एयर कंडिशनर" "प्रकाश विस्तारक" जैसे अनेक यन्त्र निकल रहे हैं। "ट्रान्जीस्टर" "Tranjister" का उपयोग होने लगा है, जिसे आप जेब में रखकर, जहां चाहे वहां के स्टेशन से उसकी सुई मिलाकर रेडियो सुन सकते हैं। तथा आकाश वाणी के साथ २ चित्र भी देख सकते हैं। बिना ड्राईवर चलने वाली मोटरों के लिये सड़कें भी बन रही हैं। जिनमें सड़कों के नीचे तार रहेंगे और चुम्बकिय व्यवस्था रहेगी और मोटर का तारों से सम्बन्ध रहेगा जिससे मोटर की चाल धीमी कर सकते हो। मोटर से टक्कर रोक सकते हो।

ईश्वर की अपार महिमा के सामने मनुष्य के आविष्कार कुछ नहीं

वैज्ञानिकों ने "इलैक्ट्रोनिक ब्रेन" Electronic Brain" बनाया परंतु उसका यह बिजली का बनावटी मस्तिष्क मनुष्य के ईश्वरीय बनाये हुये मस्तिष्क की बराबरी नहीं कर सकता। बनावटी मस्तिष्क में कोई दूसरे संचालक की आवश्यकता होती है। परन्तु ईश्वरीय मस्तिष्क मन और आत्मा द्वारा अपने आप संचालित होता है। उसको बाहरी शक्ति की आवश्यकता नहीं। ईश्वर की महिमा अपार है, यह हमारा मन कितना विचित्र है कि एक पलक मारते ही सैकड़ों लाखों मील दूर चला जाता है और करोड़ों मीलों की दूरी की चीजें देखकर उसी समय वापिस लौट आता है। तुच्छ मनुष्य ईश्वर की लीला का पार नहीं पा सकता इसी वास्ते "वेदों" और "उपनिषदों" में और शास्त्रों में ईश्वर की लीला का ही गुण गाया गया है और उसकी ही स्तुतिउपासना और प्रार्थना करना मनुष्य जीवन का मुख्य उद्देश्य बताया गया है। महर्षि दयानन्द ने भी अजमेर में भिनाय की कोठी में प्रकाश पुंज में विलीन होते समय आज के दिन आज से ७५ वर्ष पूर्व यही उद्देश्य हमको दिया कि मनुष्य जन्म का अन्तिम उपदेश सच्चे शिव का साक्षात्कार योग द्वारा करना है। मूर्ति पूजा से परमात्मा और मोक्ष कदापि प्राप्त नहीं हो सकता। आधुनिक "Physics" "फिजिक्स" पदार्थ विद्या में हर एक चीज को "इलैक्ट्रोन" में माना है "सर जेम्स जेन" ने अपनी पुस्तक "Mysterious universe" रहस्य मय संसार में लिखा है। कि यदि हम वास्तविकता देखें तो "इलैक्ट्रोन" भी एक विचार की वस्तु रह जाते हैं। 'समय' और 'आकाश' के साथ अगर हम वर्तमान Theory of causation 'कर्म सिद्धान्त' और Dissection of atom "अणु का विभाजन करना"

को लगावें तो हम को यह बात मालूम हो जायगी कि जो चीज हम देखरहे हैं वह असली नहीं है। हम असली चीज से बहुत दूर है। उदाहरण के लिये सूर्य की किरणें श्वेत दृष्टि गोचर होती है। परन्तु वास्तव में वे सप्त रंगी हैं। यह हमें तब पता चलता है जब वर्षा ऋतु में इन्द्र धनुष होता है। इसी प्रकार पीलिया के रोगी को सब चीजें पीली दृष्टि गोचर होती हैं यद्यपि वे वास्तव में पीली नहीं होती। इसी प्रकार Laughing glass में हंसाने वाले दर्पण मे यदि आप अपना मुख देखें तो विचित्र मोटा बेडौल दिखता है यद्यपि आप वास्तव में ऐसे नहीं हैं। इसी प्रकार मैले दर्पण में आपकी शकल मैली नजर आती है यद्यपि आप वास्तव में ऐसे मैले नहीं। इस वास्ते बाहरी वस्तुओं के धोखे में मत आओ। आईन्सिन की "थियोरी आफ रेलेटिविटी" Theory of relativity अर्थात "सापेक्षवाद" यह सिद्ध करता है कि आकाश में पिंडों की निरपेक्ष गति न तो जानी जा सकती है और न नापी जा सकती है। प्रकाश का वेग सदा ही मालूम पड़ता है चाहे प्रकाश उत्पन्न करने वाला पिंड कितने ही वेग से गति कर रहा हो। संक्षेप में Einstein "आइनस्टाइन" का मत है कि "समय" 'आकाश' तथा 'पदार्थ किसी एक ही तत्त्व के विभिन्न रूप हैं और इन तीनों का परिवर्तन भी हो सकता है। अर्थात 'समय' को 'पदार्थ रूप', 'पदार्थ को 'आकाश रूप' बनाया जा सकता है। वैदिक मत भी यही है।

अब प्रश्न होता है कि वास्तविकता क्या है? इस पर Sir James Jens 'सर जेम्स जिन्स" अपनी पुस्तक Mysterious Universe "मिस्टिरियस यूनिवर्स" रहस्य मय संसार में लिखते हैं कि मशीन के बजाय यह सारा संसार विचारों का महान् समूह है। 'मन' अब कोई नवीन आविष्कार नहीं रहा। अब तो प्राकृतिक संसार का 'मन' ही विशेष कारण माना जाता है। वेद, शास्त्र, पुराण, उपनिषदों में भी यही माना है। इस सत्व, रज, तम, रूप मूलप्रकृति को विकृत करने के लिए परमात्मा ने इच्छा की और एक की अनेक सृष्टि हो गई। Jenn Sullawan "जीन सलोवन' ने लिखा है और प्रसिद्ध गणितज्ञ और 'वैज्ञानिक आइन स्टीन' ने इस बात की ताईद कीहै कि विचारही सारी प्रकृति है। देखो लेख ता० १३ अप्रेल १६३० का जो 'महान् वैज्ञानिकों से वार्तालाप' नामक लेख में छपा है। उससे स्पष्ट विदित होता है कि पश्चिम के नास्तिक अब वेदान्ती बनते जा रहे है और कर्म सिद्धान्त को मानते हुए यही बात कह रहे हैं कि "जीवन और मृत्यु" "उत्पत्ति और प्रलय" ठीक एक दूसरे के पीछे ऐसे ही आती है जैसे "दिन और रात" और यह जीवन मृत्यु का 'चक्र' अनादि काल से संसार में चल रहा है। "पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननी जठरे शयनम्" अर्थात बारम्बार जन्म लेना, बारम्बार मरना और बारम्बार माता के पेट में व गर्भ में शयन करना। अब योरुप के नास्तिक यह मानने लगे हैं कि यह संसार अपने आप पैदा नहीं हुआ। बल्कि इस संसार का सब काम नियम से होता है जिससे कर्मानुसार मनुष्य जीवन और मृत्यु को प्राप्त होता है। संसार की जीवन मृत्यु की पहेली कर्म सिद्धान्त और ईश्वर के न्याय में विश्वास से होती है। स्वामी अभेदानन्द जी की पुस्तक Life Beyond Death "मृत्यु के पश्चात जन्म" ने यह सिद्ध कर दिया है कि मृत्यु के बाद मनुष्य कर्मानुसार जन्म लेता है। (पश्चिम के वैज्ञानिकों ने Law of causation कर्म सिद्धान्त और Uniformity of Nature प्राकृतिक नियम के सिद्धान्त हमारे वैदिक मत के अनुसार माने) यदि आप किसी कमरे में कागज पेंसिल और रंग रख दो तो अपने आप कभी

चित्र नहीं बनेगा। ये चीजें तो जड़ हैं और चित्र के बनाने में उपादान कारण हैं। इनसे चित्र को बनाने के लिये चेतन शक्ति वाले मनुष्य के निमित्त कारण की आवश्यकता है। ठीक वैसे ही जैसे मिट्टी का घड़ा बनाने के लिये मिट्टी, चाक और चेतन मनुष्य रूप कुम्हार की आवश्यकता होती है।

अब यदि आप संसार को नियमानुसार चलने वाला न मानें, और उत्पत्ति तथा प्रलय को, पहिये के समान प्रवाह से अनादि काल से चलने वाला, नियम पूर्वक गति करने वाला, न मानें तो बड़ा अन्धेर हो जाय और सांसारिक कोई बात हमारी समझ में न आवे, और पृथ्वी, नक्षत्र, सूरज, चांद, तारे एक दूसरे से टकरा कर संसार में प्रलय हो जाय। इसी वास्ते शरीर विज्ञान वाले तथा पदार्थ विद्या वाले पहली बात यह मानते हैं कि संसार अपनी सारी गति और उसके सारे नक्षत्र और ग्रह अपनी गति विधियां बन्धे हुए नियमों के अनुकूल करते हैं। सब वैज्ञानिक दो कानून मानते हैं। Law of causation "कर्म सिद्धान्त" और Theory of uniformity of Nature प्राकृतिक नियम। सब लोग यह भी मानते हैं कि आध्यात्मिक संसार में सदाचार का कानून Moral law काम करता है। इसे ही संस्कृत में ऋत् कहते हैं। इसी वास्ते सृष्टि की उत्पत्ति में सबसे पहले 'सत्य' और 'ऋत्' उत्पन्न हुए। प्रसिद्ध दार्शनिक 'केन्ट' इत्यादि का मत है कि आकाश में तारे तथा हृदय में सदाचार ये दोनों 'सत्य' और 'ऋत्' के रूप हैं। अतः वेदों के अनुसार सृष्टि उत्पत्ति में 'ईश्वर' जीव 'प्रकृति' तीनों को अनादि माना है। उत्पत्ति और प्रलय, विकास और नाश ये सब दिन रात के समान एक दूसरे के बाद आते हैं। अब पुराने वैज्ञानिकों के समान यह नहीं माना जाता कि यह सृष्टि कुछ हजार वर्ष पहले हुई और कुछ हजार वर्ष में समाप्त हो जायगी और लोग अपने पाप पुण्य के अनुकूल स्वर्ग या नर्क में धकेल दिये जायेंगे। "Age of universe" सृष्टि की आयु के विषय पर बहुत साहित्य निर्माण हो चुका है और योरुप के वैज्ञानिक अब सृष्टि की आयु के विषय में उसी नतीजे पर पहुँचे हैं जो हमारे यहाँ वेदों में सृष्टि का उत्पत्ति काल बतलाया है।

सृष्टि की आयु पर अब तो ईसाई मुसलमानों की इस बात को कोई वैज्ञानिक नहीं मानता, कि सृष्टि की उत्पत्ति 'खुदा' के कहने से हो गई। वैज्ञानिक कहते हैं कि इस जन्म में हम कर्मों का फल भोग रहे हैं? क्यों एक आदमी गरीब है? और एक आदमी अमीर है। क्यों एक आदमी स्वस्थ है? और दूसरा बिमार है? इसका उत्तर ईसाई मुसलमानों के पास कुछ नहीं। वे कहते हैं कि 'खुदा की मर्जी'। इस वास्ते पश्चिम के सब वैज्ञानिक कहते हैं कि हम अन्यायकारी मन में आया, सो बिना कारण सजा देने वाला खुदा नहीं मानते। वैदिक धर्म के कर्म सिद्धान्तों को मानने लगे हैं। अमेरिका योरुप के वैज्ञानिक खोज करके उसी नतीजे पर पहुंचे हैं जो कि महर्षि दयानन्द सरस्वती वेदानुसार हिसाब लगाकर हमको बतला गये हैं कि इस सृष्टि की आयु करीब चार अरब वर्ष की है और फिर इतने ही काल तक प्रलय रहेगा और फिर उत्पत्ति और प्रलय का चक्र इसी प्रकार चलता रहेगा। इस १४ मन्वन्तर वाले सृष्टि का क्रम अनादि काल से चला आया है और चलता रहेगा। आज कल कलियुग है और वर्तमान सृष्टि उत्पत्ति को १ अरब ९७ करोड़ २९ लाख ४९ हजार ४६ वर्ष बीत चुके हैं। अब तो यूरोप वाले जो अध्यात्मवाद को बिलकुल नहीं मानते थे और जीवन मरण की पहेली को नहीं समझ सकते थे वे भी इसे समझने लगे हैं।

"सर विलियम क्रुकर" "Sir William

Crooker" एक बड़ा वैज्ञानिक हो गया है। अमेरिका में आध्यात्मवाद के लिये और यौगिक क्रियाओं के लिये बहुत संस्थायें और सभायें खुली हुई हैं। वे अब Day of Judgement कयामत की रात को मुर्दों को जलाने के सिद्धान्त को नहीं मानते और मुर्दों को कबर में गाड़ने की प्रथा को बुरी अवैज्ञानिक मूर्खता पूर्ण बतलाते हैं और वैदिक दाह कर्म की प्रथा को अच्छी बतलाते हैं। लाखों पुरुष मृत्यु के बाद अब यूरोप में जलाये जाते हैं। स्वामी विवेकानन्द जी के मिशन से अमेरिका में अध्यात्मवाद का प्रचार बहुत हुआ है। इसी प्रकार 'मंगल" का तारा जो अभी पृथ्वी के सबसे अधिक नजदीक ता० ७ सितम्बर सन् १९५६ को आया था उसकी तस्वीरें वैज्ञानिकों ने ली हैं। "मंगल का तारा" जो पृथ्वी से पहले करोड़ों मील दूर था वो घूमते-घूमते ७ सितम्बर को पृथ्वी के इतना नजदीक आ गया कि केवल ३ करोड़ ४१ लाख ६२ हजार मील की दूरी पर ही रह गया। इस पर भी मनुष्य बसते हैं या नहीं इसका अनुसंधान हो रहा है। विलायत वाले जहां एक ओर "सन्ततिनिरोध" का परीक्षण कर रहे हैं वहां दूसरी ओर "टैस्ट ट्यूब" से बच्चे पैदा किये जा रहे हैं यानि बिना पुरुष के संयोग किये इन्जैक्शन से बच्चे पैदा करेंगे। गायों के तो इस प्रकार हो ही रहा है। हवाई जहाजों के कारण दुनियां बहुत जल्दी बदल रही है, और संसार ऊपरी चमक दमक, दिखाने, खाने पीने, नाच रंग में मस्त है। परन्तु हम पूछते हैं कि क्या यह ऊपरी चमक-दमक सुख-शान्ति दे सकती है? उत्तर मिलता है "कदापि नहीं।" फिर हमें यह देखकर दुःख होता है कि भारत वासी यह सब जानते हुये भी, पश्चिमी प्रकृतिवाद की क्यों नकल कर रहे हैं? क्यों नहीं वे वेदों की ओर आते? मामूली स्वेज नहर के मामले को लेकर ही सारे योरुप और एशिया में भय और दुःख का वातावरण फैल गया और "इजिप्ट" वाले और "अंग्रेज" आगे हुये अपने मामले को सुरक्षा परिषद् में ले गये। रूसी साम्यवादी हर एक बात धनी और निर्धन में बांट कर कहते हैं कि दुनियां में धन ही सब कुछ है और जीवन का सब आधार आर्थिक मानकर सब नाप तौल केवल अर्थ के आधार पर ही करते हैं। पर वे भी सुखी नहीं हैं। फिर क्यों हमारे भारत के साम्यवादी "गोपालन" एम० बी० और समाजवादी "अशोक मेहता" वगैरः अर्थ को जीवन का आधार बताकर 'धर्म" को नहीं मान रहे हैं? रूस में वे अपने नेताओं को तथा सहयोगियों को मतभेद होने पर गोली का शिकार बना लेते हैं। 'स्टालिन" की जो दुर्गति रूस में हो रही है वह किससे छिपी है? जो लोग धन को ही सब कुछ समझते हैं उनको हम पूछते हैं कि इतना धन होते हुये भी और राजपाट तथा वैभव होते हुये भी भगवान "बुद्ध" क्यों इन सबको त्याग कर लोक हितार्थ घर से बाहर निकल गये? भगवान "राम" क्यों अपना राज पाट छोड़कर पिता के वचन निभाने के लिये १४ वर्ष का वनवास करने चले गये? और क्यों भरत ने अयोध्या का राजपाट मिलने पर भी उनको इनकार कर दिया। सारी रामायण, महाभारत इस त्याग तप के जीवन के उदाहरणों से भरी हुई हैं। महात्मा गांधी, महर्षि दयानन्द तथा भारत भूमि के और दूसरे देशों के सन्त, महन्त, महात्माओं के जीवन हमको बतलाते हैं कि उन्होंने धन का त्याग किया? और त्याग तप का जीवन बिताकर संसार का उपकार किया। बड़े-बड़े चित्रकार, कलाकार, आविष्कारक तथा महान् कवि और लेखकों ने लक्ष्मी को छोड़कर निर्धनता तथा त्याग तप का जीवन बिताना ही श्रेयस्कर समझा। इससे सिद्ध होता है कि समाजवादियों व साम्यवादियों का यह कहना कि संसार में धन ही सब कुछ है और अर्थ के आधार पर ही सब राज्य

ऋषि दयानन्द के पत्रों और विज्ञापनों का महत्त्व

(लेखक—श्रीयुत पं० युधिष्ठिर जी, मीमांसक)

(अगस्त के अङ्क से आगे)

अन्य विषयों पर प्रकाश

इन उपर्युक्त विषयों के अतिरिक्त कुछ अन्य भी ऐसे विषय हैं जिनके विषय में ऋषि दयानन्द के पत्र-व्यवहार से महत्त्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है। यथा—

१—आर्य समाज की स्थापना तिथि

सन् १६३६ तक आर्य समाज स्थापना दिवस चैत्र शुक्ला ५ को मनाया जाता था। यही काल ऋषि के प्रत्येक जीवन चरितकार ने लिखा है। परन्तु सन् १६३६ में स्व० श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज का ध्यान गिरगांव (बम्बई) आर्य समाज भवन पर लगे शिलालेख की ओर आकृष्ट हुआ, जिसमें आर्य समाज की स्थापना का समय चैत्र शुक्ला १ लिखा है। उन्होंने यह विषय सार्वदेशिक सभा में रखा और सभा ने बिना विशेष अनुसन्धान किये उक्त शिलालेख को प्रामाणिक मान कर आर्य समाज स्थापना दिवस चैत्र शुक्ला १ घोषित कर दिया।

सन् १६४४ में ऋषि का एक पत्र पढ़कर मेरा ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ। उस पत्र का अंश इस प्रकार है :—

आगे मुम्बई में चैत्र शुदि ५ शनिवार के दिन सन्ध्या के साढ़े पाँच बजते आर्य

काज चलाओ, बिल्कुल मिथ्या प्रलाप है।

एक आदमी जो शोक ग्रस्त है उसको चाहे कितने ही उत्तम भोजन महल, बंगले, कपड़े दो वह इन संसारिक पदार्थों से सुखी नहीं होगा। उसका मन सुखी करने के लिये हमें दूसरे उपाय करने पड़ेंगे। इसीलिये मानसिक चिकित्सा और शिव संकल्प का हमारे शास्त्रों में बड़ा महत्व है। बहुत ठोकरें खाकर अब यौरुप और अमेरिका कोरे प्रकृतिवादी नहीं रहे। उनके बड़े २ वैज्ञानिकों ने अध्यात्मवाद और ध्यान योग को मानना प्रारम्भ किया है। जब ये अमेरिकन लोग भारतीय योगियों के समाधि योग को देखते हैं और उन्हें महीने २ तक जमीन के नीचे बैठकर समाधि अवस्था में देखते हैं तब उनके योग बल के सामने इनका प्रकृतिवाद फीका पड़ जाता है और ये मन को ही इन्द्रियों का स्वामी मानकर कर्म के सिद्धांत को मानने लगते हैं और वैदिक मन्त्र 'तन्मे मनः शिव संकल्प मस्तु" हे परमात्मा! मेरा मन कल्याण कारी, परोपकारी, निस्वार्थ भाव से निष्काम कर्म करने वाला बनें यही परमात्मा से प्रार्थना करके सुख और शान्ति का मार्ग ढूँढ़ते हैं। जब अमेरिका वालों ने यह पढ़ा कि दक्षिण में कावेरी के तट पर रहने वाला योगी समाधि अवस्था में ही बांध में बह गया तब इनको समाधि योग की महिमा ज्ञात हुई। जीवित राज योगी कई महीनों बाद नदी की रेत में निकला। इसी प्रकार शब्द की शक्ति पर अनेक लेख निकले हैं। शब्द की महिमा को जो वैदिक मन्त्रों में वर्णित है यूरोप वाले मानने लगे हैं।

समाज का आनन्दपूर्वक आरम्भ हुआ।"*
(पृष्ठ २६)

इस पत्र के आधार पर मैंने अन्वेषण आरम्भ किया। इस विषय के अनेक सुदृढ़ प्रमाण संगृहीत किये। उनके आधार पर सन् १९४४ से लेकर गत वर्ष पर्यन्त इस विषय का आन्दोलन आर्य-पत्रों में करता रहा। अन्त में गतवर्ष सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ। उन्होंने मेरी सभी युक्तियों और प्रमाणों पर गम्भीर विचार किया और उन्होंने 'सार्वदेशिक' (पत्र) मार्गशीर्ष २०१२ के अंक (पृ० ५०७) में इस बात को स्वीकार किया कि आर्य समाज की विधिवत् स्थापना चैत्र शुक्ला ५ को ही हुई थी। मुझे आशा थी कि सभा के प्रधान जी द्वारा चैत्र शुक्ला ५ स्वीकार कर लेने पर सार्वदेशिक सभा इस वर्ष आर्य समाज स्थापना दिवस चैत्र शु० ५ को ही मनाने की घोषणा करेगी, परन्तु इस बार भी चैत्र शु० १ को ही स्थापना दिवस मनाने की घोषणा हुई। सम्भव है शीघ्रता के कारण इस बार भूल हो गई होगी, आगे सुधार दी जायेगी।

२—परोपकारिणी सभा की स्थापना तिथि

परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा (द्वितीय) स्वीकार पत्र छपता है उसमें सभा की स्थापना की तिथि संवत् १९३९ फाल्गुन शुक्ला ५ मंगलवार तदनुसार ता० २७ फेब्रुवरी सन् १८८३ ई० का निर्देश है।

यह तिथि सर्वथा अशुद्ध है सं० १९३९ फा० शु० ५ को १३ मार्च पड़ता है, २७ फरवरी १८८३ को फा० कृ० ५ थी। अतः स्पष्ट है कि इस स्वीकार पत्र में देशी अथवा विदेशी तिथियों में से एक तिथि अवश्य अशुद्ध है। ऋषि दयानन्द के पूर्ण सख्या ४८० 'फाल्गुन बदी १० रविवार सं० १९३९ ता० ४ मार्च सन् १८८३ के पत्र से स्पष्ट हो जाता है कि परोपकारिणी सभा की स्थापना फाल्गुन कृष्णा ५ को ही हुई। अत. स्वीकार पत्र मे फाल्गुन शुक्ला के स्थान में फाल्गुन कृष्णा होना चाहिय। यह अशुद्धि निश्चय ही लेखक अथवा मुद्रक के प्रमाद से हुई है। पूर्ण स० ४८० में लिखा है :—

"हम उदयपुर से फाल्गुन वदी ७ गुरुवार के दिन घड़ी रात से चार घोड़े की डाक बग्घी में चलकर······।" पृष्ठ ३९०।

इसी पत्र में आगे पुन' लिखा है :—

"गत पंचमी मंगलवार के दिन सायंकाल ७ बजे बड़े २ सर्दार तथा कामदारों की सभा बुलाके स्वीकार पत्र जो कि···।"
पृष्ठ ३९०।

इन दोनों उद्धरणों को मिला कर पढ़ने से स्पष्ट है कि ऋषि दयानन्द ने अन्तिम स्वीकार पत्र की रजिस्ट्री उदयपुर में फाल्गुन कृष्णा ५ को कराई थी, न कि फाल्गुन शुक्ला ५ को।

इस विषय पर भी हमने कई बार समाचार

---

* जिस पत्र में आर्य समाज की स्थापना का उल्लेख है वह पत्र स० १९३३ में छप चुका था। सम्भव है इस पत्र की ओर सभा के किसी सभासद का ध्यान न गया हो।

यह भी ध्यान रहे कि यह पत्र अगले ही दिन अर्थात् चैत्र शु० ६ रविवार को लिखा गया था। अतः यह सब से पुराना रिकार्ड है।

पत्रों में लिखा, तत्कालीन मन्त्री श्री दीवान बहादुर हरविलास जी शारदा का ध्यान भी इस ओर आकृष्ट किया,* परन्तु आज तक पनाला वहां का वहीं ही है अर्थात् फाल्गुन शुक्ला ५ ही छपता चला आ रहा है, जो कि वस्तुतः अशुद्ध है।

हमने श्री मन्त्री जी से निवेदन किया था कि फाल्गुन शुक्ला ५ की आवश्यकता नहीं है, केवल नीचे टिप्पणी में शुद्ध तिथि दे देनी चाहिये। परन्तु हमारा यह भी संशोधन उन्हें स्वीकार नहीं हुआ। आशा है सभा के वर्तमान प्रधान तथा मन्त्री महोदय इस ओर अवश्य ध्यान देने की कृपा करेंगे।

(३) ऋषि के सहायक पण्डित

ऋषि दयानन्द को अपने ग्रन्थ लेखन कार्य में कितने अल्पज्ञ और नीच वृत्ति वाले पण्डितों से साहाय्य लेना पड़ता था इस बात का ज्ञान केवल पत्र व्यवहार से ही होता है। इस वास्तविक स्थिति को बिना जाने ऋषि दयानन्द के नाम पर छपे अक्षर २ को प्रमाण मानने से भारी अनर्थ हुआ, हो रहा है और भविष्य में भी होगा। अतः ऋषि के लेखक भीमसेन और ज्वालादत्त का वास्तविक स्वरूप जानने के लिए पत्र व्यवहार के पृष्ठ ३००, ३५८, ३६०, ३६१, ३६६, ३९९ अवश्य पढ़ने चाहिएं।

इन पण्डितों ने ऋषि की संस्कृत भाषा का अनुवाद भी कई स्थानों पर उटपटांग किया है। देखो पत्र व्यवहार पृष्ठ ४३५, ४५६।

(४) ऋषि के ग्रन्थों के सम्बन्ध में

इस पत्र व्यवहार से ऋषि के ग्रन्थों के विषय में अनेक महत्व पूर्ण ऐतिहासिक तथ्य उपलब्ध होते हैं। यथा :—

(क) वेदान्तिध्वान्त निवारण तथा वेद विरुद्ध मत खण्डन आदि पर ऋषि का नाम नहीं छपता है। अतः सन्देह होता है कि ये ग्रन्थ ऋषि के बनाये हैं अथवा अन्य के*। परन्तु पत्र व्यवहार पृष्ठ ९९ की निम्न पंक्ति से ज्ञात होता है कि ये ग्रन्थ ऋषि के बनाये हुए हैं। ऋषि का लेख इस प्रकार है :—

'मया वेदभाष्य संध्योपासनार्याभिविनय वेदविरुद्ध मतखण्डन वेदान्तिध्वान्तनिवारण ······ग्रन्थ। निर्मिताः।'

(ख) संशोधित सत्यार्थप्रकाश की हस्तलिखित रफ कापी आश्विन शुक्ला ३ सं० १९३९ तक तैयार हो गई थी। पृष्ठ ४५०।

(ग) संशोधित सत्यार्थप्रकाश की तेरहवें समुल्लास तक की प्रेस कापी ऋषि दयानन्द अपने जीवन काल में वैदिक यन्त्रालय को छापने के लिये भेज चुके थे। पृष्ठ ४८१।

(घ) संशोधित संस्कार विधि की हस्त लिखित रफ कापी भाद्रपद ३० सं० १९४० तक तैयार हो गई थी। पृ० ४५७।

अर्थात् पौराणिको का यह कहना कि सत्यार्थप्रकाश और संस्कार विधि के संशोधित संस्करण स्वामी जी की मृत्यु के बाद तैयार किये गये, सर्वथा मिथ्या है।

(ङ) वेद भाष्य आदि ग्रन्थों में पण्डितों की

---

* श्री दीवान बहादुर जी ने हमारे सुझाव पर ऋषि के अंग्रेजी जीवन चरित में परोपकारिणी सभा की स्थापना तिथि शुद्ध करके छापी थी, परन्तु पीछे से न जाने क्या सोच कर उन्होंने चिप्पी पर अशुद्ध तिथि मुद्रित कराकर शुद्ध तिथि पर चिपकवा दिया।

* इसी भ्रम के कारण वेदान्तिध्वान्त निवारण का मुद्रण शताब्दी संस्करण में नहीं हुआ था।

असावधानता से बहुत सी अशुद्धियां रह गई हैं। पृष्ठ ३६०, ३९४, ३९६।

(च) पण्डितों ने कहीं २ ऋषि की संस्कृत के विपरीत भी भाषानुवाद किया था। पृष्ठ ४३४, ४५६।

(छ) कहीं २ ऋषि की अन्यमनस्कता तथा दीपकादि उचित उपकरणों के अभाव के कारण उनके ग्रन्थों में अशुद्धियां रह गई थीं। पृ० २२१

(ज) वेदांग प्रकाश प्रायः पण्डितों से बनवाये हुए हैं। पृ० ३३०, २६७, ३६०, ३६१।

(५) ऋषि के लिखे कतिपय अमुद्रित तथा अप्राप्य ग्रन्थ

ऋषि के पत्र व्यवहार से कतिपय ऐसे ग्रन्थों का भी ज्ञान होता है जो आज तक मुद्रित ही नहीं हुए, अथवा एक बार मुद्रित होकर लुप्त हो गये। यथा :—

अमुद्रित

१ हिन्दी कुरान। - पृष्ठ १४०, १४१।

२ निरुक्त ब्राह्मणादि की शब्दसूची। पृ० ३७८

(इनके अतिरिक्त भी ऋषि के कतिपय ग्रन्थ ऐसे हैं जो आज तक प्रकाशित नहीं हुए। उनका वर्णन हमारे 'ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास' ग्रन्थ में देखें।)

अप्राप्य

जो कभी छपे थे, परन्तु चिरकाल से अप्राप्य हैं, हमें देखने को भी नहीं मिले।

१—गोतम अहल्या की कथा। पृष्ठ ३५८।

२—जालन्धर की बहस। पृष्ठ ३३०।

३—प्रश्नोत्तर हलधर। पृष्ठ ६०।

ऋषि के ग्रन्थों का इतिहास

हमने ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का जो इतिहास लिखा है उसके लिखने की प्रेरणा हमें ऋषि के पत्र व्यवहार से ही प्राप्त हुई थी। हमने **'ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास'** नामक ग्रन्थ में ऋषि के ग्रन्थों के सम्बन्ध में इस पत्र व्यवहार से तथा उनके जीवन चरितों से जो-जो भी जानकारी प्राप्त हुई उस सबका संग्रह करदिया है। उसमें अनेक विवादास्पद विषयों पर पूर्ण प्रकाश डाला है। साथ ही परोपकारिणी सभा की मुद्रित रिपोर्टों के आधार पर अद्ययावत् अमुद्रित ग्रन्थों की विस्तृत सूची दी है। इस इतिहास में सबसे महत्व पूर्ण कार्य है ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों की हस्तलिखित प्रतियों का पूर्ण विवरण तथा प्रथम सस्करणों के मुखपत्रों (टाइटल पेजों) की प्रतिलिपियां। इनसे अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर प्रकाश पड़ता है।

उपसंहार

'ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन' नामक संग्रह से जिन २ महत्वपूर्ण विषयों पर प्रकाश पड़ता है, उनमें से कतिपय विषयों की ओर हमने इस लेख में पाठकों का ध्यान आकृष्ट किया है। इस सम्पूर्ण ग्रन्थ को ध्यान पूर्वक पढ़ने से बहुत लाभ होता है। यह आर्य समाज और उसके प्रवर्त्तक का स्वहस्तलिखित ऐतिहासिक विवरण है। इसका अधिक से अधिक प्रचार होना चाहिये।

अन्त में रामलाल कपूर ट्रस्ट अमृतसर का भी धन्यवाद करना आवश्यक समझता हूं जिसने सहस्रों रुपयों को (लाहौर में) क्षति हो जाने पर भी अपने अत्यल्प साधनों से वर्तमान मंहगाई के काल में इस बृहत् काय ग्रन्थ का पुनः परिवर्धित संस्करण प्रकाशित करने का साहस किया।

यदि इस लेख से दो चार पाठकों के हृदय में भी ऋषि दयानन्द के पत्रों और विज्ञापनों को पढ़ने की रुचि उत्पन्न होगी तो मैं अपने प्रयत्न को सफल समझूंगा।

स्वामी दयानन्द और आर्य समाज
(अन्यों की दृष्टि में)
(२)

[गताङ्क से आगे]

अग्निहोत्र प्रशंसनीय है क्योंकि इससे वायु और औषधियों की शुद्धि होती और समस्त चेतन प्राणियों का हित सिद्ध होता है। महर्षि ने यज्ञों के अनुष्ठान और तीर्थ (पवित्र स्थान) यात्राओं को रूढ़ियों से हटाकर सदाचार पर केन्द्रित किया। यज्ञ का अभिप्राय है बुद्धिमानों और विद्वानों का सत्कार, एवं ज्ञान और संस्कृति के प्रचारार्थ रसायन-शास्त्र और पदार्थ-विज्ञान के सिद्धान्तों का सदुपयोग। भूमि तथा जलाशयों आदि पर स्थित स्थान जहां यात्री लोग जाते हैं वास्तविक तीर्थ नहीं हैं। वे वे साधन होते है जिनके द्वारा दुःख सागर को पार किया जाता है। मन वचन और कर्म में सत्य का आचरण करना, सत्ज्ञान प्राप्तकरना, बुद्धिमान और धर्मात्मा जनों का सङ्ग करना, यम नियम का अभ्यास करना, ज्ञान का प्रसार तथा सत्कर्म करना ही साधन है।

इन सिद्धान्तों के आधार पर ही आर्य समाज के मौलिक सिद्धान्त निर्धारित हुए थे। प्रारम्भ में जब बम्बई में १८७५ में आर्य समाज की स्थापना हुई थी तो २८ नियम बनाए गये थे। १८७७ में लाहौर में उन पर पुनर्विचार हुआ और उनकी संख्या १० नियत की गई। समाज की सदस्यता के लिये प्रार्थना पत्र देते समय इन नियमों का मानना प्रत्येक के लिये अनिवार्य होता है। इन १० नियमों में से ८ नियम सदाचार विषयक व्यापक शिक्षायें हैं जिन पर किसी को आपत्ति नहीं हो सकती। शेष २ में से एक आर्य समाज को एकेश्वरवादी आस्तिक समाज का रूप देता है और दूसरा इस बात पर बल देता है कि वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है और वेद का पढ़ना, पढ़ाना और सुनना, सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

यह बात बड़ी मनोरंजक है कि स्वामीदयानन्द जी अपने जीवन काल में ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज और थियोसोफीकल सोसाइटी के नेताओं के सम्पर्क में आए और सैद्धान्तिक मौलिक मत-भेद के कारण सम्बन्ध विच्छेद हुआ। जब स्वामी जी महाराज १८७२ में कलकत्ता पधारे तो श्री देवेन्द्र नाथ टैगोर और श्री केशवचन्द्र सेन ने हार्दिक स्वागत किया।

ये महानुभाव श्री स्वामी जी महाराज के संस्कृत पांडित्य और मूर्ति पूजा तथा जात-पात की प्रणाली सम्बन्धी उनके सुलझे हुए विचारों से बड़े प्रभावित हुये परन्तु ये महर्षि के प्रमुख तम सिद्धान्तों(वेदोंकी अपौरुषेयता तथा जीव का आवागमन) के साथ सहमत न हो सके। फिर भी ब्रह्म समाज का महर्षि दयानन्द पर एक बात का स्थिर प्रभाव पड़ा। केशवचन्द्रसेन की प्रेरणा पर ही दयानन्द ने संस्कृत में अपने व्याख्यान देने बंद करके जन-सामान्य की भाषा हिन्दी में देने प्रारम्भ कर दिये थे। इस व्यवस्था से महर्षि दयानन्द एक दम जन साधारण के सम्पर्क में आ गये और उनके उपदेशोंका व्यापक प्रचार हुआ। १८७४ ई० में दयानन्द प्रार्थना

---

* Hinduism through the Ages. पुस्तक पर आधारित लेखमाला।

समाज के नेताओं के सम्पर्क में आये। यतः यह समाज ब्रह्म समाज का रूपान्तर था अतः स्वामी जी उनके साथ काम न कर सके। १८७७ में अर्थात् आर्य समाज की स्थापना के २ वर्ष के बाद थियोसोफिकल सोसाइटी के संस्थापक कर्नल अल्काट और मैडम ब्लैवट्स्की भारत में आये और स्वामी दयानन्द से मिले। उन्होंने प्रस्ताव किया कि थियोसोफिकल सोसाइटी आर्य समाज के साथ संयुक्त करदी जाय और थियोसोफिकल लोगों को जो ज्ञान प्राप्ति के लिये पूर्व के देशों की ओर आकृष्ट हुए हैं पवित्र कार्य में सहायता देने की अनुमति दे दी जाय। स्वामी जी ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया परन्तु एक या दो वर्ष के पश्चात् आर्य समाज और सोसाइटी में (मौलिक सैद्धान्तिक) मत भेद उत्पन्न हो जाने से १८८१ ई० में दोनों का सम्बद्ध टूट गया।

स्वामी जी की मृत्यु के बाद १० वर्ष के भीतर ही एक बड़ा विवाद उठ खड़ा हुआ कि आर्य समाज सामूहिक रूप से स्वामी जी के विचारों और मन्तव्यों को मानने के लिये कहां तक वाध्य है। आर्य समाज के पुराने सदस्यों की स्थापना यह थी कि आर्य समाज के नियमों के साथ ही महर्षि के मन्तव्यों को भी मानने के लिये समाज के सदस्य वाध्य हैं। इसके विपरीत कुछ लोगों की मान्यता यह थी कि आर्य समाज के सदस्य स्वामी जी की शिक्षाओं को मानने के लिये वाध्य नहीं है; और उन विषयों में जो दश नियमों के अन्तर्गत नहीं आते हैं व्यक्ति के निजू निर्णय पर आपत्ति करने का आर्य समाज को अधिकार नहीं है। दो व्यवहारिक विषयों पर वाद विवाद के समय यह मत भेद उत्पन्न हुआ था (१) ८८६ में संस्थापित दयानन्द एंग्लो वैदिक [illegible] में आधुनिक शिक्षा प्रणाली को प्रचलित [illegible] या प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली [illegible]र्यसमाज के सदस्य विशुद्ध शाकाहारी होने चाहियें या नहीं? आर्यसमाजके प्रथमप्रधान् ला० मूलराज ने (जो महर्षि दयानन्दके देहावसान तक उनके विश्वासपात्र बने रहे) उदार कहेजानेवाले वर्ग का पक्ष लिया और घोषणा की कि आर्यसमाज के दश नियमों में जो कुछ वर्णित है उससे बाहर अपने किसी मन्तव्य को आर्य समाज के सदस्यों पर बलात लादने का स्वामीजी का आशय न था। परन्तु केवल दश नियमों के आधार पर आर्य समाज का प्रचार सम्भव न था (स्वामी जी का अभिप्राय आर्य समाज के माध्यम से वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार था) केवल दश नियमों तक ही समाजको सीमित न रखना था इसलिये वैदिक सिद्धान्तों को जिनकी व्याख्या उनके ग्रन्थों में की गई है मानना आर्यसमाजके सदस्यके लिये उचित रीति से अनिवार्य ठहराया गया। इस प्रकार समाज निम्नलिखित बातों पर विशेष बल देता है:—

(१) वेदों की अपौरुषेयता।

(२) कर्म और एकेश्वरवाद पुर्नजन्म का सिद्धान्त।

(३) गोरक्षा।

(४) यज्ञ हवन और संस्कार आदि-२

और निम्न बातों का प्रबल खण्डन करता है

१—मूर्ति पूजा, (२) पशु बलि, (३) मृतक श्राद्ध, (४) तीर्थ यात्रा व पण्डे पुजारी, (५) मन्दिरों में चढ़ावा चढ़ाना, (६) जन्म गत-जाति पांति की प्रथा, (७) अस्पृश्यता, (८) बाल-विवाह इत्यादि क्योंकि इनका वेदसे समर्थन नहीं होता। आर्य समाज का लक्ष्य वेद के आधार पर जाति, वर्ण, देश और काल के भेद भाव से शून्य सबको आर्य बनाना है।

(क्रमशः)

महर्षि-जीवन

शंका समाधान

सच्चा धर्म क्या है?

बरेली मे सत्य धर्म क्या है इस जिज्ञासा का समाधान करते हुये श्रीमहाराज ने कहा 'सत्य वह है जिस पर सबकी एक सा साक्षी हो। धम के जिन कर्मों को सब मजहबी स्वीकार करें उनमे कोई ननु नच न करे वही सच्चा धर्म है। उसी को मानो। किसी मजहब सम्प्रदाय वा पन्थ के आडम्बर मे न फंसो। वह साधारण धर्म जिसमें कोई भी मतधारी किन्तु परन्तु नहीं कर सकता यह है—एक परमेश्वर का विश्वास और उसकी उपासना। दूसरे जैसा भाव और ज्ञान भीतर हो उसी का वाणी द्वारा प्रकाश करना और उसी के अनुसार आचरण करना। तीसरे जितेन्द्रिय रहना चौथे किसी के अधिकार और वस्तुओं को न छीनना, पांचवें निर्बलों और दीनों पर दया करना यह साधारण धर्म ऐसा है कि इसमे किसी मतावलम्बी को नकार नहीं है। यही धर्म कल्याण कारी और मोक्ष दाता है।"

सच्चा-दान

शाहजहांपुर में सच्चे दान का महत्त्व समझाते हुए स्वामीजी महाराज ने कहा 'अन्न जल का दान कोई भी भूखा प्यासा मिले उसे दे देना चाहिये। ऐसा दान पहले अपने दीन दुःखी पड़ोसी को देना चाहिये। पास रहने वाले का दरिद्र दूर करने में सच्ची दया का प्रकाश होता है। इससे वाह वाह नहीं मिलती इसलिए अभिमान को भी अवकाश नहीं मिलता।

अपने पास के दुःखी को देखकर और पीड़ित को अवलोकन करके ही दया, अनुकम्पा और सहानुभूति आदि हार्दिक भाव प्रकट होते हैं। जो समीपवर्ती दीन दुःखिया जनों पर दयादि भावों को नहीं दिखलाते किन्तु दूर के मनुष्यों के लिए उनका प्रकाश करता है उसे दयावान अनुकम्पा कर्त्ता और सहानुभूति प्रकाशक नहीं कह सकते। ऐसे मनुष्य का दान बाहर का दिखावा और ऊपर का आडम्बर है। दान आदि वृत्तियों का विकास दीपक की ज्योति की भांति पास से दूर तक फैलना उचित है। जो निर्धन जन अन्न इत्यादि का दान नहीं कर सकते वे दूसरों को क्या दें? इसका उत्तर स्पष्ट है। जो अन्नादिका दान करने में असमर्थ हैं वे अपने पड़ोसी आदि को कष्ट और क्लेश में सहायता दें। निर्बलों का पक्ष करें। विपत्ति और आधि-व्याधि ग्रस्त जनों की सेवा करें। पर-पीड़ित और व्याकुल मनुष्यों से प्रेम करें। उन्हें मीठे वचनों से शान्ति दें। ये सब दान हैं और आत्मा से सम्बन्ध रखने वाले दान हैं। ऐसे दान नित्य प्रति निर्धन जन भी कर सकते हैं।"

क्षमा और प्रायश्चित

शाहजहांपुर में पौराणिकों ने स्वामी दयानद

जी सरस्वती से २५ प्रश्न किए थे जिनका स्वामी जी ने समाधान किया था। एक प्रश्न यह था कि यदि आपके मत में क्षमा नहीं मानी जाती तो मनुस्मृति के प्रायश्चित्तों का क्या फल है? ईश्वर की दयालुता का क्या प्रयोजन है? यदि मनुष्य स्वतन्त्रता से आने वाले पापों से बचा रहे तो ईश्वर की क्षमा शीलता किस काम आयेगी?

स्वामी जी ने इसका समाधान करते हुये कहा हमारा मत वेद है। कोई कपोल कल्पना नहीं। वेदों में कहीं भी किए पापों की क्षमा नहीं लिखी। पापों की क्षमा मानना युक्ति संगत भी नहीं है। क्षमा और प्रायश्चित का जरा भी सम्बन्ध नहीं है। प्रायश्चित दुःख भोग का नाम नहीं है। जैसे कारागार में अपराधी व्यक्ति चोरी आदि कर्मों का फल भोग लेता है ऐसे ही प्रायश्चित में पाप फल भोगा जाता है। अनेक नास्तिक जन ईश्वर का खण्डन करते हैं दुःखों औ दुर्भिक्षादि में मनुष्य परमात्मा को गालियां तक देने लग जाते हैं। परमात्मा सब सहन कर लेता और अपनी कृपा का परित्याग नहीं करता। यह उसकी क्षमा और दया है। न्यायकारी यदि किये कर्मों को क्षमा करदे तो वह अन्याय कारी हो जाता है। परमेश्वर अपने स्वाभाविक गुण के विरुद्ध कभी कुछ नहीं करता। जैसे न्यायाधीश पापियों को विद्या और शिक्षा द्वारा पाप से पृथक कर प्रतिष्ठा और दंड से शुद्ध और सुखी कर देता है ऐसे ही ईश्वर का न्याय समझना चाहिये।"

बहु विवाह का निषेध

पौराणिकों ने श्री महाराज से प्रश्न किया कि "पुरुष के बहुत स्त्रियों से विवाह करने का कहां निषेध है। यदि है तो धर्म शास्त्र में यह क्यों आता है कि यदि एक पुरुष के अनेक स्त्रियां हों और उनमें से एक पुत्रवती हो जाय तो सब पुत्रवती समझी जायें?"

स्वामी जी ने उत्तर दिया "वेद में बहु विवाह का निषेध है। संसार में सभी मनुष्य अच्छे नहीं होते। इसलिये यदि कोई अधर्मी पुरुष अनेक स्त्रियों से विवाह करले तो उसकी स्त्रियों में परस्पर विरोध अवश्य होगा। यदि एक के पुत्र हो तो दूसरी उसे विष आदि से मार न दें इसलिए धर्म शास्त्रमें उसे अपना पुत्र मानने के लिए लिखा होगा। परन्तु वेदज्ञानानुकूल बहु विवाह वर्जित है।

सगोत्र विवाह क्यों निषिद्ध है?

एक जिज्ञासु ने श्री स्वामी जी महाराज से पूछा "क्या सगोत्र विवाह दूषित है? यदि है तो क्यों? क्या सृष्टि की आदि में ऐसा हुआ था?"

स्वामी जी ने उत्तर दिया "सगोत्र में विवाह करने से शरीर और आत्मा की यथावत उन्नति नहीं होती और बल तथा प्रेम भी ठीक २ नहीं बढ़ता। इन दोषों के कारण भिन्न गोत्र में विवाह करना उचित है। सृष्टि के आदि में तो गोत्र ही न थे। इसलिये उस समय का प्रश्न करना व्यर्थ प्रयास है।

क्या धर्माधर्म अन्तरङ्ग भावों से सम्बद्ध है?

"इस जिज्ञासा का समाधान करते हुये स्वामी जी महाराज ने कहा धर्म और अधर्म बाहरी और भीतरी सत्ता से सम्बद्ध होते हैं इन्हें कर्म और सुकर्म-कुकर्म भी कहा जाता है। परोपकार के लिए यत्न और परिश्रम करते यदि बीच में ही प्राणान्त हो जाय तो भी वह मनुष्य पुण्य उपार्जन कर लेता है। ऐसे जन को पाप कदापि नहीं लगता।

❀

धर्मार्य सभा

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा द्वारा आयोजित सस्वर वेदोच्चारण शिविर में नाम लिखाइये

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा ने यह निश्चय किया है कि विद्वानों को सस्वर वेद पाठ का उच्चारण सिखाया जावे जिसकी इस समय बहुत बड़ी कमी है। योजना इस प्रकार है कि एक बहुत योग्य विद्वान् को काशी आदि से इस निमित्त एक मास के लिये सार्वदेशिक सभा बुलावेगी। विद्वानों के निवास और भोजन का प्रबन्ध सभा करेगी। परन्तु आने वाले विद्वानों को अपना मार्ग व्यय जहां से भी वे आवें स्वयं करना होगा। अपनी सुविधा के अनुसार विद्वान् एक सप्ताह दो सप्ताह या एक मास यहां रहें और सीखें। कितने दिन तक यहां रह कर विद्वद्गण सीखने को तैयार हैं इसके ज्ञात होने पर समय को घटाया बढ़ाया भी जा सकता है। जो विद्वान् इसमें सम्मिलित होना चाहें वे सभा को सूचित करें। ५० विद्वानों की ठीक सूचना प्राप्त होने पर सभा इस शिविर का प्रबन्ध करेगी। विद्वद्गण मुझे नीचेलिखे पते पर सूचना देने की कृपा करें।

ऋषिवर तथा गुरुवर की जन्म तिथियां

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा पर्याप्त समय से ऋषिवर स्वामी दयानन्द सरस्वती जी तथा गुरुवर विरजानन्द दण्डी जी की जन्म तिथियों के सम्बन्ध में विचार कर रही है पर अभी तक किसी निर्णय पर नहीं पहुँची है। आर्य जगत् के विद्वानों तथा ऋषिभक्तोंसे प्रार्थना है कि जो इस सम्बन्धमें कुछ ज्ञान रखता हो सभा को सूचित करने की कृपा करे। इस सम्बन्ध में कुछ विद्वानों के लेख पिछले वर्षों निकलते रहे हैं. हम उन सब को अवसर देना चाहते हैं कि धर्मार्य सभा के भावी अधिवेशन में वे विचारार्थ स्वयं भी उपस्थित हों उन्हें विचार का अवसर दिया जावेगा। अतः जो महानुभाव इस सम्बन्ध में विशेष विचार कर सकें वे सूचित कर दे जिससे धर्मार्य सभा के अधिवेशन की सूचना समय पर उनको भेजी जा सके।

आर्य बन्धुओं से प्रार्थना है कि टंकारा, मथुरा सोरों अलवर आदि के सरकारी कागजातों में वहां २ के निवास ढूंढने का यत्न करें। संभवतः कहीं से कुछ पता चल जावे। यह एक महान कार्य है और इसका उत्तरदायित्व समस्त आर्य जगत पर है और ऋषिवर तथा गुरुवर की जन्मतिथियों का पता लगाना एक महत्वपूर्ण कार्य है। निश्चय होने पर हम पर्व पद्धति में भी स्थान देने में समर्थ होंगे और भारत सरकार से पुनः इस सम्बन्ध में अवकाश आदि कराने के विषय में विचार किया जायगा। अतः जगदुद्धारक ऋषिवर और जगदुद्धारण के उद्धारक गुरुवर की जन्म तिथियों का पता लगाना प्रत्येक आर्य का कर्तव्य है।

आशा है आर्य विद्वान् और आर्य जनता इस सम्बन्ध में सार्वदेशिक सभा को सहयोग प्रदान करेंगे।

निवेदक :—
आचार्य विश्वश्रवाः
मन्त्री धर्मार्य सार्वदेशिक सभा, देहली

❀

स्वाध्याय का पृष्ठ

साम्यवाद की मौलिक त्रुटि

साम्यवाद क्या है? यह कतिपय सिद्धान्तों का समूह है। इसका सब से प्रमुख सिद्धान्त यह है कि 'इतिहास आर्थिक तत्त्वों की व्याख्या मात्र है।' इसका अर्थ यह हुआ कि मनुष्य का जीवन और उसके विचार एक मात्र अर्थ से बनते और प्रभावित होते हैं। यह सत्य है कि मनुष्य के विचारों के निर्माण मे आर्थिक तत्त्व महत्त्व पूर्ण योग देते है परन्तु यह मान लेना नितान्त अशुद्ध होगा कि विचारों का स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं होता। इतिहास को गति देने वाले तत्त्वों मे सत्य और सौन्दर्य, विश्वास और प्रेम का स्थान रहा है। समस्त सभ्यताओं में सदाचार और आध्यात्मिकता के सिद्धान्त काम करते रहे हैं। उन्हें एकमात्र आर्थिक रंग नहीं दिया जा सकता। साम्यवाद की यही मौलिक त्रुटि है। वह जड प्रकृति को ही सब कुछ मानता और मस्तिष्क को प्रकृति की उपज बताता है। इस अर्द्ध सत्य के आधार पर साम्यवाद इस परिणाम पर पहुंचता है कि भौतिक सुख सम्पदा ही मनुष्य का सर्वस्व है और इस सम्पदा के होने और न होने से ही समाज धनी और निर्धन एवं शोषक और शोषित के वर्गों मे विभाजित हो जाता है। यह सिद्धान्त सामाजिक सत्य के प्रमुख तत्त्व को कुचल कर साम्यवाद की नींव को ही असत्य प्रमाणित कर देता है क्योंकि यद्यपि धन का बहुत महत्त्व होता है तथापि यही मनुष्य का सर्वस्व नहीं होता। यदि धन ही सर्वस्व होता तो गौतम बुद्ध अपने राज्य और परिवार को छोड़कर वन की राह क्यों लेते? सच्चे कलाकार बड़े २ लाभदायक व्यवसायों की उपेक्षा करके निर्धनता को प्रमुखता क्यों देते? बेन्थम ने यह अनर्गल स्थापना की कि मनुष्य भौतिक सुख चाहता है और दुःख से बचना चाहता है। साम्यवाद ने धन की सर्वोपरिता की इस अनर्गल थ्यूरी (सिद्धान्त) का स्वीकार कर लिया प्रतीत होता है। यह सिद्धान्त मनुष्य की उच्च भावनाओं को ध्यान मे नही लाता।

प्रत्येक कलाकार तत्त्ववेत्ता, विज्ञान विशारद, और परोपकार रत व्यक्ति साम्यवाद का जीता जागता खंडन है।

(कलचरल इण्डिया)
२१-६-५६

धर्म और हिन्दू राजनीति

कुछ राजनीतिज्ञ धर्म को जनता को भड़काने का साधन मानते है। धर्म उनके हाथ का खिलौना बन गया है और वे जन सामान्य के धार्मिक भावों के सहारे अपना व्यवसाय चलाते हैं। ये राजनीतिज्ञ हृदय से धर्म विहीन होते हैं अन्यथा वह मनुष्य के पवित्र भावों का कमीना प्रयोग न करते जिसकी बुद्धि इतनी विकसित नहीं होती कि वह यह जान सके कि परिस्थिति विशेष मे उसके धर्म की उसके लिए क्या आज्ञा विहित है। ऐसे राजनीतिज्ञों की तुलना शैतान से की जा सकती है जो बाइबिल की दुहाई देता है। वे लोग इन राजनीतिज्ञों से कहीं अच्छे होते हैं जो धर्म को एक

और रखकर सीधी सादी और विशुद्ध राजनीति का आश्रय लेते हैं। परन्तु वे भी गलती पर होते हैं। वे भूल जाते हैं कि राजनीति स्वतः पूर्ण प्रयास नहीं हो सकता। यदि राजनीति का लक्ष्य देश में सच्चे सुख और सच्ची व्यवस्था का सूत्रपात करना है तो धर्म का एक अंग बने बिना इसका कार्य नहीं चल सकता। भौतिक स्वास्थ्य की श्रेष्ठता इसी में है कि उसके द्वारा मनुष्य का आध्यात्मिक और बौद्धिक दोनों प्रकार का हित सिद्ध होता हो। यही बात राजनीतिक स्वास्थ्य के विषय में कही जा सकती है। राजनीति का कार्य जहाँ राष्ट्र को सुख समृद्ध बनाना और व्यवस्था कायम रखना है वहां जनता की आध्यात्मिक और मानसिक अभिवृद्धि की अवस्थाएं भी उत्पन्न करना है। राष्ट्र के लोगों को स्वस्थ और समृद्ध बनाना और भला न बनाना, यह बात आदर्श और व्यवहार की दृष्टि से कितनी हेय हो सकती है इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है। राष्ट्र के लोगों को श्रेष्ठ बनाने के लिये राजनीतिक प्रणाली में, दृढ विधान में, वेतन और मजदूरी के नयमों में एक मात्र परिवर्तन कर देना वा वैयक्तिक व्यापार और पूंजी का अन्त कर देना ही पर्याप्त न होगा। ये बाह्य साधन हैं जिनका निर्माण सामाजिक जीवन की सहायता के लिये किया जाता है परन्तु जीवन कहां है?

जीवन बुद्धिजीवी राजनीतिज्ञों की पहुंच से परे होता है। इसे सहानुभूति के स्पर्श की आवश्यकता होती है। ईश्वर भक्ति और श्रेष्ठ जीवन से ही सामाजिक जीवन की विशुद्ध धाराएं प्रवाहित होती हैं। जब समाज का हृदय वशीभूत हो जाता है तभी राजनीतिक यंत्र पवन चक्की की तरह तेजी से कार्य करता है। जब यह हृदय पराया बना होता है तब राजनीतिक योजनाएं व्यर्थ सिद्ध हो जाती हैं। मनुष्य को अच्छा बनाना चाहिये। उसको राजनीतिक संस्थाएं अच्छा नहीं बना सकतीं। जिस अनुपात में मनुष्य उन्नत होगा उसी अनुपात में ये संस्थाएं उन्नत होकर कार्य करने में समर्थ हो सकेंगी।

(इंडियन रिव्यू जून ५०, पृ० ४०५)

राजयोग और लम्बा उपवास

महर्षि दयानन्द सरस्वती ईश्वर प्राप्ति अथवा आत्मोन्नति के लिये लम्बे उपवास में आस्था न रखते थे जिनका परिणाम आत्म-हत्या में जाकर निकले। कवि सम्राट रवीन्द्रनाथ टैगोर भी राजयोग के पक्ष में थे और वे भी महर्षि दयानन्द के सदृश हठयोग के अन्तर्गत उपवास को आत्मोन्नति का उत्तम साधन न मानते थे। जब गांधीजी ने अपना लम्बा आमरण उपवास प्रारम्भ किया था तो स्व० पं० मदन मोहन जी मालवीय और कविवर ने महात्मा जी को विशेष तार भेजकर लिखा था कि उनका उक्त उपवास आर्य संस्कृति के अनुकूल नहीं है। टैगोर महोदय का तार इस प्रकार था :—

When Lord Budha woke up to the multitude miseries from which the world suffers he strenuously went on preaching the path of liberation till the last day of his earthly career, death when it is physica-lly are morally inevitable has to be bravely endured, but we have not the liberty to court it.

अर्थात् जब भगवान् बुद्ध को संसार के असंख्य लोगों के क्लेशों का ज्ञान हुआ तो वह अपने जीवन की अन्तिम घड़ी तक निर्वाण के मार्ग का उपदेश करते रहे। जब शारीरिक वा मानसिक निर्बलता से मौत अपने आप आवे तो इसको वीरता पूर्वक सहन करना होगा किन्तु मृत्यु

को अपने आप भुलाने का हमें कोई अधिकार नहीं।

(माडर्न रिव्यू जून १९३३ पृ० ७०४)

मनुस्मृति के नारी-सत्कार का अभिनन्दन

प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक नीत्शे ने कहा है :—

I know of no books in which so many delicate and kindly things are said of the women as in the law book of Manu these old greyheads and saints have a manner of being gallant to women which perhaps can not be surpassed (Anti Christ P. P. 214 215.

मनुस्मृति को छोड़कर मेरे देखने में ऐसी कोई दूसरी पुस्तक नहीं आई जिसमें स्त्रियों के प्रति इतने ममता और दयापूर्ण उद्गार हों। इन प्राचीन श्वेत जटाधारी ऋषियों मुनियों का स्त्रियों के प्रति सम्मान का कुछ ऐसा ढंग है कि उसका कदाचित अतिक्रमण नहीं हो सकता।

बहु विवाह के अभिशाप

हम बहुधा यह सुनते हैं कि अनेक पत्नियों से घर में कलह और क्लेश व्याप्त रहता है। जब पादरी विलियम ने फिजी की एक स्त्री से यह पूछा 'तुम और अन्य स्त्रियां नाक विहीन क्यों हो?' तो उस स्त्री ने उत्तर दिया 'इसका कारण एक पुरुष की कई २ पत्नियों का होना है। ईर्ष्या से घृणा उत्पन्न होती है और बलवान पत्नी दाँतों से अपनी सौत की नाक काट डालती है। बहु पत्नीत्व से शत्रुता का जन्म होता है। यहूदियों की हीब्रू भाषा में दूसरी पत्नी के लिये हस्सरा (स्त्री शत्रु) शब्द बहुत प्रचलित था। मुस्लिम देशों में बहु पत्नीत्व अशान्ति और दुःख का कारण रहा है। डा० पोलक कहते हैं कि 'ईरान में विवाहिता पत्नी को उस समय सर्वाधिक क्लेश होता है जब उसका पति उससे बढ़िया नईदुलहिन को घर में ले आता है। भारत के हिन्दुओं और मुसलमानों के अनेक पत्नियों वाले घरों में देवासुर संग्राम मचा रहता है।"

(वैस्टर मार्क का विवाह का संक्षिप्त इतिहास पृ० २४४-२४५)

भारतीय संस्कृति की उत्कृष्टता

भारतवासियों को पाश्चात्य सभ्यता के खोखलापन को दृष्टि से ओझल न करना चाहिए। सभ्यता का सार वही है जिसका निरूपण प्राचीन आर्यों ने किया था, अर्थात् दर्शन, विज्ञान तथा धर्म तीनों की उन्नति साथ २ करना। वे इन तीनों को आत्मा की उपज समझते थे। मनुष्य की सम्पूर्ण शक्तियों का स्रोत उसकी आत्मा है। आत्मा में भाव (Feeling) विचार (Thinking) और वृत्ति (Willing) तीनों व्यवहारों का समावेश रहता है। उसकी सभी शक्तियां इन तीनों व्यवहारों के द्वारा ही प्रकाशित होती हैं। सभ्यता वा संस्कृति अन्ततः इन तीन व्यवहारों भाव, विचार तथा वृत्ति के सम्मिश्रण का फल मानी जावेगी।

भावों के विस्तार से ललित कलाएं, चित्रकारी संगीत, नृत्य, भवन निर्माण कला, अभिनय और धार्मिक जीवन की प्राप्ति होती है। विचार शक्ति के विकास से साहित्य, दार्शनिक वा वैज्ञानिक का प्रादुर्भाव होता है। वृत्ति शक्ति की सहायता से मनुष्य उपरोक्त विधाओं को कार्य रूप में परिणत करके बड़े २ महत्व के आयोजन जुटाकर शक्ति, पराक्रम तथा साहस का परिचय देता है।

आत्मा की तीनों शक्तियों के समुचित तथा समन्वात्मक विकाश द्वारा जिस संस्कृतिका प्रादुर्भाव होगा वही संस्कृति संसार को सुख, शांति और शाश्वत आनन्द दे सकती है।

बाल-जगत्
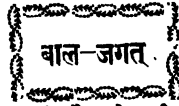
साहसी और परोपकारी बच्चे

जान पर खेलकर तीन की जीवन रक्षा करने वाले स्काउट्

नई दिल्ली, ६ अक्टूबर। चौथी स्काउट बटालियन के तीन स्काउट छत्रराम, ताराचन्द और सौदागर सिंह उन १६ वीरों में से हैं, जिन्हें राष्ट्रपति की ओर से तीसरी श्रेणी का अशोक चक्र देने की हाल में ही घोषणा की गई है। इनकी प्रशस्ति में कहा गया है कि अपने प्राणों पर खेलकर और अपार शारीरिक कष्ट सहकर इन्होंने जो काम किया वह साहस और संकल्प का अद्वितीय उदाहरण है।

पिछले साल ७ अक्टूबर को स्काउट छत्रराम डेरा बाबा नामक के पुल पर तैनात थे। लगभग ११ बजे उन्होंने देखा कि ८-६ सौ गज की दूरी पर तीन आदमीएक पेड़ पर फसे हुये हैं और अपनी रक्षा के लिए चिल्ला रहे हैं।

रावी का पानी दायें तटबन्ध और पुलके पुश्ते को तोड़कर भयानक गति से चारों ओर फैल रहा था और जहां तक निगाह जाती थी पानी ही पानी दिखाई देता था। पुल से पेड़ तक ८ से १० फुट गहरी और बहुत तेजी से बहने वाली पानी की धारा थी। साथ ही पानी के नीचे बहुत कटीली घास खड़ी थी। ऐसी भयकर परिस्थिति में तीनों स्काउटों ने पेड़ पर फसे व्यक्तियों को बचाने का निश्चय किया। तीनों ने एक रस्से से अपने को बधकर पेड़की ओर तैरना शुरूकिया। तेज बहाव की मुसीबत तो थी ही घास उनका शरीर काटे डाल रही थी। फिर भी यह लोग पेड़ तक पहुंचे और तीनों व्यक्तियों को अपने साथ लेकर पुल पर वापिस लौटे। लौटते लौटते ये इतने थक गये थे कि पुल पर पहुंचते-पहुंचते ही बेहोश होकर गिर गये।

भारतवर्ष में दर्शन, विज्ञान तथा धर्म तीनों की उन्नति में आर्य लोग तत्पर रहते थे। दार्शनिक तथा वैज्ञानिक सिद्धान्तों की सहायता से भारतवासी धर्म के हितों की रक्षा करके अपने जीवन को समन्वय युक्त विकास के मार्ग पर चलाते थे। आत्मा, परमात्मा और प्रकृति तीनों की सत्ता को स्वीकार करके तीनों के परस्पर सम्बन्धों को समझ कर कर्त्तव्यात्मक जीवन व्यतीत करते थे। प्रकृति और परमात्मा के बीच में आत्मा की विद्यमानता जब कोई व्यक्ति या जाति स्वीकार कर लेती है तो उसे प्रकृति सम्बन्धी और परमात्मा सम्बन्धी व्यवहारों अर्थात भौतिक और आध्यात्मिक उन्नति दोनों को ही दृष्टि मे रखना होता है। इसी लिये भारतवर्ष में भारतीय समाज अभ्युदय या लौकिक उत्कर्ष तथा निःश्रेयस वा मोक्ष की सिद्धि दोनों को अपना जीवनादर्श बनाता था।

आधुनिक सभ्यता जो वस्तुतः यूरोपीय सभ्यता के नाम से प्रसिद्ध है, इसमें भौतिक उन्नति का अंश प्रधान है। यह सभ्यता आत्मा को स्वीकार नहीं करती इसी लिये यह खोखली बनकर संसार का अहित कर रही है।

❀

शंका समाधान

[श्रीयुत पं० रामचन्द्र जी देहलवी]

१—ईश्वर ने सृष्टि की रचना कैसे की? विशेषकर एक दम से युवा स्त्री पुरुष कैसे और कहां से बना दिये हैं ? कृपाकर स्पष्टतः विश्लेषण करें।

२—'नासदीय सूक्त' में बताया कि मूल में प्रकृति भी नहीं थी प्रजापति ने इच्छा की कि मै प्रजाके साथ हो जाऊं और उसने संसारकी रचना की। तो जब मूल में प्रकृति भी नहीं थी तो त्रैतवाद कहां रहा? प्रकृति अनादि कहां रही ? प्रजापति ने इच्छा क्यों की, क्योंकि इच्छा तो अपूर्ण को होती है तो क्या ईश्वर अपूर्ण है जो उसे ऐसी इच्छा हुई?

३—वेद तीन हैं या चार ? यदि चार थे तो फिर शतपथ ब्राह्मण, आदि मनुस्मृति अनेकों स्थलों पर तीन वेद क्यों लिखे हैं? चार ही लिखना था वेदों को तीन कई बार लिखा है चार एक ही बार, यह क्यों ?

४—वेदों के मन्त्रद्रष्टा चार ऋषि हैं या वे अनेक ऋषि जिनके नाम मन्त्रोंके साथ आये हैं। उनके ऋचाओं के साथ स्त्रियों के नाम क्यों आये हैं?

५—भूकम्प या बाढ़ आना ईश्वरीय व्यवस्थानुसार कही जाती है तो क्या वे समस्त लोग ही पापी है जो बाढ़ या भूकम्प के शिकार होकर मर जाते हैं और लाखों बे घरबार हो जाते हैं?

६—प्राकृतिक नियम न तो ईश्वर तोड़ सकता है न जीव ? इस विषय में क्या अन्तर रहा ?

७—हम किसी व्यक्ति से यदि कोई प्रार्थना करते, मांगते या कुछ कहते हैं तो वह सुन लेता है, मांगी हुई वस्तु दे देता या अस्वीकार कर देता है पर ईश्वर तो उत्तर भी नहीं देता।

८—क्या ईश्वर को यह ज्ञान रहता है कि अमुक जीवका भावी जीवन इस प्रकार गुजरेगा ? क्या ईश्वर को यह विदित है कि इस मृत्युलोकमें तृतीय विश्वयुद्ध होगा ? यदि नहीं मालूम तो सर्वज्ञ और त्रिकालज्ञ कैसे हुआ ? यदि मालूम रहता है तो जीव कर्म करने में स्वतन्त्र नहीं रहेगा। क्योंकि यदि जीव ईश्वर के ज्ञान के अनुसार ही जीवन नहीं गुजारता तो ईश्वर का ज्ञान मिथ्या सिद्ध हुआ और ईश्वर की व्यवस्थानुसार ही जीवन बिताए तो वह स्वतन्त्र नहीं हुआ। यदि ईश्वर जानता है कि तृतीय विश्व युद्ध नहीं होगा तो ससार वाले कितना ही चाहें विश्व युद्ध नही होना चाहिये और यदि ईश्वर जानता है कि तृतीय विश्व युद्ध होगा ही तो फिर हम सब का विश्व शान्ति के लिये प्रयत्न करना ही बेकार हुआ! कृपया स्पष्टतः विवेचना करें।

९—यदि संसार की सभी वस्तु इसीलिये क्रियाशील हैं कि उसमें एक चेतन शक्ति (ईश्वर) व्यापक होकर उन्हें क्रिया दे रही है तो जब वही चेतन सत्ता, कागज, कलम, खाट, टेबिल, किताब आदि में भी व्यापक है तो ये भी स्वयं क्रियाशील क्यों नहीं हो जाते ?

१०—शब्द आकाश का गुण कैसे हुआ ? रिकार्ड में आवाज भरी होती है जो उससे पैदा

होती है आकाश से शब्द पैदा नहीं होता। शब्द मूर्तिक है या अमूर्तिक ?

११—इन्द्रिय तो पहले बन गईं और अन्तमें शरीर, स्वामी दयानन्दजी की सृष्टि उत्पत्ति प्रकरण सम्बन्धी यह उक्ति कैसे युक्ति युक्त है ?

१२—एक स्थान पर स्वामी जी ने लिखा है कि जड़ का निमित्त पाकर कभी कभी जड़ भी गतिशील हो जाता है। क्या यह गलत है ? और क्या यह भी गलत है कि जड़ पदार्थ जब जैसा संयोग पाते हैं तब वैसो ही आकृति में बदल जाते हैं। यह संयोग कभी २ स्वयं या कभी २ मनुष्य द्वारा होता है।

१३—हर कर्त्ता में कार्य से पहिले इच्छा और प्रयोजन अवश्य होता है, क्या ईश्वर में भी सृष्टि रचना में कोई इच्छा या प्रयोजन है ? यदि हां, तो फिर ईश्वर निर्विकार, निरंजन और राग-रहित कैसे हुआ ? वह सृष्टि रचने पर मजबूर क्यों है ?

१४—४ अरब ३२ करोड़ वर्षकी लम्बी प्रलय सभीप्रकार के जीवों के लिये मोक्ष के समान हो गई ! चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष तक सभी सुषुप्ति में क्यों रहें ? पृथ्वी के सभी अणु परमाणु इतने लम्बे समय तक क्यों कर अलग रहते हैं ? तब तक ईश्वर और जीव क्या करते रहते हैं ?

१५—जब ईश्वर हमारे पापों को क्षमा नहीं कर सकता और पुण्यों का फल अधिक नहीं दे सकता तब फिर उससे प्रार्थना करना ही बेकार है। जैसा हम करते हैं वैसा ही भोगते हैं फिर इसमें ईश्वर की क्या जरूरत ? क्या वह स्वयं अपनी स्तुति करवाना चाहता है ?

१६—वेद ईश्वरीय ज्ञान है। उसमें अनेक मन्त्र ऐसे हैं जिनमें ईश्वर की महिमा और स्तुति है। ईश्वर ने खुद की उपासना करने का ज्ञान क्यों दिया ?

१७—यदि वेद ही सब ज्ञान का भण्डार है तो तीन शंकायें होती हैं (१) जो व्यक्ति चारों वेदों का पूर्ण अध्ययन करके पण्डित बन जावे क्या उसे पूर्ण ज्ञान हो जावेगा ? (२) यदि चारों वेदों में ही पूर्ण ज्ञान उपस्थित है तो वह ज्ञान भी सीमित हुआ। अनन्त ईश्वर का ज्ञान सीमित कैसे हुआ ? (३) सम्पूर्ण ज्ञान वेदों का सहारा लेकर आर्य विद्वान अमेरिका, जर्मनी और इंगलैण्ड आदि की तरह कोई अभूतपूर्व आविष्कार क्यों नहीं करते ?

—एक अधीर जिज्ञासु

❀

उत्तर

१—सर्व व्यापक ईश्वर ने अपने कौशल और शक्ति से प्रत्येक पदार्थ को उसके भीतर रहते हुए उत्पन्न किया है। जिस प्रकार माता के गर्भ में बालक क्रमशः बढ़ता है और पूर्णता को प्राप्त होकर बाहर आता है उसी प्रकार धरती माता के गर्भ से सब मनुष्यादि सृष्टि उत्पन्न हुई। ये सब सांचे थे जिनको अपनी शक्ति और सामर्थ्य से सृष्टि की आदि में ईश्वर ने उत्पन किये थे। इन्हीं सांचों से मनुष्यादि की सृष्टि उत्पन्न होती चली आ रही है।

२—"नासदीय सूक्त" में जगत् बनाने की सामग्री का अभाव वर्णन नहीं किया है। भाव ही वर्णन किया है। सिर्फ सापेक्ष नामों (निस्बती नामों) के व्यवहाराभाव को बताया है। अत्यन्त सूक्ष्म कणों का 'परमाणु' नाम उस समय व्यवहृत हुआ जब ६० (साठ) कणों के मिलने से 'अणु' बनाये गये। 'अणुओं' के बनने से पूर्व, कणों का नाम, 'परमाणु' व्यवहार में नहीं आया हुआ था। अर्थात्—

जब ६० अवयवों से बने हुए अवयवी का

नाम 'अणु' हुआ तो उसके अवयवों का नाम 'परम+अणु' हुआ। इसी कारण स्वामी जी महाराज ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में सापेक्ष नामों के व्यवहार का अभाव तो बताया है न कि जगत् के कारण अर्थात् उपादान कारण का, जिसको सामर्थ्य नाम से वर्णन किया है। शब्द यह हैः—

किंतु पर ब्रह्मणः सामर्थ्याख्यमतीव सूक्ष्मं सर्वस्यास्य परम कारण संज्ञकमेव तदानीं समवर्त्तत।

अर्थ— परन्तु उस समय परब्रह्म की सामर्थ्य नाम का अति सूक्ष्म, इन सब का परम कारण वर्त्तमान था।

जगत् की उत्पत्ति से पूर्व उसके उपादान कारण का 'सामर्थ्य' नाम ही अत्यन्त उपयुक्त है, क्योंकि ईश्वर की जगत् रचने की 'सामर्थ्य' के साथ इसकी संगति लग जाती है।

एक में जगत् बनाने की सामर्थ्य और दूसरी में जगत् बनने की सामर्थ्य।

'प्रकृति' शब्द भी विकृति की अपेक्षा रखता है। जब प्रकृति विकृत हुई तब उसका नाम 'प्रकृति' व्यवहार में आया। जब 'पुत्र' उत्पन्न हो जाय तब उस अवस्था में ही 'पिता' शब्द व्यवहार में आ सकता है। यहाँ 'पिता' नाम वाली व्यक्ति का अभाव नहीं है, केवल पितात्व का अभाव है।

प्रजापति ने अपनी किसी कमी को पूरा करने की 'इच्छा' नहीं की क्योंकि पूर्ण होने से उसमें कमी की कल्पना करना ही भूल है। उसने अपनी पूर्णता से जीव की अपूर्णता को पूरा करने के के लिये की। पूर्ण के होने की सफलता अपूर्णों की सहायता करने में ही है। ऐसी सहायता की इच्छा सर्वथा निर्दोष है।

३—तीन तो विद्याएं हैं परन्तु वेद चार हैं। त्रयी विद्या से चारों वेदों का ग्रहण होता है। क्योंकि उनमें कर्म, उपासना और ज्ञान का विधान किया है। इसके अतिरिक्त चारों वेदों की रचना गद्य, पद्य और गानात्मक होने से भी वेदों को वेद त्रयी कहते हैं।

ऋग्, यजुः, साम जहां वेदों के नाम हैं वहां वेदों के मन्त्रों की बनावट के भी नाम हैं।

मनुस्मृति में 'ऋग्यजुसाम लक्षणम्' कह कर वेद मन्त्रों की तीन प्रकार की रचना की ओर ही संकेत किया है।

४—मन्त्रद्रष्टा पुरुष और स्त्री दोनों हुए हैं।

५—मृत्यु पाप के कारण नहीं होती है। दुःख पाप के कारण होता है। जन्म और मृत्यु का अनिवार्य सम्बन्ध है। यदि मरने वाले थोड़ी २ संख्या में भिन्न २ स्थानों में मर जाते तो आपको आश्चर्य न होता। आश्चर्य तो इकट्ठा कई संख्या में मर जाने से हुआ है। ऐसी दुर्घटना के स्थान में जीव अपने कर्मों के कारण और ईश्वरीय व्यवस्था से सामूहिक रूप में भी पहुंच जाते हैं। कीट पतंगादि नीच योनि के जीव तो प्रतिदिन करोड़ों की संख्या में मरते और उत्पन्न होते रहते हैं। उनकी ओर हमारा ध्यान बहुत कम जाता है।

भूकम्प और बाढ़ादि के मुख्य कारण तो प्राकृतिक ही होते हैं परन्तु वे मनुष्यादि प्राणी के कर्म फल भुगाने का कारण भी बन जाते हैं।

यदि कोई पुरुष किसी आवश्यक निज कार्य के लिये अपनी मोटर में तेजी से जा रहा हो, और उस समय दैवात् उसके नीचे किसी की मृत्यु हो जाय तो यह नहीं कहा जायगा कि इस जीव को मारने के लिये वह पुरुष मोटर चला रहा था। वह तो अपने निज के काम के लिये ही कहीं जा रहा था, मार्ग में वह किसी की मौत का भी साधन बन गई।

६—अन्तर यह है कि जीव अपनी मूर्खता अथवा स्वार्थ वश प्राकृतिक नियम तोड़ना चाहता है पर वह तोड़ नहीं सकता, और ईश्वर सर्वज्ञ होने से और नियमों का स्वयं नियामक होने से तोड़ने का विचार ही नहीं करता।

यदि किसी अंश में जीव और ईश्वर की समानता भी हो तो भी दोनों एक नहीं हो सकते। कितना ही प्रयत्न करे जीव तीन काल में ईश्वर के समान नहीं हो सकता। अर्थात् सर्वत्र, सर्वज्ञ और सर्व शक्तिमान् कभी भी नहीं हो सकता।

प्रकृति के परमाणुओं में जो स्वाभाविक गुण हैं उनको न ईश्वर बदल सका है और न जीव बदल सकता है, इस समानता से ईश्वर के ईश्वरत्व में कोई दोष नहीं आता। यह तो अनादि पदार्थों के अपरिवर्तन शील होने का प्रमाण है।

ईश्वर भी नहीं मर सकता और न जीव मर सकता है। इसमें दोनों समान हैं। अजन्मा होने में दोनों समान हैं। ४ की संख्या को ईश्वर भी ४ ही जानता है और जीव भी, तो इस समानता से क्या हानि अथवा क्या लाभ ?

७—आपने शरीरी और अशरीरी के भेद को भुला कर प्रश्न किया है सो युक्त नहीं है। किसी बात को स्वीकार करने या अस्वीकार करने का प्रकार दोनों का भिन्न होगा। समान न होगा।

चूंकि पूर्व जन्मों में किये हुए भिन्न २ कर्मों के अनुसार जीवों को फल देना ईश्वर के आधीन है, जिन कर्मों का और उनकी राशि का जीव को वर्त्तमान में जरा भी ज्ञान नहीं है, तो यह कैसे हो सकता है कि जीव उन कर्मों के अनुसार अपनी मांगप्रस्तुत करे,वह तो अपनोवर्त्तमानावस्थाके अनुसार ही मांग पेश करेगा जिसको न्यायानुसार ईश्वर कभी भी मंजूर नहीं करेगा। इस पर सन्तुष्ट न होकर वह स्वार्थी दुनियादारों की भांति भिक २ करता ही रहेगा, खुशामद पर खुशामद, देवी देवताओं द्वारा सिफारिश का तांता बांध कर ईश्वर को परेशान और उसका बहुमूल्य समय नष्ट करता रहेगा। परन्तु ईश्वर अपने फैसले को जो उसके सर्वज्ञता पूर्ण न्याय पर निर्भर है किसी अवस्था में भी नहीं बदलेगा। इसलिये ईश्वर का अशरीरी होना और शरीरी की भांति व्यवहार न करना ही उचित और युक्त है। यह सब कुछ जीव के ही लाभ के लिये है परन्तु बालक की भांति वह अपने सीमित ज्ञान से ईश्वर के निर्णय के मूल्य और लाभ को नहीं जानता है।

८—मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र है चाहे अच्छा करे चाहे बुरा। जैसा स्वतन्त्रता से जीव करता है वैसा ही सर्वज्ञता से ईश्वर जानता है। न तो पूर्वकाल में जीव करता है और न उत्तरकाल में ईश्वर जानता है, और न पूर्व काल में ईश्वर जानता है और न उत्तर काल में जीव करता है। जीव का करना और ईश्वर का जानना साथ २ है, आगे पीछे नहीं है।

पिछले कर्मों के फल स्वरूप जीव की क्या अवस्था होगी इसको ईश्वर पहले से ही जानता है. क्योंकि किये हुए कर्मों का फल ईश्वर ही की व्यवस्था के आधीन होता है। यदि यह माना जाय कि क्रियमाण (स्वतन्त्र) कर्मों को भी ईश्वर पहले से जानता है और उसी के अनुसार जीव कर्म करता है, अपनी स्वतन्त्र इच्छानुसार नहीं करता, तो जीव परतन्त्र हो जायगा और ऐसे कर्मों का उत्तरदाता व भोक्ता ईश्वर ही होगा, जीव नहीं होगा।

यदि मनुष्यों के स्वतन्त्र कर्मों से ऐसे कारण उपस्थित हो जायें कि जिनसे विश्व युद्ध होना अनिवार्य हो जाय तो युद्ध अवश्य होगा और यदि ऐसे कारण उत्पन्न न हुए हों तो युद्ध न होगा। ईश्वर इन दोनों कारणों को देखता है।

विश्व शान्ति के लिये प्रयत्न प्रत्येक अवस्था

में शुभ है क्योंकि वह कर्त्ता की शुभ भावना का द्योतक है जिसका शुभ फल ही उसके कर्त्ता को मिलेगा।

कभी २ शान्ति की स्थापना के लिये क्रान्ति की भी आवश्यकता होती है।

९—ईश्वर चेतन होने से अपने में जानने और करने रूपी दोनों शक्ति रखता है। जड़ पदार्थ तो क्रिया को ग्रहण करते हैं, ज्ञान को ग्रहण करने की उनमें योग्यता नहीं है। जिस प्रकार अध्यापक का प्रदान किया हुआ ज्ञान चेतन बालक तो ग्रहण कर लेते हैं परन्तु मेज कुर्सी आदि ग्रहण नहीं करतीं क्योंकि उनमें ज्ञान के ग्रहण करने की योग्यता नहीं है।

ईश्वर की क्रिया-शक्ति दो प्रकार से कार्य करती है। उगते हुये पेड़ में और प्रकार से और सूखे हुये या काटे हुये पेड़ में और प्रकार से। उगते हुए में वृद्धि होती है और कटे हुए में क्षय होता है। कुर्सी और मेज वगरह काटे हुये पेड़ की लकड़ी से बनाई जाती हैं इसलिये उनमें जो क्रिया होती है वह उगते हुये पेड़ से भिन्न होती है। यह भिन्नता पदार्थों की अवस्था भेद से है। सूर्य का ताप, लगे हुये पौधे को बढ़ाता है और उखड़े हुये को सुखाता है यह दोनों फल पदार्थ की अवस्था भेद से हैं।

(१०) जब एक स्थान पर बोला हुआ शब्द आकाश में सर्वत्र सुना जा सकता है तो इससे यह सिद्ध हो गया कि "शब्द" आकाश का गुण है और वह बोलने की क्रिया से प्रगट हो सकता है।

(११) यह प्रश्न आपका स्पष्ट नहीं है। यदि प्रमाण सहित लिखते या उदाहरणसे स्पष्टकरते तो उत्तर देने में सुविधा व सरलता होती। फिर भी अपनी समझके अनुसार लिखता हूं शायद आपकी इच्छा के अनुसार हो। न्याय दर्शन में शरीर का लक्षण किया है:—

"चेष्टेन्द्रियार्थाश्रयः शरीरम्"

अर्थ:—इन्द्रियों का अपने अर्थ के लिए चेष्टा करने का आश्रय शरीर है। इस हिसाब से इन्द्रियों का शरीर से पहले मानना अयुक्त नहीं है।

(१२) स्वामीजी महाराज के शब्दों को जैसे है वैसे आपने नहीं लिखा। उन्होंने उदाहरण सहित लिखा है। आगे यह भी लिखा है कि "उनका नियम पूर्वक बनना व बिगड़ना परमेश्वर और जीव के आधीन है।"

ईश्वर रचित बीजादि का हवा से उड़कर या किसी और प्रकार से खेत के अतिरिक्त किसी स्थान में गिरजाना और जल के मिल जाने से वृक्षाकार हो जाना ईश्वर की सामान्य क्रिया के प्रभाव से तो माना जा सकता है जो अग्नि जलादि में व्याप्त रहती है; परन्तु नियमानुसार नहीं माना जा सकता क्योंकि जहाँ वह वृक्षाकार हुआ है वह न तो खेत है न बगीचा है। न वह उद्दिष्ट स्थान जीव का है और न ईश्वर का है। इसी तरह अग्नि के मेल से बिगड़ जाने को भी समझ लीजिये। एक मिसाल से और स्पष्ट करता हूँ।

वेद द्वारा ईश्वर ने उपदेश दिया है कि समाज की अवस्था को साम्य रखने के लिये प्रतिषिद्ध मैथुन से सन्तान उत्पन्न न की जावे, इसके विरुद्ध यदि कोई पुरुष सन्तान उत्पन्न करे तो वह व्यभिचारज सन्तान होगी। ऐसी सन्तान ईश्वर की क्रिया शक्ति से उत्पन्न तो हो जायगी पर उसके बताये हुए सामाजिक नियम के विरुद्ध होगी क्योंकि सामाजिक नियम को उल्लंघन मनुष्य ने किया है इसलिए उसने पाप किया है। ईश्वर की सामान्य क्रिया तो प्रतिषिद्ध और अप्रतिषिद्ध मैथुन में समान ही रहती है।

(१३) इस का उत्तर दूसरे प्रश्न के उत्तर में आ चुका है। उसे देख लें। इतना विशेष कहना हूं कि ईश्वर सर्वज्ञ होने से पूर्ण ज्ञानी है। पूर्णता में कम ज्यादा होना असम्भव है। अतः ईश्वर में जगत् के उत्पन्न करने का उद्देश्य और उत्पन्न करने की इच्छा स्वाभाविक है जिसको ईक्षण

* ईसाई प्रचार निरोध आंदोलन *

हिन्दुओं की आंखें खोल देने वाली ईसाई धर्म परिवर्तन की आंकड़ों में कहानी

अन्य देशों के समान ईसाई चर्च भारत मे राज्याश्रय में खूब फला फूला है और इसने सन् १०६१ से आरम्भ करके अब जोहन डे मौन्टे कारनिको नामक भारत में सर्व प्रथम आने वाले मिशनरी ने १३ मास के भीतर २ भिन्न २ स्थानों पर १०० व्यक्तियों को ईसाई बनाया था।

आंकड़ों में कहानी इस प्रकार है:—

सन्	ईसाई बनने वालोंकी सं०	काल (वर्षोंमें)	संख्या वृद्धि	वृद्धिका निकटतम %
१५५०	१२००००	२५६	११६६००	१२००००
१६००	२७००००	५०	१५०००	१२५%
१७००	६०१०००	१००	३३००००	१२३
१८००	६५८०००	१००	३५८० ०	६७.६
१६११	३८७६३०३	१११	२६१८२०३	३०३.५
१६२१	४७५४०७६	१०	८७७२७८	२२ ८
१६३१	६२६६७३३	१०	१५४०६५८	४०
१६५१	८१५७७६५	२०	१६०४६३३४	२५

सन् १२६१ की १०० संख्या का ६६० वर्षों में ८१५७७६५ हो जाना तलवार और क्रास की उत्कृष्ट फस्ल है। गत ५ वर्ष में यह फस्ल और अधिक उन्नत हुई होगी क्योंकि इन दिनों ईसाई मिशनरी देशके धर्म निरपेक्ष सविधान का खुलकर दोहन कर रहे हैं। बाबूराव पटेल

सपादक, फिल्म इंडिया बम्बई

कहते हैं और यह सब जीव के लाभार्थ है।

(१४) प्रलय का लम्बा काल सब जीवों के लिये समान नहीं है। जैसे गाढ़ निद्रा में सोये हुये मनुष्य को समय के परिमाण का भान नहीं रहता उसी तरह बद्ध जीवों को सुषुप्ति अवस्था में रहने से प्रलय के लम्बे काल का भान नहीं होता है। मुक्त जीव ज्ञान सहित मुक्ति के आनन्द को भोगते हैं, और बद्ध जीव ज्ञानरहित गाढ निद्रा के आनन्द को भोगा करते हैं।

जिस प्रकार क्रमशः जगत् उत्पन्न होता है उसी प्रकार क्रमशः प्रलय को प्राप्त होता है। एक क्षण भी क्रिया रहित नहीं रहता।

(१५) प्रार्थना वगैरः कर्मों के फल को बदलने, या पाप क्षमा कराने के लिये नहीं की जाती है। इनका फल तो अन्य ही होता है। स्तुति से गुण ग्रहण में प्रीति, प्रार्थना से अभिमान का नाश, उत्साहमें वृद्धि और सहायका मिलना, उपासनासे ईश्वरके गुण कर्मानुसार अपने गुण कर्म बनाना।

ईश्वर की स्तुति ईश्वर को जान कर उस जैसा बनने के लिये है उसकी खुशामद करके उसको खुश करने के लिये या उससे अनुचित लाभ उठाने के लिये नहीं है।

(१६) ईश्वर ने अपनी खुद की उपासना करने का ज्ञान इसलिए दिया है कि जीव उस जैसा होने का यत्न करें। गुरु के पास जाने और पढ़ने का यही लाभ है कि शिष्य गुरु जैसे बनें। ईश्वर से मुक्ति का आनन्द और गुरु से ज्ञान का आनन्द भोगें।

(१७) १ चारों वेदों का अध्ययन करने वाला जिसने अर्थ ज्ञान सहित पढ़ा है पूर्ण पण्डित हो जावेगा।

(२) जितना जीवों को मुक्ति प्राप्त करने के लिये ज्ञान अपेक्षित है इतना सारा वेदों में मौजूद है। जीव की योग्यता से अधिक होना व्यर्थ है। ईश्वर का सारा ज्ञान असीम है।

(३) पूर्व काल में हस्त क्रिया के सम्पूर्ण साधन और राज्य की ओर से सहायता मिलने के कारण बड़ी २ आविष्कारें हुई अब वेदोंकी विद्या का लोप होने से जिसका कारण भारत वासियों का प्रमाद और आपस की फूट है यह अवस्था हो गई है। लोगों का कुछ कुछ प्रयत्न इस ओर होने लगा है राज्याधिकारियों ने प्रोत्साहन दिया और सहायता दी तो पूर्वावस्था को हमारा देश पुनः प्राप्त हो जावेगा। हस्तक्रिया को शूद्र कम मान लेना भी देश की विज्ञान सम्बन्धी गिरावट का बहुत बड़ा कारण है।
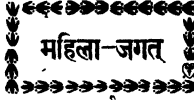
पर्दा प्रथा

[लेखक—श्री माधवानन्द जी महाराज]

भारतीय नारी की समस्याओं में पर्दा प्रथा विशेष महत्व रखती है। इसके औचित्य और अनौचित्य के विषय में अनेक मत मतान्तर पाये जाते हैं। पर्दे के विरोधी पर्दे को मध्य कालीन युग की प्रथा बताकर आज के युग में उसकी अनावश्यकता सिद्ध करने का प्रयास करते हैं। दूसरी ओर पर्दे के समर्थक पर्दे को अत्यन्त प्राचीन काल से प्रचलित मानते हैं और उसकी प्राचीनता को ही उसकी उपयोगिता का प्रमाण बतलाते हैं। यदि विशुद्ध अनुसन्धानात्मक दृष्टि से विचार किया जाय तो पर्दे का प्रचार अत्यन्त प्राचीन है।

पर्दे का द्योतक अवगुठंन शब्द संस्कृत के प्राचीनतम ग्रन्थों में उपलब्ध होता है। रामायण में सीता अपने श्वसुर की छाया आने पर घूंघट कर लेती हैं। संस्कृत के नाटकों में स्त्रियों के अवगुठंनवती होने का बार-बार उल्लेख मिलता है। अतः पर्दे की प्रथा कुछ प्राचीन है और उसे मध्य युगीन या आधुनिक मानना भ्रान्ति पूर्ण है।

अब प्रश्न यह है कि आधुनिक युग में भारत मे पर्दे का प्रयोग वाञ्छनीय है अथवा नहीं इस विषय में मेरा यह निःसन्दिग्ध मत है कि वह पर्दा जो नारी को घर की चार दीवारी के भीतर बन्द रखता है जो उसे प्रकृति के दोनों वर प्रकाश वायु से तथा प्रतिमा के प्रकाश से वंचित रखता और जो उसे नाना प्रकार के क्षयकारी रोगों में ग्रस्त रखता है सर्वथा हेय और त्याज्य है तथा नारी के लिये अभिशाप स्वरूप है। मैं उस पर्दे का घोर विरोधी हूं जो उदाहरणार्थ मुसलमानी बोहरों में पाया जाता है। बोहरा स्त्री को घर के बाहर दृष्टि पात भी नहीं करने दिया जाता है और वे चिक से ढकी जालियों में से ही थोड़ा बहुत झांक सकती हैं। परिणाम स्वरूप बोहरा स्त्रियों में क्षय रोग का अत्यधिक आतंक देखा जाता है। मेरे मतानुसार स्त्रियोंको बाहर वायु सेवन केलिए जातेसमय पर्दे का प्रयोग नहीं करना चाहिये और न इसे अपने घरों में ही स्थान देना चाहिये। नारी घर की रानी है और उसके प्रबन्ध में पर्दा अनावश्यकही नहीं बाधक और असुविधा जनक भी है।

किन्तु साथ ही साथ मैं उस पर्दाहीनता का भी समर्थन नहीं करता जो आज के तथा कथित सभ्य समाज में बेपर्दगी या बेहयाई का पर्यायवाची बन गया है। यदि दिन रात घूंघट में छिपी नारी अपने लिये तथा समाज के लिये भारस्वरूप है तो घर और बाहर स्वच्छन्द विचरण करने वाली तथा स्त्री सुलभ लज्जा, संकोच और मर्यादा को तिलांजलि देने वाली नारी भी भारतीय संस्कृति को पतनोन्मुख करने वाली है। मेरा विश्वास है कि नारी पुरुषों के अधिक सम्पर्क में आयगी तो उसकी पवित्रता पर उसके शील सौंदर्यपर कालुष्य की छाया आ पड़ेगी। अतः जब मैं पर्दे का समर्थन करता हूं तो मेरा आशय यही है कि स्त्रियां अपने ही दायरेमें रहें। पुरुषोंके स्वाभाविक क्षेत्रमें प्रवेश कर अपने नैसर्गिक कर्त्तव्यों की उपेक्षा न करें। पुरुष समाज और नारी समाज का अमर्यादित संसर्ग अनाचार और दुराचार को जन्म देगा, प्रणय विवाह तलाक, सन्तति-निरोध जैसे सामाजिक दूषणों को प्रोत्साहन देगा तथा प्राचीन भारतीय संस्कृतिपर कुठाराघात करेगा। पर्दा दोनों

(शेष पृष्ठ ४६२ पर)

गोरक्षा आन्दोलन

गोपाष्टमी

कातिक शुक्ल अष्टमी को गोपाष्टमी का उत्सव मनाया जाता है। भारत के प्राय: सभी भागों में यह उत्सव मनाया जाता है विशेषकर गोशालाओं तथा पिंजरा पोलों के लिये यह बड़े महत्त्व का उत्सव है। गोशालाओं में तो गोपाष्टमी के दिन मेला लग जाता है खाने पीने की दूकानें आ जाती हैं। बड़ी भीड़ होती है। मेले में घूमने के अतिरिक्त लोग गौओं को कुछ खिलाते हैं और गौशाला की संस्था को कुछ दान करते हैं यह तो होना ही चाहिये किन्तु इतना ही काफी नहीं है कुछ और भी करना होगा। जिन गो गोपों की यह अष्टमी मनाई जाती है उनकी क्या दुर्दशा है एवं उनका हित किस प्रकार हो सकता है इस पर गम्भीरता से विचार करना होगा और तदनुसार कार्य करना होगा। गोपाष्टमी केवल किसी एक गांव का या गोशालाओं का ही उत्सव नहीं होना चाहिये। आवश्यकता इस बात की है कि यह उत्सव अखिल भारत वर्षीय गो दिवस का रूप धारण करले।

गोपाष्टमी के दिन क्या करें

गोपाष्टमी के मनाने का सुन्दर ढंग और उस दिन किये जाने वाले कार्य नीचे लिखे अनुसार हों तो उत्तम है :—

१—गायों को नहला धुलाकर स्वच्छ करना और उन्हें भांति-भांति से सजाना।

२—गायों के रहने के स्थान की भली-भांति सफाई करना।

३—गउओं को स्वादिष्ट चारे से संतुष्ट करना।

४—गोशाला और पिंजरा पोलों में यथा साध्य दान देना।

५—गांव-गांव और नगर नगर में सभायें हों जिनमें गो सम्बन्धी इन बातों पर विचार हो।

(क) देश में सर्वत्र गो हत्या का निवारण कैसे हो सकता है?

(ख) गायों की वर्तमान स्थिति में, उनकी नस्ल में और दुग्धोत्पादन में किन साधनों से सुधार हो सकता है।

(ग) गोबर और गो मूत्र का अधिक से अधिक खाद के रूप में प्रयोग कैसे किया जाता है।

(घ) गोपालकों को अधिक से अधिक आवश्यक सुविधायें कैसे मिल सकती हैं।

६—उस दिन लोगों को ठीक समझाकर और उनके भावों को जाग्रत करके यह प्रतिज्ञा करनी और करानी चाहिये :—

(क) हम उस आदमी के हाथ गौ कभी नहीं बेचेंगे जिस पर यह सन्देह हो कि वह घर में गौ का पालन न कर सीधे कसाई को या कसाई के हाथ में दे देने वाले किसी को बेच देगा।

(ख) हम उन चमड़े, चर्बी तथा हड्डी आदि का अपने लिये व्यवहार और व्यापार कभी नहीं करेंगे जिनके कारण गायों की हत्या होती है।

(ग) वनस्पति ते । नकली घी का व्यवहार नहीं करेंगे।

७—जहां अच्छे सांड न हों, वहां अच्छे साडों की व्यवस्था पर विचार करना।

८—जहाँ उत्तम साड हों वहां उनके भरपूर चारे-दाने और संरक्षण का प्रबन्ध करना।

९—स्थानीय गाय बैल, बछिया और बछड़ा की सख्या का पता लगा कर लिखना।

१०—सुविधा हो तो अच्छी से अच्छी गाय देने वालों को पुरस्कार देना।

११—गायें स्वस्थ्य और सबल कैसे रहें तथा उन्हे सक्रामक रोगों से कैसे बचाया जा सकता है यह समझना समझाना।

१२—अगली गोपाष्टमी तक केलिये गोवशकी उन्नति का कार्य क्रम बनाना।

१३—गत वर्ष गो वश की उन्नति के लिये क्या किया है इसकी जांच करना।

१४—गोशालाओं को यथा शक्ति दान देना।

१५—ऐसे समयों पर सहृदय मुसलमानों और ईसाइयों को भी बुलाया जाय और बड़े प्रेम तथा सम्मान का व्यवहार किया जाय जिससे वे भी इसे सार्वजनिक मेला समझें और गौ के आर्थिक महत्त्व को जानकर गो रक्षा के पक्षपाती बने। हो सके तो मैजिक लालटेन आदि की व्यवस्था करके उपर्युक्त सब बातें समझानी चाहिये।

इस प्रकार उस दिन का सारा समय गो चर्चा में ही लगाना चाहिये। ऐसा करने से ही गोवश की सच्ची उन्नति हो सकेगी जिस पर हमारी उन्नति सोलहों आने निर्भर है।

ससार पशु दिवस

हम लोगों को यह जानकर अपने कर्त्तव्य का ज्ञान तथा उत्साह होना चाहिये कि विदेशों में पशु रक्षण और पशु कष्ट निवारण के लिये ऐसे दिवस मनाये जाते हैं और उनमे बडे उत्साह से दयालु पुरुष योग देकर पशुओं के कष्ट निवारण के साधनोंपर विचार करते हैं। १९५१में ऐसिसी के महात्मा सेन्ट फ्रांसिस के नाम पर पशु दिवस मनाया जाता है। उस दिन के कार्यक्रम में तीन बातें प्रधान रक्खी जाती हैं:—

१—खेल, व्यापार, मनोरजन और तथा कथित विज्ञान के लिये किये जाने वाले अनुचित व्यवहार पर विचार?

२—ऐसे दुर्व्यवहार को शीघ्र से शीघ्र मिटाने के उपायों पर विचार।

३—दुःख ताप पीडित पशुओंकी ओरसे कार्य करने के लिये उत्साह पैदा करना।

वहां यह कहा गया कि ससार पशु दिवस तभी सारे संसार में मनाया जाना सम्भव है, जब कि जनमत के नेतृगणों की वाणीहीन मूक पशुओं की वाणी बन जाय।

(कल्याण के सौजन्य से

वर्गों को यथा सम्भव दूर रखने की एक खाई है। इस खाई को पाटने की चेष्टा करना भ्रष्ट सस्कृति को आमन्त्रण देना है।

स्वर्गीय लाला लाजपत राय ने अमेरिका जाने के पूर्व पर्दे के सम्बन्ध में अपने विचार मुझ से प्रकट किये थे। उनकी मान्यता थी कि भारतीय समाज में पर्दा अनावश्यक है और इसका व्यवहार एक जङ्गली प्रथा है, किन्तु अमेरिका से लौटने के बाद जब वे मुझसे मिले तो उनके विचारों में आमूल परिवर्तन हो चुका था। अब वे पर्दे के कट्टर हिमायती बन गये। पर्दाहीन अमरीकी समाज में स्त्री पुरुषों का स्वच्छन्द सम्पर्क तथा तज्जन्य भ्रष्टाचारको देखकर वे यह अनुभव करने लगे थे कि भारतीय समाजको यदि इन बुराइयों से दूर रखना है तो आवश्यक मात्रा में शील की रक्षा करने वाले पर्दे का अस्तित्व बना रहना चाहिये।

सारांश यह कि पर्दे का व्यवहार मध्यम भाव से होना चाहिये। जिस अंश में वह नारी के स्वास्थ्य और गृह कार्य में बाधक है वह त्याज्य और हेय है और जिस अंश में वह पुरुष और नारी समाज में एक मर्यादित सीमा बन्धन का कार्य करता है, वह ग्राह्य उपादेय एव आचरणीय है। भारतीय आदर्शके अनुसार स्त्रीका क्षेत्र अपने आप में स्वतन्त्र और पुरुष क्षेत्र से भिन्न है। इसी आदर्श के अनुकरण में भारतीय संस्कृति का उत्थान निहित है।

वैदिक धर्म प्रसार और विविध सूचनाएँ

निर्वाचन

नाम समाज	प्रधान	तिथि निर्वाचन
१—केन्द्रीय आर्य समाज अमृतसर	प्रधान—कैप्टन केशवचन्द्र	
	मन्त्री—श्री मेहरचन्द बी० ए० बी० टी०	३०-६-१६५६
२—आर्य समाज मलाही (बिहार)	प्रधान—श्री यादवलाल जी	
	मन्त्री—श्री विन्दाप्रसाद जी	

उत्सव

आर्य समाज पानीपत का वार्षिकोत्सव ६, १०, ११ नवम्बर को होगा। वेद कथा ५ नवम्बर से होगी।

आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद

आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद प्रदेश की ३० ६ ५६ की अन्तरंग सभा की बैठक में श्री स्व० बंशीलाल जी के स्थान पर श्री कोतूर सीतैया जी मन्त्री निर्वाचित हुए।

आर्य कुमार सभा

आर्य कुमार सभा नई दिल्ली के १५ कार्यकर्ताओं का एक दल विजय दशमी के अवकाश में श्री पं० देवव्रत जी धर्मेन्दु और श्री आश्चर्यलाल जी के साथ शिमला, चण्डीगढ़, रोपड़ गगवाल. नांगल तथा भाखड़ा आदि स्थानों की पर्वत यात्रा करके नई दिल्ली लौट आया है। इस यात्रा से आर्य कुमारों के ज्ञान में पर्याप्त वृद्धि हुई हैं।

विमल कुमार मन्त्री

आर्य कुमार सभा नरेला की ओर से १७, १८ नवम्बर को कबड्डी प्रतियोगिता हो रही है जिसमें केवल स्कूल ही भाग ले सकते हैं। प्रवेश शुल्क २)। शुल्क भेजने की अन्तिम तिथि ११ नवम्बर है। —धर्मवीर आर्य

गुरुकुल

विश्व विद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष श्रीयुत चिन्तामणि द्वारकानाथ देशमुख ने गुरुकुल कांगड़ी (हरिद्वार) के आगामी वार्षिकोत्सव पर दीक्षांत भाषण देना स्वीकार कर लिया है। उत्सव की तिथियों की बाद में घोषणा की जायगी।

२३ सितम्बर को भारत सरकार के उपशिक्षा मन्त्री डा० श्री माली जी विशेष रूप से गुरुकुल विश्वविद्यालय की कार्य पद्धति का अवलोकन करने के लिये गुरुकुल गये। उन्होंने पूरा १ दिन रह कर वेद महाविद्यालय, आयुर्वेद कालेज, कृषि विद्यालय, माध्यमिक विद्यालय, रसायन शाला, संग्रहालय, शब्दकोष विभाग आयुर्वेद फार्मेसी आदि सभी विभागों के कार्य का अवलोकन किया और प्रसन्नता प्रकट की। कुलपति श्री इन्द्र जी विद्यावाचस्पति ने गुरुकुल के पुराने इतिहास और कार्य प्रसार का परिचय कराया। सायंकाल को वेद भवन में उनके सम्मान में एक बड़ी सभा हुई जिसमें शिक्षा उपमन्त्री महोदय ने एक सार गर्भित व्याख्यान दिया।

शारदा सत्कार समिति

शारदा सत्कार समिति ने श्री महात्मा चन्द्रानन्द जी (पूर्व चांदकरण जी शारदा) कृत पुस्तकें

प्रत्येक समाज को दान में दी थीं। शर्त यह थी कि डाक व्यय भेज दें। बहुत सी समाजों ने इससे लाभ उठाया। जो समाज लाभ उठाना चाहे वह उठा सकती है।

मन्त्री, समिति शारदा भवन अजमेर

सार्वदेशिक सभा के कार्यकर्ता

सार्वदेशिक सभा के कार्यकर्ता श्री रामस्वरूप जी ने २०-८-५६ से २६-९-५६ तक जिला गुड़गावां के निम्न ग्रामों में दौरा किया :—

(१) सोहना (२) मालब (३) साकरस (४) दोहा (५) पाठसोरी, फिरका फिरोजपुर।

दोहा, साकरस इन ग्रामों में गत वर्ष प्रतिदिन दो सौ गोवध की जाती थी। अब दोहा में तो बिल्कुल बन्द हो गई। साकरस में एक मास में एक केस हो जाता है। ३ मास पूर्व एक केस साकरस में पकड़ा गया जिसमें तीन कसाइयों को ६-६ मास की सजा हुई। आगे सर्दियों में इस पाप के बढ़ने का डर है।

श्री चेतनस्वरूप जी मालव वाले ने बताया कि मालव और आकेडा में कभी २ ईसाई प्रचारक आते हैं और हरिजनों को बहकाते हैं कि तुम ईसाई हो जाओ तो बहुत सुख मिलेगा। चेतनस्वरूप जी गान्धी निधि में काम करते हैं।

विविध समाचार

श्री स्वामी दुःखदमनानन्द जी ने १०-१०-५६ को हस्वे (रांची) ग्राम में प्रचार किया। प्रभाव अच्छा रहा।

दीवानचन्द जयन्ती समारोह

दीवान हाल दिल्ली के निर्माता स्व० श्री ला० दीवानचन्द जी का जन्म दिवस २३-९-५६ को प्रातः ९।। बजे श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज की अध्यक्षता में ससमारोह मनाया गया। इस अवसर पर एक बड़ी सार्वजनिक सभा हुई जिसमें नगर तथा आर्य समाज के गण्यमान्य नेताओं ने पधार कर भाषण दिये। दिल्ली क्लाथ मिल्स के स्वामी सर श्रीराम जी ने अपना सन्देश भेजा। सर्वप्रथम श्रीमती प्रकाशवती जी (धर्मपत्नी लाला दीवानचन्द जी) का भाषण हुआ। इस अवसर पर बृहत प्रीति भोज हुआ जिसमें २५०० आर्यजनों ने मिलकर भोजन किया।

मद्य-निषेध

आर्य समाज गढ़ मुक्तेश्वर ने भारत तथा प्रदेशीय सरकार से मांग की है कि वे मेरठ जिले में मद्य निषेध कानून प्रचलित करें।

अखिल भारतीय ईसाई प्रचार निरोध दिवस

देश की आर्य समाजों ने सार्वदेशिक सभा के निर्देशानुसार ७-१०-५६ को अखिल भारतीय ईसाई प्रचार निरोध दिवस मनाया। स्थान २ पर सार्वजनिक सभाओं में नियोगी कमेटी की रिपोर्ट का समर्थन किया और केन्द्रीय शासन से ईसाइयों की राष्ट्र धर्म और संस्कृति विरोधी आपत्तिजनक प्रगतियों को रोकने की माँग की गई। जिन समाजों से समाचार प्राप्त हुए हैं उनके नाम इस प्रकार है :—

जयपुर, इन्दौर (मल्हार गंज), आगरा, नगर, हिसार, लाडवा, मुरादाबाद, रतलाम, विलासपुर, नानपारा, रक्सौल, मवाना, सरदारपुरा, जोधपुर, मेहसी (बिहार) लोरिया, पुसद (मध्य-प्रदेश), खुरजा करतारपुर, मेडू, आरा, प्रयाग, कटरा. बरबीघा, शेरकोट, दीवाल हाल देहली बाढ़ पीरी (शाहबाद) रांची, लातूर, भिवानी, अम्बाला नगर, लालगंज, फीरोजपुर, छावनी कटनी, बहजोई, रायपुर, बरंगल, रजौली गया) मंडी, सुलतानपुर, अहमदाबाद, हरदोई, उमरा-

दान-सूची

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली,

(२१—८—५६ से २०—१०—५६ तक)

दान आर्यसमाज स्थापना दिवस

१६३।	आर्यसमाज पानीपत (करनाल)	
१४।।	"	हिंगोली (हैदराबाद स्टेट)
१०)	"	फतेहपुर (उत्तरप्रदेश)
२५)	"	मोगा (फीरोजपुर)
६)	"	नानपारा (बहराइच)
१५)	"	विलासपुर
२०)	"	नगीना (बिजनौर)
१०)	"	उन्नाव (उत्तरप्रदेश)
१५।)	"	शिकोहाबाद (मैनपुरी)
१३)	स्त्री आर्यसमाज सदर बाजार देहली	
१०)	आर्यसमाज जटपुरा (बिजनौर)	
१००)	"	सागर (मध्यप्रदेश)
५)	"	लुधियाना रोड (फीरोजपुर शहर)
२८।)	"	ग्वालियर नगर
५)	"	भारत नगर गाजियाबाद (उ.प्र.)
४४०)	योग	
८८७।।≡)	गत योग	
१३२७।।≡)	सर्व योग	

विविध दान

१५)	आर्य समाज शोलापुर	
३१)	"	रायचूर
५०)	श्री शीतलप्रसादजी पिता मगनराम तथा धर्मपत्नी रामदुलारी देवी आर्या प्रतापगढ़	
१४।।)	आर्यसमाज अकोला	
४६)	"	सिंगापुर
३२)	"	कमाठीपुरा बम्बई ८ श्री बा० पूर्णचन्द्रजी एडवोकेट द्वारा
६)	"	तरनतारन
११)	"	इटारसी
१०)	"	रेवाड़ी
१५)	प्रधान आर्य समाज दुर्ग (मध्य प्रदेश)	
११)	गुप्तदान द्वारा आ०स० घरौंडा (करनाल) सभामंत्री द्वारा	
११)	आर्यसमाज गंज सीहोर	
८।।=)	"	नीमच (मध्य भारत)
२६४=)	योग	
१३०)	गत योग	
३९४=)	सर्व योग	

बारकपुर (बंगाल)।

नेपाल में ईसाई प्रचारकों के विरुद्ध सराहनीय कार्य

धर्म परिवर्तन अपराध घोषित—विदेशी प्रचारक निकाल दिये जायेंगे

नेपाल-दंड-संहिता में एक धार्मिक अपराध सम्बन्धी खंड के जोड़े जाने पर नेपाल की सर्व-साधारण जनता में सन्तोष व्यक्त किया गया है।

इस नये दंड के अन्तर्गत यहां पर यदि किसी का धर्म-परिवर्तन किया गया तो ऐसा करने वाला अपराधी समझा जायगा। यदि धर्म-परिवर्तन कराने वाला विदेशी रहा, तो उसको निष्कासन का और यदि नेपाल का नागरिक रहा, तो कारावार का दण्ड दिया जायगा।

'ऐसे समय में' नेपाल सरकार के एक प्रवक्ता ने हिन्दुस्तान समाचार को बताया कि 'अब नेपाल में ईसाई धर्म प्रचारक लोग सक्रिय हैं, दण्ड-संहिता में यह व्यवस्था आवश्यक थी।'

(वीर अर्जुन)

दान मठगुलनी अभियोग सहायता

१०१) आर्य समाज सिंगापुर

१०१) योग

२६१॥|-) गत योग

३६२॥|-) सर्व योग

दान ईसाई प्रचार निरोध

४००) अ० भा० आर्य धर्म सेवा संघ, देहली सहायता सितम्बर व अक्टूबर ५६

४००) योग

(२८७) गत योग

१६८७) सर्व योग

दान गोरक्षा आन्दोलन निधि

२५) मा० पोहकरमल जी (नोटों की बिक्री से)

२५) योग

३२५) गत योग

३५०) सर्व योग

दान शहीद परिवार सहायता

१५) स्त्री आर्य समाज सदर बाजार देहली

१५) योग

जनरल (बाढ) पीडित सहायता

१०२) आर्य समाज गाजियाबाद (उत्तरप्रदेश)

१०२) योग

दान आर्य धर्म रक्षा निधि

(१ करोड रुपये की अपील पर)

१) श्री सत्यनारायणसिंह जी छपरा (सारन)

१) ,, बनवारीलाल जी (सभामन्त्री द्वारा)

१) , लालजी मुसरेगा (रायचूर)

१) सोनेलाल जी वैश्य कन्नौज

१) ब्रज बिहारीलाल जी कन्नौज

१) प्रेमकुमार जी सम्भल (मुरादाबाद)

१) ब्रजेश्वरप्रसादजी लहरिया सराय (दरभंगा)

२०) भलेसिंह जी उपप्रधान आर्यसमाज जींद (पेप्सु) पं० रामस्वरूप जी द्वारा

३१) मन्त्री आर्य वीर दल नरवाना (पेप्सु) (प० रामस्वरूप जी द्वारा)

१) श्री सोमेश्वर जी भूलियान प्रधान आर्यसमाज राजगढ (अलवर)

२) श्री अमरनाथ जी देहली (सभामन्त्री द्वारा)

२) ” बालमुकुन्द जी शुक्ल बड़वानी (निमाड़)

५) रामचन्द्र जी वैद्य आर्य समाज लैन्सडौन

५) डा० आर० एस० लाल जी बड़हलगंज (आजमगढ)

२४॥) श्री कृष्ण साहू वैद्यनाथ साहू आमगोला (मुजफ्फरपुर) द्वारा संगृहीत

१५॥) श्रीकृष्ण साहू वद्यनाथ साहू आमगोला (मुजफ्फरपुर)

१०५) श्री सेठ भगवानदासजी पहाड़गंज नई देहली

,, ,, लुभायाराम जी ,,

,, ,, राजेश्वर जी ,,

,, ,, बद्रीलाल जी

,, ,, सोहनलाल जी ,

२९६) योग

६६५॥) गत योग

८६१॥)

आर्य वीर दल सहायता

१) श्री ओम्प्रकाश जी आर्यवीर दल कायमगंज (फर्रुखाबाद)

५) ” वीरसिंह जी आर्य गढी मुरली डा० लखला (गुड़गाव)

२) किसनलाल जी आर्य नूह (गुड़गाव)

६) बुद्धदेवजी आर्य आ०स० लल्लापुरा काशी द्वारा

१) सत्यनारायण जी निगम अल्मोड़ा

१५) योग

दान अनुसन्धान निधि

१०००) श्री सेठ बलीराम जी तनेजा धनबाद

१०००)

दान दाताओं को धन्यवाद

रामगोपाल, मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली।

सार्वदेशिक पत्र (हिन्दी मासिक)

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश] १० शिलिङ्ग। अर्द्ध वार्षिक ३ स्वदेश, ६ शिलिङ्ग विदेश।

२. एक प्रति का मूल्य ॥) स्वदेश, ॥=) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क वा नमूने की प्रति का मूल्य ॥=) स्वदेश, ॥।) विदेश।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये। चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा। पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने वा ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न देने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है कि उनकी इच्छा वी० पी० द्वारा चन्दा देने की है।

४. सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख को प्रकाशित होता है। किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय में अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा। डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं। अत समस्त ग्राहकों को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये।

५ सार्वदेशिक का वर्ष १ मार्च से प्रारम्भ होता है अंक उपलब्ध होने पर बीच वर्ष में भी ग्राहक बनाए जा सकते हैं।

विज्ञापन के रेट्स

६.	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
पूरा पृष्ठ (२०×३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा ,, ,,	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई ,,	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	२०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

७ सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

—व्यवस्थापक

'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

आर्य समाज का इतिहास

(प्रथम भाग) सचित्र

(लेखक—आर्यजगत् के सम्मान्य नेता एवं हिन्दी जगत् के सुप्रसिद्ध संपादक और साहित्यकार श्रीयुत् पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति)

(सार्वदेशिक सभा द्वारा नियुक्त विद्वानों की सम्मति द्वारा प्रमाणित)

प्रकाशक—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली ६

प्रथम भाग छप कर तैयार

आकार $\frac{१८ \times २२}{८}$ पृष्ठ संख्या ४५० मूल्य ६)

विशेषताएं

१—लगभग २५ लाइन ब्लाक होंगे।

२—लगभग १२ परिशिष्ट हैं जो महर्षि की जन्म तिथि, आर्यसमाज स्थापना दिवस तिथि, महर्षि की मृत्यु कैसे हुई इत्यादि २ विवादास्पद विषयों पर मूल्यवान सामग्री से परिपूर्ण हैं।

इतिहास की सामग्री

प्रारम्भ से सन् १६०० तक। आर्य समाज की स्थापना से पहले की धार्मिक तथा सामाजिक स्थिति का निदर्शन, महर्षि दयानन्द का आगमन, आर्य समाज की स्थापना प्रचार युग, अन्य मतों से संघर्ष, संगठन का विस्तार, संस्था युग का आरम्भ आदि २।

संग्रह करने योग्य ग्रन्थ

यह ग्रन्थ प्रत्येक आर्य समाजस्थ पुरुष और स्त्री के पढने योग्य और आर्य समाजों तथा संस्थाओं के पुस्तकालयों में रखने योग्य है। आर्य समाज के साप्ताहिक सत्सगों में भी उपयोग योग्य ग्रन्थ है।

रियायत

३० नवम्बर ५६ तक आर्डर भेजने वालों को ५) में (रजिस्ट्री डाक व्यय पृथक) और उसके बाद ६) में दिया जायगा। मूल्य तथा डाक व्यय के लिये ६॥) भेजें।

रामगोपाल, मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,

श्रद्धानन्द बलिदान भवन, देहली-६

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली-से प्रकाशित।

ऋग्वेद

यजुर्वेद

पुस्तकालय। ओ३म् ॥

गुरुकुल कांगड़ी

सार्वदेशिक

अंक ७

भाद्रपद २०१३

सितम्बर १९५६

वर्ष ३१

मूल्य स्वदेश ५)

विदेश १० शिलिङ्ग

एक प्रति ।।)

वैदिक-विनय

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं तन्न आसुव ॥ यजु० ३०।३॥

दिव्य-गुण धारी जग के जनक, दुरित-दल सकल भगा दो दूर ।
किन्तु जो करे आत्म-कल्याण, उसी को भर दो प्रभु ! भरपूर ॥

ओ३म् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम ॥ यजु० ४० । १६ ॥

सुपथ पर प्रभु ! हमको ले चलो, प्राप्त हो सतत ध्रुव कल्याण ।
सकल कृतियां हैं तुमको विदित, पाप-दल को कर दो म्रियमाण ॥
पुण्य की प्रभा चमकने लगे, पाप का हो न लेश भी शेष ॥
भक्ति में भर कर तुमको नमें, सहस्रों बार परम प्राणेश ॥

ओं असतो मासद् गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय । मृत्योर्मामृतं गमय ॥शत.१४।३।१।३०॥

असत से सत, तमसे नव ज्योति, मृत्यु से अमृत तत्त्व की ओर ।
हमें प्रतिपल प्रभुवर ! ले चलो, दिखाओ अरुणा करुणा-कोर ॥

ओं उपत्वाग्ने दिवे दिवे दोषावस्तर्धिया वयम् । नमो भरन्त एमसि ॥ ऋ० १।१।७ ॥

दिवस के प्रथम, रात्रि से पूर्व, भक्ति से स्वार्थ-त्याग के साथ ।
आ रहे हैं प्रतिदिन ले भेंट, तुम्हारी चरण शरण में नाथ ॥

(अनुवादक—श्री डा० मुंशीराम शर्मा एम० ए० पी० एच० डी०)

सम्पादक—
सभा मन्त्री
सहायक सम्पादक—
श्री रघुनाथप्रसाद पाठक

सामवेद

अथर्ववेद

विषय-सूची

१ वैदिक प्रार्थना		३४१
२ सम्पादकीय		३४२
३ मानव धर्म की रूपरेखा	(श्री प० सत्यव्रत जी शास्त्री)	३५३
४ वेद भाष्यकार सायण और दयानन्द	(श्री प० भवानी लाल भारतीय एम०ए०)	३५६
५ वेद प्रापक चार ऋषियों का वेद प्रमाण	(श्री प० विश्वनाथ जी आर्योपदेशक)	३५६
६ महिला जगत		३६१
७ बाल-जगत्		३६४
८ शंका समाधान		३६५
६ स्वाध्याय का पृष्ठ		३६८
१० साहित्य समीक्षा		३७१
११ उत्तर प्रदेश गोवध निवारण विधेयक		३७४
१२ नागा विद्रोह में विदेशी ईसाई मिशनरियों का हाथ	(श्री प० शिवदयालु जी शास्त्री)	३७७
१३ विविध सूचनायें तथा दान सूची		३८०

॥ ओ३म् ॥

(सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष ३१ } सितम्बर १९५६. भाद्रपद २०१३ वि०, दयानन्दाब्द १३२ { अङ्क ७

वैदिक प्रार्थना

स वज्रभृद्दस्युहा भीम उग्रः सहस्र चेताः शतनीथ ऋभ्वा ।

चम्रीषो न शवसा पाञ्चजन्यो मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र उती ॥ ऋ०।१।७।१०।१२

व्याख्यान— हे दुष्टनाशक परमात्मन् ! आप "वज्रभृत" अच्छेद्य (दुष्टों के छेदक) सामर्थ्य से सर्वशिष्ट हितकारक दुष्टविनाशक जो न्याय उसको धारण कर रहे हो "प्राणो वा वज्रः" इत्यादि शतपथादि का प्रमाण है । अतएव "दस्युहा" दुष्ट पापी लोगों का हनन करने वाले हो । 'भीम." आपकी न्याय आज्ञा को छोड़ने वालों पर भयङ्कर भय देने वाले हो । "सहस्रचेताः" सहस्रों विज्ञानादि गुण वाले आप ही हो 'शतनीथः" सैकड़ों असंख्यात पदार्थों की प्राप्ति कराने वाले हो । "ऋभ्वा" अत्यन्त विज्ञानादि प्रकाश वाले हो और सब के प्रकाशक हो तथा महान् वा महाबल वाले हो । "न, चम्रीषः" किसी की चमू (सेना) में वश को प्राप्त नहीं होते हो । "शवसा, पाञ्चजन्य": स्वबल से आप पाञ्च-जन्य (पांच प्राणों के) जनक हो । "मरुत्वान्" सब प्रकार के वायुओं के आधार तथा चालक हो सो आप "इन्द्रः" हमारी रक्षा के लिये प्रवृत्त हों जिससे हमारा कोई काम न बिगड़े ।

सम्पादकीय

समस्या का हल

अस्पृश्यता निवारण और समाजसेवा

इस समय आर्य जाति के सामने सबसे बड़ी समस्या यह है कि विदेशी ईसाई मिशनरियों के आक्रमण से जाति को कैसे बचाया जाय। इस समस्या का ठीक-ठीक समाधान करने लिये दो प्रश्नों पर विचार करना अत्यावश्यक है। पहला प्रश्न यह है कि ईसाई मिशनरियों को जो असाधारण सफलता अब तक होती रही है या अब भी हो रही है उसके क्या कारण हैं? इस प्रश्न का उत्तर पा लेने पर दूसरा यह प्रश्न सामने आ जायेगा कि ईसाई मिशनरियों के राष्ट्रीयता विरोधी प्रयत्नों की रोक थाम करने के उपाय क्या हैं?

ब्रिटिश काल के आरम्भ में, जब भारत में अङ्गरेजी शिक्षा ने प्रवेश किया तब कुछ वर्षों के के लिये शिक्षित वर्ग के भारतीयों में ईसाइयत का प्रभाव बढ़ता दिखाई दिया था। कुछ दूर जा कर पहले ब्रह्म समाज ने उसकी प्रगति को रोकने का बङ्गाल में प्रयत्न किया और फिर महर्षि दयानन्द ने उत्तरीय तथा मध्य भारत में उस पर बांध सा लगा दिया। १६वीं शताब्दी के अन्त के साथ सवर्ण और शिक्षित भारतीयों में ईसाइयत का विस्तार लगभग समाप्त हो गया।

एक दिशा में रास्ता बन्द हो जाने से साहसिक ईसाई निराश नहीं हुए। शिक्षित समाज को छोड़ कर आर्य जाति के पिछड़े हुए अङ्गों की ओर झुक गये। इन्होंने अपनी युद्ध-नीति में परिवर्तन कर लिया। शहरों से परास्त होकर उनकी प्रचार सेनाओं ने अपना मुँह गांव की ओर मोड़ लिया। गाँव में भी ईसाई प्रचारकों ने अपना लक्ष्य उन लोगों को बनाया जिन्हें हिन्दू जाति में अस्पृश्य अथवा पतित समझा जाता था। वे लोग हिन्दू समाज में निरादर की दृष्टि से देखे जाते थे, उन की आर्थिक दशा शोचनीय थी। शिक्षा का तो लगभग सर्वथा ही अभाव था। ऐसा खुला और अनुकूल मैदान पाकर मिशनरियों ने अपनी सारी शक्ति प्रचार-कार्य में लगा दी। चुपके-चुपके ईसाइयों के मिशन भारत के पहाड़ों, जगलों और शिक्षित संसार से दूर पड़े हुए ग्रामों में हर प्रकार के कष्ट उठा कर जो कार्य करते रहे उसका परिणाम यह है कि आज वे राष्ट्र और जाति के लिये समस्या बन गये हैं। मध्य प्रदेश से जो तहकीकाती रिपोर्ट निकली है उसने जाति की आंखें खोल दी हैं। ऐसे लोगों का अभाव नहीं है जो यह सलाह देते हैं कि उस रिपोर्ट को या तो पढ़ो ही नहीं और यदि पढ़ना हो तो आंखें बन्द करके पढ़ो। ऐसे लोगों को हम राष्ट्र का मित्र नहीं कह सकते। यदि भेड़-भेड़िये को देख कर अपना मुँह मिट्टी में छिपा ले तो उसकी भेड़िये से प्राण रक्षा नहीं हो जायेगी।

ईसाई प्रचारकों को यूरोप के समृद्धिशाली राज्यों की ओर से धनी लोगों की भरपूर सहायता प्राप्त थी। उन्हें धन की कमी कभी अनुभव नहीं हुई। भारत का ईसाई राज्य भी उनका समर्थक और सहायक था। इस परिस्थिति से लाभ उठा कर उन्होंने प्रचार के भले-बुरे सभी साधनों का प्रयोग किया। हिन्दू जाति में छुआ छूत और जात पात के जो सामाजिक रोग व्याप्त थे उनसे मिशनरियों को अपना जाल फैलाने में पूरी सहायता मिली। वे लोग देश के उन प्रदेशों में फैल गये जहां अछूत कहलाने वाले अथवा पिछड़े हुए अशिक्षित लोग रहते थे। उन पिछड़े हुए लोगों में तीन विशेषतायें थीं।

(१ पहली विशेषता यह थी कि वे सवर्ण हिन्दुओं

द्वारा तिरस्कार और उपेक्षा की दृष्टि से देखे जाते थे।

(२) वे सर्वथा अशिक्षित होने के कारण शक्तिशाली लोगों द्वारा दबाये और शोषित किये जाते थे।

(३) उनकी बस्तियों में चिकित्सालय, शिक्षणालय और कहीं-कहीं कुओं के अभाव के कारण जीवन की साधारण सुविधायें भी प्राप्त नहीं थीं वे अपने कष्टों के निवारण के उपाय नहीं जानते थे यदि जान भी जाते थे तो कर नहीं सकते थे।

इन तीनों विशेषताओं से ईसाई पादरियों ने पूरा लाभ उठाया। उन्हें दलित और पिछड़े हुए लोगों के हृदयों पर यह अङ्कित करने में विशेष प्रयत्न नहीं करना पड़ा कि जो हिन्दू धर्म तुम से ऐसा दुर्व्यवहार करता है वह सच्चा धर्म नहीं हो सकता। इस प्रकार हिन्दू धर्म के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न करके ईसाई पादरी उन्हें यह समझाने में सफल हो जाते थे कि हजरत ईसा का मजहब ही तुम लोगों का उद्धार कर सकता है।

इस प्रकार क्षेत्र तैयार करके पादरी लोग पिछड़े हुए लोगों के कष्टों को दूर करने में लग जाते थे। जहां पानी का अभाव था वहाँ कुएं खुदवा देते थे, जिन हलकों में चिकित्सा की कोई व्यवस्था नहीं थी वहाँ धर्मार्थ चिकित्सालय खोल देते थे और बड़ी बस्तियों में स्कूल जारी करके शिक्षा का प्रबन्ध कर देते थे। शिक्षित होकर वे लोग अपनी निर्बल परिस्थिति का अनुभव करने लगते थे। जब उन पर किसी शक्ति सम्पन्न अथवा सवर्ण द्वारा कठोर व्यवहार होता था तब पादरी लोग बीच में पड़ जाते थे और उन्हें संरक्षा देते थे।

भारत के अनेक प्रदेशों में ईसाई प्रचारकों को जो सफलता प्राप्त हुई है वह आकस्मिक नहीं है। उसका मूल कारण हमारी सामाजिक निर्बलता है। न हमारी जाति अस्पृश्यता, जात-पात और रूढ़ियों की दास होती और न मिशनरियों को इतनी विस्तृत और शीघ्र सफलता मिलती। हमारी सामाजिक निर्बलता का यह परिणाम हुआ कि जो भी बाह्य-व्यक्ति कोई नया सन्देश लेकर आया वह सफल होता चला गया। कभी-कभी हम लोग ईसाई प्रचारकों की सफलता से उद्विग्न होकर यह सोचने लगते हैं कि यदि कानून द्वारा ईसाइयत के प्रचार को रोका जा सके तो शायद समस्या हल हो सके। परन्तु स्मरण रखना चाहिये कि जब तक शरीर के अन्दर रोगों का मुकाबला करने की शक्ति उत्पन्न नहीं होती तब तक किसी एक रोग का उपाय करने से मनुष्य सुरक्षित नहीं हो सकता। रोगों का भय तो तभी टल सकता है यदि शरीर में इतनी जीवन शक्ति आ जाय कि वह रोग के आक्रमण का सफल प्रतिरोध कर सके। यह स्पष्ट है कि जब तक आर्य जाति अस्पृश्यता और जन्मगत जात-पात के ढकोसलों को जड़मूल से उखाड़ कर बाहर नहीं फेंक देती तब तक कोई न कोई घातक रोग उस पर हावी रहेगा सम्पूर्ण आर्य जाति का और विशेष रूप से आर्य जाति के प्रहरी होने के नाते से आर्य समाज का कर्त्तव्य है कि वह अस्पृश्यता आदि दोषों के समूल नाश के लिये सारी शक्ति लगा दें।

आर्य जाति के जो अङ्ग अपने धर्म से विमुख हो चुके हैं उन्हें केवल व्याख्यानों या लेखों से वापिस नहीं लाया जा सकता। ईसाई प्रचारकों ने जिस तत्परता और कर्त्तव्य भावना से दो सदियों तक प्रचार काय किया है, विरोधी को भी उनकी प्रशंसा करने के लिये बाधित होना पड़ता है। जैसे कि मध्य प्रदेश से निकली हुई रिपोर्ट से प्रतीत होता है अनेक स्थानों पर और अवसरों पर मिशनरियों ने अनुचित साधनों का भी प्रयोग किया है परन्तु मुख्य रूप से प्रचार के लिये वे

सेवा कार्य को ही साधन बनाते रहे हैं। हमें भी उसी को मुख्य साधन बनाना पड़ेगा। दो शता-ब्दियों के प्रयत्न से बनाये हुए मिशनरियों के जाल को केवल वाचिक प्रचार से नहीं काटा जा सकता। तत्परता के जवाब में तत्परता, सेवा के जवाब में सेवा और स्थिरता के जवाब में स्थिरता का प्रयोग करने से ही हम ईसाइयत की बाढ़ को रोक सकेंगे अन्यथा नहीं। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये सार्वदेशिक सभा ने 'दयानन्द सेवा सदनों की एक योजना बनाई है। उसकी रूप रेखा पहले प्रकाशित की जा चुकी है। विस्तृत योजना शीघ्र ही आर्य जनों के हाथों में पहुंच जायेगी। आर्य जनों को उस योजना की पूर्ति करने के निमित्त आर्थिक तथा अन्य सब प्रकार की सहायता देने के लिये तैयार रहना चाहिये। –इन्द्र विद्यावाचस्पति

आर्य जन ध्यान दें

श्री स्वामी ईश्वरानन्द जी आर्य समाज के अनुभवी प्रचारक हैं। आप राजपूताना बम्बई आदि अनेक प्रान्तों का दौरा लगाकर लौटे हैं। आर्य समाज और आर्यजनों के जीवन के सम्बन्ध में आपने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं—

(१) आर्यजनों में सन्ध्योपासन की प्रवृत्ति कम होती जा रही है। प्रत्येक आर्य नर-नारी को यह अपना कर्त्तव्य-धर्म समझना चाहिये कि वह प्रतिदिन सन्ध्या करे।

(२) स्वामी जी ने अनुभव किया है कि आर्य लोगों में भक्ष्याभक्ष्य का विचार कम होता जाता है। केवल सभासदों में ही नहीं, समाजके अधि-कारियों में भी बीड़ी पीने और मांस खाने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। इस अनार्य प्रवृत्ति को रोकना चाहिये।

(३) आर्य समाज प्रारम्भ से ही जात पांत का विरोधी रहा है। वह जन्मगत जाति में विश्वास नहीं रखता। परन्तु यह दुःख की बात है कि आर्य समाजी लोग न केवल अपने नामों के साथ जन्मगत जातियों के निर्देशक शब्द लगाते हैं, जातीय सभाओं में भाग भी लेते हैं। आर्य समाज में वर्ण व्यवस्था का केवल शाब्दिक मण्डन शेष रह गया है। जातियों की रूढ़ि उसी प्रकार विद्यमान है।

(४) स्वामी जी को यह भी शिकायत है कि आर्य समाजों में वेद की व्याख्या या कथा कम होती है और रामायण, महाभारतादि ग्रन्थों की कथा का प्रचार बढ़ रहा है। आर्यजनों में वेद के स्वाध्याय और आर्य समाज के सत्संगों में वेद सम्बन्धी व्याख्यानों का रिवाज बढ़ना चाहिये।

स्वामी जी के सभी निर्देश अत्यन्त उपयोगी हैं। उन्होंने अनुभव से परिस्थितिका जो विवरण दिया है वह भी यथार्थ है। आर्य समाजों को और आर्य सभाओं को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। आर्यत्व किसी सभा की सभासदी में नहीं, अपितु आर्य जीवन में है।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

❀ सम्पादकीय टिप्पणियां ❀

स्वतन्त्रता की रक्षा किस प्रकार हो ?

अहमदाबाद के दंगों ने एक बार फिर देश के समझदार लोगों को यह सोचने के लिये विवश कर दिया है कि क्या राजनीतिक स्वतन्त्रता का अर्थ यह है कि हम कानून को हाथ में लेकर मनमानी करने लगें ? किसी निर्णयके प्रतिवाद का सभ्योचित ढग तोड़-फोड़, मारपीट और उपद्रव तो नहीं होता। हिंसा से तो वह उद्देश्य नष्ट हो जाता है जिसके लिये उसका प्रयोग होता है। अहमदाबाद के उपद्रवों ने लोक सभा के निर्णय के विरुद्ध प्रतिवाद का औचित्य ही लगभग समाप्त कर दिया है। प्राचीन भारत की स्वतन्त्रता के विनाश के लिए जो तत्त्व उत्तर दाता थे उनमें

प्रमुखतम तत्त्व स्थानीय और प्रदेशीय भावनाएँ ही थीं। लोगों ने समाज और देश के हितों की अपेक्षा अपने वैयक्तिक और प्रदेशीय स्वार्थों एवं हितों को प्रमुखता देकर ईर्ष्या-द्वेष के वशीभूत हो भारत को गारत कर दिया था। हमें भय है कि वही तत्त्व हमारी वर्तमान स्वतन्त्रता के लिये घातक सिद्ध न हो जाय।

स्वतन्त्रता दो प्रकार की होती है। एक झूठी और दूसरी सच्ची। झूठी वह होती है जब मनुष्य स्वेच्छाचारिता पर उतर आता है और सच्ची वह होती है जिसमें मनुष्य वही काम करने में स्वतत्र होता है जो उसे करना चाहिये। कानून और व्यवस्था की रक्षा के लिये कोई भी राज्य झूठी स्वतन्त्रता की आज्ञा नहीं दे सकता।

वैयक्तिक स्वतन्त्रताकी सीमा होती है। कानून के भीतर रह कर बिना विघ्न-बाधा के अपना समय उत्तमता से श्रेष्ठ कामों में व्यतीत करना वैयक्तिक स्वतन्त्रता है। जिस कानून को प्रजा के चुने हुए प्रतिनिधि बनाएँ उनका आदर और सम्मान करना प्रजा का धर्म है। उस कानून को उपद्रवों के द्वारा बदलवाने वा रद्द कराने के प्रयत्न से जहां शान्त नागरिकों की स्वतन्त्रता में बाधा पड़ती है तथा अन्यान्य हानियाँ होती हैं वहां राज्य को स्वेच्छाचारी बनने के लिये विवश भी कर दिया जाता है। बुराई और मूर्खता के अमर्यादित एवं असंयत हो जाने पर उनकी रोकथाम वा उन्मूलन के लिये ऐसा बनना ही पड़ता है। यदि हमारा शासन दिन पर दिन बढ़ती हुई कानून को चुनौती देने वाली भावनाओं, चरित्रहीनता और अनुशासन हीनता के दमन के लिये एकच्छत्र शासन का रूप ले ले तो आश्चर्य न होगा।

भारतीय गणतन्त्र के उप प्रधान तथा प्रसिद्ध विद्वान श्रीयुत राधाकृष्णन ने देहली में हुई अपनी एक भेंट में देश में व्याप्त चरित्र हीनता पर खेद प्रकट करते हुये अहमदाबाद के उपद्रवों के लिए नवयुवकों की चरित्र हीनता को दोषी ठहराया है। बात ठीक है। चरित्रहीन व्यक्ति अच्छे नागरिक नहीं बनते। वे ही पर्दे के पीछे काम करने वाले स्वार्थी और हिंसा में विश्वास रखने वाले तत्त्वों का सहज ही शिकार बन जाया करते हैं। अहमदाबाद में यही सब कुछ हुआ।

नवयुवकों का रोष उनकी नैतिक भावनाओं से ऊपर उठ गया। सार्वजनिक भावना ने भयङ्कर एवं दूषित रूप धारण कर लिया। चरित्र-हीनताऔर दूषित सार्वजनिक भावनाका स्वाधीनता के साथ क्या सम्बन्ध ? यह तो निरी उच्छृंखलता है। स्वार्थ की भावना ने इस उच्छृंखलता को अपना शिकार बनाया। कहा जाता है कि अहमदाबाद के दंगों में मुख्यतया उन लोगों का छुपा हुआ हाथ है जो बम्बई के नये गुजरात प्रान्त से पृथक् हो जाने पर अहमदाबाद के गुजरात प्रान्त की राजधानी बनने का और अपनी भूमि और प्लाटों की बिक्री द्वारा धनपति बनजाने का स्वप्न देखते थे और द्विभाषी प्रान्त बनने के निश्चय से जिनके स्वप्न टूट गये हैं। वास्तविक कारण कोई क्यों न हो नवयुवकों का इस प्रकार का रवैया अवांछनीय है। उन्हें देश के इतिहास में वह परिच्छेद न जुड़ने देना चाहिये जिसमें उनके व्यवहारपर सच्चरित्र नवयुवकों और देशवासियों को लज्जित होना पड़े।

देश की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये प्रजा का धार्मिक बनना आवश्यक है। इसके लिए तीन उपाय उपयुक्त प्रतीत होते हैं। एक तो घरों में समाचार पत्रों के साथ २ धार्मिक साहित्य एव महान् व्यक्तियों की जीवनियों के पठन-पाठन, सत्संग कथा तथा प्रवचनों की पद्धति को अधिकाधिक लोकप्रिय बनाया जाय। दूसरे विद्यालयों को उत्तम बनाया जाय तीसरे कानून और व्यवस्था की कड़े हाथों से रक्षा की जाय।

कानून या प्रशासकीय व्यवस्थाके निर्माण और निर्धारण में निर्णय की भूल से बचने का पूरा २ प्रयत्न होना चाहिये। भाषावार प्रान्तों के विभाजन में निर्णय की जबरदस्त भूल हुई है। इसी के कारण प्रदेशीय भावनाओं ने उग्र रूप में शिर उठाया है। इन प्रदेशीय भावनाओं का अनुचित लाभ वे व्यक्ति उठाते हैं जो राजनीति को स्वार्थ साधन वा आत्म सवर्द्धन का साधन समझते हैं अथवा वे जिन्हें देश के हितों की उतनी पर्वाह नहीं होती जितनी अपने प्रदेश के हितों की। परमात्मा ऐसे राजनीतिज्ञों से देश को बचाये।

आज संसार को और हमारे देश को ऐसे राजनीतिज्ञों की आवश्यकता है जो अगले चुनाव को न देखकर अगली पीढ़ी को देखें। जिन्हें वर्तमान पीढ़ी के वोटकी नहीं अपितु अगली पीढ़ी के वोट की चिन्ता होती है जो प्रजा द्वारा प्रदत्त अधिकार को अपने लाभ के लिये नहीं अपितु प्रजा के लाभ के लिए प्रयुक्त करते हों, जो पार्टी के हित को न देखकर देश और विश्वके हित को देखते हों। जो देश को ऐसा शासन प्रदान करें जिसमें बुराई कठिन और भलाई सुगम हो।

श्री विनोवा जी का साम्यप्रयोग

श्रीयुत् विनोवा जी ने अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ की विहार शाखा में सेक्रेटरी से लेकर चपरासी तक सभी कर्मचारियों को समान वेतन देने की व्यवस्था की है। यदि यह साम्यप्रयोग सफल हो गया तो निश्चय ही लेनिन और स्टैलिन प्रभृति रूसी कर्णधारों को अपने इस प्रयोग की असफलता के लिये कब्रों में भी मुँह छिपाने के लिए जगह न मिलेगी, और कर्म फल के सिद्धान्त का भवन भी सहज ही धराशायी हो जायगा।

लेनिन आदि रूसी क्रान्ति के पुरस्कर्त्ताओं ने रूस में पूर्ण समानता की गंगा प्रवाहित करने के लिये यह नियम बनाया था कि 'प्रत्येक से उसकी सामर्थ्य के अनुसार काम लिया जाय और प्रत्येक को उसकी आवश्यकता के अनुसार वेतन दिया जाय।' परन्तु यह प्रयोग सफल न हुआ क्योंकि यह प्रयोग सभी धान तेईस पंसेरी तथा टका सेर भाजी टका सेर खाजा के अस्वाभाविक, अनुचित अव्यवहार्य एवं अनर्गल सिद्धान्त पर आश्रित था। वेतन की दृष्टि से कार्य कर्त्ताओं में कार्य कुशल और अनाड़ी, बुद्धिमान् और निर्बुद्धि कर्मठ और आलसी का भेद न रहने से जहां कार्य कुशल और योग्य व्यक्तियोंको अधिक से अधिक कार्य करने और अपनी योग्यता प्रमाणित करने की प्रेरणा नहीं मिलती वहां कार्य को भी क्षति पहुंचती है। इसके अतिरिक्त सब कर्मचारियों का काम समान हो इसका निर्णय करना असम्भव है।

१९३१ में स्टैलिन को यह घोषणा करनी पड़ी कि 'बहु संख्यक व्यवसायों में पारश्रमिक की दृष्टि से अनुभवी और अनाड़ी कार्य कर्त्ता में कोई भेद नहीं रहता। इसीलिए उनमें अपने को कार्य कुशल बनाने का न भाव उत्पन्न होता है और न उन्हें अपने सुधार की प्रेरणा ही मिलती है' इसका अर्थ यह था कि सोवियत रूस में 'प्रत्येक से उसकी सामर्थ्य के अनुसार काम लेने और उसे उसकी आवश्यकता के अनुसार पारश्रमिक देने का नियम अव्यवहार्य सिद्ध हुआ इसीलिये बाद में उन्हें यह सिद्धान्त तय करना पड़ा कि प्रत्येक से उसकी शक्ति के अनुसार काम लिया जाय और प्रत्येक को काम के अनुसार वेतन दिया जाय।'

ईश्वर ने सब मनुष्यों को समान नहीं बनाया है। उनकी मानसिक प्रवृत्तियों, रुचियों, कार्य क्षमता, योग्यता और बुद्धिमें अन्तर होता है। इसी

विभिन्नता में साम्य है। यह अन्तर इस सिद्धान्त की व्याख्या है कि मनुष्य को अपने पूर्व जन्म के कर्मानुसार जाति, आयु और भोग प्राप्त होते हैं। समानता का अभिप्राय यही है कि सब लोग आध्यात्मिक दृष्टि से समान हैं। न कोई बड़ा है और न कोई छोटा है। सबको उन्नति का अवसर प्राप्त होना चाहिये। स्वतत्रता, और जान माल की रक्षा की दृष्टि से सब के समान अधिकार होते हैं।

श्रीयुत् विनोवा जी मौलिकता के लिये प्रसिद्ध हैं। वे साम्य का स्वर्ग पृथ्वी पर लाने का स्वप्न देखते हैं। उनकी भावना की प्रशंसा की जा सकती है परन्तु कभी २ इस स्वर्ग को लाने के लिये वे ऐसे उपाय भी बता देते हैं जिनका न बुद्धि से समर्थन होता है और न व्यवहारिकता से।

इटावा में हरिजनों ने इस्लाम ग्रहण नहीं किया—

पिछले दिनों समाचार पत्रों में यह छपा था कि इटावा में सवर्ण हिन्दुओं के व्यवहार से तग आकर सहस्रों हरिजनों ने इस्लाममत स्वीकार कर लिया है। आर्य समाज के लिये यह समाचार बड़ा दुःखद और चिन्तनीय था। सार्वदेशिक सभा और आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश ने तत्काल घटना को वास्तविकता जानने और हरिजनों की रक्षा करने का कार्य हाथ में लिया। आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री प० शिवदयालु जी स्वयं १६ अगस्त को इटावा गये। उन्होंने वस्तु स्थिति का पता लगाकर प्रेस को एक वक्तव्य दिया है जिसमें बताया गया है कि यह समाचार असत्य है। वक्तव्य का सार इस प्रकार है: –

"५ अगस्त को जोनई ग्राम के देवो के मेले में बाबूराम नामक एक जाटव ने अपनी परसाद की दूकान खुलवाई। साइन बोर्ड न होने पर जनता ने आपत्ति की। झगड़ा होने लगा। दूकान उखाड़ दी गई। पुलिस ने पुनः दूकान लगाने को कहा और साथ ही एक बोर्ड लगाने का परामर्श दिया किन्तु जिद में पुनः दूकान न लगाई गई।

उसी दिन मेमोरियल हाल में अपने एक साथी क्षमानन्द जाटव की अध्यक्षता में बाबूराम ने एक जलसा किया। जलसे से पूर्व नगर पालिका के चौराहे से 'हिन्दू धर्म का नाश हो' के नारे लगाते हुए जलूस भी निकाला। जलूस में जाटव, भंगी तथा दर्शकों को मिलाकर केवल १०० व्यक्ति थे। जलसे की समाप्ति पर पास की मस्जिद में संध्या की नमाज में पीछे लगभग ५०,६० जाटव नवयुवक जो बाबूराम की पार्टी के थे पीछे की पंक्ति में खड़े हो गये। नमाज के बाद फिर नारे लगाते हुये वहां से चले आये। इसमें से किसी ने भी कलमा नहीं पढ़ा, न चोटी कटाई, न नाम बदला और न खतना कराया, यह सब लीला हिन्दुओं पर दबाव डालने की दृष्टि से की गई, सुना है बाबूराम ने भंगियों से भी मसजिद में चलनेको कहा था किन्तु उन्होंने उत्तर दिया कि **जब हमारे भाईयों ने पाकिस्तान में भी इस्लाम स्वीकार नहीं किया और धर्म की खातिर प्राण दे दिये तो हम अपने देश में मुसलमान बनें यह नीचता की बात है।**

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी पूर्वी अफ्रीका में—

श्रीयुत पूज्य स्वामी ध्रुवानन्दजी महाराज इन दिनों ईस्ट अफ्रीका में हैं। वे आर्य समाज नैरोबी के निमन्त्रण पर हवाई जहाज द्वारा गत २० जुलाई को वहां गये थे। उनके द्वारा प्रचार और निरीक्षण का कार्य बड़ी उत्तमता से हो रहा है। प्रतिदिन २ घण्टे आर्य परिवारों में प्रवचन का क्रम चलता है। श्री स्वामी जी किसुमू के उत्सव में जाने वाले हैं। ईस्ट अफ्रीका का कार्य-क्रम समाप्त हो जाने पर उनके मारीशस और लण्डन का भी

पुरोगम बनने का आयोजन हो रहा है। पूर्णाशा है कि उनका यह समस्त कार्य-क्रम सफल होगा और प्रवासी आर्य नर नारी उनकी उपस्थिति से पूरा २ लाभ उठायेंगे।

गोवध निषेध विधेयक—

बिहार, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के मुसलमान बूचड़ों ने इन प्रदेशों के गोवध निरोधक अधिनियमों को चुनौती देने के लिये संविधान की धारा ३२ के अन्तगत सुप्रीम कोर्ट में आवेदन दे दिये हैं। आवेदन पत्रों में लिखा गया है कि इन अधिनियमों से उनकी आजीविका पर कुठाराघात हुआ तथा ये अधिनियम उनके मौलिक अधिकारों का हनन हैं।

बिहार के मुसलमानों को सुप्रीम कोर्ट से अधिनियम के विरुद्ध स्थगनादेश भी मिल चुका है जिसका परिणाम यह हुआ है कि बिहार में पुनः गोवध जोरों से प्रारम्भ हो गया है। ईद के अवसर पर सारे बिहार प्रान्त में खूब गोवध हुआ बताते हैं क्योंकि मुख्य मन्त्री बाबू श्री कृष्ण सिंह ने यह घोषणा की थी कि पशु-वध निरोधक अधि नियम स्थगित है फलतः गोवध की स्वतन्त्रता है।

आशा है कि ये विधेयक वैधानिकता की कसौटी पर खरे सिद्ध होंगे, और वैधानिकता को इन अत्यन्त उपयोगी और मानवीय विधेयकों के मार्ग में बाधक न बनने दिया जायगा। इन विधेयकों के साथ करोड़ों व्यक्तियों और असंख्य उपयोगी एवं मूक पशुओं की कोमल भावनाएँ सन्निहित हैं। जहां विधान द्वारा मनुष्यों का अपने हितों के संरक्षण का अधिकार है वहां गऊ जैसे उपयोगी पशुओं का भी अधिकार है और उनका यह अधिकार दिव्य विधान से अनुशासित है। यदि दुर्भाग्य से ये मानवीय विधेयक सर्वोच्च न्यायालय से अवैधानिक उद्घोषित हो गये तो हमें भय है कि गोवध निषेध आन्दोलन और भी तीव्र बन जायगा और कठिनाईयां बढ़ जायेंगी उस समय राज्यों के लिये दो ही मार्ग खुले होंगे। या तो उन्हें विधेयकों को वैधानिक त्रुटियों से रहित करना होगा वा आन्दोलनों का सामना करना होगा।

देश में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात शराबबन्दी आदि के ऐसे अनेक उपयोगी विधेयक बन रहे हैं जिनसे नागरिकों की आजीविका छिन रही है। यदि आजीविका छिन जाने के आधार पर इन सभी विधेयकों को चुनौती देने का क्रम चल जाय तो कार्य कैसे चल सकता है? अतः शासन को इस सम्बन्ध में विशेष सावधान और जागरूक रहना चाहिये और यह प्रवृत्ति बल न पकड़ सके और यह परिपाटी न चल सके इसका समय रहते प्रबन्ध करना चाहिये।

'और हाथ में तलवार भी नहीं'

सहयोगी 'सरस्वती' जुलाई ५६ के अंक में उपर्युक्त शीर्षक से लिखती है :—

"गत मास कांचीपुरम में अखिल भारतीय सर्वोदय सम्मेलन का अधिवेशन हुआ था। सर्वोदय आन्दोलन संसार के इतिहास में पहला सुसंगठित प्रयत्न है जो हृदय परिवर्तन के द्वारा सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक विषमताएं दूर करना चाहता है। आचार्य विनोबा भावे के ऋषिकल्प व्यक्तित्व के प्रभाव या जादू से कुछ व्यक्तियों पर स्थायी प्रभाव भले पड़ जाय और उनका हृदय परिवर्तन स्थायी रूप से हो भी जाय किन्तु यह मानने का हमारा साहस नहीं होता कि इस सर्वोदय आन्दोलन से एकाएक सारे देशवासियों की प्रकृति और मानसिकता बदल जायगी। करुणावतार बुद्ध बहुत से अंगुलिमालों का हृदय परिवर्तन नही कर सके। उनके पचास साठ वर्ष के करुणा और समताके उपदेशों के बाद भी मनुष्य प्रकृति बहुत नहीं बदली और

भीषण युद्ध होते ही रहे।

फिर भी यह आश्चर्य की बात है कि हमारे कुछ नेताओं ने समझ लिया है कि उनका कल्पित स्वर्ग इस पृथ्वी पर साकार होकर उतर आया है। कांचीपुरम् के सर्वो॰य सम्मेलन में भारतीय नेताओं के भीष्म पितामह श्री राजगोपालाचार्य ने देश को और देश की सरकार को यह सलाह दी है कि देश की सेना कम कर दी जाय। उन्होंने कहा कि आज संसार के सारे राष्ट्रों में सेना और अस्त्र शस्त्रों को बढ़ाने की जो होड़ लगी है वह 'कायरता की द्योतक' है। उन्होंने यह भी कहा कि पाकिस्तान को अमरिकनों से जो अस्त्र-शस्त्र मिल रहे हैं उनका विचार न करके हमें संसार की शान्ति के लिए, अकेले ही, अपनी सेना कम करने में संकोच न करना चाहिये। आज के वातावरण में सेना को घटाना भारतीय राष्ट्र के साहस को प्रमाणित करेगा। आगे चल कर उन्होंने कहा कि सर्वोदय में भय, आशंका अथवा अविश्वास के लिये स्थान नहीं है। जो भारतवासी अमेरिका की सहायता से पाकिस्तान की बढ़ती हुई सेना के कारण भारत की वर्तमान सेना के आकार को उचित बतलाता है, वह महात्मा गांधी के बतलाये हुए आदर्शों पर देशोत्थान का काम करने के योग्य नहीं है। आचार्य भावे ने भी इस विचार का समर्थन किया और कहा कि इस समय नेहरू सरकार को इस प्रकार का साहसिक कार्य करके संसार के सामने एक आदर्श रखना चाहिये और सार्वभौमिक शान्ति की स्थापना के लिये इस काम को करने का यह बहुत अच्छा अवसर है क्योंकि इस समय सभी राष्ट्र भारत का सम्मान करते हैं और वे उसके कार्य को स्वीकार करने तथा उसकी बात सुनने को तैयार हैं। आचार्य विनोबा भावे ने भारतीय सेना की संख्या घटा कर आधी कर देने की सलाह दी, किन्तु श्री राजगोपालाचारी ने यह नहीं बतलाया कि सेना किस अनुपात में घटाई जाय।

भारत की इन महान् विभूतियों के विचारों से मतभेद प्रकट करना अच्छा नहीं मालूम होता। किन्तु हमारी दृष्टि से देश के हित में जो सुझाव घातक है उस पर कुछ न कहना भी कर्तव्य से विमुख होना होगा। अत एव हम बड़ी नम्रता के साथ किन्तु बल पूर्वक, इस सुझाव का विरोध करते हैं। यह इस लिए और भी आवश्यक है कि दोनों ही नेताओं ने कहा है कि यदि सर्वोदय कार्यकर्ता जनता को इस सुझाव की आवश्यकता समझा दें तो नेहरू सरकार के लिए इस मांग को अस्वीकार करना असम्भव हो जायगा। अतएव शक्तिशाली सर्वोदय आन्दोलन की मशीन 'सेना घटाओ' का नारा यदि जनता में प्रचारित करने लगे तो हमें कोई आश्चर्य नहीं होगा। इसलिये भिन्न मत वालों का चुप होकर बैठ रहना हमारी दृष्टि में अनुचित है।

भारत, संसार का एक भाग है। आज के इस सिकुड़े हुए और संकुचित संसार में भारत संसार के किसी भाग में प्रज्वलित युद्धाग्नि की लपटों से अछूता नहीं रह सकता। अतएव उसे संसार की मान्यताओं और वास्तविकताओं का ध्यान रख कर ही चलना पड़ेगा। हम अवश्य ही अहिंसा में विश्वास करते हैं। यह हमारा विश्वास नया नहीं है। यह उतना ही पुराना है जितना हमारा लिखित इतिहास। हमने इस अहिंसा के सन्देश को नद-नदियों, दुर्गम पहाड़ों और विशाल सागरों को पार कर दूर २ देशों तक पहुंचाया। किन्तु मानवता उसके लिये तैयार नहीं थी। फल यह हुआ कि मध्य एशिया की बर्बर जातियों ने अहिंसा प्रचारक धर्म को उसके सबसे उन्नत स्थान से समूल नष्ट कर दिया।

जब तक संसार के अन्य राष्ट्र भी अहिंसा के अनुयायी होकर अपनी सेनाएं समाप्त करने को तैयार न हो जायें तब तक किसी एक देश का—और भारत के समान आकर्षक देश का निःशस्त्र हो जाना मानो संकट को स्पष्ट निमन्त्रण देना है।

सर्वोदयी बन्धुओं से हमारा विनम्र निवेदन है कि वे अपनी सारी शक्ति पहले देश में प्रेम

और अहिंसा का राज्य स्थापित करने में लगाएं। वे कृपा कर देश की सुरक्षा के साथ प्रयोग का खिलवाड़ न करें।"

विरजानन्द संस्कृत परिषद्

विरजानन्द संस्कृत परिषद् (सीताराम बाजार देहली ६) संस्कृत को लोकप्रिय बनाने का सराहनीय यत्न कर रही है।

१९५१ में परिषद् की स्थापना हुई थी। इस ५ वर्ष के काल में इसने अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त की है। १० पुस्तकें लिखवा कर प्रकाशित की जा चुकी हैं। परिषद ने संस्कृत अध्ययन को प्रोत्साहित करने के लिये (१) संस्कृत प्रसून (२) संस्कृत विनोद (३) संस्कृत विज्ञ (४) संस्कृत प्रवीण ये ४ परीक्षाएं प्रचलित की हुई हैं जिनसे सैकड़ों जन लाभ उठा चुके हैं। श्रीयुत स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ, श्री स्वामी आत्मानन्दजी महाराज, श्री महात्मा आनन्द भिक्षु, श्री आचार्य भगवान देव जी तथा श्री जगदेवसिंह जी सिद्धांती आदि २ महानुभाव इस परिषद् के सदस्य हैं और उसे इनका आशीर्वाद एवं सहयोग प्राप्त है। श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज इसके प्रधान हैं तथा श्री जगन्नाथ जी बी० ए० एल० ए० बी० प्रभाकर सिद्धान्त रत्न इसके परीक्षा मन्त्री हैं।

संस्कृत के अध्ययन को प्रोत्साहन देने वाला प्रत्येक यत्न स्वागत योग्य है।

यदि ईसा आयें तो ?

अमेरिका में आजकल एक गीत बहुत प्रचलित है जिसका आशय है :—

"यदि एक दो दिन बिताने के लिये जीसस (ईसा) तुम्हारे घर आते हैं और उनका आना अचानक होता है तो तुम क्या करोगे ? घर में उन्हें लाने के पहले क्या तुम अपनी पोशाक बदलोगे और क्या तुम कुछ पत्रिकाएं छिपा कर उनके स्थान में बाइबिल रखोगे ? क्या तुम्हें अपने घनिष्ठ मित्रों से उन्हें मिलाने में प्रसन्नता होगी ? या तुम चाहोगे कि, जब तक घर में ईसा का निवास रहे तुम्हारे वे मित्र दूर ही रहें ? क्या तुम्हें इसमें प्रसन्नता होगी कि, ईसा तुम्हारे यहां सदा निवास करें, या उनके चले आने पर तुम राहत की सांस लोगे ?"

इस गीत में अमेरिका की ही नहीं अपितु समस्त ईसाई देशों की वर्तमान स्थिति का बड़ा अच्छा चित्रण किया गया है। आज यूरोप और अमेरिका की अर्धनग्न नारियां लज्जा को भी लज्जित करती देख पड़ती हैं। यदि आज ईसा उन्हें अर्धनग्न अवस्था में देख लें तो उन्हें महान् आत्मिक सन्ताप होगा। इतना ही नहीं अमेरिका आदि में अश्लील साहित्य और कामुकता को भड़काने वाले महाभ्रष्ट चित्रों का पठन पाठन, दर्शन, प्रदर्शन इतना व्यापक हो गया है कि धर्म ग्रन्थों के लिये घरों में कोई स्थान शेष रह गया प्रतीत नहीं होता। नवयुवकों एवं नवयुवतियों के मित्रों का स्तर इतना गिरा हुआ है कि उन्हें ईसा से परिचित कराने मात्र में ही उन्हें लज्जा अनुभव होगी अर्थात् वे भले आदमियों से मिलने योग्य नहीं हैं। इतना ही नहीं जन साधारण का इतना अधिक पतन हो गया है कि वे ईसा के चिरकालीन संपर्क में रहना पसन्द न करेंगे क्योंकि ईसा के रहने से उनके नाच रंग आमोद प्रमोद एवं मनमानी में बाधा पड़ेगी जिसे वे सहन न कर सकेंगे।

यदि आज राम और कृष्ण तो क्या हमारे एक दो पीढ़ी पूर्व के गुरुजन ही हमारे मध्य आ जायं तो क्या हमारी वेष भूषा, साहित्य, एवं हमारे रहन सहन एवं व्यवहार से उन्हें सन्तोष होगा ? यह प्रश्न है जो प्रत्येक आर्य संस्कृति के प्रेमी भारतीय को अपने से करना चाहिये ! राम, कृष्ण और हमारे पूर्वज सदैव हमारे मध्य बने रहें। यह पाश्चात्यता से प्रभावित अधिकांश व्यक्ति कदापि पसन्द न करेंगे तभी तो वे अतीत से नाता काट देने की बात हमारे गले उतारने का प्रयत्न कर रहे हैं। —रघुनाथ प्रसाद पाठक

———

विदेशी पादरियों का विशाल षडयन्त्र

आर्य धर्म रक्षा फंड के लिए १ करोड़ रुपये की अपील

विदेशी पादरियों द्वारा सेवा के नाम पर भारत की गरीब अपढ़ और जंगली जातियों का जिस विशाल परिमाण से धर्म परिवर्तन किया जा रहा है, अरबों रुपयों की धन राशि के बल पर हजारों की संख्या में गोरे पादरी उड़ीसा, बिहार, कोचीन ट्रावनकोर, आसाम और मद्रास के हरिजन तथा आदिवासी हिन्दुओं को ईसाई मत में दीक्षित कर भारतीय राष्ट्र तथा हिन्दू धर्म के प्रति विद्रोही बना कर उन लोगों का प्रेम यरोशलम और अमरीका से जोड़ देते हैं जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण आसाम की नागा जाति द्वारा भारतीय राष्ट्र के प्रति संघर्षात्मक विद्रोह के रूप में सामने आ रहा है इस भारी षड्यन्त्र का सक्रिय प्रतिकार करने के लिये सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने बड़ी गम्भीरता पूर्वक विचार करने के पश्चात ईसाई प्रचार निरोध आन्दोलन को देश व्यापी बनाने के लिये सभी भागों में दयानन्द सेवा आश्रम खोलने तथा हजारों प्रचारकों को तैयार करने का विशाल पुरोगम बनाया है अतः इस महान् कार्य को सफल बनाने के लिये देश में ३३ कोटि हिन्दुओं से धर्म रक्षा कोष में एक करोड़ रुपये एकत्र करके देने की मांग की है। मुझे पूर्ण आशा है आर्य समाज तथा अन्य हिन्दू संस्थायें अपने-अपने स्थान पर प्रति हिन्दू कम से कम एक रुपया और अधिक से अधिक जितना दे सके शीघ्र ही यह धन एकत्र करके सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, श्रद्धानन्द बलिदान भवन, दिल्ली के पते से भेजने का कष्ट करेंगे। मै विश्वास दिलाना चाहता हूं यदि जनता ने धन के कार्य में सभा की समुचित सहायता की तो आर्य समाज के कार्य कर्ता पादरियों के इस महान् कुचक्र का पूरी शक्ति से सामना करके इन विदेशी पिट्ठुओं के पांव उखाड़ कर भारतीय परम्परा एवं राष्ट्र रक्षा के इस पवित्र कार्य में सफल होंगे।

रामगोपाल
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली ६

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान का भ्रमण

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के प्रधान श्रीयुत पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति जी 'धर्मरक्षा निधि' के लिये धन संग्रहार्थ १६ सितम्बर से बिहार और बङ्गाल के दौरे पर जा रहे हैं। उनके कार्य में सहायता देने के लिये सभा के उपमन्त्री श्रीयुत शिवचन्द्र जी उनके साथ होंगे।

पुरोगम इस प्रकार है :—

१८-१९ सितम्बर पटना, २० नालन्दा, २१ से २४ सितम्बर तक धनबाद, २५ से लगभग ८ दिन तक कलकत्ता।

प्रधान जी निम्नलिखित स्टेशनों से गुजरेंगे।

१७-९-५६

१ फतहपुर	७२६ प्रातः	
२ इलाहाबाद	६.३१	,,
३ मिर्जापुर	११-२३	मध्यान्ह
४ चुनार	१२-३	,,
५ मुगलसराय	१२-५०	,,
६ दिलदार नगर	१३-५६	,,
७ बक्सर	१४ ३८	,,
८ आरा	१५-४०	,,
९ दानापुर	१६-१४	,,

मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

धर्म और सेवा की आड़ में राजनैतिक षडयन्त्र
नियोगी कमेटी का निर्णय न्याय युक्त

हिन्दुस्तान टाइम्स दिनांक ७-८-५६ के अंक में वाई० डब्लू० सी० ए० के वार्षिक अधिवेशन पर मध्यप्रदेश सरकार द्वारा नियुक्त नियोगी कमेटी के विदेशी ईसाई मिशनरियों की गतिविधियों सम्बन्धी निर्णय पर बम्बई प्रान्त के माननीय गवर्नर श्री एच० के० महताब जी के विचार पढ़ कर अति ही आश्चर्य हुआ। उन्होंने उक्त कमेटी के निर्णय को दुर्भाग्य पूर्ण धार्मिक विवाद समझा और दूसरे रूप मे बिदेशी मिशनरियों द्वारा किये जा रहे निर्धन व अपढ़ जनता के बलात् धर्म-परिवर्तन का समर्थन किया। नियोगी कमेटी की खोज और युक्तियों की पूर्ण उपेक्षा करते हुए आपने यह कह कर इनके इस कुकृत्य का समर्थन किया कि यदि इसी प्रकार अन्य सम्प्रदायों की भी जांच की जाती तो कमेटी उन्हें इन निर्धनों का इससे भी अधिक भयंकर रूप शोषण करती हुई पाती। मैं माननीय गवर्नर महोदय से पूछना चाहता हूं कि अन्य द्वारा किये जा रहे निर्धनों के शोषण के आधार पर आपने विदेशी मिशनरियों के शोषण को न्याय युक्त कैसे समझ लिया। शोषण तो किसी भी रूप में निश्चय ही बुरा होता है। उसका तो सर्वत्र विरोध होना ही चाहिये। फिर चाहे उसे कोई भी सम्प्रदाय क्यों न करता हो। यदि गवर्नर महोदय की दृष्टि में अन्य सम्प्रदाय भी इस दोष के दोषी हैं तो उनकी भी निश्चित रूप से जांच होनी चाहिये और दोषी पाने पर उनके साथ भी कड़ाई का व्यवहार होना चाहिए परन्तु माननीय महोदय ने ऐसा न कर शोषण का पक्ष पोषण किया है।

आपने अपने वक्तव्य में एक बात और विचित्र कही है कि ऐसे समय जब कि संसार एक धर्म और एक नैतिक कोड की ओर अग्रसर हो रहा है तो ईसाई मिशनरियों की गतिविधियों पर चर्चा करना बुरी बात है। संसार एक धर्म की ओर अग्रसर हो रहा है—यह बात बड़े ही सौभाग्य की है और ऐसा होना ही चाहिये परन्तु क्या इसका अर्थ यह है कि धर्म की आड़ में विदेशी शत्रु सरकार अपने एजेण्टों के द्वारा देश मे राजनैतिक षडयन्त्र रच कर राष्ट्र द्रोह और बगावत के बीजा रोपण करे और देश के लोग इस घर फूंक तमाशे को मौन साधे देखते रहें। क्या इस प्रकार के कुत्सित षडयन्त्र का भंडाफोड़ करना भी पाप है? यदि यह पाप है तो क्या जयचन्द की भांति शत्रुओं का स्वागत करने का नाम ही देश भक्ति है।

नियोगी कमेटी ने इस विदेशी ईसाई षडयन्त्र का रहस्योद्घाटन कर सचमुच देश की महान् सेवा की है और इसके लिये वह धन्यवाद की पात्र है परन्तु यदि सरकार के गणमान्य कर्णधारों ने उसकी इस देश सेवा को अपनी अनुचित उदारता के कारण गलत रूप में लिया या इसकी उपेक्षा की तो देश को निश्चित रूप से इसके विनाशकारी कुपरिणामों का सामना करना पड़ेगा क्योंकि विदेशी ईसाई मिशनरियों द्वारा चलाया जा रहा यह षडयन्त्र छोटा नहीं बड़ा भयानक है और अमरीका जैसे शक्तिशाली देश इसकी पीठ पर है और प्रतिवर्ष करोड़ों रुपया इस पर व्यय कर रहा है। आशा है गवर्नर महोदय अपने विचारों पर पुनः मनन करने की कृपा करेंगे।

ओम्प्रकाश पुरुषार्थी
मन्त्री
सार्वदेशिक ईसाई प्रचार निरोध समिति, देहली

मानव धर्म की रूपरेखा

लेखक---श्रीयुत पं० सत्यव्रत जी शास्त्री

धर्मः सतां हितः पुंसां धर्मश्चैवाश्रयः सताम् ।
धर्माल्लोका स्त्रयस्तात प्रवृत्ताः सचराचराः ॥

(१) "महाभारत"

धर्म ही सत्पुरुषों का हित है, धर्म ही सत्पुरुषों का आश्रय है, और चराचर तीनों लोकों का आधार एक मात्र धर्म ही है—ये तीनों लोक धर्म के ही सहारे चलते हैं। धर्महीन मनुष्य पशु के समान है।

आज विश्व के रङ्ग मंच पर समस्त विश्व विद्यालय और महाविद्यालयों में पाश्चात्य सभ्यता व शिक्षा का ही बोल बाला है। प्रायः शिक्षित समाज में--वह नवयुवक हो या नवयुवति, ईश्वर और धर्म के विरुद्ध बड़ी तीव्र गति से एक भयङ्कर आन्दोलन चल रहा है, एक विध्वंसात्मक प्रबल विद्रोह मचा हुआ है। आज का सुधार प्रिय राष्ट्रवादी मानव समाज संसार में इन दोनों ही पदार्थों को या तत्वों को समस्त देश, राष्ट्र एवं जाति के लिये अत्यन्त हानिकारक, सर्वथा उपेक्षणीय और हेय समझता है। उसकी तार्किक तथा सूक्ष्मातिसूक्ष्म कुशाग्रबुद्धि में अध्यवसायात्मक ज्ञान में इन दोनों वस्तुओं की सत्ता अनेक तर्क, कुतर्क, वितर्कों के कुचक्र में उनके भ्रमजाल में फँसकर स्थिर नहीं हो पाती।

वह शास्त्रार्थ या शस्त्रार्थ के द्वारा बड़ी-बड़ी वैज्ञानिक एवं चामत्कारिक युक्ति प्रत्युक्तियों के आधार पर केवल प्रत्यक्ष के बल पर धर्म और ईश्वर को ही नहीं किन्तु उनके मानने वालों को भी सर्वथा नगण्य समझता है। उसका समूलोच्छेद करना चाहता है। राष्ट्र से अर्ध चन्द्राकार (गले में हाथ) देकर निकालना चाहता है। उन्हें दकियानूसी विचारों का घोषित करता है, सन् ५७ का पुराना सिक्का बताता है। वह भव्य भारत की सुदृढ़ आधार शिला धर्महीन राज्य (सेकुलर स्टेट) की डिंडिम घोषणा से स्थापित करना चाहता है। उसे ईश्वर और धर्म के नाम पर सर्वथा ढोंग दिखाई देता है। वह राष्ट्र के समुत्थान में, उसके अभ्युदय में, पूर्ण विकास में इन दोनों ही को अत्यन्त बाधक भयङ्कर विघ्न समझता है। सांसारिक अभ्युन्नति और पारमार्थिक समुन्नति में अनावश्यक और अत्यन्त अनुपयोगी स्वीकार करता है। ऐसा क्यों? यह उसका दोष नहीं, न उसकी विलक्षण तर्क वितर्कात्मिका बुद्धि का ही दोष है। यह सब दोष और उत्तरदायित्व उन उदार-आशय, सुमहान् दूरदर्शी धर्म तत्त्वज्ञों का उसके ठेकेदारों का है, उन धर्मध्वजियों का है जिन्होंने स्वार्थवश या प्रमाद वश गाढ़ तन्द्रा में पड़े हुए धर्म की वास्तविक व्याख्या न करके उसकी व्याख्या में अत्यन्त संकुचित और घातक मनोवृत्ति का प्रदर्शन किया है। धर्म की यथार्थता को स्वयं न समझकर उसका कुत्सित स्वरूप जो जनता के सामने प्रस्तुत किया उसी के कारण यह अनावश्यक उथल पुथल आज सर्वत्र मची हुई है। वैसे देखा जाय तो संसार संसरण शील है यह संक्रमण काल है। अतः देश में जहां देखो वहां क्रांति मची हुई है. आज क्रान्ति का युग है यत्र तत्र सर्वत्र क्रान्ति की पैनी कतरनी चल रही

है। उसके मध्य में जो भी आ जायगा वह बच नहीं सकता। क्रान्तिकारियों का प्रबल आक्रमण, उनका यह कुचक्र मनुष्य समाज, उनकी संस्थाओं भोगी विलासी राजा महाराजाओं, उनके नीति नियमों तक ही सीमित नहीं रहा किन्तु उसका प्रभाव आधुनिक युग में धर्म और ईश्वर पर भी होना आवश्यक था। "पंडिताः समदर्शिनः "समत्व योग उच्यते" विचारशील को समदृष्टि होना ही चाहिये। बस 'सब धान पांच पसेरी' के आदर्श को लेकर उन पर भी मूक प्राणियों की तरह उनके क्रान्ति कुठार का प्रलयकर आघात होना ही था। इस विज्ञान के युग में वे दोनों अछूते कैसे बच सकते थे। समय परिवर्तनशील है, उसमे बिना किसी रोक थाम के, ननु न च के नित्य नए नए परिवर्तन, परिवर्धन, संशोधन होते ही रहते हैं। यही समय की मांग है समय के आगे सब विवश हैं। यहां तक कि बुद्धि भी कुण्ठित हो जाती है। सत्यासत्य का, कर्त्तव्या-कर्त्तव्य का, धर्माधर्म का विवेक नष्ट हो जाता है।

इसी अविवेक के आधार पर महाभारत के दुर्योधन ने निःसंकोच कह दिया था कि—

"जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिः,
जानाम्य धर्मं न च मे निवृत्तिः।
केनापि देवेन हृदिस्थितेन,
यथा नियुक्तोस्मि तथा करोमि॥

मैं धर्म-अधर्म को अपने कर्तव्य अकर्तव्य को भली-भांति जानता हूं, खूब समझता हूं। परन्तु उसके पालन करने में न मेरी प्रवृत्ति है और न उससे मैं हट ही सकता हूँ। क्योंकि जैसी आंतरिक प्रेरणा प्राप्त हो रही हैं बलात् मुझे वैसा ही करना पड़ रहा है। मैं इसमें सर्वथा विवश हूं।" हो सकता है आज का मानव भी समय के बन्धन से आबद्ध होकर ही ऐसा बेसुरा राग अलाप रहा हो।

अस्तु—जिस धर्म के नाम पर यह सब अकाण्ड ताण्डव हो रहा है, आस्तीने चढ रही हैं, उसकी विशद व्याख्या करने से पूर्व उसका तात्त्विक अर्थ क्या है यह समझना उस पर विचार करना आवश्यक है।

"धर्म शब्द का निर्वचन"

धर्म शब्द संस्कृत भाषा का है। अत पाणिनीय व्याकरण के अनुसार धारणार्थक धृ-धातु से धर्म शब्द निष्पन्न होता है—जिसका अर्थ है धारण करना—"धार्यते इति धर्मः" जो धारण किया जाय उसे धर्म कहते हैं।

धारणाद्धर्म मित्याहुः यस्माद् धारयते प्रजाः।
यत्स्याद्धारण संयुक्तः स धर्म इति निश्चयः॥

महाभारत कर्ण पर्व ६६।६५

जिस तत्त्व के आधार पर जिस शक्ति के द्वारा समस्त प्रजा का समस्त सृष्टि का धारण हो रहा है, जिसके द्वारा संसार की स्थिति और रक्षा हो रही है, जिसके बल पर सारी प्रजा एक नियन्त्रण में अबाध गति से चल रही है वही धर्म है।

अर्थात् लोक परलोक मे सुख समृद्धि की प्राप्ति के लिये मानव जीवन के स्तर को समुन्नत एवं समुज्ज्वल बनाने के निमित्त सार्वजनिक पवित्र गुण कर्मों का कर्त्तव्य रूप से धारण करना, उनका अनुष्ठान करना, यथाविधि उन्हें अपने आचार व्यवहार में लाना ही धर्म का वास्तविक स्वरूप है। किन्हीं मर्यादाओं को कुल परम्परागत वैदिक आदर्शों की सुव्यवस्थित रखने के लिये कतिपय आवश्यक नियमों का पालन करना ही

धर्म है। ऐसे किन्हीं विशिष्ट कर्त्तव्यों को ही जो मनुष्य मात्र के जीवन के लिये बिना किसी जातिगत एवं पन्थाई भेद भाव के अत्यन्त आवश्यक एवं उपयोगी और अनिवार्य हैं—जिनके बिना मनुष्य, मनुष्य नहीं रह सकता—धर्म कहा गया है।

प्रातः जागरण से लेकर रात्रि शयन पर्य्यन्त हमारी दिनचर्या धार्मिक विधानों से बधी हुई है। शरीर और आत्मा को शुद्ध स्वस्थ बनाए रखने के लिये जो कर्तव्य अनिवार्य हैं वे ही धर्म हैं। धर्म किसी मनुष्य, समाज पन्थ, सम्प्रदाय, जाति या मत विशेष की बपौती नहीं है और न वह किसी ऋषि, महर्षि, पीर पैगम्बरकी देन है या उपज है। न उसमे पूञ्जीपतियों का दखल है. न इसमें बुद्धिवादियों का ही हाथ है, न यह केवल श्रम जीवियों से ही सम्बन्धित है। यह तो सर्वसाधारण मनुष्य मात्र की उन्नति के लिये अनादि काल से सृष्टि के साथ भिन्न भिन्न कर्तव्यों के द्वारा अव्याहत गति से सबको समान भाव से परम्परा से प्राप्त होता आ रहा है, यह आत्मोन्नति के लिये ईश्वरीय देन है। धर्म, मजहब और रिलीजन के संकुचित घेरे से सर्वथा पृथक् है, स्वतन्त्र है, व्यापक है, विशाल है। न यह धर्म शब्द उन दोनों का पर्याय वाचक हैं—जो उसे ऐसा समझते हैं वे महानुभाव धर्म की वास्तविकता को. सार्वजनिकता को, उसके महत्व को, आदर्श को और उदारता को सर्वथा नष्ट कर रहे है। "मजहब" अरबी का शब्द है मज़हब रास्ते को कहते हैं रास्ता अच्छा या बुरा टेढ़ा हो या सीधा, सभी रास्ते कहाते हैं। मज़हब के नाम से किन्हीं कर्तव्यों का बोध नहीं होता। इसकी व्याख्या में कोई भाव निहित नहीं है जिससे वह रास्ता अच्छा, सीधा, और सरल ही समझा जा सके। रास्ते बहुधा टेढ़े तिरछे और कण्टकाकीर्ण भी देखे गए हैं। आज इस मज़हबी जोश में उसके अन्वेषन में जो हुआ और हो रहा है वह सब जानते है। उसकी काली करतूतों से रक्त रंजित इतिहास के पृष्ठ भरे पड़े हैं। वह आज अपने कारनामों की साक्षी दे रहा है।

इसी प्रकार अङ्गरेजी के रिलीजन शब्द का अर्थ है—बांधना, इकट्ठा करना, अच्छे बुरे सभी इकट्ठे किए जा सकते हैं। इस शब्द से भी कोई ऐसा भाव नहीं टपकता जिसके आधार पर बुरों को रोका जा सके और केवल अच्छों को ही एकत्रित किया जाय। इस शब्द के द्वारा भी यूरोप में सैकड़ों नर नारियों का वध किया गया।

ये दोनों ही शब्द उपर्युक्त सार्वभौम शब्द की तुलना में नहीं आ सकते। इन्हें धर्म कहना केवल विडम्बना है। इनके सदृश धर्म के नाम पर संसार के इतिहास में कभी क्लेश, कलह, और विरोध या मानव जाति में रक्तपात नहीं हुआ। वह सब उपद्रव, अशांति या जन धन संहार स्वार्थवश, अपनी मूर्खता और मिथ्याभिमान के कारण धर्म के नाम पर दम्भ और कट्टर पन्थिता के आधार पर हुए हैं। ये ही मूर्खता, अज्ञान, पारस्परिक वैमनस्य साम्प्रदायिक द्वेष के दुर्गम दुर्ग हैं। स्वार्थियो ने धर्म की आड़ लेकर उसे बदनाम किया है। धर्म कहीं अशान्ति या कलह अथवा रक्तपात नहीं करवाता। वह धर्म ही क्या जिससे देश में अशान्ति हो या कलह हो। यह सब मजहब और रिलीजन का ही प्रसाद है।

वैदिक साहित्य मे अनेक स्थलों पर धर्म की वास्तविकता को बड़े विशद रूप से प्रदर्शित किया है।

वेद भाष्यकार सायण और दयानन्द

(लेखक—श्री पं० भवानीलाल 'भारतीय' एम० ए०)

अनादि ज्ञान वेद के रहस्य को जानने का प्रयत्न सृष्टि के आदि काल से होता चला आ रहा है। पद पाठ, शाखा भेद आदि उसके प्रारम्भिक रूप थे। तत्पश्चात ब्राह्मण ग्रन्थों में वेदार्थ को स्फुट करने का प्रयत्न किया गया। ब्राह्मण ग्रन्थों में जहां एक ओर मन्त्रों के याज्ञिक और विनियोग परक अर्थ किये गये हैं, वहां मन्त्रों का आध्यात्मिक अर्थ करने की भी चेष्टा की गई है। तत्पश्चात वेद के अंगों और उपांगों की रचना हुई। यास्क का निरुक्त वेदार्थ को स्पष्ट करने में अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ। इसी प्रकार व्याकरण, छन्द, ज्योतिष- कल्प, शिक्षा आदि शास्त्र भी अपनी २ रीति से वेदार्थ के स्पष्टीकरण में सहायक हुए।

परन्तु अब तक वेद की संहिताओं पर पृथक भाष्यों की रचना नहीं हुई थी। अब धीरे २ इस बात की भी आवश्यकता प्रतीत होने लगी कि पृथक् २ संहिताओं पर विस्तृत भाष्य रचना हुए बिना वेदार्थ का ज्ञान सम्भव नहीं है। चारों वेदों पर प्राचीन और अर्वाचीन काल में अनेकों विद्वानों द्वारा भाष्य लिखे गये। सायण से पूर्व अनेक भाष्य लिखे गये, जिनमें स्कन्द स्वामी (ऋग्वेद भाष्यकार) सर्वाधिक प्राचीन हैं। इनके अतिरिक्त उद्गीथ, उव्वट, भट्ट भास्कर, वेंकट माधव, आत्मानन्द, आनन्द तीर्थ आदि विद्वानों ने अपनी शैली से वेद भाष्य लिखे।

मध्यकालीन भाष्यकारों में सायण सर्वप्रमुख हैं। आचार्य सायण का वेद भाष्यकारों में पृथक महत्त्व है। इसका कारण यह है कि सायण उस युग में उत्पन्न हुए थे, जब कि देश में यवन-साम्राज्य दृढ़ हो चुका था। दक्षिण में हरिहर और बुक्क नामक दो भाइयों ने एक हिन्दू राज्य की नींव डाली जो इतिहास में विजयनगर साम्राज्य के नाम से प्रसिद्ध हुआ। सायण विजयनगर के इन्हीं सम्राटों के मन्त्री थे और उन्होंने राजनीतिक कुशलता, संग्राम चातुरी तथा अपने शास्त्र ज्ञान से अपने आश्रयदाताओं को चकित कर लिया था। इनके भाई माधवाचार्य भी बड़े भारी विद्वान् थे।

बुक्क राजा की आज्ञा से तथा अपने अग्रज माधवाचार्य की प्रेरणा से सायण ने वेद भाष्य के महत्त्वपूर्ण कार्य में हाथ लगाया और राजकार्य में संलग्न रहते हुए भी वेद तथा ब्राह्मण ग्रन्थों पर वृहद् भाष्यों की रचना की। सायण की निम्न भाष्य रचनायें सम्प्रति उपलब्ध हैं :—

(१) वैदिक संहितायें—

(क) ऋग्वेद संहिता।
(ख) यजुर्वेद की तैत्तिरीय (कृष्ण) और काण्व (शुक्ल) शाखा।
(ग) सामवेद संहिता।
(घ) अथर्ववेद संहिता।

(२ ब्राह्मण और आरण्यक।

(क) तैत्तिरीय ब्राह्मण।	कृष्ण यजुर्वेद
(ख) तैत्तिरीय आरण्यक।	"
(ग) ऐतरेय ब्राह्मण।	ऋग्वेद
(घ) ऐतरेय आरण्यक।	"
(ङ) शतपथ ब्राह्मण।	शुक्ल यजुर्वेद
(च) तांडय ब्राह्मण	सामवेद
(छ) षड्विंश "	"
(ज) सामविधान "	"

(ञ) आर्षेय „ „
(ञ) देवताध्याय „ „
(ट) उपनिषद् „ „
(ठ संहितोपनिषद् „ „
(ड) वंश „ „

उपर्युक्त सूची से पाठक सहज ही अनुमान लगा सकते हैं कि सायण प्रणीत साहित्य कितना विशाल और महत्वपूर्ण होगा। यद्यपि सायण के समय में वेद का पठन पाठन और वेदार्थ की प्राचीन आर्ष परिपाटी का अधिकांश में लोप हो गया था, फिर भी ब्राह्मणों में वेदों के प्रति यत्किंचित श्रद्धा शेष थी। इसी का परिणाम है कि वेदार्थ की तात्विक प्रक्रिया से अनभिज्ञ होते हुए भी सायण ने वैदिक साहित्य में इतना परिश्रम किया। आज वेदार्थ की सायण द्वारा प्रतिपादित परिपाटी का अधिक सम्मान नहीं रहा है, फिर भी प्रत्येक वेद प्रेमी को उसके भाष्य रचना विषयक महान् परिश्रम और अध्यवसाय के लिये कृतज्ञ होना चाहिये।

ऋषि दयानन्द ने जिस युग और जिन परिस्थितियों में वेदों पर अपनी भाष्य रचनायें लिखीं वह सायण से मूलतः भिन्न थीं। अंग्रेजी साम्राज्य का लोहपाश भारतीय जनता के अंगों पर कस दिया गया था। विजयनगर सम्राट की तरह ऐसा कोई नरेश या श्रेष्ठी नहीं था जो वैदिक धर्म और संस्कृति को प्रश्रय देकर उसके उद्धार का उपाय सोचे। ईसाई लोग अपने धर्म बन्धुओं का राजाश्रय पाकर भारतीय जनता को अपने मतमें दीक्षित करनेकेलिये सभी उपाय काम में ला रहे थे। शताब्दियों की दासता के कारण वैदिक धर्मावलम्बी अपने धर्म, अपनी परम्परा, संस्कृति और सभ्यता को भुला चुके थे। ईसाइयों के आक्रमणों से वे हतप्रभ होकर निराश नेत्रों के से सहायता के लिये चारों ओर देखते, परन्तु किसी को सहायक न पाकर चुपचाप अपने पैतृक धर्मको तिलांजलि देकर ईसाई बन जाते।

ऐसी परिस्थिति में दयानन्द का आविर्भाव हुआ। यद्यपि उनसे पूर्व ही राजा राममोहनराय ब्राह्म समाज की स्थापना के द्वारा परम्परागत धर्म और सभ्यता की रक्षा के लिये कटिबद्ध हो चुके थे परन्तु वेदों को अपने आन्दोलन का मूलाधार स्वीकार न करने के कारण उनका कार्य छिन्न-भिन्न हो रहा था। ईसाई तत्व प्रच्छन्न रूप से ब्राह्म समाज और उसके नेताओं की विचार धारा में प्रविष्ट हो चुके थे। फलतः हिन्दुओं का उनमें विश्वास जमना कठिन था। इसके विपरीत दयानन्द का सुधार कार्य वैदिक आधार पर टिका हुआ होने के कारण अधिक लोक प्रिय हो सका और अल्पकाल में ही उसने उत्तर भारत की समस्त जनता को प्रभावित कर लिया।

इस समय ऋषि दयानन्द को इस बात की आवश्यकता प्रतीत हुई कि जिन वेदों को वे पुनः भारत के जनमानस में प्रतिष्ठित करना चाहते हैं और जिनको आधार के रूपमें स्वीकार कर वे एक बृहद् संस्कार और सुधार का कार्य करने चले हैं, उनका वास्तविक स्वरूप और अर्थ जनता के समक्ष प्रस्तुत करना अत्यन्त आवश्यक है। फलतः ऋषि दयानन्द ने वेद भाष्य का कार्य अपने हाथ में लिया।

सं० १९३३ वि० के भाद्रपद मास शुक्लपक्ष की प्रतिपदा रविवार को महर्षि ने अपनी 'वेद-भाष्य भूमिका' का प्रणयन प्रारम्भ किया। इसके एक वर्ष पश्चात मार्गशीर्ष शु० ६, सं० १९३४ को ऋग्वेद और एक मास के पश्चात् पौष शुक्ला १३ को यजुर्वेद का भाष्य प्रारम्भ किया। अपने इस भाष्य के सम्बन्ध में उनकी प्रतिज्ञायें निम्न-लिखित थीं।

मनुष्येभ्यो हितायैव सत्यार्थं सत्यमानतः।
ईश्वरानुग्रहेणेदं वेदभाष्यं विधीयते ॥

मनुष्यों के हित के लिये और सत्यार्थ के प्रकाशन के लिये ईश्वरके अनुग्रह से मैं यह वेद-

भाष्य प्रारम्भ करता हूँ।

संस्कृत प्राकृताभ्यां यद्भाषाभ्यामन्वितं शुभम्।
मन्त्रार्थ वर्णनं चात्र क्रियते कामधुङ्मया॥

यह वेद भाष्य संस्कृत और प्राकृत (हिन्दी) दोनों भाषाओं में किया जायगा।

आर्याणां मुन्यृषीणां या
व्याख्या रीति सनातनी।
तां समाश्रित्य मन्त्रार्था
विधास्यन्ते तु नान्यथा॥

इसमें प्राचीन आर्य ऋषि मुनियों की सनातन व्याख्या पद्धति को ही अपनाया जायगा, और किसी रीति को नहीं।

येनाधुनिक भाष्यैर्ये टीकाभिर्वेददूषकाः।
दोषा सर्वे विनश्येयुरन्यथार्थ विवर्णनाः॥

इस भाष्य से अन्य नूतन भाष्यों और टीकाओं से वेदों पर जो दोष आ गये हैं, वे सब दूर हो जायेंगे।

सत्यार्थश्च प्रकाश्येत वेदानां यः सनातनः।
ईश्वरस्य सहायेन प्रयत्नोऽयं सुसिध्यताम्॥

वेदों के सनातन अर्थ को सब लोग जानें इस लिये ईश्वर की सहायता से मैं इस महत्वपूर्ण कार्य को प्रारम्भ करता हूं।

भूमिका में उल्लिखित इन प्रतिज्ञा श्लोकों से पाठकों को विदित हो गया होगा कि ऋषि दयानन्द की वेदों के विषय में क्या धारणा थी और अपने वेद भाष्य की रचना में उनका क्या उद्देश्य था। इसे देश का ही नहीं, अपितु समस्त मानव जाति का ही दुर्भाग्य समझना चाहिये कि महर्षि दयानन्द अपने इस महत्वपूर्ण कार्य को पूरा करने से पूर्व ही दिवंगत हो गये और वेदार्थ की एक नूतन परन्तु प्राचीन परम्परा समन्वित तथा पूर्ण वैज्ञानिक व्याख्या से हम वंचित रह गये। ऋषि ने यजुर्वेद का भाष्य तो सम्पूर्ण कर दिया ऋग्वेद का भाष्य पूरा नहीं हुआ। ऐसी स्थिति में सामवेद और अथर्ववेद के भाष्य का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

जो कुछ भी हो, दयानन्द का वेद भाष्य वैदिक साहित्य में एक नवीन युग का सूत्रपात करता है। मैक्समूलरके शब्दोंमें तो समग्र संस्कृत साहित्य का यदि आरम्भ ऋग्वेद से मानें तो उसकी समाप्ति दयानन्द की ऋग्वेद भाष्य भूमिका में होती है।

We may decide the whole of Sanskrit Literature beginning with the Rigveda and ending with Dayanand's introduction to his edition of Rigvda, his by no means uninteresting Rigveda Bhumika in two great periods." India: What can it teach-us. Lec. III.

दयानन्द की भाष्य शैली को लेकर पौर्वात्य और पाश्चात्य विद्वानों ने पर्याप्त उहापोह किया है। अनेक विद्वानों ने उसके पक्ष और विपक्ष में अपने विचार प्रकट किये हैं. परन्तु इतना निश्चित है कि आने वाली शताब्दियों के लिये दयानन्द का वेद भाष्य पथ प्रदर्शक का काम करता रहेगा। योगी अरविन्द के शब्दों में =

Whatever may be the final and complete inter pretation of the Vedas, Dayananda will be honoured as the first discoover of the right clues."

अर्थात वेदों का सम्पूर्ण और अन्तिम भाष्य, जो कोई भी हो, परन्तु ठीक वेद भाष्य शैली के प्रथम उद्धारक के रूपमें दयानन्द का सदा सम्मान किया जायगा। आगे के लेखों में हम सायण और दयानन्द के वेद विषयक विचारों का तुलनात्मक परिशीलन उपस्थित करने का यत्न करेंगे।

वेद प्रापक चार ऋषियों का वेद प्रमाण

[लेखक—श्री पं० विश्वनाथ जी आर्योपदेशक घुघुली जिला गोरखपुर]

श्री० पं० सुरेन्द्र जी ने लिखा है कि अग्नि आदि चार ऋषियों के आत्मा में चारों वेदों का प्रकाश हुआ इसमें मूल संहिता पाठ का कोई प्रमाण नहीं है। इसका उत्तर श्री शिवपूजन सिंह जी ने यह दिया, कि आपको यह भी पता नहीं कि वेदों में कोई भी रूढ़ि शब्द नहीं है। वेदों के सभी शब्द यौगिक होते हैं। (सार्वदेशिक जून १९५६ पृ० १६७)।

वेदों के शब्द योग रूढ़ि माने जाते हैं। गौ शब्द के अर्थ "गच्छतीति गौ" के अनुसार गाय भूमि वाणी आदि हैं। चलता तो सिंह और घोड़ा भी है परन्तु वे गौ नहीं कहे जा सकते।

आपका भाव यह है कि वेदों में कोई व्यक्ति वाचक संज्ञा जिससे वेदों में किसी इतिहास की सिद्धि हो सकती है नहीं है। महर्षि ने सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास सात में लिखा है।

"वेदों में किसी का इतिहास नहीं, किन्तु विशेष जिस २ शब्द से विद्या का बोध होवे उस उस शब्द का प्रयोग किया है किसी मनुष्य की संज्ञा वा विशेष कथा का प्रसङ्ग वेद में नहीं।"

अब देखना यह है कि वेद प्रापक अग्न्यादि चार ऋषि व्यक्ति वाचक संज्ञा में आते हैं ? यदि पश्चिमी मतों के अनुसार वर्त्तमान सृष्टि प्रथम वार ही उत्पन्न हुई हो, तो ठीक हो सकता है, परन्तु वैदिक सिद्धान्त के अनुसार सृष्टि क्रम प्रवाह से अनादि है। अतः प्रत्येक सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों को चार वेदों की प्राप्ति होती है। यही नहीं प्रत्युत वर्त्तमान काल में भी अनेक लोक लोकान्तरों में अग्नि आदि चार ऋषियों द्वारा चारों वेद अवतरित हैं। इस अवस्था में विश्वामित्र आदि ऋषि नामों की भांति अग्नि आदि नाम भी किसी व्यक्ति विशेषका नाम नहीं। अनेक व्यक्तियों का वाचक होने से वेद सृष्टि विद्या को प्रकट करने वाला जाति वाचक हो जाता है। इस अवस्था में किसी वेद में ऐसा मन्त्र होना आवश्यक है।

आज से पचीस तीस वर्ष पहले मासिक आर्य पत्र में मैंने यह मन्त्र दिया था। परन्तु न मैं विख्यात् उपदेशक हूँ, न नेता, अतः आर्य विद्वानों ने इधर ध्यान नहीं दिया। मैंने प्रचलित सृष्टि संवत् की भ्रांति पर भी ध्यान दिलाया जिसका अनुमोदन विद्वद्वर श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज ने भी किया परन्तु आर्य जगत में महर्षि दयानन्द प्रतिपादित सवत् के भी विरुद्ध भ्रान्त संवत का प्रचार हो रहा हैं। शोक है कि सार्वदेशिक धर्मार्य सभा का भी ध्यान इधर आकर्षित नहीं हुआ। अग्नि आदि चार ऋषियों को वेद प्राप्ति का मन्त्र पुनः उपस्थित करता हूं आशा है धर्मार्य सभा और अन्य विद्वान् इस पर विचार करके इसे स्वीकार करेंगे अथवा युक्ति प्रमाणसे इसका खंडन करेंगे।

यस्मिन्न श्वास ऋषभास उक्षणो
वशा मेषा अवसृष्टा स आहुताः।
कीलालये सोमपृष्ठाय वेध से
हृदा मतिं जनये चारु मग्नये।

(ऋग्वेद १०-९१ १४)

जिस सृष्टि में मैं जगदीश्वर ने घोड़े बैल गाय मेढ़ आदि उत्पन्न किये उसमें कीलालय (वायु) सोम पृष्ठ (अङ्गिरा) वेधा (आदित्य) और अग्नि ऋषि के हृदय द्वारा वेद ज्ञान को भी प्रकट किया।

कीलालं जलं पिबतीति कीलालप् वायुः।

कीलाल नाम जल का है उसे पान करने वाला वायु इसी बात को शतपथ में "योऽयंपवते" वाक्य में कहा गया है। सोमः शान्तावरणं पृष्ठे यस्येति सोम पृष्ठः चन्द्रमा, स एव वृक्षादीना मङ्गे षु रसोत्पादकोऽङ्गिरा।

सोम पृष्ठ शान्त आवरण चन्द्रमा है। यही

वृक्षादि में रस उत्पन्न करने वाला अङ्गिरा कह-लाता है। पढ़िये गोपथ।

तस्य प्रथमया स्वर मात्रया पृथिवी मग्नि मोषधीं। वनस्पतीन् ऋग्वेद भूरिति० १७

तस्य द्वितीया स्वर मात्रयान्तरिक्षं वायुं यजुर्वेदं भुव इति० १८

तस्य तृतीय स्वर मात्रया दिव मादित्यं साम-वेदं स्वरिति० १६

तस्यवकार मात्रयाऽपश्चन्द्रमसमथर्व वेद-न्नक्षत्राण्योमिति स्वमात्मानं जनयदित्थं-गिरसा मनुष्टमं छन्द एक विंशति स्तोमं दक्षिणां दिशं शरदतुं मनोऽध्यात्मं ज्ञानं ज्ञेय मतीन्द्र-याण्यन्वभवन्। २१। प्र० १ पूर्वभाग

अग्नि दैवत ऋग्वेदस्य यजुर्वेदो वायु-दैवतः। आदित्यः सामवेदस्य चन्द्रमा वैद्युतश्च भृग्वङ्गिरसाम् १-५-२५।

इन प्रमाणों से सिद्ध है कि जो सम्बन्ध ऋग्वेद का अग्नि से यजुर्वेद का वायु से सामवेद का आदित्य से है वही सम्बंध अथर्व वेद का चन्द्रमा से है और वही अङ्गिरा है। अतः वेद मन्त्र में चन्द्रमा का उल्लेख हुआ है। वेधा सूर्य का नाम और अग्नि तो स्पष्ट ही है। इन चारों ऋषियों के हृदय में चारुमति वेद ज्ञान को परमात्मा उत्पन्न करता है। इस प्रकार वेद प्राप्ति का प्रकार भी बतला दिया गया।

प्रश्न किया जा सकता है कि महर्षि दयानन्द ने इस विषय में इस मन्त्र वा किसी अन्य मन्त्र का प्रमाण क्यों नहीं दिया। इसका एक उत्तर तो यह है कि महर्षि समग्र ऋग्वेद का भाष्य न कर सके अतः इस मन्त्र तक न पहुंच सके। द्वितीय यह कोई सिद्धान्त नहीं कि जिस विषय का वेद प्रमाण महर्षि न उपस्थित कर सके, हम यह समझ लें कि उस विषय का वेद प्रमाण है ही नहीं। महर्षि ने सृष्टि की आयु ४३२०००००० वर्ष बत-लाई, परन्तु किसी वेद मन्त्र का प्रमाण न दिया। आर्य विद्वानों ने अथर्व वेद से प्रमाण ढूंढ निकाला।

शतं तेयुतं हायनाद् द्वे युगे त्रीणि चत्वारि कृण्मः

दूसरा प्रश्न यह होता है कि किसी भी आर्य विद्वान् ने यहाँ तक चतुर्वेद भाष्यकार श्री जयदेव जी ने भी इस मन्त्र का यह अर्थ नहीं किया। इसका उत्तर यह है कि किसी एक भी विद्वान् का नवीन आविष्कार इस कारण मिथ्या नहीं हो सकता कि दूसरों के ध्यान में वह बात क्यों नहीं आई। मेरे विचार में आर्य भाष्यकार श्री शिव-पूजन सिंह जी की भांति इस भ्रान्ति में रहे कि वेद में प्रापक ऋषियों के नाम व्यक्ति वाचक हैं। पौराणिक पं० ज्वाला प्रसाद जी ने अपने बनाये ग्रंथ दयानन्द तिमिर भास्कर में इस वेद मन्त्र से यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि चारों वेदों का प्रकाश ब्रह्मा पर हुआ। वेधा ब्रह्मा का पौरा-णिक नाम भी है, और शेष तीनों नाम कीलालप सोम पृष्ठ और अग्नि ब्रह्माके विशेषण बतलाये हैं इससे यह तो सिद्ध हो जाता है कि अन्य विद्वान् भी इस मन्त्र का विषय वेद प्राप्ति ही मानते हैं।

तीसरा प्रश्न यह होगा, कि वेदार्थ में कीला-लप (वायु) आदि भौतिक पदार्थ ज्ञात होते हैं ऋषि नहीं। इसका उत्तर यह है कि शतपथ मनु आदि में आये ये शब्द भी भौतिक ही ज्ञात होते हैं। मनु में रवि गोपथ में आदित्य औरशतपथ में वही सूर्य कहा गया है ये भौतिक पदार्थों के ही पर्याय हैं, परन्तु महर्षि दयानन्द ने लक्षण से इन का ऋषि अर्थ किया है।

सायणाचार्य ने भी

"जीव विशेषैरग्नि वाय्वादित्यैर्वेदा नामुत्पादि त्वात्।

इसी प्रकार अर्थ किया है।

आर्य महिलाओं में आध्यात्मिकता

[लेखक—डा० दुर्गाशङ्कर नागर]

संसार के इतिहास में आध्यात्मिकता अपना एक विशेष महत्व रखती है। मिश्र, रोम, बैबीलोन और अन्य देशों की सभ्यताएं नष्ट भ्रष्ट हो गई हैं और उनका नामोनिशान भी नहीं हैं, किन्तु शताब्दियों तक क्रूर विपरीत काल चक्र का सामना करती हुई भारतीय संस्कृति अब तक जीवित है। इसका कारण है इसकी आध्यात्मिकता और इसका त्याग।

आज के लोग तो कहते हैं कि अध्यात्म विद्या ने ही देशवासियों को अकर्मण्य बना दिया और देश को पतितावस्था के गर्त में डाल दिया। अध्यात्म की चर्चा आज लोगों को नहीं रुचती। हमारी संस्कृति ऊँचे दर्जे की थी, हम जगत गुरु थे। हमारे पूर्वज ऋषि महर्षि ऐसे थे। उनकी कीर्ति-गाथा और गौरव-गान से हमें क्या लाभ हो सकता है, जब तक हममें श्रेष्ठता त्याग और आध्यात्मिकता न हो। परन्तु ऐसे लोगों को विद्वान् स्माइल्स के ये शब्द स्मृति पट पर अङ्कित कर लेने चाहिये। It is of momentous importance that a nation should have a great past to look back upon अपने राष्ट्र जीवन और दृष्टि को विशाल बनाने के लिये प्रभावशाली भूतकाल का गौरव पूर्ण होना परमावश्यक है। तभी हम घोरतर, कठिन से कठिन अवस्था में निर्भय होकर सिर ऊँचा रख सकते हैं।

पश्चिम के प्रसिद्ध विद्वान् क्रोजर के भारतीय संस्कृति के विषय में कैसे उदात्त विचार हैं। उनका मनन करें। 'If there is a country on earth which can justly claim the honour of having been the cradle of the human race or at least the scene of primitive civilization, the successive development of which is the second life of man that country is assuredly India. यदि पृथ्वी भर में कोई ऐसा देश है जो सत्य का गौरव रखता हो तो वह मानव जाति का आदि स्थान, सुधार और सभ्यता का आदि स्थान निःसंशय भारतवर्ष ही है।

लोईजेकोलाइट, सुप्रसिद्ध फ्रेंच साहित्यकार एवं विद्वान्, भारतीय संस्कृति के लिए हृदयोद्गार प्रकट करते हुए कहते हैं "हे प्राचीन भारत भूमि जगत की उत्पत्ति का आदि स्थान, मनुष्य जाति की आदि जननी तेरा जय जयकार हो। पूज्य धात्रि तेरी जय हो। हे धर्म की, प्रेम की, कविता की एवं विज्ञान की पितृभूमि हम तुझे प्रणाम करते हैं और चाहते हैं कि तेरा गौरवास्पद भूतकाल तेरा पश्चिम के भविष्य में उदय होकर पुनरावर्तन करे।

इस सभ्यता और संस्कृति के आध्यात्मिक सस्कार डालने वाले कौन हैं? वे हैं हमारी आर्य माताएं। भारतीय इतिहास के पर्यवेक्षण और गवेषणा से पता चलता है कि आर्य माताओं की दया से ही हममें थोड़ी बहुत, भी आध्यात्मिकता शेष रह पायी है। यदि हमारे जीवन में आध्यात्मिक अंश का समावेश नहीं तो वह जीवन बोलने चालने वाले पशुओं का जीवन है। आर्य माताएँ ही हमारे समाज की शक्ति का प्राण हैं। भारत के महान् पुरुषों को जन्म देने वाली आर्य मातायें ही हैं कि जिन्होंने अपने आध्यात्मिक विशुद्ध जीवन के अमिट संस्कार उनके हृदय और जीवन पर अङ्कित किये हैं।

अर्जुन, कर्ण, भीष्मपितामह, अभिमन्यु, पृथ्वीराज, प्रताप, शिवाजी का चरित्र पढ़िये। उनमें असाधारण वीरता थी। ये वीर रत्न माता के उदर से ही महान् संस्कार प्राप्त करके उत्पन्न हुये थे। माताओं की पवित्र उच्च और वीरत्व की भावना का उनके जीवन पर अप्रतिहत प्रभाव पड़ा है। समरांगण में अप्रतिम शौर्य से वीर योद्धाओं को चकित कर देने वाले क्षत्रियों का चरित्र पढ़िये। उनमें वीरता की भावना जाग्रत करने वाली वीरांगनाओं की उत्साहप्रद भावनायें ही कार्य करती थीं।

मंदालसा देवी अपने पुत्रों को जब पालने में सुलाती थी उस समय कैसी आध्यात्मिक भावनाओं से पूर्ण लोरियां उनको सुनाती थी।

स्वर्गीय कवि सम्राट रवीन्द्रनाथ जी ठाकुर ने अपने लेख में भारतीय नारी की विशेषता के विषय में कहा है कि पाश्चात्य देशों में भी अनेक पतिभक्ता, सुशीला और साध्वी स्त्रियां हो चुकी हैं। कलाकौशल और भौतिक विद्या में भी वे अग्रसर हो रही हैं किन्तु भारतीय नारी में कुछ और विशेषता है। जब याज्ञवल्क्य ऋषि संसार के जीवन से थक कर, संसार से विरक्त हो, अरण्य में जाने लगे तो उन्होंने अपनी स्त्री मैत्रेयी से विदा चाही। मैत्रेयी से कहा कि तुम संसार में रह कर श्रीमान् जैसा सम्पन्न, शान्तिमय जीवन व्यतीत कर सकोगी। मैत्रेयी ने कहा।

येनाहं नामृता स्यां तेनाहं किं कुर्याम।

बृहदारण्यक

क्या मैं इस धन दौलत से अमर हो जाऊँगी? जिससे मुझे अमरता ही प्राप्त न हो, उस वस्तु को लेकर मैं क्या करूँगी। भोगों में शान्ति नहीं है।

स्वर्गीय रवीन्द्रनाथ जी कहते हैं कि मैत्रेयी के इन शब्दों में कितना जीवन, माधुर्य और सत्य भरा हुआ है। क्या ऐसा उदाहरण अन्यत्र मिल सकता है?

मैत्रेयी ने पूछा वह कौन सी वस्तु है जिसकी प्राप्ति मनुष्य को स्वतन्त्र बना देती है। वह जीवन अमृत मुझे बताओ जिससे सच्चा सुख, सच्ची शान्ति और सच्चा आनन्द प्राप्त हो। इसके उत्तर में महर्षि याज्ञवल्क्य ने कहा "अरे! आत्मा को ही देखना सुनना और उसी का साक्षात्कार करना चाहिये। मनुष्य जन्म का यही अन्तिम लक्ष्य है।" विदुषी गार्गी को भी याज्ञवल्क्य ने यही उपदेश दिया।

यो वा एतद् अक्षरं गार्गि अविदित्वा अस्माल्लोकात प्रैति स कृपणः यो वा एतद् अक्षरं गार्गि। विदित्वा अस्माल्लोकात् प्रैति स ब्राह्मणः।

हे गार्गि! जो इस अविनाशी तत्व को बिना जाने इस लोक से विदा हो जाता है, वह कृपण है कंजूस है। उसका जन्म निष्फल है और जो

अमर तत्व आत्मा को जान लेने के पश्चात् इस लोक से विदा हो जाता है वह ब्राह्मण है।

आज भी हजारों आर्य महिलाओं ने पंजाब में अपने सतीत्व की रक्षा के लिये और आततायियों के हाथ न पड़ने के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया, अपने शरीर के मोह को छोड़ कर अपने शरीर को धधकती हुई अग्नि के समर्पण कर दिया। यहां तक कि अपने आदमियों से अपने शरीर के टुकड़े २ करवा दिये।

'न हन्यते हन्यमाने शरीरे' गीता २।२०

शरीर के नाश होने से और मर जाने से आत्मा का नाश नहीं होता। मृत्यु उस आत्मा का स्पर्श नहीं कर सकती। यही हमारे भारतवर्ष की महान् आध्यात्मिक निधि है।

अध्यात्म के विषय में जर्मनी के सुप्रसिद्ध विद्वान्, तार्किक और तत्ववेत्ता शोपनहार ने कैसे उत्कृष्ट वचन कहे हैं।

अध्यात्म विद्या के पवित्र ग्रन्थ उपनिषदों के मनन करने से, हर एक पद से गहरा, नया और उच्च विचार उत्पन्न होता है। भारतवर्ष का प्राचीन वायु मंडल हमें घेरे हुये है। नई रोशनी और नवीन विचार भी हमारे चारों ओर हैं। सारे संसारमें किसी दूसरी विद्या का अभ्यास ऐसा उपयोगी और हृदय को शान्ति देने वाला नहीं है जैसा कि भारतीय अध्यात्म विद्या के उपनिषदों का साहित्य। इसने जीवन में परम आनंद और परम शान्ति दी है और यह मृत्यु के समय भी परम आनन्द और शान्ति देगा।

स्वानन्दभावे परितुष्टिमन्तः
प्रशान्तसर्वेन्द्रियवृत्तिमन्तः।
निरन्तरं ब्रह्मणि ये रमन्तः
कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः॥

—शङ्कराचार्य

जो अपने आत्मा के आनन्द भाव में सदा प्रसन्न रहते हैं जिनकी सब इन्द्रियों की वृत्तियां प्रशान्त रहती हैं जो निरन्तर ब्रह्म में ही रमण करते हैं ऐसे पुरुष केवल लंगोटी लगाए हुये हों तो भी महा भाग्यशाली हैं। सच्चे आत्म-ज्ञान द्वारा ही शान्ति आनन्द, स्वाधीनता और स्वतन्त्रता मिल जाती है अन्य मार्ग से नहीं।

अन्त में स्वदेश भक्त लाला लाजपतराय जी के गौरवास्पद और भावपूर्ण वचनों को दिया जा रहा है। हमें चाहिये कि इनके सत्य को पहिचानें।

"हमारी आध्यात्मिकता हमारी बड़ी पूंजी है। मुझे विश्वास है कि जन समूह में ऐसा कोई मनुष्य नहीं होगा, जो यूरोप के भौतिक पदार्थों से आध्यात्मिकता का परिवर्त्तन करने को तैयार हो। मैं इसे समस्त संसार के साम्राज्य के लिये भी छोड़ने को तैयार नहीं हूं। तुम मुझसे पूछ सकते हो कि मै ऐसा करने को क्यों तैयार नहीं हूं। मै इसके उत्तर में दो शब्द कहूँगा। क्योंकि फिर हम हिन्दू नहीं रहेंगे। कमसे कम मुझे तो यह स्वीकार नहीं है कि संसार के प्रारम्भ से जो आध्यात्मिकता मुझे पूर्वजों से प्राप्त हुई है उसका परित्याग कर दूं। हम लोगोंकी पतित परिस्थिति है। इससे भी पूर्ण रूप से मैं परिचित हूं। किन्तु इतने पर भी मैं यह महसूस करताहूं कि हम अपनी वर्त्तमान अधोगति में भी सभ्यता की उच्च से उच्च कोटि में है, जो हमें सौंपी गई है, सिवा हमारे और कोई दूसरा हमारी आने वाली सन्तान को नहीं सौंप सकता।"

उसने सच कहा है

कनिष्ठाः पुत्रवत् पाल्या भ्रात्रा ज्येष्ठेन निर्मलाः
प्रगाथो निर्मलो भ्रातुः प्रागात् कण्वस्य पुत्रताम् । (नीति मंजरी १११)

महर्षि घोर के पुत्र कण्व और प्रगाथ को गुरु-कुल से लौटे कुछ ही दिन हुए थे। दोनों ऋषि कुमारोंका एक दूसरेके प्रति हार्दिक प्रेम था। प्रगाथ अपने बड़े भाई कण्व को पिता के समान समझते थे, उनकी पत्नी प्रगाथ से स्नेह करती थी। उनकी उपस्थिति से आश्रम का वातावरण बड़ा निर्मल और पवित्र हो गया था।

एक दिन आश्रम में विशेष शान्ति का साम्राज्य था। कण्व समिधा लेने के लिये बन में गए हुए थे। उनकी साध्वी पत्नी यज्ञ वेदि के ठीक सामने बैठी हुई थी। उससे थोड़ी दूर पर ऋषि कुमार प्रगाथ साम गान कर रहे थे। अत्यन्त शीतल और मधुर वायु के सचार से ऋषि कुमार के नेत्र अलसाने लगे और वे ऋषि पत्नी की गोद में सिर रख कर विश्राम करते २ सो गये। ऋषि पत्नी किसी चिन्तन में तन्मय थी।

❀ ❀ ❀ ❀

"यह कौन है, इस नीच ने तुम्हारी गोद में विश्राम करने का साहस किस प्रकार किया? समिधा रखते ही कण्व के नेत्र लाल हो गये, उनका भयानक रूप देखकर ऋषि पत्नी सहम गई।

'देव' वह कुछ और कहने ही जा रही थी कि कण्व ने प्रगाथ की पीठ पर प्रहार किया। ऋषि कुमार की आंख खुल गयी। वह खड़ा हो गया। उसने कण्व को प्रणाम किया।

'आज से तुम्हारे लिये इस आश्रम का दरवाजा बन्द है, प्रगाथ।' कण्व की वाणी क्रोध की भयङ्कर ज्वाला में प्रज्वलित थी, उनका रोम २ सिहर उठा था

'भैया! आपतो मेरे पिता के समान हैं और ये तो साक्षात् मेरी माता है।' प्रगाथ ने ऋषि पत्नी के चरणों में श्रद्धाप्रकट कर कण्व का शङ्का समाधान किया।

कण्व धीरे २ स्वस्थ हो रहे थे पर उनके सिर पर संशय का भूत अब भी नाच रहा था।

'ऋषि कुमार प्रगाथ ने सच कहा है, देव। मैने तो आश्रम में पैर रखने ही उनका सदा पुत्र के समान पालन किया है। बड़े भाई की पत्नी देवर को सदा पुत्र मानती है। इसको तो आप जानते ही हैं, पवित्र भारत देश का यही आदर्श है। ऋषि पत्नी ने कण्व का क्रोध शान्त किया।

'भाई प्रगाथ! दोष मेरे नेत्रों का है मैंने महान पाप कर डाला, तुम्हारे ऊपर व्यर्थ शङ्का कर बैठा। कण्व का शील जाग गया। उन्होंने प्रगाथ का आलिंगन करके स्नेहमान दिया। प्रगाथ ने उनकी चरणधूलि मस्तक पर चढ़ाई।

'भाई नहीं! ऋषि कुमार प्रगाथ हमारा पुत्र है।' ऋषि पत्नी ने कहा।

'ठीक है, प्रगाथ हमारा पुत्र है। हम दोनों इसके माता पिता हैं कण्व ने प्रगाथ का मस्तक सूंघा।

बृहद्देवता अ० ६,३५-३६

महर्षि-जीवन

शंका समाधान

परमात्मा अवतार धारण नही करता

मेरठ में पौराणिक पंडित ने प्रश्न किया 'जितने अवतार हुए हैं उनको किसने बनाया और किसने अतुल सामर्थ्य दिया ?'

'जिन्हें (श्रीकृष्ण इत्यादि को) आप परमेश्वर का अवतार मानते हो वे ईश्वर के अवतार तो नहीं थे किन्तु बड़े उत्तम पुरुष थे। वे परमेश्वर की आज्ञा में चलने वाले थे। वे सद्धर्म और न्यायादि गुणों से अलंकृत और वेद शास्त्र के पूर्ण विद्वान् थे। आप उन उत्तम पुरुषों को ईश्वरावतार मानते हैं यह आपकी भारी भ्रान्ति है। जो अजर, अमर और सर्व व्यापक है वह अवतार धारण नहीं कर सकता। जो सर्वत्र परिपूर्ण है उसे अवतार धारण करने की आवश्यकता क्या है ? अवतार लेने से वह सर्वत्र परिपूर्ण नहीं रह सकता। यदि कहो कि दुष्टों को दंड देने के लिये परमेश्वर देह धारण करता है तो यह भी ठीक नहीं है। जो बिना देह के सृष्टि उत्पत्ति, पालना और प्रलय करता है क्षुद्र कार्य के लिये उसके काया धारण की कल्पना करना कितना तुच्छ और मिथ्या विचार है ? परमेश्वर ही सब का रचने वाला है। वह सब को बल और सामर्थ्य प्रदान करता है। बड़े शोक की बात है कि आप लोग श्री रामचन्द्र जी और श्री कृष्ण जी आदि उत्तम पुरुषों को परमात्मा का अवतार मान कर भी उनका घोर अपमान करते हो। उनकी मूर्तियों को बाजारों और गलियों में घुमा कर भीख मांगते हो। उनके स्वांग निकाल कर तो और भी अधिक निरादर प्रदर्शित करते हो। रामादि महापुरुषों और सीतादि सतियों के जब आप स्वांग निकालते हैं तो परमत वाले उन्हें देखकर हंसी उड़ाते हैं, अश्लील कटाक्ष और संकेत करते हैं। दुकान वालों के लिये तो यह रास मनोरंजन का साधन है परन्तु इससे आर्य जाति के महापुरुषों की दूसरों की दृष्टि में बड़ी अवहेलना होती है।

माखन चोर आदि के स्वांग भी कुछ कम अपमान जनक नहीं। अपने देश के जो राजे महाराजे लाखों मनुष्यों का शासन, पालन और रक्षण करते थे जो महापुरुष आजीवन परमात्मा की आज्ञा में रहे, जो सत्य में, धर्म में न्याय में अद्वितीय थे, महाशोक आप लोग उनके स्वांग बनाकर पैसे २ के लिये हाथ पसारते हो और साथ ही अपने को उन महात्माओं का भक्त प्रसिद्ध कर रहे हो। हा ! मेरा हृदय तो इस वर्णन से विदीर्ण हो रहा है। केवल इसी को पर्याप्त जानिये कि ईश्वर का अवतार नहीं होता। प्रमाण के लिये एक मन्त्र भी उपस्थित करता हूं:—

सपर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम्। कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।

गंगा महात्म्य और तिलक का वास्तविक अभिप्राय

महाशय वेनीप्रसाद श्री सत्संग में प्रतिदिन जाया करते थे। एक दिन उन्होंने पूछा 'भगवन्! गंगा माहात्म्य तिलक लगाना सब यों ही प्रवृत्त हो गया है अथवा इसका कोई कारण भी है?

स्वामी जी ने उत्तर दिया 'माहात्म्य तो सारे निर्मूल हैं परन्तु ये गंगादि स्थान हमारे पूर्वज महर्षियों के आश्रम स्थान थे। इन स्वच्छ और पवित्र प्रदेशों में जप, तप और योगानुष्ठान किया करते एवं विद्यार्थियों को ज्ञान-दान देते थे। सांसारिक कार्यों के भूरि भार से परिश्रान्त और अशान्त जन इन स्थानों में आकर विश्राम किया करते। तपोधन महात्माओं के दर्शनों से उनको आत्मिक शान्ति का लाभ होता था। बहुत से जन दुर्वासना से मलिन मन को उन सन्तों के सत्संग में बैठ कर शुद्ध कर लेते थे। परन्तु आज वे बातें नहीं रहीं। अब तो ये स्थान स्वार्थ परायण लोगों से घिरे हैं।

तिलक लगाने का भी कोई पुण्य नहीं है। हां यह बात तो ठीक है कि पुरातन आर्य लोग दोनों भौंहों के मध्य में ध्यान किया करते थे। अपने शिष्यों को भी इसकी शिक्षा देते थे। इस स्थान में ध्यान करने से लाभ भी महान् होता है। त्रिकुटी के अभ्यासियों में से किसी २ को बिन्दु समान उज्ज्वल ज्योति कण दीखने लगता है। कोई तेजोमय चक्राकार को देख पाता है। कोई अर्द्ध चन्द्राकार प्रकाश पुंज के दर्शन करता हैं और किसी को दीप शिखा के आकार की ज्योति दिखाई देती है। ये सब योग के चमत्कार हैं, आत्मिक उन्नति के चिन्ह हैं। कोरे तिलकों का इनके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है।

परमात्मा की सिद्धि

वेनीप्रसाद ने विनय की 'महाराज आप परमात्मा की सिद्धि युक्तियों से तो कर देते हैं परन्तु युक्तियां सदा बदलती रहती हैं। जो युक्ति आज अकाट्य कही जाती है कोई आश्चर्य नहीं कि कालान्तर में वह किसी के कर्णपात करने योग्य भी न रहे।"

महाराज ने उत्तर दिया 'हम निरे बौद्ध नहीं हैं,जो युक्तियों के अतिरिक्त अन्य किसी प्रमाण का आदर ही न करें। हमारे सर्वोपरि प्रमाण वेद हैं। उनमें ईश्वर विश्वास की आज्ञा है। ईश्वर की सिद्धि में प्रत्यक्ष प्रमाण भी हैं।'

ईश्वर सब के समीप है और प्रतिदिन सब को उपदेश देता है। जो लोग अविद्यान्धकार में ग्रस्त हैं वे उसको नहीं समझते। सोचिये। एक मनुष्य चला जा रहा है। एक मूल्यवान् वस्तु को मार्ग में पड़ी देख कर उसका जी ललचा जाता है। उसे उठाने के लिए ज्यों ही वह हाथ आगे बढ़ाता है उसे उसके भीतर से चेतावनी मिलती है 'ऐ! ऐसा काम मत करना ,यह महा अधर्म कर्म है, इसका फल अति दुःखद है। यह ईश्वर की ही प्रेरणा होती है।

संस्कृत ईश्वर प्रदत्त भाषा है

एक दिन अनेक मुसलमान सज्जन तथा पादरी गण स्वामी जी के साथ ईश्वरीय आदेश पर संवाद करने आये। सब ने स्वमतानुसार युक्तियां दीं और अपनी धर्म पुस्तकों को ईश्वर का आदेश बताया।

उत्तर देते समय महाराज ने अन्य मतवादियों की युक्तियों का भली भांति खंडन किया। वेद के पक्ष में अटूट युक्तियां दीं और कहा, 'संस्कृत भाषा स्वाभाविक और ईश्वर प्रदत्त भाषा है, इसके स्वरों को लीजिये। इनकी ध्वनि सब देशों में पाई जाती है समस्त प्रचलित भाषाओं में इसी की अक्षर माला नैसर्गिक है। छोटा सा बच्चा भी अ, इ, उ का उच्चारण बिना सिखाये करने लग जाता है। क, ख आदि व्यंजन अक्षरों का उच्चा-

रण भी ऐसा ही सुगम और स्वाभाविक है। जो भाषा स्वाभाविक अक्षरों से बनी है वही भाषा स्वाभाविक और आदिम होनी चाहिये। ईश्वरीय आदेश भी उसी भाषा में होना उचित है।"

क्या गोरक्षा सब जीव रक्षा से अच्छी है ?

ज्वालापुर में ओजखां नाम के एक सम्भ्रान्त व्यक्ति निवास करते थे। ये स्वामी जी के सत्संग में आया करते थे। उन्होंने एक दिन महाराज से पूछा 'क्या गोरक्षा सब जीव रक्षा से अच्छी है ? स्वामी जी ने उत्तर दिया—

'हां, गो रक्षा सर्वोत्तम है और इसमें सब से अधिक लाभ है। गोरक्षा मनुष्य मात्र का कर्त्तव्य है ?'

नित्य स्नान की वैज्ञानिकता

ओजखां ने फिर पूछा 'आर्य्यों के नित्य प्रति नहाने का नियम किस नींव पर रखा गया है ? स्वामी जी ने कहा 'आयुर्वेद विद्या के अनुसार प्रतिदिन स्नान करना बल पुष्टि का वर्द्धक, आरोग्यदाता तथा स्वास्थ्य सम्पादक है। इससे देह में स्वच्छता और स्फूर्ति बना रहती है।'

क्या ईश प्रार्थना भीख मांगना है ?

श्री स्वामी जी महाराज का ईश्वर की प्रार्थना उपासना में बड़ा विश्वास था। स्तुति से ईश्वर प्रेम बढ़ता है। उसके गुण कर्म स्वभाव से अपने गुण कर्म और स्वभाव सुधर जाते हैं। ईश्वर की प्रार्थना से निरभिमानता आती है, उत्साह प्राप्त होता और प्रभु की सहायता मिलती है। परोपकार करने की प्रार्थना ही में परमेश्वर सहायता देता है। महाराज व्याख्यान के प्रारम्भ में परमात्म देव की प्रार्थना किया करते थे।

एक दिन निर्मल महात्मा रामसिंह ने स्वामीजी से विनय की कि 'महाराज,इतने पंडित और ज्ञानी होकर भी आप भिखारियों की भांति ईश्वर से भीख मांगते हैं। ऐसे कर्म तो अज्ञानियों के लिये कहे हैं। जिस ज्ञानी ने 'अहं ब्रह्मास्मि' का मनन कर लिया उसे इस प्रकार रोने झींकने की क्या आवश्यकता है'? महाराज ने उत्तर दिया "मनुष्य में प्रार्थना की वृत्ति स्वाभाविक है। जैसे आप में खाने पीने और सोने की वृत्ति तो विद्यमान है परन्तु परितृप्ति प्राप्त करने के लिये आप उस वृत्ति को जगाते हैं। ऐसे ही प्रार्थना रूप भक्ति वृत्ति को जगाने की आवश्यकता है। यह सत्य नहीं है कि ज्ञानी जन प्रार्थना नहीं करते। आप अपने को पूर्ण वेदान्ती मानते हैं परन्तु फिर भी वेदान्त वाक्य दुहराते रहते हैं। जिस वस्तु का किसी को जितना अधिक ज्ञान होता है वह उसे उतना ही अधिक स्मरण करता है। जितनी अधिक प्रीति परमेश्वर में बढ़ेगी उसका उतना ही अधिक प्रकाश होगा। भाई रामसिंह जी ! ऊपर से चाहे जो कहो, परन्तु जब तक भूख-प्यास और सुख दुख आदि का अनुभव करते हो तब तक आप पूर्ण नहीं हो। आप में न्यूनता अवश्य है। अपनी न्यूनता को पूर्ण करने के लिए तीन गुण रूपी माया से ऊपर होने के लिए प्रार्थना आवश्यक है।"

—हम परमात्मा से जिस वस्तु की मांग करें उसके लिए पुरुषार्थ भी करना चाहिये।

—लोगों से अत्यधिक प्रेम करने वाले की प्रार्थना सर्वोत्तम होती है।

स्वाध्याय का पृष्ठ

वृक्षायुर्वेद

प्राचीन कालमें जन्मसे वर्ण मानने की प्रचलित प्रथा का अभाव था और वर्ण में गुण कर्म का इतना प्राबल्य था कि लकड़ी को भी गुण और उसकी योग्यता के अनुसार ब्राह्मण क्षत्रियादि कहा जाता था। बङ्गाल के प्रसिद्ध विद्वान् स्व० डा० राजेन्द्रलाल मित्र ने संस्कृत के हस्त लिखित ग्रन्थों का संस्कृत विवरण अनेक जिल्दों में लिखकर History of Sanskrit manuscript के नाम से प्रकाशित किया। उस माला की पहली जिल्द में वनस्पति विद्या से सम्बन्धित एक ग्रन्थ का उल्लेख किया गया है। ग्रन्थ का नाम 'वृक्षायुर्वेद' Science of plant life है। यह ग्रन्थ एक विद्वान् भोज नारापति की रचना है। ग्रन्थ कर्त्ता ने अपने ग्रन्थ में लकड़ी के अन्दर ब्राह्मणादि वर्णों के होने की बात उठाते हुए बतलाया है कि जहाज के बनाने में उसके किस हिस्से में किस वर्ण की लकड़ी का प्रयोग होना चाहिये। लकड़ी का वर्ण भेद इस प्रकार प्रकट किया :—

(1) Brahman classwood—That is light and soft and can be easily joined to any other kind of wood
(2) Kshatria classwood — That is light and hard but cannot be joined on to other classes.
(3) Vaishya classwood — Soft and heavy.
(4) Shudra classwood–is characterized by both hardness and heavyness.

अर्थात् उस लकड़ी को ब्राह्मण कहते थे जो हल्की और मुलायम हो और सुगमता से अन्य लकड़ियों से जोड़ी जा सके। क्षत्रिय लकड़ी वह कही जाती थी जो हल्की और सख्त हो दूसरी लड़ केयों में न जोड़ी जा सके। वैश्य लकड़ी मुलायम परन्तु भारी होती थी और शूद्र लकड़ी कठोरता और भारीपन के लिये प्रसिद्ध थी। इस प्रकार इन वर्णों में किसी प्रकार की छोटाई बढ़ाई का भाव नहीं है और न उचित रीति से हो सकता है।

❀ ❀ ❀ ❀

सनातन धर्म

सनातन कहते हैं 'सदातन' को अर्थात् सदैव से चला आया हो अथवा सदैव रहने वाला हो और इसी लिये त्रिकाला बाधित सत्य सिद्धांतों का धारक पोषक जो धर्म वही सनातन है। पुरातन व वर्तमान सनातन धर्म में इतना ही अन्तर है कि वह सश्रीक सनातन धर्म था अर्थात् श्री विशिष्ट था और आजकल का सनातन धर्म उसके पोषक आर्य साम्राज्य भाव से निःश्रीक अर्थात् श्री विहीन हो रहा है इस लिये इसमें कहीं काल कृत, कहीं देश कृत, समुदाय कृत व आजकल पर संसर्ग अन्य अनेक दोष आ गए हैं। इन सब दोषों को हटा दिया जाय तो शुद्ध सनातन धर्म अब भी वही है जो अनन्त काल पूर्व था। यदि इसके विशुद्ध स्वरूप से काम लिया जावे तो इस धर्म में संसार के

त्रिविध दुःखों को हटाने की पूर्ण सामग्री विद्यमान है।

सनातन धर्म की रक्षा तो सनातन वेद शास्त्र के आश्रय से ही हो सकेगी, मनु ने ठीक ही कहा है :—

'बिभर्ति सर्व भूतानि वेद शास्त्रं सनातनम्' सनातन वेद शास्त्र में सब भूतों को धारण पोषण करने की शक्ति ही है। देशकालानुरूप स्मृति ग्रन्थ बदलते ही आ रहे हैं पर सनातन वेद शास्त्र सृष्टि के आरम्भ से ही एक रस अविकृत रूप में चले आ रहे हैं क्योंकि वे त्रिकालाबाधित सत्य के धारक पोषक है। इसी लिये भगवान् कृष्ण गीता में कहते हैं :—

'तस्मा च्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्य
व्यवस्थितौ' ॥

सनातन धर्मावलम्बीजन धर्म के यथार्थ स्वरूप को समझकर प्रवृत्त होंगे तो उनके विशाल हृदय में संसार फिर भी समा सकता है।

वर्तमान हिन्दू कुछ तो अधर्म के कारण और अधिकतर अति धर्म के कारण हीनदशा को प्राप्त हो रहे हैं। धर्म की सूक्ष्म गति को न समझकर ऊपर के धर्म के छिलकों को ही धर्म समझकर उससे चिपट रहे हैं। यही अधोगति का मुख्य कारण है। (आचार्य नरदेव शास्त्री)

शिक्षा का सुधार

पैस्टेलोजी नामक एक जर्मन विद्वान् ने जिसे युरोप में प्रारम्भिक और माध्यमिक शिक्षा का पिता कहा जाता है शिक्षा का उद्देश्य इस प्रकार बताया था।

(१) बुद्धि से नियन्त्रित स्वतन्त्रता की प्राप्ति।

(२) हृदय में आस्तिकता के भावों का समावेश

पैस्टेलोजी ने शिक्षा के जो उद्देश्य वर्णन किए हैं वे वास्तव में उच्च हैं। आज स्वतन्त्रता का स्थान उच्छृंखलता ने ले रखा है। इसका फल यह है कि युवक और युवतियाँ नियन्त्रण में रहना नहीं चाहतीं। इसका उत्तरदायित्व वर्तमान शिक्षा पर है।

भारत की शिक्षा पद्धति का सुधार अब से बहुत पहले हो जाना चाहिये था। उसका सुधार न होने का फल क्या है—सराडी हेमिलटन के शब्दों में

A master of art is a young man who has mastered the art of starving, at a cost of say Rs.4000/- to his parents

A Bachelor of art is an artless bachelor who can feed neither him self nor a wife, although his parents may have spent thousands of rupees on his education.

अर्थात् एक एम० ए० पास युवक ४०००) खर्चा करके भूखा रहने की कला का मास्टर बनता है। इसी प्रकार एक बी.ए. पास युवक कला शून्यता का मालिक बनता है। उसके माता पिता हजारों रुपया खर्चा करते हैं परन्तु वह न अपने भोजन के साधन उपस्थित कर सकता है और न अपनी पत्नी के।

हेमिलटन महोदय समझते हैं कि यदि एक पुरुष खेती करना सीखले और उसके पास एक छोटा हवादार मकान, १० बीघा भूमि और २५०) हो तो वह इसी से अन्न और वस्त्र उत्पन्न करके आराम से अपने घर में रह सकता है परन्तु सहस्रों रुपये खर्चा करके और मनोवृत्ति बिगाड़ कर युवक इस योग्य नहीं रहते कि कृषि या इसी प्रकार का कोई दूसरा काम कर सकें। इस लिये इस शिक्षा पद्धति का शीघ्रातिशीघ्र सुधार होना चाहिये।

(श्री नारायण स्वामी जी की डायरी से)

रक्त की पवित्रता

मार्टिन कल्लाकक नामक एक युवक क्रान्ति के

युद्ध में सैनिक था। उसका कुल बड़ा उत्तम था परन्तु युद्ध कालीन असाधारण अवस्था में जिसमें सदाचार के नियमों को ढिलाई देदी जाती है वह सैनिक अपने पवित्र रक्त को भूल गया। एक सुन्दर परन्तु दुर्बल मस्तिष्क वाली नवयुवती से उस नवयुवक की भेंट हुई। इस भेंट का परिणाम यह हुआ कि उस लड़की के पेट से एक दुर्बल मस्तिष्क का लड़का पैदा हुआ। जब यह लड़का जवान हुआ तो उसने भी एक निम्न घराने की लड़की के साथ शादी की। इन दोनों के अनेक बच्चे उत्पन्न हुए। इन बच्चों ने अपने ढङ्ग की लड़कियों के साथ विवाह किए और ६ पीढ़ियों तक यह क्रम जारी रहा। दुराचार की उस रात से लेकर ६ पीढ़ियों तक ४८० बच्चे उत्पन्न हुए जो अपने को मार्टिन का वंशज कहते थे। इन ४८० में से १४३ कमज़ोर दिमाग़ के थे, ३३ दुराचारी थे, ३६ अवैध थे, ३ को मिरगी के दौरे आते थे ३ को बदमाशी में दण्ड मिला था और ८ वेश्यालय चलाते थे।

मार्टिन ने बुरी खेती बो देने के बाद उच्च घराने की एक बुद्धिमती समाज सेविका के साथ विवाह किया। इस मिलन से कई पीढ़ियों में ४९६ वंशज उत्पन्न हुए। उनमें से बहुत से गर्वनर हुए, सैनिक हुए, एक बड़े विश्व विद्यालय का संस्थापक हुआ, अनेक डाक्टर, वकील, जज, शिक्षा शास्त्री, ज़मींदार श्रेष्ठ नागरिक और प्रशंसनीय माता पिता हुए जो सामाजिक जीवन के प्रत्येक विभाग में चमके। आजकल अन्तिम संतान एक धनी और प्रभावशाली व्यक्ति है।

Popular Science Siftings
Quoted by
Shree Radha Krishnan
in his work
(The Hindu View of life
P. 103)

द्राविड़ आर्यों से पृथक् नहीं हैं

महर्षि मनु ने अपने मानव शास्त्र में यह ठीक दर्शाया है कि 'द्राविड़ प्रजा' पहले आर्य क्षत्रिय थी। धर्म के ह्रास के कारण असंस्कृत हो गई। मनु के इस सत्य को असत्य सिद्ध करने के लिये यूरोप भर के प्रसिद्ध संस्कृतज्ञ पंडितों तथा इतिहास लेखकों ने एक मत से लिखना प्रारम्भ कर दिया कि भारत की दक्षिणी द्राविड़ प्रजा स्वतन्त्र जाति है, इसका साहित्य, इसकी भाषा और इसकी संस्कृति सब स्वतन्त्र है। उत्तर भारतीय आर्य संस्कृति से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। यह प्रजा आर्यों की सन्तान नहीं इत्यादि २। कलकत्ता के माडर्न रिव्यू के अप्रल १९३७ के अङ्क में इस यूरोपियन मत के विरुद्ध एक अच्छा लेख छापा था। लेख का कुछ भाग इस प्रकार है :—

दक्षिण भारत के आधुनिक इतिहास लेखक विंध्य प्रदेश के दक्षिण में तामिल सभ्यता के अस्तित्व का संकेत करने में बड़ा रस लेते हैं परन्तु तामिल संस्कृति की विशेषताओं का अध्ययन प्रारम्भ में ही इस कल्पना से दूषित हो जाता है कि द्राविड़ संस्कृति और द्राविड़ जाति आर्य संस्कृति और आर्य जाति से पृथक् है। संस्कृत लेखकों के पंच द्राविड़ तो आर्य जाति के ही पांच भाग हैं।

"यूनान और रोम के प्राचीन लेखकों ने उत्तरीय और दक्षिणी समस्त भारत को संयुक्त मान कर व्यवहार किया है। श्रीयुत आर० स्वामीनाथ आयर ने अपनी पुस्तक में दर्शाया है कि तामिल भाषा की विशेषताएं व्याकरण तथा बनावट में प्राकृत भाषाओं से मिलती जुलती हैं और प्राचीन तामिल भाषा का शब्द अर्थ कोष वेदों तथा पञ्जाब की प्राचीन प्राकृत भाषा के शब्द अर्थकोष से मिलता जुलता है। माडर्न रिव्यू अप्रैल १९३७
पृष्ठ ४७३

साहित्य समीक्षा

'१. Philosophy of Dayanand.'

लेखक-श्री० पं० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०। प्राप्ति स्थान-गङ्गाज्ञान मन्दिर, इलाहाबाद. मूल्य १०)।

श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी एक लब्धप्रतिष्ठ लेखक हैं। अनेक भाषाओं पर अधिकार के अतिरिक्त दर्शन शास्त्र में भी आपकी योग्यता असाधारण है। पाश्चात्य एवं पौरस्त्य दोनों प्रकार के दर्शनों के आप प्रौढ़ अनुशीलनकर्त्ता है। उर्दू में बारीतआला, हिन्दी में आस्तिकवाद, अद्वैतवाद, जीवात्मा, शाङ्करभाष्यालोचन पुस्तकें आपकी दार्शनिकता का ज्वलन्त प्रमाण हैं। दर्शन शास्त्र में आपको आरम्भ से रुचि है। १९१२ ई० में प्रयाग विश्वविद्यालय से आपने अंग्रेजी साहित्य में एम० ए० किया; अपनी दर्शन शास्त्र की पिपासा की शान्ति के लिये १९२३ में आपने उसी विश्वविद्यालय से फिलासफी (दर्शन शास्त्र) में एम० ए० किया। आपको लिखी छोटी बड़ी पुस्तकों की संख्या सैकड़ों तक पहुँचती है। अंग्रेजी में आपने अनेक पुस्तकें लिखी हैं जो अंग्रेजी पढ़े-लिखों में वैदिक धर्म प्रचार का बहुत बड़ा साधन है। आप दिन रात लिखने एवं उसके लिए सामग्री संकलन में संलग्न रहते हैं। ७५ वर्ष की आयु होने पर भी आप युवकों से अधिक फुर्तीले हैं।

कुछ लोगोंका विचार है उनमें कुछ एक तथाकथित आर्य सामाजिक भी सम्मिलित हैं कि स्वामी दयानन्द दार्शनिक नहीं थे, दर्शन-शास्त्र के प्रति उनकी कोई देन नहीं है। उपाध्याय जी इस धारणा को भ्रांत एवं स्वामी जी के ग्रथों के गंभीर ज्ञानाभाव से प्रसूत मानते हैं। उनकी स्थापना है कि स्वामी दयानन्द एक अद्भुत दार्शनिक थे। दर्शन-शास्त्र को उनकी एक विशेष देन है। अपनी इस स्थापना की सिद्धि के लिए उन्होंने Philosophy of Dayananda (दयानन्द का दर्शन) नामक विशाल ग्रन्थ अंग्रेजी भाषा मे निबद्ध किया है। उपाध्याय जी जब इस ग्रन्थ रत्न को लिख रहे थे तब इसके विशेष विशेष स्थल उपाध्याय जी ने मुझे सुनाने की कृपा की थी।

यह ग्रन्थ ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों के गम्भीर एव मनोयोग पूर्वक अध्ययन, चिन्तन एव मनन का फल है। इस विशाल ग्रंथ में नौ अध्याय हैं पहले अध्याय में ऋषि दयानन्द का संक्षिप्त जीवन चरित है। दूसरे अध्याय में ज्ञान तथा उसकी प्राप्ति के साधनो (प्रमाणों) का वर्णन है। यह अध्याय बहुत महत्व का है। तीसरे में 'परमात्मा' का अध्ययन है इसमें शाङ्करवाद के विवेचन के साथ रामानुज मत की समीक्षा है। भावनावाद तथा ईसाइयों के पवित्र चित्र की आलोचना के साथ २ अनेकेश्वरवाद आदि का निराकरण है। इसी अध्याय में उपाध्याय जी ने एक महत्व पूर्ण वाक्य लिखा है—Swami Dayananda wanted that the gulf bitween theology and philosophy may be filled up. (११७ पृष्ठ) अर्थात् स्वामी दयानन्द की इच्छा थी कि ब्रह्म विज्ञान तथा दर्शन

शास्त्र की खाई पाट दी जाये। यह तभी सम्भव है कि ईश्वर का यथार्थ तर्कानुमोदित स्वरूप ससार के सामने रखा जाये। वैदिक युग के पश्चात् स्वामी दयानन्द पहले महापुरुष हैं जिन्होंने जगत् के सामने ईश्वर का, कल्पना प्रसूत नहीं, प्रत्युत वास्तविक स्वरूप प्रस्तुत किया जिस पर दार्शनिक की आस्था हो सकती है। इस प्रकार दयानन्द ने ब्रह्म विज्ञान एव दर्शन-ज्ञान का विरोध परिहार करने का सफल प्रयत्न किया। चतुर्थ अध्याय में 'जीव तथा जीवन' का निरूपण है। वदिक दर्शन की दृष्टि से यह अध्याय तथा इससे अगला पाचवा अध्याय 'प्रकृति प्रकरण इस ग्रन्थ की बहुत बड़ी विशेषता है। लेखक ने इन दोनों अध्यायों मे भूरि भूरि परिश्रम करके अनेक प्रचलित दार्शनिक सिद्धान्तों का विवेचन किया है। पाचवें अध्याय के अन्त मे डा० राधाकृष्णन् के वैशेषिक दर्शन पर मारे डक का उद्धार करके लिखा है—Swami Dayanand's philo sophy is more comprehensive He does not ignore scientific observati on's but tries to synthesize on the basis of analyses, thus thinning the wall between realism and idealism (३०८ पृ०) अर्थात् स्वामी दयानन्द का 'दर्शन' शङ्करादि की अपेक्षया अधिक व्यापक है। दयानन्द वैज्ञानिक अनुभवों का तिरस्कार वा उपेक्षा नहीं करता प्रत्युत विश्लेषण के आधार पर समन्वयका यत्न करता है और इसके द्वारा यह यथार्थवाद तथा आदर्शवाद का समन्वय करता है। बहुत सुन्दर। छठे अध्याय मे जीवों की अनादित्य एव अविनाशिता का प्रतिपादन है। इस अध्याय में पुनर्जन्म, विकासवाद विवेचन, स्वतन्त्रेच्छा, पृथिवी पर जीवन आरम्भ आदि अनेक विषयों का प्राञ्जल रूप से विशद प्रतिपादन है। इसी अध्याय में मुक्ति से पुनरावृत्ति का भी उल्लेख है। यह वह सिद्धान्त है कि जिसमे दयानन्द अतीत वर्त्तमान पूर्व पश्चिम के अनेक दार्शनिकों से प्रबल मतभेद रखते हैं। किन्तु दयानन्द निरूपित जीव स्वरूप यदि स्वीकारा जाये। (वही तो केवल दर्शन सगत है।) तो मुक्ति से पुनरावृत्ति माने बिना मुक्ति नहीं है।

जैसे मनुष्य के विचार होते हैं, वैसे ही उसके आचरण होते हैं अर्थात् दर्शन शास्त्र मनुष्य के व्यवहार निर्धारण का प्रधान साधन है। इस तत्त्व को सामने रखकर उपाध्याय जी ने 'आचार अथवा आचारिक जीवन का आधार' नामक सातवा अध्याय लिखा है। दयानन्द से पूर्व के मध्ययुगीन दार्शनिक प्राय निराशावादी थे। स्वामी दयानन्द वैदिक थे, अत आशावादी थे। वेद मे कहा है—उत्क्रमणमाक्रमण जीवतो जीवतो ऽयनम् (अथर्व) उठना और आगे बढना प्रत्येक जीवका मन्तव्यलक्ष्य है। अत निराश होनेकीकोई बात नहीं। इस अध्याय मे आयदर्शनों पर दुःख वाद के आर प का विवेचन किया है जो सक्षिप्त होता हुआ भी मनन करने योग्य है। अष्टम अध्याय मे सदाचार के गुणों तथा पचमहायज्ञों का निरूपण है। आर्य धर्म के आधार और विशिष्टता रूप ब्रह्मचय के महत्त्व का प्रतिपादन भी इस अध्याय का विशेष विषय है। अन्तिम अध्याय मे दयानन्दाभिमत समाज शास्त्र एव राजशास्त्र का निरूपण है। इस अध्याय के अन्त मे राजनीति विषयक अथवा राजतन्त्र विषयक, स्वामी दयानन्द के विचार अत्यन्त मनन करने योग्य हैं। स्वामी दयानन्द सार्वभौम साम्राज्य के पक्षपाती है। उन के साम्राज्य की कल्पना वह नहीं है जो योरुप के साम्राज्य मे अन्तर्निहित है, वे एकाधिपत्य के नितान्त विरुद्ध हैं। स्वामी जी राज्य सचालन के प्रत्येक कार्य मे अनेकों के परामर्शको बहुत महत्त्व स्थान देते हैं वे राजा को जिसे वे सभापति आदि नामों से भी व्यवहृत करते हैं, निर्वाचन द्वारा

किया जाना मानते हैं।

उपाध्याय जी ने दर्शन शास्त्र के सभी क्षेत्रों में स्वामी दयानन्द की स्वतन्त्र देन दर्शायी है। इस वृद्धावस्था में उन्होंने घोर परिश्रम करके यह ग्रंथ रत्न जनता को दिया है। उसके लिये उनकी कितनी प्रशंसा की जाये ? निस्सन्देह, उनका यह ग्रन्थ जहां उनके सभी ग्रन्थों से आकार में बड़ा है, वहां गुणों आदिमेंभी बहुत बड़ा है। आवश्यकता इस बात की है कि इस ग्रंथ को संसार के सभी पुस्तकालयों मे पहुंचाया जाये। यह तभी सम्भव हो सकता है कि जब श्रीमती सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा इसकी सहस्त्रों प्रतियां छपवाकर इसके वितरण का प्रबन्ध करे। उपाध्याय जी ने सचमुच प० कृपाराम शर्मा (स्व० दर्शनानन्द जी) का अनुकरण करके आर्य पथिक पं० लेखराम जी की अन्तिम इच्छा पूरी करने में श्लाघनीय प्रयत्न किया है। उसके लिए हम सब के धन्यवाद के पात्र हैं।

—स्वामी वेदानन्द

चमत्कारों की दुनिया—

लेखक—श्री सन्तराम बी० ए०। प्रकाशक—विश्वेश्वरानन्द संस्थान प्रकाशन होशियारपुर, पृष्ठ संख्या ७३, मूल्य ।।।) ।

ढोंग, छल कपट और भ्रमपूर्ण बातों को चालाक लोग किस प्रकार जनता में चमत्कार करके दिखाते हैं और जनता में अन्ध विश्वासों का बीजारोपण करते हैं प्रस्तुत पुस्तक की १३ घटनाओं में बहुत रोचक ढंग से वर्णन किया गया है। यह पुस्तक बालकों के लिये विशेष उपयोगी है जिनके कोमल हृदय पटल पर बचपन में भूत प्रेत और अन्ध विश्वासों के बीज सरलता से जग जाते हैं। किन्तु पृष्ठ ६६ पर वर्ण-व्यवस्था का खंडन करके लेखक ने न्याय नहीं किया। जाति पांति के लिये यह बात कही जा सकती है। फिर भी प्रत्येक माता पिता को इस पुस्तक को अपने बालकों के हाथ में देना सार्थक होगा। पुस्तक की छपाई सुन्दर है। लेखक और प्रकाशक दोनों ही बधाई के पात्र हैं।

महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र—

लेखक – श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति, प्रकाशक—विजय पुस्तक भंडार, देहली, प्राप्तिस्थान - गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क देहली, पृष्ठ संख्या १८० मूल्य २)

प्रस्तुत पुस्तक ख्यातिलब्ध लेखक और मनीषि श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति कृत आर्य समाज का इतिहास (द्वितीय भाग) का वह खंड है जो उन्होंने महर्षि दयानन्द के सम्बन्ध में लिखा था; अब यह पृथक प्रकाशित करके जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक की उपयोगिता का लेखक के नाम से ही अनुमान लगाया जा सकता है। यह उसी इतिहास का एक खंड है जिसके लेखन का कार्यभार स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने लेखक की विशेष योग्यता के कारण ही उन्हें सौंपा था।

पुस्तक की छपाई सुन्दर और बाह्यावरण साधारण है।

काश्मीर की यात्रा—

लेखक—श्री जगन्नाथ जी, प्रकाशक—वैदिक साहित्य सदन आर्य समाज गली, सीताराम बाजार देहली, पृष्ठ स० ५७ मूल्य ।।) ।

श्री जगन्नाथ जी ने अपनी काश्मीर यात्रा पर यह पुस्तक लिखकर उन लोगों के लिये मार्ग प्रदर्शन किया है जो काश्मीर जाना चाहते हैं या काश्मीर की यात्रा की सोचते हैं। वास्तव में प्रस्तुत पुस्तक में काश्मीर यात्रियों के लिये उपयोगी सूचनायें दी हैं। यात्रा के मार्ग प्रदर्शन के लिये अंग्रेजी में तो और भी उपयोगी साहित्य उपलब्ध है किन्तु हिन्दी में ऐसे साहित्य का अभाव है। यह प्रयास अन्य लेखकों के लिये मार्ग प्रद-

उत्तर प्रदेश गोवध निवारण विधेयक, १६५५

(जैसा कि उत्तर प्रदेश विधान मण्डल द्वारा पारित हुआ)।

उत्तर प्रदेश मे गाय तथा गाय के वंश के वध के प्रतिषेध (Prohibit) तथा निवारण (Prevent) करने का।

विधेयक

यह आवश्यक है कि उत्तर प्रदेश मे गाय तथा गाय के वंश वध का प्रतिषेध (prohib t) तथा निवारण (prevent) किया जाय।

अतएव भारतीय गणतन्त्रके छठे वर्षमे निम्न लिखित अधिनियम बनाया जाता है —

संक्षिप्त शीर्षनाम प्रसार तथा प्रारम्भ।

१—(१) यह अधिनियम उत्तर प्रदेश गोवध निवारण अधिनियम, १९५५, कहलायेगा।

(२) इसका प्रसार समस्त उत्तर प्रदेश में होगा।

(३) यह तुरन्त प्रचलित होगा।

परिभाषायें

२— विषय या प्रसङ्ग में कोई बात प्रतिकूल न होने पर इस अधिनियम मे

(क) "गोमास (beef) ' का तात्पर्य गाय के मास से है, किन्तु इसके अन्तर्गत ऐसा गोमास नहीं है जो सीलबद डिब्बों (sealed containers) में उत्तर प्रदेश मे आयात किया जाय और उसी दशा मे उनमें बन्द रहे।

(ख) ' गाय" के अन्तर्गत साड, बैल, बछिया अथवा बछड़ा (bull, bullock heifer or calf) हैं

(ग) ' नियत' का तात्पर्य इस अधिनियम के अधीन बने नियमों द्वारा नियत से है

(घ) 'वध' (slaughter) का तात्पर्य किसी भी रीति से मारण (kill ng) से है तथा इसके अन्तगत इस प्रकार से अङ्गहीन करना (maiming) तथा शारीरिक आघात पहुचाना

दर्शन का कार्य करेगा। हम लेखक को इस सत्प्रयत्न के लिये धन्यवाद देते हैं।

पुस्तक की छपाई और बाह्यावरण यदि आकर्षक रखा जाता तो काश्मीर के सौन्दर्य के अनुरूप होता।

साइन्स इन दी वेदाज (वेदों में विज्ञान)—

लेखक—श्री हसराज, प्रकाशक—शक्ति पब्लिकेशन्स, मोडिल टाउन, लुधियाना, पृष्ठ स० ६४ मू० १।।।)।

प्रस्तुत पुस्तक मे विद्वान् लेखक ने वेद मत्रों के अग्रेजी में अर्थ देकर सिद्ध किया है कि वेद में विज्ञान भरा पड़ा है केवल खोज की आवश्यकता है।

पुस्तक की छपाई आकर्षक है। यदि इस पुस्तक का मूल्य कुछ कम होता तो उचित था।

ईशावास्य प्रकाश—

भाषान्तरकार श्री रामनिवास विद्यार्थी—प्रकाशक—श्री प० शिवचरणलाल पतरौल, पो० लॉक (मुजफ्फर नगर प्राप्ति स्थान—आर्य समाज फजलपुर (मेरठ) पृष्ठ स० २० मूल्य ≡)।

प्रस्तुत पुस्तिका, ईशोपनिषद् का हिन्दी कविता मे भाषानुवाद है। विद्यार्थी जी का अच्छा प्रयास है। किन्तु पुस्तक की छपाई बहुत साधारण है। मूल्य भी कम होना चाहिये था।

निरजनलाल गौतम

प्राप्ति स्वीकार

महाभारत की कहानिया—

लेखक—श्री प० खेमचन्द जी शास्त्री, प्रकाशक विश्वेश्वरानन्द वैदिक रिसर्च इन्स्टीटयूट साधु आश्रम होशियारपुर पृष्ठ १०६ मूल्य १)

भी है जिससे सामान्य रूप में (in the ordinary course) मृत्यु हो जाय;

(ङ) "राज्य सरकार" का तात्पर्य उत्तर प्रदेश की सरकार से है तथा :

(च) "अलाभकर गाय" (uneconomic cow) के अन्तर्गत भटकती हुई, अरक्षित, दुर्बल, अक्षम, रुग्ण अथवा बन्ध्या (stray, unprotected, infirm. disabled, diseaesd or barren) गाय है।

गोवध का प्रतिषेध

३—समय विशेष पर प्रचलित किसी अन्य विधि law) में किसी बात के अथवा किसी विपरीत उपाचार या आचार (usage or custom) के होते हुये भी, कोई भी व्यक्ति उत्तर प्रदेश के किसी भी स्थान में किसी गाय का न तो वध करेगा और न वध करवायेगा अथवा उसे वधके लिये न प्रस्तुत (offer) करेगा, न प्रस्तुत करवायेगा।

रोगी अथवा प्रयोगाधीन गायों के सम्बन्ध में धारा ३ का प्रवृत्त न होना।

४—(१) धारा ३ की कोई भीबात किसी ऐसी गाय के वध पर प्रवृत्त न होगी:—

(क) जो राज्य सरकार द्वारा इस प्रकार विज्ञापित किसी सांस्पर्शिक (contagious)अथवा सांसर्गिक (infectious) रोग से पीड़ित हो, अथवा :

(ख) जो चिकित्सकीय अथवा सार्वजनिक स्वास्थ्य सम्बन्धी गवेषणा (research) के हित में प्रयोगाधीन हो, जबकि वध उन शर्तों और परिस्थितियों के अनुसार किया जाय जो नियत की जायें।

(२) जब उपधारा (१) के खण्ड (क) में वर्णित कारणवश किसी गाय का वध किया जाय तो वह व्यक्ति जो ऐसी गाय का वध करे अथवा वध करवाये, वध के २४ घण्टे के भीतर, सन्निकट थाने में अथवा ऐसे अधिकारी अथवा प्राधिकारी (authority) के समक्ष जो नियत किया जाय, तत्सम्बन्धी सूचना देगा।

(३) उस गाय का शव (carcase) जिसका उपधारा (१) के खण्ड (क) के अधीन वध किया गया हो ऐसी रीति से दफनाया अथवा निस्तारित किया जायगा जो नियत की जाय।

गोमांस बेचने का प्रतिषेध

५—यहां पर दिये गये अपवाद को छोड़कर तथा समय विशेष पर प्रचलित किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुये भी, कोई भी व्यक्ति सिवाय ऐसे चिकित्सकीय प्रयोजनों के निमित्त जो नियत किये जायें किसी भी रूप मे गोमांस अथवा तज्जन्य पदार्थ न बेचेगा, न परिवहन करेगा, न बेचने अथवा परिवहन के लिये प्रस्तुत करेगा और न बिकवायेगा अथवा परिवहन करवायेगा।

अपवाद—वायुयान के अथवा रेलवे ट्रेन के वास्तविक (bona fied) यात्री द्वारा उपभोग के लिये कोई भी व्यक्ति गोमांस अथवा तज्जन्य पदार्थ बेच सकता है तथा भोजनार्थ प्रस्तुत कर सकता है, अथवा बिकवा और भोजनार्थ प्रस्तुत करवा सकता है।

संस्थाओं की स्थापना

६ - राज्य सरकार और राज्य सरकार द्वारा आदेश दिये जाने पर कोई भी स्थानीय प्राधिकारी (local authority) अलाभकर (uneconomic) गायों की देखभाल के लिये आवश्यकतानुसार संस्थायें स्थापित करेगा।

परिव्ययों अथवा शुल्कों का आदेश (levy) किया जाना।

७—राज्य सरकार अथवा स्थानीय प्राधिकारी जैसी भी दशा हो, संस्थाओं में अलाभकर गायों को रखने के निमित्त ऐसा परिव्यय अथवा शुल्क आदेय (levy) कर सकती है जो नियत किया जाय।

शास्ति (penalty)

८—(१) जो कोई भी व्यक्ति धारा ३ अथवा ५ के उपलब्धों का उल्लंघन करे अथवा उल्लंघन करने का प्रयास करे अथवा उल्लंघन का प्रवर्तन (abet) करे तो वह ऐसे अपराध का दोषी होगा जो कठिन कारावास के दण्ड द्वारा जो दो वर्ष तक का हो सकता है अथवा अर्थ दण्ड द्वारा जो एक हजार रुपये तक हो सकता है अथवा दोनों द्वारा दण्डनीय होगा।

(२) जो कोई भी व्यक्ति धारा ४ की उपधारा (२) मे वर्णित रीतिसे तथा समयके भीतर सूचना प्रस्तुत न करे तो वह ऐसे अपराध का दोषी होगा जो साधारण कारावास के दण्ड द्वारा जो एक वर्ष तक का हो सकता है अथवा अर्थ दण्ड द्वारा जो दो सौ रुपये तक हो सकता है अथवा दोनों द्वारा दण्डनीय होगा।

(३) उपधारा (१) अथवा उपधारा (२) के अधीन दण्डनीय अपराधों पर विचार (trial) करते समय इस बात को सिद्ध करने का भार (burden of proving) कि वध की हुई गाय धारा ४ की उपधारा (१) के खण्ड (क) में निर्दिष्ट वर्ग की थी, अभियुक्त पर होगा।

अपराध हस्तक्षेप्य (cognizable) तथा अप्रतिभाव्य (non bailable) होंगे

९—कोड आफ क्रिमिनल प्रोसीजर, १८९८ में किसी बात के होते हुये भी धारा, ८ की उपधारा (१) के अधीन दण्डनीय अपराध हस्तक्षेप्य (cognizable) तथा अप्रतिभाव्य (non-bailable) होंगे।

नियम बनाने का अधिकार

१०—(१) राज्य सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिये नियम बना सकती है।

(२) पूर्वोक्त अधिकार की व्याप्ति को न बाधित करते हुये, ऐसे नियम निम्नलिखित की व्यवस्था कर सकते हैं।

(क) दशायें तथा परिस्थितियां जिनमें धारा ४ की उपधारा (१) के अधीन गायों का वध किया जायगा।

(ख) रीति जिससे धारा ४ की उपधारा (१) के अधीन रोग विज्ञापित किये जायेंगे।

(ग) रीति जिससे धारा ४ की उपधारा (२) के अधीन सूचना प्रस्तुत की जायगी।

(घ) रीति जिससे तथा प्रतिबन्ध (conditions) जिनके अधीन गोमांस अथवा तज्जन्य पदार्थ धारा ५ के अधीन बेचे जायें अथवा बेचे और भोजनार्थ प्रस्तुत किये जायें।

(ङ) धारा ६ में अभिदिष्ट संस्थाओं के अधिष्ठान (establishment) रख रखाव, प्रबन्ध पर्यवेक्षण तथा नियन्त्रण से संबद्ध विषय।

(च) इस अधिनियम के अधीन अधिक्षेत्र रखने वाले किसी अधिकारी अथवा प्राधिकारी के कर्तव्य, ऐसे अधिकारी अथवा प्राधिकारी द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया, और :

(छ) वे विषय जो नियत किये जाने वाले हैं और नियत किये जायें।

उद्देश्य और कारण

भारत के संविधान के अनुच्छेद ४८ के अनुसार राज्य सरकारों का यह कर्तव्य है कि वे कृषि और पशु-पालन को आधुनिक और वैज्ञानिक प्रणालियों से सङ्गठित करें तथा विशेषतः गाय और उसके वंश की नस्लों के परिरक्षण और सुधार के लिये तथा उसके वध का प्रतिषेध करने के लिये अग्रसर हों। गो-रक्षा के लिये किये गये पहले के सभी प्रयत्न और कुछ श्रेणी के उपयोगी पशुओं के वध का निषेध करने वाली युद्धकालीन विधायिनी कार्यवाहियों का कोई सन्तोष जनक परिणाम नहीं निकला। इस अनुभव को ध्यान में रख कर तथा इस विचार से कि गाय और उसके वंश की दूध, बैलों की शक्ति तथा खाद की व्यवस्था करने के लिये रक्षा करना आवश्यक है, गोवध पर पूर्ण रूप से निषेध लगाना आवश्यक हो जाता है।

नागा विद्रोह में विदेशी ईसाई मिश्नरियों का हाथ

(लेखक—श्री पं० शिवचन्द्र जी, उपमन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा)

उत्तर भारत में लोग 'नागा' शब्द से प्रायः नग्न साधुओं से अभिप्राय समझते हैं जो नासिक, हरिद्वार, प्रयाग आदि स्थानों में कुम्भ के अवसर पर स्नान के लिये जाते हैं और जो नग्न अवस्था में उन अवसरों पर अपना जलूस निकालते हैं जिनकी यह कुत्सित प्रथा हमारे देश के लिये एक कलङ्क का कारण बनी हुई है। परन्तु आसाम के पूर्व भारत तथा बर्मा की सीमा पर फैले हुये पर्वतों और उनसे लगे हुये जङ्गलों में एक जाति रहती है उसे भी नागा कहते हैं। इस लेख में हमारा अभिप्राय इसी नागा जाति के लोगों से है। इन लोगों का रहन सहन तथा वेष-भूषा पर्वतीय तथा जङ्गली वातावरण के अनुकूल है। इनके रीति रिवाज भी उसी प्रकार के हैं।

अंग्रेजों ने उपर्युक्त प्रकार के लोगों को आदिवासी नाम की संज्ञा देदी थी। उस समय अंग्रेजों ने हिन्दुओं की शक्ति क्षीण तथा निर्बल करने के लिये जहाँ अनेकों चालें चली वहां एक चाल यह भी चली कि जङ्गलों में बसने वाले लोगों को हिन्दुओं की जन संख्या में सम्मिलित न किया जाये। तदनुसार उनकी गणना पृथक् की गई। हिन्दुओं ने भी अपने धर्म के प्रति उदासीनता के कारण इनकी कोई सुध नहीं ली।

ईसाई मिश्नरियों को ईसाईयत का प्रचार करने के लिये अन्य पिछड़े हुये तथा जंगलों और पर्वतों में बसे हुये लोगों की तरह यह नागा लोग भी बड़ी उपजाऊ भूमि के रूप में मिल गये। ईसाई मिश्नरियों ने अपना प्रचार कार्य इन नागाओं में बड़ी तीव्रगति से आरम्भ किया। जैसा कि यह ईसाई मिश्नरी हिन्दुओं के धर्म, संस्कृति, देवी देवताओं तथा रीति रिवाजों के प्रति अपने प्रचार द्वारा घृणा तथा द्वेष सर्वत्र फैलाते हैं इन्होंने इन नागाओं में भी उन बातों को फैलाया और हिन्दू धर्म तथा हिन्दू संस्कृति का उन्हें जबरदस्त विरोधी तथा कट्टर ईसाई बना दिया। इस प्रकार के प्रचार का क्रम पचासों वर्ष तक इस नागा क्षेत्र में जारी रहा। विदेशी ईसाई मिश्नरियों को इस कार्य में सहयोग अंग्रेजी सरकार से भी मिला। नागा प्रदेश में ईसाईयत का जाल बिछ गया और वह समस्त क्षेत्र ईसाई बन गया।

इतना ही नहीं किन्तु इन ईसाइयों ने भारत तथा उसकी सरकार के लिये एक जबरदस्त भावी खतरे का रूप धारण कर लिया जिसे भारत तथा उसकी सरकार ने उस समय तक अनुभव नहीं किया जब तक इस देश के प्रधान मन्त्री श्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने उस क्षेत्र का दौरा नहीं किया। जब प्रधान मन्त्री ने उस क्षेत्र में पहुंच कर उन नागाओं में भाषण देना चाहा तो उन लोगों ने "नेहरू वापिस जाओ" तथा "हम स्वतन्त्र नागा प्रदेश चाहते हैं" के नारे लगाये। भारत के प्रधान मन्त्री को भारत की सीमा के अन्दर इस प्रकार के नारे सुन कर बड़ा आश्चर्य हुआ।

पता लगा कि यह नारे लगाने वाले नागा लोग ईसाई हैं और ईसाई मिश्नरी ही इन नागाओं का उनकी प्रत्येक गतिविधि तथा कार्यों में मार्ग प्रदर्शन करते हैं। इन मिश्नरियों की पीठ पर विदेशी शक्तियाँ सब प्रकार की अधिक से अधिक सहायता प्रदान करती हैं। इन विदेशी शक्तियों की इस नागा प्रदेश के सम्बन्ध में वास्तविक इच्छा यह रही है और अब तक बनी हुई है कि यदि कभी भी अथवा किसी प्रकार यह क्षेत्र स्वतन्त्र हो जाये तो वह अपना फौजी अड्डा (military base) वहां पर बनालें और सीमा पर होने के कारण उनके उस फौजी अड्डे के द्वारा भारत तथा उसकी सरकार के लिये एक स्थिर भारी खतरा पैदा करा दिया जावे।

प्रधान मन्त्री जब नागा क्षेत्र के उस दौरे से वापिस आये तो उस समय भारत सरकार के गृह

मन्त्री श्री डाक्टर कैलाशनाथ काटजू थे। उन्होंने उन दिनों विस्तार के साथ स्पष्ट शब्दों में सर्व प्रथम ईसाई मिश्नरियों के इन कुचक्रों का भारतीय संसद के सन्मुख बड़ा जबरदस्त भंडा फोड़ किया और यह विषय भारतीय संसद के सन्मुख तथा समाचार पत्रों में समय समय पर चलता रहा और समस्त देश में चर्चा का विषय बन गया। इस देश के अधिकाश समाचार पत्रों ने समय समय पर आवश्यकतानुसार ईसाई मिश्नरियों द्वारा भारत को धर्म प्रचार तथा सामाजिक सेवा की आड़ में राजनैतिक तथा सांस्कृतिक क्षति पहुँचाने के विषय में अग्रलेख लिखे तथा देश विदेश की शिक्षित जनता का ध्यान आकर्षित किया।

इसी बीच में नागाओं ने भारत सरकार के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। नागाओं के इस विद्रोह का नेता फीजो नाम का एक ईसाई नागा है जो छिपा हुआ इस विद्रोह का नेतृत्व तथा सचालन कर रहा है। इन विद्रोही नागाओं के विद्रोह का रूप रक्तपात लूटमार, आग लगाना और छिप कर हमला करना और हमला करके पुनः पर्वतों तथा जंगलों में छिप जाना है। गोला बारूद, मशीन गने, आधुनिक रायफले तथा युद्ध सम्बन्धी सब प्रकार के शस्त्र पर्याप्त मात्रा मे इन के पास बताये जाते है।

कहा जाता है कि गत द्वितीय विश्व महायुद्ध के समय अमेरिकन तथा जापानी सेनाओं ने उस प्रदेश को छोड़ते हुये बहुत सा युद्ध सम्बन्धी सामान वहां गाड़ दिया था जिसका इन नागाओ को पता था। इन नागाओं को उन सेनाओं ने गुरिला युद्ध करने का भी अभ्यास करा दिया था। हो सकता है कि कुछ युद्ध सामग्री भी उन नागाओं को उस क्षेत्र में गड़ी हुई मिल गई हो परन्तु वह युद्ध सामग्री इतनी अधिक मात्रा मे कदापि नहीं हो सकती कि यह नागे लोग कई मास तक लड़ सकें। विद्रोही नागाओं के पास भोजन सामग्री तो कदापि भी इतनी नहीं हो सकती कि वे २-३ मास भी उसे खाकर युद्ध कर सकते।

अतः इससे यह निश्चित परिणाम निकाला जा सकता है कि इन विद्रोही नागाओं को युद्ध तथा भोजन सामग्री उस प्रदेश के विदेशी ईसाई मिश्नरियों द्वारा प्राप्त होती रही है और अब भी यह मिश्नरी लोग इन विद्रोहियों को सब प्रकार की आवश्यक युद्ध सामग्री, भोजन, वस्त्र तथा आर्थिक सहायता छिप छिपाकर अवश्य पहुंचाते है। बर्मा तथा आसाम की सीमा पर "करेन" जाति के लोग भी जो ईसाई हैं वे भी इन नागा विद्रोहियों को सब प्रकार की सहायता पहुंचाते हैं। इन "करेन" लोगों ने भी एक बार बर्मा सरकार के विरुद्ध इसी प्रकार का विद्रोह किया था परन्तु उन्हें तुरन्त ही बर्मा सरकार द्वारा दबा दिया गया था।

यह बड़े दुःख की बात है कि हमारी भारत सरकार यह जानते हुये भी कि इस नागा विद्रोह की जड़ मे यह ईसाई मिश्नरी हैं परन्तु फिर भी भारत सरकार ने इन ईसाई मिश्नरियों के विरुद्ध अभी तक कोई कदम नहीं उठाया।

भारत सरकार के गृह मन्त्री श्री पं० गोविन्द वल्लभ पन्त ने गत जौलाई मास के आरम्भ मे इस नागा विद्रोह की वास्तविक स्थिति का अध्ययन करने के लिये उस क्षेत्र का दौरा किया था। उन्होंने उस समय वहां एक प्रेस कान्फ्रेन्स मे भाषण देते हुये ठीक ही कहा था कि नागा पहाड़ी ज़िला जिस की जन संख्या तीन लाख है जो एक साधारण जिले की एक चौथाई जन संख्या है उसे स्वतन्त्र कराने की बात उस बच्चे की सी ना समझ बात है जो चन्द्रमा की केवल चमक देख कर चन्द्रमा को प्राप्त करने का आग्रह करता है।

भारत सरकार का इन जङ्गली जातियों के प्रति जिन्हें आदिवासी कहा जाता है विशेष उदारता का

व्यवहार है। भारतीय संविधान में उनकी उन्नति के लिये विशेष व्यवस्था का वर्णन है और राष्ट्रपति ने स्वयं अपनी देख रेख में एक स्वतन्त्र विभाग इन आदिवासियों की उन्नति के लिये खोला हुआ है। इनके उत्थान में व्यय करने के लिये संसद बड़ी उदारता से धन देती है। भारत सरकार का उद्देश्य यही है कि इन पिछड़े हुये भाईयों का आर्थिक, शैक्षणिक तथा सांस्कृतिक स्तर भारत के अन्य नागरिकों के समान शीघ्रातिशीघ्र कर दिया जाये जिससे उन्हें भी अवसर मिल सके कि वे भी अपने जीवन संग्राम में अन्य लोगों की तरह उन्नति प्राप्त कर सकें। भारत सरकार का यही व्यवहार इन नागाओं के प्रति है।

तारीख ३१ जुलाई को गृह मन्त्री श्री पं० पन्त जी ने नागा समस्या पर लोक सभा में भाषण देते हुये कहा कि सरकार को धमकियों अथवा हिंसा के प्रयोग के द्वारा डराया या धमकाया नहीं जा सकता और न भारत की अखण्डता नष्ट करने की मांग ही स्वीकार की जा सकती है। नागाओं की समस्त न्याययुक्त मांगों पर सदा सहृदयता से विचार किया जायेगा। इसी भाषण में श्री पन्त जी ने लोक सभा को नागा विद्रोहियों के अत्याचारों का वर्णन करते हुये कई रोमांचकारी निर्दयतापूर्ण घटनायें बताईं जिनमें से एक इस प्रकार है :—

कुछेक निर्दोष व्यक्तियों के पैर के तलवों की खालें खींची गईं और उसके पश्चात् उनको मौत के घाट उतारने से पूर्व उनके उन स्थानों में कीलें ठोकी गईं।

इस नागा समस्या की जड़ में वास्तविक बात यह है कि विद्रोही नागा यह बात भली प्रकार समझते हैं कि ईसाई मिश्नरियों द्वारा विदेशी तत्व तथा विदेशी सहायता उनकी पीठ पर है। जब तक विदेशी मिश्नरी इस क्षेत्र में बने रहेंगे उस समय तक किसी न किसी रूप में यह नागा समस्या भारत सरकार के लिये सिर दर्द ही बनी रहेगी।

अतः भारत सरकार के सन्मुख हमारे निम्न लिखित सुझाव हैं :—

१—नागा प्रदेश तथा आसाम में जितने भी विदेशी ईसाई मिश्नरी हैं उनको अविलम्ब भारत से बाहर कर दिया जाये और भविष्य में किसी भी ऐसे मिश्नरी का वहां प्रवेश न होने दिया जाये।

२—जितने भी भारतीय ईसाई मिश्नरी हैं उन्हें कम से कम एक वर्ष के लिये नज़रबन्द कर दिया जाये।

३—चारों ओर कड़ी निगरानी रखनी चाहिये कि विद्रोही नागाओं को कहीं से भी भोजन तथा वस्त्र आदि न पहुंच सके। यदि कोई भी उन्हें किसी प्रकार की सहायता पहुंचाता हुआ मिल जाये तो उसे तुरन्त गोली से उड़ा दिया जाये।

४—जो कोई नागा विद्रोही के रूप में नजर आये अथवा पकड़ा जाये उसे भी गोली से उड़ा दिया जाये।

५—बर्मा तथा आसाम की सीमा पर जो करेन जाति रहती है बर्मा सरकार की सहायता से ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये कि वे लोग भी नागा विद्रोहियों को किसी प्रकार की सहायता न पहुंचा सकें और वे लोग करेन प्रदेश में शरण भी न पा सकें। जो कोई करेन उन्हें सहायता दे तो बर्मा सरकार उसे गोली से उड़ा दे।

राज शास्त्र बतलाता है कि जब तक राज्य द्वारा विद्रोहियों को मृत्यु दण्ड नहीं दिया जाता राज्य विद्रोह शान्त नहीं हुआ करता और भविष्य में भी उस अग्नि के सुलगने की सम्भावना बनी रहती है। यदि भारत सरकार उपर्युक्त सुझावों के अनुसार व्यवहार करे तो नागाओं की समस्या कुछ ही सप्ताह में पूर्णतया सुलझ जावेगी। क्या भारत सरकार इस ओर ध्यान देगी ?

विविध सूचनाएँ तथा वैदिक धर्म प्रसार

निर्वाचन

आर्य समाज दीवान हाल देहली	प्रधान	श्रीमती विद्यावती जी	
	मन्त्री	श्री ओ३मप्रकाश जी पुरुषार्थी	१-७-५६
आर्य केन्द्रीय सभा देहली	प्रधान	श्री देशराज जी चौधरी	
	मन्त्री	श्री रामनाथ जी भल्ला	

उत्सव

आर्य समाज भारत नगर गाजियाबाद का वार्षिकोत्सव १५ से २१ अक्टूबर तक मनाया जायगा।

गुरुकुल समाचार—

कांगड़ी

आयुर्वेद कमीशन के सदस्य श्री दयाशंकर दवे (आरोग्य मन्त्री सौराष्ट्र) श्री शांतिलाल शाह (आरोग्य मन्त्री बम्बई) डाक्टर प्राणजीवन मेहता, श्री वैद्य वासुदेव भाई द्विवेदी तथा कुलकर्णी जी (उत्तरप्रदेश के आयुर्वेद उप संचालक) आदि महानुभावों ने गुरुकुल के आयुर्वेद महाविद्यालय का निरीक्षण किया। शल्य क्रिया भवन, निदान प्रयोग शाला, प्रकृति विज्ञान, संग्रहालय, आयुर्वेदीय औषधि संग्रहालय, पुस्तकालय तथा पुरातत्व संग्रहालय आदि विभागों को निहार कर कमीशन के सदस्यों ने बड़ा परितोष और प्रसन्नता प्रकट की। सायंकाल को आपने आयुर्वेद के उपाध्यायों से आयुर्वेद शिक्षा विषय में चर्चाएं की। गुरुकुल की व्यवस्था और कार्यशैली से आप सब बहुत प्रभावित हुए। रात को गुरुकुल के कार्य का चल चित्र आपको दिखाया गया।

गुरुकुल बैरगनियां

गुरुकुल आश्रम बैरगनियां, मुजफ्फरपुर की पढाई पूर्ववत् चल रही है। यहां की विशेषता यह है कि गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के अनुसार धर्मशिक्षा और संस्कृत की पढ़ाई तथा सदाचरण के अभ्यास के साथ २ ब्रह्मचारियों को सरकारी पाठ्यक्रम के अनुसार पढ़ा कर मैट्रिक की परीक्षा दिलाई जाती है। अभी गुरुकुल की आयु केवल पांच साल की है, फिर भी इस वर्ष दो ब्रह्मचारी मैट्रिक की परीक्षा में बैठाये गये और दोनों में से एक प्रथम श्रेणी के लगभग अंक प्राप्त करके एवं एक द्वितीय श्रेणी में सफल हुए। इसी तरह पांच ब्रह्मचारी संस्कृत की नवीन प्रथमा में द्वितीय तृतीय श्रेणी में सफल हुए हैं।

दयानन्द वेद विद्यालय देहली

गुरुकुल श्री दयानन्द वेद विद्यालय युसुफ सराय, नई दिल्ली में इस वर्ष १५ निःशुल्क छात्रों को प्रविष्ट होने का सुअवसर प्राप्त है। व्याख्यान वाचस्पति (२ वर्ष) शास्त्रार्थ महारथी (४ वर्ष) महामहोपदेशक (६ वर्ष) का पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया है। प्रविष्ट होने वाले छात्र कम से कम मिडिल होने चाहियें। उपदेशक श्रेणी में संस्कृत परीक्षाओं का मुख्य २ कोर्स आ जाता है। अतः सरकारी परीक्षायें भी दिलाई जा सकेंगी। प्रार्थना पत्र श्री आचार्य जी के नाम आने चाहियें।

आर्य संस्कृत साहित्य परिषद्

५ अगस्त ५६ को सार्वदेशिक प्रेस पटौदी

हाउस दरिया गंज में दिल्ली के संस्कृत प्रेमियों ने उपर्युक्त परिषद् की स्थापना की। श्रीयुत देवव्रत जी धर्मेन्दु परिषद् के संयोजक नियत हुए। कोई भी संस्कृत प्रेमी बिना किसी शुल्क के इस परिषद् का सदस्य बन सकता है। परिषद् का उद्देश्य संस्कृत साहित्य का नवनिर्माण करना है।

सांस्कृतिक

इटावा मध्य दक्षिण उत्तर प्रदेशीय आर्यवीर दल केन्द्र कानपुरके तत्वावधान में एक सांस्कृतिक शिक्षण शिविर इस प्रदेश के कर्मठ कार्यकर्ता दल संचालक श्री सुखदेव जी शास्त्री के प्रबन्ध में २४ जून से १ जौलाई तक इटावा नगर की प्रमुख समाज में लगा। इस क्षेत्रवर्ती, कानपुर, फतेहपुर, हमीरपुर, झांसी, जालौन, इटावा, मैनपुरी, आगरा मथुरा अलीगढ़, एटा, फर्रुखगढ़, और फरुखाबाद सहित १३ जिलों के शिक्षार्थियों ने भाग लिया। इस प्रदेश के दल प्रचारक श्री ब्रह्मचारी देवेन्द्र जी आर्य का पुरुषार्थ प्रशंसनीय रहा है। यह शिविर अपनी कई प्रमुख विशेषताओं के कारण सफल रहा है। इस शिविर का संचालन इस प्रदेश के उपसंचालक श्री राम रंजन जी पांडेय ने बड़ी ही योग्यता पूर्वक किया। शिविर का दीक्षान्त संस्कार प्रांतीय दल संचालक श्री पं० सुखदेव जी शास्त्री के कर कमलों द्वारा कराया गया।

गोरक्षा दिवस

सार्वदेशिक सभा की प्रेरणा पर १५-७-५६ को उत्तरप्रदेशीय गोरक्षा दिवस मनाया गया जिसमें गोरक्षा विधेयक को कड़ाई के साथ प्रचलित करने की राज्य सरकार से मांग की गई।

निम्नलिखित समाजोंसे सूचनायें प्राप्त हुई:—

(१) खड़गपुर (फरुखाबाद) (२) आर्यसमाज संभल, (मुरादाबाद) (३) कर्णपुरदत्त (फरुखाबाद) (४) आर्य समाज दर्शन पुरवा।

गोरक्षा समिति

१० जून १९५६ को श्री के० एन० गोस्वामी के प्रतिनिधित्व में मर घेरिता (आसाम) में एक वृहत् सार्वजनिक सभा हुई। कई प्रसिद्ध वक्ताओं ने अपने भाषण में आसाम में गोवध निषेध की आवश्यकता पर बल दिया। इसी अवसर पर एक गोहत्या निरोध समिति की स्थापना हुई।

जिला आर्य प्रचार मंडल एटा

उपर्युक्त मंडल द्वारा कुछ समय में ही ७८० ईसाई व १८ मुसलमान शुद्ध हुए। ८ मेलों में प्रचार कैम्प लगे, ८ आर्य समाजें स्थापित हुईं, ८७ ग्रामों में प्रचार किया गया। ईसाई प्रचार निरोध कार्य की एक विशेष योजना बनाई गई है।

ईसाई प्रचार निरोध

लगभग १२ साल से गंगापुर के समीप 'छान' ग्राम में ईसाइयों ने वहाँ की भोली भाली जनता पर अपना जाल फैलाने के उद्देश्य से एक स्कूल खोला हुआ था जहां ग्रामीण बच्चे व अन्यों को भी दूध व घी के डब्बे तथा नकद रुपया तक इनाम रूप में देके अपने चंगुल में फंसाने के दुष्प्रयत्न में लगे हुए थे जिससे ग्रामीण जनता इनके चक्कर में काफी फंसती जा रही थी। ३१-७-५६ को स्वामी वेदानन्द जी महाराज के नेतृत्व में स्थानीय आर्य समाज का एक प्रचारक मंडल 'छान' ग्राम में पहुंचा और वहां की जनता को ईसाइयों के काले कारनामों से अवगत कराया, समस्त ग्राम की जनता ने स्थानीय मन्दिर में एकत्र हो के प्रतिज्ञा की कि आज से हमारा इनके साथ कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा और न कोई बच्चा इनके स्कूल में पढ़ने के लिये जावेगा। इस ही प्रकार ग्राम बड़ौदा तथा बड़ौली की ग्रामीण जनता को इनके चंगुल से बचाया गया, पुनः स्वामी जी महाराज ने कवई, कवावली, भटावली आदि ग्रामों के लगभग १५० हरिजन परिवार जो कि लगभग ४० वर्षसे इनके चंगुलमें फंसे हुए थे उन्हें निकाला।" प्रह्लादकुमार मन्त्री

आर्यसमाज, गंगापुर (राजस्थान)

शोक प्रस्ताव

जालंधर नगर के प्रसिद्ध हरिजनोद्धारक तथा आर्य कार्यकर्ता श्रीयुत गिरधारीलाल जी का हृदय की गति बन्द हो जाने से अचानक देहान्त हो गया। उनका दाह संस्कार पूर्ण वैदिक रीत्यानुसार हुआ।

उत्तर प्रदेश सभा भवन में स्वच्छता सप्ताह तथा वृक्षारोपण समारोह

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश के सभा भवन में ता० १ से ७ अगस्त तक समारोह पूर्वक स्वच्छता सप्ताह मनाया गया। सभा के मन्त्री श्री पं० शिवदयालु जी कोषाध्यक्ष श्रीराम जी प्रसाद गुप्त सम्पादक श्री भगवतशरण जी, श्री बाबूराम जी भारतीय, श्री रामनारायण गोस्वामी जी, श्री प० सच्चिदानन्द जी शास्त्री उपदेशक सभा, श्री धर्मेन्द्रनाथ जी मन्त्री आर्यसमाज, मथुरा तथा सभा के सभी कार्यकर्ताओं ने इसमें भाग लिया। सभा भवन के बालक, बालिकाओं ने भी बड़े मनोयोग से काम किया।

७ अगस्त को वृक्षारोपण समारोह सायंकाल ५ बजे से मनाया गया। समारोह के अध्यक्ष श्री पं० महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री उपप्रधान सभा थे। लखनऊ के आर्य नर नारी भारी संख्या में पधारे थे। इस समारोह में भाग लेने वाले गण्य मान्य व्यक्तियों में निम्न व्यक्तियों ने विशेष रूप से भाग लिया।

सर्वश्री आचार्य युगुलकिशोर जी मन्त्री श्रम तथा जन कल्याण विभाग, चन्द्रभानु जी गुप्ता मन्त्री स्वास्थ्य योजना विभाग, विचित्रनारायणजी शर्मा सहकारिता विभाग, कैलाशप्रकाश जी उप-मन्त्री स्थानीय स्वायत्त विभाग, पं० नरदेव जी शास्त्री वेदतीर्थ एम० एल० ए०, कुंवर रणंजयसिंह जी एम० एल० ए०, ठा० मलखानसिंह जी एम० एल० ए०, कृष्णशरण जी आर्य एम० एल० ए०, प० चन्द्रदत्त जी तिवारी, मन्त्री आर्यसमाज गनेशगंज, श्रीमती प्रकाशवती जी आर्या, पं० गंगाधर जी शर्मा एम० एल० ए० सीतापुर।

सभा की विशाल यज्ञशाला में यज्ञ किया गया। तदुपरान्त सरस्वती कन्या विद्यालय की बालिकाओं के गीत के साथ सभा की कार्यवाही आरम्भ हुई। सभा मन्त्री पं० शिवदयालु जी ने स्वच्छता सप्ताह का विवरण सुनाया और यह बतलाया कि प्रदेश के आर्य समाज राष्ट्र निर्माण की सभी योजनाओं में भाग लें, इस प्रकार का प्रयत्न किया जा रहा है। आर्य समाज ने महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज की प्रेरणा से जहां देश की स्वतंत्रता के सभी आंदोलनों में अग्रसर होकर कार्य किया है वहा वह देश के नव निर्माण में भी पीछे रहने वाला नहीं।

श्री आचार्य युगुलकिशोर जी ने अपने भाषण में कहा कि यह निःसन्देह है कि आर्य समाज ने भारत की स्वतंत्रता में सब से अधिक भाग लिया है। और आज कल भी जहां २ जन कल्याण का काम सुचारु रूप से चल रहा है वहां २ आर्य भाई व बहनें दिखलाई देते हैं और मुझे विश्वास है कि राष्ट्र निर्माण के पुण्य कार्यों में आय समाज निश्चय अग्रसर रहेगा। स्वच्छता सप्ताह के आयोजन के लिये उन्होने सभा की विशेष सराहना की और कहा कि सभा ने जो भी पग उठाया है वह सारे उत्तर प्रदेश के लिए स्फूर्ति दायक होगा।

श्री कैलाशप्रकाश जी ने अपने भाषण में बताया कि मेरा राजनीति में प्रवेश सभा के मान्य-मंत्री पं० शिवदयालु जी के नेतृत्व में ही मेरठ में हुआ है। जिस समय देश दासता के बन्धनों में जकड़ा हुआ था और सर्वत्र आतंक छाया हुआ था, उस समय महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने, उनके पद चिन्हों पर चलने वाले आर्य समाज ने देश में महान् ज्योति स्तम्भ का कार्य किया है और राष्ट्र की स्वाधीनता में आर्य समाज का भाग निश्चय ही सब से अधिक रहा है।

दान-सूची

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली,

(२१-६-५६ से २०-८-५६ तक)

आर्य समाज स्थापना दिवस

२५) आर्य समाज शोलापुर (बम्बई)।
५२॥) ,, ,, सदर बाजार झांसी।
१०) ,, ,, फतहाबाद (अमृतसर)
११) ,, ,, कलम (उस्मानाबाद
१०) ,, ,, सरधना (मेरठ)
१००) श्री प० ठाकुरदत्त शर्मा अमृतधारा धर्मार्थ ट्रस्ट देहरादून
१०) आर्य समाज महू (म० भा०)
१०) ,, ,, कांठ (मुरादाबाद
२०) ,, ,, खुर्जा (बुलन्दशहर)
१५) ,, ,, काशीपुर (नैनीताल)
५) ,, ,, दौराला (मेरठ)
१०) ,, ,, गुरुकुल सैक्शन रानी का तालाब फीरोजपुर शहर
१६) ,, ,, फैजाबाद
५) ,, ,, नाभा
१५) ,, ,, चांदपुर (बिजनौर)
२५) ,, ,, सोनीपत (रोहतक)
११) ,, ,, जेवर (बुलन्दशहर)
१० ,, ,, रांची (बिहार)

३६०॥) योग
५२७।≡) गत योग
८८७॥≡) सर्व योग

विविध-दान

२५) श्री बिहारीलाल सुखदेवाजी चाटी गली शोलापुर
२१) श्री जनकदेव जी हजारी बाग
५) डा० आर० एस० लाल जी भिरैबा (कोटा) (आजमगढ़)

५१) योग
७९) गत योग
१३०) सर्व योग

वृक्षारोपण के महत्व पर बोलते हुए श्री चन्द्रभानु जी गुप्त ने कहा कि यह वृक्ष मूक शब्दों में परोपकार यज्ञ का उपदेश देते हैं, और आध्यात्मिक जीवन के निर्माण में इनका विशेष भाग है, श्री गुप्त जी ने अपने भाषण में यह भी कहा कि आर्य समाज से ही मैने जन सेवा की प्रेरणा प्राप्त की है और स्वास्थ्य मंत्री के नाते ३५ स्वच्छता तथा वृक्षारोपण के सफल आयोजन किये। आर्य प्रतिनिधि सभा के इस कार्य से लखनऊ की जनता विशेष स्फूर्ति प्राप्त करेगी तथा समस्त उत्तरप्रदेश के आर्य समाजों को इस जनहित के कार्य में विशेष प्रेरणा मिलेगी। मुझे यह जान कर बहुत ही हर्ष है कि हमारे उत्तरप्रदेश की आर्य प्रतिनिधि सभा इस प्रकार कार्य में प्रयत्नशील है।

अन्त मे सभाध्यक्ष श्री प० महेंद्रप्रताप जी शास्त्री ने प्रदेश के मान्य मंत्रीगण, धारा सभा के सदस्यों तथा समस्त आर्य जनता को धन्यवाद दिया और साथ ही यह भी बतलाया कि वृक्षारोपण का सस्कृति से घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। हमारे जीवन का आधा भाग अर्थात् ब्रह्मचर्य और वानप्रस्थाश्रम तो वृक्षों के साये में ही व्यतीत होने चाहियें।

सभा समाप्ति के उपरान्त प्रदेश के मान्य मंत्रियों, धारा सभा के सदस्यों, आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारियों तथा लखनऊ के समस्त आर्यसमाजों के प्रतिनिधियों ने वेद मंत्र के पाठ के उपरान्त वृक्षारोपण समारोह किये। तत्पश्चात समस्त आई हुई जनता में यज्ञ शेष वितरित किया गया और इस प्रकार यह समारोह समाप्त हुआ।

दान मठ गुलनी अभियोग व्ययार्थ

१) इन्दुलाल मोतीलाल जी मौरवी
२) आर्य समाज सदर झांसी
१०) ,, ,, फतहाबाद (अमृतसर)
१०) ,, ,, महु (म० भा०)
२३) योग
२६८॥।–) गत योग
२९१॥।–) सर्व योग

दान ईसाई निरोध प्रचार

५२) प० रामस्वरूप जी उपदेशक द्वारा
३५) श्री बलीराम तनेजा धनबाद (बिहार) द्वारा प० रुचिराम जी उपदेशक
१२००) अ० भ० आर्यधर्म सेवासंघ बिरला लाइन्स देहली सहायता मार्च से अगस्त ५६
१२८७) योग

दान गोरक्षा आन्दोलन निधि

७) ला० रामस्वरूप जगदीश शरण जी देहली
५) स्वा० दु खदमनानन्द जी लोहरदगा (रांची)
५) चौ० नन्दूराम सहदेव जी आर्य मिलकपुर (हिसार)
५१) मा० पोहकर मल जी द्वारा
६१) ,, ,, ,,
१००) ,, ,, ,,
११) श्री कृष्णचन्द्र जी आर्य
४६) ,, टोडरमल जी मेम्बर पचायत ऑडवाला पो० भट्टकला (हिसार) प० रामस्वरूप जी उपदेशक द्वारा
६) ,, प० रामस्वरूप जी उपदेशक
३२५) योग

दान आर्य धर्म रक्षा निधि
(१ करोड़ की अपील पर)

४००) श्री ला० बाबूरामजी शाहदरा (देहली)
२००) ,, भोलाराम जी देहली
१०) ,, जयदयाल जी देहली
१) ,, परमानन्द जी देहली
१) ,, वीरभानु देहली
१) ,, सतसङ्गी देहली
२) ,, थाणुराम जी मुल्तानी
२) ,, वजीर चन्द्र जी चोपड़ा
१०) ,, किशन चन्द्र जी सर्राफ देहली
१) ,, मूलचद्र जी वधवा देहली
२) ,, कठालय गुजराती देहली
१) ,, हरिगोबिन्द जी देहली
५) ,, रामकुमार जी देहली
१) ,, मङ्गलराम जी देहली
१) ,, उत्तम चन्द्र जी चोपड़ा देहली
१) ,, चमनलाल जी देहली
२) ,, मनोहरलाल जी ेहली
५) ,, जैकिशनराम जी देहली
१) ,, प्रेम सागर जी देहली
६) ,, सीताराम क्षेत्रपाल जी देहली
॥) ,, ज्ञानचन्द्र जी देहली
१) ,, रामकिशन जी देहली
१) ,, रणवीर सिंह जी देहली
१) ,, लक्ष्मणसिंह जी देहली
१) , सीताराम जी देहली
१) ,, रूपचन्द्र जी देहली
१) ,, सुन्दरलाल जी रेडियो वाले देहली
१) ,, रामशरन दास जी देहली
१) ,, हीरालाल जी देहली
१) ,, द्वारका प्रसाद जी देहली
१) ,, कृष्णलाल जी देहली
१) ,, रामरिछपाल जी देहली
१) ,, सतसङ्गी जी देहली
५) ,, गुरुदित्तामल जी देहली
६६५॥) योग

दान दाताओं को धन्यवाद। —मन्त्री

सार्वदेशिक पत्र (हिन्दी मासिक)

ग्राहक तथा विज्ञापन के नियम

१. वार्षिक चन्दा—स्वदेश ५) और विदेश १० शिलिङ्ग। अर्द्ध वार्षिक ३) स्वदेश, ६ शिलि विदेश।

२. एक प्रति का मूल्य ।।) स्वदेश, ।।=) विदेश, पिछले प्राप्तव्य अङ्क या नमूने की प्रति का मूल्य ।।) स्वदेश, ।।।) विदेश।

३. पुराने ग्राहकों को अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करके अपनी ग्राहक संख्या नई करानी चाहिये चन्दा मनीआर्डर से भेजना उचित होगा। पुराने ग्राहकों द्वारा अपना चन्दा भेजकर अपनी ग्राहक संख्या नई न कराने या ग्राहक न रहने की समय पर सूचना न देने पर आगामी अङ्क इस धारणा पर वी० पी० द्वारा भेज दिया जाता है कि उनकी इच्छा वी० पी० द्वारा चन्दा देने की है

४. सार्वदेशिक नियम से मास की पहली तारीख को प्रकाशित होता है। किसी अङ्क के न पहुँचने की शिकायत ग्राहक संख्या के उल्लेख सहित उस मास की १५ तारीख तक सभा कार्यालय में अवश्य पहुँचनी चाहिए, अन्यथा शिकायतों पर ध्यान न दिया जायगा। डाक में प्रति मास अनेक पैकेट गुम हो जाते हैं। अतः समस्त ग्राहकों को डाकखाने से अपनी प्रति की प्राप्ति में विशेष सावधान रहना चाहिये और प्रति के न मिलने पर अपने डाकखाने से तत्काल लिखा पढ़ी करनी चाहिये।

५. सार्वदेशिक का वर्ष १ मार्च से प्रारंभ होता है अंक उपलब्ध होने पर बीच वर्ष में भी ग्राहक बनाए जा सकते हैं।

विज्ञापन के रेट्स

	एक बार	तीन बार	छः बार	बारह बार
६. पूरा पृष्ठ (२० × ३०)	१५)	४०)	६०)	१००)
आधा " "	१०)	२५)	४०)	६०)
चौथाई "	६)	१५)	२५)	४०)
⅛ पेज	४)	१०)	१५)	२०)

विज्ञापन सहित पेशगी धन आने पर ही विज्ञापन छापा जाता है।

७. सम्पादक के निर्देशानुसार विज्ञापन को अस्वीकार करने, उसमें परिवर्तन करने और उसे बीच में बन्द कर देने का अधिकार 'सार्वदेशिक' को प्राप्त रहता है।

—व्यवस्थापक
'सार्वदेशिक' पत्र, देहली ६

Regd No. D 51.

चतुरसेन गुप्त द्वारा सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस, दरियागंज दिल्ली—७ में छपकर रघुनाथ प्रसाद जी पाठक प्रकाशक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली-से प्रकाशित।